KADMBINI FEB-JUNE 1974 G.K.U.

वसंत अंक

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

बनन में बागन में बगरो बसन्त है

१.७५ रुपया

कादम्बिनी

(मासिक प्रकाशन)

१. प्रकाशन स्थान	नयी दिल्ली
२. प्रकाशन की बारी	मासिक
३. मुद्रक — नाम, राष्ट्रीयता और पता	रामनन्दन सिन्हा, भारतीय, दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि. नयी दिल्ली
४. प्रकाशक — नाम, राष्ट्रीयता और पता	,, ,,
५. सम्पादक — नाम राष्ट्रीयता और पता	राजेन्द्र अवस्थी, भारतीय दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि. नयी दिल्ली
६. उन व्यक्तियों के नाम-पते, जो इस अखबार के मालिक या साझीदार हैं या जो इस की सारी पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के हिस्सेदार हैं	दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि. नयी दिल्ली

मैं, रामनन्दन सिन्हा, यह घोषित करता हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी पूरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही है।

रामनन्दन सिन्हा
प्रकाशक

घर

शब्द सामर्थ्य बढ़ाइए

• विशालाक्ष

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ८ पर दिये गये उत्तरों से मिलाइए।

१. **अंगीकार**—क. अंग पर लेना, ख. स्वीकार, ग. सम्मति, घ. मानना।

२. **टकसाली**—क. प्रामाणिक, ख. अच्छा, ग. ग्राह्य, घ. मुद्रित।

३. **बाना**—क. प्रतिज्ञा, ख. आदत, ग. पोशाक, घ. गणवेश।

४. **अदबदाकर**—क. सोच-समझकर, ख. हठपूर्वक, ग. अकस्मात, घ. सहज ही।

५. **टिल्लेनवीसी**—क. धोखाधड़ी, ख. टालमटूल, ग. रोब दिखाना, घ. टलुआपन।

६. **भंजी**—क. चुगली खाना ख. भुना हुआ, ग. भूननेवाला, घ. बटन।

७. **अनाहूत**—क. स्वेच्छा से, ख. बिना बुलाया, ग. अतिथि, घ. मक्खी।

८. **प्रणयन**—क. प्रणय, ख. परिणय, ग. क्रोध, घ. रचना।

९. **अनिमेष**—क. अपलक, ख. निद्रित, ग. ध्यानमग्न, घ. चकित।

१०. **थिरकना**—क. थिराना, ख. अति चंचलता से नाचना, ग. ठहरना, घ. भटकना।

११. **निखरना**—क. स्पष्ट होना, ख. निर्मल होना, ग. रंगत खिल जाना, घ. सजना।

१२. **क्षरण**—क. कटना, ख. दुर्बल होना, ग. पसीजना, घ. स्रवित होना, झरना।

१३. **कदाचार**—क. दुराचार, ख. कुरूपता, ग. कायरता, घ. आचार।

१४. **ठनठनगोपाल**—क. पुजारी, ख. देव-विशेष, ग. रंक, घ. राजा।

१५. **परावर्तन**—क. परिवर्तन, ख. घेर लेना, ग. आगे बढ़ना, घ. लौट आना।

१६. **चोंचला**—क. चोंच, ख. रोब-दाब, ग. नाज-नखरा, घ. लोभ।

१७. **चलनसार**—क. धूर्त, ख. कुशल, ग. खरा, घ. टिकाऊ।

१८. **गदराना**—क. गंजा होना, ख. अंगों का भर जाना, ग. भीड़ करना, घ. गरमाना।

१९. **वदान्य**—क. प्रतिवक्ता, ख. कंजूस, ग. उदार, घ. भव्य।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. ख. स्वीकार, पूर्वजों का उद्धार करना भगीरथ ने अंगीकार किया। अंगीकरण।

२. क. प्रामाणिक, खरा, चोखा, पक्का, सर्वमान्य। टकसाली साहित्य में टकसाली भाषा। क्या टकसाली बात कही है।

३. ग. पोशाक, वेश-विन्यास, व्रत। पहनो केसरिया **बाना**, अपना **बाना** संभालो।

४. ख. हठपूर्वक, ख्वाह-म-ख्वाह, अवश्य। मैं मना करती हूं पर वह **अदबदाकर** आता है, **अदबदाकर** आग में कूद पड़ा।

५. घ. ठलुआपन, निठल्लापन, आवारागर्दी। तेरी यह **टिल्लेनवीसी** तुझे बरबाद कर देगी, स्थिर होकर काम में लग।

६. क. चुगली खाना। नौकरी मिलने ही वाली थी, मगर उसने **भांजी** मार दी।

७. ख. विना बुलाया, अन्-आमंत्रित, अ-संयोजित। तुम **अनाहूत** वहां क्यों गये? कुत्तों की उस **अनाहूत** सभा में अदबदाकर एक बिल्ली पहुंच गयी।

८. घ. रचना, बनाना, सर्जन। उन्होंने अनेक ग्रंथों का **प्रणयन** किया, परंतु इस ग्रंथ का प्रणेता कौन है?

९. क. अपलक, पलक मारे विना, टकटकी लगाकर। वे दो मिनट तक **अनिमेष** देखते रहे, फिर बोलने लगे। **अनिमिष, निर्निमेष।**

१०. ख. अति चंचलता से नाचना, अंगों को और विशेषतः पैरों को थरथराते हुए नाचना, थिरक-थिरक कर नाचना। गुड़िया पानी पर **थिरक** रही है।

११. ग. रंगत खिल जाना, परिष्कृत या मार्जित हो जाना, रूप उभर आना। उसका रूप, यौवन **निखर** आया है, असली रंग धोने से **निखर** उठा।

१२. घ. स्रवित होना या झरना, चूना, टपकना। तुमने छत बनाने में कितना धन, श्रम और समय लगाया, फिर भी वर्षाजल का यह **क्षरण**।

१३. क. दुराचार, बुरा आचरण, सदाचार का उलटा। **कदाचार** के कारण राजा को गद्दी से च्युत कर दिया गया। **कदाचारी**।

१४. ग. रंक, बहुत गरीब, जिसके पास बिलकुल धन न हो। कवि को इतना धन मिला पर उसने सब बांट दिया, स्वयं सदा **ठनठनगोपाल** ही रहा।

१५. लौट आना, पीछे फिरना। 'तुम खादी पहनने लगे यह परिवर्तन मुझे भाया।' 'यह परिवर्तन नहीं, **परावर्तन** है, मैं तो पहले भी खादी पहनता था।'

१६. ग. नाज-नखरा, विलास, हावभाव। वह गरीब है, तेरे **चोंचले** (या **चोचले**) कैसे निभाएगा? धनिकों के **चोंचले** आधुनिक युवतियों के **चोंचले**।

१७. घ. टिकाऊ, जो अधिक समय तक चल सके। **चलनसार** कपड़ा, जूता।

१८. ख. अंगों का भर जाना, विशेषतः यौवन के कारण। अधपका या गद्दर होना। **गदराये** अमरूद खाने में बच्चे को आनंद आ रहा था। गदराया या गद्दर आम बहुत स्वादिष्ट होता है।

१९. ग. उदार, दाता, दानशील। काकाजी स्वार्थी, कृपण नहीं, महा **वदान्य** थे, उनकी **वदान्यता** देश भर में प्रसिद्ध थी।

मैं अपने को 'कादम्बिनी' की नियमित पाठिका तो नहीं कह सकती पर हां पाठिका हूं, इस गर्व से भी अपने को वंचित नहीं रख सकती। आप 'कादम्बिनी' को बीसवीं सदी की आधुनिक ज्ञान-चेतना का भंडार बनाना चाहते हैं, निश्चय ही आप इस पथ पर अग्रसर हैं। हमारी हार्दिक शुभ-कामनाएं आपको मंजिल तक पहुंचाएंगी। नये वर्ष से नये परिवर्तन बेहद पसंद आये।

—कु. रोशनआरा रहमान, बरहज (उ. प्र.)

'कादम्बिनी' का फरवरी अंक मिला। आद्योपांत पढ़ गया। 'समय के हस्ताक्षर' सचमुच में पठनीय होता है। अश्कजी के उत्तर अच्छे बन पड़े हैं। इस अंक के 'प्रेरक-प्रसंग' अधिक रोचक एवं प्रेरणा-प्रद हैं। शैलेश मटियानी और कृश्नचंदर की कहानियां अच्छी थीं। 'आपकी भाग्य रेखाएं' लेखमाला सच्चा ज्ञान देती है। विजय मर्चेण्ट विषयक लेख में प्रामाणिक एवं रोचक सामग्री है।

—चंद्रमणि पांडे, पटना-६

'लपेटे शाल कुहरे का दुबककर सो रहा आकाश' शीर्षक से प्रकाशित चित्र देखकर कविवर सुमित्रानंदन पंत की ये पंक्तियां स्मरण हो आयीं—

नीली छायाएं थीं तन पर
लगतीं आभा की-सी सिकुड़न
इंद्रधनुष मण्डल से दीपित
उड़ते हैं शत हंसमुख हिमकण

—उर्मिला मिश्र, सिरपुर (आ. प्र.)

'कादम्बिनी' निश्चय ही श्रेष्ठ पत्रिका है। इसकी साहित्यिक परंपरा एवं प्रतिष्ठा अखंड है। कृश्नचंदर की कहानी 'सौ गज की दौड़' खुरदुरे यथार्थ की धरती पर लिखी गयी सशक्त रचना है। 'काल चिंतन' मार्मिक एवं गहरी चिंतन-धारा लिये होने के कारण मन में गहराई से छाकर रह गया।

'समय के हस्ताक्षर' में नये लेखकों को सावधान रहने के लिए जो निर्देश दिये हैं, उनके लिए बधाई।

—राधेलाल विजयावने 'अतृप्त', भोपाल

'कादम्बिनी' के फरवरी अंक में प्रकाशित कृश्नचंदर की कहानी 'सौ गज की दौड़' पढ़कर मुंह से बेसाख्ता यही निकला कि 'कृश्नचंदर जिंदा है!' इस लब्धप्रतिष्ठित कथाकार की जासूसी, रोमानी कृतियों को पढ़-पढ़कर इधर अत्यधिक विरक्ति, अरुचि उत्पन्न हो गयी थी, किंतु इस कहानी में अपने प्रिय, सुप-रिचित लेखक को जीवित पाया।

—डॉ. जी. डी. गुप्त, लखनऊ

फरवरी अंक में 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत आपने जिस समस्या को उठाया है, वह है तो शत-प्रतिशत सत्य लेकिन जम्मू के श्री बलदेव को गलत अर्थ में ले लिया गया है। कुछ दिन पूर्व ही मुझे इसी प्रकाशक ने अपनी पत्रिका—'निस्तन्द्र' की प्रति भेजी है। जहां तक शुल्क की मांग करने का सवाल है, किसी भी नये प्रकाशक को (विशेषकर लघु पत्रिका को) इसकी जरूरत है।

—डा. जवाहर आजाद, फगवाड़ा

फरवरी अंक में 'समय के हस्ताक्षर' नये लेखकों को दिशा-बोध ही नहीं देंगे, स्वनाम-धन्य प्रकाशकों को अपने कृत्यों पर पुनर्विचार का माध्यम भी प्रदान करेंगे। 'कादम्बिनी' को उत्तरोत्तर गरिमा प्रदान करने के लिए बधाई !

—सुधीर निगम, बुलंदशहर

फरवरी अंक में 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत 'नये लेखक: सावधान!' आपकी टिप्पणी बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। वस्तुतः आजकल बहुत से धूर्त्त व्यक्ति नये लेखकों को अपने जाल में फांसकर रुपये ऐंठ लेते हैं। सरकार का यह कर्त्तव्य है कि वह दोषी व्यक्तियों के विरुद्ध उचित कार्रवाई करे। 'कभी नहीं जाना,' और 'कुहरे में लिपटा शहर' कविताएं सरस रहीं। 'कादम्बिनी' में दिन पर दिन निखार आ रहा है।

—दुर्गादत्त 'दुर्गेश', चूरू

'कादम्बिनी' के फरवरी अंक में 'कोढ़ एक समाजवादी रोग' लेख रोचक

एवं सूचनाप्रद रहा। परंतु कोढ़ के उपचार के उपायों में लेखिका ने होम्योपैथी की अत्यंत कारगर दवाइयों को उसी प्रकार से निकाल दिया है जिस प्रकार ये दवाइयां कोढ़ को निकाल फेंकती हैं। आर्सेनिक सल्फ, कैलोट्रॉपिज, पाइपर मैथिस्टिकम, स्कूकम चक, हाइड्रोकोटाइल एवं होयांग नान इसी रोग की दवाएं हैं, जो लक्षणों के आधार पर दी जाती हैं।

—अजेय कुमार गोयल, मुरादाबाद

फरवरी अंक में 'चर्चिल की चिट्ठियां' ब्रिटिश नेता के चरित्र के उज्ज्वल पक्ष पर अच्छा प्रकाश डालती हैं। ऐसे ही नेता देश को संकटों से उबारते हैं।

—सुमति देशपांडे, अमरावती

फरवरी अंक में 'जब रूस में अपरिवारिक क्रांति हुई' लेख विश्लेषणात्मक तथा तथ्यपूर्ण था।

—रछपाल सिंह, जम्मू तवी

'दफ्तर की जिंदगी' एक रोचक स्तंभ है। उससे मुझ-जैसे एक गैर-साहित्यिक व्यक्ति को भी अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने की राह मिल गयी है।

—राजीवलोचन, भोपाल

●

फरवरी,'७४ अंक में 'कुहरे में लिपटा शहर' के लेखक सुरेश किसलय हैं। नचिकेता की कविता इस अंक में पृष्ठ १०६ पर जा रही है।

क्यों और क्यों नहीं?

उन्नीसवें लेखक

कृष्णा सोबती

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, डॉ. बच्चन, यशपाल, डॉ. भारती, जैनेन्द्रकुमार, दिनकर, रेणु, महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल तथा शैलेश मटियानी के संबंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं। अब उन्नीसवीं लेखिका हैं: कृष्णा सोबती

इस लेखमाला का उद्देश्य लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ के लिए। सम्पादक के पास प्रश्न पहुंचने की अंतिम तिथि है १५ मार्च, १९७४।

प्रमुख कृतियां:

डगर से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, यारों के यार, तिन पहाड़, बादलों के घेरे, सूरजमुखी अंधेरे के

वर्ष १४ : अंक ५
मार्च, १९७४

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

सार-संक्षेप

स्थायी स्तंभ

मुखपृष्ठ के छायाकार : डॉ. एम. एस. अग्रवाल, संजीव साहनी (पुष्प)

--'साक्ष्य-समिति' के एक सदस्य ने एक ही प्रश्न तीन प्रार्थियों से पूछा, "दो और दो कितने होते हैं ?"

--एक ने उत्तर दिया--चार। दूसरे ने कहा--बाइस। तीसरा संयत होकर बोला--वह चार भी हो सकता है, और बाइस भी।

--'साक्ष्य-समिति' ने तीसरे व्यक्ति का निर्विरोध चुनाव कर लिया। प्रश्नकर्ता का कहना था, "पहला प्रार्थी इतना ईमानदार है कि आज की दुनिया के योग्य नहीं है। दूसरा धूर्त है, क्योंकि वह हर सहज बात में भी अर्थ ढूंढ़ने का आदी है। तीसरा संतुलित है, वह समय के साथ अपने विचारों को बना और बदल सकता है।

--प्रशासन के लिए ही नहीं, जीवन गति के लिए भी तीसरी स्थिति उपादेय है। बीसवीं सदी को एक विराट मशीनी खालीपन ने पूरी तरह जकड़ लिया है। इस शून्यता के लिए जागृत मानसिकता अनिवार्य है।

--रुग्ण मानसिकता समूचे तंत्र को कुटिल बना देती है और मनुष्य को पूर्ण स्वाधीन बनाने के रास्ते में यह एक विस्फोटक अंतर्विरोध है।

●●

--मनुष्य के निर्माण और संचालन का केंद्र बुद्धि है।

--मन और आत्मा की भाषा भी बुद्धि के 'मशीनी पटल' पर अंकित होकर बाहर आती है। इसलिए बुद्धि जब अपना संतुलन खो देती है तब शब्द अर्थहीन और खोखले हो जाते हैं।

--मन की आंखों से देखी गयी बिस्तर की सलवटें और टूटे हुए बाल 'अनियंत्रित' बुद्धि के दरवाजे में पहुंचकर संज्ञाहीन हो जाते हैं। वास्तव में दिल की अपनी कोई भाषा नहीं होती, वह कवियों और शायरों का केवल एक कल्पना-लोक है।

--इसलिए सही आदमी की पहचान उसकी मानसिकता से होती है।

--मस्तिष्क से बड़ी मशीन का अस्तित्व कल्पना के परे है। समूची भाव-विह्वलता और संवेदनशीलता को जन्म मन से नहीं, मशीनी बुद्धि से मिलता है।

--मशीनी बुद्धि ने सरसों के पीले फूलों से सजी धरती को बेरहमी से पहले बंजर बनाया, फिर पत्थर और सीमेंट की खिड़कियां खड़ी कीं और उनसे झांककर मन के भीतर संतोष और विजय-गर्व का अनुभव किया।

--उसने गमलों में फूल उगा लिये और खेतों की सरसों और गमलों की

रुग्णता के बीच की अंतर-रेखा को मिटा दिया।

—प्रशासन की क्षमता संवेदनशीलता में नहीं, बौद्धिक परिचेतना में निहित है।

—बौद्धिकता का संचालन करनेवाली मशीन मकड़ी के एक जाले की तरह नाजुक है और वह सारी हलचलों को उसी तरह झेलती है जैसे एक प्राणवान तीव्रगामी मकड़ी की हर बेरहम गतिविधि को एक जाला झेलता है।

—प्रशासन यदि यह क्षमता पैदा न कर

चिंतन

सके तो वह विच्छिन्न हो जाता है। इसलिए वह ऐसे व्यक्तियों की खोज करता है जो दो और दो को सही संदर्भों में देख सकें।

●●

—एक ही वस्तु के दो अर्थ पैदा कर देना नैतिकता की सीमा में आता है।

—दार्शनिक रैशडैल का कहना है कि सच्ची नैतिकता वह है जो हमारी अनुभूतियों से मेल खा जाए।

—सत्य यह है कि मन और मस्तिष्क एक इकाई से जुड़े होकर भी परस्पर संघर्षरत रहते हैं। इसलिए अनुभूतियों का संपूर्ण मिलन कठिनाई से होता है।

—प्रमाण है, हिटलर, नेपोलियन और जार-जैसे तानाशाहों का अस्तित्व।

●●

—सृष्टि के आरंभ से ही स्वस्थ मानसिकता को जागरण और जीवन का संगीत माना गया है, क्योंकि ऐसा व्यक्ति ही निरपेक्ष नैतिक गरिमा से पूर्ण हो सकता है।

—निरपेक्ष नैतिकता वह है जो इच्छाओं के परे स्वतंत्र रहकर अपनी सत्ता को पहचान सके।

—ऐसी पहचान के लिए संयत विवेक और विराट मानसिकता जरूरी है।

—इसकी तुलना यूं भी की जाती है कि बोला हुआ शब्द लिखे हुए शब्द से अलग होता है। बोले हुए शब्द को संस्कार मस्तिष्क से मिलता है।

●●

—इसलिए उस प्रार्थी का चुना जाना सम्यक् ही है जिसने बोले हुए शब्द को अर्थ दिया है, मन को परम सत्ता उद्घोषित करनेवाले विवेक को पहचाना है।

—यही विवेक आज हमारे हाथ से कहीं छूट गया है और हम भटक गये हैं, और शायद तब तक भटकते रहेंगे जब तक 'साक्ष्य-समिति' में ऐसे किसी विवेकी व्यक्ति को सत्ता नहीं मिलती।

इलाहाबाद का त्रि-दिवसीय (२६ से २८ जनवरी तक) लेखक-सम्मेलन अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्नों और शंकाओं को छोड़कर समाप्त हो गया। सम्मेलन का आरंभ ही आयोजकों के मन में व्याप्त भय और आशंका से हुआ था। संदेह यह भी था कि यह सारा आयोजन इलाहाबाद की साहित्यिक दुनिया को दूसरों के सहयोग से जीवनदान देने का प्रयत्न था। निरंतर प्रयास करने के बावजूद सम्मेलन संदेह मुक्त नहीं हो सका जिसकी चरम परिणति अंतिम दिन उस समय हुई जब श्रीमती महादेवी वर्मा का व्यक्तित्व और करुणा से भरा निवेदन ही किसी तरह सम्मेलन को विफलता के खतरे से रोक सका। उनके संयोजकत्व में उपस्थित लेखकों में से उन्हें एक कार्य-समिति बनाने का अधिकार देकर सम्मेलन समाप्त हो गया।

सम्मेलन के आरंभ में उद्घाटक भगवतीचरण वर्मा, अध्यक्ष यशपाल और मुख्य अतिथि सुमित्रानंदन पंत ने लेखन से संबंधित अपने निजी विचार प्रस्तुत किये। इनमें

इलाहाबाद लेखक सम्मेलन

बिखरते हुए सूत्रों की भूमिका

यशपालजी की बातें बिना लाग-लपेट के सीधी और सरल थीं। उन्होंने भी भय व्यक्त किया कि लेखकों को इकट्ठा करना तराजू में पांच किलो मेंढक तौलने–जैसा है। लेखन का माध्यम मात्र मनोरंजन नहीं हो सकता, ऐसा सोचना लाठी को घोड़ा मानकर चलना है। उनका उद्घोष कि लेखक-धर्म विद्रोह में अंतर्निहित है और सरकार का धर्म विद्रोह को दबाना है, एक सचाई है। उनकी यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि यदि लेखक सत्ता से कुछ सुविधाएं चाहता है तो उसे सत्ता के साथ समझौता करना होगा।

आयोजकों की ओर से डॉ. रघुवंश ने पूर्व वितरित परिपत्र के मुद्दों पर ही प्रकाश डालकर चर्चा को आगे बढ़ने के लिए छोड़ दिया।

सम्मेलन में चर्चा के लिए तीन विषय थे—(१) लेखक और आज की वर्तमान स्थिति, (२) लेखक और प्रतिष्ठान, और (३) लेखक और व्यावसायिक हित। इनमें से पहला विषय वास्तव में महत्त्वपूर्ण था, लेकिन भैरवप्रसाद गुप्त ने प्रवर्त्तन की बागडोर संभालकर वह विषय ही समाप्त कर दिया और सत्ता, प्रतिष्ठान तथा प्रकाशकों पर अपना निजी आक्रोश व्यक्त करना आरंभ कर दिया। यहीं से सम्मेलन की सक्रियता में शिथिलता आने लगी। दूसरा विरोध यह कहकर राजेन्द्र अवस्थी ने किया कि

विषयांतर से आरंभ हुई यह गोष्ठी किस परिणाम तक पहुंचेगी, पता नहीं है।

भैरवप्रसाद गुप्त प्रमुख पांच आयोजकों में से थे। यह पांच की संख्या लेखकों के अनुभव के आधार पर निश्चित हुई है। वैसे परिपत्र में ३८ लेखकों के हस्ताक्षर थे। ये पांच सूत्रधार हैं : भैरवप्रसाद गुप्त, मार्कण्डेय, विजयदेव नारायण साही, डॉ. रघुवंश और दूधनाथ सिंह। महादेवीजी के व्यक्तित्व का उपयोग सम्मेलन को प्रतिष्ठा देने के लिए और लक्ष्मीकांत वर्मा तथा केशवचन्द्र वर्मा का प्रबंध के लिए कुशलता के साथ कर लिया गया।

वर्तमान स्थिति गंभीर है और जो लेखक सही मायने में जनवादी अथवा जनतांत्रिक होने का दावा करते हैं, उनके लिए सोचने-विचारने का यह एक सही और उपयुक्त अवसर

बायें: सम्मेलन के अंतिम दिन श्रीमती महादेवी वर्मा का करुण आह्वान
बायें: सम्मेलन के बाद बायें से: मेयर रामजी द्विवेदी, यशपाल, महादेवी वर्मा तथा माइक के सामने पंत

है। लेकिन ऐसे अवसर पर राजनीति का विरोध करने के लिए एक और अंतरंग राजनीति का निर्माण कर अपने को चक्रव्यूहकर्त्ता सिद्ध करने का प्रयास अनुचित है। ऐसे अवसर पर लेखक का लेखक की तरह मिलना और चर्चा करना ही उपयोगी हो सकता है। उसे अपनी राजनीतिक मान्यताओं और प्रतिष्ठानगत स्थितियों को गौण मानकर चलना होगा। लेकिन इलाहाबाद-सम्मेलन में इस दृष्टि का लोप था।

अपने ही साथियों को भय और शंका से देखना कि वे सम्मेलन को विच्छिन्न करने आये हैं और अपने बीच के ही उन लेखकों का जो प्रतिष्ठानों में महत्त्वपूर्ण पदों पर हैं, निजी संबंधों और कारणों से विरोध करना पूरे सम्मेलन की व्यापकता को अवरुद्ध कर देता है। इलाहाबाद में हुआ भी यही। यह स्पष्ट हो गया कि वहां दलगत मान्यताएं और निजी

विरोध, एक व्यापक दृष्टि से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण थे।

इस सम्मेलन में बिहार, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश से आये अनेक युवक लेखकों का रोष और उनके भीतर का विद्रोह भी खुलकर सामने आया। वे अपने से ही आगे की पीढ़ी को 'प्रतिष्ठान' मानकर उनके विरोधी हैं। उनमें विवेक की जगह अपने को समझने का मानदंड अधिक महत्त्व रखता है और यह गलत भी नहीं है। आक्रोशपूर्ण इस युवा पीढ़ी की उपेक्षा करने की बजाय उसका सही उपयोग करना आज के लेखक-समुदाय का एक बड़ा धर्म है।

यह चिंता की बात है कि इलाहाबाद का लेखक-सम्मेलन कुछ मूलभूत प्रश्नों को छोड़ गया। उदाहरण के लिए, वर्तमान स्थिति में आज के लेखक का उत्तरदायित्व और उसमें उसकी भूमिका, उसके आत्मदर्शन का विश्लेषणात्मक अध्ययन, सत्ता से कुछ अपेक्षा करने के पहले अपने लेखन की सार्थकता की शल्यक्रिया, सरकारी प्रतिष्ठानों पर आक्रामक होने के पूर्व वहां बैठे अपने ही सहयोगी लेखकों की भूमिका को सही संदर्भों में पहचानना और भाषा के प्रश्न (जिसमें अंगरेजी से अधिक महत्त्वपूर्ण सवाल उर्दू और हिंदी का है) पर गंभीरतापूर्वक सोचना। लेकिन इनके स्थान पर सम्मेलन में समूचा स्वर प्रतिष्ठानों का विरोध कर प्रतिष्ठानों पर कब्जा करना और किसी तरह प्रवेश पाना अधिक मुखर था। (देखिए प्रस्ताव ७ जो नये लेखकों के आग्रह से जोड़ा गया था) इस भूमिका में जहां डॉ. रघुवंश और विजयदेव नारायण साही की भूमिकाएं संयत रही हैं वहां उनके अन्य साथी (जिनमें भैरवप्रसाद गुप्त शीर्ष में हैं) अधिक सक्रिय थे।

इलाहाबाद-सम्मेलन के आयोजक हस्ताक्षरकर्ताओं में उपेन्द्रनाथ 'अश्क', अमृत-राय और इलाचन्द्र जोशी का अनुपस्थित रहना और अमरकांत, नरेश मेहता, केशवप्रसाद मिश्र, शैलेश मटियानी, रामकुमार वर्मा और रवींद्र कालिया का मात्र एक 'दिव्य दृष्टा' बने रहना कुछ नये विचारणीय प्रश्न छोड़ जाता है।

इस सम्मेलन में 'कापीराइट' पर हुई बहस को अवश्य महत्त्वपूर्ण माना जाएगा। 'कापीराइट' के कानूनी मुद्दों में परिवर्तन इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि मौजूदा कानून जन-आकांक्षाओं की सही तसवीर को पुष्ट नहीं करता। लेकिन इस संदर्भ में एकदम युवा लेखकों ने जब बहुत आशाप्रद सहयोग-भावना का परिचय नहीं दिया तब भैरवप्रसाद गुप्त का 'क्या बात है साहब ?' वाले लहजे में 'ट्रेड यूनियन' की भाषा में बातें करना लेखकीय-धर्म का सही निर्वाह नहीं है। सम्मेलन के आरंभ में ही भगवतीचरण वर्मा ने यह शंका व्यक्त की थी कि 'कुछ लोगों का आरोप है कि ट्रेड यूनियन के आधार पर ही यह सम्मेलन बुलाया गया है।' हम इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त किये बिना यही कहना चाहेंगे कि यह समय लेखकीय धर्म को सही दृष्टि से पहचानने-समझने का है, कुछ विशिष्ट

प्रतिष्ठानों और लेखकों पर (नाम लेकर धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, सारिका और कादम्बिनी भी) छींटाकशी अथवा कटाक्ष करने का नहीं। सही लेखक राजनीतिक धाराओं का अंग बनकर अपनी निष्पक्ष दृष्टि नहीं रख सकता।

निष्पक्ष पत्रकारिता की दृष्टि से हम इलाहाबाद-सम्मेलन में रखे गये प्रस्तावों को अविकल रूप से नीचे प्रकाशित कर रहे हैं। इन्हीं पूर्व नियोजित प्रस्तावों और पूर्व नियोजित संगठन समिति के सदस्यों के नामों को लेकर अंतिम गोष्ठी में हंगामा हुआ था। ऐसे सम्मेलनों में सामान्य तौर पर उपस्थित लेखकों की एक उपसमिति पहले ही निर्धारित कर दी जाती है और उसे यह कार्य सौंपा जाता है कि वह अंतिम दिन प्रस्तावित प्रारूप सामने रखे, उन पर चर्चा हो और फिर उन्हें पास किया जाए। एकाधिकार के साथ प्रस्ताव बनाना और फिर संगठन समिति के सदस्यों के नाम भी चुन लेना प्रजातांत्रिक तरीका नहीं है। इनसे आयोजकों के दृष्टिकोण का पता लग जाता है। आगे की बात हम पाठकों पर छोड़ देना चाहेंगे, क्योंकि उनके बिना लेखकों और प्रकाशकों का अस्तित्व ही सीमित हो जाता है।

हिंदी-लेखकों का यह इलाहाबाद लेखक-सम्मेलन वर्तमान परिस्थितियों के विश्लेषण के द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि पिछले २५ वर्षों के दौरान हमारे देश के शासक-वर्ग ने ऐसी स्थितियां पैदा कर दी हैं जिससे न केवल लेखकों के आर्थिक-हितों की सुरक्षा और उनकी रचनात्मक स्वाधीनता संकट-ग्रस्त हुई है, बल्कि समग्र-लेखन यहां तक कि सृजनशीलता के अस्तित्व को ही खतरा पैदा हो गया है। वर्तमान शासन- व्यवस्था ने हमारे आर्थिक और राजनीतिक जीवन के साथ हमारे समस्त सांस्कृतिक जीवन को कुंठित और विकृत करते हुए सृजनशील लेखन को भी अन्य वस्तुओं की तरह पण्य वस्तु बना दिया है। पिछले कुछ वर्षों में बढ़ते हुए आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संकट के इस दबाव का अनुभव इस सम्मेलन में उपस्थित सभी लेखक करते हैं और उन्हें इस बात की गहरी चिंता है कि भारत में जनतांत्रिक प्रवृत्तियां बड़ी तेजी से समाप्त की जा रही हैं।

पूंजीवादी विकास की शासकीय नीति के कारण जहां एक ओर गैर-सरकारी प्रतिष्ठानों ने साहित्य, कला और संस्कृति-जैसी महत्त्वपूर्ण मानवीय उपलब्धियों को सीधे व्यापार के स्तर पर उतारकर उन्हें मात्र धन कमाने का साधन बना लिया है, वहीं जनता की रुचियों को विकृत करने एवं समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, अन्याय और शोषण पर पर्दा डालने तथा वास्तविकताओं को छिपाने के लिए एक विशेष प्रकार के नियोजित सस्ते साहित्य का एक देशव्यापी बाजार खड़ा कर दिया है। यहां तक कि रजिस्टर्ड छद्म नामों से प्रकाशित सस्ते उपन्यास आज लाखों की संख्या में बेचे जाने लगे हैं।

शासकीय प्रतिष्ठानों ने पिछले २५

वर्षों में एक ऐसी पतनशील और मरणोन्मुख संस्कृति को विकसित किया है जिसका व्यापक भारतीय जन-मानस से कोई संबंध नहीं रह गया है। इन शासकीय तथा अर्द्ध-शासकीय प्रतिष्ठानों के घोषित संविधानों, उद्देश्यों और कार्यक्रमों तथा व्यावहारिक कार्य-विधियों में कोई भी संबंध नहीं रह गया है। यहां तक कि ये प्रतिष्ठान जनता की वास्तविक सृजनेच्छाओं को अवरुद्ध करने का साधन बन गये हैं। आज यह बात स्पष्ट हो गयी है कि ये संस्थान न केवल यथा-स्थिति को बनाये रखने के मुख्य हथियार बन गये हैं, बल्कि प्रतिक्रिया के जन-विरोधी केंद्रों के रूप में कार्यरत हैं। मौजूदा शासक-वर्ग भारत में लोकतांत्रिक विकास की धारा को अवरुद्ध करने के लिए, अपने वर्गीय हितों की सुरक्षा के लिए और व्यापक जन-समुदाय के बीच स्वयं को अधिक से अधिक प्रतिष्ठित करने के लिए इनका खुलकर उपयोग कर रहा है।

इन स्थितियों में हिंदी लेखकों का यह सम्मेलन देश के सभी लेखकों का आह्वान करता है :

एक : अपने लेखन के लिए यदि किसी भी लेखक को शासन द्वारा किसी भी रूप में प्रताड़ित, आतंकित अथवा दंडित किया जाता है या उसे उसकी आजीविका से अलग किया जाता है, तो लेखक सामूहिक रूप से शासन की ऐसी पुलिस तथा अन्य कार्य-वाहियों के विरुद्ध संघर्ष करेंगे। इस संदर्भ में सभी लेखक यह मांग करते हैं कि ऐसी कार्यवाहियों के अंतर्गत शासन द्वारा जो भी लेखक अपनी आजीविका से अलग किये गये हैं, उन्हें बिना किसी शर्त उनकी आजी-विका तुरंत वापस की जाए और जो लेखक गिरफ्तार किये गये हैं उन्हें बिना किसी शर्त तुरंत रिहा किया जाए।

दो : राजकीय सांस्कृतिक प्रतिष्ठानों को जनता के सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय उन्नयन तथा विकास के लिए जन-तांत्रिक बनाया जाए। ऐसे प्रति-ष्ठानों को नौकरशाही की व्यवस्था से निकालकर स्वायत्त प्रतिष्ठानों के रूप में लेखकों और कलाकारों द्वारा ही गठित एवं संचालित किया जाए। इनका संपूर्ण कार्य-विवरण प्रति वर्ष जनता और सभी लेखकों-कलाकारों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाए।

तीनः : सभी अर्द्ध-सरकारी तथा गैर-सरकारी साहित्यिक तथा सांस्कृतिक प्रतिष्ठान जो साहित्य, संस्कृति और कला का व्यापार करते हैं और जिनका संचालन असाहित्यिक-अवांछित व्यक्ति कर रहे हैं, उनका जनवादीकरण किया जाए तथा उनमें प्रभावकारी ढंग से लेखकों का प्रतिनिधित्व बढ़ाया जाए।

चार : विश्वविद्यालयों के साहित्य-विभागों

के पाठ्य-क्रम निर्माण में लेखकों का सहयोग अनिवार्य रूप से लिया जाए। साहित्य के अध्ययन-अध्यापन को जीवंत बनाने के लिए प्राध्यापकों, लेखकों और छात्रों के बीच अंतर्संबंध स्थापित किया जाए।

पांच : शैक्षिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक एवं जन-सम्पर्क के सभी कार्यों के लिए विदेशी भाषा अंगरेजी को हटाकर संपूर्ण रूप से भारतीय भाषाओं का उपयोग तुरंत किया जाए।

छ : संसद लेखकों के इस सम्मेलन द्वारा पारित प्रस्ताव के अनुसार 'कॉपी-राइट' कानून में अविलम्ब परिवर्तन करे।

सात : हम ऐसे तमाम लेखकों की भर्त्सना करते हैं जो ईमानदार एवं जागरूक लेखकों को गुमराह कर अपनी दूषित महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए सरकारी अथवा सेठाश्रयी प्रतिष्ठानों में नये प्रवेश पाने की साजिश कर रहे हैं। (नये युवा लेखकों द्वारा जोड़ा गया प्रस्ताव)

—सम्पादक

सम्पादकीय विभाग के सहयोगी

सह-सम्पादक : शीला झुनझुनवाला, **उप-सम्पादक :** कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक, **प्रूफ-रीडर :** स्वामी शरण, **साज-सज्जा :** सुकुमार चटर्जी

हर पल फूल

गुलाबी फूल नीलों में मिल गये
एकदम लाल पीलों में मिल गये
हम गुलाबी नीले लाल पीले
सब भर लाये झोली में गीले-गीले
और सफेद भी
जो झीलों में मिल गये

अभी बैठकर माला बना रहे हैं
हर पल जैसे नया साल मना रहे हैं
सुख के बहाने आकर
दुख के हीलों में मिल गये

—भवानीप्रसाद मिश्र

२१ राजघाट कालोनी,
नयी दिल्ली-११०००१
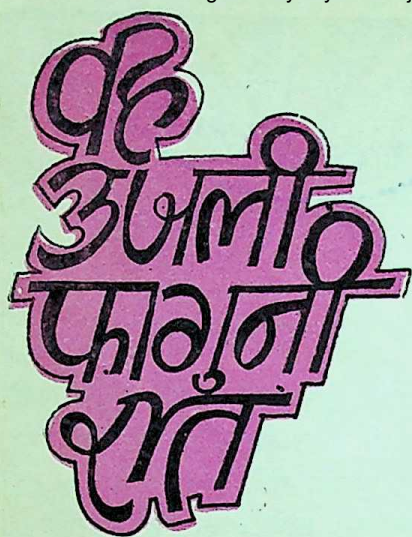
• विवेकी राय

ठीक होलिकादाह की रात में काली बाबू को सांप ने डस लिया। चांदनी खूब चटक फैली थी। हर चीज साफ-साफ दिखायी पड़ रही थी। सिर्फ वह सांप न जाने कहां छिप गया। वास्तव में उसे किसी ने खोजा भी नहीं। उनके तीनों लड़के वहीं थोड़ी दूर सोये हुए थे। जब बहुत लोग इकट्ठे हो गये और थुड़ी-थुड़ी करने लगे तो उठकर वे भी दर्शकों की तरह खड़े हो गये। सांप काटे की बात छोड़कर क्षण भर के लिए लड़कों के निकम्मेपन पर लोग अपना-अपना मत व्यक्त करने लगे—'यह देखो, कैसे कलियुगी लड़के हैं! बाप को सांप काट गया और इनके लेखे कुछ हुआ ही नहीं!' . . . 'अरे समुआ, दौड़-दौड़, जा ओझइत को लिवा आ!' . . . 'अरे भाई, पहले नीम की पत्ती मंगाकर चबाने के लिए दो। देखें, कैसी लगती है?'

"पिछली बार जब सांप ने काटा था तो बाबूजी को पहचान के लिए पेड़ा खिलाया गया था!" समुआ बोल उठा, काली बाबू का बड़ा लड़का।

"पूरा एक किलो।" सबसे छोटे लड़के ने कहा।

क्षण भर के लिए लोग स्तब्ध हो गये। लड़कों ने गंभीरता के साथ कहा था। पर, इतना तो स्पष्ट था ही कि वे कूट कर रहे हैं। क्या ऐसी नाजुक स्थिति में ऐसा कूट किया जा सकता है? वह भी पुत्रों के द्वारा ही?

"अरे तुम लोगों को शरम नहीं आती? बाप का मरना ही भा रहा है तो भागो यहां से . . . . ." बूढ़े दीपन बाबा बिगड़ उठे, "जाओ दीनानाथ, ओझइत को बुला लाओ।"

दीनानाथ, पट्टीदार का लड़का, चुपचाप चला गया। काली बाबू के लड़के कुछ दूर एक चारपाई पर जाकर बैठ गये। न जाने क्या सोचकर मझला नीम की पत्ती तोड़ लाया। पत्ती खिलायी गयी। 'कैसी लगती है?', 'क्या मीठी लग रही है?' काली बाबू ने जब सिर हिलाकर हामी भर दी तो वातावरण में गंभीर हड़बड़ी व्याप्त हो गयी। जहर का असर हुए बिना नीम की कड़वी पत्ती मीठी कैसे लगेगी? उधर होलरी बांध-बांधकर रखी

हैं। दो-चार घंटे में होली जलेगी, तहीं यह अमंगल! . . . ओझइत नहीं मिलता है तो कलिया को टांगकर तक्षकबाबा के यहां पहुंचा दिया जाए। मुर्दे भी वहां से उठकर घर चले जाते हैं। . . . अरे देखो, देखो, लहर आ रही है क्या?

उसी समय दीनानाथ के साथ ओझइत हीरा चौधरी पहुंच गये। राई, थाली और चूहे की बिल के पास की मिट्टी मंगायी गयी। हीरा ने कुरी लगायी, फिर मंत्र पढ़कर मिट्टी फेंकना शुरू किया, "जै ईश्वर गौरा पार्वती की दोहाई . . ." हाथ आगे की ओर सरकने लगा और एक कुरी के पास पहुंच गया।

"किसकी कुरी है? . . . किस सांप ने काटा है?" किसी ने पूछा।

"चने के खेत के!" काली बाबू का बड़ा लड़का बोल उठा।

"मार साले आवारा को . . ." दीपन बाबा झपटे और बड़ा लड़का श्यामनारायण उर्फ समुआ भीड़ से निकलकर अपनी होलरी लेकर 'सम्मत बाबा' की ओर जोर-जोर से चिल्लाता भागा।

लोगों में एक नयी चिंता व्याप्त हो गयी। होलरी लेकर जो समुआ गया है वह मानेगा नहीं। एक ही छटा चांडाल है। असमय होली फूंक देगा। जिंदगी भर इसके बाप काली ने भी यही किया।

"हे, सुन तो . . . काली को कब सांप ने काटा?" काली के सबसे छोटे लड़के उमा से एक आदमी पूछता है।

"मैं बताता हूं . . .।" मझले लड़के विश्वनाथ ने कहा।

उसने बताया कि काली बाबू परसों रात से ही लापता थे। दो दिन पता नहीं चला। कुछ कहकर भी नहीं गये थे। वे लोग बहुत चिंतित थे। पर रात दीपन बाबा आये तो उन्हें काली बाबू अपनी चारपाई पर सोये दिखायी पड़े। लड़कों को आश्चर्य हुआ। लगा, उनके सो जाने पर चुपचाप चारपाई निकालकर लेट रहे। इसी समय दीपन बाबा से उन्होंने कहा कि कीरा ने छू दिया है।

मुश्किल यह हुई कि हीरा के मंत्र
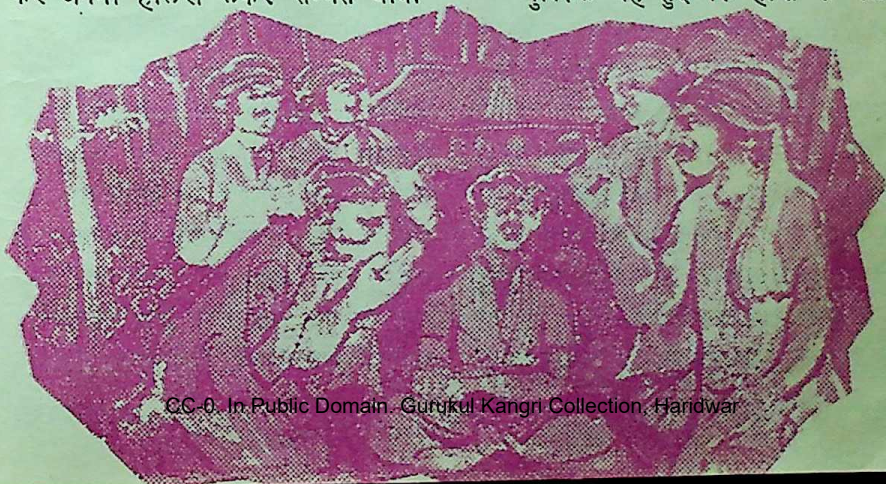
को समुआ ने इस प्रकार होलरी बना-कर उड़ाया कि वह 'गयन्ना' हो गया। अब उसे विश्वास नहीं रहा कि वह कार-गर होगा। गुरु ने कहा था, 'गुप्त रखना। प्रगट होते ही प्रभाव जाता रहेगा।'

फागुन की वह आखिरी दूधिया रात मामूली नहीं होती है। गजब का एक नशा लेकर विस्तृत ग्रामांचल पर उतर आती है। ठंडी, उजली, सुखद वह त्योहार की रात, रात नहीं रात की जवानी, जिसकी अंगड़ाइयों में अबीर-गुलाल के मचलते हुए सपने होते हैं, जिसकी पछिमा हवा की एक-एक लहरों में झड़ती नीम की पत्तियों की अनंत गुदगुदी होती है, जिसमें चेतना के तार-तार को झनझनाने वाले ढोल-झांझ के स्वर घुले होते हैं और लाखों-लाखों अनाम सुंदरी प्रियाओं के विहास की तरह खिली, निकटतर होती जाती उनकी सांसों की तरह मादक, सचमुच मामूली रात नहीं होती।

अरे आंखें खोल कलिया, देख कैसी अलमस्त रात तुझे न्यौता दे रही है? विष ही विष की दवा है। उठा ढोलक, आज फिर बांध ले कमर में; जरा जोर लगाकर बमबमा दे, लहर-फहर कहां उड़ गयी?

परसों रात काली बाबू ढोलक बांध-कर झूमते रहे। गांव में होलिकादाह की रात तो उसके जलने के पूर्व शांत होती है पर इसके एक-दो दिन पहलेवाली पूरी रातें बहुत उत्पाती होती हैं। उस दिन जो न हो जाए, जिस गली में न कीच मच जाए, जो ताल न बज जाए और जिस सुंदरी को न 'कबीर' बोलकर झरझरा दिया जाए! कहते हैं, फगुआ गानेवाला सनक जाता है। परसों तो सचमुच सनक गया था। छुट्टी पर आ गये हैं कप्तान साहब और एक से एक अव्वल 'अंगरेजी' लेकर। काली ने कहा, उन्हीं के दरवाजे से फगुआ शुरू होगा और शुरू-शुरू में ही भीतर जाकर भरपूर चढ़ा आया। एक अद्धा पाकिट में रख लिया और फिर जोर से उठाया—

'बा..आ..ल..अ..मा नहीं आया
फागुन बीत गया'

और लोगों ने ताल लोक कर ऐसा चढ़ाया कि तूफान मेल ट्रेन की गड़गड़-झांव-झांव में लगा, कप्तान साहब का बैठका उड़ जाएगा। उनके घर से फगुआ-जलूस मंदिर की ओर बढ़ा। लोगों को मालूम था कि जब काली बाबू हैं तो बीच में कहां पर क्या होगा और धीमी चाल से पहुंचकर गली के उस बंद दरवाजे के आगे जम गये। काली बाबू ने हाथ भांजकर ललकारा, 'झ र र र र र र..सुनले भइया मोर कबीर... कि मोर कबीर..' और अमुक बो भौजी का वह शाब्दिक चीरहरण शुरू हुआ कि छोटे-छोटे लड़के लजाकर हट गये। कुछ और 'जानकार' लोग हट गये। मोरचे पर काली बाबू डटे रहे। छपाक.. चहारदीवारी के ऊपर से भरपूर जल आया।... रंग नहीं, सड़ा पानी है, कुछ भुक्तभोगी लोग चिल्लाये। आने दो, फिकर नहीं, और काली ने दोगुने

जोश में उठाया, [illegible] किंतु बीच में ही रुक गये। सामने उनका बड़ा लड़का भी लय में लय मिला रहा था। "क्या हुआ?" लोग पूछने लगे। "दो पुश्त एक साथ 'कबीर' नहीं गाती", उन्होंने उतरे मन से कहा और आगे बढ़ चले।

मंदिर पर फगुआ पहुंच गया। यहां आकर लोग जानते हैं कि काली बाबू गंगा जल का रंग बनाकर बालू का अबीर-गुलाल उड़ाएंगे। हर साल यही होता है। यहां वही पवित्र पद गाया जाता है, 'होरी खेलत रंग बनाय, ठाकुर धाम में' परंतु परंपरा तोड़कर वे कुछ और ले उड़े तो समझ लिया गया कि नशा गहरा गया। पूरा सुर भरकर आंख मूंद वे उठा रहे थे—

'ए अंखिया अलसानी
पियासेज चलो हो!'

मदमत्त सुंदरी निवेदन कर रही है कि प्रिय, जरा संभालकर धीमे-धीमे, नरमी के साथ शैया पर पैर रखना क्योंकि एक तो उसकी चोली पुरानी है, उसके बंद धड़कन से अपने आप खुलते चले जा रहे हैं और दूसरे शायद जेठानी जाग रही है... गड़-गड़-गड़ गड़-धब्ब्! सम पर वह हाथ चल गया कि ढोलक साफ!

गायन रुक गया। मंदिर के चबूतरे पर बैठकर काली बाबू कमर से ढोल खोलने लगे। पर उन्होंने अद्धा निकालकर हाथ में ले लिया और ढोल कांख में दबाकर दरवाजे की ओर चले।

ढोल [illegible] भंग और मस्ती-पानी लेकर काली बाबू सोने जा रहे थे कि अचानक उनकी निगाह सोये हुए लड़कों की ओर गयी। देखा, बड़े लड़के की चारपाई खाली है। एक चीज सन्न से उनके भीतर छू गयी। धीरे-धीरे वे उसकी सनसनाहट में उबलने लगे। उन्होंने पत्नी को आवाज दी, "सुनती हो? पानी चाहिए।"

पत्नी गहरे धर्मसंकट में पड़ गयी क्योंकि पुत्रवधू के कमरे से खुसुर-पुसुर की आवाज आ रही थी। आगंतुक के आज आने की कल्पना मात्र से वह लाज में गड़ी जा रही थी। इसी समय बाहर सांकल की जोर की खड़खड़ाहट कुछ गंदी गालियों के साथ सुनायी पड़ी। पत्नी की छाती धड़कने लगी। तभी पुत्रवधू झमाक-से कमरे से निकली और फाटक खोल दिया। लेकिन यह क्या? वह कुछ बड़बड़ाते
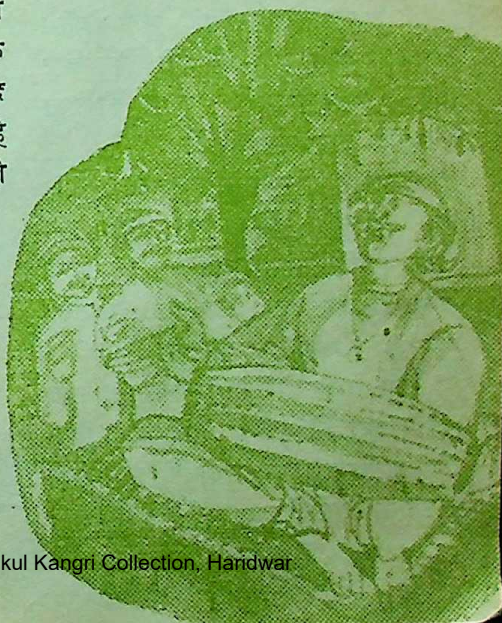
बेतहाशा भागी आ रही है, सिर की साड़ी खिसककर जमीन पर आ गयी है और उसे पकड़ने के लिए पीछे-पीछे बाबू कालिंदीचरण साड़ी के छोर को पकड़े दहाड़-से रहे हैं। चट पत्नी बीच में आ गयी और साड़ी उनके हाथ से खींच बहू के ऊपर फेंकते हुए बोली—

"डूब मरो चुल्लू भर पानी में, बहू पहचान में नहीं आती ?"

"समझा, लेकिन बहुएं तो चने की खेती होती हैं।"

पत्नी ने जोर से एक चांटा लगाया, तड़ाक ! . . .पापी का मुंह तो भक्-भक् महक रहा है। अब नशा उतर जाएगा।

सचमुच नशा उतर गया। वे वहीं आंगन में जमीन पर बैठ गये। पत्नी की फटकार जारी रही। इसी बीच बड़ा लड़का कमरे से निःशब्द निकल गया।

"जा,मुंहकरिखी लगा!" पत्नी बोली।

और वही गये - गये दो दिन बाद सांप से डसवाकर होली जलने की रात में काली बाबू लौटे थे।

अकसर गांव के लोग कहते हैं कि पिछले जनम में कलिया जरूर नेवला रहा होगा क्योंकि सांप जाति से जब-न-तब भिड़ंत हो जाती है। तिस पर भी मौका देख-देखकर उसे सांप डसते हैं।

इस बार संयोग से हीरा था। बावजूद मंत्र 'गयन्ना' हो जाने के उसने काफी विष-नियंत्रण किया। शुभेच्छुओं को सुर्ती-बीड़ी बांटते उनके दोनों लड़के सो गये थे। बड़ा उसी प्रकार 'सम्मत बाबा' के यहां 'होहो होहो' कर रहा था। होलिका दाह का मुहूर्त नहीं आया था। दीपन बाबा स्वयं जाकर समुआ को रोकना चाहते थे परंतु अभी भी रह-रहकर काली का दांत बैठ जाता था। एक आदमी को उन्होंने भेजा कि जाकर बुला लाओ।

"बाबू को कितनी लहरें आयीं ?"

"किसी ने हिसाब तो नहीं लगाया !"

"पिछली बार तो बाबू ने खुद जोड़ा था कि बावन लहरें आयीं ?"

"तो जी जाएं तो उन्हीं से पूछ लेना।" दीपन बाबा ने चिढ़कर कहा।

"बाबा, कितनी लहर में आदमी मर जाता है ?"

समुआ का सवाल काम कर गया। काली बाबू उछलकर खड़े हो गये।

"ठहर साला ! क्या समझ रहा है कि मैं मर ही गया !"

और उनके झपटकर बढ़ते लड़का हवा हो गया। हाथ लगी होलरी। उसे लेकर काली बाबू यह कहते हुए कि होली जलने का वक्त हो गया 'सम्मत बाबा' की ओर दौड़ पड़े। 'होहो-हो हो होल्लरी।'

—सकलेनाबाद गाजीपुर (उ. प्र.)

जब तक मनुष्य अपने आप तक नहीं पहुंचता, ईश्वर तक पहुंचने की उसकी कल्पना व्यर्थ है।

—अज्ञात

चौवनवें वसंत पर

आज भी सिहरन जगा जाती बदन में
कुनकुनी सेंमर-मुलायम, भोर की पहली किरन !
आज भी तो दे रहा हौले हिलोरे लहू को
जो बाग की सांसें समेटे
तितलियों के पंख सहलाता हुआ
गुजरा जरा सटकर पवन
झटक फेंके हैं अभी सूरजमुखी ने
शिशिर के पंजे, कि भूरे व्यूह, निर्मित तंतुओं से
जगत में घुटती हुई गहराइयां
उठती चली ही आ रहीं ऊष्मा लिये,
ऊपर खुले में अब कुएं से
एक अद्‌भुत जीविषा के चतुर्दिक उद्‌घोष का
निश्शब्द स्पंदन,
बन गया सारा गगन !

गति दिशा बल के नियम मूर्छित हैं,
नयन मूंदे, लिये मुसकान ओठों पर
किसी अनुभूति के सीने सिमट
चुपचाप है दर्शन !

समय रह-रह अचानक लौट पड़ता है
कहीं छूटा हुआ कुछ फिर उठाने को
हृदय की झुर्रियों पर लालिमा जो आ गयी है
शर्म की क्या बात है
वह सहज सर्वोपरि पुनीता है
झिझक क्यों हो जताने में उसे
सारे जमाने को

डॉ. गोपाल शर्मा
—निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय,
रामकृष्णपुरस, नयी दिल्ली - ११००२२

हंसिकाएं

—"हमारे देश में सबको समानाधिकार हैं। हम चाहें तो अपने प्रेसीडेंट को उसके घर जाकर भी बुरा-भला कह सकते हैं।"

—"हमारे देश में भी समानाधिकार हैं। हम चाहें तो अपने प्रेसीडेंट के घर जाकर तुम्हारे प्रेसीडेंट को बुरा-भला कह सकते हैं।"

*

रमेश—"मुझे पचास रुपये की आवश्यकता है क्या आप दे सकते हैं ?"

सुरेश—"पचास तो नहीं, मेरे पास सिर्फ चालीस रुपये हैं।"

रमेश—"अच्छा ठीक है। चालीस ही दे दीजिए। दस रुपये आप पर उधार रहे, फिर कभी दे दीजिएगा।"

*

—"सम्मेलन में शामिल होने के लिए आपको जवाबी तार भेजा था लेकिन अभी तक हमें जवाब नहीं मिला, इसका कारण ?"

"मैंने तो जवाबी तार लिफाफे में डालकर पोस्ट किया था। आप तो जानते ही हैं, तारघर यहां से काफी दूर है।"

*

वकील—"आपने कोट चुराया है, यह तो प्रमाणित हो ही चुका। अब बताइए आपको कोट के बारे में कुछ और कहना है ?"

चोर—"यही कि कोट की बाहें छोटी थीं और मुझे लंबी करवानी पड़ीं।"

*

व्यक्ति—"अरे आप तो जिंदा हैं! हमने सोचा कि आप दुर्घटनाग्रस्त हो गये।

सज्जन—"आपने यह अंदाजा कैसे लगाया"

व्यक्ति—"बिलकुल आपके जैसा चेहरा, आपके जैसे कपड़े—काली पैंट।"

सज्जन—"क्या उसने सफेद कमीज पहनी हुई थी ?"

व्यक्ति—"जी हां।"

सज्जन—"क्या कमीज के बटन टूटे और कालर फटा हुआ था ?"

व्यक्ति—"नहीं।"

सज्जन—"तब मैं वह हो ही नहीं सकता।"

*

एक मित्र दूसरे से—"वाह-वाह! क्या ही सुंदर भेंट लाये हैं आप। क्या ही प्यारा बंदर है . . . यह। मुझे हर समय आपकी याद दिलाता रहेगा।"

*

सज्जन—"मुझे अपने मित्र की मृत्यु का प्रमाणपत्र चाहिए।"

डाक्टर—"कुछ और भी या सिर्फ प्रमाण-पत्र।"

सज्जन——"महाश[illegible] जगह यदि आप मात्र इतना ही लिख दें कि आपने ही उसका इलाज किया था तो यह भी पर्याप्त रहेगा।"

*

एक व्यक्ति दूसरे से——"मैं आपसे कुछ कहना चाहता था। क्या मैं आपसे कुछ...मांग सकता हूं।"

दूसरा——'हां, हां मैं जानता हूं। तुम बड़ी खुशी से मांग सकते हो। मेरी बेटी से विवाह करना चाहते हो न?"

पहला——"जी नहीं, मैं तो सिर्फ तीस रुपये उधार चाहता हूं।"

दूसरा—— "तीस क्यों? वह मैं कैसे दे दूं। मैं तो तुमको जानता तक नहीं।"

★

एक——"उसने मेरी अंगूठी देखकर क्या कहा? अंगूठी उसे पसंद तो आयी।"

दूसरा——"हां, पसंद तो आयी पर वह कह रही थी, इससे पहले जो दो अंगूठियां मिली थीं वे ज्यादा कीमती थीं।"

*

——"जी मैं यह दवाइयां पिछले पच्चीस बरस से बेच रहा हूं लेकिन आज तक कोई शिकायत नहीं आयी।"

——"ओह! यह दवाई खाकर कोई बचता तब तो शिकायत करने आता।"

★

अभियुक्त: "साहब, यह मुकदमा कितने दिनों तक चलेगा?"

वकील: "मेरे लिए दो घंटे और तुम्हारे लिए दो वर्ष!"

हंसिकाएं : काव्य में

चूंकि

मंच पर आकर, बेचारे कविवर—
कविता भूल गये, हाथ पांव फूल गये
लगे हकलाने तो——
चूंकि गीत था किसी मशहूर कवि का
इसीलिए प्राम्प्ट किया उन्हें, जनता ने

मार्गदर्शन

गाइड की बातें सुनकर
रह गये सहसा वह भौंचक्के
कि कहता था बारबार
दिल्ली के सिर्फ मशहूर हैं साहब
चोर-उचक्के

मुखौटा

इधर उधर भूखे नंगे
चिल्लाते लोगों की विद्रोहभरी
आवाजें सुनकर, लगे वह देखने
दर्पण में चेहरा, और लगे कहने कि
अबकि मुखौटा
शायद कुछ छोटा हो गया है मेरा

भजन

भूखे भजन न होई गोपाला
इसीलिए आज तक, मिलते हैं लोग
अधिकतर नास्तिक

भाषण

तालियां पीटने लगी जनता सारी
कि उत्तेजित होकर वह कह रहे थे—
इस क्षेत्र में आ, कभी पैर उखड़े,
कभी जमे, तो कभी हुए भारी

——सरोजनी प्रीतम

इजराइल के नये सामाजिक मूल्य किबूत्ज

जहां विवाह एक संस्था नहीं है

● गिरिजा सकलानी

इजराइल का नव-राष्ट्र के रूप में उदय लगभग ७०००,००० सदस्यों से हुआ किंतु प्रथम दशक में ही इस राष्ट्र की जनसंख्या दुगुनी हो गयी। इस नवोदित राष्ट्र के प्रशासकों के सम्मुख यह एक गंभीर चुनौती थी।

इजराइल के राष्ट्रनायकों ने विशेषकर कृषि-विकास और राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से कुछ अभिनव प्रयोग किये, जिनमें किबूत्ज और मोशाव ग्राम महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें भूमि को ४९ वर्ष के पट्टे पर दिया जाता था और अवधि की समाप्ति पर यह पट्टा पुनः नया कर दिया जाता है। किबूत्ज की व्यवस्था सामूहिक जीवनयापन पद्धति पर आधारित है जबकि मोशाव, सहकारिता पर आधारित व्यवस्था है। इसमें कृषि-भूमि का सदस्यों में समान वितरण तो कर दिया जाता है किंतु उत्पादित खाद्य-पदार्थों का क्रय-विक्रय सहकारी-समितियों के माध्यम से ही किया जाता है। यहां तक कि उर्वरक, बीज, कृषि के औजार आदि सहकारी समितियों द्वारा ही बेचे जाते हैं एवं बड़ी-बड़ी कृषि-योग्य मशीनें, ट्रैक्टर आदि सहकारी समितियां ही खरीदती हैं, बाद में उन्हें किराये पर देती है।

सर्वप्रथम मोशाव १९२१ में स्थापित किया गया था और इस समय इजराइल में लगभग ३५० मोशाव हैं। किबूत्ज और मोशाव दोनों व्यवस्थाओं में राष्ट्र ही भू-स्वामित्व का अधिकारी होता है। किबूत्ज सामूहिक, पारस्परिक सहायता पर आधारित व्यवस्था है जहां कि संपूर्ण जीवन सामूहिक जीवनयापन पद्धति पर आधारित है। वहां सब मिलकर सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हैं। इसे एक तरह से आदर्श साम्यवाद कहा जा सकता है, दूसरी ओर इसे विस्तृत-परिवार के रूप में भी देखा जा सकता है।

किबूत्ज का मुख्य आधार

इस प्रकार की सामूहिक पारिवारिक व्यवस्था में एक सौ से लेकर डेढ़-सौ परिवार सम्मिलित रूप से रहते हैं। कभी-कभी इससे भी अधिक हो सकते हैं। किबूत्जों के सदस्यों की कोई व्यक्तिगत संपत्ति नहीं होती, व्यक्ति केवल कुछ व्यक्तिगत आवश्यक वस्तुएं ही रख सकता है अन्यथा सम्पत्ति पर सामूहिक अधिकार ही होता है एवं उत्पादन, वितरण और उपभोग,

सभी समानता पर आधारित होते हैं। इस सामूहिक कोष से प्रत्येक सदस्य को एक अल्पराशि भत्ते के रूप में प्रदान की जाती है। इस व्यवस्था में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण परीक्षण बच्चों पर किया जा रहा है। बाल-केंद्रों की स्थापना की गयी है, जहां पर सामूहिक रूप से उनकी देखरेख व लालन-पालन होता है।

इस व्यवस्था का शुभारंभ करने वाले वही सदस्य थे, जिन्होंने इस नवोदित राष्ट्र-निर्माण आंदोलन में सक्रिय भाग लिया था। उन लोगों ने विवाह तथा किसी प्रकार के यौन-संबंधों को संस्थागत स्वरूप में स्वीकार न किया। दूसरे शब्दों में उनका उद्देश्य विवाह और परिवार-जैसी परंपरागत व्यवस्था को खंडित करना था। इसके कुछ ठोस कारण थे। एक तो इस राष्ट्र का निर्माण करनेवाले नवागंतुक, जो विभिन्न राष्ट्रों से, विभिन्न अनुभवों को लेकर आये थे, दूसरा, इस देश में स्त्री-पुरुष अनुपात १:२ होने के कारण भी इन्हें अपनी यौन-संबंधी नैतिकता निर्धारित करनी आवश्यक हो गयी थी। परिणामस्वरूप ये लोग प्यार के बाह्य दिखलावे से घृणा करने लगे। यह भावना आज भी लोगों में स्पष्ट रूप से दिखती है। इसका एक अन्य कारण यह भी था कि इस समाज का प्रमुख उद्देश्य समुदाय का विकास करना था और इसीलिए सामूहिक जीवनयापन को अधिक महत्त्वपूर्ण समझा गया जो कि स्वयं में ही एक लक्ष्य है। विवाह व परिवार-व्यवस्था को समाज के विकास में आंशिक रूप से बाधक समझा गया, जहां व्यक्तिगत स्वार्थों की अधिक संभावना होती है। अतः यहां के राष्ट्र-नायक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विवाह-व्यवस्था को मान्यता न दी जाए क्योंकि उनके मतानुसार विवाहित स्त्री एक बंधक-सेवक के ही समान होती है।
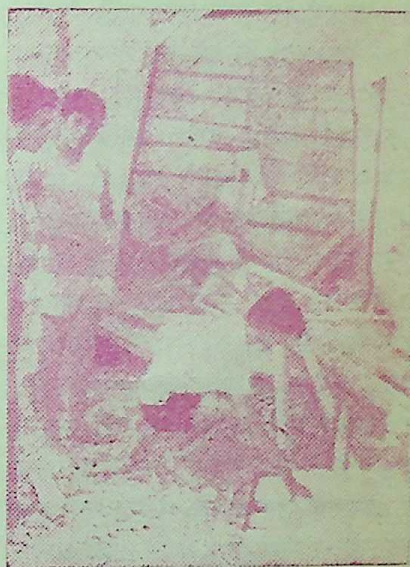
हाल ही के अरब-इजराइल युद्ध में ध्वस्त एक किबूत्ज

इस नयी सामाजिक व्यवस्था में स्त्री को हर स्तर पर पुरुष के समकक्ष ही महत्त्व दिया गया, जहां वह बंधन-मुक्त होकर समाज के लिए उपयोगी बन सके।

विवाह प्रथा : नये संदर्भों में

इजराइल बनने के प्रारंभिक समय से ही विवाह का परंपरागत, रूढ़िवादी स्वरूप

समाप्त हो चुका था। नयी स्थितियों में युवक-युवतियां एक दूसरे के प्रति आकर्षित होने पर संबंध स्थापित कर सकते थे किंतु सार्वजनिक रूप से समाज में उस युवक व युवती को किसी भी प्रकार की वैवाहिक मान्यता देने की कोई वैधानिक, सामाजिक अथवा धार्मिक विधि नहीं बनायी जाती थी। तात्पर्य यह है कि पति-पत्नी संबोधन का प्रयोग किसी भी रूप में न किया जाता था, समाज की दृष्टि में वह मात्र सहकर्मी व सहभागी समझे जाते। इसलिए किसी पुरुष के साथ रहनेवाली स्त्री को उसकी श्रीमती के संबोधन से उच्चारित नहीं किया जाता और न केवल मात्र ही बच्चों को जैवकीय माता-पिता का ही स्वीकार किया जाता है। पुत्र का संबोधन समुदाय के सभी बच्चों के लिए समानरूप से होता है। बच्चे व्यक्ति-विशेष के न माने जाकर किबूत्ज के ही माने जाते हैं अर्थात इजराइल की किबूत्ज व्यवस्था में व्यक्ति नगण्य है और समाज सर्वोपरि। बच्चे अपने माता-पिता को उनके नामों के माध्यम से सम्बोधित करते हैं तथा 'अब्बा' और 'इमा' (पिता और माता) शब्दों का भी संबोधनों के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के प्रयोग के परिणामस्वरूप इजराइलियों में कट्टर देश-प्रेम की भावना का प्रादुर्भाव हुआ। उनका यौन के प्रति सर्वथा भिन्न दृष्टिकोण रहा, स्वतंत्र-परिणय को प्रोत्साहन मिला यद्यपि शनैः-शनैः अब सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन आने के परिणाम-स्वरूप विवाह-संस्था को महत्त्व दिया जाने लगा है। १९५० को विवाह की आयु निर्धारण संबंधी कानून बनाया गया जिससे पूर्व यौन संबंधों को स्थापित करना अपराध माना जाता है। १९५९ में द्विविवाह कानून द्वारा विवाहितों के आचरण को सुरक्षित करने का प्रयास किया गया है।

किबूत्ज में स्त्रियों की संख्या पुरुषों के अनुपात में कम होने के कारण उन्हें सम्मान दिया जाता है तथा पर-स्त्रीहरण एक गंभीर तथा अक्षम्य अपराध के रूप में लिया जाता है। धीरे-धीरे विवाह का पंजीकरण होने लगा है। विवाह चाहे सार्वजनिक विवाह संस्कार के रूप में हो या पंजीकृत अथवा सिविल-विवाह, सभी जिला-न्यायालयों में होने लगे हैं, परिणामस्वरूप विवाह-संबंधों में स्थायित्व आ गया है।

किबूत्ज : एक पूर्ण परिवार

किबूत्ज में अन्य किबूत्ज अथवा पड़ोसी शहरों से वधू लाने को प्रोत्साहन दिया जाता है। अब विवाह, सार्वजनिक उत्सव के रूप में मनाया जाने लगा है। इस अवसर पर किबूत्ज का प्रत्येक व्यक्ति हर्षानुभव करता है तथा साथ ही नव-दम्पति को कुछ अनुदान देता है, यद्यपि विवाह का सब व्यय किबूत्ज द्वारा ही वहन किया जाता है। इस अवसर पर अन्य देशों की परंपरा की भांति औपचारिक रूप से निमंत्रण पत्र नहीं भेजे जाते किंतु किबूत्ज के सभी सदस्यों से उपस्थिति की अपेक्षा की जाती है, क्योंकि विवाह

उन्हीं के प्राथमिक समूह के सदस्य का है। विवाह के पश्चात व्यक्ति सामूहिक शयनागार को छोड़ एक बड़े कमरे में रहने चला जाता है जो कि व्यवस्थापकों द्वारा उस नव-दम्पत्ति को दिया जाता है। इस व्यवस्था में उत्पन्न बालक पहले किबूत्ज का और फिर माता-पिता का माना जाता है। प्रसव के लिए माता के जच्चा-बच्चा केंद्र पहुंचने पर पूरे समुदाय को इसकी सूचना मिल जाती है तथा जच्चा व बच्चे के घर लौटने के अवसर पर खूब नाच-गाने व हर्षोल्लास के साथ उनका स्वागत किया जाता है। किबूत्ज के सभी स्त्री-पुरुष अपने नवजात सदस्य को लाड़-दुलार करते हैं। यही किबूत्ज की प्रमुख भावना का आधार है कि बच्चा जन्म से ही समुदाय का समझा जाता है।

समुदाय तथा सामुदायिक-संस्थाओं के माध्यम से पारिवारिक कार्यों का संचालन होता है। यही संस्थाएं सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। समाजीकरण की प्रमुख संस्थाएं-समान-श्रेणी समूह तथा प्रशिक्षित बाल परिचारिकाएं होती हैं।

बच्चों के विकास की नयी दिशाएं

परिवार के बहुत कम दायित्व होने के कारण इसका स्थान समाज में गौण हो जाता है। बालकों को वैधानिक तथा आर्थिक रूप से माता-पिता पर आश्रित नहीं रहना पड़ता। बच्चों के विकास के लिए किबूत्ज हर प्रकार से सजग रहते हैं। शैशवावस्था से ही बच्चों के लालन-पालन का दायित्व शिशु-गृहों के कार्यकर्ताओं को सौंप दिया जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था में बच्चे को छह माह की आयु से पूर्व माता-पिता के कमरों में ले जाने की अनुमति नहीं होती।

इजराइल की महिला सैनिकों से गार्ड ऑव आनर लेते हुए प्रधानमंत्री गोल्डा मायर
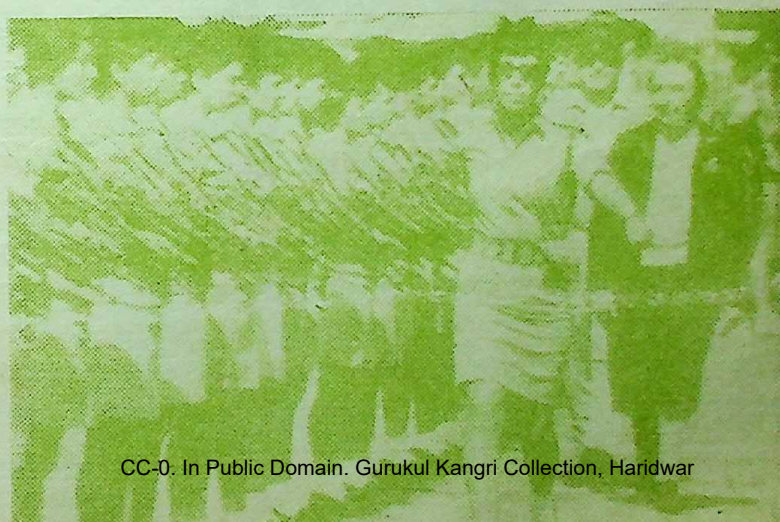
माता बच्चे से उसी समय लाड़-दुलार करती है जबकि उसे दूध पिलाने आना पड़ता है। पिता केवल सप्ताहांत में ही बच्चे को देखने का अवसर निकाल पाता है, उस दिन बच्चों से मिलने हेतु कोई समय बंधन नहीं रहता। अतः माता-पिता छुट्टी के दिन अपना अधिकांश समय अपने शिशु के संसर्ग में ही व्यतीत करते हैं। बच्चे के आठ माह के होने के बाद एक घंटे के लिए प्रतिदिन दोपहर के समय वह माता-पिता के साथ उन्हीं के कमरे में छोड़ दिया जाता है, किंतु धीरे-धीरे बड़ा होने पर बालक का संपर्क अपने माता-पिता के साथ कम होता चला जाता है। एक वर्ष की आयु का होने के उपरांत बालक दूसरे शिशुगृहों में भेज दिया जाता है। इस उम्र में बालक अपने माता-पिता के संसर्ग में दो घंटे से अधिक नहीं रह सकता किंतु शनिवार को माता-पिता अपने बच्चों को अपने कमरों में ले जा सकते हैं। बच्चों को इस प्रकार के शयनागारों में तीन वर्ष की आयु तक रखा जाता है। तत्पश्चात वह किंडरगार्टन में भेजे जाते हैं, जहां से उनका शैक्षणिक विकास भी प्रारंभ होता है। -

अब भी बच्चों को सामूहिक शयनागारों में ही रहना पड़ता है और अपने माता-पिता से वे पूर्ववत् ही भेंट करते रहते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि बच्चों पर परिचारिकाओं तथा अध्यापिकाओं का ही वास्तविक प्रभाव पड़ता है। वह अपने माता-पिता के पास कम जा पाते हैं, किंतु विशेष परंपरात्मक उत्सवों पर बच्चे अपने माता-पिता के साथ ही होते हैं।

बच्चों की इस प्रकार की सामूहिक देख-रेख व पालन-पोषण के अनेक लाभ हैं। माता-पिता स्वतंत्रता से काम कर सकते हैं जिसका प्रभाव उत्पादन पर पड़ना स्वाभाविक है। यह अवश्य है कि इस व्यवस्था से परंपरागत पारिवारिक संस्था समाप्त ही नहीं हुई अपितु बालक के समाजीकरण में माता-पिता का दायित्व भी गौण हो गया। बच्चों के समाजीकरण में बाल-परिचारिकाओं की भूमिका का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण दायित्व हो गया है। कुल मिलाकर किबूत्ज-व्यवस्था में आपसी संबंध टूटने की अपेक्षा दृढ़ बने रहते हैं।

इजराइल में आज किबूत्ज का धीरे-धीरे महत्त्व घट रहा है। अधिकांश लोगों का यह मत है कि किबूत्ज अपने उद्देश्य को प्राप्त कर चुका है, अब इसकी कोई आवश्यकता नहीं रह गयी है।

अंतर्राष्ट्रीय रंगमंच पर राजनीतिक दृष्टि से इजराइल की जो भी स्थिति हो किंतु इतना अवश्य है कि कुछ मौलिक एवं प्रगतिशील सिद्धांतों के आधार पर यह अपने नव-निर्मित राष्ट्र का सुनियोजन करने में कृत-संकल्प है, जहां लोकतंत्र तथा स्वशासित समुदायों की सुंदर कार्य-प्रणाली चरितार्थ होती दिखायी देती है।

—जी. १३ ओल्ड निजाम,
बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-५

एक मध्यकालीन युद्ध

• उग्रसेन गोस्वामी

आज से साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व दक्षिण भारत की तुंगभद्रा और कृष्णा नदियों के दोआब में विजयनगर और बीजापुर की सेनाओं में ऐसा घमासान युद्ध हुआ था कि उसका लेखा-जोखा पढ़-सुनकर आज भी फुरेरी-सी आ जाती है। १५२० में लड़े गये इस युद्ध के समय विजयनगर साम्राज्य की राज्यलक्ष्मी कृष्णदेवराय के सशक्त हाथों में थी और बीजापुर का ताज इस्माइल आदिलशाह के सिर पर सुशोभित था। यों तो विजयनगर और बीजापुर के बीच बहुत पुरानी अदावत चली आ रही थी लेकिन १५२० के युद्ध की चिनगारी रायचूर दुर्ग को लेकर भड़की, जो कुछ वर्ष पूर्व इस्माइल आदिलशाह ने विजयनगर से हथिया लिया था। कृष्णा और तुंगभद्रा नदियों के बीचोंबीच स्थित रायचूर दुर्ग तत्कालीन समरनीति में बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था, और इसी दुर्ग पर पुनः अधिकार के लिए कृष्णदेवराय ने सन् १५२० की ग्रीष्म ऋतु प्रारंभ होते ही एक बहुत बड़ी सेना लेकर रायचूर दोआब के लिए प्रस्थान कर दिया। रायचूर युद्ध की चिनगारी ने भड़ककर दोनों राज्यों के बीच एक व्यापक एवं निर्णायक युद्ध का रूप ले लिया जो तत्कालीन इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ।

यहां हम इस युद्ध के ऐतिहासिक निहितार्थों में न जाकर मध्यकालीन युद्ध के एक नमूने के रूप में इसका अध्ययन करेंगे। भारत में आनेवाले एक तत्कालीन पुर्तगाली यात्री नुनीज ने अपने यात्रा-वृत्तांत में इस युद्ध का विशद वर्णन किया है।

कृष्णदेव राय की सैन्यशक्ति

नुनीज के अनुसार विजयनगर की सेना ने ग्यारह सेनापतियों के अधीन अलग-अलग प्रस्थान किया। हर सेनापति के अधीन पैदल-सेना, धनुर्धारी, बंदूकची, ढालधारी, नेजाबाज आदि और घुड़सवार सेना तथा कुछ हाथी थे। हाथियों के दांतों पर बड़ी मजबूती से तेज धार के दुधारे खंजर बांधे गये थे, जिनसे युद्धभूमि में वे बहुत उत्पात मचाते थे। कुछ तोपें भी सेना के साथ थीं।

इन सेनापतियों के अधीन कुल मिलाकर ७,३६,००० योद्धा और ५५० हाथी आदिलशाह से दो-दो हाथ करने के लिए

बढ़ चले थे। इन सैनिकों के खाने-पीने और ठहरने आदि की व्यवस्था करने के लिए लगभग तीन लाख आदमी सेना के साथ-साथ और चले। दस लाख के इस लड़ाकू काफिले के सबसे अगले छोर से कई मील आगे-आगे गुप्तचरों का एक बहुत बड़ा दस्ता दुश्मन की टोह लेने तथा हर प्रकार की सूचना मुख्य सेना तक पहुंचाने के लिए सदा बना रहता था।

सभी सैनिक शस्त्रास्त्रों से पूरी तरह लैस थे तथा अपने-अपने ढंग के कपड़ों में सज्जित थे। धनुर्धारी और बंदूकचियों ने मोटे तहदार चोगे पहन रखे थे। ढाल-धारियों के कमरबंद में तलवारें और कटारें लटक रही थीं। इन सैनिकों की ढालें इतने बड़े आकार की थीं कि उनका सारा शरीर ढक जाता था और उन्हें जिरहबख्तर पहनने की कोई आवश्यकता नहीं थी। घोड़े भी अच्छी तरह ढंके हुए थे। घुड़सवारों ने बंडियां पहन रखी थीं। कपास से भरे शिरस्त्राण उनके सिरों पर सुशोभित थे। हाथ भी पूरी तरह से कपड़ों से ढंके हुए थे और उनके हौदों पर खड़े होकर चार-चार आदमी हर ओर से लड़ सकते थे।

युद्ध के साथ-साथ मनोरंजन

इतने बड़े जनसमूह की हर आवश्यकता को पूरा करने के लिए सुचारु रूप से व्यवस्था की गयी थी। यहां तक कि सैनिकों के मनोरंजन के लिए बीस हजार वेश्याएं भी सेना के साथ चल रही थीं। हर सेनापति के साथ उसके अपने व्यापारी रहते थे, जिन्हें उसके आदमियों के लिए हर वस्तु जुटानी पड़ती थी। इसके बावजूद दस बारह हजार आदमी पानी से भरी मश्कें लिये सदा सेना के साथ-साथ चलते थे।

मनुष्यों की इतनी बड़ी भीड़ जब चलती होगी तो कैसा लगता होगा, इसका क्षीण-सा आभास नुनीज द्वारा वर्णित इस घटना से हो जाता है। रायचूर की ओर अग्रसर सेना के मार्ग में एक स्थान पर एक छोटी नदी पड़ती थी जिसमें उस समय पानी करीब घुटने-घुटने था। राय की सेना ने इसे लांघकर पार करना शुरू किया तो आधी सेना के पार होते न होते इसका पानी बिलकुल सूख गया और पानी की व्यवस्था करनेवालों को इसके तल की रेती में गड्ढे खोदकर पानी जमा करना पड़ा।

अंततः कृष्णदेवराय की सेना रायचूर के निकट मल्लियाबाद नगर तक आ पहुंची। यहीं उसने अपना पड़ाव डाल दिया।

राय का पूरा शिविर नियमित गलियों में बंटा हुआ था। हर सेनापति के खंड में एक भरा-पूरा बाजार था, जिसमें केवल खाने-पीने की चीजें ही नहीं मिलती थीं, वरन वहां सुनार गहने बनाते हुए और जौहरी हीरे-जवाहरात बेचते हुए भी मिल जाते थे।

राय की रणनीति

पड़ाव डाल लेने के बाद कृष्णदेवराय ने रायचूर का घेरा डालने की योजना बनायी। राय को मालूम था कि रायचूर दुर्ग को हथियाना आसान काम नहीं है। आस-

पास के वृक्षहीन मैदान में स्थित एकमात्र पहाड़ी के शिखर पर बना रायचूर दुर्ग विजयनगर की सेना के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती थी। तुंगभद्रा तथा कृष्णा नदियों के कोई तीस मील चौड़े दोआब के बीचों-बीच स्थित इस नगर के चारों ओर पक्की चिनाई की तीन सुदृढ़ प्राचीरें थीं, जिन्हें पीछे से मिट्टी के अंबार लगाकर और भी मजबूत कर लिया गया था। पहाड़ी की चोटी पर, जहां दुर्ग बना हुआ था, पानी का एक चश्मा था, जो सारा साल चलता था। इसके अतिरिक्त नगर में कई तालाब और कुएं थे। इसलिए नागरिकों को पानी की चिंता नहीं थी और खाद्य-सामग्री उन्होंने पांच वर्षों तक के लिए जुटा रखी थी। नगर के सभी द्वार पत्थर और गारे की मोटी परतों से बंद कर दिये गये थे। आठ हजार सैनिक, चार सौ घुड़सवार और बीस हाथी रायचूर की रक्षा के लिए दुर्ग में विद्यमान थे। रायचूर का तोपखाना भी बहुत तगड़ा था, जिसमें दो सौ बड़ी तोपें थीं ही, उससे कहीं अधिक छोटी तोपें भी थीं। प्राचीरों की बुर्जियों के बीच सटी तोपें नीचे मैदान में जूझ रही दुश्मन की फौजों के परखचे उड़ाने का सामर्थ्य रखती थीं। इसके अतिरिक्त रायचूर स्थित बीजापुर के सेनापति ने तीस बड़ी-बड़ी गुलेलों की व्यवस्था कर रखी थी, जिनसे बिना दुर्लभ गोला-बारूद खर्च किये पत्थर आदि फेंककर नीचे खड़े दुश्मन को बहुत नुकसान पहुंचाया जा

सकता था। दुर्ग पर आक्रमण भी केवल पूर्व की ओर से ही किया जा सकता था, क्योंकि अन्य छोरों पर वृत्ताकार चट्टानों के कारण दुर्ग अत्यंत सुरक्षित था।

इन्हीं परिस्थितियों में कृष्णदेवराय को अंततः दुर्ग पर आक्रमण करने तथा नगर-प्रवेश करने का आदेश देना पड़ा। परंतु राय की सेना के लिए नगर की खाई

BTM
TERENE
SUITING
SHIRTING
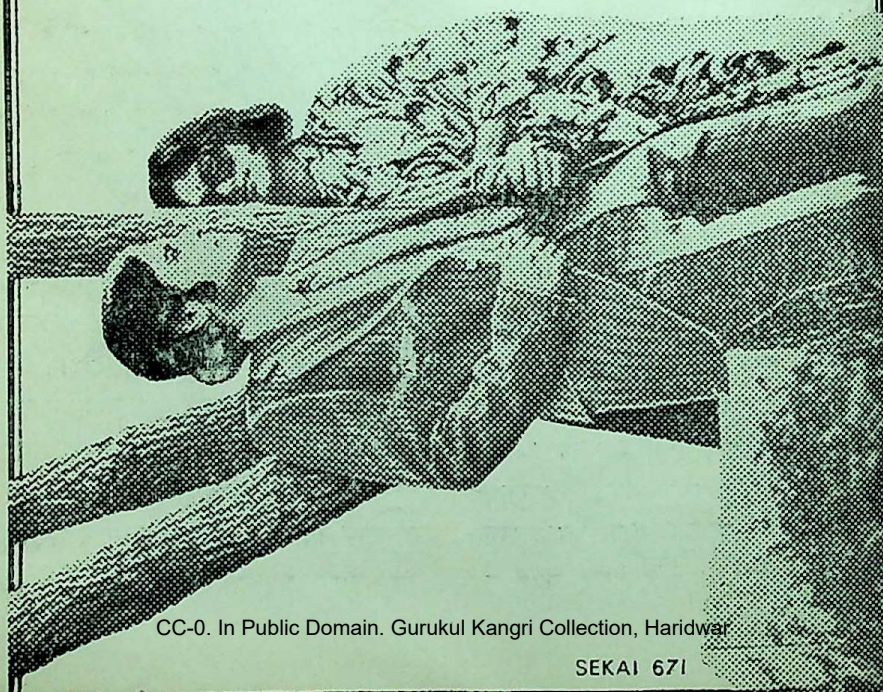
तक पहुंचना मुहाल हो गया। खाई के निकट पहुंचते ही प्राचीरों से तोपें आग उगलने लगतीं, गुलेलें पत्थर बरसाने लगतीं और बुर्जियों से छूटे तीर सैनिकों के सीने चाक करने लगते। कृष्णदेवराय के सैनिक पस्त होकर पीछे हटना चाहते थे, लेकिन राय के कड़े आदेशों के कारण उन्हें जूझना पड़ रहा था, हालांकि वे बेदम हो रहे थे। पस्त हो रहे अपने सैनिकों के हौसले बुलंद करने के लिए राय के सेनापतियों ने एक अद्‌भुत युक्ति ढूंढ़ निकाली। उन्होंने सैनिकों द्वारा रायचूर के प्राचीरों से उठा लाये गये पत्थर खरीदने शुरू कर दिये। दुश्मन के दुर्ग के हर पत्थर की उसके आकार के आधार पर नकद कीमत दी जाने लगी। इस प्रकार वे कई स्थानों पर नगर प्राचीर तुड़वाने में सफल हो गये। तीन मास तक राय के सैनिक इस प्रकार नगर प्राचीर के पत्थर समेटते रहे। तभी इस्माइल आदिलशाह अपने दलबल के साथ कृष्णदेव राय को रायचूर से खदेड़ने के लिए आ पहुंचा।

इस्माइल आदिलशाह की तैयारी

इस्माइल के पास एक लाख बीस हजार पैदल सेना, अठारह हजार घुड़सवार और डेढ़ सौ हाथी थे। इसके अतिरिक्त तोपखाना भी था। आदिलशाह ने कृष्णा पार कर पांच मील आगे आकर अपने खेमे गाड़ दिये। रायचूर यहां से कोई सौ मील के फासले पर रह जाता था। बीजापुर की सेना ने खाइयां खोदकर तथा तगड़ी किलेबंदी कर अपनी स्थिति बहुत सुदृढ़ कर ली। बीजापुर के शाह ने अपने भारी तोपखाने को सबसे आगे रखा।

सीधे आक्रमण का आदेश

शनिवार १९ मई, १५२० की प्रभात बेला में कृष्णदेवराय ने अपनी सेना के एक भाग को दुश्मन पर सीधे आक्रमण करने का आदेश दिया। आक्रमण इतने जोश तथा फुर्ती से किया गया था कि बीजापुर की सेना को शीघ्र ही भागकर खाइयों में शरण लेनी पड़ी। परंतु तभी आगे बढ़ती राय की सेना पर बीजापुर का तोपखाना अपनी पूरी क्षमता से गोले बरसाने लगा और राय के सैनिक गाजर-मूली की तरह ढेर होने लगे। विजयनगर की सेना के पैर उखड़ गये और वह पीछे की ओर भाग चली।

लगता था, बीजापुर की सेना शीघ्र ही विजयनगर की सेना को पूरी तरह से दबोच लेगी। परंतु तभी शेष सेना के साथ कृष्णदेवराय ने धावा बोल दिया। अपने पीछे भागते हुए सैनिकों के प्रति राय को इतना आक्रोश था कि उसने अपनी टुकड़ी को यह आदेश दे दिया कि वे भागकर आते हुए अपने सैनिकों का भी वध करते हुए बढ़ें। रणक्षेत्र से भागकर आते हुए सैनिकों का जब स्वयं अपने साथियों के हाथों यह स्वागत होने लगा तो उन्हें पुनः जूझने के लिए वापस मुड़ना पड़ा।

इस बीच आदिलशाह की सेना बिखर चुकी थी और इस नये आक्रमण की ताब न लाकर वह पीछे हटने लगी। इस अप्रत्याशित दूसरे आक्रमण से बीजापुर की सेना

आपकी मनपसन्द
पामीला®
ब्लीचिंग क्रीम
अब आकर्षक
ट्यूब पैकिंग
में भी उपलब्ध
Pamilla®
BLEACHING
CREAM
Guaranteed to
Remove
pimples, black scars
& dark complexion
चेहरे के सभी बदनुमा दागों,
छाइयों को दूर करने और
रंगत निखारने के लिये
गारंटी शुदा
उच्च कोटि का गर्वपूर्ण उत्पादन
पामीला प्रफ्यूमरी (प्रा०) लि०
जालन्धर शहर फोन: २७४४, ६८८७

का हौसला शीघ्र ही इतना पस्त हो गया कि उसमें अपने शिविर की रक्षा करने का भी दम न रहा। अनेक लोगों को तो इस भगदड़ में कृष्णा में ही जलसमाधि मिल गयी।

आदिलशाह की पराजय

बीजापुर का आदिलशाह पूर्णतः पराजित हो चुका था। वह किसी प्रकार अपनी जान बचाकर भाग निकला था। इस्माइल आदिलशाह के शिविर की अतुल संपत्ति राय के हाथ लगी, जिसमें ओरमज के चार हजार घोड़े, एक सौ हाथी और चार सौ बड़ी तोपें भी थीं। चंद घंटों के इस युद्ध में केवल विजयनगर की सेना के ही सोलह हजार सैनिक खेत रहे थे। जब तक इन सभी सैनिकों का दाह-संस्कार नहीं हो गया, राय वहीं बना रहा। सभी धार्मिक अनुष्ठान कर लेने के बाद वह पुनः रायचूर के निकट आ जमा।

पर यहां स्थिति विकट थी, क्योंकि जब तक रायचूर की प्राचीरों से बरसती मौत पर अंकुश नहीं लगता, राय की सेना के लिए नगर पर कब्जा करना असंभव-सा ही था। किंतु एक पुर्तगाली क्रिस्तोदाओ दे फिगेरेदो ने विजयनगर सेना की मुश्किल आसान कर दी। क्रिस्तोदाओ घोड़ों का व्यापारी था तथा विजयनगर के महाराज से मिलने हेतु रायचूर पहुंचा था। वह एक बढ़िया निशानेबाज भी। क्रिस्तोदाओ और उसके साथियों के पास विशेष प्रकार की तोपें थीं, जिनसे उन्होंने दूर से मारकर नगर की प्राचीरों की रक्षा कर रहे प्रहरियों को भूनना शुरू कर दिया। प्राचीरों की बुर्जियों से बरसती मौत पर अंकुश लग जाने से राय की सेना प्राचीरों तक पहुंच पाने में सफल हो गयी और स्थान-स्थान पर कुदालों और लोहदंडों से प्राचीरों में मार्ग बनाती हुई नगर के भीतर घुसने लगी। इस प्रकार कृष्णा के तट पर इस्माइल आदिलशाह की पराजय के कोई तीन सप्ताह बाद रायचूर के सुदृढ़ दुर्ग पर विजयनगर की ध्वजा फहराने लगी।

—१६८/१४, सी ४ सी, जनकपुरी,
नयी दिल्ली-११००१८

अपने भाग्य सराहिए, मैं मलहम पट्टी तो कर देती हूं, दूसरी औरतें तो यह भी नहीं करतीं।

• स्वामी मदनानंद

विज्ञान और टेक्नालॉजी के इस युग में मंत्र-यंत्र-तंत्र पर लोगों का अविश्वास कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। पर मात्र कुछ लोगों के अविश्वास के कारण ही कोई विद्या कैसे मिथ्या मानी जा सकती है! मंत्र में भी अपूर्व शक्ति होती है। मंत्र जब सिद्ध हो जाता है तो वह यंत्र बन जाता है और यंत्र से सिद्धि-प्राप्त व्यक्ति 'तांत्रिक' कहलाता है। हमारी आज की जिंदगी तंत्रों के शिकंजों में कसी हुई है। ये तंत्र अनेक प्रकार के हैं और मनुष्य की जिंदगी दूभर किये हुए हैं। मंत्र-सिद्ध यंत्र और तंत्र मनुष्य की पीड़ा दूर कर सकते हैं, उसे सुखी बना सकते हैं, यह मेरा अपना अनुभवजन्य विश्वास है।

मंत्र शक्ति की प्राप्ति सतत आराधना-उपासना से प्राप्त होती है। मंत्र-जाप के जरिए मन में तरंगें उत्पन्न की जाती हैं। बाद में यहीं तरंगें लोकोपयोगी कार्य करती हैं। इन तरंगों की तुलना मैं बैंक बैलेंस से करता हूं। जिसके पास जितना बैंक बैलेंस होगा, वह उसी सीमा तक उसे खर्च भी कर सकेगा। सतत मंत्रजाप द्वारा यह बैंक बैलेंस बढ़ाया जा सकता है। मैं लिखकर मंत्र सिद्ध करता हूं। एक मोटी-सी कापी में प्रतिदिन निश्चित पृष्ठों पर मंत्र लिखता हूं। लिखकर मंत्र सिद्ध करने से नेत्र, आत्मा और हाथ शुद्ध होते हैं।

अकसर लोग विना किसी योग्य गुरु से मंत्र-दीक्षा लिये मंत्र-सिद्धि में जुट जाते हैं और निराश होने पर इस विद्या के प्रति अविश्वास प्रगट करने लगते हैं। मंत्र-साधक को चाहिए कि वह सबसे पहले योग्य गुरु की खोज करे। मैंने स्वयं उन्नीस वर्ष की अवस्था में गृह त्यागकर उपयुक्त गुरु की तलाश की थी।

तंत्र के गुरु--शिव

हमारे यहां शिव को तंत्र का गुरु माना गया है। शिव-पुराण में इसका बड़ा मनोहारी चित्रण है। कैलाश शिखर पर लंकाधिपति रावण ने जगत के गुरु शिव से तंत्र-विद्या का रहस्य पूछा :

नमस्ते देव देवेश सदा शिव जगद्गुरो।
तंत्र विद्या ज्ञणं सिद्धि कथमाय स्वयम् प्रभो।

रावण की स्तुति से प्रसन्न होकर शिव ने उसे काली शिव तंत्र का रहस्य बताया :

साधु पृष्टं त्वयावत्स लोकानां हितकाम्यया
काली शिव तंत्रं तु कथयामि तवाग्रतः

ऊर्जा के नये-पुराने स्रोतों का विकास

● जगमोहनलाल माथुर

अक्तूबर, ७३ में अरब-इजराइल युद्ध के बाद अरब देशों द्वारा इजराइल-समर्थक देशों को तेल भेजने पर प्रतिबंध लगाने तथा तेल का उत्पादन घटाने व मूल्य बढ़ाने से विश्वव्यापी ऊर्जा संकट गहरा हो गया है। पिछले कुछ वर्षों से वैज्ञानिक नये ऊर्जा-स्रोतों का पता लगाने के लिए प्रयत्नशील थे पर नयी स्थिति ने इस काम को बड़ी तेजी से पूरा करने के लिए सबको झकझोर दिया है।

करीब १०० वर्ष से विश्व के लोग मिट्टी के तेल का उपयोग करते रहे हैं। १९७२ के उत्पादन के अनुसार सर्वाधिक तेल पश्चिम एशियाई व उत्तर अफ्रीकी देशों से प्राप्त होता है। अनुमान है कि संसार में धरती के गर्भ में ६६० अरब डालर के ज्ञात भंडार हैं। १९७२ के उत्पादन-स्तर के अनुसार ये भंडार करीब ५० वर्ष में रीते हो जाएंगे। अगले पृष्ठ पर दी गयी तालिका से यह स्पष्ट है।

ऊर्जा का अत्याधुनिक स्रोत—अणु-शक्ति-केंद्र। अमरीका में मारिस, इलिनॉयस के पास निजी क्षेत्र के अंतर्गत निर्मित प्रथम ड्रेसडन अणु-शक्ति-केंद्र

जब हम कोई चुनौती
स्वीकार करते हैं तो
हमारी वर्तमान पीढ़ी के लिये जरूरी हो जाता है
कि वह कुछ न कुछ त्याग करे. यही समय है
जब हममें से हर एक को, उज्ज्वल भविष्य
के लिये बलिदान
करना ही होगा.

इंडियनऑइल दोहरी भूमिका अदा कर रहा है—
एक तो मितव्ययिता और आत्मसंयम को
बढ़ावा देनेवाले की और दूसरे सामाजिक
उद्देश्यों की पूर्ति करनेवाले एक मशालची की.

इंडियन ऑइल कॉर्पोरेशन लिमिटेड

Dattaram-IOC-

क्षेत्र	ज्ञात भंडार (अरब बैरल में)	समाप्त होने का अनुमानित समय
१. पश्चिम एशिया व उत्तर अफ्रीका (सउदी अरब, कुवैत, ईरान, लीबिया अल्जीरिया सहित)	३९०.९	४८ वर्ष
२. कम्युनिस्ट देश (रूस, चीन सहित)	५४.९	१६ वर्ष
३. उत्तर अमरीका (अमरीका, कनाडा सहित)	४७.२	११ वर्ष
४. दक्षिण अमरीका (वेनेजुएला सहित)	२५.५	१६ वर्ष
५. दक्षिण-पूर्व एशिया (इंडोनेशिया सहित)	१४.४	२७ वर्ष
६. मध्य व दक्षिण अफ्रीका (नाइजीरिया सहित)	१५.३	२० वर्ष

अरब-इजराइल युद्ध के बाद अरब देशों की तेल-नीति के कारण अमरीका ने अपने तेल भंडारों से तेल निकालने और नये तेल-क्षेत्रों का पता लगाने का काम तेज कर दिया है।

भारत में भी तेल के नये क्षेत्रों का पता लगाने और तेल का उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्नों में तेजी लायी जा रही है। इस समय हमारे यहां ७३ लाख टन कच्चे तेल का प्रतिवर्ष उत्पादन हो रहा हैं। जबकि हमारी जरूरत २ करोड़ टन की है। १९८० तक १ करोड़ २० लाख टन उत्पादन यहीं होने की संभावना है। अब तक ज्ञात तेल-भंडारों में १० करोड़ २० लाख टन तेल का अनुमान है। इनमें से २ करोड़ ४० लाख टन तेल निकाला जा चुका है। हमारे यहां के ४५ प्रतिशत उद्योग तेल पर आधारित हैं। हमें १ करोड़ ४० लाख टन तेल हर साल विदेशों से मंगाना पड़ता है। इसमें से अकेले ईरान से १ करोड़ टन तेल आता है। शेष सउदी अरब और इराक से आता है। ईरान द्वारा नीलामी से तेल बेचने का तरीका अपनाने तथा फारस की खाड़ी के देशों द्वारा मूल्य बढ़ाने से तेल की कीमत कई गुना बढ़ गयी है। इसके फल-स्वरूप भारत को अगले वर्ष १० अरब रुपये तेल-आयात पर खर्च करने होंगे। सोवियत रूस की मदद से तेल का उत्पादन बढ़ाने और नये क्षेत्र खोजने का काम तेज किया जा रहा है। समुद्रतट के पास भी तेल की खोज की जा रही है।

प्राकृतिक गैस

तेल की भांति ही धरती के गर्भ से प्राप्त होने वाला मूल्यवान ईंधन है—प्राकृतिक गैस। यह भी संसार में सीमित मात्रा में उपलब्ध है और कुछ देशों में ही इसके स्रोत अधिक हैं। इसका इस्तेमाल अभी

यूनिटें - आम जनता के लिये पूंजी लगाने का सर्वोत्तम साधन

भारत सरकार ने आम जनता को पुंजी लगाने का एक बढ़िया साधन उपलब्ध कराने के लिए यूनिट ट्रस्ट आफ इण्डिया की स्थापना की है। रिजर्व बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा नियुक्त एक विशेषज्ञ **'बोर्ड आफ ट्रस्टी'** यूनिट ट्रस्ट का प्रबंध करता है। ट्रस्ट यूनिटों की बिक्री करता है और इस बिक्री से प्राप्त धन को शेयरों और सिक्युरिटियों में लगाता है। इस प्रकार लगाए गए धन से होने वाली आय प्रतिवर्ष ट्रस्ट का खर्च घटा कर उन यूनिटधारियों में बांट दी जाती है, जिनके नाम ३० जून को यूनिट के रजिस्टर में होते हैं। यूनिट ट्रस्ट का लेखा वर्ष जुलाई से जून तक होता है और सभी यूनिटधारियों को, चाहे उन्होंने यूनिटें कभी ही क्यों न खरीदी हों, संपूर्ण वर्ष का लाभांश दिया जाता है। १९७२-७३ वर्ष में यूनिट ट्रस्ट ने ८$\frac{1}{2}$ प्रतिशत लाभांश दिया था।

यूनिट का प्रत्यक्ष मूल्य १० रु. होता है और यूनिटें १० के गुणितों में बेची जाती हैं। कम से कम १० यूनिटें खरीदनी पड़ती हैं किन्तु इसके लिए कोई ऊपरी सीमा नहीं है। यूनिटें यूनिट ट्रस्ट के बम्बई, कलकत्ता, नई दिल्ली और मद्रास कार्यालयों, अधिकांश बैंकों और डाकघरों में भी प्रचलित बिक्री मूल्य पर बेची जाती हैं। इन जगहों पर यूनिटें खरीदने के फार्म मिलते हैं और यूनिट के खरीदारों को ट्रस्ट की ओर से रसीद भी जारी की जाती है। यूनिट सर्टीफिकेट रजिस्ट्री से भेजे जाते हैं। एक व्यक्ति अथवा दो, तीन अथवा चार बालिग संयुक्त रूप से यूनिटें खरीद सकते हैं। नाबालिग स्वयं यूनिटें नहीं खरीद सकता लेकिन उसकी ओर से उसका पिता अथवा माता, अगर वह उसकी कानूनी अभिभावक हैं, अथवा अदालती अभिभावक यूनिटें खरीद सकता है। और बच्चे की नाबालिगी के दौरान यूनिटों पर सभी अधिकारों का उप- और बच्चे की नाबालिगी के दौरान किसी भी समय (जुलाई के महीने को छोड़ कर) अपनी यूनिटें यूनिट ट्रस्ट को प्रचलित बिक्री मूल्य पर बेच सकते हैं। इसके लिए उन्हें केवल यूनिट सर्टीफिकेटों के दूसरी ओर दिए गए फार्म को भर कर, किसी गवाह की उपस्थिति में अपने हस्ताक्षर करके, उसे यूनिट के अपेक्षित कार्यालय को भेजना होता है। ट्रस्ट हस्ताक्षर का मिलान करने के बाद यूनिट मालिक की इच्छानुसार यूनिटों का मूल्य यूनिटधारियों को ड्राफ्ट, चेक, मनी-आर्डर द्वारा अथवा नकद भेज देगा

उद्योगों व घरेलू कार्यों में हो रहा है। कुछ महीने पूर्व खाना पकाने की गैस से मोटर अथवा स्कूटर चलाने के प्रयोग हुए थे पर यहां इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती क्योंकि मोटर चलाने से ज्यादा जरूरी खाना पकाना है।

कोयले की ओर नयी निगाहें

ऊर्जा का मिट्टी के तेल से भी पुराना स्रोत है कोयला। संसार में कोयले के जितने भंडार हैं, उनमें से ४० प्रतिशत उत्तर

की भी अपनी सीमाएं और जोखिम हैं। फिर भी कोयले की ओर आजकल आशा-भरी निगाहों से देखा जा रहा है। अमरीका में कोयले से गैस तैयार करने के तीन प्रायोगिक संयंत्र काम कर रहे हैं। ये संयंत्र प्राकृतिक गैस—जैसे गुणोंवाली गैस कोयले से तैयार कर रहे हैं जो पाइप लाइन से इधर-उधर भेजी जा सकेगी।

भारत में ६० अरब मीट्रिक टन कोयले के भंडार होने का अनुमान है।

बायें से : पश्चिमी जरमनी में पेट्रोल के अभाव में लकड़ी से कार चलाने का प्रयोग। भूतापीय शक्ति के उपयोग का प्रयत्न

अमरीका में, ४६ प्रतिशत एशिया में, १३ प्रतिशत यूरोप में हैं। देशों के हिसाब से ज्यादा कोयला चीन में है और उसके बाद अमरीका व रूस का स्थान है। तेल की कमी से पीड़ित अमरीका के लिए यह संतोष की बात है कि उसके पास कोयले के विपुल भंडार हैं जो करीब ६५० वर्ष तक चल सकते हैं। पर कोयले

इसमें से ८० प्रतिशत कोयला दामोदर घाटी के रानीगंज, झरिया, गिरडीह और बोकारो क्षेत्रों में दबा है। भारत में १९६९-७० में ७५७.४ लाख टन कोयले का उत्पादन हुआ था—१९७१-७२ में यह घटकर ७०५ लाख टन रह गया। उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से कोकिंग कोयले की खानों का भी राष्ट्रीयकरण

कर दिया गया है। भारत में इस्पात कारखानों और कई अन्य कारखानों व कुछ बिजलीघरों के लिए कोयला महत्त्वपूर्ण ईंधन बना हुआ है। भारत में कोयला ऊर्जा का महत्त्वपूर्ण साधन बना रहेगा। केंद्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान जिआलगोड़ा में एक ऐसा संयंत्र लगा रहा है, जिसमें प्रतिदिन आधे टन कोयले से पेट्रोल, डीजल आयल या उद्योगों में काम आनेवाला ईंधन तेल बनाया जा सकेगा।

परमाणु ऊर्जा की विराट-शक्ति

तेल तथा कोयले—जैसे परंपरागत साधनों के अलावा अब मनुष्य को नये ऊर्जा-स्रोतों की ओर निहारना ही होगा। इनमें से एक है परमाणु शक्ति। परमाणु में विनाश की भी विराट क्षमता है और निर्माण की भी। करीब ३० वर्ष से परमाणु से ऊर्जा उत्पन्न करने का अनुसंधान चल रहा है। परमाणु ऊर्जा का मुख्य ईंधन यूरेनियम है। एक घनइंच यूरेनियम में २०,००० घनफुट कोयले और ३०,००० घनफुट तेल के बराबर ऊर्जा क्षमता है। ४ घनइंच यूरेनियम के टुकड़े से २० लाख निवासियों के नगर को साल भर तक मजे में बिजली मिल सकती है। संसार में यूरेनियम के लाखों टन भंडार है। इनका ९० प्रतिशत अमरीका, कनाडा, अस्ट्रेलिया व दक्षिण अफ्रीका में है। संसार में उपलब्ध यूरेनियम के भंडारों से कई शताब्दियों तक संसार की ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है। पर अमरीका-जैसे विकसित देश में भी ३७ परमाणु

बिजलीघर वहां की आवश्यकता की केवल ५ प्रतिशत बिजली तैयार करते हैं। एक दिक्कत यह है कि परमाणु के आजकल प्रचलित रिएक्टर में एक पौंड यूरेनियम की क्षमता से केवल ०.७ प्रतिशत (यानी प्राकृतिक विखंडनीय यू-२३५ आइसोटोप) ऊर्जा उत्पन्न कर पाते हैं। इनमें बरबादी का प्रतिशत भी अधिक होता है। अतः अधिक उन्नत प्रकार के रिएक्टर, जिन्हें फास्ट ब्रीडिंग रिएक्टर कहते हैं, बनाये जा रहे हैं। ब्रीडर रिएक्टर की विशेषता यह है कि ये जितने ईंधन सामग्री की खपत करते हैं, उतना ही ईंधन स्वयं फिर तैयार कर लेते हैं।

उद्जन शक्ति की दिशा में नये अनुसंधान

परमाणु शक्ति की तरह ही उद्जन (हाइड्रोजन) का, बिजली तैयार करने के लिए प्रयोग किये जा रहे हैं। परमाणु रिएक्टर में यूरेनियम, प्लूटोनियम-जैसे भारी परमाणुओं का विखंडन होता है जबकि इस विधि के अनुसार फ्यूजन रिएक्टर में भारी हाइड्रोजन परमाणुओं का संयोजन करके हीलियम परमाणु बनाया जाएगा जिससे शक्ति पैदा होगी पर इसको व्यावहारिक रूप देने में कई कठिनाइयां हैं।

विद्युत-उत्पादन की नयी विधि

बिजली पैदा करने की एक नयी विधि एम. एच. डी. (मैग्नेटो हाइड्रो डाइनेमिक्स) है। इसके आविष्कर्ता अमरीकी डॉ. आर्थर कान्त्रोविट्ज हैं। उन्होंने व
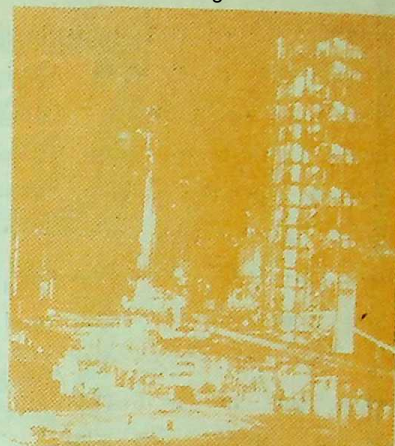
कोयले से गैस बनाने का संयत्र

डॉ. रिचर्ड रोसा ने १५ साल पहले एम. एच. डी. विधि का जेनेरेटर बनाया था। उसी विचार को अब आगे बढ़ाया जा रहा है। इसके अंतर्गत गैस को अयन अवस्था में चुंबकीय क्षेत्र में से गुजारने से विद्युत धारा बन जाती है। इस व्यवस्था के अंतर्गत पिसे हुए कोयले को तेजी से जलाकर वहां उत्पन्न गैस को शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र से गुजारा जाएगा। आर्थर का विचार है कि एम. एच. डी. विधि से काफी बिजली तैयार हो सकेगी। उनका कहना है कि रूस में इस विधि से यू-२५ नामक जेनरेटर तैयार किया गया है जो मास्को के ग्रिड के लिए २५,००० किलो वाट बिजली देता है।

भूतापीय शक्ति : सस्ती और अच्छी

पृथ्वी के भीतर १ से ५ मील की गहराई पर भीषण गरमीवाली चट्टानें हैं। इन
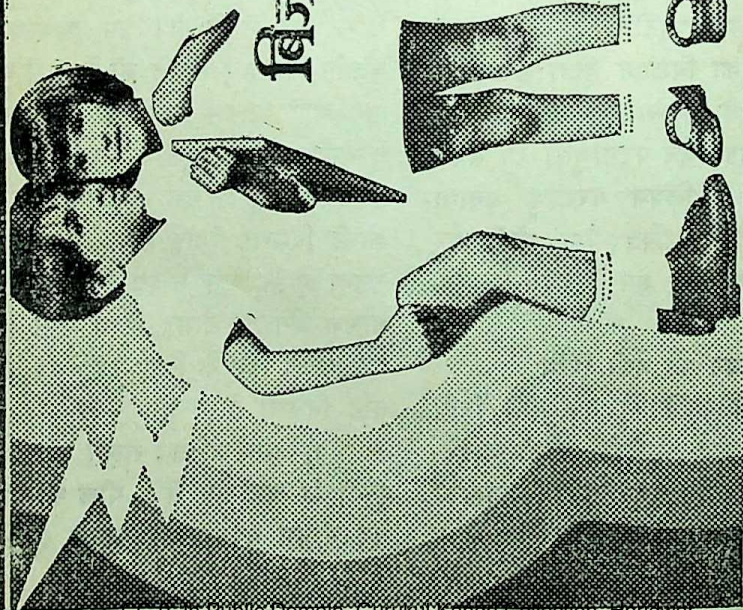
बिजली की सफ़ेद चमकार
रिन से
रिन
हाथी जितनी धुलाई!
साबुन से ५0% अधिक कपड़े
धोने के लिए–रिन !
लिंटास-RIN. 4-694 HI(R)
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

पर गहरे कुएं खोदकर और उनमें ठंडा पानी डालकर ३५०° फारेनहाइट तक गरमी पैदा हो सकती है, जो पास ही दूसरे गड्ढे के जरिए ऊपर लायी जा सकती हैं। इससे टरवाइन चलाये जाएंगे। यह पानी फिर से गड्ढे से डालकर नयी भाप पैदा करने के लिए काम में लाया जा सकता है। कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ. रेक्स के अनुसार भूतापीय बिजली सस्ती पड़ेगी।

सूर्य-ताप के नूतन प्रयोग

ऊर्जा का निस्संदेह सबसे बड़ा स्रोत सूर्य है। दर्पण से सूर्यताप एकत्र किया जाता है। उसे छोटे क्षेत्र में प्रतिबिंबित करके तीव्र गरमी पैदा की जाती है। सूर्य की एकत्रित गरमी को भट्टी में पहुंचाने की व्यवस्था की जाती है। सूर्य-ताप से भट्टी में ६,०००° फारेनहाइट गरमी हो जाती है जिसमें हर चीज एकदम पिघल जाती है। दक्षिण पश्चिम अमरीका में सोलर-फार्म बनाये जा रहे हैं जिनमें सूर्यताप संग्रहकों द्वारा गरमी इकट्ठी कर पाइपों के जरिये भाप को जेनेटर चलाने में इस्तेमाल किया जाएगा।

ब्रिटेन की रॉयल इंस्टीट्यूट के डाइरेक्टर जार्ज पोर्टर का विचार है कि पानी में रंगों का मिश्रण करके सौर-शक्ति का संचय संभव है। बड़े पैमानों पर इसे करने के लिए रंगों की बड़ी-बड़ी झीलें बनानी होंगी। सोवियत विज्ञान अकादमी के अनुसार रूस में वातानुकूलन संयंत्रों को सूर्यताप से बनी बिजली से चलाया जा रहा है।

भारत में सूर्यताप का इस्तेमाल करने के साधारण प्रयोग चल रहे हैं। कुछ वर्ष पूर्व राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला में सूर्यताप का चूल्हा बनाया गया था। रुड़की के इंजीनियरिंग संस्थान ने ऐसी विधि निकाली है जिससे सूर्य की गरमी से टैंक में पानी गरम किया जा सकता है।

पवन-चक्कियां

डेनमार्क में १९१५ में ३,००० पवन चक्कियां थी। एक पवनचक्की १२५० किलोवाट बिजली पैदा करती थी। भारत में काफी आंधियां चलती हैं और हम भी पवनचक्कियों से बिजली तैयार करने में इनका इस्तेमाल कर सकते हैं।

लहरों से शक्ति

समुद्र में ज्वार उठने से लहरें काफी ऊंचाई तक उठ जाती हैं। इनका बिजली पैदा करने में उपयोग हो सकता है। फ्रांस के तट पर समुद्री लहरों से चालित बिजलीघर बनाया गया है। इस तरह के बिजलीघर बनाने के प्रयोग चल रहे हैं।

भारत में हम अधिक जंगली लकड़ी पर निर्भर करें तो अनुचित न होगा। ग्रामोद्योग कमीशन ने गोबर से गैस तैयार करने का संयंत्र तैयार किया है।

इस प्रकार ऊर्जा के नये स्रोतों का पता लगाने तथा परंपरागत स्रोतों को अधिक कारगर बनाने का सिलसिला चल पड़ा है।

—सेक्टर ३/३४८ रामकृष्णापुरम,
नयी दिल्ली-११०००२२

वसंतागम

तीस साल पहले मैंने लिखा था
गा रे गा हरवाहे
दिल चाहे वही तान
खेतों में पका धान !
अब तो वसंत में भी हर्ष नहीं
बस अंत में भी उत्कर्ष नहीं
धान पर नजर है किसी और की
चोर जमाखोर की
आमों पर झलक नहीं बौर की
अवलीन भौंर की
क्या हुआ बसंती रंग
(जिससे कभी शहीदों ने रंगे थे चोले
बैसाखी 'भगतों' ने भोले !)
मिस बासंती फॉरेन का लगाती है गंध ... इवनिंग इन पैरिस मंद
और बसंतक लिखते हैं हास्य-व्यंग पर प्रबंध. . .अंधाधुंध
खुशी नहीं
न कमकर के चेहरे पर किसान के
सभी डरते हैं तस्कर से बेपहचान के
चलता नहीं कोई भी सीना तान के
हंसी नहीं
कृत्रिम और सूखी और उपचार-भरी मुसकान के
ठहाके भी लगाते हैं (रोना छिपाने को) जान के
कहां गये पंचशर, कहां गये ओ अनंग
अब तो नहीं लाज, नहीं व्रीड़ा नहीं संकोच
या तो है नंगई या है हर घड़ी सोच
मौत का
मौत का नहीं तो किसी सौत का, थोड़े में भौतका
भूल गये विजया
मुंह लगी बोदका !

—प्रभाकर माचवे
१२०, रवीन्द्र नगर, नयी दिल्ली-११०००३
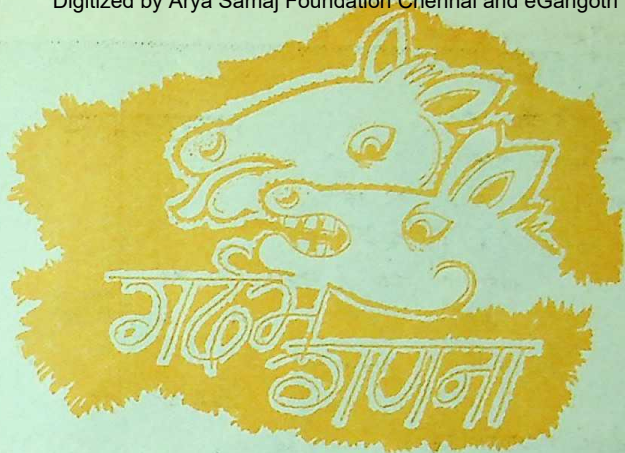
• राजेन्द्र मेहता

राज्य सरकार को किसी कारणवश राज्य में मौजूद गधों की संख्या की जरूरत पड़ गयी। तत्काल मंत्री महोदय ने सचिव को, सचिव ने उपसचिव को और उपसचिव ने जिलाधीशों को इस किस्म के आंकड़े इकट्ठे करने के आदेश 'अर्जेंट' के लेबल के साथ रवाना कर दिये। जिलास्तर के अधिकारी भी अपने कार्य में मुस्तैद थे। जिलाधीशों ने अपने तहसीलदारों को और तहसीलदारों ने पटवारियों को ये आदेश दोहरा दिये। कुछ सीधे-सादे किस्म के पटवारियों ने वाकई में आंकड़े इकट्ठे किये तो कुछ ने सिर्फ दिमागी दौड़ लगाकर खानापूरी कर ली। तहसील स्तर पर आंकड़े आने में पंद्रह दिन लग गये और जिलास्तर तक रेंगने में उन्हें एक महीने का अतिरिक्त समय लग गया।

छह माह बाद की स्थिति यह थी कि राज्य के सिर्फ पचपन प्रतिशत भाग के आंकड़े ही सचिवालय पहुंच पाये थे। इस पर मंत्री महोदय बहुत नाराज हुए और इसी चैनल के मुताबिक बचे हुए जिलों के अधिकारियों को फिर से स्मरण-पत्र भेज दिये गये। अगले तीन महीनों में इस कार्य में उल्लेखनीय प्रगति हुई। तुलनात्मक सारिणियां आदि बनाते समय यह ज्ञात हुआ कि एक जिले के अतिरिक्त सभी जगह के आंकड़े आ चुके हैं।

यह जानकर सचिव लाल-पीले हुए और उक्त जिलाधीश से कड़े शब्दों में जवाब तलब किया गया। जिलाधीश ने जांच की तो पता चला कि एक तहसील से उक्त आंकड़े अब तक न आने के कारण ही यह जानकारी सरकार को न भेजी जा सकी थी।

यह पता चलते ही जिलाधीश ने फौरन उस तहसीलदार को अपने दरबार में हाजिर होने के फरमान जारी कर दिये। दूसरे दिन सामने खड़े तहसीलदार की खिचाई करते हुए उन्होंने कहा, जैसे भी हो उन्हें दो दिनों के भीतर गधों की संख्या से संबंधित जानकारी मिल जानी चाहिए।

दूसरे दिन ही वह तहसीलदार कागज-पत्तर संभाले जिलाधीश के सामने मौजूद था। उसने गधों के आंकड़े प्रस्तुत किये। सरसरी नजर से कागज देखते हुए जिलाधीश ने प्रश्न दागा, "जो कार्य तुम पिछले आठ दस महीनों में नहीं कर पाये वह अचानक ही एक दिन में कैसे कर डाला ?"

"सर ! समय की कमी देखते हुए मैंने गधों की वाकई में गिनती करवाने की बजाय एक दूसरा ही तरीका अपनाया थां ।" स्वीकारोक्ति का स्वर सहमा सा था।

"वह क्या ?"

"सर, मुझे ऐसा लगा कि यह कार्य इतनी जल्दी नहीं हो सकेगा अतः मैंने जनगणना पुस्तिका में से धोबियों और कुम्हारों की संख्या नोट कर ली।" तहसीलदार का स्वर नम्र था।

"उससे इसका क्या संबंध ?"

"संबंध यह कि ये लोग ही गधे पालते हैं। मैंने अनुमान लगाया कि औसतन एक प्रति व्यक्ति दो गधे पालता है। अतः जितनी इन दोनों की सम्मिलित जनसंख्या है, उससे दोगुने गधे इस तहसील में मौजूद हैं। इस आधार पर ही मैं यह सूचना प्रस्तुत कर रहा हूं कि इस तहसील में पांच सौ बावन गधे हैं।"

"ओह ! यह बात है।" जिलाधीश कुछ विचार करते हुए स्टेनो की ओर मुखातिब हुए, "तुम ऐसा करो—बाकी तहसीलों के आंकड़े तैयार हैं, उनमें पांच सौ चौवन गधे जोड़कर 'स्टेटमेंट' तैयार कर आंकड़े सरकार को भिजवा दो।"

"पर मैंने सिर्फ पांच सौ बावन गधे बताये हैं, पांच सौ चौवन नहीं।" तहसीलदार ने सुधार किया।

"अपनी ही मत हांको ! मैंने पांच सौ बावन ही सुना था। फिर भी पांच सौ चौवन गधे जोड़ने के लिए कह रहा हूं क्योंकि तुम दो गधों को जोड़ना भूल गये हो।" जिलाधीश गुर्राये।

"वह कैसे, साहब ?"

"वह यूं कि उन दो अतिरिक्त गधों में पहले गधे तुम हो। यदि यह अचूक तरीका तुम दस माह पहले अपना लेते तो इनफारमेशन सबमिट करने में इतनी देर ही नहीं होती। और दूसरा गधा मैं हूं, जिसे ऐसा तरीका बिलकुल नहीं सूझा।" जिलाधीश महोदय शांत भाव से बोले।

—बी-१५०, मंगलमार्ग,
बापूनगर जयपुर

राजस्थान का उत्तर-पूर्वी हिस्सा पंजाब से मिला हुआ है। देश के विभाजन के समय वहां पर काफी संख्या में मुसलमान परिवार थे। हिंदू-मुसलमानों में भाईचारा था। एक-दूसरे के सुख-दुख, विवाह-शादी और त्योहार में वे बड़े जतन और प्रम से हिस्सा लेते थे। हिंदुओं की होली में मुसलमान डफों पर धमाल गाते थे और मुसलमानों के ताजियों में मर्सिये सुनकर हिंदुओं की आंखों में आंसू आ जाते थे।

हमारे घर के पीछे की तरफ घासी लीलगर का छोटा-सा घर था। हम उन्हें बराबर 'घासी भैया' कहकर पुकारते थे।

● रामेश्वर टांटिया

वे सब भी दादीजी को मांजी कहते। उनके यहां जंवाई आता तो दादीजी दरी-गद्दा तथा निवार के पलंग भेज देतीं। उस समय यद्यपि तन की छुआछूत थी, पर मन में प्यार था।

सन १९४७ के शुरू की बात है, देश विभाजन की चर्चा का अंतिम चरण था। अंगरेजी सरकार ने भारत और पाकिस्तान दो अलग-अलग मुल्क बनाकर शासन सौंपने का मसौदा बना लिया था।

पश्चिमी पंजाब से बड़ी संख्या में हिंदू भागकर आ रहे थे और पूर्वी पंजाब और पश्चिमी उत्तरप्रदेश से मुसलमान लाहौर और सिंध की तरफ जा रहे थे। इसका कुछ असर राजस्थान के गांवों-कस्बों के बाशिंदों पर पड़ रहा था।

आखिर १५ अगस्त, १९४७ को देश के दो टुकड़े हो गये। उसके थोड़े दिनों बाद पश्चिमी पंजाब में जिहाद शुरू हुआ। उसके समाचार अतिरंजित होकर दिल्ली, हरियाणा और राजस्थान तक फैले।

राजस्थान और पंजाब की सीमा पर पाटण नामका एक कस्बा है। उस समय वहां की जनसंख्या थी करीब १०,०००, जिनमें तीन चौथाई हिंदू और एक चौथाई मुसलमान थे। मुसलमानों में अधिकांश गरीब थे, लखारे, रंगरेज, लोहार, कुंजड़े तथा अन्य मजदूरी करनेवाले। उनकी आजीविका हिंदू महाजनों पर निर्भर थी।

पाकिस्तानी मुसलमानों के अत्याचारों से पीड़ित कुछ हिंदू शरणार्थी उस गांव में सिंध और पंजाब से आये। उनके अधिकांश स्वजनों को वहां मौत के घाट उतार दिया गया था। बाकी बचे हुए किसी प्रकार दीन-हीन दशा में पहुंचे। उनके मन में प्रतिहिंसा की ज्वाला धधक रही थी।

उनमें से किसी युवक ने एक मुसलमान

लड़की का जबरन शील-भंग कर दिया। इस प्रकार की घटना राजस्थान के गांवों के लिए नयी थी। गांव की बहन-बेटी को अमीर-गरीब सब बहन-बेटी समझते थे।

लड़की के घरवालों ने पंचों के सामने गुहार की। युवक और उसके संबंधी जोश और क्रोध में थे। उनका कहना था कि उनकी बहन-बेटियों के साथ पाकिस्तानी गुंडों ने इससे भी अधिक अत्याचार किये हैं।

लड़की के भाइयों ने मौका देखकर सिंधी युवक को घायल कर दिया। सारे गांव में खबर फैल गयी कि वह मर गया है। शरणार्थी और गांव के कुछ हिंदू युवक उसके घर के सामने इकट्ठे होने लगे। वहां से एक बड़ा जलूस बनाकर वे सब मुसलमानी मोहल्लों की तरफ गये। रास्ते में उनके घर और दूकानें जला दी गयीं। छिटपुट खून खराबी की घटनाएं भी होने लगीं।

सेठ श्यामलाल वहां के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। गांव में उनकी बनायी धर्मशाला, कुएं और रघुनाथजी का मंदिर था। उनके घर के पीछे की तरफ रहीमा नाम के एक मुसलमान रंगरेज का घर था। रहीमा की मां, पत्नी और तीन-चार छोटे बहन-भाई थे। दंगाइयों की उसके घर की तरफ बढ़ने की खबरें आ रही थीं। पत्नी के चार-पांच दिनों पहले ही बच्चा हुआ था, वह सौरी में थी। प्रत्यक्ष मृत्यु को सामने आयी देखकर घर के लोग भय से कांप रहे थे। रहीमा की बहू गोद में नन्हे बच्चे को लेकर श्यामलालजी की मांजी के पास आयी और उनके पैर पकड़कर रोती हुई कहने लगी, "मांजी, हम सब दो पीढ़ियों से आपके पास

रहते हैं, आपका दिया ही खाते हैं। अब हम इन बच्चों और बूढ़े श्वसुर को लेकर कहां जाएं। आपकी शरण में आ गये हैं—मारो चाहे उबारो।"

पीछे के दरवाजे से रहीमा के घरवालों को सेठजी के घर में लाकर नीचे के तलघर में छिपा दिया गया।

यद्यपि दंगाइयों को शक तो हो गया
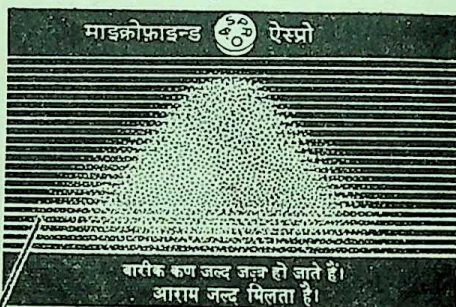
था, परंतु लालाजी [illegible] आकर खोज करने की हिम्मत नहीं हुई।

चार-पांच दिनों तक दंगे का जोर रहा। वैसे मांजी परम वैष्णव थीं, परंतु उन्होंने उन सबके रहने-खाने की व्यवस्था अपने घर में ही की। उस समय अछूत और मुसलमानों से छुआछूत बरती जाती थी, पर संकट के समय ये बातें भुला दी गयीं।

दंगा शांत होने पर उन्हें एक रात अपने विश्वस्त आदमियों और सवारियों के साथ पास के पुलिस थाने में पहुंचा दिया गया। वहां से वे शायद किसी प्रकार पाकिस्तान पहुंच गये।

यह खबर जब गांव के लोगों को मिली तो उनमें से बहुत से श्यामलालजी से नाराज हुए, बुरा-भला भी कहने लगे। परंतु उन सबका उलाहना सुनकर उनका एक ही जवाब था कि जो कुछ मैंने किया मांजी की आज्ञा से किया है। उनकी यह मान्यता है कि एक के कसूर का दूसरों को दंड क्यों दिया जाए। अगर पाकिस्तानी गुंडों ने हिंदुओं पर जुल्म किये तो उसके लिए गरीब रहीमा के अबोध बच्चों की हत्या करने से क्या इसका बदला चुक जाएगा?

इस गांव में १९५९ में एक बार जाने का मुझे मौका मिला। मुसलमानों के घर या तो टूटे-फूटे उजाड़ पड़े थे या शरणार्थियों द्वारा दखल कर लिये गये थे। वहीं मैंने रहीमा की कहानी सुनी थी।

संयोग की बात कि १९६४ में विश्व-यात्रा करता हुआ मैं पाकिस्तान से कराची [illegible] के दफ्तर में गया हुआ था। मैंने देखा, एक बूढ़ा मुसलमान मुझसे बात करना चाहता है। एक कोने में ले जाकर सहमते हुए धीरे-से कहने लगा कि बातचीत से लगता है, आप राजस्थानी हैं। फलां जिले के गांव में मेरी बेटी है। सुना है, उसके एक बच्चा भी हुआ है, परंतु अभी तक अपने नाती को नहीं देख पाया हूं। बेटी-दामाद को देखे भी १७ वर्ष हो गये। फिर मेरे हाथ में बीस रुपये थमाते हुए कहने लगा कि बड़ी मेहरबानी होगी, अगर आप इन रुपयों से बच्चे के कुरते-टोपी और थोड़ी-सी मिठाई वहां भिजवा देंगे। जितनी तनख्वाह मिलती है उसमें खर्च चलना भी मुश्किल है, नहीं तो बेटी को भी कुछ भेजना चाहता था। मैंने देखा, उसकी आंखें गीली हो आयी हैं। मैंने बताया कि वह गांव मेरे सीकर जिले में ही है—चीजें तो भिजवा ही दूंगा, कभी मौका मिला तो तुम्हारी बेटी से मिलकर राजीखुशी की खबर भी दे दूंगा। देखा, बूढ़े को मेरी बात सुनकर बहुत सांत्वना मिली है।

वृद्ध से बात करते हुए मुझे ८ वर्ष पहले की रहीमा की बात याद आ गयी। वह भी शायद इसी प्रकार अपने गांव और घर से दूर पाकिस्तान के किसी कस्बे में नौकरी करता होगा। उसे भी अपनी जन्म-भूमि और घर की याद आ जाती होगी।

—द्वारा श्री सीताराम मिल्स लि.,
१५-ए, हार्निमेन सर्किल, फोर्ट, बंबई-४०००१

सम्मोहन-शक्ति

● ज. ओस्त्रोवस्की

एमिल कियो ने टैक्सी रोकने के लिए हाथ दिखाया और टैक्सी रुक गयी। ड्राइवर ने टैक्सी का दरवाजा खोला।

कियो ने बैठते हुए कहा, "सर्कस चलो।"

"बहुत अच्छा सा'ब," ड्राइवर ने उत्साहपूर्ण उत्तर दिया और आश्चर्य से पूछा, "क्या आप कियो नहीं हैं ?"

"तुमने ठीक पहचाना। कृपया मुझे सर्कस तक जितना जल्दी हो सके, ले चलो।"

दो मिनट की चुप्पी के बाद ड्राइवर ने प्रश्न किया "क्षमा कीजिए, क्या मैं पूछ सकता हूं कि आप अपने खेलों के प्रदर्शन में दर्शकों को सम्मोहित कर लेते हैं ?..."

"सम्मोहन शक्ति ... ? ... हां ... निश्चय ही।" सर्कस कलाकार ने सोचा कि अगर ड्राइवर इसी तरह से खुश होना चाहता है तो हो लेने दो।

"तो मुझे सम्मोहित करके दिखाइए।"

"बहुत अच्छा !" कियो ने कहा। अंधेरे के कारण ड्राइवर कियो की आंखों में छिपी शरारत को न देख सका। उसने आगे कहा, "सर्कस पहुंचने तक तुम मेरी सम्मोहनशक्ति के प्रभाव में होगे।"

"किस प्रकार ?"

"सर्कस तक टैक्सी के मीटर में कितने पैसे बनते हैं ?"

"लगभग ६० कोपेक।"

"ठीक है, मैं तुमको एक रूबल दूंगा और क्या तुम जानते हो कि कितने पैसे तुम मुझे लौटाओगे ?" "कितने पैसे . . . ?"

"तुम मुझे ९९ रूबल और ४० कोपेक वापस करोगे। तुम यही समझोगे कि मैंने तुम्हें १०० रूबल का नोट दिया है।"

ड्राइवर घबराते हुए बोला, "क्या ऐसा हो सकता है ?"

कुछ मिनटों में टैक्सी सर्कस के बाहर पहुंच चुकी थी। कियो टैक्सी के बाहर निकला और ज्यों ही उसने पैसे निकाले टैक्सी शोर करती हुई भाग निकली।

"रोको," सर्कस कलाकार जोर से चिल्लाया, "वह तो केवल मजाक था !"

परंतु कुछ ही क्षणों में टैक्सी अपार भीड़ में खो चुकी थी। ड्राइवर सच्चा था, वह अपनी जेब की सारी पूंजी खोने का जोखिम नहीं उठा सकता था।

—अनु. : अमरजीतसिंह

'लेखकों को इकट्ठा करना और चर्चा करना किसी तराजू में पांच किलो मेंढक तोलना है।' ये शब्द हैं प्रसिद्ध लेखक यशपाल के जो उन्होंने इलाहाबाद के लेखक सम्मेलन में कहे थे।

यशपालजी जब भाषण कर रहे थे तो एक युवा लेखक ने अपना आक्रोश व्यक्त किया और कहा, "हिंदी के प्रश्न को लेकर महादेवीजी ने अपना अलंकरण (पद्मश्री) लौटा दिया था, फिर आप उसे क्यों लिये बैठे हैं?" यशपालजी ने उत्तर दिया, "भाई, मैंने सरकार से कभी कुछ नहीं मांगा—न अलंकरण और न पुर-

मेंढक और साहित्यकार

स्कार। जब मुझ से पूछा गया था तो मैं पद्मश्री लेने के लिए तैयार नहीं था।" मेरी पत्नी ने समझाया, "सरकार स्वयं दे रही है। आप मांगने तो नहीं गये, फिर ले क्यों नहीं लेते।" मैंने पत्नी की बात को सही समझा और बिनमांगे मिला पुरस्कार ले लिया, और जब मौका आएगा इसे फिर वापस कर दूंगा।" एक दूसरे युवा लेखक ने तुरंत चुटकी ली, "क्या यह मौका नहीं है?" इस पर राजेन्द्र अवस्थी ने कटाक्ष किया, "यशपालजी, यह अलंकरण लगे हाथों इन्हीं को क्यों नहीं दे डालते?" यशपालजी ने भी नाटक किया। उन्होंने हाथ आगे बढ़ाते हुए कहा, "लीजिए जिसे लेना हो, ले लीजिए।"

हिंदी साहित्य : नया वर्गीकरण

हिंदी साहित्य में चार तरह के लेखक हैं:

१. लब्ध-प्रतिष्ठित यानी जो पुराने और जमे हैं। २. नये प्रतिष्ठित यानी बड़ी पत्रिकाओं में छपनेवाले। ३. युवा लेखक यानी छोटी पत्रिकाओं में छपनेवाले। ४. लेखक जो कहीं नहीं छपे।

यह वर्गीकरण इलाहाबाद-सम्मेलन में एक युवा लेखक ने प्रस्तुत किया है। अब तक आचार्य रामचंद्र शुक्ल से लेकर डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी और डा. नगेन्द्र के वर्गीकरण चले आ रहे थे, अब हिंदी के पाठक नये परिवर्तन को नोट कर लें।
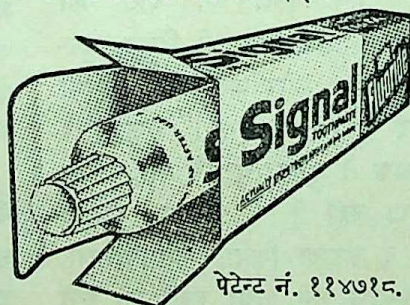
'पिन प्वाइंट कीजिए'

हरिशंकर परसाई पहले दिन की मीटिंग में बार-बार चिल्ला रहे थे, 'पिन प्वाइंट कीजिए' और लंबा भाषण देने लगते थे। इस पर श्रोताओं ने चिल्लाना शुरू किया, 'पिन प्वाइंट कीजिए'। परसाई नशे में भी संतुलन बनाये हुए थे लेकिन मंच पर आसीन दूसरे महोदय ने उनके सामने से माइक खींच लिया।

'क्या बात है साहब ?'

'क्या बात है साहब ?' यह मसीही स्वर है भैरवप्रसाद गुप्त का, जिन्हें सारे साहित्य का दर्द सता रहा था और जो चीख-चीख कर कह रहे थे—

—'बड़ी पत्रिकाएं लेखकों का शोषण कर रही हैं, क्या बात है साहब ?'

—'सरकार फासिस्ट होती जा रही है, क्या बात है साहब ?'

—'हिंदी के प्रकाशक घटिया दर्जे की पुस्तकें छापकर सही आवाज को दबा रहे हैं, क्या बात है साहब ?'

हिंदी-कथा साहित्य के भूतपूर्व कहानीकार और 'नई कहानियां' के भूतपूर्व संपादक भैरवप्रसाद गुप्त ही थे—क्या बात है साहब !'

और अंत में . . .

इलाहाबाद-सम्मेलन यशपाल की भविष्यवाणी पर ही समाप्त हुआ, तराज़ू पर मेंढक नहीं तौले जा सके।

देश में विदेशीपन

जब मनुष्य को अपना समाज, अपना परिवार, अपना परिवेश पराया-सा लगने लगे तो उसमें अजनबीपन पैदा होता है। इसी तरह जब कुछ भारतीयों को अपने देश की विशेषताएं निरर्थक लगें या समझ में न आयें तो उनमें विदेशीपन पैदा होता है। इस विदेशीपन का एक भाषाई रूप है, जो साम्राज्यवाद के अंतिम अवशेष को अपने दिमाग के कमरे में सजाकर रखता है। वह मानता है कि अंगरेजी भारत की राष्ट्रभाषा है, और एकता की भाषा है। ऐसी ही भावना भारत के एक अंगरेजी साप्ताहिक के संपादक ने अपने लेख में व्यक्त की है। भारत के सभी राष्ट्रीय और क्रांतिकारी नेताओं ने अंगरेजी को साम्राज्यवादी शोषण का प्रतीक माना था और उसे भी हटाना जरूरी समझा था। बोलनेवालों की संख्या, भाषाविज्ञान, राष्ट्रीय आवश्यकता, अपनी पहचान और अभिव्यक्ति की स्वाधीनता की दृष्टि से भारतीय भाषाओं की जो हैसियत है, वह अंगरेजी की नहीं है। ऐसे बुद्धिजीवियों को क्या कहिए जो अपने देश में रहकर भी हमेशा दिमागी विदेश-यात्रा करते रहते हैं। न इनमें स्वदेशी की भावना है और न ही आत्मनिर्भरता की। अच्छा है, ये लोग अपना विदेशीपन ब्रिटिश म्यूजियम में जमा करा दें !

● **अश्वमेध**

हरसिंगार मुरझा गया

इसी हरसिंगार के नीचे
झुक-झुक कर फूल चुने थे मैंने
केसर घोलकर, फागुन का
रंग पिलाया था फूलों को
चांद की धूल में लेटी
परियों से छुआ लिया था पंखुड़ियों को—
पर केसर निचुड़कर
टपक गया मेरी रग-रग में
चांदनी छितराकर
चमका गयी मेरी आंखों को
कहां से आ गयी
यह सुगंध की बौछार खिलखिलाती हुई
न जाने ?

पेड़ की दुबली-पतली डालियों के हर मोड़
पर कोमलता सुस्ता कर सोई है
झकझोर कर जगाया उसे तब धीरे से
अलसा कर फूलों के धक्के से गिर पड़ी
नीचे मेरी हथेलियों में
फूलों की जभी सफेदी में आ दुबक गयी
सिसकती हुई

अब तो केवल हरसिंगार का पेड़ है
यहां घबराई हुई धूप को
परछाईं की गोद में सुलाकर थपकियां
दे रहा है धीरे-धीरे

और बौखलाया सूरज गली-गली, पेड़-पेड़ में
ढूंढ़ रहा है खोये सुनहरेपन को
अब शायद फूल फिर खिल ही जाएंगे
कल या परसों

—उत्तरा

६३–बी., स्वास्तिक सोसायटी,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद

प्यार की ऋतु

ऋतु आयी गुलबिया प्यार की
बहुरिया हुलसाये
पियरवा मन भाये
गमका फागुन सांस-सांस में,
लहका हियरा वन-पलाश में
बयरिया लहराये
पियरवा मन भाये
रुचतीं अलि को रंगरेलियां,
कलियों के संग अठखेलियां
गुजरिया शरमाये
पियरवा मन भाये
बहकीं लता की तनहाइयां,
तरुओं ने लीं अंगड़ाइयां
नजरिया भरमाये
पियरवा मन भाये
ऋतु आयी गुलबिया प्यार की
बहुरिया हुलसाये
पियरवा मन भाये

—श्रीप्रदीप

प्रदीप प्रकाशन, ए-१०६, गली नं. २
घोण्डा नार्थ, दिल्ली-११००५३

दय
न्या
के
पाठ
हैं त
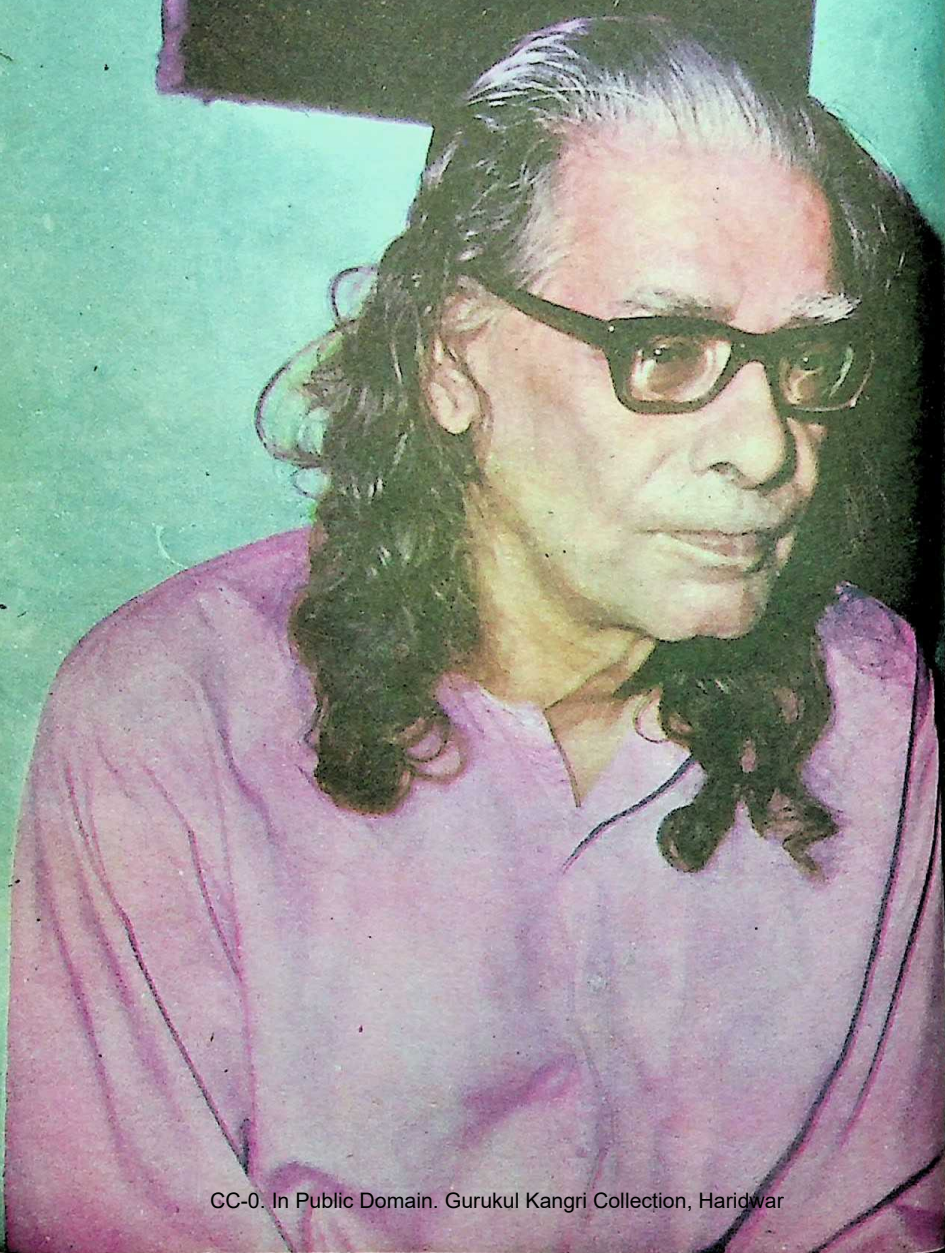
मेरे
विद्रो
विद्रो

में मे
इसे
मेरे

विद्रो
के वि
में त

यह
कोई
है--
अवस
विद्रो
बनने
राम
लेख
उन्हें
मान

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी एवं उपेन्द्रनाथ 'अश्क' पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं इलाचन्द्र जोशी

मेरे उपन्यासों का लेखक विद्रोही है

इलाचन्द्र जोशी

दयावती ठाकुर, मंडी मंडल : आपके उपन्यासों के अधिकतर नायक विद्रोही प्रकृति के क्यों होते हैं? इन चरित्रों के रूप में पाठक यदि आपके व्यक्तित्व की झलक पाते हैं तो क्या उसे आप उचित कहेंगे?

आपने ठीक ही अनुमान लगाया है। मेरे अधिकतर नायक संभवतः इसी कारण विद्रोही हैं कि मेरे उपन्यासों का लेखक विद्रोही है। यदि मेरे पाठक उन चरित्रों में मेरे व्यक्तित्व की झलक पाते हैं तो मैं इसे अनुचित भला क्यों कहूंगा? वह तो मेरे लिए गर्व की ही बात होगी।

सचमुच, मेरी प्रकृति बचपन से ही विद्रोही रही है और आज तक, एक दिन के लिए भी, मेरी प्रकृति की इस विशेषता में तनिक भी अंतर नहीं आया।

इसके अतिरिक्त, मेरी बुद्धि में भी यह बात समा गयी है कि विद्रोही होना कोई दुर्गुण नहीं, वरन एक महत्त्वपूर्ण सुगुण है—बशर्ते उस विद्रोहिता का उपयोग सही अवसर पर सही ढंग से किया जाए। बिना विद्रोह के किसी समाज को प्रगतिशील बनने की प्रेरणा नहीं मिल सकती।

रामहेत अग्निहोत्री, फर्रुखाबाद : आपके लेखन में जिन भावों का समावेश है, क्या उन्हें व्यावहारिक रूप दे रहे हैं?

कतई नहीं। अपने मन के आदर्शों, भावों और विचारों को व्यावहारिक रूप देने की न तो मुझमें विशेष प्रवृत्ति ही रही है और न इस बात के लिए उपयुक्त परिस्थितियां ही मुझे प्राप्त हो पायी हैं। मैं तो केवल 'परोपदेशे पांडित्यम्' सिखाने की बात पर विश्वास करता हूं!

शिवनारायण शिवहरे, सोहागपुर : पर्दे की रानी उपन्यास कब व किस प्रकार लिखा?

पर्दे की रानी लिखने की प्रेरणा की बात आपको बताऊं तो आप अविश्वास से मुसकराने लगेंगे। हुआ यह कि **संन्यासी** लिख चुकने के बाद एक दिन मैं अकेले टहलने के लिए निकल पड़ा था। रास्ते में इस संबंध में सोच रहा था कि अब आगे किस 'थीम' पर नया उपन्यास लिखा जाए। टहलते हुए, रास्ते में लड़कियों

का एक होस्टल दिखा। देखते ही एक क्षण में **पर्दे की रानी** का सारा प्लाट, जैसे जादू के एक फ्लैश के साथ, मेरे माथे के भीतर कौंध गया। मैंने आगे कुछ सोचा ही नहीं; और घर वापस आकर लिखने बैठ गया। पहला परिच्छेद एक ही सांस में लिख गया। ऐसा ही होता है। हमारी अवचेतना हमारे लिए कब सारी बातें सोचकर पहले ही से तैयार बैठी रहती है, हम जान ही नहीं पाते।

मदनलाल आसोपा, कलकत्ता : जहाज का पंछी में नायक के लता से मिलने के बाद उपन्यास सरस तथा रोचक हो गया, इससे पहले नायक को शुष्क रेगिस्तान में (करीब ३००-३५० पृष्ठ) क्यों भटकाया गया ?

जहाज का पंछी में, जहां तक मुझ याद आता है, नायक किसी लता से कहीं और कभी नहीं मिलता, हां लीला नाम की एक सुशिक्षिता और सुसंस्कृता लड़की से कलकत्ते के बालीगंज में अवश्य उसका मिलन हुआ है।

आपको ऐसा लगा कि इस मिलन-प्रसंग के बाद उपन्यास रोचक हो गया। विश्वास मानिए, इस बात में भी मेरा दोष नहीं है। हमारे यहां के पाठक ऐसी परिस्थितियों को रोचक मानने के आदी हो गये हैं।

साथ ही, यह भी बता दूं कि यह प्रश्न अपनी-अपनी रुचि का भी है। मेरे बहुत-से पाठकों को वे सब प्रसंग अधिक रोचक लगे हैं, जिनसे नायक आज के जन-

'मुझे ईश्वर के अस्तित्व पर पूर्णतया विश्वास है'—चिंतन के क्षणों में जोशीजी
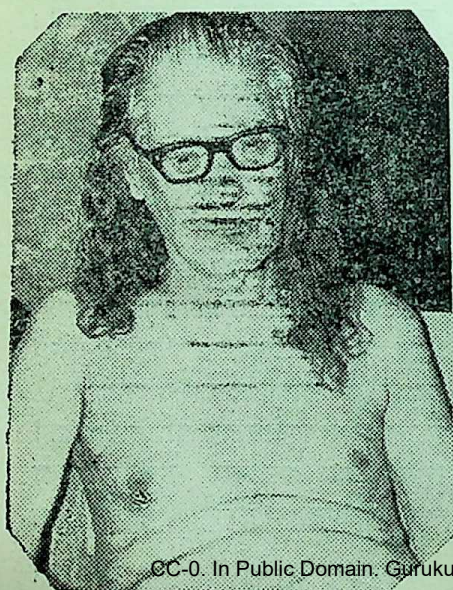
जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में सहज ही बंध जाता है।

करनजीतसिंह सरन, छिंदवाड़ा: क्या आपको ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास है?

मुझे ईश्वर के अस्तित्व में पूर्णतया विश्वास है। केवल इतना ही नहीं, ईश्वर के अस्तित्व को छोड़कर मेरा आज के संसार में और किसी भी बात पर विश्वास ही नहीं जम पाता। न आज की अंतर-राष्ट्रीय राजनीति में, न अर्थ-व्यवस्था में, न साहित्यिक चर्चा में, न जन-जीवन में और न व्यक्तियों के आत्म-प्रदर्शन में ही।

तेजकुमार सुमन, इंदौर: आपकी रचनाओं का प्रमुख उद्देश्य क्या है?

भाई, प्रश्न तो आपका बहुत ही गंभीर और महत्त्वपूर्ण है, पर मैं ठीक से इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाऊंगा। इसका एक कारण तो यह है कि उत्तर के लिए मुझे संपादक महोदय ने केवल एक छोटे पन्ने पर ही छूट दी है, और आपके उत्तर की ऊपरी बातों में ही फुलस्केप साइज के कम-से-कम तीन पन्ने चाहिए, फिर भीतरी बातों के संबंध में क्या कहने! फिर भी सुनिए—

मेरी रचनाओं का प्रमुख उद्देश्य जीवन की विविध परिस्थितियों में पड़े और पले हुए व्यक्तियों की जीवन-गाथा से, और उन विभिन्न प्रकार के जीवन में जी पाने के प्रयत्नों में किये जानेवाले संघर्षों से पाठकों को परिचित कराना है। आदि-काल से सभी लेखक और कवि यही करते आये हैं और मेरा भी उद्देश्य यही रहा है।

'मेरा भोग अभी पूरा नहीं हुआ'—जोशीजी पत्नी के साथ

आपका जीवन-दर्शन क्या है? वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं-परिस्थितियों के संबंध में आप क्या करना चाहेंगे?

मेरा जीवन-दर्शन मोटे तौर पर यह है कि संसार के विभिन्न क्षेत्रों में पड़े हुए सभी व्यक्तियों को अपने-अपने ढंग से खुलकर जीने की पूरी छूट मिलनी चाहिए। मैं यह कहना चाहता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने विश्वासों के अनुसार अपने ही ढंग से जीने के लिए स्वतंत्र है। अलग-अलग व्यक्तियों के, अपनी इच्छानुसार, अलग-अलग ढंग से जीने से संपूर्ण मानव-जीवन में जो एक रंगारंग समन्विति आ सकती है वही जीवन की इंद्रधनुषी रंगीनी की पूर्ति करती है। शेष सभी दृष्टिकोण मुझे फिजूल और निरर्थक बकवास लगते हैं। (अपना जीवन दर्शन किसे प्रिय नहीं होता? मुझे भी है।)

जैन मुनि सुमंत भद्र, नयी दिल्ली: आप मनोविश्लेषक उपन्यासकार हैं। क्या आप यह स्वीकार करते हैं कि मन की अंतिम नियति वैराग्य है?

मैं तो एक साधारण पेशेवर लेखक हूं। एक मुनि के प्रश्न का कोई उत्तर देने की धृष्टता कैसे करूं! फिर भी चूंकि 'कादम्बिनी' ने मुझको और आपको भी अपने जाल में फांस लिया है, इसलिए, मुझे उत्तर देना ही पड़ेगा।

मन की अंतिम नियति वैराग्य हो भी सकती है और नहीं भी। पर बात व्यक्ति के मूल संस्कारों और जीवन के दौरान उन संस्कारों के विकास और ह्रास या ह्रास-विकास पर निर्भर करती है। मैं तो जीवन के अंतिम छोर तक पहुंचने पर भी अभी इस हद तक विवश नहीं हुआ कि वैराग्य पर मनन और चिंतन करूं। वरन्, इसके विपरीत, मैं आगामी जन्म में जीवन के सुख और दुःखों के भोग की नयी-नयी परिस्थितियों की काल्पनिक संभावनाओं पर जी रहा हूं। मेरा भोग अभी पूरा नहीं हुआ। पूरा हो जाने पर ही शायद वैराग्य मेरे मन को छुए।

वैसे, एक गुप्त बात आपके कान में कह दूं। वह यह कि अपनी घोर जवानी के दिनों में मैं एक बार वैराग्य को पूर्णतया अपनाने को उत्सुक ही नहीं, एकदम तैयार हो गया था। बीच में बाल बराबर एक व्यवधान आ गया और मैं रह गया।

क्या आप कोई ऐसी कृति प्रस्तुत करना चाहेंगे जिसमें मृत्यु का तात्त्विक विश्लेषण हो?

मैं ऐसी कोई कृति लिखना तो अवश्य चाहता हूं, मेरे मन की रुझान इस ओर बहुत है। आपने उसे पहचान लिया, यह आपके मुनि होने की ही विशेषता है।

पर बंधु, मेरे दोनों पांव (या डेढ़ या पौने दो से अधिक हिस्सा) कब्र में लटक चुका है। और अब मन में न पहले की-सी वह मटक रह गयी है, न लेखनी में चटक। इसलिए किसी भी गंभीर दिलचस्प विषय पर मैं अपनी वर्तमान

शारीरिक और मानसिक दुर्बलता की स्थिति में कोई विशेष कृति लिखने योग्य नहीं रह गया हूं। क्षमा करेंगे।

ज्ञान भारद्वाज, सागर कैंट : आपने अपने उपन्यासों में नारी के गुणों का जितना बखान किया है नर का उतना नहीं। क्यों?

क्या आप सचमुच यह समझते हैं कि नर विशेष गुणों का पात्र होता है?—नारी से अधिक? मैंने नारी के गुणों का विशेष बखान किया है, यह बात आपको खल गयी—शायद। पर क्यों?

मुझे खेद है कि मैं ऐसा नहीं समझता कि पुरुष नारी से अधिक गुणशील होता है। जीवन के अनुभवों से मैंने जैसा पाया वैसा ही लिखा। अन्यथा कैसे लिखता?

क्या आप यह नहीं समझते कि युगों से भारतीय साहित्य में निंदित और समाज में ठुकराई हुई भारतीय नारी के स्वभाव में ऐसे अशेष गुण निहित हैं जिन पर हमारे लेखकों और समाजपतियों ने कोई ध्यान नहीं दिया? मैंने यदि ध्यान दिया तो क्या कोई अपराध किया?

नरेन्द्र राम त्रिपाठी, वाराणसी : 'नये लेखक और उनकी समस्याएं' पर आपके क्या विचार हैं?

नये लेखक बहुत अच्छा लिखते हैं और उनकी समस्याओं को मैं जिस सीमा तक समझ पाता हूं, वे भी मुझे अच्छी (अर्थात् विचारोत्तेजक) लगीं। इस संबंध में मुझे विचारों की उत्तेजना तो मिली, पर अपने कोई निश्चित विचार इस संबंध में मैं बना नहीं पाया।

नीलाम्बर जोशी, बिजनौर : आपकी सर्वप्रथम रचना कहां से प्रकाशित हुई है?

मैंने लिखना तो प्रारंभ कर दिया था सन् १९१२ से, जब मेरी अवस्था प्रायः १० साल की थी। प्रारंभ में मैंने कविताएं ही लिखीं। बाद में एक हस्तलिखित पत्रिका में कुछ मनोविनोद के लेख लिखे, और कहानियां भी।

मेरी सर्वप्रथम रचना है **घृणामयी** या **लज्जा**। **लज्जा** का नाम पहले **घृणामयी** था। इस नाम से बाद में मुझे लज्जा आयी, और मेरी नायिका का नाम भी लज्जा था, इसलिए पुस्तक का नाम ही मैंने **लज्जा** रख दिया।

घृणामयी लिखी तो गयी थी १९२७ में, पर इसका प्रकाशन हुआ १९२९ में, बंबई के हिंदी ग्रंथ-रत्नाकर कार्यालय से। **लज्जा** (अर्थात **घृणामयी** का नया संस्करण) भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई है।

रंगनाथ मिश्र 'सत्य', लखनऊ : आपकी कहानियों और उपन्यासों में भौतिक तथा आध्यात्मिक समन्वयता है, उसका श्रेय किसको देते हैं—प्रेरणा या भावना को?

आप इन दोनों में से किसी एक को या दोनों को ही समझ लें, कुछ अंतर नहीं पड़ता।

मेरी रचनाओं में भौतिक और आध्यात्मिक समन्वयता (यदि है) तो अच्छा ही है, बुरा क्या है?

अत्याधुनिक हिंदी साहित्य के क्षेत्र में अगीत, अकविता अनाटक और अकहानी-जैसी विधाएं चल रही हैं। आपका इन विधाओं के प्रति क्या दृष्टिकोण है ?

इन विधाओं के संबंध में मैं इस समय केवल इतना ही कहना चाहूंगा कि मैंने अपनी किसी भी रचना में भी इनमें से किसी भी विधा को मान्यता नहीं दी है, न आगे ही देने का कोई विचार है। पर ये विधाएं भी अपनी जगह बहुत ही रोचक और दिलचस्प हैं। (इस कारण कि वे सब बिलकुल नयी हैं और जीवन के एक लंबे अर्से तक मैं कभी उनका नाम तक न सुन पाया था।) नयी चीज और नयी बात सभी को अच्छी लगती है। यह मनुष्य का स्वभाव है। इसलिए सभी उक्त नयी विधाएं—कम से कम अपने नये नाम के कारण—मुझे पसंद हैं।

रामदेव शर्मा 'प्रभंजन', माड़र (मुंगेर) : ऋतुचक्र की प्रेरणा आपको कैसे मिली ?

ऋतुचक्र की रचना की प्रेरणा मुझे तब मिली थी जब मैं इंदौर रेडियो स्टेशन में प्रोड्यूसर की हैसियत से गया हुआ था। वहां मालव प्रदेश की मिट्टी में मुझे अपने प्रिय कवि कालिदास की याद आयी। कालिदास पर सोचते-सोचते अचानक मैं सोचने लगा कि यदि कालिदास आज के जीवन के बीच मालवा के वर्तमान साहित्यिक प्रांगण में कहीं टपक पड़ते तो क्या सोचते ? और इसी तरह सोचते-सोचते एक दिन **ऋतुचक्र** की योजना से मेरा मस्तिष्क जा टकराया। मालवा-प्रवास-काल में वहां के तत्कालीन आधुनिक कवियों और लेखकों से विविध साहित्यिक चर्चाएं होती रहती थीं और उनके अलग-अलग व्यक्तित्व से भी टकराव होता रहता था। उन्हीं का परिणाम **ऋतुचक्र** है।

विनोदकुमार नवीन, महेशपुर (बिहार) : इतनी समृद्धता के बावजूद हिंदी अभी तक राष्ट्रभाषा के पद पर क्यों आसीन नहीं हुई ?

अब तो मैं इस प्रश्न के संबंध में कुछ इस तरह सोचने लगा हूं कि मुझ जैसे कुछ आत्मलीन और केवल अपने ही चारों ओर के साधारण जीवन के संकीर्ण परिवेश की ही प्रतिदिन की जीवन-लीला में मग्न रहनेवाले लेखकों की इस संबंध में उपेक्षा ही वह कारण हो सकती है जिसके फलस्वरूप हिंदी अभी तक राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन नहीं हो पा रही है। भाषाई प्रश्न पर मैंने कभी गंभीरता से सोचा ही नहीं इसके लिए आप जो भी दंड देना चाहें, मैं भोगने को तैयार हूं। मुझे इस बात की जल्दी कभी नहीं रही कि हिंदी दो-चार दिन (या (या दस-पांच—अर्थात पंद्रह-वर्षों) के भीतर ही राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन क्यों नहीं हो पायी। हर घटना का एक समय नियत होता है। रहीम की इस उक्ति का महत्त्व मैं मानता हूं—माली सींचै सौ घड़ा ऋतु आवै फल होय।

—८, नवाब यूसुफ रोड, इलाहाबाद

नब्ज पैर के अंगूठे में!

'हॉलीवुड प्रेस्बीटेरियन हास्पिटल' (कैलिफोर्निया) के डॉक्टरों—डॉ. हेनरी और डॉ. मैक्सवेल— का कहना है कि पैर के अंगूठे के तापमान से यह मालूम किया जा सकता है कि रोगी अपने गंभीर रोग से मुक्त हो सकेगा या नहीं।

रोगी के पैर के अंगूठे का तापमान, उसके समूचे शरीर के और कमर के तापमान के मध्य के बराबर है, तो उसके रोग-मुक्त होने की आशा की जा सकती है। यदि अस्पताल में भरती होने के तीन घंटे के अंदर रोगी के पैर के अंगूठे का तापमान कमरे के और शरीर के तापमान के आधे से नीचे गिर जाता है तो उसके बचने की संभावना कम रहती है। इसके अलावा, रोगी के पैर के अंगूठे के तापमान से रक्त-प्रवाह और रोग के आक्रमण की गंभीरता का भी पता चलता है।

इस स्तंभ के अंतर्गत विज्ञान के क्षेत्र में नयी उपलब्धियों की चर्चा रहेगी। स्तंभ एक महीने के अंतराल से प्रकाशित होगा —सं०

विज्ञान नयी उपलब्धियां

कम खर्च में फिल्म बनाइए

एक पुराने वैज्ञानिक सिद्धांत के अनुसार क्षतिग्रस्त मस्तिष्क की कोशिकाएं मर जाती हैं और वह स्थान रिक्त रहता है, लेकिन हाल के अनुसंधानों ने इस सिद्धांत को गलत सिद्ध कर दिया है। अब सिद्ध हो गया है कि ये कोशिकाएं स्वयं को पुनर्स्थापित कर लेती हैं।

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ. गैरी लिंच तथा डॉ. कार्ल डब्ल्यू. कोटमैन ने चूहों पर परीक्षणों द्वारा इस तथ्य को पता किया है।

मस्तिष्क की क्षतिग्रस्त कोशिकाएं

अमरीका स्थित भारतीय वैज्ञानिक डॉ. तुलसीराम ने एक ऐसी विधि खोज निकाली है जिससे फिल्म बनाने पर आने वाली लागत बहुत कम हो जाएगी। जबसे छायांकन का विकास हुआ है, 'सिल्वर साल्ट' रसायन का फिल्म की निगेटिव एवं पॉजिटिव विधियों, दोनों में बहुत ज्यादा प्रयोग होता है। पहले निगेटिव, फिल्मों में नाइट्रेट का प्रयोग किया जाता था जो ज्वलनशील पदार्थ है। फिर भी फिल्म को चित्र खींचने-योग्य बनाने के लिए

'सिल्वर साल्ट' की जरूरत पड़ती है। फिर, छायांकन के लिए अनेक रसायनों का प्रयोग करना पड़ता है। फिल्म धोने में और उसे सुखाने में भी बहुत समय लगता है।

न्यू आर्लियंस के कालवर कार्पोरेशन के डॉ. तुलसीराम ने ऐसी विधि खोजी है जिसमें सिल्वर साल्ट की आवश्यकता ही नहीं होती, और न ही फिल्म को डेवलप करने में किसी रसायन का प्रयोग करना होता है। कालवर फिल्म में एक पॉलिस्टर तत्त्व होता है। इस विधि में सिल्वर साल्ट के स्थान पर नाइट्रेट गैस का प्रयोग करते हैं। गैस से फिल्म पर बुदबुदे बन जाते हैं जो प्रकाश के तापीय योग से फिल्म पर छायाचित्र का अंकन करते हैं। इस विधि से विकसित काली-सफेद फिल्म कम-से-कम ३,००० बार प्रदर्शित की जाती है, जबकि पुरानी विधिवाली केवल ६०० बार ही। ऐसी फिल्में राष्ट्रीय अभिलेखागारों के लिए आदर्श सिद्ध हो सकती हैं।

भारत के लिए यह नयी फिल्म-निर्माण विधि अत्यंत उपयोगी है क्योंकि प्रतिवर्ष फिल्म-निर्माण पर यहां अनुमानतः साढ़े तीन करोड़ रुपया व्यय होता है।

नेत्रहीन भी बर्फ पर . . .

लीजिए, अब नेत्रहीन भी 'स्की' खेल सकेंगे। अमरीकी 'स्की' खेल के निदेशक गैवेट ने दो साथियों को साथ लेकर, ध्वनि संकेत-यंत्रों की सहायता से, एक सप्ताह तक आंखों पर पट्टी बांधकर 'स्की' का बर्फ पर अभ्यास किया।

उनका कहना है कि नेत्रहीनों के लिए 'स्की' सीखना नेत्रवालों से अधिक आसान है क्योंकि नेत्रहीनों की ज्ञानेंद्रियां बड़ी तीव्र होती हैं, और उनमें शारीरिक संतुलन बनाये रखने की अद्भुत क्षमता होती है।

'स्की' का अच्छे-से-अच्छा खिलाड़ी कभी-कभी सामने बर्फ का पिंड देखकर घबरा जाता है और संतुलन खो बैठता है। नेत्रहीनों के लिए कोई परेशानी की बात

नहीं है। क्योंकि उन्हें तो बर्फ-पिंड से टकराने पर ही उसकी अनुभूति होती है और तब वह संतुलन - क्षमता से फिसलनेवाली पट्टियों के सहारे स्वयं को गिरने से बचा लेंगे।

नेत्रहीन 'स्की' खिलाड़ियों को संकेत विद्युदाणविक-यंत्र द्वारा दिये जाएंगे और प्रत्येक की जेब में एक ऐसा संकेतग्राही यंत्र रहेगा जिसका संबंध उनके कान में धीमे ध्वनि-प्रसारक उपकरण से होगा। ●

पग-पग पर श्रीराम

● डॉ. सुरेशव्रत राय

रामभक्त तुलसी को 'सिया राममय सब जग जानी' की अनुभूति ही नहीं हुई बल्कि उनकी भक्ति-भावना ने भारतीय जनजीवन को राम-भक्ति से ओतप्रोत किया है। श्रीराम ने एक ओर अयोध्या से बक्सर होते हुए मिथिला, जनकपुर की यात्रा की तो वनवास के उपरांत प्रयाग, चित्रकूट, बुंदेलखंड, मध्यप्रदेश होते हुए नासिक, बेल्लारी, तुंगभद्रा नदी के तटवर्ती विरुपाक्ष क्षेत्र, मैसूर, मद्रास, विंध्याद्रि पर्वत होते हुए लंका तक यात्रा की। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक राम का चरित्र चंदन की भांति महक उठा।

उत्तरी भारत, विशेषत: उत्तर प्रदेश को राम और कृष्ण का प्रदेश कहा जाता है। अयोध्या के श्रीराम-जन्मभूमि मंदिर का विक्रमादित्य ने जीर्णोद्धार कराया। सात कलशयुक्त, छह सौ एकड़ भूमि पर बना श्रीराम-जन्मभूमि मंदिर देश के चार सर्वश्रेष्ठ मंदिरों में से था जो मीलों दूर से दिखायी देता था। मंदिर में कौशल्या एवं सीता के नाम पर दो बड़े कूप थे। कसौटी के ८४ प्रस्तर खंभों पर बना श्रीराम-जन्मभूमि मंदिर हर समय वेद-मंत्रों से गूंजता रहता था।

यहीं स्वर्गद्वार घाट पर स्थित नागेश्वर महादेव के पास श्रीराम पंचायतन की काले पत्थर की कलात्मक मूर्तियां हैं। अयोध्या से नौ मील पश्चिम की ओर गुप्तारघाट पर गुप्तहरि मंदिर पावन स्थानों में से है। कहा जाता है, इसी स्थान पर श्रीराम ने सरयू में प्रवेश करके अपने धाम के लिए प्रस्थान किया था।

चित्रकूट में 'कामद गिरि' (जिस पर राम, लक्ष्मण और जानकी ने प्रवास किया था) जयंत-प्रसंग से संबद्ध स्फटिक शिला, कामद गिरि से दस मील दक्षिण में अनसूया-आश्रम, सीताकुंड, लक्ष्मणकुंड, भरत-कूप, श्रीराम के वनवासी जीवन का स्मरण कराते हैं। चित्रकूट के समीप ही शरभंग आश्रम तथा राम-मंदिर है। वाराणसी में दशाश्वमेध घाट के राम-मंदिर में राम पंचायतन रूप का दर्शन होता है। इन मूर्तियों के दोनों ओर राधा-कृष्ण की मूर्तियां हैं। ठीक सामने हनुमान का मूर्तियुक्त मंदिर है। इसी प्रकार संकट-मोचन मंदिर में हनुमान की प्रतिमा के सामने श्रीराम, लक्ष्मण एवं जानकी की मूर्तियां हैं। तीसरा राम-मंदिर दुर्गाघाट पर स्थित है। दुर्गा कुंड के समीप नव-

निर्मित सत्यनारायण मंदिर देश के राम-मंदिरों में अनूठा है। इसकी संगमरमर की दीवारों पर रामचरितमानस आद्योपांत अंकित है। यही नहीं, इस मंदिर के ही एक भाग में रामकथा से संबंधित चलती-फिरती झांकियां प्रदर्शित की जाती हैं। मंदिर के बाहर मानस में दिये गये वर्णनों के आधार पर बनायी गयी पर्णकुटी लंका एवं तटवर्ती सागर, वन खंड तथा आश्रम के मिनी माडल उल्लेखनीय हैं।

श्रीराम ने ताड़का, सुबाहु, मारीच का दमन करते हुए विश्वामित्र के साथ पूर्वी प्रदेश की यात्रा की थी। बक्सर में जहां त्रेता युग में विश्वामित्र का आश्रम बतलाया जाता है, आज राम-मंदिर एवं राम-चबूतरा बना है। बक्सर में ही रामघाट पर स्थित रामेश्वर-मंदिर तथा श्रीराम-मंदिर भक्तों को आकर्षित करते हैं। खुर्दा रोड स्टेशन से लगभग पचास मील दूर ओड़गांव के श्रीराम-मंदिर में रामचंद्रजी की कलात्मक काष्ठ प्रतिमा है। किंवदंती है, वनवास करते हुए श्रीराम इस स्थान पर एक चंदन वृक्ष के नीचे ठहरे थे जिसकी लकड़ी से बाद में उनकी प्रतिमा बनाकर स्थापित की गयी। रक्सौल-दरभंगा लाइन पर सीतामढ़ी के जानकी एवं श्रीराम मंदिर में प्रत्येक रामनवमी को मेला लगता है। कहा जाता है, इसी स्थान पर खेत जोतते हुए जनक को सीता मिली थीं। 'सीतामही' नाम आगे चलकर सीतामढ़ी नाम से प्रसिद्ध हुआ। जनकपुर में भक्तों ने धनुष-यज्ञ, गिरजादर्शन, विवाह की स्मृतियों को अनेक मंदिरों के रूप में संजोये रखा है। महराजसर के निकट 'स्वर्ण-मंडप', महात्मा चतुर्भुजगिरि द्वारा वट वृक्ष के नीचे प्रतिष्ठित राम, लक्ष्मण, सीता, भरत, शत्रुघ्न की मूर्तियों सहित राम-मंदिर तथा जानकी-मंडप को राम-सीता विवाह का स्थल बतलाया जाता है। जानकीजी के निवास-स्थल पर टीकमगढ़ महारानी ने नौलखा, शीश महल तथा जानकी-मंदिर बनवाकर राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न तथा सीता की मूर्तियां स्थापित कीं तो नेपाल नरेश ने १९३४—३५ ई. में महाराज-जनक के निवास-स्थल पर निर्मित जनक-मंदिर के खंडहरों का पुनरुद्धार कराया। 'रसिक निवास मंदिर' रसिक भक्तों द्वारा सीता-राम की 'दुलहन-दूल्हा' के रूप में उपासना करनेवाले संप्रदाय के कारण प्रसिद्ध है। जनकपुर से लगभग १२ मील दूर स्थित धनुषा नामक स्थान में पड़े एक खंड को राम द्वारा तोड़े गये धनुष का अंश बतलाया जाता है। कहते हैं, गंगासागर के समीप ही धनुषसर में शिव-धनुष रखा रहता था। जनकपुरी से लगभग १२ मील दक्षिण में गिरिजा मंदिर को जनक-वाटिका स्थान बतलाया जाता है, जहां राम-जानकी को एक-दूसरे का प्रथम दर्शन हुआ था। सीतामढ़ी - दरभंगा लाइन पर कमतौल स्टेशन से लगभग तीन मील दूर स्थित अहल्या-कुंड, अहल्या चौरा और पास ही

राम-लक्ष्मण मंदिर [illegible] की घटना का स्मरण कराता है।

कहा जाता है, नागपुर से २६ मील दूर रामटेक पर्वत पर श्रीराम ने पंचवटी जाते हुए विश्राम किया था। पर्वत-शिखर पर बने राम-मंदिर में राम-लक्ष्मण-सीता की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। गोदावरी के दक्षिण तट पर स्थित कुंड में श्रीरामचंद्रजी ने स्नान करके, आगे प्रस्थान करने के पूर्व अपने पिता का श्राद्ध किया था। इस कुंड को 'रामकुंड' नाम से प्रसिद्धि मिली। पश्चिम एवं दक्षिण भारत के हिंदू यहीं श्राद्ध करते हैं। पास ही लक्ष्मण कुंड एवं सीता कुंड हैं। 'श्रीराम-मंदिर' पंचवटी का प्राचीनतम मंदिर है। राम-लक्ष्मण एवं जानकी-विग्रह के काले पाषाण के बने होने के कारण इसे कालाराम मंदिर कहते हैं तो संगमरमर की श्वेत-मूर्तियों के कारण नासिक स्थित राम-मंदिर 'गोराराम-मंदिर' नाम से प्रसिद्ध है। श्रीराम-मंदिर के समीप ही सीता गुफा में सात सीढ़ियां उतरकर राम-लक्ष्मण सीता की मूर्तियों के दर्शन होते हैं। खर-दूषण युद्ध के समय लक्ष्मण ने इसी गुफा में जानकी की रक्षा की थी। नासिक से लगभग २६ मील दूर टाकेद गांव में 'जटायु-तीर्थ' अत्यंत पवित्र एवं रमणीय स्थान है। पंचवटी से चार मील उत्तर 'सीतासरोवर' में जानकीजी स्नान करती थीं। चित्तौड़गढ़ के रघुनाथमंदिर में श्रीराम का चतुर्भुज रूप प्रतिष्ठित है।
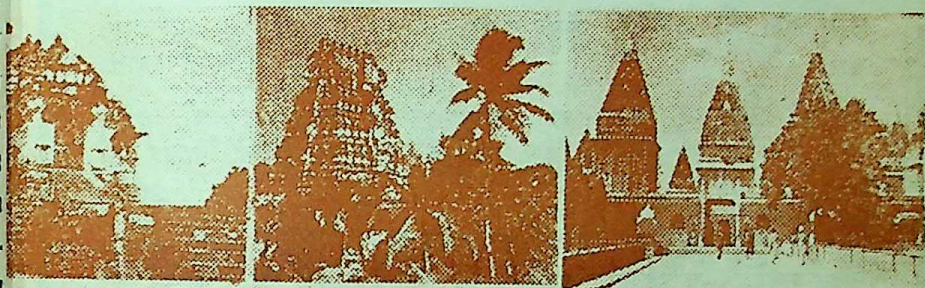
बायें से: खजुराहो का लक्ष्मण मंदिर, रामनाथस्वामी मंदिर, रामेश्वरम् तथा रघुनाथ मंदिर, जम्मू

दक्षिण के विजयनगर राज्य में तुंगभद्रा नदी के तट पर बने श्रीराम-मंदिर में राम-लक्ष्मण-जानकी की बड़ी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। गंधमादन पर्वत से नीचे उतरने पर 'सीताकुंड' तथा तट पर सीता के चरण चिह्न अंकित हैं। किंवदंती है, लंका से लौटकर सीता ने इस कुंड में स्नान किया था। तुंगभद्रा के पार आधे मील की दूरी पर स्थित अनागुंदी ग्राम को प्राचीन किष्किंधा कहा जाता है। समीप ही सप्ततालवेध स्थान है जहां एक शिला पर

श्रीराम के बाण [illegible] जाता है। समीप ही पश्चिम की ओर गुफा के संबंध में कहते हैं कि वालि-वध के उपरांत श्रीराम ने गुफा में विश्राम किया था। आस-पास की सफेद शिलाओं को वालि की हड्डियां बतलाया जाता है। सामने तारा, अंगद एवं सुग्रीव पर्वत-शिखर हैं। विरुपाक्ष मंदिर से चार मील पूर्वोत्तर माल्यवान पर्वत पर स्फटिक शिला मंदिर है जहां राम, लक्ष्मण ने वर्षा में प्रवास किया था। पहाड़ी पर चढ़कर गोपुर के भीतर जाने पर परकोटे के भीतर सभामंडप से लगा राम-मंदिर है जिसे शिला में गुफा काटकर बनाया गया है। मंदिर में राम, लक्ष्मण तथा जानकी की बड़ी-बड़ी मूर्तियां हैं।

कुंभकोणम् के रामस्वामी-मंदिर में राम-जन्म से लेकर राज्याभिषेक तक की लीलाएं दीवारों पर तिरंगे चित्रों में बनी हैं। रामेश्वरम्-मंदिर से चार मील दक्षिण एकांत राम-मंदिर में वार्त्तालाप की मुद्रा में सीताराम तथा लक्ष्मण की मूर्तियां हैं। रामेश्वरम् से ही पांच मील उत्तर समुद्र में रेती के किनारे 'कोदंडराम राम-मंदिर' में राम, लक्ष्मण, सीता के साथ विभीषण की मूर्ति है। जनश्रुति के अनुसार श्रीराम ने यहां समुद्र-जल से विभीषण का राजतिलक किया था। हंपी के 'हजार राम-मंदिर' में दीवारों पर मूर्तियों में श्रीराम का जीवन-चरित अंकित है। रामेश्वरम् से एक मील पश्चिम में लक्ष्मण-[illegible] है, कहते हैं, लंका-विजय के उपरांत श्रीराम ने सबसे पहले इसमें स्नान किया था तथा समीपस्थ लक्ष्मणेश्वर की स्थापना लक्ष्मण ने की थी। अग्नितीर्थ सीता की अग्निपरीक्षा का स्मरण कराता है जहां अग्नि-देव ने प्रगट होकर सीता की पवित्रता की साक्षी दी थी। 'राम-झरोखा' नामक टीले के संबंध में प्रसिद्ध है कि इसी स्थान पर रामचंद्रजी ने लंका पर चढ़ाई करने के संबंध में सेनापतियों से परामर्श किया था। समुद्र के रेतीले मैदान पर बीस बीघे के विस्तार में फैला सात से लेकर दसमंजिले गोपुरों, ऊंचे परकोटोंवाला मंदिर अद्वितीय है। कहा जाता है, सेतु-बंधन के समय श्रीराम ने सेतु के समीप ही बालू से ही शिव-लिंग की स्थापना की थी। दूसरी किंवदंती के अनुसार, श्रीराम ने लंका से लौटते समय रावण की ब्रह्म-हत्या के प्रायश्चितस्वरूप इस स्थान पर शिव-लिंग की स्थापना की थी। पहले इस स्थान पर निर्जन वन था।

पश्चिमी भारत में भी बहुत से राम-मंदिर हैं, चाहे जूनागढ़ गिरनार का राम-मंदिर हो, चाहे भरत-वन-स्थित राम-मंदिर, चाहे गुजरात (अहमदाबाद) का श्रीराम-मंदिर हो, भारत के कोने-कोने में श्रीराम-मंदिर किसी-न-किसी रूप में अवश्य वर्तमान हैं जिन्हें देखकर बरबस कहना पड़ता है, यदि भारत के जन-जीवन में हैं 'राम' तो पग-पग पर हैं 'श्रीराम'!

—३६७, अतरसुइया, इलाहाबाद-३

फिल्मी शब्दकार और

फिल्मोद्योग में साहित्यिक तस्करी कोई नयी चीज नहीं है। यह गोरख-धंधा पहले भी था। आज भी वह पुष्पित-पल्लवित हो रहा है। तस्करी तो फिल्म की हर विधा में होती है, चाहे वह संगीत हो या अभिनय। मेरा तात्पर्य केवल साहित्यिक तस्करी से है। साहित्यिक तस्करी में भी संवादों-कहानियों की तस्करी से नहीं, बल्कि गीतों की तस्करी से मेरा प्रयोजन है।

वैसे फिल्मोद्योग में उच्चकोटि के शब्दकारों का अभाव नहीं है। प्रतिभा-सम्पन्न शब्दकारों में नीरज, वीरेंद्र मिश्र, योगेश, इंदीवर, गुलजार आदि के नाम ससम्मान लिये जा सकते हैं, किंतु सही अर्थ में आज कितने शब्दकार हैं? कोई शब्दकार लोकगीतों को अपने नाम से रिकार्ड करवाकर पारिश्रमिक बटोर लेता है तो कोई स्वर्गीय पाकिस्तानी या देशी शायरों के शेरों को हूबहू या अपनी बुद्धि की छेनी से तराशकर फिल्मों में दे देता है। कुछेक कालिदास कृत शकुंतला और 'मेघदूत' की पंक्तियों से गीत-सृजन करते हैं तो कुछेक पत्रिकाओं में प्रकाशित कविताओं का फूहड़ चरबा बनाते हैं।

आइए, अब तस्कर-शब्दकारों के गीतों को देखें। फिल्मोद्योग के शीर्षस्थ साहित्यिक तस्कर शब्दकार हसरत जयपुरी हैं जो वर्षों से फिल्मों के लिए गीत लिख (?) रहे हैं। चरबा करने में हसरत जयपुरी अपना सानी नहीं रखते। वे बड़ी कुशलता के साथ शेरों की हृदयग्राही पंक्तियों को अपने गीतों में शामिल कर लेते हैं। इस गीत को देखकर तो ऐसा लगता है जैसे किसी ने मखमल की चादर में मोटे धाग का पैबंद लगा दिया हो।

इश्क ने गालिब निकम्मा कर दिया
वरना हम भी आदमी थे काम के

गालिब के इसी शेर को हसरत ने 'गालिब' शब्द की जगह 'हमको' शब्द का प्रयोग कर फिल्म 'ससुराल' में प्रस्तुत किया—

जाना तुम्हारे प्यार में
शैतान बन गया हूं . . .
इश्क ने हमको निकम्मा कर दिया
वरना हम भी आदमी थे काम के

फिल्म 'जिद्दी' में मोहम्मद रफी के स्वर में एक गीत बड़ा लोकप्रिय हुआ था। यह गीत हसरत की काव्य-प्रतिभा की देन न होकर, नासिख का शेर था जिसे

बिना परिवर्तन के चला दिया गया—

तेरी सूरत से नहीं मिलती किसी की सूरत
हम जहां में तेरी तसवीर लिये फिरते हैं

शायर मोमिन खां का एक मशहूर शेर है जिस पर कभी गालिब ने कहा था, "काश, मोमिन खां मेरा सारा दीवान ले लेता और सिर्फ यह शेर मुझको दे देता।" शेर आपने भी सुना होगा—

तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नहीं होता

हसरत ने मूल शेर से 'गोया' और 'जब' शब्द को लुप्तकर मोमिन के इसी

फूल तो दो दिन बहार
जाफियां दिखला गए
हसरत उन गुंचों पै है
जो बिन खिले मुरझा गए
—जौक

उपर्युक्त प्रथम शर को शकील ने बिना किसी रद्दोबदल के फिल्म 'बिन बादल बरसात' में प्रस्तुत किया। द्वितीय शेर के भाव की हत्या कर उसे फिल्म 'लैला-मजनूं' में इस प्रकार प्रस्तुत किया—

फूल दो दिन हंस के जी बहला गए
और यह गुंचे बिन खिले मुरझा गए

• प्रभात कुमार फक्कड़

शेर को फिल्म 'लव इन टोकियो' में अपने नाम से पेश किया—

ओ मेरे शाहे खूबां . . .
तुम मेरे पास होते हो
कोई दूसरा नहीं होता

तस्करी की कला में शकील बदायूंनी भी बड़े सिद्धहस्त थे। 'मोहे पनघट पे नंदलाल छेड़ गयो रे' एक लोकगीत है, जिसे शकील साहब ने 'मुगल-ए-आजम' में देकर अपनी मुहर लगा दी।

जिंदगी कितनी खूबसूरत है
आइए आप की जरूरत है
—काबिल अजमेरी

शकील साहब का ही लिखा, फिल्म 'साहब, बीबी और गुलाम' का वह गीत बराबर रेडियो पर सुनने को मिलता है जो मूलत: शेर है और 'जहरे इश्क' नाम से मशहूर मसनवी में एक स्थान पर अंकित है। मूल शेर से सिर्फ प्रथम पंक्ति में 'कौन है, जो' के स्थान पर 'किस की दुनिया' प्रयुक्त कर दिया गया है। शेर और गीत क्रमशः इस प्रकार हैं—

कौन है, जो यहां तबाह नहीं
कौन है, जिसके लब पै आह नहीं

किस की दुनिया यहां तबाह नहीं
कौन है जिसके लब पै आह नहीं

गीतों की तस्करी के इस जुर्म से राजेंद्र कृष्ण, कमाल अमरोही, साहिर लुधियानवी, मजरूह सुल्तानपुरी एवं आनंद बक्शी-जैसे प्रतिष्ठित शब्दकार भी बरी नहीं किये जा सकते। हां, यह और बात है कि तस्करी का घृणित धंधा इन लोगों ने कुछ अल्प मात्रा में किया है।

तुम चमेली की तरफ
बाग में जाया न करो
बाग में मनचले भंवरे भी
उड़ा करते हैं
वो निशाना जो बना लेंगे
तो फिर क्या होगा

रचनाकार सलाम मछलीशहरी की उपर्युक्त कविता 'सरिता' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। राजेन्द्र कृष्ण ने फिल्म 'आओ प्यार करें' में फिल्म की सिच्युएशन के अनुकूल लिखकर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। गीत इस प्रकार है--

तुम अकेले तो कभी बाग में जाया न करो
आजकल कलियां बड़ी शोख हुआ करती हैं
. . . तो फिर क्या होगा

× × ×

'जगत नारायण को छोड़ के संतो, नकद-नारायण के सब यारम्, चलचित्रम् की कथा सुनाये भक्त किशोरम्'--

'आंसू और मुस्कान' का यह गीत किशोरकुमार के स्वर में बड़ा लोकप्रिय हुआ। शब्दकार राजेन्द्र कृष्ण ने निम्नलिखित भजन को तोड़-मरोड़कर रख दिया—

गोधन गजधन बाजिधन
और सकल धन खान
जब आवै सन्तोष धन
सब धन धूरि समान

साहिर लुधियानवी और मजरूह सुल्तानपुरी फिल्मोद्योग के वरिष्ठ कवि हैं लेकिन चंद सिक्कों के लालच में आकर उन दोनों ने वर्षों की अर्जित की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला दी है। नीचे युसूफ जफर एवं मीर तकी मीर की क्रमशः पंक्तियां

राजेंद्र कृष्ण

इस प्रकार हैं--

मैं इन्तजार करूंगा तेरा कयामत तक
खुदा करे कि कयामत हो और तू आए

× × ×

पत्ता-पत्ता बूटा-बूटा हाल हमारा जाने है
जाने न जाने गुल ही न जाने बाग तो सारा जाने है

फिल्म 'एक नजर' में मजरूह सुल-तानपुरी ने मीर तकी मीर की गजल की

आरंभिक पंक्तियों को शब्दशः प्रस्तुत कर दिया है, परन्तु साहिर ने फिल्म 'बहू-बेगम' में 'मैं' और 'करूंगा' के स्थान पर क्रमशः 'हम' और 'करेंगे' में बदल दिया। 'पाकीजा' के निम्नलिखित दो गीत हर सिनेदर्शक के होठों पर थिरक उठे थे।

मौसम है आशिकाना
ऐ दिल कहीं से उनको ऐसे में ढूंढ़ लाना

× × ×

इन्हीं लोगों ने ले लीना दुपट्टा मेरा
इन्हीं लोगों ने . . .

'किस्मत' का है जिसे अमरोही साहब ने समूचा ही चुरा लिया है!

फिल्म 'माई लव' में फानी बदायूंनी के एक शेर का आनंद बक्शी ने जो चरबा बनाया है, वह क्षम्य नहीं है। गीत तथा शेर क्रमशः इस प्रकार हैं—

जिक्र होता है जब कयामत का
तेरे जलवे की बात होती है

× × ×

जिक्र छिड़ गया जब कयामत का
बात पहुंची तेरी जवानी तक

बायें से: गुलजार, हसरत जयपुरी, एवं आनन्द बक्शी

शायद आपको जानकर आश्चर्य होगा कि ये दोनों गीत कमाल अमरोही की रचना नहीं हैं! किसी जमाने में अमरोही साहब के भतीजे रईस अमरोही ने प्रथम रचना एक मुशायरे में पढ़ी थी। विभाजन के बाद वे पाकिस्तान चले गये। आज वे वहां प्रतिष्ठित शायरों में गिने जाते हैं।

दूसरा गीत शोभा प्रोडक्शन, लाहौर के तत्त्वावधान में बनी पुरानी फिल्म

इन शब्दकारों से एक प्रश्न करना शेष रह जाता है। आखिर ये कब तक फिल्म, जनता तथा साहित्य के साथ फरेबी करते रहेंगे? इन शब्दकारों के पास इन प्रश्नों का क्या कोई जवाब है? नहीं, इन तस्करों के पास कोई उत्तर नहीं है। कौन जाने, आनेवाली पीढ़ी उनके साथ क्या सलूक करेगी?

—फक्कड़ सदन,
पो. मो. सोहसराय, नालंदा

कस्तूरी कुंडलि बसै

• मुकुलचंद पांडेय

सुगंधित वस्तुओं में केशर और कस्तूरी का नाम लगभग सभी लोगों को भलीभांति पता है। केशर पौधों से मिलता है और कस्तूरी जानवरों के शरीर से। सुगंधि के लिए दोनों का यश समान है।

कस्तूरी एक अत्यधिक सुगंधिकारक पदार्थ है जो नर कस्तूरी मृग के पेट में लटक रहे अंडे के आकार की एक गिल्टी से हासिल होती है। पुराने जमाने से ही कस्तूरी मृगों का शिकार इसी बहुमूल्य कस्तूरी के लिए ही किया जाता रहा है। इस मृग के बारे में मशहूर है कि वह अपने ही शरीर में पाये जानेवाले कस्तूरी की सुगंधि से बेचैन सारे जंगल में इसकी तलाश करता है। कबीरदास ने बहुत पहले ही कहा है कि **कस्तूरी कुंडलि बसै मृग ढूंढ़े वन मांहि** और इतना ही नहीं, यह मृग संगीत लहरियों का इतना मत-वाला होता है कि बांसुरी, तुरही या अन्य किसी भी सुरीली आवाजवाले बाज की धुन पर मुग्ध होकर कहीं भी टेक लगाकर खड़ा हो जाता है, बस शिकारी इस तन्मयता का लाभ उठाकर इसे मार डालते हैं।

जंतु विज्ञान की भाषा में मासकस मास्किफेरस के नाम से ख्यात यह मृग उत्तरी व मध्य एशिया के पहाड़ी इलाकों के अतिरिक्त —तिब्बत, नेपाल व हिमा-लय के कुछ क्षेत्रों में भी पाया जाता है। यह मुश्किल से २ फुट ऊंचाई का एक नन्हा-सा जानवर होता है।

एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग ६० हजार कस्तूरी मृग मारे जाते हैं। इनसे लगभग २ हजार किलो कस्तूरी मिलती है। कस्तूरी का उपयोग ज्यादा-तर महंगी सुगंधित चीजों, सौंदर्य प्रसा-धनों आदि में किया जाता है। तिब्बत के पास एक इलाके में पाये जानेवाली कस्तूरी संसार भर में मिलनेवाली कस्तूरी से ज्यादा कीमती और अच्छी मानी गयी है।

गुण की धनी

बाजार में आमतौर पर मिलनेवाली कस्तूरी मुलायम, लाल भूरे रंग की चिकनी चीज होती है जिसमें एक खास तरह की सुगंध निकलती रहती है। अच्छे किस्म की कस्तूरी गाढ़े, ललछौहें रंग की हुआ करती है। यह चिकनी तथा तेल की तरह लसलसेदार रहती है। इसका स्वाद बहुत ही तीखा होता है। यह कुछ हद तक उबलते हुए पानी में घुल भी जाती है। इसका एक दाना भी दस हजार घन फीट हवा को भार में बिना किसी कमी के सुवासित कर सकता है। मृग की देह से अलग करने पर कस्तूरी में एक विचित्र-सी बदबू आती है जो कुछ अरसे बाद अपने आप खत्म हो जाती है और उसकी जगह सुगंधि पैदा हो जाती है। जब इसे हलके घोल में रखते हैं तो सुगंधि बेहद मनमोहक लगती है।

कस्तूरी का रसायन

रासायनिक विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि कस्तूरी को सुगंधि देनेवाला रसायन है 'मस्कोन'। वास्तव में यह पालिमिथिलीन यौगिक होता है। यह एक तरल द्रव है जिसका क्वथनांक (उबलने का तापक्रम) १३०° से. होता है। मस्कोन एक संतप्त शृंखलाबद्ध कीटोन है जिसमें १५ छल्ले होते हैं। स्विस रसायनशास्त्री लियोपोल्ड रूजिका ने १९२६ में ज्यूरिख में इसके रसायनिक फार्मूले की जानकारी दी थी। उन्होंने इसके रसायन को शुद्ध-रूप में पृथक कर लिया था। उनका दिया हुआ नाम है ३—मिथिल साइक्लोपेंटेडिकेन—१।

लियोपोल्ड संसार के पहले रसायनज्ञ हैं, जिन्होंने कस्तूरी में इस तरह के यौगिक की मौजूदगी की खोज की, जो प्राकृतिक अवस्था में भी पाये जाते हैं। इतना ही नहीं, रूजिका तथा अन्य जर्मन वैज्ञानिकों ने अलग-अलग दो भिन्न तरीकों से संश्लिष्ट मस्कोन बनाने की विधि १९३४ में पता कर ली थी।

कूट-कस्तूरी : काइवेट

कस्तूरी मृग के अलावा कुछ ऐसी बिल्लियां भी इथोपिया में पायी जाती हैं, जिनमें कस्तूरी की तरह की ही चीज 'कूट-कस्तूरी' (काइवेट) पायी जाती है। इन्हें 'कूट-कस्तूरी बिल्ली' कहते हैं। कूट-कस्तूरी असली कस्तूरी के मुकाबले कम कीमती होती है। बिल्ली को मारकर उसके शरीर के खास हिस्से को निचोड़ने पर यह 'काइवेट' मिलता है। व्यावसायिक 'काइवेट' पीले या भूरे रंग का एक गीला-सा पदार्थ होता है, जो शुरू में दुर्गंध से भरा होता है। यह बुरी गंध 'स्केटील' नामक रसायन की वजह से होती है। कस्तूरी की तरह ही इसके हल्के घोल में गंध सुहावनी लगने लगती है। सुगंधि-उद्योग में इस कूट-कस्तूरी का भी असली कस्तूरी की भांति उपयोग होता है।

अन्य पशुओं में भी कस्तूरी

कस्तूरी मृग और कूट-कस्तूरी बिल्ली के अलावा अन्य बहुत से जीव-जंतुओं में भी
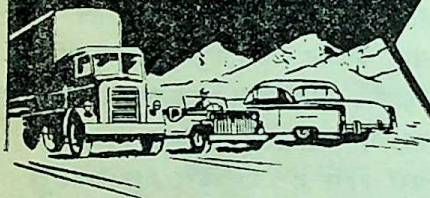
कस्तूरी की तरह के पदार्थ मिलते हैं। इस प्रकार के कुछ जंतु हैं—कस्तूरी वृषक, जो आर्कटिक उत्तरी अमरीका में पाया जाता है, कस्तूरी बत्तख, जो पश्चिमी आस्ट्रेलिया में मिलता है, कस्तूरी मूषक (चूहा), जो कैलिफोर्निया में पाया जाता है, कस्तूरीधारी गुबरैला, घड़ियाल आदि।

कैलिफोर्निया का कस्तूरी मूषक एक फुट लंबा होता है और इसमें सुगंधित ग्रंथियां पायी जाती हैं। हर साल हजारों की संख्या में इस प्रकार के चूहे अपनी ग्रंथियों तथा बहुमूल्य बालों के लिए मारे जाते हैं।

भारत में चूहे के समान एक छोटे जंतु ग्रीव से कस्तूरी-जैसी तेज महक निकलती रहती है। इस जंतु के शरीर से छू जानेवाली हर वस्तु काफी देर तक गंध से भरी रहती है।

पेड़-पौधों में भी कस्तूरी

ऐसी आम धारणा है कि कस्तूरी-जैसी वस्तुएं केवल जंतुओं से ही निकल सकती हैं, पर कुछ ऐसे पौधे भी हैं, जिनसे कस्तूरी की-सी महकवाले घटक प्राप्त हुए हैं। अंब्रेटा नामक पौधे के बीजों से एक पीला तेल निकलता है, जिसमें कस्तूरी की-सी सुगंधि होती है। इसी प्रकार अंगेलिका नामक पौधों की जड़ों से भी कस्तूरी की-सी महक आती है।

वेस्ट इंडीज में पाये जानेवाले गुएरिया ग्रेडीफोलिया नामक पौधे की छाल से भी कस्तूरी की-सी गंध आती है। गुएरिया की छाल से निकाली गयी कस्तूरी को सुगंधित वस्तुओं में डाला जाता है।

पूर्वी भारत के कुछ इलाकों में मिलनेवाले पौधे यूरिग्रियम संबोल की जड़ें भी कस्तूरी-जैसी महकवाली होती हैं। इसकी मांडी से भरपूर जड़ों का उपयोग कस्तूरी की जगह पर होता है।

और अब बनावटी कस्तूरी

अपनी लुभावनी और मनमोहक सुगंध के कारण कस्तूरी की मांग जोर पकड़ रही है। अतः निर्धारित फार्मूलों पर रासायनिक पदार्थों की मदद से संश्लिष्ट (सिंथेटिक) कस्तूरी तैयार की जाती है। इस तरह तैयार एक्सेल्टोन नामक संश्लिष्ट कस्तूरी सस्ती कीमतों पर बाजारों में बिक भी रही है।

कस्तूरी मृगवाली प्राकृतिक कस्तूरी बहुत महंगी है। उसकी कीमत पांच हजार रुपये प्रति पौंड है। इसमें पाया जानेवाला सुगंधकारक तत्त्व तो ३ लाख प्रतिपौंड की दर से बिकता है। संश्लिष्ट मस्कोन इससे सस्ता है। कोलतार से मिलनेवाली कस्तूरी 'नाइट्रो कस्तूरी' कहलाती है। इनकी पहचान आम आदमी के बूते के बाहर है क्योंकि रंग और गंध सबमें कस्तूरी के ही समान हुआ करती है। आजकल यह नकली कस्तूरी खूब धड़ल्ले से बिक रही है।

—५३, छोटा चांदगंज, लखनऊ-२२६००७

हेल्विग का शिकार

• रोडा रोडा

"श्रीमान् जी," मनोविज्ञान विशेषज्ञ डॉ. फोरबाक्सर ने कहना शुरू किया, "अदालती मनोविकृति-विज्ञान के इतिहास में कोई ऐसा मुकदमा मुझे याद नहीं आ रहा जिसमें कानूनी जिम्मेदारी साबित करने में इतनी आसानी रही हो जितनी कि अभियुक्त तोब्यिस हेलविग के मामले में! मुलजिम की गिरफ्तारी के बाद उसकी मानसिक अवस्था के बारे में शंका हुई और जज साहब ने उसकी मानसिक अवस्था के बारे में मुझे अपनी रिपोर्ट देने के लिए कहा। चूंकि हेलविग अपराध करते समय ही पकड़ा गया था तथा मौके के कई गवाह भी थे, इसलिए जज साहब को यह एक बिलकुल सरल मामला लगा था। इतना सरल और साधारण कि कत्ल के अड़तालीस घंटे के अंदर ही पूछताछ लगभग पूरी समझ ली गयी थी।

"फिर, श्रीमान् जी, हालात कुछ ऐसे सामने आये कि अपराधी का बच निकलना असंभव हो गया। जैसे कि पहले से सोच-समझकर बड़ी होशियारी से दिन-दहाड़े गली में किया गया हमला। श्रीमन, मैं यह बात फिर कहना चाहूंगा कि कुकृत्य की कुछ ऐसी विशिष्टता थी कि न्यायाधीश को अभियुक्त की मानसिक अवस्था के बारे में भारी शक हो गया था। मुझे तो अभियुक्त के चेहरे से ही ऐसा लगा था कि वह मानसिक तौर पर सहज नहीं है। श्रीमान जी, मैं विशेषकर इस बात की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं कि आप देखें कि वह कटघरे में किस ढंग से बैठा हुआ है। न्याय-मूर्ति देख सकते हैं कि वह किस कदर भावशून्य और विक्षिप्त लग रहा है। आम आदमी को तो वह एकदम मूर्ख ही लगेगा। वास्तव में, उसमें कुछ ऐसी विशुद्ध शारीरिक विकृतियां हैं, जैसे एकदम छोटी खोपड़ी, बाहर निकली हुई आंखें, अंदर धंसा हुआ माथा, बाहर निकले हुए बड़े-बड़े दांत, जिससे साधारण आदमी को हेलविग के मानसिक तौर पर स्वस्थ होने में सहज शंका होने

लगती है। जब मैंने हत्या के दूसरे दिन अभियुक्त की परीक्षा की ....।" इतने में गवाहों की बेंच से एक पुलिस का सिपाही उठा और कुछ कहने के लिए उसने अपना मुंह खोला।

"कार्यवाही के बीच में मत बोलो।" जज ने सख्ती से कहा।

पुलिस का सिपाही बैठ गया।

"जब मैंने अभियुक्त की जांच की, डॉ. फोरबाक्सर ने अपना बयान जारी रखते हुए कहा, "तो बचाव पक्ष के वकील ने हेलविग की मानसिक-हीनता के बारे में जो तथ्य अदालत में पेश किये थे, उनसे मैं भलीभांति परिचित हो चुका था। उसके बाप की नशे में मौत और मां की आत्म-हत्या के बारे में मुझे पूरी जानकारी थी। मैंने कागजात से यह भी देख लिया था कि उसका दादा चित्त-विक्षेपी था और उसके बहनोई के परिवार में भी मनो-विकार के लक्षण मौजूद थे।"

"आह! क्या परिवार है!" बीच में ही सरकारी वकील ने टिप्पणी की।

"श्रीमान जी, इन तथ्यों के कारण मैंने अभियुक्त का परीक्षण करते समय विशेष सावधानी और सतर्कता बरती। इसलिए मैं विश्वास दिलाना चाहता हूं कि हेलविग की गिरफ्तारी के बाद ..."

पुलिस-सिपाही फिर खड़ा हुआ।

"तुम!" जज ने कहा, "अगर तुमने फिर गवाह को बीच में टोकने का दुःसाहस किया तो मैं तुम पर अदालत की मानहानि का जुर्म लगा दूंगा।"

पुलिस का सिपाही अपनी सीट पर धंस गया।

डॉ. फोरबाक्सर ने आगे कहा, "इस-लिए मुझे आशा थी कि अभियुक्त का परीक्षण करने पर वह जरूर पागल निक-लेगा। लेकिन पहली नजर में ही, श्रीमान जी, मैं दोबारा कहूंगा कि पहली नजर में ही, ...न्यायमूर्ति, इस सिपाही को मुझे टोकने से रोकें...वह मुझे धीरे-धीरे आवाजें लगा रहा है।"

"विफ्ल, मैं तुम्हारी शिकायत तुम्हारे कमांडर से करूंगा ... तुम्हें खामोश रहना होगा, समझे ? डॉ. फोरबाक्सर आप अपना बयान जारी रखें ।" जज ने कहा ।

"तो, श्रीमानजी, आप अभियुक्त के चेहरे पर जो भावशून्यता देख रहे हैं वह हत्या के अगले दिन और भी सुस्पष्ट थी। वह बेंच पर पसरा पड़ा था। न तो हिलडुल ही रहा था और न ही मेरे सवालों का जवाब दे रहा था। शायद वह मेरे मन में यह विचार पैदा करना चाहता था कि उसे दौरा पड़ा हुआ है। लेकिन यह उसका बड़ा भोला प्रयास था। एक प्रशिक्षित मनश्चिकित्सक को धोखा देना इतना सरल नहीं श्रीमान जी," विशेषज्ञ ने अपना बयान खत्म करते हुए कहा ।

"डॉ. फोरबाक्सर क्या आपने अपना बयान पूरा कर लिया है ?"

"जी हां श्रीमान् ।"

"न्यायमूर्ति," पुलिस के सिपाही ने उठकर कहा, "मुझे क्षमा करें। जरूर कोई गलती हुई है। हत्या के अगले दिन डाक्टर साहब ने जिस आदमी का परीक्षण किया था, वह आदमी जो बेंच पर लेटा था और हिल-डुल नहीं रहा था और जिसने प्रश्नों के उत्तर नहीं दिये हैं, ... वह आदमी तो हमले का शिकार हुआ। उसी का तो कत्ल हुआ था।"

—अनु. : राजेन्द्र वोहरा

आग के जंगल

• जयशंकर त्रिपाठी

सुबह आओ, शाम जाओ
जिंदगी सस्ती बिकी है इसलिए तुम
कागजों के हाशिये पर आग के जंगल लगाओ!

भोर की गीली हुई गोलाइयों पर
जम गया तनहाइयों का तरल सपना
नग्नचित्रा उर्वशी की बांह पर
पढ़ता कुंआरा नाम अपना
खून का सूरज पसीनों में बहाओ

चांदनी पीती दुपहरी से जरा-सा दूर हटकर,
वीथियों में आखरों की धूल फांको
या अकेले बैठकर कड़ुए जहर का
आरजू की कोट पर पैबंद टांको
महानगरों के सजीले आइने में मुसकुराओ

भीड़ निर्वसना टंगी है
शाम की सूखी कटीली झाड़ियों में
रेत की परछाइयों में
लाश की दुर्गंध पीती नाड़ियों में
कोढ़ अपना टेरलीनों में छिपाओ

—ऑडिटर, डिपाजिट स्टेट सेक्शन
(ए. जी. यू. पी. १, इलाहाबाद)

चीन में एक स्मरणीय चाय-घर

• गोविंदराम गुप्त

एक शब्द के अशुद्ध प्रयोग ने विश्व की मानवजाति के चतुर्थांश के इतिहास को बदल दिया।

सन् १८४०। शीत ऋतु की एक अत्यंत ठिठुरती हुई रात्रि। लंबी यात्रा से थकी-मांदी एक चीनी महिला दो नन्ही बालिकाओं के साथ, सीं-क्यांग-पे नगर के चायघर के द्वार पर पहुंची। उसकी तीन वर्षीया छोटी लड़की अपनी पांचवर्षीया बड़ी बहन की पीठ पर कपड़े से बंधी हुई थी। महिला ने चायघर का बंद द्वार खटखटाया तो भीतर से निद्रालु भटियारा आंखें मलता हुआ आया और दरवाजा खोलकर संदिग्ध दृष्टि से आगंतुकों को देखने लगा। उन्हें देखकर वह कपाट बंद करनेवाला ही था कि महिला ने प्रार्थना की, "मैं एक गरीब विधवा हूं। अनट्यूसी कस्बे से वड़ी नहर के मार्ग से नानकिंग जा रही थी, पर पैसे की कमी के कारण नाव छोड़ने के लिए बाध्य हुई। बच्चों सहित केवल रात्रि भर विश्राम के लिए स्थान की तलाश में हूं।"

बालिकाएं ठंड के मारे चेतनाशून्य-सी हो गयीं थीं। उनके दांत किटकिटा रहे थे। उनकी दयनीय दशा देखकर भटियारे का हृदय पिघल गया। फिर भी वह हिचकिचाता हुआ बड़बड़ाया, "तुम्हारे लिए कोई कमरा खाली नहीं है। चाहो तो सहन में पुआल के ढेर पर रात बिता सकती हो।" आगंतुकों को सराय में प्रवेश करने की अनुमति देते हुए वह उन्हें सावधान भी करता गया, "देखो, तुम लोग शोर न मचाना; जरा भी नहीं। वहां सहन के छोर पर गोदाम में सोया हुआ मेरा सहकारी है। वह दिन में रिक्शा चलाता है।"

प्रायः दो घंटे बाद भटियारे को फिर जागना पड़ा। कोई बड़े जोर से दृढ़तापूर्वक लगातार दरवाजा खटखटाये जा रहा था। उसने द्वार खोला तो देखा, स्थानीय हरकारा टिंग चाइ डाक लेकर आया है। हरकारा जरा अधिकार-पूर्वक बोला, "मुझे एक महिला यात्री, जिसका नाम हुई चींग की विधवा है, को चांदी से भरी एक बड़ी थैली देनी है।" भटियारा कहनेवाला ही था कि इस नामकी कोई स्त्री चायघर में नहीं ठहरी है कि तभी उसे सहन में सोयी हुई औरत का ख्याल आया। बोला, "ठंड से बचने के लिए तुम भीतर चले आओ। महिला को मैं अभी बुलाकर लाता हूं।"

भटियारे ने स्त्री को जगाया। वह सोचने लगी, शायद सवेरा हो गया है। वह बालिकाओं को जगाने लगी तो भटियारे ने मना किया और नम्रतापूर्वक बोला,

"क्या आप हुई चींग की विधवा हैं?"

स्त्री ने उत्तर दिया, "हां, मैं ही हूं।"

"आपके लिए हरकारा एक अत्यावश्यक संदेश लाया है, वह भोजनकक्ष में आपकी प्रतीक्षा कर रहा है।"

विधवा घबरायी हुई हरकारे के पास गयी। हरकारे ने थैली उसे सौंप दी।

महिला बड़े असमंजस में थी। उसने हरकारे से पूछा, "इस थैली में क्या है?"

"इस में चांदी के सिक्के हैं। दो हजार टेल (चीनी सिक्के) होंगे। आप कृपया रसीद लिख दीजिए।"

"मैं लिखना नहीं जानती।"

"तो आप यहां अपने अंगूठे की निशानी कर द, मैं और भटियारा गवाही कर दो। बख्शीश में मुझे एक टेल मिला करता है।"

महिला ने थैली का टांका खोला और उसमें से कई सिक्के निकालकर डाकिये को दे दिये। फिर वह बोली, "यह धनराशि किसने भेजी है? उन्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं यहां ठहरी हुई हूं? जरा ठहरो। तुम लिख सकते हो न? जरा मेरी तरफ से उन्हें धन्यवाद का एक पत्र लिख दो। मैं अपने हितैषी को उम्र भर याद रखूंगी। वह हजारों वर्ष जिये, और अपने जीवन काल में सैंकड़ों पुत्रों का पिता बने!"

इस घटना के पचपन वर्ष बाद सन् १८६५ में चीन की साम्राज्ञी जू शे अपने
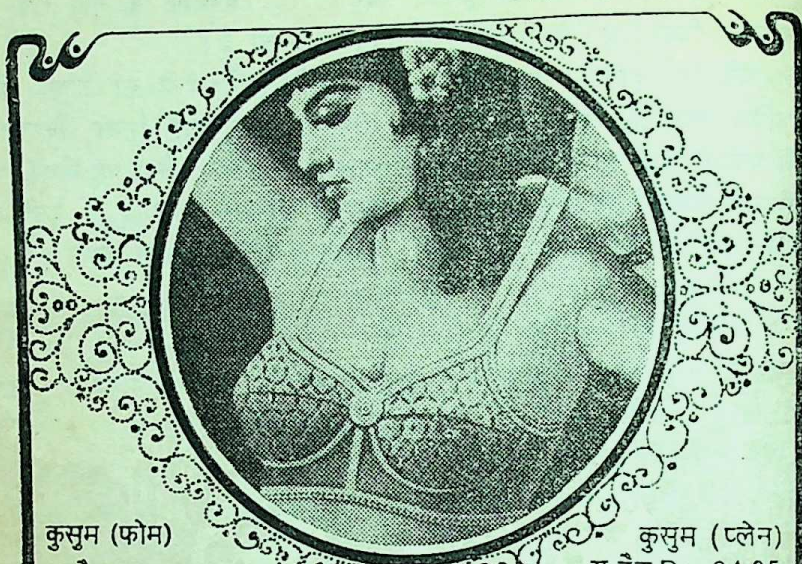
शासन के तीस वर्ष पूरे कर लेने की खुशी में उत्सव मना रहा था। इस अवसर पर उसने राज्य के दीर्घकालीन बंदियों को कारावास से मुक्त करने का निर्णय किया। ऐसे कैदियों की गणना के लिए उसने कतिपय उच्चाधिकारियों को नियुक्त किया। उच्च अधिकारियों ने दौरा कर प्रत्येक प्रांत के कैदियों के बारे में तथ्य एकत्रित कर विवरण सहित तालिका बनायी और उन्हें मुक्त करने की सिफारिश की। उनमें से एक कैदी का मामला साम्राज्ञी को विशेष रूप से विचारणीय प्रतीत हुआ। उसने संबंधित अधिकारी को बुलाकर उस बंदी के बारे में पूछा तो उसने बताया कि वह व्यक्ति क्यांग-सा राज्य की प्रांतीय जेल में एक लंबी अवधि से कैद में पड़ा है। वह बिना किसी मुकदमे के पचपन साल से जेल में बंद है। पचपन साल की अवधि का साम्राज्ञी के हृदय पर जादू-सा असर हुआ। उस व्यक्ति ने क्या जुर्म किया था, यही किसी को याद नहीं था। साम्राज्ञी ने क्यांग-सा प्रांत के गवर्नर को आज्ञा दी कि उक्त कैदी को दरबार में पेश किया जाए। अतः एक दिन प्रातः कैदी प्रासाद के भव्य दीवानखाने में साम्राज्ञी के समक्ष प्रस्तुत किया गया। भयभीत बंदी ने मखमली गद्दे पर घुटने टेककर साम्राज्ञी के सामने मस्तक झुका दिया।

बंदी बोला, "मैं सी-क्यांग-पे का निवासी हूं। पचपन साल हुए, एक महिला अपनी दो लड़कियों को साथ लेकर आयी और रात्रि को विश्राम के लिए चायघर में टिकी। उसकी बड़ी पुत्री का नाम चाओ था। कुछ घंटों बाद उस महिला के नाम दैवीकृपा से चांदी के सिक्कों से भरा एक थैला आया। मुझे ठीक स्मरण है, उस धनराशि को पाकर उस महिला को कितनी खुशी हुई थी। उक्त धन भेजनेवाले के नाम उसने धन्यवाद का पत्र भी लिखाया था। इसके बाद वह महिला अपनी बेटियों के साथ चायघर से चली गयी।"

साम्राज्ञी ने प्रश्न किया, "तुम्हारे साथ क्या बीती?"

"जिस अधिकारी ने धनराशि भेजी थी, उसे उसी दिन प्रातःकाल धन्यवाद का पत्र मिल गया। वह हक्का-बक्का रह गया। कुछ ही क्षण बाद उसका आश्चर्य क्रोध में परिणत हो गया। उसने हरकारे और भटियारे को बुलवाया और कई दिन तक उनसे झगड़ा करता रहा। उसने बताया कि 'दो हजार टेल मैंने जुए के खेल 'वी–चिंग' में बाजी हारने पर ऋण चुकाने के लिए भेजे थे। यह खेल मैंने एक मित्र के साथ उसी संध्या को चायघर में खेला था। घर पहुंचते-पहुंचते बहुत विलंब हो गया अतः हरकारे को बुलाकर मुद्राओं का थैला उसे सौंप दिया कि वह तुरंत चायघर पर जाकर उसके मित्र को दे आये।

"उस अधिकारी के मुंशी ने पता लिखने में गलती कर दी थी। यानी 'वी-

चींग के विजता के स्थान पर हुई-चींग-की विधवा' लिख दिया, और इस तरह धनराशि सही व्यक्ति को न देकर गलत व्यक्ति को दे दी गयी।

"बाद में उस विधवा स्त्री का कोई पता नहीं चला और गलती हरकारे के सिर मढ़ी गयी। विधवा के बजाय हरकारे को बंधक रखने का निर्णय हुआ। तभी से मैं कैद भुगत रहा हूं।"

साम्राज्ञी जू-शे ने उससे सहानुभूति प्रगट की, "तुम्हारे साथ बड़ी ज्यादती हुई। इसका वास्तविक कारण मैं हूं। मैं ही वह चाओ हूं। जिस महिला ने चायघर का द्वार खटखटाया था, वह मेरी मां थी। उस अलभ्य धनराशि से मेरी शिक्षा हुई। मैं अंतःपुर में दाखिल हुई और साम्राज्ञी के पद पर पहुंची। उस धनराशि के बिना मेरे साम्राज्ञी होने की कोई संभावना नहीं थी। तुम मेरे निकट आओ, मैं तुम्हें पारितोषिक दूंगी।"

और साम्राज्ञी ने अपनी रत्नजड़ित जूतियां उतारीं और उसे दे दीं। फिर बोली, "इन जूतियों को बेचने से प्राप्त धनराशि से तुम अपना शेष जीवन ऐशो-आराम से व्यतीत कर सकोगे। मैं तुम्हारी और भी क्षतिपूर्ति करूंगी। तुम चाहो तो तुम्हें पुनः हरकारे की जगह पर नियुक्त कर दूं।"

कैदी की आंखें बंद हो गयीं। वह बोला, "देवी, मैं वह हरकारा नहीं हूं। उस नगर में वही एकमात्र डाकिया था। उसका कार्य संभालनेवाला अन्य कोई व्यक्ति नहीं था। अतः उसे गिरफ्तार न कर उसके बजाय मुझ रिक्शाचालक को पकड़ लिया गया, क्योंकि वहां चार रिक्शाचालक थे। मैं पचपन साल से कारावास काट रहा हूं।"

साम्राज्ञी ने रिक्शाचालक को जो जूतियां प्रदान की थीं, वे बहुमूल्य रत्नों से जटित थीं और उनमें बेशकीमत मोतियों की झालरें टंगी हुई थीं। उन झालरों की लंबाई एक गज थी। जूतियों की वह जोड़ी सन् १९५० में पचास हजार पौंड में पेरिस में नीलाम हुई।

जू-शे का जन्म नवम्बर सन् १८३५ में पेकिंग में हुआ था। १६ वर्ष की आयु में उसने सम्राट सीन-यूंग की उप-पत्नी के रूप में अंतःपुर में प्रवेश किया। उस समय उसका नाम 'यहोनला' था। सम्राट को पट्ट-महादेवी से कोई पुत्र नहीं था, अतः सम्राट के निधन पर २६ वर्ष की आयु में जू-शे को अपने पांच-वर्षीय पुत्र से-चुन के नाबालिग होने से राजमाता का अधिकार प्राप्त हुआ। सम्राट की वसीयत के अनुसार वह चीन की 'पश्चिमी साम्राज्ञी' के मना से सिंहासन पर आरूढ़ हुई, और पट्टमहादेवी पूर्वी 'साम्राज्ञी' कहलायी। जू-शे ५७ वर्ष सत्तारूढ़ रही और १५ नवंबर, सन् १९०८ को उसका निधन हुआ।

—बी ७३, राजेंद्रमार्ग, बापूनगर, जयपुर-३०२००४

बुद्धि-विलास

१. **क्या** आप बता सकते हैं कि वह कौन-सा अपराध है जिसे कर लेने पर मनुष्य को दंड नहीं दिया जा सकता, लेकिन मनुष्य यदि उसे करते हुए पकड़ा जाए तो उसे दंड मिलता है? यह हम आपको बता दें कि संसार के सारे देशों में न्यायशास्त्र की इस संबंध में समान व्यवस्था है।

२. **कोई** अंडा तीन फुट नीचे गिराने के बावजूद भी टूटे नहीं, ऐसा हो सकता है क्या?

३. **पृथ्वी** पर यदि सामान से भरी एक ठेलागाड़ी को दो व्यक्ति खींच पाते हैं तो चंद्रमा पर उसे खींचने के लिए कितने व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ेगी?

४. **यदि** एक घंटे में नदी का पानी दो फुट बढ़ता तो पानी पर तैरती चार फुट ऊंची नाव कब तक डूब जाएगी—(अ) पंद्रह मिनट में (ब) आधा घंटा में?

५. **किस** महान व्यक्ति का जन्म यूरोप में हुआ था, एशिया में उसकी मृत्यु हुई थी और अफ्रीका में उसकी अंत्येष्टि हुई थी?

६. **एक** नेत्रहीन व्यक्ति प्लेटफार्म पर पटरी से कुछ दूर खड़े होकर सदैव गुजरने वाली गाड़ियों के डब्बों की ठीक-ठीक संख्या बता दिया करता है। क्या आप बता सकते हैं कि यह कैसे संभव है?

७. **बीसवीं** सदी का आरंभ किस तिथि से हुआ?

८. **ऐसी** वह क्या चीज है जो दौड़ती है पर रुकती नहीं; जिसके पास बिस्तर (बेड) है पर उस पर सोती नहीं; जिसके पास बैंक (Bank) है पर रुपया एक नहीं; जिसकी शाखें (Branches) हैं पर पत्ते नहीं?

९. **क्या** आप ३०० के ऐसे चार टुकड़े कर सकते हैं जो एक-दूसरे के दोगुने हों?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए, और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। एक प्रश्न के दो उत्तर भी हो सकते हैं। पर स्थानाभाव के कारण हम एक ही उत्तर देते हैं। यदि आप सभी प्रश्नों का सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

१०. ऐसी वह कौन-सी संख्या है जिसमें ४ का गुणा करने से जो उत्तर आता है वह ठीक उस संख्या का उलटा है ?

११. क्या आप बता सकते हैं कि निम्नलिखित तिथियां किस देश की स्वतंत्रता-दिवस हैं—

(अ) ७ नवंबर, (ब) १ अक्तूबर, (स) ४ जुलाई (द) १४ जुलाई ।

१२. 'लीप इयर' का क्या अर्थ है ?

१३. वह कौन-सा पक्षी है जो पानी में रहने पर भी गरम और सूखा रहता है ?

१४. दो संख्याओं का योग १० है। यदि उनमें से हरेक संख्या को उसी से गुणा कर दिया जाए तो जो गुणनफल आएंगे उनका अंतर ४० हो जाता है । बताइए, दोनों संख्याएं कौन-सी हैं ?

१५. क्या आप बता सकते हैं कि निम्नलिखित तिथियां इतिहास में क्यों प्रसिद्ध हैं—

(१) सन १६०० (२) सन १७५७ (३) सन १७७० (४) सन १९१४ (६) सन १९१९ ।

१६. नीचे कुछ चिह्नों का उल्लेख किया जा रहा है । बताइए, ये किस तथ्य या सिद्धांत के प्रतीक हैं—

(१) आंखों पर पट्टी बांधे स्त्री (२) मोटा लाल धन (+) (३) कपोत (४) चक्र ।

१७. एन. सी. सी. के कैंप में सैनिक अभ्यास का प्रदर्शन हो रहा है। ४० मीटर लंबी सैनिकों की एक टुकड़ी सरल रेखा में ४० मीटर आगे बढ़ रही है । इसी समय एक डाकिया टुकड़ी के पिछले सिरे से अगले सिरे तक दौड़ता है और नायक को पत्र देकर पिछले सिरे तक लौट जाता है । बताइए उसने कितनी दूरी तय की ?

१८. ऊपर दिये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या है ? ●

● सिद्दीक जायसी

दो-तीन महीने की दौड़-धूप और हजारों सलामों के बाद वकालत दर्जा अव्वल की सनद मेरे हाथ आयी तो दिमाग सातवें आसमान पर था। हर इज्जतदार आदमी मुझे अपने मुकाबले में सिर्फ इसलिए तुच्छ मालूम होता था कि वह वकील नहीं है। रियासत के सिर्फ उन वजीरों को मैं अपने समान समझता था, जो कानून-पेशा थे। जो कोठी किसी खुली हुई अच्छी जगह नजर आ जाती मैं उसे अपनी ही जागीर समझता।

और हकीकत ! मामूली-सा मकान दस रुपये किराये का ले रखा था। घरेलू सामान बाजार से खुद खरीदकर लाता। बेगम चूल्हा झोंकतीं। जब कई वर्ष इसी हालत में गुजरे तो खयाल आया कि हैदराबाद बड़ी जगह है, यहां हम-जैसे नये वकीलों की दाल गलना मुश्किल है। चलो, किसी जिले में किस्मत आजमायें। सोचते-सोचते गुलबर्ग जाना मुनासिब समझा। यह ऐतिहासिक जगह है, अगर सिर्फ सूबेदार (कमिश्नर) को शीशे में उतार लिया तो पौ बारह हैं।

एक अच्छा दिन देखकर उठ खड़ा हुआ। गुलबर्ग की कानूनपेशा बिरादरी ने खूब खातिर की। दूसरे दिन क्लब गया। शाम का सुहावना वक्त था। एक मेज पर चंद वकील ब्रिज खेल रहे थे, दूसरी पर शतरंज हो रही थी। उन सब ने जो

वकील ही थे, मुझे समझाकर कुरसी पर
बिठाया। अब इस तरह बातचीत हुई—

एक : "क्यों साहब, कुछ शायरी का भी शौक है ?"

दूसरा : "न होना क्या मायने ? लखनऊ का बच्चा-बच्चा शायर होता है। आप तो माशाअल्लाह काफी पढ़े-लिखे हैं और अदीब हैं।"

मैंने पूछा, "आप साहिबान तो वकील हैं, शायरी से आपको क्या सरोकार ?"

एक साहब ने फरमाया, "हमारे सूबेदार साहब को शेरो-सुखन से बहुत दिलचस्पी है। उनकी वजह से इस क्लब में हर महीने की पहली तारीख को मुशायरा हुआ करता है जिसमें अब आपको भी गजल पढ़नी पड़ेगी।"

सब एकसाथ मुझे लेकर टेनिस-कोर्ट के पास गये जहां सूबेदार साहब एक आरामकुरसी पर तशरीफ रखते थे। उनसे कुछ फासले पर कलक्टर साहब बैठे थे। परिचय की रस्म पूरी हुई तो कलक्टर साहब ने सूबेदार साहब से कहा, "तब तो यह हजरत हमारी बज्मे अदब के लिए दरख्शां सितारे (चमकीले नक्षत्र) से कम नहीं।"

एक वकील बोले, "सितारे की बरियायत से साबित (स्थिर) का लफ्ज मजा दे गया। माशाअल्लाह क्या खुदा दाद जहन पाया है हुजूर ने !"

"सेक्रेटरी साहब, मिसरा तरह आपको, लिखकर दे दीजिए," सूबेदार साहब ने हुक्म दिया। मैंने घबराकर कहा कि सरकार, खुदा जानता है; मैं शेर कहना नहीं जानता। पर वे कहां सुनते, तुरंत बोले "अजी, आप-जैसे जहीन आदमी के लिए शेर कहना क्या मुश्किल है ?"

इतने में सेक्रेटरी ने एक परचे पर यह मिसरा लिखकर मेरे हवाले कर दिया—

हर एक सर्व गुलिस्तां कम नहीं,
सर्वे चिरागां से

लौटते वक्त बाजार में एक शख्स को पुरानी किताबों का ढेर लगाये फुटपाथ पर बैठा पाया। दूसरों की देखा-देखी मैं भी किताबों को उलटने-पलटने लगा। अकस्मात एक कलमी दीवान (हस्तलिखित कविता-संकलन) पर नजर पड़ी। दिल ने उसे खरीद लेने की सलाह दी कि शायद इसी में मुशायरे की तरह पर गजल निकल आये। आठ आने में खरीदकर घर लौटा। मुंह-हाथ धोकर चाय पी और हुक्का लेकर उसके पृष्ठ उलटने-पलटने लगा, तो थोड़ी ही देर में उस तरह पर गजल मिल गयी। फिर क्या था! झट एक कोरे कागज पर नोट करके वह जेब में रख ली। दीवान को संदूक में संभालकर रख दिया कि फिर, काम आएगा। वह रात और दूसरा दिन धुन बिठाने और गजल कहने की कोशिश में गुजरा। जानता था कि इस जमाने में कामयाब शायर वही है, जो अच्छा गवैया हो। मेरी आवाज में रस था। बचपन से गाने का शौक था।

मुशायरे की रात क्लब में वह धूम

धाम थी कि मैं [illegible] रह गया!

दस बजे मुशायरा शुरू हुआ। शुरू में वकील और अफसर गजलें पढ़ते रहे। सबके बाद मेरी बारी आयी। मैंने जेब से गजल निकाली। पहले गुनगुनाया फिर रसीली आवाज में मतला पढ़ा—

चमन मातम कदः है, बुलबुलों के शोरो अफगां (चीख-पुकार) से

खजाना क्या कोई मिल जाएगा गंजे शहीदां (शहीदों का कब्र रूपी खजाना) से

एक वकील ने दाद दी, "वाह उस्ताद! वाह! गंज (खजाने) की रियामत से खजाने का लफ्ज बड़ी तलाश के बाद रखा है, मगर इस खूबी के साथ नज्म किया है कि मालूम नहीं होता कि यह फिक्र और सोचकर रखा गया है।"

सबद (फूलों के ढेर) हैं, गुलके या ताबूत जाते हैं, गुलिस्तां से ॥

'सुब्हान अल्लाह' का वह शोर मचा कि कान पड़ी आवाज सुनायी न देती थी। सूबेदार साहब झूम गये, फर्माया, "यह मजमून आपके हिस्से का हो गया। मैंने आजतक न सुना था।"

फिर मैंने यह शेर पढ़ा—

मजारे कुश्तगाने-नाज (आशिकों की कब्र) जो खुदवाये जाते हैं

सूबदार साहब ने कहा, "क्या सच्ची तारीफ की है, आपने! कलाम में बड़ी पुख्तगी और खानगी है।"

कलक्टर साहब ने फरमाया, "यह पुख्तगी बड़ी मेहनत के बाद आती है।"

समझ लीजिए कि मेरी शायरी का सिक्का बैठ गया। सूबेदार साहब ने उसी जलसे में तय कर दिया कि आइंदा से जनाब 'हातिफ' साहब (मेरा तखल्लुस) ही इस मुशायरे की सदारत फरमायेंगे और मासिक
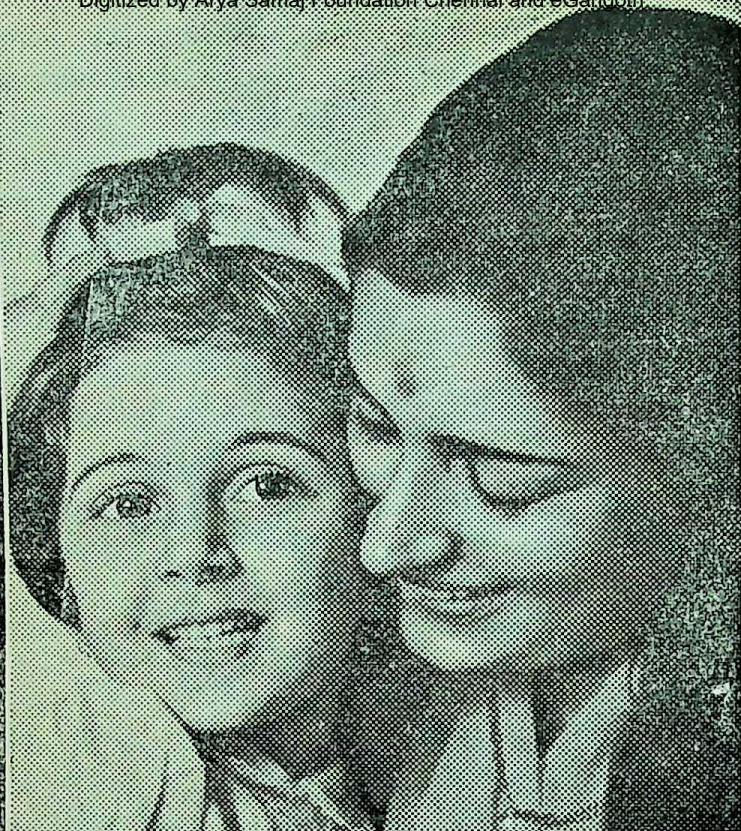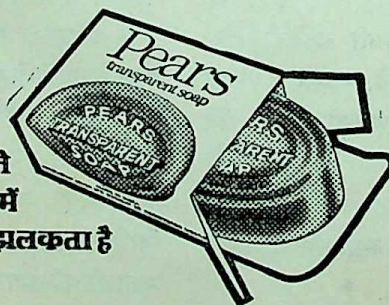
मुशायरों के लिए मिसरा तरह भी यही निकालेंगे । मुझे फैसले से बहुत सकून मिला। मिसरा तरह की तजवीज दूसरों के हाथ में होती तो मेरा खुदा ही हाफिज था।

मुशायरे से घर वापस आया तो शुक्राने की नमाज पढ़ी। सुबह नाश्ते पर ही था कि कलक्टर साहब का कृपा पत्र-मिला, "आज रात मेरे साथ भोजन करें। सूबेदार साहब भी आएंगे। गजलों की ब्याज (नोटबुक) जरूर साथ लाइएगा।"

इस मेलजोल का असर मेरे रोजगार पर बहुत अच्छा पड़ा। हर मुवक्किल की यह कोशिश होती कि सूबेदार के इजलास पर मुझ को ही ले जाएं । दो वर्ष के अंदर-अंदर मैंने नयी कोठी बनवा ली। दो-दो कारें खरीद लीं।

पर फिर मुसीबतों ने घेर लिया। मुझे बहुत जरूरी काम से एक मास के लिए अपने वतन जाना पड़ा। वहां कुछ ऐसे काम निकल आये कि लौटने में दो मास लग गये। लौटा, तो क्लब के मुशायरे को चार दिन बाकी थे। मेरी गैर मौजूदगी में मिसरा-तरह खुद सूबेदार साहब तय कर चुके थे। मैं सलाम के लिए उनकी खिदमत में हाजिर हुआ तो बेहद खुश हुए। फरमाया, "हातिफ साहब, अबकी बार तरह मैंने तजवीज की है, जरा जी लगाकर गजल कहिएगा।"

मजबूर और परेशान हो घर लौटा, पर खुशकिस्मती से एक पत्रिका में उसी तरह पर जो क्लब के मुशायरे के लिए तजवीज हुई थी, गजल दिखायी पड़ गयी। चेहरे का पीलापन गुलाबी हो गया। झट एक परचे पर पूरी गजल नोट कर ली और परचे को संदूक में इस खयाल से बंद कर दिया कि उस पर किसी और की नजर न पड़ जाए। मगर मक्ते में अपना तखल्लुस बैठाना कोई आसान काम न था। झल्लाकर मक्ते से ही छुट्टी ले ली।

मुशायरे में शेख बदर शकीब की बारी आयी तो उनका पहला ही मतला सुनकर सुन्न हो गया। घबराकर जेब में हाथ डाला मगर वहां गजल सुरक्षित थी। तरकीब सूझ गयी! मैंने अहले महफिल से कहा कि अब पहला मिसरा शेख साहब पढ़ेंगे और दूसरा मिसरा मैं अर्ज करूंगा। शेख साहब सटपटाये तो बहुत मगर मजबूर थे। उन्होंने अपने को संभालकर तीसरा मतला पढ़ा। मुकाबला यों हुआ—

शेख : रूहें आशिक तुझ पै कुर्बां ऐ हवाए कूए दोस्त !

मैं : जान में जान आ गयी जिस वक्त आयी बूए दोस्त

अहले महफिल ने दाद देने के शोर से आसमान सिर पर उठा लिया। शेख साहब को देखा तो लगता था, चोर पकड़ा गया हो। आग्रह किया कि हां साहब चलिए।

शेख : दिल की दुनिया छीन ली आखिर फरेबे हुस्न ने

मैं : शाम से ता-सुबह जागा वस्ल में जादूए-दोस्त

होशियार अदीब मुसकराने लगे,

सोया शहर

पत्थरों के शहर सो गये
थम गयीं चीखें
बुझी अंगीठियां
धुंध में खोयी
सड़क सुनसान
बंद होटल, रेस्त्रां
कहवाघरों में
उग आया
एक बियाबान
कुनमुनाते लोग
सड़कों पर
कुछ इधर, कुछ उधर सो गये
घर की
बाहर की
सब आवाजें
अकस्मात
कमरे के बीच खो गयीं
कटे हाथ की सारी रेखाएं
आंखों में
बौना आकाश
बो गयीं
फड़फड़ाता पंख
सन्नाटा
और सपने ईथर हो गये
हम भी तो एक महानगर हो गये

——नचिकेता

यांत्रिक अवर प्रमंडल लो. नि. वि.
पुनाईचक, पटना—१५

लेकिन मूर्खों ने फिर 'वाह-वाह-वाह' की बारिश कर डाली। सूबेदार साहब ने कलक्टर साहब से कुछ फरमाया।

शेख : ऐ मेरी जाती हुई दुनिया यह मंजर देख ले

मैं : एक हिचकी मुझको आयी खुल गये गेसूए-दोस्त

शेख : नज्अ में क्यों दे रहे हो मुझे कुरआं की हवा

मैं : काश ! वे फौरन हटा देते नकाबे रूहे दोस्त

एक वकील ने कहा, "खुदा की कसम, दोनों बराबर के बा कमाल हैं।"

मैं यह देखकर कि पानी सर से ऊंचा होता जा रहा है खड़ा हो गया और शेख साहब से बाअदब माफी मांगते हुए अर्ज किया, "जनाब शेख साहब, कसम है आपकी। मुझे अगर यह मालूम होता कि आपके पास भी वही परचा आता है तो मैं किसी दूसरे रिसाले (पत्रिका) से गजल नोट कर लेता।"

शेख साहब भूखे भेड़िये की तरह मुझ पर झपटे। गुस्से में तरह-तरह की आवाजें उनके मुंह से निकल रही थीं। मैं लोगों के हाथ-पांव कुचलता, तीर की तरह घर की तरफ भागा।

घर पहुंचकर घड़ी देखी, तो ठीक दो बजे थे। आराम कुरसी पर लेटकर सिगार जलाया। जो मजा सिगार में उस वक्त आया उम्र भर न आया।

——अनु. अयोध्याप्रसाद गोयलीय

घटना १९४५ की है। सेवाग्राम में चर्खा-संघ-विद्यालय का उद्घाटन विनोबाजी को करना था। मई का महीना था। झुलसानेवाली गरमी पड़ रही थी। विनोबाजी का आश्रम सेवाग्राम से दस मील दूर था। आयोजकों ने विनोबाजी को लाने के लिए एक तांगा भेजा। साथ में एक कार्यकर्ता थे।

विनोबाजी बोले, "तांगे को लौटा दो। पैदल के रास्ते सेवाग्राम यहां से चार मील दूर है। मेरे भाषण से किसी को क्या लाभ होगा सो तो ईश्वर जाने, लेकिन तात्कालिक लाभ इस घोड़े को मिलना चाहिए, जो इस गरमी में हमें दस मील खींचकर ले जाने के लिए आया है। इस घोड़े को कष्ट कम हो, आज के मेरे भाषण का इतना मूल्य काफी है।" यह कहकर उन्होंने तांगे को लौटा दिया और पैदल-रास्ते से चल पड़े।

—आर्यभूषण भारद्वाज

स्वामी शंकराचार्य समुद्र के किनारे शिष्यों से वार्त्तालाप कर रहे थे। एक शिष्य ने चाटुकारिता-भरे शब्दों में कहा, "गुरुदेव, आपने इतना अधिक ज्ञान कैसे अर्जित किया, यही सोचकर मुझे आश्चर्य होता है। मेरे विचार में आपसे अधिक ज्ञानी और कोई न होगा।"

"मेरे पास ज्ञान का आगार है, यह तुझे किसने बताया ? मुझे तो अपने ज्ञान में और वृद्धि करनी है।" शंकराचार्य बोले। फिर उन्होंने अपने हाथ का दंड पानी में डुबोकर बाहर निकाला और उसका छोर शिष्य को दिखाते हुए बोले, "इस दंड को जल में डुबोने पर इसने केवल एक बूंद ग्रहण किया। यही बात ज्ञान के बारे में भी है। ज्ञान कभी भी भरता नहीं।" शिष्य लज्जित हो गया।

तब जापान में खाद्य-पदार्थों पर कंट्रोल था। प्रत्येक व्यक्ति को भोजन तौलकर मिलता था। फौजी-सेवा से निवृत्त जनरल यामागुची की खुराक मिलनेवाले भोजन से काफी अधिक थी और कंट्रोल द्वारा जो भोजन उन्हें प्रतिदिन मिलता, वह केवल उनके नाश्ते के काम आता था। भोजन के अभाव में जनरल का शरीर दिनों-

दिन दुर्बल होने लगा। आस-पास के लोगों को पता लगा तो मुहल्ले-भर के व्यक्ति अपने-अपने हिस्से में से थोड़ा-थोड़ा अंश उनके पास ले गये। जनरल ने उसे स्वीकार नहीं किया और कहा. "भाई, मैं तो साल दो-साल में मर ही जाऊंगा। मैं उन लोगों के हिस्से का भोजन कैसे ले सकता हूं; जो अभी स्वस्थ हैं, जवान हैं और जिन पर देश का भार है।"

—ऋषिकुमार श्रीवास्तव

बंबई में एक सभा थी। देश-विदेश के अनेक विद्वानों ने उसमें भाग लिया था। लोकमान्य तिलक ने भी उसमें एक विद्वता-

पूर्ण वक्तृता दी। उसमें उन्होंने भारतीय और ईरानी सभ्यता की तुलना भी की थी। सभा समाप्त हो गयी तो उसके पारसी सभापति ने कहा, "मि. तिलक, आप अपनी योग्यता का समुचित उपयोग नहीं कर रहे हैं। आप-जैसे प्रतिभा-संपन्नों को तो ऐतिहासिक अन्वेषण करना चाहिए। आप राजनीति की दलदल में क्यों फंसे हैं?"
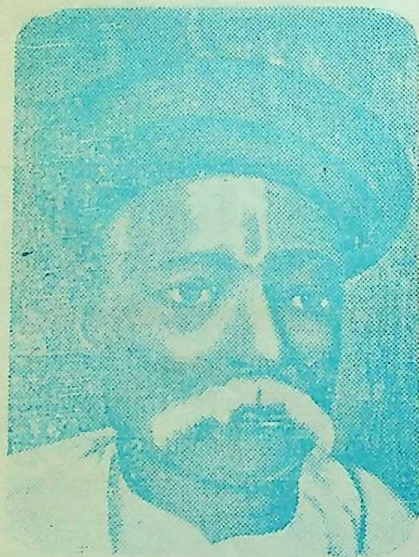
तिलक ने उत्तर दिया, "भारतभूमि वांझ नहीं है। स्वराज्य हो जाने पर मुझ-जैसे सहस्रों विद्वान हो जाएंगे। इस समय तो परमावश्यक यही है कि हममें से प्रत्येक अपने देश की सहायता के लिए आगे बढ़े और अपनी सारी योग्यता, शक्ति और सर्वस्व स्वराज्य की प्राप्ति में लगा दे।"

—कमला

यूरोप में नेपोलियन का सितारा चमक रहा था। इंगलैंड और फ्रांस की शत्रुता बहुत बढ़ गयी थी। दोनों की सेनाएं मैदान में उतर आयी थीं और कहीं-न-कहीं युद्ध होता ही रहता था।

एक बार ऐसे ही एक युद्ध में अंगरेजों को बुरी तरह पराजय का मुंह देखना पड़ा। बहुत बड़ी संख्या में उनके सैनिक बंदी बना लिये गये। युद्ध बंद होने पर ब्रिटिश सरकार ने उनकी मुक्ति के लिए बहुत जोर लगाया, पर नेपोलियन किसी भी शर्त पर उन्हें छोड़ने को राजी नहीं हुआ। उसने मांग को ठुकरा दिया। बातों-बातों में किसी ने कहा कि डॉक्टर जेनर भी कहते थे कि बंदियों को छोड़ देना चाहिए।

यह बात जब नेपोलियन के कानों में पड़ी तो वह गंभीर हो गया। डॉक्टर जनर भी उसी देश और जाति के थे जिससे नेपोलियन की घोर शत्रुता थी, फिर भी उनके लिए उसके मन में बहुत श्रद्धा थी क्योंकि वे एक बहुत बड़े वैज्ञानिक थे। उन्होंने चेचक के टीके का आविष्कार करके बहुत बड़ा उपकार किया था।

नेपोलियन कुछ क्षणों तक मौन रहने के बाद बोला, "डॉक्टर जेनर की बात नहीं टाली जा सकती। बंदियों को अभी रिहा कर दो।" सारे बंदी मुक्त कर दिये गये।

एक बार पेरिस में बड़ा ही भयंकर दंगा हुआ! मेथ्यू डेन्जलर नामक पत्रकार दंगाइयों द्वारा फेंके जानेवाले पत्थरों की वर्षा में बैठा अपने पत्र के लिए विवरण लिख रहा था कि पुलिस गोली से घायल होकर गिर पड़ा। डॉक्टर आया, उसने उसे सलाह दी, "तुम आराम करो।"

पत्रकार ने कहा, "आराम मुख्य नहीं है। मुख्य काम है अपने कर्त्तव्य का पालन करना। मैं पत्रकार हूं, मेरा कार्य घटना का विवरण लिखना है। मेरी कलम लो और इस पृष्ठ पर नीचे लिख दो— 'सायंकाल तीन बजकर बीस मिनट : पुलिस की गोली से तीन घायल और एक मृत।'

डॉक्टर ने पूछा, "मरा कौन ?"

उत्तर मिला, "मैं !" और पत्रकार के प्राण निकल गये।

—कुमार कमल भास्कर

ज्ञान गंगा

स्कन्धेनापि वहेच्छत्रून कार्यमासाद्य बुद्धिमान्
(हितोपदेश ४, ६०)

—चतुर मनुष्य को अपना काम निकालने के लिए शत्रुओं को भी कंधे पर बैठा लेना चाहिए।

अनागत-विधाता च प्रत्युत्पन्न मतिस्तथा।
द्वावेवसुखमेधेते यद्भविष्यो विनश्यति
(महाभारत)

—आगे होनेवाली बात को पहले ही सोचनेवाला और अवसर जानकर काम करनेवाला, ये दोनों ही सुख पाते हैं; बात-बात में 'होगा सो देखा जाएगा' कहनेवाला दुःख उठाता या नष्ट हो जाता है।

उपकर्त्राऽरिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा।
उपकारापकारौ हि लक्ष्यं लक्षणमेतयोः॥
(माघ, अ.)

—उपकारी शत्रु से (के साथ) मेल करना चाहिए न कि अपकारी मित्र से। निश्चय ही उपकार और अपकार मित्र-शत्रु के लक्षण हैं।

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमेति च याति च। (विदुरनीति)

—सदाचार की रक्षा यत्नपूर्वक करनी चाहिए। धन तो आता-जाता ही रहता है।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

मंत्री जी की पब्लिक-सि...

• गुरनामसिंह तीर

मंत्री महोदय ने मुझे अपने कमरे में बुलाकर सारे खिड़कियां-दरवाजे बंद करवाकर अपने विश्वास में लेते हुए कहा, "तीर साहब! हममें किसी बात की कमी नहीं। अगर कमी है तो केवल 'पब्लिक-सिटी' की है। हमने आपको इस आशय से डाइरेक्टर लगाया है कि आप हमारी इतनी पब्लिक-सिटी करें कि शाही हुकम भी मात पड़ जाए।" मैं जल्दी ही 'पब्लिक-सिटी' शब्द का अर्थ समझ गया। मंत्री महोदय को पब्लिसिटी शब्द का उपयोग करना नहीं आता था और पब्लि-सिटी के बजाय बार-बार पब्लिक-सिटी कहते थे। मैं यह भी समझ गया कि मंत्री महोदय चाहते हैं कि उनका ऐसा इमेज बनाया जाये कि लोग उन्हें एकदम 'शेरे-पंजाब', महाराजा रणजीतसिंह या सम्राट विक्रमादित्य समझने लगें।

मैंने मंत्री महोदय को विश्वास दिलाते हुए कहा, "हुजूर! चिंता न करें। दास की आर्मरी में असंख्य हथियार हैं, जो आपको शेरे-पंजाब ही नहीं शेरे-हिंद, बल्कि शेरे-जहां भी सिद्ध कर देंगे।" मंत्री महोदय मुसकराकर कहने लगे, "बस तीर जी, वफादारी का यही तकाजा है कि घर-घर ढिंढोरा पिटवा दें कि हमसे बड़ा न आज तक कोई राजा-महाराजा हुआ है, न नेता, न प्रधानमंत्री, न मुख्यमंत्री! जिस-जिसको भी जो-जो कुछ चाहते हों दिलवा दें, पर घर-घर में हमारी जय-जयकार करवा दें।"

मैंने अगले सप्ताह ही सभी लोक-संपर्क अफसरों को इकट्ठा कर लिया और उन्हें अपने विश्वास में लेकर मंत्री महोदय के आशय के बारे में ताकीद कर दी।

मेरे लिए कुछ ऐसी मुसीबतें थीं जिनका हल न मेरे पास था, न मंत्री महो-दय के पास। मैंने मंत्री महोदय से कई बार विनती की कि आप अपना 'लाइफ-स्केच' लिखवायें ताकि स्टाफ को 'टाकिंग-
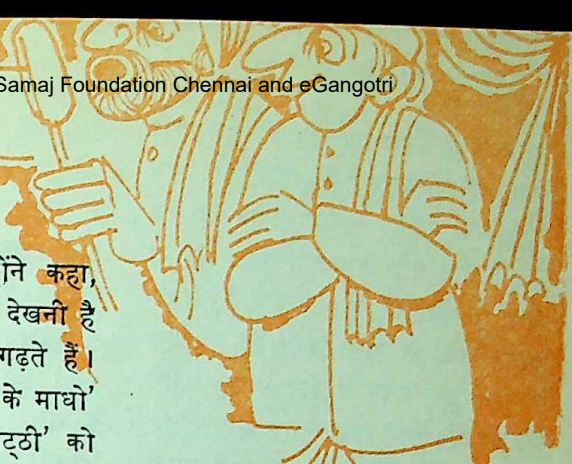
'प्वाइंट्स' मिल सकें, पर उन्होंने कहा, "इसी बात में तो आपकी कला देखनी है कि आप हमारी जीवनी कैसी गढ़ते हैं। मुझे पता है, आप लोग 'मिट्टी के माधो' को 'दुल्लाभट्ठी' और 'दुल्लाभट्ठी' को 'मिट्टी का माधो, साबित कर सकते हैं।"

'जीवनी' गढ़ने का काम भी मैंने फील्ड-स्टाफ पर छोड़ दिया और मंत्री महोदय के पहले महीने के दौरों के समय जिस प्रकार उनकी जीवनी गढ़ी गयी, उसे देखकर लगा कि हमारा महकमा बड़ी सफलता के साथ गधे को गाय और गाय को शेर बनाने की सामर्थ्य रखता है।

एक डी. पी. आर. ओ. को पता चला कि मंत्री महोदय तो बिलकुल अनपढ़ हैं। उसने भरी सभा में मंत्रीजी का परिचय कराते हुए कहा, "भाइयो, अंगरेजी राज्य का समय बायकाटों का समय था। किसी ने मलमल का बायकाट किया, किसी ने रेशम का, किसी ने अंगरेजी दवाइयों का, पर बलिहारी जाइए हमारे मंत्रीजी की। इन्होंने विद्या का बायकाट किया और पूरी तरह निभाया।"

एक अन्य 'पब्लिसिटी वर्कर' ने इस बात पर 'जिंदाबाद' का नारा बुलंद किया और लोगों ने जवाब में पूरे जोर के साथ मंत्रीजी की जय-जयकार की। अगली कांफ्रेंस में मंत्रीजी की जान-पहचान कराते हुए संबंधित डी. पी. आर. ओ. ने कहा, "कुछ दिन हुए यहां एक गैर-जिम्मेदार अपोजीशन लीडर ने मंत्रीजी पर आरोप लगाया था कि ये बरखास्तशुदा पटवारी हैं। मैं इस बात का पुरजोर खंडन करता हूं कि मंत्रीजी एक दिन के लिए भी पटवारी नहीं बने। तब ये 'डिसमिस्ड पटवारी' कहां से हो गये? भाइयो, पटवारी बनने के लिए भी दो-चार जमातें पढ़नी पड़ती हैं। इन्हें अगर पटवारी कहना ही हो तो बड़ी खुशी से अपोजीशनवाले उजड़े बागों के 'गालड़ (गिलहरी) पटवारी' कह सकते हैं, पर यह जमीनों का खाता करनेवाले पटवारी कभी नहीं रहे।"

जब मंत्रीजी हमारी अगली कांफ्रेंस में पहुंचे तो वहां एक डी. पी. आर. ओ. ने मंत्रीजी की जेल में बितायी कैद के बारे में स्पष्टीकरण करते हुए कहा, "भाइयो, आपको याद होगा, परसों रात को यहां जो जलसा हुआ था, उसमें हमारे लोकप्रिय मंत्रीजी के बारे में कहा गया था कि इन्होंने

सत्याग्रह में केवल दस दिन की कैद काटी है। यह बात बिलकुल निराधार है। इसमें कोई सत्य नहीं। हकीकत यह है कि इन्होंने तीन साल से ज्यादा समय विभिन्न जेलों में बिताया है। इन्होंने राजाओं-महाराजाओं के साथ टक्कर ली है। एक राजा ने इन्हें गबन के दोष में छह महीने की कैद दी। दूसरे राजा ने एक अन्य नैतिक अपराध में डेढ़ साल की कैद दी। तीसरे राजा ने गुरुद्वारे के दाने बेचने के अपराध में आठ महीने कैद दी। चौथे राजा ने मंदिर से जूतियां उठवाने के जुर्म में तीन बार जेलों में बंद किया। पांचवें राजा ने स्मगिलग के आरोप में इन्हें सात महीने जेल में रखा और छठे राजा ने एक स्त्री भगा ले जाने के दोष में डेढ़ साल तक जेल में फेंके रखा। जो आरोप इन पर लगाये गये, वे आम आदमी पर नहीं लग सकते, क्योंकि बहादुर आदमी ही ऐसे जुर्मों के लिए कैदें काट सकता है।" यहां 'मंत्रीजी की जिंदाबाद' का एक और नारा बुलंद हुआ।

कुछ दिनों बाद एक नगर में मंत्रीजी अमावस के मेले पर बोलने गये। वहां एक डी. पी. आर. ओ. ने मंत्रीजी की जीवनी का एक नया परिच्छेद पेश किया। वे लोगों से उनकी जान-पहचान कराते हुए कहने लगे, "भाइयो, आप ने कल का 'रोजाना अफवाह' पढ़ा होगा जिसमें मंत्रीजी के बारे में लिखा है कि उनकी विधिपूर्वक शादी नहीं हुई। इनके संपर्क में आयी आठ-दस स्त्रियां स्वयं को उनकी धर्मपत्नियां बताती फिरती हैं। यह बात बड़ी हास्यास्पद है और 'रोजाना अफवाह' के सम्पादक की जहालत का नक्शा पेश करती है। हकीकत यह है कि मंत्री साहब ने आज से कुछ साल पहले एक विधवा आश्रम संभाला था। उस आश्रम में लगभग तीन सौ विधवा स्त्रियां दाखिल थीं। मंत्रीजी ने समाज-सुधार की स्प्रिट के साथ उन्हें संबोधित करते हुए कहा, 'देवियो, आज के बाद आप में से कोई भी स्वयं को विधवा न समझे। राजा भर्तृहरि की ३६० रानियां थीं। मुझे भी आप राजा भर्तृहरि ही समझिए। मैं चाहे चंदा मांगूं, चोरी करूं, ब्लैक करूं, डाके डालूं, भीख मांगूं या कोई अन्य हेराफेरी करूं, आपके लिए रोटी-पानी का प्रबंध करूंगा। आज के बाद आप स्वयं को सुहागवती समझें।" इस पर 'मंत्रीजी की जिंदाबाद' का एक पुरजोर नारा लगा और मंत्रीजी मुसकराये। उन्होंने धीरे-से अपने सेक्रेटरी के कानों में कहा, "मंत्री बनकर भी अगर एक ही देवी के साथ बंधे रहे तो हममें और आम गृहस्थियों में क्या अंतर हुआ ?"

अमावस के बाद पूर्णिमा के मेले पर मंत्रीजी के बारे में एक अन्य डी. पी. आर. ओ. ने मंत्रीजी की 'जीवनी' पर नया प्रकाश डालते हुए कहा, "बड़ी शर्म की बात है कि कुछ दिनों से मंत्रीजी के विरुद्ध एंटी-करप्शन कांफ्रेंस हो रही है। दो-तीन कांफ्रेंसें तो मंत्रीजी के सेवकों ने स्वयं हिम्मत कर भंग करवायीं। मंत्रीजी सबकुछ जानकर चुप कर गये हैं कि भूंकनेवालों

को भूंकने दिया जाये। मंत्रीजी पर दोष लगाये गये हैं कि ये हर नौकरी बेचते हैं। कर्मचारियों को नियुक्त करने की फीस अलग और बदली करने की अलग। मुअत्तल होने और बहाल करने की भी फीसें अलग-अलग। अच्छी जगह पर लगाने की भी वे अलग फीस चार्ज करते हैं। मैं समझता हूं कि मंत्रीजी ने ऐसा कर बड़े ऊंचे उसूलों का सबूत दिया है। जो कर्मचारी लाखों रुपया बिना डकार लिये खा जायें, उनका क्या हक होता है कि मंत्रीजी को हिस्सा दिये बिना धन इकट्ठा करते फिरें। मंत्रीजी ने तो सीधे रेट बांधे हैं। क्योंकि मंत्रीजी सोशलिज्म में अथाह विश्वास रखते हैं। इसलिए चाहे किसी कर्मचारी का कोई स्थान हो, उससे हिस्सा लिया जाता है। सिनेमा का राष्ट्रीयकरण करने का आंदोलन भी मंत्रीजी की लीला का एक हिस्सा था। मंत्रीजी अब भलीभांति समझ गये हैं कि लोगों का काला धन किसी कानून से बाहर नहीं निकलवाया जा सकता। केवल ऐसी राजनीति से सुधारा जा सकता है। इसीलिए मंत्रीजी ने शराब के ठेकेदारों से १२ करोड़ के लिए पांच करोड़ लिया। बिजली के ठेकेदारों से ५० करोड़ के लिए १५ करोड़ लिये। अपोजीशनवाले ख्वाहमख्वाह शोर मचा रहे हैं और कहते फिरते हैं कि मंत्रीजी प्रांत को लूटकर खा गये हैं। भला यह कहां की लूट है? ब्लैक के पैसे में से हिस्सा ले लेना कोई लूट नहीं।"
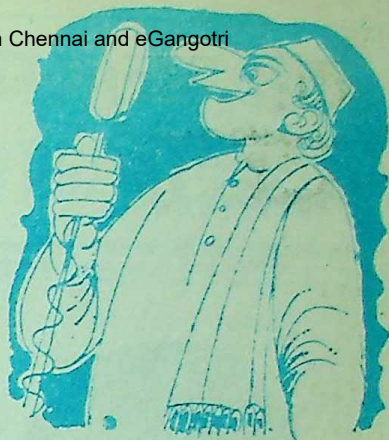
इस बार जिंदाबाद का नारा इतनी ऊंची आवाज में लगा कि अपने घरों में बैठे अपोजीशनवाले सहम गये।

मंत्रीजी की 'जीवनी' बड़े-बड़े स्वर्ण अक्षरों में लिखी जा रही थी।

मैं मन ही मन प्रसन्न था कि मंत्रीजी की जीवनी बड़े खूबसूरत ढंग से लिखी जा रही है। इतने में सेक्रेटेरिएट के सामने एक बहुत बड़ा जुलूस आ गया जो बिगड़े हुए 'ला एंड आर्डर' के खिलाफ नारे लगा रहा था, बिजली-पानी के संकट का रोना रो रहा था। सूबे को केंद्र की कालोनी बनाने पर शोर मचा रहा था और महंगाई के स्यापे कर रहा था। मंत्रीजी ने मेरी ओर देखा और मैंने उनकी ओर। मैं उनका भाव ताड़ गया। वे चाहते थे कि मैं डाइरेक्टर पब्लिक रिलेशंस होने का सबूत दूं। मैं छलांग लगाकर जनता के जुलूस के सामने जा खड़ा हुआ। बोला, "प्यारे भाइयो, मंत्रीजी आपका स्वागत करते हैं। आप जितने कदम चलकर आये

हैं, उनके सिर-माथे पर आये हैं। मंत्रीजी आपके कष्टों को समझते हैं और आप भी उनके कष्टों को समझें।"

लोग मेरा भाषण सुनकर कुछ भड़क रहे थे। मैं समझता था कि जनता के साथ खरी-खरी बातें कभी नहीं करनी चाहिए। मैंने झटपट अपने भाषण का गेयर बदलकर कहा, "प्यारे भाइयो, गुस्सा न करना। मैं तो स्वयं आपमें से एक हूं। आप सबका बड़ा मीरासी तथा भाई हूं। इसलिए आपके साथ मजाक करना मेरा हक है। हकीकत यह है कि मंत्रीजी को आपके दुखों का बेहद अहसास है। जनता के कामों में यह इतने गमगीन हैं कि उनका वजन ३७० पौंड से कम होकर ३६९ पौंड रह गया है। यह इस प्रांत को स्वर्ग बनाना चाहते हैं। इनका विचार है कि आसमान की बिजलियों को कैद किया जाए ताकि धरती की बिजली के घाटे पूरे हो सकें। 'ला एंड आर्डर' ऐसा सुधरा हो कि आंखें निकालने वाले की आंख निकाली जाए। गरदन तोड़नेवाले की गरदन तोड़ दी जाए। मंत्रीजी रात को पूरे छह घंटे 'गरीबी हटाओ' की माला फेरते हैं और अब इस भक्ति के फलस्वरूप इनकी अपनी और इनके कैबिनेट के साथियों की गरीबी बहुत हद तक दूर हो गयी है। बस थोड़ी ही देर दांतों तले जीभ रखिए। आपका भी कल्याण होने वाला है।"

जनता में से ही किसी ने 'जिंदाबाद' का नारा लगाया। मंत्रीजी ने पांच-सात मीठे पानी की बोतलें बुजुर्ग सत्याग्रहियों के हवाले कीं और उन्हें अपनी भुजाओं में भींचा। उनका गुस्सा शांत हुआ। फिर स्टेज पर आकर कहने लगे, "मेरे आंसुओं के दरियाओ, आपको लाख-लाख नमस्कार। चाहता तो यह था कि मैं एक-एक दोस्त के घर जाकर उसकी समस्या समझता और उसे हल करता, पर हुआ यह कि आप अपनी समस्याएं लेकर मेरे राज-दरबार तक आ पहुंचे हैं। पिछले सारे राज-दरबार नकली थे। मेरा राज-दरबार असली है क्योंकि यहां सभी दरबारियों का राज्य है आप जितने दुख और कांटे इकट्ठे कर लाये हैं, वे मैं सारे अपनी झोली में डलवाता हूं और आपको विश्वास दिलाता हूं कि अगले चुनाव तक इस धरती को स्वर्ग का नमूना बना दूंगा। धीरज रखें। दांतों तले जीभ दें और देखें कि मैं क्या करता हूं।"

इस बार हमारे मंत्रीजी ने अपनी जिंदाबाद का नारा स्वयं ही लगाया और हुजूम में से कइयों ने बाहें उठाकर जिंदाबाद का उत्साहपूर्ण साथ दिया। जुलूस लौटने लगा और मंत्रीजी मेरे कंधे पर हाथ रखकर कहने लगे, "तीर साहब! पब्लिक-सिटी में बड़ी करामात है। अभी हमारी पूरी पब्लिक-सिटी नहीं हो रही है। अगर आपका सारा महकमा पूरी तरह ढोल बजाये तो हम बातों ही बातों में सोशलिज्म का मैसमेरेजम दिखायें कि भूखे, प्यासे और हमारी ज्यादतियों से पीड़ित लोग वाह-वाह कर उठें।" ●

• वियोगी हरि

दो विनयशील व्यक्तित्व

बंधुवर कृष्णकान्त मालवीय का स्मरण आते ही १६१८ और १६२५ के बीच के कितने-ही मनोरम चित्र आंखों के आगे खिंच जाते हैं। उन दिनों का प्रयाग कुछ और ही था। टंडनजी, श्रीधर पाठक, कृष्णकांत मालवीय, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, चन्द्रशेखर शास्त्री-जैसी विभूतियों की एक-एक याद मेरे जीवन की पवित्र धरोहर है, और तब के उन मधुर संस्मरणों से वस्तुतः सुख और शांति मिलती है।

कृष्णकान्तजी की जिन्दादिली को मैं कभी नहीं भूल सकता। वे उच्च कोटि के संपादक और साहित्यकार ही नहीं थे, वे प्रभावशाली वक्ता थे और कुशल राजनेता भी। किंतु ये गुण तो दूसरों में भी हो सकते हैं, और इन गुणों को यदि संभालकर न रखा जाए, तो ये मिथ्या अभिमान भी पैदा कर देते हैं। कृष्णकान्तजी इसके अपवाद थे। सबसे बड़ी बात जो उनमें थी वह थी हृदय की सरलता, सच्चाई और मिलनसारी।

अपने से बड़ों का वे श्रद्धापूर्वक आदर करते थे, बराबरी के मित्रों के साथ उनके प्रेम का सहज आदान-प्रदान होता था, और अपने से छोटों को हमेशा वे प्रोत्साहन और प्रेरणा देते थे।

प्रयाग में हिंदी-साहित्य-सम्मेलन का अल्प-सा सेवा-कार्य मैं उन दिनों किया करता था। पत्र-पत्रिकाओं में कभी-कदास ही लिखता था। कृष्णकान्तजी जब भी 'अभ्युदय' प्रेस में या कहीं बाहर घूमते हुए मिलते, तो आदेश के स्वर में कहते थे, कि 'अभ्युदय' में तुम्हारी कोई कविता या लेख अवश्य जाना चाहिए। मुझे यह बात याद तो नहीं थी, पर अभी पिछले दिनों प्रयाग में चि. पद्मकान्त ने मुझे एक कविता की याद दिलायी जो 'अभ्युदय' में छपी थी और जिसका शीर्षक था 'मांझी'। वह कविता कृष्णकान्तजी की प्रेरणा से ही मैंने लिखी थी और उनको वह पसंद आयी थी।

प्रोत्साहित करने का ऐसा ही गुण गणेशशंकर विद्यार्थी में भी था। 'प्रताप' के लिए उन्होंने मुझसे इसी तरह कई लेख और शायद एक-दो कविताएं लिखायी थीं।

'अभ्युदय' और 'प्रताप' से मुझे उन दिनों बड़ा प्रोत्साहन मिला था। कहना चाहिए कि इन दोनों श्रेष्ठ संपादकों की प्रेरणा से ही झिझकते हुए मैंने पत्र-पत्रि

काओं में लिखना शुरू किया था।

कृष्णकान्तजी के पास बैठकर उठने को जी नहीं करता था। बात करने का उनका ढंग आकर्षक और निराला था। वाद्य और संगीत के भी वे अच्छे पारखी और प्रेमी थे। उनका विनोद ऊंचे दरजे का होता था। आलोचना नपी-तुली और खरी होती थी। संपादन वे बड़ी योग्यता, गहराई और मेहनत से करते थे। आज पत्र-पत्रिकाओं की संख्या तो बहुत बढ़ गयी है, मगर संपादन-कला जैसे फीकी पड़ गयी है। 'अभ्युदय' और 'प्रताप' की तथा उस जमाने की 'सरस्वती' जैसी मासिक पत्रिकाओं की फाइलें उठाकर जब देखते हैं, तब उनमें हम पाते हैं कि उन संपादकों के लेखों और टिप्पणियों में कितनी अधिक मौलिकता और गहराई होती थी।

प्रयाग में जान्सटनगंज में टंडनजी रहते थे। उनके मकान के बिलकुल पास अभ्युदय प्रेस था। मैं प्रायः नित्य टंडनजी से मिलने जाता, और यह हो नहीं सकता था कि अभ्युदय प्रेस न जाऊं। कृष्णकान्तजी से अनेक विषयों पर दिलचस्प चर्चा तो सुनने को मिलती ही थी, उनकी डिबिया के वे पान भी भुलाये नहीं जा सकते। तब उन दिनों मैं उनके हाथ से पान ले लेता था। फिर तो पान छूटा सो छूटा।

आज का जमाना भाग-दौड़ का है। लोगों में बिना मतलब की बात करने की फुरसत नहीं। व्यक्तित्व अपना दबा दिया

कृष्णकान्त मालवीय

है खुद ही, और हम मानो मशीन के पुर्जे बन गये हैं। अंतर का रस सूख गया है, या हमने उसे सुखा दिया है, ऐसी हालत बन गयी है। तब की भूली हुई कुछ यादें जब-कब उभर आती हैं, तो सच मानिए एक क्षण के लिए ऐसा आनंद मिल जाता

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल

है जो अकथनीय होता है।

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल

जब कभी कोई पूछता है हिंदी के प्रथम कोटि के लेखकों के संबंध में, तो स्व. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल हठात आंखों के सामने आ जाते हैं। उनकी ऊंची और गहरी अध्ययनशीलता उनकी एक-एक कृति में देखी जा सकती है। पाणिनि के सूत्रों को लेकर उन्होंने जो ऐतिहासिक एवं सामाजिक शोध की, और महाभारत का मंथन कर जो 'भारत सावित्री' रूपी नवनीत निकाला, वह सर्वविदित है।

लेकिन मेरे एक-दो संस्मरण तो वासुदेवशरणजी की गजब की विनयशीलता से संबंध रखते हैं। पहली बार एक रेलगाड़ी में, याद नहीं कि कहां पर, उनसे मिलना हुआ था। उनकी एक-दो पुस्तकें और कुछ निबंध मैंने पढ़े थे। वही चर्चा का विषय था। जब उनके द्वारा की गयी शोधों की मैंने बार-बार प्रशंसा की, तो देखा कि वे संकोच के मारे गड़े जा रहे हैं, और उन्होंने चर्चा का विषय ही बदल दिया। सरकारी संग्रहालयों की बात करने लगे। पुरानी संग्रहणीय वस्तुओं के प्रति श्रद्धा-भावना व्यक्त करते हुए दुःख के साथ कहा कि 'ऐसी वस्तुओं की उपेक्षा हमारी अपनी सरकार तो कर ही रही है; हमारे शिक्षित समाज का भी इस ओर कोई ध्यान नहीं है।' हरिजन-कार्य के प्रति भी उन्होंने दिलचस्पी दिखायी और गांधीजी पर अपनी अपार श्रद्धा प्रकट की। अपनी अमूल्य साहित्य-कृतियों के संबंध में न तो स्वयं कुछ कहा और न मुझे ही अधिक कहने का मौका दिया। रेलगाड़ी में हमारी भेंट के कुछ दिनों बाद उन्होंने नयी दिल्ली से, जहां वे राष्ट्रीय संग्रहालय में काम कर रहे थे, २ जून, १९५० को मुझे एक कार्ड लिखा। उसके एक-एक शब्द से उनकी कद्रदानी प्रकट होती है :

प्रिय हरिजी,

उस दिन आपसे मिलकर चित्त प्रसन्न हुआ। अकृत्रिम सौहार्द का सुख मिला। आपका 'जीवन-प्रवाह' जब पढ़ा, तो उसमें उल्लिखित तीन स्मरणीय प्रसंग बहुत पसंद आये। उनमें दिव्य मानवता टपकती है। काश, हमारे समाज में इस प्रकार के झरने और अधिक झरते।

भवदीय

वासुदेवशरण

एक बार काशी-विश्वविद्यालय में भी उनके निवास-स्थान पर मैं मिलने गया था। वहां भी कृतित्व की अपेक्षा उनका व्यक्तित्व अधिक आकर्षक लगा। हो सकता है कि उसी ने मुझे तथा अनेक मित्रों को उनके सामीप्य का अनुभव कराया हो।

आगरा में, एक सभा में, भारतीय संस्कृति पर उन्होंने जो भाषण दिया था वह वास्तव में अपूर्व था।

अंतिम बार ऋषिकेश में मिलना हुआ। गीता-भवन में वे ठहरे हुए थे। गरमी के दिन थे। जब मैं उनसे मिलने पहुंचा तब एक पंडित से श्रद्धाभक्तिपूर्वक

सत्यनारायण की कथा सुन रहे थे वे। मन में हुआ कि इतना बड़ा विद्वान, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य का प्रकाण्ड पंडित एक ऐसे साधारण पंडित के मुख से आखिर क्यों यह कथा सुन रहा है! उच्चारण अशुद्ध और श्लोकों का अर्थ भी गलत-सलत था उसका। लेकिन अग्रवालजी की श्रद्धा-भावना फिर भी अडिग! आर्य-समाज से कभी उनका संबंध रहा था, किंतु सनातन धर्म के प्रति उनका यह आकर्षण देखकर मैं तो आश्चर्य-चकित रह गया। कथा समाप्त होने पर मैंने पूछा कि 'आपकी इस आस्था का कारण क्या है?' बोले, 'कारण में मैं नहीं उतरता। बस, मेरी भक्ति-भावना है। मुझे आनंद आता है नारायण का सत्यरूप सुनने और उसका मनन करने के प्रयत्न में।' तथापि मेरी शंका का निवारण नहीं हुआ। फिर वे महाभारत के महत्त्व पर प्रकाश डालने लगे। अपनी एक योजना भी दिखायी, जिसके अनुसार विस्तारपूर्वक वेदों का अनुशीलन तथा अन्वेषण पर लिखने का वे सोच रहे थे। मेरा तो इतना ही काम था कि 'हमारी परंपरा' पुस्तक के लिए महाभारत पर उनसे एक संक्षिप्त लेख लिखाया जाए। मेरा निवेदन उन्होंने तत्काल स्वीकार कर लिया, और अस्वस्थ होते हुए भी महाभारत पर अपना लेख भेज दिया। उन दिनों वे मधुमेह से पीड़ित थे। कमजोरी दिन-दिन बढ़ रही थी किंतु उनकी अध्ययनशीलता और ईश्वर-परायणता में कुछ भी कमी नहीं आयी थी। मुझे तो प्रकांड लेखक की बजाय वे विनम्र भगवत-भक्त ही सदा प्रतीत हुए।

वासुदेवशरण ने एक ऐसे साहित्य-उद्यान का निर्माण किया था, जिसमें निराली ही लताएं थीं, और जहां रंग-रंग के फूल रसस्निग्ध सुगंध फैलाया करते थे। वट-वृक्षों में से प्रतिध्वनि गूंजती थी वैदिक वाङ्मय का रहस्य खोलती हुई, जिसका स्वागत करने को शोधकों के कर्ण-द्वार सदा उत्सुक रहते थे, जहां पाणिनि-शिला पर उत्कीर्ण भारत के मानचित्र ने कितनी ही स्मृतियों को ताजा किया था। जहां का लता-वितान, 'पदमावतीय' पुष्पों के भार से झुक गया था, जहां लोक-संस्कृति 'जनपदीय प्रांगणों' में मुक्त विहार करती थी, जहां एक-एक इंगित पर वीणा-वादिनी चाहे जिस स्वर को छेड़ देती थी।

ऐसा अद्‌भुत उद्यान रचा था जिस रससिद्ध माली ने, उसके कुटीर-द्वार पर मूर्तिमान शील आगंतुकों का सहज सत्कार किया करता था; दर्प तो वहां जैसे पैर रखते कांपता था।

सारा ही वातावरण वहां का श्वेत-शुभ्र दीखता था, जो ग्रामों, जनपदों और राष्ट्र पर छा गया था।

और, एक दिन वह अपनी असीम दिव्य साधना में ही देखते-देखते विलीन हो गया, उसके पद-पद में ऐसे तदाकार हो गया, जैसे वासुदेव विश्व के कण-कण में।

—एफ-१३/२ मॉडलटाउन दिल्ली-११०००९

और आखिर श्रीमतीजी के आग्रह पर मैंने वह डेढ़ कमरा किराये पर उठा दिया । इससे यद्यपि खानदान की रवायत टूट गयी लेकिन श्रीमतीजी ने नयी रवायत कायम कर दी । शादी के बाद खानदान की हैसियत पत्नी के मुकाबले पर सेकंडरी हो जाती है।

यह डेढ़ कमरा मेरी मुनासिब जरूरियात से ज्यादा था । ज्यादा से ज्यादा उसका उतना ही प्रयोग था कि मेरा बड़ा लड़का कभी-कभी उसमें घुस जाता और अपनी महबूबा के लव-लेटर पढ़ा करता ।

मेरे किरायेदार का नाम गजानंद था। यह नाम यद्यपि वड़ा नामाकूल था लेकिन चूंकि वह मिनिस्टर का सिफारशी पत्र लाया था इसलिए मजबूरन मैंने उनसे कहा, "गजानंदजी ! मिनिस्टर तो सिफारशी-पत्र लिखकर अपना सोशलिज्म का गुजारा कर लेते हैं, लेकिन आप किरायेदार बनकर क्यों गुजारा करना चाहते हैं ?"

उसने एक ठंडी सांस भरी, जो जानी-पहचानी थी और बोला, "जनाव, मुझे ज्योतिषी ने बताया है कि इस जन्म में तुम मालिक-मकान नहीं वन सकते । सिर्फ अगले जन्म में चांस है।"

गजानंद के लहजे में जो सादगी और सरलता थी, उसी के आधार पर मैंने पूछा, "भाई साहव ! आप इतने सज्जन और सभ्य क्यों हैं ?"

वह झट बोल उठा, "यह खानदानी विरासत है। मेरा कोई दोष नहीं जनाव !

अजीव वात है। कई मां-बाप विरसे में मकान छोड़ जाते हैं और कई केवल

• फिक्र तौंसवी
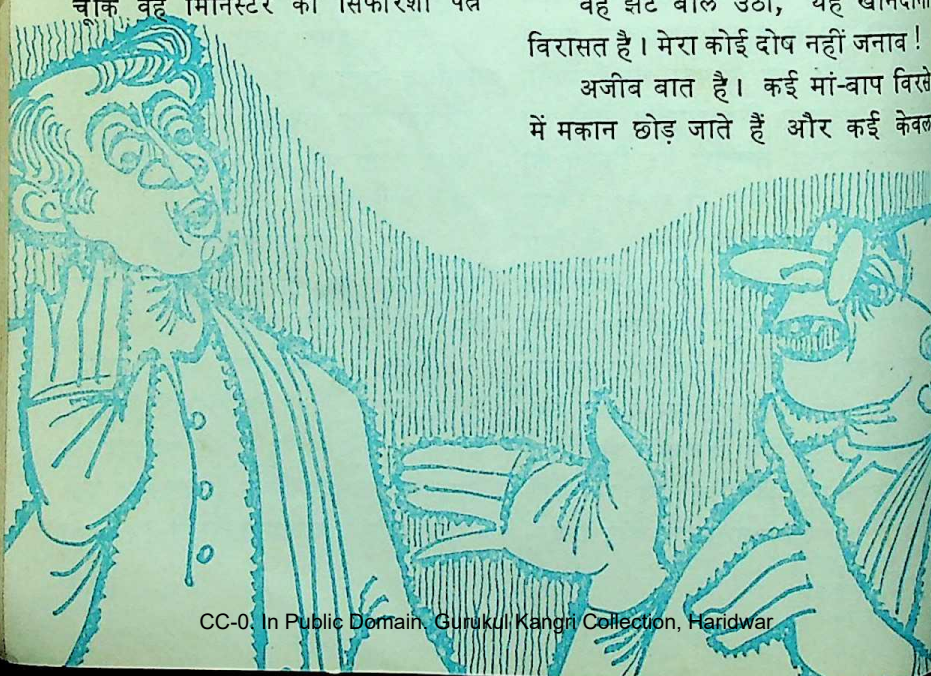
सज्जनता और शिष्टता! मैंने उसे समझाया, "गजानंदजी! वास्तव में कमरा तो एक ही है मगर मेरी पत्नी ने एक चिक लगाकर उसे डेढ़ कमरा बना रखा है ताकि ड्योढ़ा किराया ले सके और फिर शरीफों के लिए केवल एक कमरे में रहना जंचता भी नहीं।"

पर वह न माना। मजबूरन मैंने वह डेढ़ कमरा गजानंद के हवाले कर दिया।

एक दिन महल्ले के तीन-चार प्रतिष्ठित लोग तशरीफ लाये। मेरा मतलब है, लिबास से वे प्रतिष्ठित मालूम होते थे। एक ने कहा, "बधाई हो फिक्र साहब! आप अब मालिक मकान बन गये हैं!"

दूसरे ने स्पष्ट किया, "जब तक किरायेदार नहीं आया था, आप मालिक-मकान कहलाने के अधिकारी नहीं हुए थे।"

तीसरे ने एक फार्म मेरी तरफ बढ़ाते हुए कहा, "और अब आप हमारी 'महल्ला रंगपुरा मालिक मकान एसोसियेशन' के सम्मानित सदस्य बन गये।"

मैंने अपने ज्ञान में वृद्धि करने के आशय से पूछा, "इस एसोसियेशन के जन्म का कोई उचित या अनुचित उद्देश्य?"

वे बोले, "बात यह है जी कि ये किरायेदार लोग बड़े बदमाश होते हैं?"

"यानी कि मेरा किरायेदार भी बदमाश है?"

"नहीं है तो हो जाएगा। इसीलिए हम मालिक-मकान आपस में भाईचारा पैदा करना चाहते हैं और इसीलिए आज से आप हमारे भाई हैं।"

मेरा जी चाहा, उन्हें कह दूं किसी मंत्री की सिफारिश लाइए तब आपका भाई बनूंगा। लेकिन यह शर्त भोंडी मालूम हुई क्योंकि इसे प्रतिष्ठित लोग आसानी से पूरी कर सकते थे। आंखें बंद कर हस्ताक्षर कर दिये, हालांकि हस्ताक्षर करने के के बाद अपनी हरकत पर बहुत आश्चर्य हुआ। कुछ दिन पहले मैंने गजानंद को भी अपना भाई कहा था। अब मकान-मालिकों का भी भाई बन गया हूं। ये दो परस्पर विरोधी किस्म के भाई . . . ? लेकिन फिर सोचा, 'इस दुनिया के सभी इनसान भाई-भाई होते हैं।'

उसी शाम मैंने गजानंद से सूचनार्थ निवेदन कर दिया कि आज से आप भाई साहब नहीं हैं बल्कि किरायेदार हैं।

एसोसियेशन का (सम्मानित) सदस्य बन जाने से मेरी जिम्मेदारियां बढ़ गयी थीं। इसलिए मैं दिन-रात इस टोह में रहने लगा कि गजानंद के कमरे से कोई आवाज उठे और मैं छत फाड़ दूं। यहां तक कि उसके बच्चों के रोने की आवाज भी आये तो मैं ललकार उठूं, लेकिन ऐसी कोई आवाज शायद गजानंद के भाग्य में नहीं लिखी थी। एसोसियेशन के माननीय पदाधिकारी समय-असमय मेरे यहां 'विजिट' करते रहे और मुझे बताते रहे कि गजानंद से कौन-कौन-सी बदमाशियों की संभावनाएं हैं और उनकी रोकथाम के लिए थाने कब जाना चाहिए, गालियां कब देनी चाहिए। पालतू कुत्ते कब छोड़ने चाहिए और गुंडे बुलाकर उन्हें शराब कब और क्यों पिलानी चाहिए।

एक दिन एसोसियेशन के प्रेसीडेंट, जिनकी शक्ल बदसूरत और लिबास खूबसूरत था, तशरीफ लाये और जैसे मुझ से बड़ी सहानुभूति प्रकट करते हुए कहने लगे, "फिक्र साहब! एसोसियेशन के सदस्यों में आपकी प्रतिष्ठा कुछ कम हो रही है, बल्कि कई एक तो (माफ कीजिए) आपकी नीयत पर भी संदेह करने लगे हैं कि आपके कारण आपके किरायेदार के हौसले बुलंद हो गये हैं। और इसका असर उनके अपने किरायेदारों पर बुरा पड़ रहा है।"

मैंने निवेदन किया, "मगर प्रेसीडेंट साहब! इसे मेरी ट्रेजडी समझिए कि गजानंद सज्जन और सभ्य व्यक्ति है।"

वे बोले, "यह कभी हो ही नहीं सकता। किरायेदार सभ्य होते ही नहीं।"

"लेकिन वह कोई असभ्य हरकत नहीं करता।"

"कैसे नहीं करता? अच्छा बताइए गुसलखाने में जाकर गुनगुनाता है कि नहीं?"

"ऊं हूं!"

"बड़ा डल किरायेदार है। आप अपना किरायेदार बदल दीजिए। वरना सभी सदस्य आपका सोशल-बायकाट करने की सोच रहे हैं।" मैं इस धमकी को कोई चैलेंज देने-योग्य नहीं रहा था, इसलिए सोच-सोच कर मैंने गजानंद के विरुद्ध डायरेक्ट-एक्शन का निश्चय कर लिया। बाजार से गालियों की एक किताब ले आया

और सारी रात उसकी स्टडी करता रहा।

दूसरी सुबह मैं अपने नथुने (आदि) फुलाकर गजानंद के पास पहुंच गया और उससे बोला, "तुम सज्जन नहीं उल्लू हो!"

वह हैरान हुआ। जिससे मुझे खुशी हुई। मैंने उस उल्लू से पूछा, "यह खिड़की का शीशा किस उल्लू के पट्ठे ने तोड़ा?"

"आपके छोटे साहबजादे ने अनजाने में एक ढेला फेंक दिया।"

"तो नालायक, तुमने उसके बाप को गंदी गालियां क्यों नहीं दीं?"

"बच्चे सबके बराबर होते हैं।"

मैं दो, तीन दिनों तक देखता रहा कि शायद वह सही रास्ते पर आ जाए।

तीसरे दिन वह उलटा मुझे सीधे रास्ते पर ले आया और मेकेनिक को बुलाकर अपने पैसों से नया शीशा फिट करवा दिया ताकि मेरे तलुओं में आग लग जाये। जी चाहा अपने छोटे साहबजादे को सवा रुपया रिश्वत देकर कहूं कि इस नये शीशे को भी ढेला मारकर चकनाचूर कर दो लेकिन वह अवज्ञाकारी निकला। कहने लगा, "गजानंद मुझे अंगरेजी के लैसन इतनी अच्छी तरह और प्यार से पढ़ाता है कि अवज्ञाकारी बनना ज्यादा पसंद करूंगा।"

गोया यह एक षड्यंत्र था। वह बच्चे और बच्चे के बाप में फूट के बीज डाल रहा था। ऐसे आदमी को किरायेदार रखना अपने पांव, बल्कि अपने खानदान के पांव पर कुल्हाड़ी मारना था। सोच-सोचकर

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. आत्महत्या का अपराध। **२. तीन** फुट से अधिक ऊंचाई से गिराइए तो तीन फुट तक तो वह टूटेगा नहीं। बाकी अंडा जाने और गुरुत्वाकर्षण का नियम! **३. केवल** एक की क्योंकि वहां के वातावरण में भार घट जाता है। **४. कभी** नहीं क्योंकि पानी के साथ नाव भी चढ़ती जाएगी। **५. सिकंदर,** जन्म: मकदूनिया, मृत्यु: बेबीलोन, अंत्येष्टि: मिस्र। **६. प्रत्येक** डब्बे के गुजरने पर एक विशिष्ट ध्वनि पटरी पर होती है, अतः प्रत्येक डब्बे को गिना जा सकता है। **७.** १ जनवरी, १६०१ से। **८. नदी।** **९.** २०, ४०, ८०, १६०। **१०.** २१७८। **११. क्रमशः** रूस, चीन, अमरीका, फ्रांस। **१२. जब** फर्वरी में २९ दिन हों। **१३. बत्तख।** **१४.** ३ व ७। **१५. क्रमशः** ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना, प्लासी का युद्ध, बंगाल का अकाल, कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन, जालियांवाला-हत्याकांड। **१६. क्रमशः** न्याय, रेडक्रॉस, शांति, गतिशीलता और प्रगति। **१७.** ९६.५६८ मीटर। **१८. इन्फ्लुएंजा** के वाइरस का दो लाख गुना बड़ा चित्र।

मैंने उस षड्यंत्र का तोड़ ढूंढ़ लिया। दिल ही दिल मैंने उसकी गरदन पकड़ ली और जबान ही जबान से कहा, "अगले सप्ताह मेरे बड़े लड़के की शादी है इसलिए मेरा कमरा खाली कर दो।"

शादी का समाचार सुनते ही गजानंद ने कहा, "मैं अजीज रवींद्र की शादी की खुशी में हर कुरबानी देने के लिए तैयार हूं।"

अजीब बोदा आदमी है! उसे मकान खाली करने का दुख न था बल्कि मेरे बेटे के विवाह की खुशी थी। यानी अब मैं उसका सामान भी जबरदस्ती निकालकर नहीं फेंक सकता था। गुस्से में आकर मैं शाम को बालकनी पर खड़ा हो गया और सारी दुनिया और उस दुनिया को बनानेवाले भगवान तक को सुनाने के लिए ऊंची आवाज में कहने लगा, "सुनिए साहेबान! यह क्या बदमाशी है? मेरा किरायेदार मुझे घायल करने के लिए कल रात गुंडे ले आया। उन्हें शराब पिलायी, लेकिन मैं इस गुंडागर्दी से नहीं डरता। मैं उसकी हड्डियां चबा जाऊंगा क्योंकि सुपरिटेंडेंट पुलिस मेरी साली का बहनोई है और डिप्टी कमिश्नर मुझसे स्कूल में हिसाब के सवाल ठीक करवाता रहा है। हुं! मैं अपने लड़के की शादी पर इससे कमरा खाली करवा के रहूंगा।"

यह सुनकर एसोसियेशन के प्रेसीडेंट ने मेरे सम्मान में काकटेल पार्टी दी जिसे देखकर महल्ले के मुसटंडे किरायेदार बालकनी पर चढ़ आये और गरजने लगे, "कौन माई का लाल है, जो गजानंद से कमरा खाली करवा ले? जो हमसे टकराएगा, पाश-पाश हो जाएगा।"

मुझे इन मुसटंडों के साहस पर खुशी हुई। गोया अब झगड़ा बढ़ेगा और दोहरा मजा आएगा लेकिन गजानंद ने मेरे किये-कराये पर पानी फेर दिया और अपना सामान पैक करने लगा। यह मेरी स्पष्ट पराजय थी। मैं भागा-भागा उसके पास आया और उसका कंधा झिंझोड़कर बोला, "इस कमरे का किराया दोगुना कर दो और झक मारकर रहते रहो।"

वह चुप रहा। मनहूस के दिल में मेरा आदर अधिक था। मैंने उसके बाल बुरी तरह नोचे, "मुझे अंगूठा दिखा दो और कहो कि मैं एक छदाम न बढ़ाऊंगा।"

वह उसी तरह सामान बांधता रहा। अब मेरे धैर्य का पात्र लबालब हो गया और पात्र से अचानक एक बूंद टपकी, "गजानंद! मैंने झूठ कहा था कि तुमने गुंडे मंगवाये थे।"

"आप झूठ बोल ही नहीं सकते।"

"यह झूठ है कि मेरे लड़के की शादी है।"

"आप झूठ बोल ही नहीं सकते।"

और दूसरे ही क्षण वह मेरे हर झूठ को पांव तले रौंदता हुआ चला गया और मैं बेकरार होकर सीधा उस कमरे में दाखिल हुआ और अपने खानदानी दस्तावेज फाड़कर खिड़की से बाहर फेंकने लगा।

—दैनिक मिलाप, आसफअली रोड,
नयी दिल्ली-११०००१

पागी
यादवेंद्र शर्मा 'चंद्र'
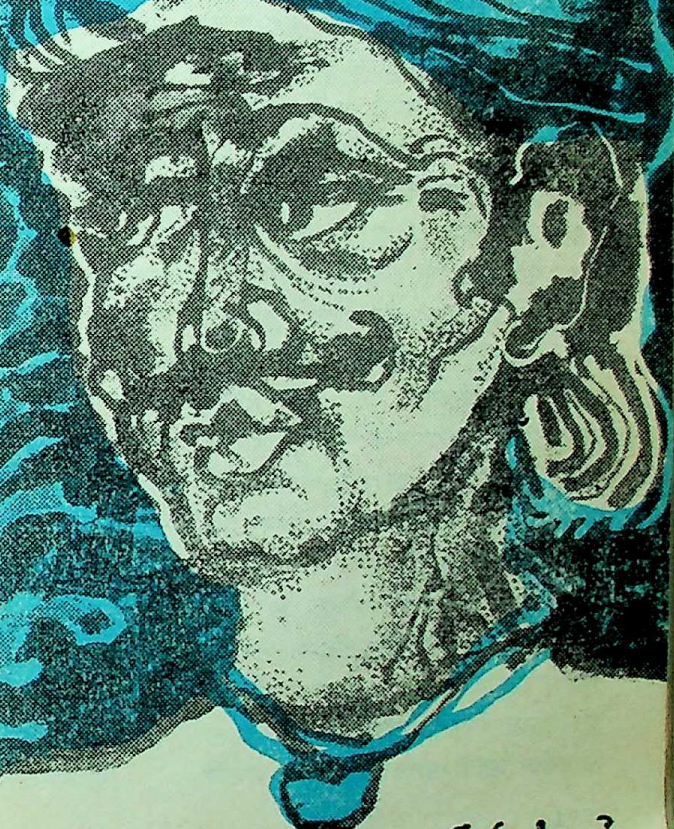
'सुगुन' चिड़िया को खेजड़े की डाल पर बोलते हुए देखकर अस्सी साल का बूढ़ा फरसा भीतर से उल्लसित हो गया, 'आज सुगुन अच्छे हैं। कोई पावण आएगा।' फिर उसने अपने नाक के दोनों छेदों के आगे अंगुलियां लेजाकर जोर-जोर की सांस ली। उसका विश्वास और गहरा हो गया। उसने मन ही मन सोचा, 'आज पावणा (अतिथि) जरूर आएगा।'

फरसा हरिजन था। सांसी! यह अपने ढंग की जाति होती है। प्रायः इनकी औरतें दिन भर मांगती फिरती हैं, मेहनत-मजूरी करती रहती हैं और मर्द दारू पीकर पड़े रहते हैं। लेकिन फरसा 'पागी' था। पागी यानी पांवों के निशानों के जरिए अपराधी को पकड़ने वाला खोजी। लेकिन इधर बीस-पच्चीस सालों से उसने अपना धंधा छोड़ दिया था और अपने खेत में ही शांत जीवन बिता रहा था। गरमी में वह नंगे बदन रहता था और सरदी में वह रुई की एक पूरी बांह-वाली फतुई पहनता था। हां, अपनी पत्नी, जिसे वह प्यार से 'डोकरी' कहता था, की मृत्यु के बाद उसकी आकृति खरगोश-जैसी कोमल-कोमल व्यथा से पुती रहती थी।

रात को उसकी झोपड़ी के आगे जब उसके हम-उम्र दोस्त चिलम पीने के लिए इकट्ठे होते थे तो वह अकसर अतीत की करुणा भरी परछाइयों से घिर जाता था और अपनी पत्नी के बारे में चर्चाएं किया करता था। कहता रहता था, "डोकरी सुभाव से भी घणी चोखी थी।"

पूरा एक जुग बीत गया है। उसकी अचानक मृत्यु आज भी उसे याद है। लगता है, मानो कल की बात हो।

पहली बरखा हो गयी थी। धोरों की रेत बरफ की तरह ठंडी-ठंडी लग रही थी। आकाश में छोटी-छोटी चितरियां (एक तरह का बादल) पसरी हुई थीं। क्षितिज को चूमता हुआ बादल का एक टुकड़ा उभर रहा था। डोकरी सिर माथे इंढाणी पर कड़ाई रखे हुए बस्ती की ओर से कुछ खरीददारी करके आ रही थी। तभी उसे सांप ने काट लिया था और वह मर गयी थी। फरसे ने कई दिनों तक अन्न नहीं खाया। सुबक-सुबक रोता रहता था।

उन दिनों फरसा पागी के रूप में बड़ा प्रसिद्ध हो गया था। आसपास के गांव में चोरी-चपाटी होने, गाय-भैंस चुरा लेने पर लोग भागे-भागे फरसा के पास आते थे और प्रार्थना करते थे। वह पांवों के निशानों को देखकर चोर का पता लगा लेता था। वह अपने काम में इतना माहिर हो गया था कि यदि पांव के अंगूठे का निशान भी मिल जाता तो वह आदमी को ढूंढ़ लेता था। पथरीली जमीन पर भी उसकी तेज निगाह पांव के चिह्नों को खोज लेती थी।

★

फरसा दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गया।

एक बार इस इलाके में एक अंग्रेज अफसर मिल्टन आया था। उसने जब फरसे के चमत्कार के बारे में सुना तब उसने उसकी एक कठोर परीक्षा ली। उसकी परीक्षा में फरसा खरा उतरा।

इस घटना के बाद पागी के रूप में फरसा 'सर्वश्रेष्ठ' कहलाने लगा लेकिन एक घटना के बाद फरसा को अपने काम के प्रति वितृष्णा भी पैदा हो गयी और उसने यह काम सदा-सदा के लिए त्याग दिया।

एक दिन साहूकार चंदन घबराया हुआ-सा आया। उसने गिड़गिड़ाते हुए अपने सिर की पगड़ी फरसा के पांवों में रख दी। विचलित स्वर में बोला, "फरसा। मेरी पगड़ी तेरे चरणों में है, मेरी लाज रख ले।"

"क्यूं क्या हुआ सेठ जी ?"

साहूकार ने चोर की तरह इधर-उधर देखा। सिर झुकाकर कहा, "मेरी मोटया (जवान) छोरी भाग गयी है। सागे तीन-चार हजार का जेवर भी ले गयी है।"

"किसके सागे ?"

"पतो नहीं।"

"रेल से तो नहीं गयी ?"

"नहीं।"

"आप कियां कह सको ?"

"मैं टेसण मास्टर को पूछ आया हूं।"

फरसा बीड़ी सुलगाकर सोचने लगा। फरसा की बहू तब जीवित थी। वह बाजरी के टिक्कड़ सेक रही थी। हंडिया में राब बनी हुई थी। खेजड़े पर कौवा कांव-कांव बोल रहा था।

फरसा ने साहूकार से कहा, "आप पधारो, मैं जीमकर आ रहा हूं।"

"देर मत करिए फरसा।"

"नहीं-नहीं। आप वहां पहुचेंगे तब

आत्म-कथ्य

अपने निरंतर यायावरी जीवन तथा लेखन में मुझे अजीबो-गरीब स्थितियों, संघर्षों और चरित्रों से वास्ता पड़ा और उनका मैंने अंकन किया। साहित्य और जीवन में मैं प्रतिबद्धता को स्वीकारता हूं। बिना प्रतिबद्धता के मुझे लेखन, फैशन लगता है और फैशन का कोई स्थायी मूल्य नहीं होता। जरूरत है आज के संकट से घिरे इनसान के संघर्ष को तेज करने की, भ्रष्ट राजनीति से आक्रांत मानवीय संवेदनाओं को उजागर करने की और उन चरित्रों के उद्घाटित करने की जो हमारे अपने हैं, जिनका अलग निजीपन है, जो कहीं-न-कहीं हमारे नये मूल्यों को बनाने में शरीक होते हैं। जन्म : १५ अगस्त १९३२, बीकानेर

तक मैं भी आ जाऊंगा।"

साहूकार चला गया। फरसा अब भी बीड़ी पी रहा था। आंगन में कमेड़ी कुछ दानों को चुन रही थी। एक खरगोश फुदकता हुआ आंगन में आकर बैठ गया। कमेड़ी फुर्र-से उड़ गयी।

डोकरी ने आकर कहा, "रोटी बन गयी है, जीम लो।"

फरसा जल्दी-जल्दी खाकर चल पड़ा। साहूकार उसकी प्रतीक्षा कर ही रहा था। फरसा ने उससे कई बातें पूछी। उसने साफ-साफ बताया। बीस रुपये देने को कहा।

फरसे ने अपने नंगे बदन पर गमछा डाला। वह पावों के निशानों के सहारे चल पड़ा। उसकी बगल में पानी की एक 'लोटड़ी' लटक रही थी। गमछे के किनारे तंबाकू, बीड़ी के तीन बंडल और एक माचिस बंधी हुई थी। पगड़ी में चिलम

लटक रही थी। घर से तालाब की 'पाल'। पाल से रिंदरोई (वीराना) की पगडंडी। पगडंडी एक ढांणी के पास आकर खत्म हो गयी थी। वहां उसने जांच - पड़ताल की। एक नीम की छाया के तले बैठकर पसीना पोंछा। कानों की सोने की मुरकियों को छुआ। पानी पिया। ढाणीवाले से लोटड़ी में पानी भरवाकर आगे चल पड़ा। वहां उसे इस बात का पता लग गया था कि यहां एक छोरे-छोरी ने तेज भागने-

वाली एक सांडणी किराये पर की थी। वह फिर तेजी से बढ़ने लगा। बीच में नदी पड़ रही थी। नदी के ऊपर छोटा पुल था। उस पुल के पास ही एक और गांव पड़ता था। वह उस गांव में घुस गया। उसने बड़ी चतुराई से उस घर का पता लगा लिया जिसमें वे दोनों छुपे हुए थे।

फरसा उसी पग साहूकार के पास

लौट आया। उसे सारी स्थिति बता दी। साहूकार ने तुरंत ही अपना ऊंट लिया। थानेदार को सारी स्थिति बतायी। उसकी जेब गर्म की। राजाओं के राज्य में पुलिस का जबरदस्त आतंक होता था। दोनों ऊंट पर सवार होकर रात के अंधेरे में ही उस गांव पहुंच गये। सुबह होते ही छोरा-छोरी गिरफ्तार! साहूकार ने छोरी की वहीं पर पिटाई की और छोरे को चोरी के अपराध में पकड़वा दिया गया।

उस पर मामला चला। फरसा को अच्छी तरह याद है कि साहूकार ने पैसों के बल पर उस छोरे को (जो उसी की जाति का था) बलात्कार और चोरी के अपराध में फंसाकर पांच साल की कड़ी सजा दिला दी।

फरसा को मालूम है कि झूठ का एक जबरदस्त जाल फैलाया गया था। यह कानून भी कितना अंधा है? कुछ भी नहीं देखता है। सब कुछ सुनता है। सुनते-सुनते सच में कितना अंतर आ जाता है।

छोरा जेल चला गया। फरसा का मन न जाने क्यों, पानी में पत्थर डूबता है, उसी तरह दु:ख और उदासी में डूब गया।

डोकरी ने पूछा भी था, "आज आपरो मूंड बहुत उतरियोडो है?"

फरसा ने चिलम में तम्बाकू भरी। उसका दम मारकर कहा, "इन दोनों छोरे छोरी को पकड़ाकर मैंने चोखो काम नहीं किया। दोनों जने राजी-खुशी भागे थे और कितने झूठे चक्कर चलाकर बेचारे को फांस दिया गया है। मन में ग्लानि होने लगी है।"

डोकरी ने थोड़ा आश्चर्य से कहा, "मुझे तो अचंभा होता है कि बड़े घर की छोरी भाग कियां गयी?" फरसे ने डोकरी को किंचित प्रेमभरी दृष्टि से देखा। उसकी ठोड़ी को पकड़कर मुसकराया। बोला, "मरवण! यह दिल की लाग ऐसी ही होती है। तू अचंभो करेगी। उस छोरे ने अपनी सफाई में एक शब्द भी नहीं कहा। सारा दोष अपने पर ले लिया। बस इत्ता ही कहता रहा, 'मैंने इस छोरी को भगाया है, गुमराह किया है, मैंने इसकी मर्जी के बिना सब कुछ किया। प्रेम के नाम पर ठगा। सिर्फ जबरजन्ना (बलात्कार) नहीं की।'—कितना दिलेर छोरा है। सच्चा प्रेम जो करता है।"

फरसा को दूर से एक छोरी आती हुई दिखायी दी। उसने ध्यान से देखा। डोकरी से बोला, "कुण आ रही है?"

"कोई आती होगी?"

थोड़ी देर में आकृति स्पष्ट हो गयी। चोखी छींट का लहकता हुआ लहंगा, कांचली और ओढ़णी। चेहरा मुर्दा-मुर्दा। उसकी हवा उड़ी-उड़ी-सी। फरसा पहचान गया। साहूकार की बेटी थी यह। वह ललाट में बल डालकर देखने लगा। छोरी की आंखें रोते-रोते सूज गयी थीं।

"क्यूं छोरी, कियां आयी?"

"तेरा सायपा करने।"

डोकरी दांत पीसकर बीच में ही बोली,

"सायपो डाल तू अपने मां-बाप को । मेरे धणी ने तेरा क्या बिगाड़ा है ?"

"इसने मेरी जिनगी बिगाड़ डाली है । तू नहीं समझेगी डोकरी कि तेरे धणी (पति) ने कितना बड़ा पाप किया है । एक अच्छे भले लड़के को जेल में बंद करा दिया और मुझे कहीं का नहीं रखा । मैं तो गली-गली और गुवाड़-गुवाड़ बदनाम हो गयी हूं । लोग मुझे देखकर ऐसे खुसर-फुसर करते हैं कि मैं लज्जा और एक अजीब से डर से थर-थर धूजने लगती हूं । अब मुझसे कौन भला लड़का ब्याह करेगा ? अरे ! यदि तू बीस रुपयों के बदले दो दिलों के महल-मालियों को नहीं तोड़ता तो क्या भूखा मर जाता ? ऐसा तो 'काल' तेरे घर में नहीं आया था ? तुझे भगवान ने खोजी और पागी चोर-उचक्कों को पकड़ने के लिए बनाया है, प्रेम करने वालों को पकड़ने के लिए नहीं ! इन रुपयों से तेरी सदा की भूख तो नहीं भागती ?" वह न जाने क्या-क्या अलाप करती रही । आरोप लगाती रही । कितनी ही बार वह फूट-फूट कर रोयी । अपने हृदय में उबलते दुखों को उगला । आंसुओं को पिया । फरसा को उसने अपनी पीड़ा से घेर दिया ।

जब वह छोरी चली गयी तब वह डोकरी को बार-बार यही कहता रहा कि उसके हाथ से पाप हो गया है । अनिष्ट हो गया है । भगवान छोरी का संकट दूर करें ।

लेकिन दूसरे दिन ही बावरी परमा ने आकर कहा, "फरसा, आज तो गजब हो गया । साऊकार की बेटी ने कूवे में कूदकर जान दे दी ।"

फरसा का खून बर्फ की तरह जम गया । शरीर में एक अकड़ाव आ गया । लगा, जैसे 'बांवलिये' और 'भुरुट' के कांटे उसके तमाम शरीर में चुभ रहे हैं, चिपक रहे हैं । वह एक जगह से भुरुट के कांटे हटाता है तो वे दूसरी जगह चिपक जाते हैं । वह चुप-चाप दंश-पीड़ा सहता रहा । सिर पर पगड़ी रखकर चल पड़ा । डोकरी में भी पत्थर-जैसी जड़ता आ गयी थी । वह चुप-चाप कूवे पर पहुंचा ।

कुरजां पखेरुओं का विलाप था वहां । छोरी की मां सिर पटककर दहाड़ मारकर रो रही थी । बाप जिसने मेहनत और फुर्ती से इस कांड को एक झूठा नया मोड़ दे दिया था, अब विमूढ़ता से जकड़ गया था ।

फरसा की इच्छा हुई कि वह लौट जाये । कहीं यह भीड़ उसे हत्यारा समझकर पीट न दे । पर उस लाश को देखने के तीव्र सम्मोह में वह जकड़ा रहा । आखिर वह लाश के पास पहुंच गया ।

लाश भीगी हुई थी । खून के छोटे-बड़े चगदें कपड़ों पर चमक रहे थे । ललाट बताशे की तरह पिस गया था । नाक और दायां कान कट से गये थे । शेष शरीर ढंका था अतः और कहां चोट लगी है वह नहीं देख पाया । आंखें फटी हुई थीं । उसकी मां ने रोते-रोते उसका हाथ ऊंचा किया । हाथ उठकर इस तरह गिरा मानो

वह फरसा की ओर संकेत कर रहा है। उसे ऐसा भी महसूस हुआ कि वह ठंडा-ठंडा हाथ उसकी गर्दन पर है और उसकी फटी हुई आंखें कह रही हैं, 'तू मेरा हत्यारा है, तू मेरा हत्यारा है!'

वह पसीने से लथपथ हो गया। उसके गरदन की जकड़ संडासी-सी कड़ी हो गयी। वह आतंकित-सा लौट आया। डोकरी ने उसे इतना घबराया हुआ कभी नहीं देखा था।

उसके बाद फरसा कई दिनों तक न अच्छी तरह सो सका और न खा सका। वह कहता रहता था, "मेरे हुनर ने बेचारी की जान ले ली।" इसके बाद उसने एक दिन निर्णय कर लिया कि वह अब 'पागी' बनकर नहीं जीएगा। अपना पेशा छोड़कर वह खेती से ही जीवन गुजारेगा। समय बीतता गया। फरसा फिर कभी भी किसी को खोजने नहीं गया।

फिर जीवली उसके जीवन में आ गयी। वह भी सांसन थी। वह भी विवाह के बाद अपने प्रेमी के साथ भाग गयी थी पर फरसा ने उसे नहीं खोजा। अब जीवली अपने नये पति के साथ नये जीवन में जम गयी थी। फरसा को बाबा कहती थी।

अनेक वर्ष बीत गये। देश आजाद हो गया। उजाड़ व रेतीला भू-भाग नहर के आने से हरा-भरा हो गया। सब कुछ तेजी से बदला। रंग-ढंग, मूल्य और वातावरण। समृद्धि से इस इलाके में अनैतिकता फैली। चोरियां बढ़ीं पर फरसा ने किसी भी लालच में आकर अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ी। शांति और ठहराव था उसके जीवन में।
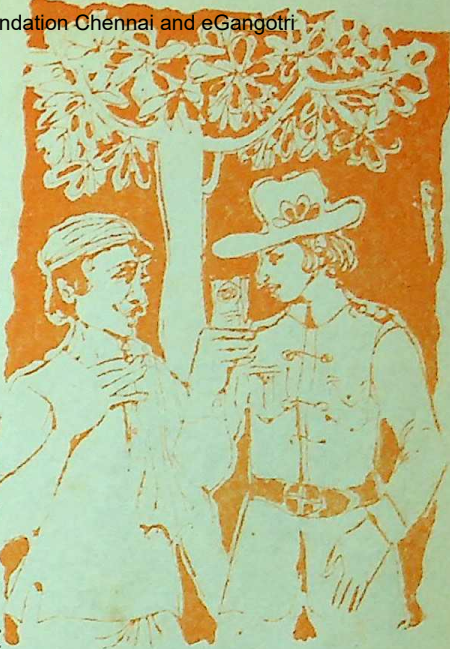
सुगुन चिड़िया ने फिर उसके ध्यान को भंग किया। तभी कौवा कांव-कांव बोल पड़ा। उसके मन में आशा का संचरण हुआ— 'जरूर कोई आएगा।' उसने पगडंडी की ओर देखा। पगडंडी सूनी-सपाट थी। एकदम अकेली, उसके जीवन की तरह। वह टूटकर बैठ गया।

—साले की होली, बीकानेर

रमेश : "मैं अपने घर का मालिक हूं, घर में सिर्फ मेरा ही हुक्म चलता है।"
कमल : "क्यों, भाभी क्या मायके गयी हैं?"

अस्तित्व-बोध

अस्तित्वों के शीश-महल में
निज के सौ-सौ रूप
देख-देख हैरान रहे हम
ज्यों लहरों पर धूप

किस दर्पण से पूछें अपनी
सही-सही पहचान
सबके-सब कर रहे गुजारा
बेच-बेच ईमान

परिभाषाएं उतर गयी हैं
अनुमानों के कूप
देख-देख हैरान रहे हम
ज्यों लहरों पर धूप

आपाधापी के कोहरे में
दबी पड़ी है भोर
सूरज की भस्मी की पर्तें
झीलों पर हर ओर

बूढ़ा चांद गवाही देता
तिमिरों के अनुरूप
देख-देख हैरान रहे हम
ज्यों लहरों पर धूप

शब्दों पर कुंठा का पहरा
बिठा गया संत्रास
बदचलनी ईमान ओढ़कर
रचा रही है रास

दर्दों की तकदीर बांचते
जुल्मों के अवधूत
देख-देख हैरान रहे हम
ज्यों लहरों पर धूप

हमको शायद वहम हो गया
यह निज का आभास
हम परिचय के लिए उठाये
फिरते अपनी लाश

द्वार-द्वार भरमाता हमको
अरे हमारा भूत
देख-देख हैरान रहे हम
ज्यों लहरों पर धूप

—बलवीरसिंह 'करुण'

—हरसौली, अलवर
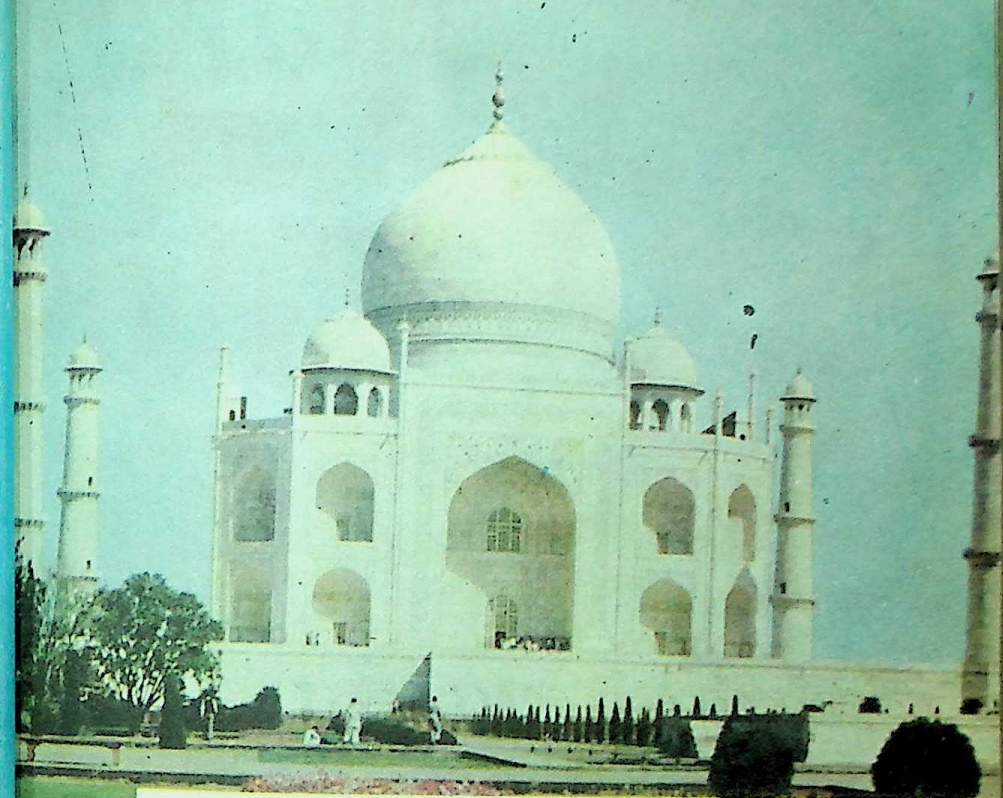
स्मारक

याद है
ताजमहल
पहली बार तुझे देखा था
कितना चौंकी थी मैं
सातवां आश्चर्य देखकर, चकित हुई
रोऊं, बात ऐसी न थी
शिल्प का सौंदर्य अभिभूत कर रहा है
ऐसा भी नहीं था
दुनिया अद्‌भुत कहती है
मैं भी कहूं
ऐसी बाध्यता भी मेरे साथ नहीं
तब भी
ठगी-ठगी देखती रही
एक साम्य
अपने-तुम्हारे बीच
मुझमें संगमरमरी जड़ता नहीं है
न है दीर्घ-कटु रचना-इतिहास
तू है
'काल के कपोल पर एक बूंद आंसू'
साम्य वहां भी नहीं है
लेकिन
तेरे और मेरे अंतस में
समान रूप से दफनाई हुई है एक प्रेयसी

—सुधा

बिहार शिक्षा सेवा, मुंगेर

बैंकाक में एक यायाव

शंकरदयाल सिं
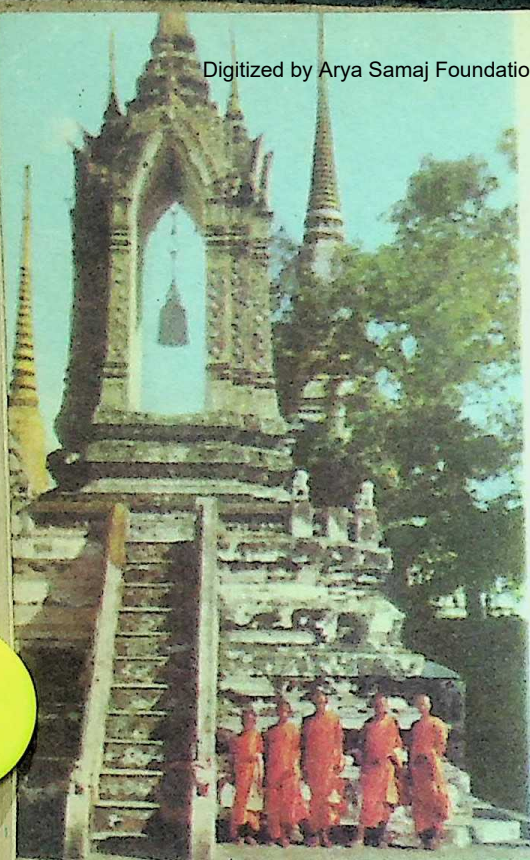
◀ वाट फो, बैंकाक में बड़ा घंट

शाही नौका, बैंकाक ▼
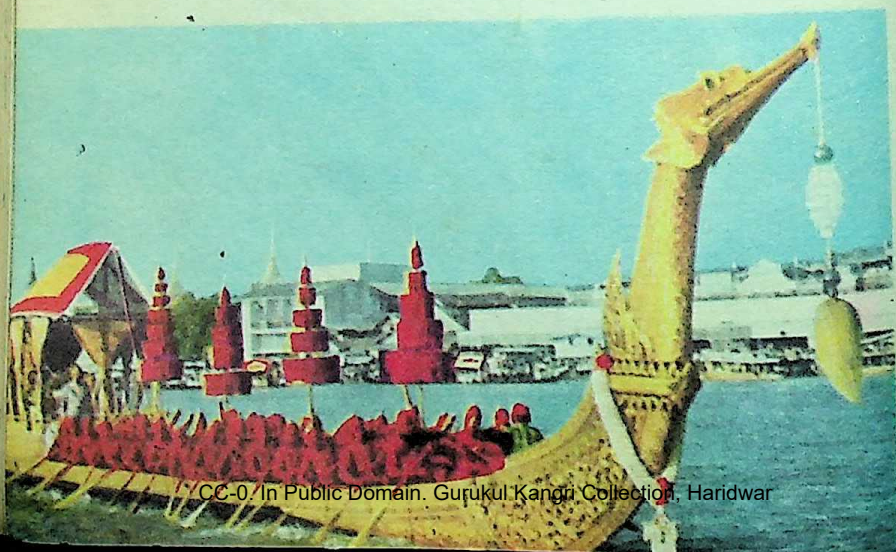
आखिर आग की शोला भयानक ज्वाला-मुखी बनकर फूट पड़ा और थाईलैंड की राजधानी बैंकाक में उग्र और हिंसात्मक प्रदर्शन, सेना और छात्रों की घमासान लड़ाई, प्रधानमंत्री फील्ड मार्शल कित्तिकाचूर्ण का बहिर्गमन, और उनके स्थान पर थम्मासत विश्वविद्यालय के रेक्टर डॉ. साम्या थामासाक की नियुक्ति—ये सारी घटनाएं इतनी शीघ्रता के साथ घटीं कि राजनीति के अध्येताओं और चितकों को कुछ भी सोचने समझने का मौका नहीं

बैंकाक के एक हिंदू मंदिर में महादेवजी की प्रतिमा

बैंकाक की सड़कों पर युवक-युवतियों के झुंड

मिला। लेकिन मेरी आंखों के सामने कई बातें साफ थीं, कारण कुछ ही दिनों पहले मैं अपने दक्षिण पूर्व एशिया के दौरे में थाईलैंड की राजधानी बैंकाक में चार दिनों तक रुका था और जो कुछ मैंने देखा-सुना था, उसने मुझे इतिहास की सच्चाई की ओर अधिक आकृष्ट किया।

मैं अपनी बातें ज्यों का त्यों प्रस्तुत कर रहा हूं डायरी के उन पन्नों के रूप में जो मैंने उस क्रम में संजोकर रखी थी। हां, यह सही है कि मैं उस दिन यह नहीं जानता था कि थाईलैंड की अशांति का रूप इतनी जल्दी इतना भयानक हो जाएगा।

१४ जून १९७३

बैंकाक पास आ गया। मन उड़ रहा है, आंखें फड़क रही हैं, दिल में गुदगुदी हो रही है। बादल आंखमिचौनी खेल रहे हैं। नीचे खेतों में हरियाली है। पानी ही पानी नजर आ रहा है। कई नदियां, कई नहरें, जहाज से दिखायी दे रही हैं। अतिरिक्त धानी जंगल। शस्य-श्यामला भूमि। तभी तो इसका नाम था—श्याम और लोगों ने बदलकर इसे कर दिया—थाईलैंड यानी 'स्वतंत्र लोगों का देश'। खेतों में गजब की मोह लेनेवाली खूबसूरती है।

भारत और थाईलैंड की घड़ियों में दो घंटों का अंतर है। जहाज से उतरते ही पाता हूं—भारतीय राजदूतावास के सदस्य और एयर इंडिया के लोग हाजिर हैं। वी. आई. पी. लाउंज में चाय पर बातें शुरू होती हैं। पता चलता है कि कुछ दिनों पहले यहां छात्रों ने बहुत बड़ा प्रदर्शन किया था। इस शांत देश में इतना बड़ा प्रदर्शन इससे पहले कभी नहीं हुआ था। मैं कारण जानना चाहता हूं, तो अधिकारीगण बताते हैं—

क. प्रधानमंत्री के बेटे ने उप-प्रधानमंत्री की बेटी से शादी की है और दोनों परिवारों के बीच में सत्ता के केंद्रीयकरण को लेकर रोष है।

ख. प्रधानमंत्री ने उप-प्रधानमंत्री को फील्डमार्शल भी बना दिया है।

ग. इन घटनाओं को लेकर नगर में एक व्यंग्यात्मक परचा निकाला गया था जिस पर शासन की ओर से कड़ी कार्रवाई की गयी और ६ छात्रों को विश्वविद्यालय से निष्काषित कर दिया गया।

घ. प्रधानमंत्री को तीसरी बार 'एक्सटेंशन' दिया गया है।

यही है इस समय श्याम की कहानी!

१३ जुलाई, १९७३

बैंकाक-थाईलैंड की राजधानी! जहां-जहां अमरीकी डालर जाएगा, वहां का जनजीवन भ्रष्ट हो जाएगा। सभ्यता नष्ट हो जाएगी। मर्यादाएं भंग हो जाएंगी और महंगाई बढ़ जाएगी। यहां भी यही है। शासन का अधिकारी मिलिट्रीजन्य है और उसकी कुंजी अमरीकी लोगों के हाथ में है। इसीलिए तो यहां अमरीका का बहुत बड़ा सैन्य भंडार है तथा कम्बोडिया, वियतनाम, लाओस—कई जगहों पर जो भी हलचलें होती हैं, उन्हें यहां से संचालित किया जाता है।

हर राजधानी की एक ही कहानी है: बड़े-बड़े मकान और सड़कों पर गाड़ियों का अनवरत प्रवाह। यहां भी वही है। पता नहीं, गाड़ियां अधिक हैं या सड़कें कम चौड़ी हैं, या ट्रैफिक की गलती है कि एक स्थान से दूसरे स्थान में जाने में घंटों लग जाते हैं। रह-रहकर ट्रैफिक जाम हो जाता है।

बुद्ध नगरी है यह! मंदिर की भित्तियों पर रामायण की कथाएं चित्रित हैं—राम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान, बालि, त्रिजटा, रावण—सबों की गाथाएं। राम को 'लामा' कहते हैं और रामायण को 'लामायना'। भाषा में पाली और संस्कृत के शब्दों की भरमार है। अनेक सड़कों, होटलों और भवनों के नाम राम पर। मैं भी राम होटल में ही ठहरनेवाला था, परंतु काफी महंगा होने की वजह से उसमें नहीं ठहर सका।

दिन को तीनों सुप्रसिद्ध बौद्ध-मंदिरों का दर्शन किया और रात में यहां के सुप्रसिद्ध लोकनृत्य की झांकी लेने एक सांस्कृतिक नृत्य-गृह में गया। लोक-नृत्य के समय

में जो भाव उठा था, उसे वहीं कैंडल के धुंधले प्रकाश में मैंने लिख लिया—

'मांदर की परिचित झंकार और वैसे ही लोग। थाई-श्याम ! जो कृष्ण का रंग था, शायद इसीलिए यहां के लोग श्याम-वर्णी हैं। जीवन को जहां झंकार मिले, रूप-रस-गंध की जहां त्रिवेणी हो, वहां कला का रूप अपने आप सत्यं-शिवं-सुंदरं का हो जाता है। छवि को आकार, जीवन को चेतना, सौंदर्य को अभिव्यक्ति, मरण को मुक्ति, थपथपाहट को प्यार और आंखों को मादकता—जहां मिल जाये, वहीं इंद्र की अलकापुरी बस जाती है।

'मैं डूब जाना चाहता हूं कला के इस मादक और मोहक संसार में, जहां जीवन को अभिव्यक्तियां मिलती हैं और जहां सरगम की ताल पर हृदयवीन अपने आप बज उठती है।

'सामने से बेले की परिचित और मादक गंध आ रही है। हर मेज पर कैंडल की मद्धम रोशनी वातावरण को रूमानी बनाने के लिए काफी है। कोरिया और जापान का मिला-जुला सौंदर्य तथा भारत और चीन की मिली-जुली संस्कृति।

'बेले की कली की गंध, बांस की खपच्चियों और मांदर की सम्मिलित राग-

ऊपर से नीचे : बैंकाक का एक सुप्रसिद्ध बौद्ध मंदिर, एक प्रसिद्ध रामा होटल, हिंदू-मंदिर, तथा डिपार्टमेंटल स्टोर का आंतरिक भाग
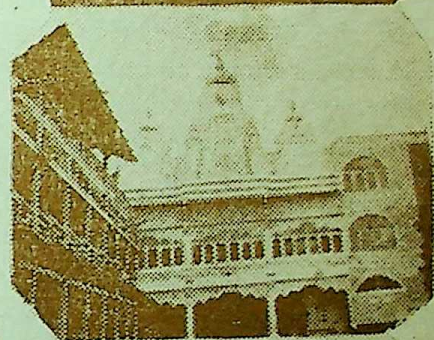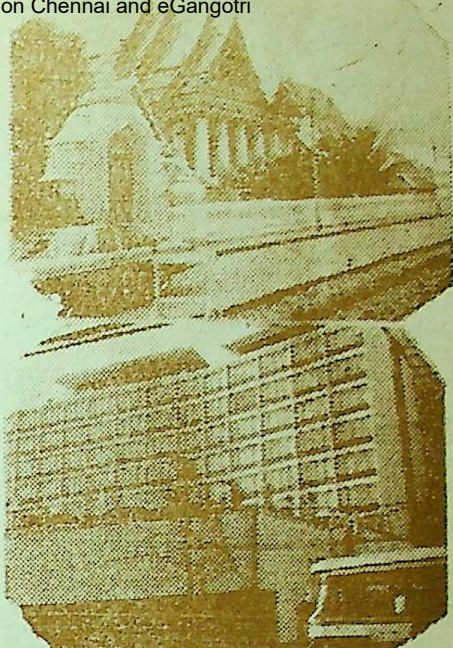
ध्वनि, शहनाई का फटा हुआ स्वर, झाल की झंकार, बांसुरी का मोहक राग——सब मिलकर जिस राग की सृष्टि करते हैं, शायद वह आर्केस्ट्रा में संभव नहीं है।

'नृत्य बैले के समान है, जिसमें कोई न कोई कथा संपृक्त है। रसों का बोध, हाव-भाव, अंग-संचालन, बोल——सब भारत के समान। अलंकार, वस्त्र, मुकुट, मेखला, अंगुलियों का जोड़, कमर की लोच, आंखों का नर्तन——सबमें भरतनाट्यम और मणिपुरी का भाव-बोध है।'

१४ जुलाई १९७३

पूरा दिन मटरगश्ती करता रहा। बहुत कुछ देखा और बहुत कुछ समझा। लोग कहते थे कि बैंकाक सस्ता है, लेकिन यहां का 'बाट' तो और भी महंगा लगता है! हमारे एक भारतीय रुपये का पौने तीन बाट है।

यहां के पुरुष काहिल हैं, परंतु जीवन व्यस्त है। हर थाईवासी को कम-से-कम दो महीने के लिए भिक्षु होना अनिवार्य होता है तथा हर नवजवान को कम से कम दो वर्षों तक फौज में रहना आवश्यक होता है। इसीलिए बैंकाक की सड़कों पर बौद्ध-भिक्षुओं और थाई-सैनिकों की पांतें अक्स दिखायी दे जाती हैं।

मैं आज थाई-भारत मैत्री केंद्र देखने गया, जिसमें संस्कृत और हिंदी पढ़ाने की व्यवस्था है, लॉज है, मंदिर है, धर्मशाला है, पुस्तकालय और वाचनालय है तथा थाई भाषा में 'थाई-भारत' नाम का एक द्वै-मासिक पत्र भी निकलता है। भारतीय विद्वानों और संतों-योगियों आदि के प्रव चन की भी व्यवस्था है। काफी साफ सुथरी जगह है, साथ ही व्यवस्थित भी।

यहां बाजारों में जेवरों की दूकानें बहुत हैं, उसके बाद कपड़ों की और लकड़ी की और उसके बाद शस्त्रों की। यह देख कर मैं हैरान रह गया कि बैंकाक की एक सड़क के दोनों ओर बंदूक-पिस्तौल और रिवाल्वर की कम से कम सौ-सवा सौ दूकानें। पिस्तौल और रिवाल्वर ऐसे जैसे खिलौने हों तथा बंदूकें! वे तो ऐसी जैसे लाठियां हों।

हांगकांग में आर्म्स की केवल एक दूकान है, सिंगापुर में तीन और मनीला में मार्शल ला ने इन सबों की दूकानें बंद करवा दीं, लेकिन यहां के फौजी शास

"निर्णय कर लें कि पहले आप लोग हड़ताल पर जाएंगे या हम ?"

में भी इस प्रकार की छूट मेरे लिए आश्चर्य की बात है।

मैंने दोपहर में होटल बदल लिया। वह होटल बड़ा था, परंतु बड़े कमरे बिलकुल मुर्दा लगते थे। जिस नये होटल में आया, उसके कमरे छोटे-छोटे लेकिन जीवंत हैं।

आज मैंने यहां कई चीजें खरीदीं, जिनमें यहां की दो पेंटिंग्स भी हैं। मैं तो चित्रों की इस दूकान में दर्शक के रूप में गया था, परंतु बेचनेवाली लड़की ने दर्शक से मुझे ग्राहक बना दिया और मैं उसके जाल में फंस गया।

स्वच्छंदता का वातावरण यहां भी मनीला के ही समान है। टूरिस्टों में अमरीकी लोगों की संख्या काफी है और वे डालर पानी के समान बहाते हैं पर हम भारतीयों के लिए हर कदम फूंक-फूंककर धरना पड़ता है। फल यहां सस्ता है, इसलिए आज मैं फलाहारी हो गया।

१५ जुलाई १९७३

भगवान बुद्ध यहां हर जगह हैं। बनारस की गलियों की याद आती है, जहां कदम-कदम पर महादेव हैं। उसी प्रकार बैंकाक में हर सड़क, हर गली, हर मुहल्ला बुद्ध की प्रतिमाओं और मठों से आच्छादित है। बैठे, सोये, खड़े, कई आसनों और कई मुद्राओं में बुद्ध सहज और सुलभ हैं। बौद्ध देश की पूरी मर्यादा यहां है तथा भिक्षुओं के प्रति साधारण जन में श्रद्धा और प्रेम है।

यहां के बौद्ध धर्मावलंबी राजा भूमिपाल की भी जनता में काफी प्रतिष्ठा है, लेकिन कुछ लोगों का यह भी कहना है कि राजा भूमिपाल प्रधानमंत्री और उप-प्रधानमंत्री के शिकंजे में हैं।

यहां बुद्ध की मूर्तियों में पीली मूर्तियां ही अधिक हैं। बौद्ध-भिक्षुओं के शरीर पर भी पीत-वस्त्र हैं। राजधर्म होने की वजह से शासन की ओर से भी धर्म के लिए पर्याप्त व्यवस्था है।

प्रातः से ही बैंकाक का जनजीवन प्रारंभ हो जाता है। बौद्ध-भिक्षुओं का सड़कों पर घूमना, भक्तों द्वारा उन्हें खाने का सामान दिया जाना, हजारों साल पहले के इतिहास को मेरी आंखों के सामने लाकर खड़ा कर देता है, तब मुझे 'भिक्षाम् देहि' की याद आती है तथा 'बुद्धं शरणं गच्छामि:, संघं शरणं गच्छामि:, धम्मं शरणं गच्छामि' की अनुगूंज भी सुनायी दे जाती है।

—संसद सदस्य, ४३, मीनाबाग, नयी दिल्ली

किसी भी राजनेता के एक भाषण के चार रूप होते हैं। उनके मन में भाषण संबंधी कुछ विचार होते हैं, पर उनका सचिव जो लिखित भाषण तैयार करता है वह और होता है। राजनेता जब भाषण करता है तब वह लिखित भाषण से अलग होता है और जब वह समाचारपत्रों में छपता है तो उसका और रूप होता है।

महान शोक के उपलक्ष्य में

● दीप्ति खंडेलवाल

वे हमारे एक माननीय मंत्री थे। उनका जीवन महान रहा था, इतना महान कि उनकी मृत्यु भी महान होगी, यह हम जानते थे।

और वे तीन सप्ताह से मृत्यु से संघर्ष कर रहे थे। दैनिक समाचारपत्रों में उनके संघर्ष का विवरण रहता कि वे कितनी बार कराहे, कितनी बार करवटें बदलीं और कितनी बार पलकें झपकायीं। विवरण यह भी रहता कि देश के कौन-कौन-से स्वनामधन्य डॉक्टर उन्हें अटेंड करने का सौभाग्य प्राप्त कर रहे हैं। हम हर सुबह बगैर चाय पिये इन विवरणों को पढ़ते और निराश हो जाते कि पता नहीं संघर्ष कब तक चलेगा, पता नहीं बेचारे कब तक कष्ट भोगेंगे! कहीं अच्छे न हो जाएं!

तीन रविवारों से रविवार के दिन हम मनाते कि वे रविवार के दिन न जाएं। ऐसी महान हस्तियों को दिवंगत होने के लिए रविवार अच्छा दिन नहीं होता . . हम कह चुके हैं कि उनका जीवन इतना महान था कि उनकी मृत्यु भी महान . . . अर्थात सभी लोगों को एक पूरे दिन की छुट्टी अवश्य मिलेगी।

आप यह न समझें कि हम शोक मनाना नहीं जानते। जब गांधीजी को गोली लगी थी तो हमें लगा था, जैसे हमें ही गोली लगी हो . . . हमसे, सच में, न खाया गया था और न हम सो पाये थे। हमारी आंखों में, सच में, आंसू भी आये थे। लेकिन गांधीजी के पद चिह्नों पर चलने का दावा करनेवाले उनके ये उत्तराधिकारी कुछ इस तरह चलते हैं कि हम जब-तब दांत पीसकर उन्हें 'रंगे सियार' की उपाधि से विभूषित करते रहते हैं। जब सब कुछ ही नकली हो तो आंखों में भी नकली आंसू ही आएंगे न!

खैर! अब देखिए, आज का आदमी बेचारा सप्ताह में छह दिन काम करता है, केवल एक दिन आराम! आराम का वह एक दिन भी इतने कामों से लदा होता है कि बस। रविवार के दिन बीवी कहेगी, "चलिएजी, जरा ये कर दीजिए, वो कर दीजिए! रोज तो आप रहते ही नहीं, मैं अकेली मरती रहती हूं।" बच्चे कहेंगे "पापा प्लीज, ज़रा होम वर्क करवा दीजिए

नहीं तो हम छह दिन तक पिटते रहेंगे !' नौकरानी तक सोच लेती है कि रविवार के दिन तो मालकिन की डांट खाने के लिए मालिक रहते हैं, मैं भी एक दिन की छुट्टी मना लूं। दोस्त सोचते हैं--आज रविवार है, क्यों न फलाने के घर पिकनिक मनायी जाए !' अतः होता यह है कि रविवार की छुट्टी कसर निकलते-निकलते बीत जाती है और प्रायः कचूमर निकल जाता है।

अब यदि कभी रविवार के अलावा कोई 'सरप्राइज' छुट्टी मिल जाए तो कैसा रहे ! बस ऐसा लगे जैसे अंधे के हाथ बटेर लग जाने पर अंधे को लगता होगा ! 'तो कब लगेगी बटेर हमारे हाथ'—हम रोज यह सोचते थे !

मनुष्य एक सम्वेदनशील प्राणी है। हम मनुष्य हैं और निस्संदेह सम्वेदनशील भी हैं। हम प्रतिदिन बगैर चाय पिये अपने प्रिय नेता के स्वास्थ्य के 'डीटेल्स' श्रीमतीजी से 'डिस्कस' करते थे। श्रीमतीजी भी कम सम्वेदनशील नहीं। वे हम से भी गहरी सांसें लेती थीं और रविवार के दिन उनकी आंखों में भी एक प्रार्थना रहती थी कि माननीय रविवार के दिन पंचतत्त्व में विलीन न हों।

बच्चे हमारे दो ही हैं, और हमारे बच्चे होने के नाते वे हमारे जैसे सम्वेदनशील भी हैं। वे भी समझते हैं कि यदि मुसीबतों से मम्मी और पापा को एक दिन छुट्टी मिल जाए तो कितनी खुशी होगी। फिर वे यह भी जानते हैं कि मम्मी और पापा इतने स्वार्थी नहीं कि छुट्टी 'शेयर' न करें। हमारे बच्चे दूरदर्शी भी हैं, अतः उन्होंने प्रोग्राम बना डाला कि यदि एक दिन की 'सरप्राइज' छुट्टी मिल जाए तो उसे कैसे मनाया जाए। लेकिन हममें से कोई भी इतना बेशर्म नहीं था कि 'सर-

प्राइज' छुट्टी की चर्चा मुंह खोलकर करता । हमारे मनों के बीच टेलीपैथी के द्वारा मौन चर्चाएं हो रही थीं और हम दमसाधे चुप थे ।

तीसरा रविवार भी बीत गया । अब रविवार पूरे छह दिन बाद आएगा और कल न्यूज थी कि वे चौबीस घंटे भी नहीं खींच पाएंगे, अर्थात् सोमवार को शायद छुट्टी हो जाए–उनकी भी, हमारी भी । रविवार की रात हम प्रार्थना करते सोये थे कि 'हे भगवान, अब तो हम से उनके कष्ट का समाचार नहीं पढ़ा जाता ! उन्हें मुक्ति दो !'

वैसे तो यह भगवान् नामधारी किसी की कम ही सुनता है लेकिन इस बार उसने सुन ली । हम समझते हैं, इस बार रविवार की रात यह प्रार्थना करनेवाले हमारे जैसे सैकड़ों और होंगे । 'इन डिमॉक्रेसी मेजॉरिटी काउंट्स' —वाली बात शायद भगवान समझ चुका है । यह भगवान भी . . . लेकिन देखिए, विषयांतर हुआ जा रहा है । भगवान जो कुछ भी हो उसने हमारी बात मानी अवश्य . . .

सोमवार की सुबह अखबार उठाते ही अखबार हमारे हाथ से छूट गया । हमारी पलकें मुंद गयीं । हमारे कांपते होठों से निकला, 'अजी सुनती हो . . . वे नहीं रहे ।' श्रीमतीजी चाय ला रहीं थीं । प्याला उनके हाथ से छूट गया, "सच, वे नहीं रहे . . ."

आह !

यह 'आह' हम दोनों के गद्‌गद् कंठों से एकसाथ निकली । प्याला टूटने की आवाज सुनकर बच्चे दौड़े और हम दोनों को अवाक देखकर सहम गये । तभी अखबार पर लड़की की नजर पड़ी, उसने कुहनी मारकर लड़के को दिखाया और हमने देखा कि हमारे बच्चे भी हमारे समान ही अवाक रह गये हैं . . . सबको याद था—आज सोमवार है !

अवाकता की यह स्थिति पूरे पांच मिनिट रही . . . फिर, हम मर्द हैं—हमें ही स्थिति संभालनी थी । हमने श्रीमतीजी का झुका मुख ठोड़ी पकड़कर उठाया, "चलो अब धैर्य धरो । बिचारों ने तीन सप्ताह घोर कष्ट सहा तब मुक्ति मिली । आओ, हम उनकी आत्मा की शांति के के लिए प्रार्थना करें !"

हमने आंखें मूंद लीं और दिवंगत आत्मा का अखबार में छपा फोटोवाला मुख ध्यान में धरकर सच्चे मन से प्रार्थना करते रहे । एक पूरे दिन की छुट्टी के लिए पूरी कृतज्ञतासहित हमने उन्हें पूरे दस मिनट दिये, इतना क्या कम था !

अरे, हम ये दस मिनट भी डकार जाते और सांस भी न लेते तो भी क्या होता ? लेकिन हम इतने बेईमान नहीं हो पाते और हां, वे सोमवार को गये थे अतः हमारा शोक वास्तव में अंतरतम से अनुभूत हो रहा था, किसी अनुभूत सत्य की तरह; यानी कि हम सच में संतप्त हो उठे थे । और हम यह भी स्वीकारते हैं कि

यदि वे रविवार को चले गये होते तो हमें इतने संतप्त नहीं पाते— फिफ्टी परसेंट का फर्क अवश्य पड़ता। हमने कहा न हम बेईमान नहीं हैं, क्रेडिट लेना जानते हैं तो देना भी जानते हैं। सच मानिए, सोमवार का अलभ्य दिन हमें एक पूरी छुट्टी के रूप में दे जाने के लिए हम मन ही मन दिवंगत के प्रति बार-बार श्रद्धानत हो रहे थे।

लेकिन अब दिन का, छुट्टी के दिन का, सदुपयोग कर लेना था। हमने श्रीमतीजी की आंखों में देखा, 'चलो उदास न हो। कहीं बाहर हो आएं। जाने कब से सब बाहर नहीं निकले हैं।'

हमारे बच्चे अवसर का उपयोग करना खून में लेकर जन्मे हैं। लड़की चहकी, "पापा ! चलिए आज 'जू' चलें ! आप और ममी वहां घास पर बैठकर रिलैक्स कीजिएगा, हम जानवर देखेंगे।"

श्रीमतीजी अपना उदास मुख ऊपर उठा चुकी थीं, "हां ठीक है ! लंच लौटकर 'क्वालिटी' में ले लेंगे। अब ऐसे दुःख में खाना कौन बनाएगा।"

हम सब तैयार होने लगे। हम अपने मन को बार-बार सहला रहे थे कि हे मन ! बहुत उदास न हो। शोक के इन महान क्षणों में टूटने से बचने के लिए कुछ एन्टरटेनमेंट तो हम तुझे देंगे ही।

श्रीमतीजी पेटीकोट पहने आयीं, और पूछने लगीं, "अब बताओ जी, कौन-सी साड़ी पहनूं ? कितनी बार तुमसे

वचन वीथी

कोई भी साक्षी इतना विकट और कोई भी अभियोक्ता इतना शक्तिशाली नहीं हो सकता जितना कि अपना ही अंतःकरण। —सोफोक्लीज

जीवन की गहराई की अनुभूति के कुछ क्षण ही होते हैं, वर्ष नहीं। —महादेवी वर्मा

किसी भी अन्याय को केवल इसलिए मान्य नहीं किया जा सकता कि लोग उसे परंपरा से सहते आये हैं। —प्रेमचंद

अन्वेषक के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चीज है— दृढ़ आस्था, विश्वास नहीं। —क्लाड बर्नर्ड

कभी-कभी मौन रह जाना ही सबसे तीखी आलोचना होती है। —अज्ञात

मन की शक्ति अभ्यास है, विश्राम नहीं। —पोप

मनुष्य पांव से चलता है तब उसे यात्रा कहते हैं, प्राणों से चलता है तब उसे जीवन कहते हैं, समुदाय से चलता है—उसे समाज कहते हैं। —रवीन्द्रनाथ ठाकुर

कहा ऐसे गम के दिनों के लिए कोई 'सोबर' साड़ी ले दो, लेकिन तुम सुनते ही नहीं !"

मेरा भी दिल उन क्षणों में इतना उदार हो उठा था कि मुंह से निकल ही गया, "चलो, आज ही तुम्हें एक 'सोबर' साड़ी ले देते हैं।" श्रीमतीजी का मुख ऐसा खिल गया जैसे मायके से भैया आ गया हो। लिपट ही तो गयीं और जब अलग हुईं तो गुनगुना रही थीं—'सच हुए सपने तेरे, झूम ले ओ मन मेरे !'

हम घर से निकले। देखा पड़ोस के शर्माजी हेअरकट कराये चले आ रहे हैं। तपाक से बोले, "आज छुट्टी हो गयी तो हेयरकट करा लिया। अब जरा ससुराल जा रहे हैं। दिन भर वहीं रिलेक्स करेंगे। आप कहां . . . ?"

सहसा शर्माजी चिहुंककर चुप हो गये। एक चोर ने दूसरे चोर को पहचान लिया . . . लेकिन हम ऐसे अवसरों के लिए सध चुके हैं। हमने स्थिति फौरन संभाल ली और कनखियों से एक-दूसरे को भांपते हुए मुड़ गये।

शहर में झंडे आधे झुके थे, रेडियो पर शोक संगीत बज रहा था, लेकिन दूकानें खुली थीं। सड़कों पर खासी चहल-पहल थी। यह सेंस की बात है कि ऐसे में दूकानें खुली रहती हैं। शॉपिंग की जा सकती है। सिनेमा घरों में भी उतनी भीड़ नहीं होती कि शोक के दिन टिकट ही न मिले। शोक कम करने का पहला आइटम हुआ श्रीमतीजी के लिए एक 'सोबर' साड़ी खरीदने का। दूसरा आइटम हुआ 'जू' पहुंचकर रिलैक्स करने का। तीसरा आइटम हुआ 'क्वालिटी' में लंच का। तब तक ढाई बज चुके थे खूब ठूंसकर खाने से आलस्य हम पर चढ़ने लगा था। उस शिथिलता को हम उदासी से जोड़ रहे थे। श्रीमतीजी की हालत हम से भी खराब थी। हमारे ब्रिलियंट बच्चों ने फिर हमारी रक्षा की। इस बार लड़का चहका, "पापा, आप और ममी तो बहुत उदास हैं। चलिए मैटिनी शो देख लिया जाए। मूड ठीक हो जाएगा।" जब बच्चे कह रहे हैं तो हम जरूर उदास होंगे। हमें प्यारे बच्चों की बात मान लेनी चाहिए। कितना खयाल है उन्हें ममी-पापा का !

सामने ही सुचित्रा में 'बेईमान' लगी थी और हम कतई बेईमान नहीं थे, अतः तुरंत निश्चय कर लिया कि यही पिक्चर देख ली जाए।

शोक कम करने का चौथा आइटम, शो देखने का, पूरे तीन घंटे तक चलता रहा। हम हंसे, उत्तेजित हुए, खिसियाये लेकिन रोये नहीं। भला मर्द कहीं रोता है ! ऐसे महान शोक को हमें हिम्मत से झेलना चाहिए और हमने झेल लिया। पिक्चर समाप्त होने के बाद 'जन गन मन' के सम्मान में खड़े हम एक बार फिर गहरे शोक में डूब गये—कब आएगा ऐसा शोक का महान दिन फिर ?

—न्यू रीडर्स क्वार्टर नं. ११
उस्मानिया यूनीवर्सिटी, हैदराबाद-७

अदिति चक्रवर्ती, हुबली : क्या आप मार्क्सवादी आलोचक जार्ज लूकाच का परिचय देंगे ?

जार्ज लूकाच का जन्म १३ अप्रैल, १८८५ को बुडापेस्ट में एक संपन्न यहूदी घराने में हुआ था। १९०४ में उन्होंने थालिया नामक एक नाट्य-संस्था स्थापित की जिसका उद्देश्य मजदूरों के लिए नाट्य-प्रदर्शन करना था। १९१९ में 'हंगेरियाई सोवियत गणराज्य' बनने पर लूकाच उसके संस्कृति-मंत्री बने। उसी वर्ष गणराज्य की समाप्ति पर उन्होंने वियना में शरण ली। १९२९ में सक्रिय राजनीति से संन्यास लेकर मास्को चले गये। १९३१ में बर्लिन वापस आये, लेकिन १९३३ में हिटलर के जरमनी से भागकर रूस में शरण ली। १९४१ में कुछ दिन के लिए स्तालिन ने उन्हें जेल में बंद रखा। १९४४ में वे हंगरी लौट आये और बुडापेस्ट विश्वविद्यालय में दर्शन और सौंदर्यशास्त्र के प्रोफेसर नियुक्त हुए। १९५६ में हंगरी में इमरे नाज की सरकार बनने पर वे शिक्षामंत्री बने, लेकिन एक महीने बाद ही नाज सरकार का पतन होने पर उन्हें यूगोस्लाव दूतावास में शरण लेनी पड़ी, जहां से उन्हें पकड़कर रूमानिया ले जाया गया। १९५७ में उन्हें बुडापेस्ट वापस आने की अनुमति मिली, मगर विश्वविद्यालय से अपदस्थ और पार्टी से निष्कासित कर दिया गया। ४ जून, १९७१ को बुडापेस्ट में उनका देहांत हुआ। उनकी प्रमुख कृतियां हैं — इतिहास और वर्गचेतना, गेटे और उनका युग, अस्तित्ववाद या मार्क्सवाद, यथार्थवाद संबंधी निबंध, बाल्जाक और फ्रांसीसी यथार्थवाद, ऐतिहासिक उपन्यास, समकालीन यथार्थवाद का अर्थ, सौंदर्यशास्त्र और एंटोलोजी ऑव बीइंग आदि।

सज्जनसिंह राजपूत, भिवानी : गोमतेश्वर कौन-से देवता हैं ? क्या इनका संबंध गोमती नदी से है ?

जी नहीं, गोमतेश्वर का संबंध गोमती नदी से नहीं है, बल्कि भाषा-विज्ञान से है। आपको आश्चर्य होगा कि गोमतेश्वर वास्तव में कामदेव का ही एक नाम है, और यह नाम कामदेव के एक और नाम 'मन्मथ' से निकला है। 'मन्मथ' को प्राकृत भाषा में 'कुम्मट' कहते थे और कन्नड़ में जाकर यही शब्द पहले 'गुम्मट', फिर 'गोम्मट' और फिर 'गोमतेश्वर' बन गया।

राकेश यादव (स्वर्ग), इलाहाबाद : चंद्रमा से लायी गयी मिट्टी के विश्लेषण से क्या-क्या पता चला ?

चंद्रमा से लायी गयी मिट्टी और पत्थर के विश्लेषण से मालूम हुआ है कि चंद्र-द्रव्य में पानी का अस्तित्व बिल्कुल नहीं है। उसमें जस्ता, सीसा, सोडियम और गंधक-जैसे निम्न क्वथनांक वाले तत्त्व बहुत कम मात्रा में हैं, लेकिन उच्च क्वथनांक वाले टाइटैनियम और यूरेनियम–जैसे तत्त्व अधिक हैं। यह संरचना पृथ्वी के द्रव्य की संरचना से मेल नहीं खाती। इससे यह पता चलता है कि चंद्रमा कभी पृथ्वी का अंश नहीं था, जैसी कि एक मान्यता रही है। चंद्र-द्रव्य में विकिरणशील तत्त्वों की जांच से यह पता चला है कि चंद्रमा की उम्र लगभग ४ अरब ६० करोड़ वर्ष होगी। पृथ्वी और अधिकांश उल्काएं भी लगभग इतनी ही पुरानी हैं।

सज्जन सिंह चौहान, बड़ौत : 'हालोग्राफी' क्या है ?

'हालोग्राफी' का शाब्दिक अर्थ है, संपूर्ण विवरण देनेवाले चित्र बनाने की कला। किसी वस्तु के तीनों आयामों (लंबाई, चौड़ाई और ऊंचाई) को प्रदर्शित करनेवाला चित्र हालोग्राफ कहलाता है। फोटोग्राफी में हमें दो आयामोंवाले चित्र ही प्राप्त हो पाते थे, अतः वैज्ञानिकों ने लेसर किरणों की सहायता से चित्रांकन की इस नयी विधि का आविष्कार किया। जिस प्रकार फोटोग्राफी में 'निगेटिव' तैयार किया जाता है, उसी प्रकार हालोग्राफी में एक विशेष प्लेट, जिसे 'लिपमान-प्लेट' कहते हैं, पर लेसर की सहायता से 'हालोग्राम' तैयार किया जाता है। हालोग्राम तैयार करने के लिए लिपमान-प्लेट को उस वस्तु के सामने रख देते हैं जिसका चित्र लेना है। प्लेट के दूसरी तरफ एक परावर्तक रखा जाता है। लेसर-किरणों को फिल्टर की सहायता से दो भागों में बांट दिया जाता है। एक भाग परावर्तक से टकराकर प्लेट के एक ओर पड़ता है और दूसरा भाग वस्तु से टकराकर दूसरी ओर। इस प्रकार तैयार किये गये हालोग्राम से तीन आयामोंवाला चित्र बनाने के लिए हालोग्राम पर सादे प्रकाश की किरणें डालते हैं। इस प्रकार वस्तु के दो बिंब प्राप्त होते हैं, एक में केवल दो आयाम होते हैं, लेकिन दूसरा बिंब तीन आयामोंवाला होता है। हां, तीन आयामों से आपको यह नहीं समझ लेना चाहिए कि बिंब किसी ठोस चीज की तरह होता है कि आप उसे छूकर उसकी लंबाई, चौड़ाई और मोटाई अनुभव कर सकें। किसी वस्तु के तीन आयाम दिखानेवाला वह चित्र भी आखिर होगा तो चित्र ही !

अशोककुमार अग्रवाल, हिसार : बहरीन द्वीप-समूह का परिचय दीजिए।

बहरीन द्वीप-समूह सऊदी अरब की तट-रेखा से करीब बीस मील पूर्व फारस की खाड़ी में है। 'बहरीन' शब्द अरबी भाषा का है और उसका अर्थ है—दो

समुद्र। पुराने जमाने में बहरीन नाम पूर्वी अरब की मुख्यभूमि तथा इस द्वीप-समूह दोनों के लिए प्रयुक्त होता था, लेकिन अब यह इस द्वीप-समूह के सबसे बड़े टापू का नाम है, जिसका क्षेत्रफल लगभग २२५ वर्ग मील है। इसके आसपास करीब तीस छोटे-छोटे द्वीप बिखरे हुए हैं और वे इतने छोटे हैं कि उन सबका क्षेत्रफल मिलाकर भी पूरे द्वीप-समूह का क्षेत्रफल मुश्किल से २५५ वर्गमील हो पाता है। सारे द्वीप-समूह की आबादी दो लाख से कुछ ही अधिक है। ताजे पानी की कमी के कारण यहां खेती-बाड़ी अधिक नहीं हो सकती।
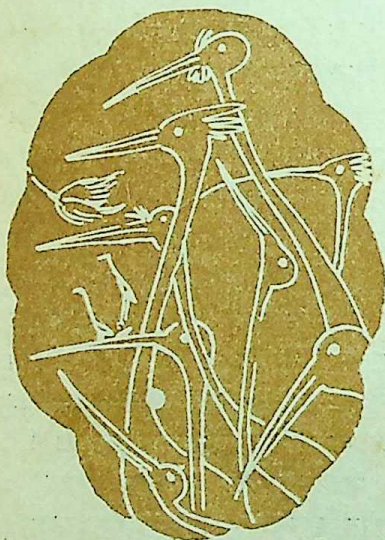
कु. अदिति गांगुली, पटना : बगुला नामक पक्षी वैज्ञानिक वर्गीकरण के अनुसार किस वर्ग में आते हैं और भारत में कितने प्रकार के बगुले पाये जाते हैं ?

वैज्ञानिक वर्गीकरण में बगुले 'ए... श्रेणी के साइकोनिफार्मीज वर्ग और आ... आइडी वंश के प्राणी हैं। बगुला अंग्रे... में 'एग्रेट' के नाम से प्रसिद्ध है। वैज्ञानि... नामावली के अनुसार भारतीय एग्रेट ... मुख्य जातियां हैं—एग्रेटा गारजेटा, एग्रे... एल्बा, एग्रेटा इंटरमीडिया, और बुबु... कस आइबिस।

राधाचरण गोस्वामी, फैजाबाद : एक वैज्ञानिक लेख में 'मंगल ग्रह के ध्रु... की सफेद टोपी' के विषय में पढ़ा। ... यह बर्फ है तो क्या मंगल पर पानी है?

मंगल के ध्रुवों पर सफेद टोपी-... जो चीज दिखायी देती है, उसके विषय ... अभी पूरी जानकारी प्राप्त नहीं हो स... है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यह ... है क्योंकि यह सफेद टोपी ऋतुओं के सा... फैलती-सिकुड़ती रहती है। लेकिन मंग... की अवरक्त किरणों के विश्लेषण से प... चला है कि वहां पानी बहुत कम है। ऐ... स्थिति में वहां बर्फ का होना उचित न... लगता। इसलिए अब यह माना जाने ल... है कि मंगल के ध्रुवों पर कारबन डा... आक्साइड जमा है, जो जमकर बर्फ ... जाता है और जिसे 'सूखी बर्फ' कहते हैं।

एक प्रश्न चलते-चलते और

कु. क. ख. ग. : स्त्रियों के लिए उ... युक्त कुछ सुविधाजनक उद्योग बताइए।

विवाह और शिशु-पालन।

—बिंदु भा...

● महेश्वर दयाल

होली आती है, मन की कली खिल जाती है। होली मिलन का त्योहार है। हंसी-खुशी से सब मगन हो उठते हैं लेकिन न जाने क्यों इस त्योहार पर जी घबराता है! होली के हुड़दंग से कलेजा कांप उठता है। त्यौहार के दिन सबेरे ही से चंडाल-चौकड़ियां चौक पर, चौराहों पर आ धमकती हैं। लोगों पर कीचड़-पानी उछालती हैं। नीले-नीले, ऊदे-ऊदे गहरे रंगों से सबको भिगोती हैं। और तो और, छापेखानों की रंग-बिरंगी स्याहियों से होली खेलते भी नहीं कतराती हैं। पैदल

चलनेवालों का तो कहना ही क्या! बेचारी मोटरों, बसों और अन्य सवारियों की भी गति बना दी जाती है। आजकल होली खेलने के ढंग निराले हैं लेकिन बीते दिनों में होली का ढंग कुछ और ही था।

फाग और कव्वालियों की तान

वसंत पंचमी आयी। कड़ाके की सरदी भागी। सूरज ने गरमी जगायी कि दिल्ली-वालों की जान में जान आयी। इधर मंदिरों में देवी-देवताओं पर सींगरी, बेर, अबीर, गुलाल और सरसों के फूल चढ़े, उधर दरगाहों में कव्वालियों की मजलिस जमने लगी। होली के मतवाले मस्त-कलंदर बने गली-गली कूचे-कूचे घूमने लगे। ढफ और चंग की ताल पर बेहाल होकर तानें उड़ाने लगे। कोई आवाज लगाता, **'तेरे भोले ने पी ली भंग, होली कौन जतन खेलूं'** या **'मैं कैसे होरी खेलूं री सांवरिया के संग।'**

मुगलों के राज्य में दिल्ली के लाल-किले में भी बादशाह के सामने होली खेली जाती। शाही नौकरों-चाकरों की टोलियां होली खेलतीं। तख्त के कहारों को एक-एक अशरफी इनाम में मिलती। बादशाह और हिंदू-मुसलमान दरबारी एक तरफ और शाहजादियां तथा अमीरों की बेटियां दूसरी तरफ झरोखों में बैठ जातीं। शहर में जितने भी स्वांग भरे जाते, सब झरोखों की नीचे से होकर गुजरते और इनाम पाते इन स्वांग भरनेवालों को न बादशाह का डर होता, न अमीर की परवाह। जिस की चाहते, नकल बनाते, हंसी उड़ाते। आजकल के कार्टून बनानेवालों की तरह उन्हें कोई कुछ नहीं कहता था।

स्वांग करनेवालों का तमाशा

कहा जाता है कि उन दिनों जब परदे

का सख्त रिवाज था, कोई औरत बिना मुंह ढंके घर से बाहर नहीं निकलती थी। चादर में लिपटी-लिपटायी, डोली और पालकी में जाती थी, शाह आलम (बहादुरशाह जफर के दादा) अपनी नन्ही-सी बेटी को बिना परदे के हाथी पर साथ बिठाकर चांदनी चौक से निकले तो होली के दिन उनकी भी हंसी उड़ायी गयी। स्वांग भरनेवालों ने खटिया पर एक बूढ़े खूसट के साथ किसी वेश्या को बिठाकर बादशाह का मजाक उड़ाया। किसी दरबारी ने शाहआलम से शिकायत की और स्वांग भरनेवालों को सजा दिलवानी चाही तो बादशाह ने कहा, "सजा कैसी? मैं तो इन स्वांग भरनेवालों से कुछ कह भी नहीं सकता। उन्हें पूरी आजादी है। इन लोगों ने मेरी आंखें खोल दीं। मैं अपने किये पर पछता रहा हूं।"

बहरूपियों का खेल

'हफ्त तमाशा' नामक फारसी की एक पुस्तक में लिखा है, "होली के दिनों में खूबसूरत लड़के औरतों का लिबास और जेवर पहनते हैं और कभी औरतों को मरदाना लिबास पहनाते हैं। हरमसरा की औरतें मुगल और फिरंगियों का रूप भरती हैं। कभी एक सब्जी बेचनेवाला बनती है तो दूसरी उसकी बीवी। कभी एक जोगी बनती है और दूसरी जोगिन। बंदर, कुत्ता, भेड़िया, गाय, रीछ, शेर और अन्य जानवरों की शक्लें बनाकर आदमियों का पीछा करती हैं। बच्चे उन्हें देखकर डर नाचते हैं। ये बहुरूपियों का खेल भी रचाते हैं।"

अंगरेजों के राज्य में जब आजादी का आंदोलन पूरे जोरों पर था, बहुरूपिये टूटे-फूटे साहबों और काली-कलूटी मेमों की हंसी उड़ाया करते। विलायतियों की रीस करनेवाले हिंदुस्तानियों की नकल बनाकर जो जी में आता, बक देते। उनके कहे-सुने का कोई बुरा नहीं मानता। अमीरों की हवेलियों के सामने होली के मतवाले इकट्ठे हो जाते। कुफ्र-कचहरियां लग जातीं। उनकी गालियां भी सुहानी समझी जाती थीं।

बड़े-बूढ़ों का बचपन

होली के दिनों में शहर में बड़े-बूढ़े भी बच्चों के साथ मिल जाते। सींग कटाकर बछड़ों के साथ रास्ता चलतों को छेड़ते, सताते रहते। दरीबे के जौहरी इसमें सबसे आगे थे। लालाजी दूकान पर बैठे होते। दूकान के सामने एक चांदी का रुपया जमीन से चिपकाया होता। दूकान के इधर-उधर बहुत से शरीर लड़के खड़े होते। जैसे ही किसी रास्ता चलनेवाले की आंख चांदी के सिक्के पर पड़ती और वह रुपये को उठाना चाहता, सब लड़के उसे घेर लेते। 'बेईमान है!' 'बेईमान है!' कहकर उसकी जान मुसीबत में डाल देते। उसको अपनी जान छुड़ानी मुश्किल हो जाती। या तो वह देर तक खड़ा तरह-तरह की बातें सुनता रहता या बला को टालने के लिए बच्चों को हलवा-पूरी की

नाश्ता कराता। तब कहीं उसका छुटकारा होता। जौहरियों के अलावा अन्य दूकानदार भी लोगों से ठिठोली करते रहते। तंबोली है तो दूकान पर बैठा बैठा आनेजानेवालों पर फब्तियां कसता रहता।

कपड़ोंवालों में तमाशा अनोखा होता। वे भी कुछ बच्चे इकट्ठे कर रखते थे। एक बारीक-सी लंबी डोरी में मछली

का कांटा बंधा होता। एक लड़का किसी मकान के छज्जे पर छिपा होता। वह डोर नीचे लटकाये होता। गली में खड़े किसी लड़के के हाथ में डोर-बंधा कांटा होता। जैसे ही देखता कि कोई बेचारा किसी ध्यान में डूबा चला आ रहा है वह पीछे जाकर उसकी टोपी में कांटा अटका देता। रास्ता चलनेवाला पलटता तो देखता, उसकी टोपी हवा में झूल रही है; बस यही कोई दो-तीन गज ऊपर। टोपीवाला उछलने लगता, कूदने लगता, लेकिन टोपी हाथ नहीं आती। जब बहुत परेशान हो जाता, गाली-गलौज पर उतर आता तो दूकान पर बैठे लालाजी आते। लड़कों को बुरा-भला कहते और सबका मेल-मिलाप कराते।

होली के रसिया ढाक और टेसू के फूलों को पानी से भरे हुए मटकों और देगों में डालकर चूल्हों पर चढ़ा देते थे ताकि पानी उबलने से इन फूलों का रंग खिंचकर पीला हो जाए। फिर इस पानी को इन बरतनों से छोटे-छोटे बरतनों में निकाल

फ्लेक्स
जूतों का क्या कहना
जबतक चाहा
तबतक पहना
टैनरी एण्ड फुटवियर
कॉर्पोरेशन ऑफ
इण्डिया लि:
(भारत सरकार का एक प्रतिष्ठान)
पोस्ट बाक्स नं ३२९, कानपुर
FDS/TAFCO/51A
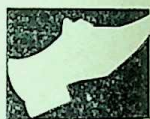
लेते, और होली के दिनों में छोटे बड़े सब मिलकर चमड़े और पीतल की बनी पिचकारियों से होली खेलते। किसी को आता देख दूर से आवाज लगाते। "आइए जी। आइए साहब," कहकर आवभगत करते। रंग डालकर कहते, "होली का भड़वा है, होली का भड़वा है।" और फिर चिल्लाकर कहते, "सुने का बुरा न मानो, आज हमारे होली है!" छोटे-छोटे बच्चे कच्चे आलू के टुकड़े काट-काटकर उन पर चाकू से कुछ ऐसे-वैसे शब्दों को उलटा गोदकर टप्पे-से बना लेते और स्याही में डुबो कर आने-जाने वालों की पीठ पर इन टप्पों को जमाते रहते। सफेद कपड़ों पर काली स्याही में डूबे शब्द सीधे छप जाते। उन सब शब्दों को पढ़कर हंसी भी आती और शरम भी।

दिन में तो यह ऊधम मचा रहता और रातों को होली के जशन मनाये जाते। गली-गली महल्ले-महल्ले में गोठे (गोष्टियां) होतीं, जिनमें खाना-पीना, गाना-बजाना, हंसी-मजाक की महफिलें जमतीं। इन गोठों में अमीर-गरीब सब शामिल होते और चंदा देते। खाना खिलाने का, सफाई-सजावट का काम बांट दिया जाता। गली-महल्ले की किसी धर्मशाला या बड़ी हवेली में दावतें होतीं। बड़े से बड़ा सेठ, साहूकार भी गरीबों के साथ एक ही पंगत में बैठकर खाना खाता। हवेली के दालान-दर-दालान में उजली-उजली चांदनियों का फर्श हो जाता। गावतकिये लग जाते। अच्छे बढ़िया ईरानी कालीन बिछ जाते। इत्रदान खासदान करीने से जगह-जगह रख दिये जाते। गुलाब-केवड़े में बसा रंग सब पर छिड़का जाता। पेचवा और कागजी हुक्के ताजा करके सामने रख दिये जाते। बाइयों के मुजरे होते। भांडों का नाच और नकलें होतीं।

जशन शुरू होने से पहले यार-दोस्त एक दूसरे पर फब्तियां कसते रहते। नोंक-झोंक के फिकरे चुस्त होते। एक ने पान की गिलोरी पेश की तो दूसरे ने कहा, "देखकर खाना, इसे चूना लगाने का शौक है।" किसी ने इलायची उठायी तो दूसरा बोल उठा, "मियां, दाना हो तो खाना।" मतलब यह कि अगर इलायची में दाना हो तो खाना और यह भी कि अगर आप दाना हैं, यानी बुद्धिमान हैं तो खाना। बात-बात पर शेर पढ़े जाते और 'वाह! वाह!' का शोर मच जाता।

भांडों की महफिलों में बच्चों को बहुत मजा आता, लेकिन जब वेश्या आती तो मजलिस में बच्चे कम, बड़े ज्यादा होते। रात भर महफिल में यों तो ख्याल, ठुमरी, दादरे, टप्पे, गजलें सब ही तरह का संगीत होता, लेकिन हर एक होली गाने की फरमाइश करता रहता। सवेरा होने तक होलियों का तार बंध जाता। लोग उठने का नाम नहीं लेते।

—९६ बाबर रोड, नयी दिल्ली-११०००१

कूड़ा करकट से बिजली

• राजेन्द्र अग्रवाल

इस शीर्षक से चौंकने की आवश्यकता नहीं है, यह सत्य है! आपके शहर में जो कूड़ा-करकट प्रतिदिन इकट्ठा होता है उससे पर्याप्त मात्रा में बिजली पैदा की जा सकती है। कूड़ा-करकट से बिजली पैदा कर न केवल बिजली के अभाव की समस्या दूर की जा सकती है वरन देश के नगर भी स्वच्छ रखे जा सकते हैं।

दिल्ली-जैसे नगर में अनुमानतः तीन हजार टन कूड़ा-करकट प्रतिदिन इकट्ठा होता है। इसमें कल-कारखानों से जो कूड़ा इकट्ठा किया जाता है, वह सम्मिलित नहीं किया गया है। इस सारे कूड़े को यदि प्रयोग में लाया जाए तो २०० मैगावाट, अर्थात दो लाख किलोवाट बिजली पैदा की जा सकती है। इसी प्रकार यदि हम भारत के केवल चार बड़े नगरों में यह प्रयोग करें तो ऐसे बिजलीघरों की कुल क्षमता दस लाख किलोवाट, अर्थात एक हजार मैगावाट होगी। यदि हम प्रारंभ में आधा कूड़ा-करकट ही काम में ला पायें तो भी चार नगरों से ५२५ मैगावाट बिजली का उत्पादन हो सकता है। यह देश के लिए कुछ हद तक सहायक हो सकता है। इस क्षमता का ब्यौरा इस प्रकार है—

कलकत्ता : २०० मैगावाट, बंबई : १५० मैगावाट, दिल्ली : १०० मैगावाट, मद्रास: ७५ मैगावाट, कुल: ५२५ मैगावाट।

कूड़े की औसत उष्मीय उत्पादकता या कैलोरी मान १००० किलो कैलोरी प्रति कि. ग्राम से २००० किलो कैलोरी प्रति कि. ग्राम तक होती है। यह मान प्रतिदिन व प्रतिमास परिवर्तित होता रहता है। ऋतुओं के साथ-साथ इस कैलोरी मान में भी परिवर्तन होता है। इसी प्रकार यह मान नगर-नगर में भिन्न होता है एवं देश-देश में इसमें काफी परिवर्तन आ जाता है। यह आवश्यक है कि कूड़े को जलाने के लिए कम से कम उष्मीय उत्पादकता ८०० किलो कैलोरी प्रति कि. ग्राम तो होनी ही चाहिए। औसतन कैलोरी मान १२०० या १३०० किलो कैलोरी प्रति कि.ग्राम कूड़े में पाया जाता है, अतः वह जल सकता है। प्रत्येक नगर एवं देश के रहन-सहन के स्तर का प्रभाव भी इस कैलोरी मान पर पड़ता है। बंबई नगर में एक प्रयोग में पाया गया कि वहां के कूड़े में निम्नलिखित वस्तुएं यहां उल्लिखित

प्रतिशत मात्रा में [illegible] हैं :

सूखी घास व तिनके आदि से १७.५७ प्रतिशत, रद्दी कागज आदि --६.४५ प्रतिशत, सड़ी गली सब्जियां व फल--५८.८ प्रतिशत, राख व धूल--१३.९ प्रतिशत, अन्य --२.६८ प्रतिशत।

कूड़े के अच्छी प्रकार से जलने के लिए यह आवश्यक है कि हवा-आक्सीजन कूड़े से अच्छी प्रकार से मिल सकें।

कूड़े को एक विशेष प्रकार की भट्टी में जलाकर १००० डिग्री सेंटीग्रेड से लेकर १२०० सेंटीग्रेड का ताप मिल सकता है। यह ताप बॉयलर में पानी को भाप में परिवर्तित कर देगा जो एक वाष्प-टरबाईन को चलाएगी। यह वाष्प-टरबाईन एक जनित्र (जेनरेटर) को चलाएगी। यही जनित्र बिजली उत्पन्न करेगा। इस प्रकार जिस कूड़े से छुटकारा पाने के लिए बड़े नगरों में उसे २० या २५ मील तक ले जाना पड़ता है, वह हमारे बहुत उपयोग में आ सकता है। यह बिजली उत्पादन सस्ता भी होगा। इसमें काम आनेवाले वाष्प यंत्रों का दाब १०० कि. ग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर व भाप का तापमान ५०० डिग्री सेंटीग्रेड होगा।

लेखक

'कूड़ा करकट से बिजली उत्पादन' विषय पर 'इंस्टीट्यूट् ऑव इंजीनियर्स' से स्वर्ण पदक। तत्संबंधी सुझावों पर सरकार द्वारा पायलट प्रोजेक्ट बनाने का निश्चय

दिल्ली में इस प्रकार का बिजलीघर इंद्रप्रस्थ बिजलीघर के साथ ही बनाया जा सकता है। कूड़े के साथ तेल भी ईंधन के रूप में काम में आएगा पर इस तेल-ईंधन की खपत बहुत कम होगी। इस प्रकार के बॉयलरों की दक्षता ६० प्रतिशत से ६५ प्रतिशत होगी और विशेष प्रकार की बनी भट्टी की दक्षता ८५ प्रतिशत तक हो सकती है। यह बिजलीघर स्वदेश में निर्मित उपकरणों से ही बन सकेगा। चार नगरों में जब यों बिजली उत्पन्न होने लगेगी तो ऐसे अन्य बिजलीघर भी बन सकेंगे।

--२१, रघुमार्ग, लाजपतनगर, अलवर

झूठ बोलना भी एक कला है

• प्रभा पारमिता

झूठ बोलने की कला झूठ की कला है, बस वह कोई माडर्न आर्ट नहीं जिसके लिए विशद व्याख्या की जरूरत पड़ जाए, लेकिन अपना देश ही ऐसा है जहां की सब कलाएं अपने वक्त की रफ्तार में विलुप्त हो गयीं, और अब यहां की जनता दूसरे देशों से ही सब कलाएं उधार मांगकर काम चलाती हैं। कला की इस उधारखोरी को अपना एक झूठवादी मित्र 'उधार' नाम से स्वीकार नहीं करता । वह कहा करता है, "दुनिया में जितनी भी कलाएं हैं उन सबका आदि स्रोत अपना यह देश ही रहा है। हमने दूसरे राष्ट्रों को पहले बहुत कुछ खूब दिया, और आज हम अपना वही ऋण वसूला करते हैं। इस ऋण-वसूली को अगर कोई उधारखोरी कहकर पुकारता हो तो पुकारे, किसी भी सच्चे झूठवादी के लिए वह आपत्ति की बात नहीं होगी, और न विस्मय की ही ।"

वैसे सच्चाई की बात तो केवल इतनी है कि झूठ बोलनेवाला व्यक्ति झूठ को कभी झूठ मानता ही नहीं है। सच की परिभाषा उसके लिए चाहे कुछ हो, लेकिन झूठ उसके लिए झूठ नहीं है । इस स्थल पर आप हिटलर की बात भी याद कर सकते हैं, जिसने किस्म-किस्म के झूठ बोलकर दुनिया को उन पर यकीन करने के लिए लाचार कर दिया था । झूठ की पुनरावृत्ति में बहुत बड़ी शक्ति छिपी होती है, यह बात बहुत कम लोगों को मालूम है अभी। हिटलर ने ही कहा था शायद कि 'एक झूठ को हजार बार बोलो, और दुनिया उस पर यकीन कर लेगी' ।

आप चाहें तो किसी भी झूठ को पचास बार बोलकर देखें, झूठ की यह सच्चाई आपको बहुत ही आश्चर्यजनक नजर आएगी। उदाहरण के लिए आप दिन भर में दस बार लोगों से कहना प्रारंभ कर दें कि पिछली रात नेताजी सुभाषचंद्र बोस आपके घर तशरीफ लाये थे ! और फिर पांच दिनों के अंदर-ही-अंदर देखेंगे कि आपका यह झूठ सिर पर चढ़कर बोलने वाले जादू की तरह भारत के सभी अखबारों में गूंज रहा है।

लेकिन विश्वास लाने के लिए विश्वास दिलाने की भी जरूरत पड़ा करती है कभी-कभी। यह विश्वास आप तब तक किसी को नहीं दिला सकते जब तक आप खुद ही उस पर यकीन लाना कबूल न कर लें। लेकिन विश्वास मानिए, यह बात एकदम झूठ नहीं कि जब तक किसी झूठ पर आप खुद ही यकीन नहीं कर लेते तब तक उसका
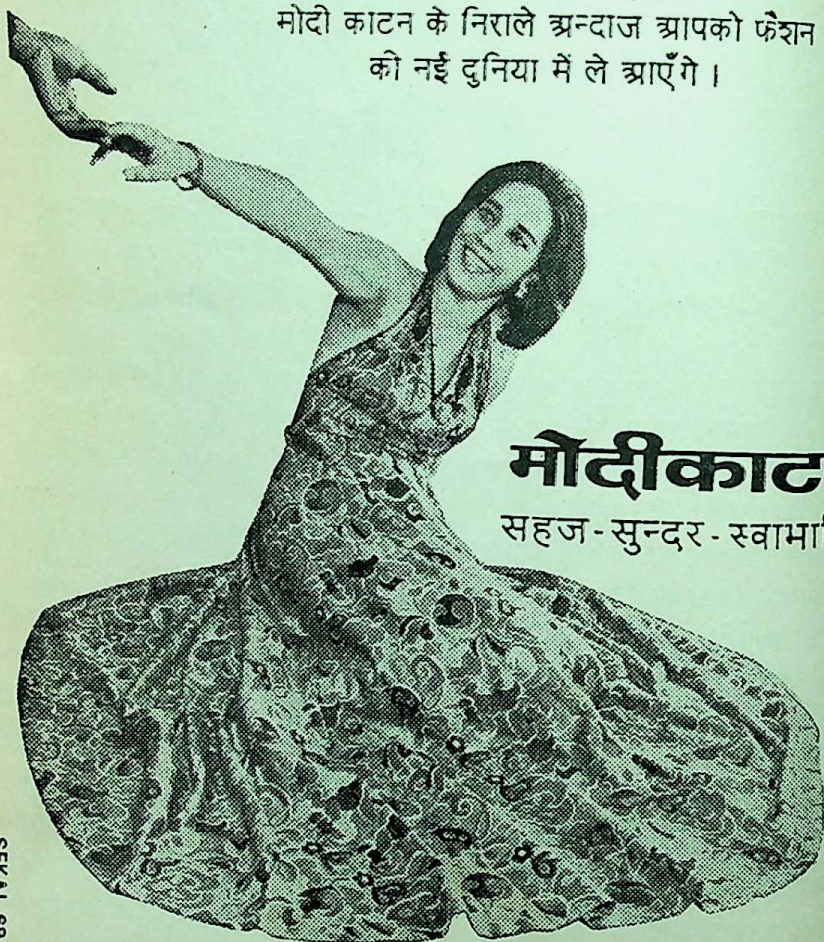
यकीन दूसरों को दिलाना मुश्किल होगा। जिस बात पर आप स्वयं विश्वास नहीं करते, उसे पूरे जोरशोर से कह भी कैसे सकते हैं? इसलिए जब भी झूठ बोलना चाहें, सच को एकदम भूल जाइए। ठीक उसी तरह भूल जाइए जैसे हमारे मंत्रिगण यह बात भुला बैठे हैं कि हमारा देश प्रगति की ओर नहीं बढ़ रहा है।

खुद को किसी झूठ पर यकीन दिलाने से अनेक अप्रत्यक्ष लाभ भी होते हैं। हमारे देश के नब्बे प्रतिशत क्लर्कों को इस बात का विश्वास बना रहता है कि वे क्लर्क नहीं, अफसर हैं। यही विश्वास है जो उन्हें आत्मलीन बनाये रखता है। अगर आपको यकीन न हो तो किसी भी पोस्टआफिस की किसी भी खिड़की में किसी भी बाबू को छेड़कर देख आइए। उसकी अफसरी का रंग आपको नजर आ जाएगा। और तो और, उस दुनिया में अगर बहुत-से लोगों को इस झूठ पर विश्वास नहीं होता कि वे दूसरों से ज्यादा सुखी हैं, तो उनका जीवन कब का नरक बन गया होता। झूठ बोलने में विश्वास करने में आप संतुष्ट रहेंगे।

झूठ बोलकर खुद को तो संतुष्ट किया ही जा सकता है, लेकिन झूठ बोलने की कला में अगर आप माहिर हों तो इससे दूसरों को भी कम लाभ नहीं होगा। बेकारों को काम, नेताओं को वोट, लेखकों को नाम और इनाम की झूठी उम्मीदें दिलाते रहिए, वे सदा प्रसन्न रहेंगे। उनकी प्रसन्नता से आपका कुछ भी नहीं जाएगा, और वे उम्मीद के सहारे बहुत कुछ कर जाएंगे।

मैं एक ऐसे सज्जन को जानती हूं जो कई लेखकों के उपन्यासों पर अकसर फिल्में बनवाते रहते हैं। ऐसा करने से लेखक की नजर में वे महान तो बने ही, लेखक का भी कम उपकार नहीं हुआ उनसे। एक लेखक उनसे उपन्यास पर फिल्मीकरण का झूठा वायदा लेकर गया, और फिर दूसरे दिन ही एक प्रकाशक ने उसके दो, दो उपन्यास खरीद लिये।

झूठ बोलने का महत्त्व चाहे कितना भी स्पष्ट क्यों न हो, अगर आप उसके अभ्यस्त नहीं तो हो सकता है कि ऐन वक्त पर ही आप चकरा उठें और आपकी कलई खुल जाए। याद रखिए, जो चोरी करते पकड़ा जाता है वही चोर कहलाता है। बंगला में एक कहावत है— 'चूरि विद्या बड़ो भालो जदि धरा न जाये', कहनेवाले ने चोरी को विद्या कहा है, और अच्छी विद्या कहा है। झूठ पर भी यही कहावत लागू होती है। पाश्चात्य देशों में इसीलिए झूठ बोलने की विद्या या कला पर सहस्रों पुस्तकें निकली हैं। पुस्तक के नाम भी झूठे से ही होते हैं। जैसे 'कैसे झूठ बोलें और लोगों को बरगलायें' न कहकर कहा जाता है—'कैसे दोस्त बनायें और लोगों को प्रभावित करें।' आप किसी झूठवादी की नजर से वह पुस्तक पढ़ जाइए, लोगों को झूठी उम्मीद, तसल्ली और बरगलाने के सैकड़ों राज आपके हाथ में आ जाएंगे। लेकिन वे पुस्तकें बहुत मोटी हैं और उन

पर प्रगाढ़ झूठ का ऐसा आवरण है जिसे हलके-फुलके ढंग से झूठ बोलने वाले नहीं समझ पाएंगे। इसलिए झूठ बोलने की कला पर छोटी-सी टिप्पणी यहां प्रस्तुत है।

विषय : झूठ बोलना एक कला है, इसलिए झूठ बोलते वक्त ऐसे किसी भी विषय का चुनाव हर्गिज न कीजिए जिससे आपका वास्ता न हो। मसलन, अगर आप बंबई के हैं तो फिल्म की ही बात किया कीजिए और अशोककुमार से लेकर जया भादुड़ी तक सबको अपना दोस्त कह डालिए। लेकिन अगर आप दिल्ली रहते हैं तो जया को नहीं, इंदिरा से लेकर चौधरी मांगेराम तक को अपना मीत बता सकते हैं।

जानकारी : जिस विषय पर झूठ बोलना हो, उस विषय की पूरी जानकारी रखिए, यानी सिनेमा-सितारों की पत्रिका या दैनिक पत्रों से रिश्ता रखिए—अगर आपको उपर्युक्त विषयों पर झूठ बोलना हो, तो।

पात्र, कुपात्र : झूठ बोलते वक्त इस बात का खयाल रखना जरूरी है कि सामने का पात्र कैसा है। पात्र की बुद्धि और जानकारी से आपकी जानकारी का बड़ा होना जरूरी है, अन्यथा पात्र की जानकारी के क्षेत्र के बाहर की बातें करना ही आप[के] लिए हितकर होगा। अगर फिल्म-जगत [के] पात्र आपके सम्मुख हों, तो आप उन[्हें] राजनीतिक सितारों की बातें कीजि[ए], अगर राजनीतिक पात्र हों तो उलटा।

प्रारंभ : झूठ का प्रारंभ धीरे-धी[रे] करें। एकबारगी ही बहुत बड़ा झूठ न बो[लें] वरना उस पर लोग विश्वास नहीं लाएंगे।

तल्लीनता : जब तक आप झूठ [की] पुष्टि में पूरी तरह तल्लीन नहीं हो जा[ते] आपके झूठ का प्रभाव दूसरों पर पड़ [ही] नहीं सकता, इसलिए कोई भी बात क[रते] वक्त उसमें निमग्न हो जाइए। निमग्न[ता] का दूसरों पर प्रभाव पड़ेगा ही।

निर्वाह : याद रहे, झूठ का निर्वाह भी व्यक्ति को उसी तरह करना पड़ता है जैसे सत्य का, यानी आपको एक बार झू[ठ] की रक्षा के लिए सत्यवादी हरिश्चंद्र का नाटक भी खेलना पड़े, तो उस बात के लि[ए] तैयार रहिए। एक बार इस अग्नि-परीक्षा में सफल हो जाने के बाद झूठ आपके स्व[-] भाव का एक अंग बन जाएगा। आप देखें[गे] दुनिया आपको युधिष्ठिर की नजर से देखने लगी है, फिर चाहे आप किसी भी अश्वत्थामा को मार डालिए।

—२५ मारवाड़ी मार्ग, लखनऊ

भीड़-भाड़वाले एक शहर के प्रवेशद्वार पर एक बोर्ड पर लिखा था— "यदि आप अपनी गाड़ी धीमे चलाएंगे तो हमारे इस ऐतिहासिक नगर की सुंदरता का दर्शन कर सकेंगे और यदि तेज चलाएंगे तो हमारी जेल को देखने की नौबत आ जाएगी।"

भविष्य

कौन—भारतवासी
कौन—ईमानदार
कौन—देश-प्रेमी
कौन—एक नेता
कभी नहीं हो सकता
यदि होता
तो भारत दुर्दशा में न होता

—राधावल्लभ शुक्ल

संपादक

उनका संपादन
एक अबूझ पहेली
हर अंक में उनकी
सिर्फ एक सहेली

— —गोविंद शर्मा

विवाह

आरंभ जिसका
पद्य में
और उपसंहार
गद्य में

—नरेंद्र भारद्वाज

नये शस्त्र

नये व्यक्ति
नये वस्त्र
इसीलिए
नये शस्त्र
मांग-पत्र

—आभा जाजू

सौंदर्य-बोध

चांद भी
तुम भी
अरे
यह दुधारी मार

—गबरसिंह रावत

वैधानिकता

मैं
आत्महत्या के जुर्म में पकड़ा गया
अब मुझे फांसी दी जा रही है
जो मैं करने जा रहा था
अब सरकार करने जा रही है
अवैधानिक को
वैधानिक करने जा रही है

—वंसीधर गुप्त

बदला

कौन कहता है कि
भला का उलटा
बुरा होता है
जरा 'भला' शब्द को ही
उलट कर देखो
लाभ होता है

—अवध 'मिहिराजकर'

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों पर वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए। --संपादक

कामों की सूची तैयार है लेकिन शीर्षक बन जाता है फोन। उस पार एक सज्जन बोल रहे हैं। उनकी बिटिया साइंस लेना चाहती है। टीचर असहमत हैं। मैं कुछ करूं।

"क्या नाम है?"

"मुन्नी।"

'स्कूल में भी?"

"ओ! सरोज।"

"सेक्शन?"

"अरे यह आप पता कर लेंगी।"

ग्यारह सौ तेइस लड़कियों के इस पद्म-पुष्कर में सरोज को ढूंढ़ना है जो सिर्फ उनकी मुनिया है।

सूची देखती हूं। क्रम--१ : व्यय का मासिक लेखा-जोखा। "तैयार हुआ?"

क्लर्क ने हकलाकर नकारात्मक उ[illegible] दे दिया।

"क्यों?"

"टी. सी. नं. नहीं मिला।" [illegible] पापहर उत्तर हाजिर।

डाक खुलती है। एक पत्र में अनुसूचि[illegible] जाति संबंधी विवरणि मांगी गयी है। [illegible] पत्र चौथी बार आया है। ऐसा क्यों [illegible] —यह जिज्ञासा मेरे अधिकार-क्षेत्र [illegible] बाहर है।

दस्तखत के लिए आये पत्रों पर हस्ता[illegible]क्षर करती हूं —यानी अपनी कल्पनाशी[illegible] तर्क-बुद्धि को फिलहाल मंजूषा में बंद क[illegible] रह जाती हूं सिर्फ 'योर्स फेथफुली'?

--सुधा, बिहार शिक्षा-सेवा, मुंगे[illegible]

ध्रुव प्रयत्न करने के बाद आखि[illegible] पंडितजी को एक दिन बैंक में फिक्स[illegible] डिपाजिट करने के लिए एक मोटी रक[illegible] के साथ लाने में सफल हुआ। दो साल [illegible] लिए उन्होंने रुपया जमा कर दिया। बो[illegible] "यदि बीच में लड़की के विवाह के लि[illegible] आवश्यकता पड़ी तो रुपया मिल जाए[illegible] न?" मैंने आश्वासन दिया कि मि[illegible] जाएगा।

वे कुछ देर दुविधा में बैठे रहे फि[illegible] एकाएक चेहरे पर कुछ संतुष्टि का भा[illegible] आया। कुरते के गले से अंदर हाथ डा[illegible] और मेरे पास आकर बोले, "श्रीमा[illegible] तनिक उठिए।" मैं प्रसन्न हुआ कि सं[illegible]वतः कुछ रुपया और जमा करेंगे। प[illegible]

उन्होंने अंदर से निकाला ढेर सूत का श्वेत धवल यज्ञोपवीत। उसे मेरे हाथ में पकड़ाकर बोले, "श्रीमान कहें, यदि मुझे कन्या के विवाह में धन की आवश्यकता पड़ेगी तो बैंक से मिल जाएगा! श्रीमान कहें....!" तीन बार मुझसे त्रिवाचक शपथ ले लेने के बाद ही वे संतुष्ट हुए।

आधुनिक बैंक में इस पुरातन शपथ-ग्रहण की रीति के पालन करने पर इस प्रकार की हास्यास्पद समस्याओं का कोई समाधान है क्या?

—उमाशंकर दुबे, गोरखपुर

पठन-पाठन में विशेष रुचि के फलस्वरूप मैंने अध्यापन का कार्य शुरू किया। अब प्रातःकाल की मधुर वेला के अवसर भी मुझे थकान की अनुभूति होती है। मैं तो इसका कारण 'बिजी लाइफ' ही समझती हूं। कठिनाइयों का पुरस्कार ही वेतन है, ऐसा विचार कर मैं नौकरी छोड़ने का विचार नहीं कर पाती हूं। मेरी रुचि कला, संगीत एवं राजनीतिक क्रियाकलापों में है, इसी कारण समय का अभाव मुझे बहुत खटकता है।

—संतोष श्रीवास्तव, कानपुर

मैं पूर्वोत्तर रेलवे के वाणिज्य विभाग से संबंधित हूं। संप्रति बरौनी जंक्शन में पद-स्थापित हूं।

लोगों की यह धारणा है कि रेलवे में बड़ी अच्छी तनख्वाह तथा भत्ते दिये जाते हैं। यह भ्रामक धारणा है। मैं बरौनी में रिफाइनरी, खाद कारखाने, थर्मल प्लांट, मिश्रित दुग्ध परियोजना में कर्मचारियों से अनेक बार मिला हूं। वे भी सार्वजनिक क्षेत्र में हैं पर वहां के चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी के बराबर भी रेलवे के तृतीय श्रेणी के कर्मचारी को वेतन नहीं मिलता।

प्रोन्नति का यह हाल है कि मेरी नियुक्ति १९५९ में हुई परंतु मैं आज भी १५ वर्षों के लंबे अंतराल के बाद उसी पद पर हूं। एक भी हायर स्केल न मिला जबकि मेरी श्रेणी के लोगों में पोस्ट ग्रेजुएट एवं एल. एल. बी.; डिग्रीधारियों की संख्या भी बहुत है। आज भी मेरी तनख्वाह कुल भत्ते को मिलाकर ३५० रु० है। उधर इस अवधि में एक प्रोबेशन अफसर चीफ अफसर बनकर तीन-तीन छलांगें लगा लेता है।

एक और रोचक बात! मैं किसी भी सेलेक्शन ग्रेड स्केल में नहीं बैठ सकता लेकिन मेरे साथ के ही नियुक्त अनुसूचित जाति एवं जनजाति के साथी उसमें बैठकर मजे में मेरे इनचार्ज बन सकते हैं। ऐसा ही प्रावधान है सरकारी नौकरियों में!

नियुक्ति के समय प्राथमिकता, कम अंकों पर नियुक्ति पदों का आरक्षण तो समझ में आ जाता है परंतु एकसाथ के कर्मचारी, समान वरीयता, समान वेतन परंतु योग्यता समान नहीं रहने पर भी, एक कर्मचारी के माथे पर चढ़ बैठते हैं! इसमें कहां तक औचित्य है?

—भगीरथ पोद्दार, बरौनी

विश्व का महान मसखरा

● ब्रजेश कुलश्रेष्ठ

लोगों को हंसानेवाला, उनका मनोरंजन करनेवाला, उनके दिलों को गुदगुदानेवाला मॉरिस केवेलियर अब नहीं रहा। १ जनवरी, १९७२ को, ८३ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गयी। वह कितना लोकप्रिय था, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि उसकी मृत्यु का समाचार एवं जीवन-चरित्र संसार भर के अखबारों ने प्रकाशित किया था।

उसकी अपनी शैली थी, अपना अंदाज और उसकी अपनी पहचान थी। हंसमुख चेहरा, सिर पर हैट, भेदभरी मुसकान, गुनगुनाती-सी आवाज—कुल मिलाकर यही था मॉरिस केवेलियर।

लोकप्रियता के सर्वोच्च शिखर पर यों ही नहीं जा पहुंचा था वह। कई बार उसने ठोकरें खायीं, पर वह एक क्षण को भी नहीं रुका। नितांत निर्धन पिता की संतान था वह। पिता मकानों पर सफेदी कर अपनी गुजर-बसर करता था। वह रोज शराब पीता और बीवी को पीटता। मॉरिस एक दिन घर छोड़कर हमेशा के लिए चला गया। तब वह सिर्फ आठ वर्ष का था।

बेसहारा मॉरिस काफी दिनों तक पेरिस की गलियों में भटकता रहा। आखिरकार उसने संगीत का सहारा लिया। उसने पेरिस के घटिया होटलों में गीत गाना शुरू कर दिया। तब उसे मेहनताने के रूप में चंद रोटियां ही मिलती थीं। कुछ समय बाद उसने नाचना भी शुरू कर दिया। नृत्य ने उसे पूरे पेरिस में प्रसिद्ध कर दिया। मॉरिस अब हजारों फ्रांक प्रति सप्ताह कमाने लगा।

सन १९२२ का वर्ष मॉरिस की जिंदगी का एक अविस्मरणीय वर्ष था। उन दिनों मॉरिस खाना, पीना सब भूल बैठा था। नतीजा यह हुआ कि थकान और कमजोरी ने उसे तोड़कर रख दिया। उसकी सारी चुस्ती एवं फुर्ती न जाने कहां गायब हो गयी? उसे लगने लगा, जैसे आत्मविश्वास टूटता जा रहा हो। मॉरिस के जीवन के वे घोरतम अंधकार के दिन थे। काफी दिनों तक वह भटकता रहा। कुछ दिनों तक सिलसिला यों ही चलता रहा। मॉरिस डटकर शराब पीने लगा। एक दिन उसके मित्र ने उसे दोपहर के भोजन पर आमंत्रित किया। वहां उसने डटकर शराब पी। खा-पीकर, कुछ देर के लिए वह सो गया। शाम को जब वह थियेटर पहुंचा तब उसका सिर बुरी तरह भन्ना रहा था। जब मंच पर पहुंचने की बारी आयी तब वह बुरी तरह घबरा उठा। जैसे-तैसे वह मंच पर जा ही पहुंचा। साथी

अभिनेता की आवाज उसे ऐसी लग रही थी जैसे गहरे कुएं में से आ रही हो। अपनी बारी पर मॉरिस ने संवाद बोलना शुरू किया। बाद में मॉरिस ने अपने साथी की आखों में झांककर देखा। मॉरिस सहम गया, लगा जैसे वह कहीं गड़बड़ी कर बैठा है। मॉरिस ने दिमाग पर जरा जोर दिया, तो सारी स्थिति समझ में आ गयी। उसने जितने भी संवाद बोले वे सब नाटक के तीसरे अंक के थे जब कि दृश्य प्रथम अंक का चल रहा था!

मॉरिस ने सोचा कि यह स्थिति ज्यादा दिन चलने वाली नहीं है। दूसरे दिन भी गुड़-गोबर हो गया। हारकर उसे डॉक्टरों एवं विशेषज्ञों की शरण में जाना पड़ा। उसे थकान थी और उसका स्नायुविक तंत्र गड़बड़ा गया था।

मॉरिस के ऊपर यह एक भयंकर वज्रपात था। काफी सोच-विचार एवं डॉक्टरों की सलाह पर मॉरिस अभिनय की दुनिया से एक दिन गायब हो गया। वह फ्रांस के सोजोव नगर में जाकर बस गया।

लेकिन होनी किसने देखी है? सोजोव में एक डॉक्टर मॉरिस के आने का मानो इंतजार ही कर रहा था। उस डॉक्टर का नाम था रॉबर्ट ड्यूबिअस। उसने मॉरिस को बताया–– 'आराम करने के अलावा और कोई इलाज नहीं है।'

मरता क्या न करता! मॉरिस आराम करने लगा। वक्त पर खा लेता और वक्त पर सो जाता। सुबह-शाम दूर-दूर तक जंगलों में घूमने निकल जाता। एकांत और पक्षियों से चहचाते जंगल में मॉरिस को बेहद शांति मिलती। उसे लगता, जैसे प्रकृति की गोद में बैठकर वह असीम आनंद के समुद्र में डूब गया हो।

कुछ दिन बाद डॉ. राबर्ट ने मॉरिस से पूछा, "कहो, क्या हाल है? अब तो तुम बिलकुल ठीक लगते हो।"

मॉरिस केवेलियर

वह बोला, "नहीं डॉक्टर, अभी मैं पूरी तरह से स्वस्थ नहीं हूं।"

डॉक्टर ने मॉरिस की बात नहीं मानी। कुछ दिनों के बाद उसने मॉरिस को सलाह दी कि वह गांव के लोगों के मनोरंजन के लिए कुछ कार्यक्रम पेश करे। मॉरिस कांप उठा। उसने साफ इनकार कर दिया।

डॉक्टर बोला, "मैं जानता हूं मॉरिस कि जिसे तुम छोड़ चुके हो, उसे शुरू करने के लिए इससे अच्छा मौका और जगह कहां मिलेगी!"

मॉरिस धीरे से बोला, "इसकी क्या गारंटी है, डॉक्टर कि मंच पर पहुंचकर मैं कुछ नहीं भूलूंगा?"

"गारंटी किसी की कुछ नहीं हुआ करती। सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि डर जाने की भावना से डरने की क्या जरूरत है?"

डॉक्टर रॉबर्ट का एक-एक शब्द मॉरिस में साहस का संचार कर रहा था।

आखिरकार, उन्हीं शब्दों ने मॉरिस को गांव के उस छोटे से मंच पर ला खड़ा किया। मंच पर जाने से पूर्व कुछ क्षण तक वह विंग में खड़ा रहा। उसके पैर कांप रहे थे। एकाएक डॉक्टर के शब्द 'सिर्फ डर जाने की भावना से डरने की क्या जरूरत है' उसके कानों में गूंज उठे और अगले ही क्षण मॉरिस मंच पर जा पहुंचा।

उस रात मॉरिस ने जो कुछ कहा, उसका एक-एक शब्द वेदना से भरा था। उसकी स्मृति ने रत्ती भर भी धोखा नहीं दिया।

जब वह कार्यक्रम समाप्त कर विंग में जा खड़ा हुआ तो उसने सुना—न खत्म होनेवाला दर्शकों का शोर और तालियों की गड़गड़ाहट!

अब मॉरिस के सामने प्रश्न था कि नये जीवन की शुरुआत कैसे करे? काफी सोच-विचार के बाद वह पेरिस से कुछ दूर मेलन नामक नगर में जा पहुंचा, अपना कार्यक्रम पेश करने की इच्छा से। उसने एक छोटे-से सिनेमाघर के मैनेजर से बात की। मैनेजर को जब ज्ञात हुआ कि मॉरिस केवेलियर उसके सामने है तो वह अवाक रह गया। मॉरिस की इच्छा से ही कम पारिश्रमिक पर कार्यक्रम पेश करने की बात तय हो गयी।

बस फिर क्या था! उस दिन से मॉरिस कभी इस शहर में, कभी उस शहर में कार्यक्रम पेश करने लगा। और एक दिन वह पेरिस के शानदार रंगमंच पर जा खड़ा हुआ। हॉल खचाखच भरा था। जब कार्यक्रम समाप्त हुआ तो सारा हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से हिल उठा। अभिवादन स्वीकार करते-करते मॉरिस थक गया। जो सफलता मॉरिस की मुट्ठी में से फिसल गयी थी, अब पुनः उसकी मुट्ठी में थी।

—एफ-१७४, गांधीनगर, जयपुर-४

पिछले अंक में आपने प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुन्दरम् से हाथों की बनावट के बारे में जानकारी प्राप्त की । यहां प्रस्तुत हैं हाथों के कुछ और प्रकार

● पी. टी. सुन्दरम्

हाथों के कुछ अन्य प्रकार

हाथों की बनावट से आदमी को आसानी से पहचाना जा सकता है। बनावट के आधार पर हम हाथों को सात श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं। हस्त रेखा का अध्ययन करने वाले नये-जिज्ञासु अकसर हाथों की बनावट पर ध्यान न देकर रेखादि के अध्ययन पर सारा आकर्षण केंद्रित कर देते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए । सबसे पहले हमें हाथों की बनावट को ही ध्यान से देखना चाहिए । पिछले अंक में हमने चार तरह के हाथों की चर्चा की थी । अब हम शेष तीन-प्रकार के हाथों के बारे अध्ययन करेंगे ।

५. कोणीय हाथ

यह हाथ मध्यम आकार का होता है । हथेलियों का अंत कोणीय रहता है तथा अंगुलियां जड़ों के पास भरी-भरी होती हैं । उनका सिरा अथवा नाखूनोंवाली पोर कोणीय या जरा-

सी नुकीली होती है। ऐसे हाथवाले व्यक्तियों में अंतःस्फूर्ति विशेष गुण होती है। नुकीली अंगुलियों और नाखूनों से युक्त पूरी तरह मुलायम हाथ भी 'कोणीय' श्रेणी में आता है। इससे व्यक्ति के आलसी स्वभाव और ऐशो-आराम की प्रवृत्ति का पता चलता है। यद्यपि ऐसे व्यक्ति बुद्धिमान और कार्यकुशल होते हैं तथापि वे चिड़चिड़े भी हो जाते हैं, जल्दी ही थक जाते हैं और अपने प्रयत्नों में आधी राह में ही रुक जाते हैं। वे अच्छे बातचीत करनेवाले भी हुआ करते हैं, पर वे अधिकांश बातों का अल्पज्ञान ही रखते हैं। वे अंतःस्फूर्ति के बल पर निर्णय करते हैं और जरा-सी बात पर अपमानित अनुभव करने लगते हैं। वे तुनुक-मिजाज होते हैं और पसंदगी-नापसंदगी के मामले में बहुत दूर तक चले जाते हैं। पर उनकी तुनुक-मिजाजी कुछ देर की ही होती है। गरमा-गरमी में वे अपना दिल खोल बैठते हैं और शब्दों के उपयोग में भी जल्दबाजी करते हैं। वे गरीबों के प्रति सहानुभूति रखते तथा उदारता दर्शाते हैं पर उन्हें ऐसी उदारता के लिए किसी श्रेय की परवाह नहीं होती। वे अपनी इच्छा-नुसार दान देते हैं। अकसर वे कलात्मक वस्तुओं के प्रति आकर्षित होते हैं, पर वे स्वयं कलात्मक नहीं होते। संगीत, वक्तृता, शोक, आनंद, रंग आदि से प्रभावित होते हैं। वे जरा सी-बात पर भावुक हो जाते हैं। ऐसे व्यक्ति उच्चतम स्थिति तक भी पहुंच सक हैं और गहन गर्त तक में गिर सकते हैं

कड़े और लचीले कोणीय हा समस्त अच्छे गुणों के द्योतक होते हैं। व्यक्तियों का दोस्तों, अपरिचितों और सार्वजनिक नेताओं के सामने व्यक्ति खूब उभरता है। वे क्षण-विशेष से प्रेरि होकर ही बोलते हैं, पर उनमें विचा तर्क या अध्ययन का अभाव होता है। उन कार्य हमेशा अच्छी तरह संपन्न होते हैं वे स्वयं नहीं जानते कि क्या कार्य क और क्यों करें? लंबी अंगुलियोंवाली की तुलना में चौकोर-अंगुलियोंवाली अपने अध्ययन, सहन-शक्ति तथा के कारण अधिक महान बन सकती है

६. सम्वेदनशील हा

यह अच्छा पर अभागा हाथ होता है ऐसा हाथ लंबा, संकरा और कोण होता है। अंगुलियां पतली तथा शंकु होती हैं। नाखून बादाम के आकार रहते हैं। ऐसे हाथवाले व्यक्ति वि रूप से स्वप्नजीवी और आदर्शवा होते हैं। उन्हें प्रकृति की रचनाओं से प्य होता है। वे गंभीर और शांतस्वभा वाले तथा दूसरों पर विश्वास नहीं क हैं। अनुशासन, समय की पाबंदी औ सुव्यवस्था से उनका दूर का भी संबं नहीं होता। वे न तो व्यावहारिक हैं हैं, न व्यवसायी और न ही तार्किक वे सहज ही भावप्रवर हो उठते हैं।

वे प्रच्छन्न रूप से आध्यात्मि

प्रार्थनादि का अनुसरण करते हैं, पर वे प्रार्थनाओं के तर्कों को नहीं समझते। उन्हें जीवन की रहस्यमय बातों का ज्ञान होता है और वे आध्यात्मिक बातों को पसंद भी करते हैं पर वे ऐसा क्यों करते हैं, इसका उन्हें ज्ञान नहीं होता। वे जादू और रहस्यमयी बातों की ओर आकर्षित होते हैं पर वे धोखा-धड़ी जरा नहीं पसंद करते। उनका अंतःस्फूर्त संबंधी ज्ञान काफी बढ़ा-चढ़ा होता है। वातावरण उन्हें नष्ट-सा कर देता है तथा जिस कार्य के लिए वे उपयुक्त हो सकते हैं, उसके लिए निरर्थक बना देता है। ऐसे हाथोंवाले प्राध्यापक भी अपने आपको संसार के लिए अयोग्य समझते हैं तथा चिंताकुल एवं रुग्ण बन जाते हैं। यदि उन्हें पहचान लिया जाए और उनके साथ अच्छा व्यवहार किया जाए तो धन-संग्रह करनेवाले लोगों से बहुत अधिक उपयोगी व्यक्ति सिद्ध हो सकते हैं। यश
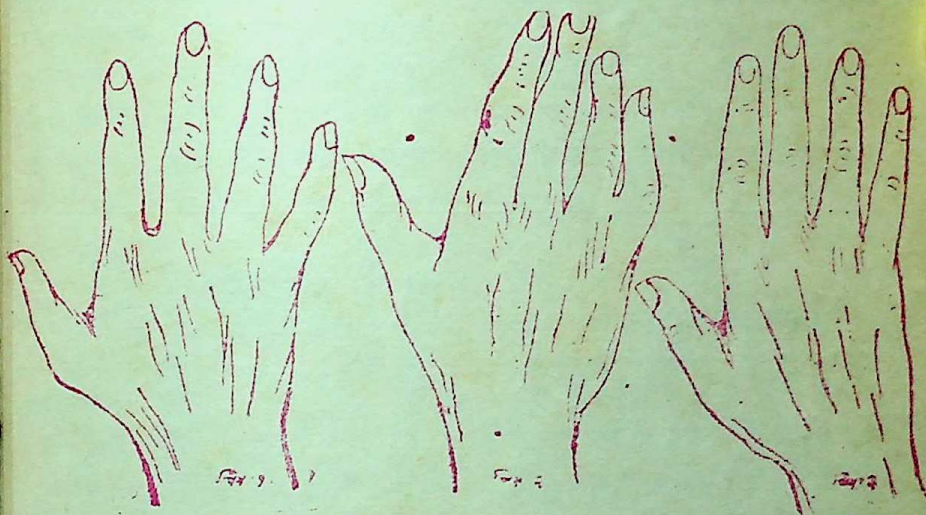
सम्वेदनशील हाथ | मिश्रित हाथ | कोणीय हाथ

वे भावनाओं और प्रभावों के प्रति अत्यंत सम्वेदनशील भी होते हैं।

ऐसे व्यक्तियों के पालक प्रारंभिक आयु में उनके गुणों की पहचान नहीं कर पाते। पालक उन्हें अपनी भांति व्यवसाय की ओर ढकेलना चाहते हैं और यह और सौभाग्य की दौड़ में वे अकसर काफी पीछे छूट जाते हैं।

ऐसे सुंदर हाथोंवाले व्यक्ति जीवन-रूपी नदी की लहरों में बड़ी बेरहमी से उठाये-गिराये जाते हैं। कारण यही है कि उनमें अपनी कोई शक्ति नहीं होती।

उनके अप्रगट गुणों को पहचाना नहीं जाता और इसीलिए ऐसे सुंदर हाथोंवाले व्यक्तियों को कष्ट उठाना पड़ता है। इसी-लिए ऐसे हाथ 'अभागे' भी कहे जाते हैं।

७. मिश्रित हाथ

ऐसा कहा जाता है कि ऐसे हाथ वाले व्यक्ति परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल लेते हैं और अपने लिए भरसक अच्छी 'लाइन' चुनते हैं। ऐसे व्यक्ति भले कष्टों में हों, पर वे दूसरों को यह विश्वास दिलाने में अत्यंत कुशल होते हैं कि उन्हें कोई कष्ट नहीं है और वे बड़ी अच्छी तरह अपनी जिंदगी बसर कर रहे हैं। वे हर प्रकार का कार्य कर सकते हैं, पर कुशल एक में भी नहीं होते। परिस्थितियों के अनुरूप स्व को ढाल लेने के उनके गुणों की सराह की जानी चाहिए। वे अकसर परिव की ओर प्रवृत्त होते हैं, पर चौको चपटे, दार्शनिक अथवा कोणीय हा में मिश्रित अंगुलियांवाले लोग बहु सफल भी हो जाते हैं। यह सफलता उन्हें उन स्थानों पर भी मिलती है, जह विशुद्ध मिश्रित हाथवाले व्यक्ति असफ हो जाते हैं। अपने उद्देश्य की योग्यत मात्र के कारण वे अच्छे वार्ताका चित्रकार, वादक, कवि, नाटककार सकते हैं पर किसी भी क्षेत्र में मह अथवा प्रसिद्ध नहीं होते। सारांश में 'हरफन मौला' होते हैं।
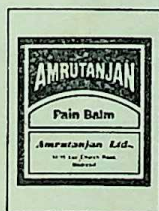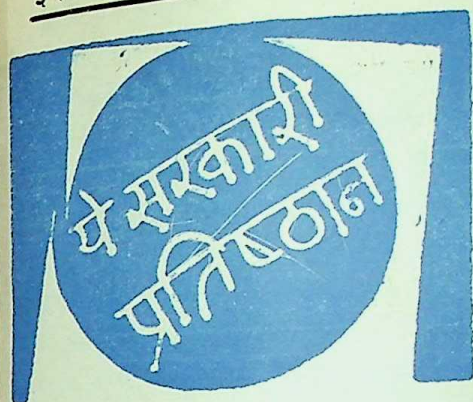
अखिल भारतीय स्तर पर कुछ ऐसे प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं जिनके संबंध में आवश्यक जानकारी उपयोगी है। पिछले अंक में आपने भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत है केंद्रीय हिंदी संस्थान के बारे में जानकारीपूर्ण लेख।

केंद्रीय हिंदी संस्थान

● बलदेव वंशी

जब से हिंदी भारत की राजभाषा स्वीकृत हुई है, तब से लेकर आज तक उसकी प्रगति को रोकने के षड्यंत्र भी बढ़े हैं। सरकारी नीति की ढीली-ढाली व्यावहारिकता और टालू मनोवृत्ति के अतिरिक्त अंगरेजी के हिमायतियों के कुटिल दांव-पेंचों ने भी हिंदी के मार्ग में बाधाएं खड़ी की हैं। फिर भी, आलस्यपूर्ण मन से ही सही, हिंदी के प्रति दायित्व-निर्वाह के जो कार्य सरकारी स्तर पर हुए हैं, उनमें शिक्षा मंत्रालय द्वारा सन १९६१ में केंद्रीय हिंदी संस्थान की स्थापना भी एक है। उद्देश्य रूप में इस संस्थान ने हिंदी और अन्य भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन और अनुसंधान कार्य तथा हिंदी भाषा और साहित्य के उच्च अध्ययन के कार्यों को हाथ में लिया। इस संस्थान के संचालन के लिए केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल का गठन किया गया। जनवरी, १९७१ से इस मंडल के अध्यक्ष श्री मोटूरि सत्यनारायण हैं और निदेशक-सचिव के पद पर १९६३ से डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा विद्यमान हैं। इस स्वायत्तशासी संस्था का मुख्य कार्यालय आगरा में है और केंद्र दिल्ली में स्थित है। १९७३–७४ वर्ष का बजट लगभग २० लाख है और आगामी पंचवर्षीय योजनाकाल में कुल योजना और गैर योजना-मदों में क्रमशः एक करोड़ रुपये और अस्सी लाख रुपये हैं। इस समय आगरा और दिल्ली—दोनों स्थानों पर प्रतियोगियों की कुल संख्या ६०० है। इनमें भारतीय छात्रों के अलावा विदेशों के विद्यार्थी भी सम्मिलित हैं।

क. हिंदी-शिक्षण-कार्यक्रम संसद-सदस्यों

के लिए विशेष पाठ्यक्रम : संसद के हिंदी न जाननेवाले सदस्यों को हिंदी सिखाने के लिए गहन पद्धति पर आधारित हिंदी-शिक्षण-पाठ्यक्रम का आरंभ १९७२ में किया गया था जो अभी भी चल रहा है। इस गहन हिंदी-शिक्षण-पाठ्यक्रम की सभी सामग्री संस्थान के अध्यापकों द्वारा भाषा विज्ञान और भाषा-शिक्षण के अधुनातन सिद्धांतों और तकनीकों के आधार पर तैयार की गयी है। इस सामग्री को 'स्वयं-शिक्षक' की तरह प्रयोग किया जा सकता है। इसमें टेपरिकार्ड आदि सम्मिलित हैं। इनका उपयोग उच्च सरकारी अधिकारियों के लिए भी किया जा सकेगा।

विदेशियों के पाठ्यक्रम : १९७२–७३ सत्र में, संस्थान ने दिल्ली कैंपस में शिक्षा मंत्रालय की छात्रवृत्ति पर हिंदी के उच्च अध्ययन के लिए भारत आनेवाले विदेशियों के लिए एक नये पूर्णकालिक पाठ्यक्रम का आरंभ किया है। विदेशियों और हिंदी न जाननेवाले भारतीयों को हिंदी सिखाने के लिए २५० घंटे के बेसिक और इंटरमीडिएट हिंदी-शिक्षण-पाठ्यक्रमों का आयोजन संस्थान के दिल्ली कैंपस में आरंभ हुए हैं जिनमें फ्रांस, इंगलैंड, अमरीका, जरमनी, इटली, जापान आदि देशों के १६ नागरिकों ने दाखिला लिया है।

केंद्रीय सरकार के अधिकारियों/कर्मचारियों के पाठ्यक्रम : संस्थान ने दिल्ली कैंपस में हिंदी न जानने वाले केंद्रीय सरकार के अधिकारियों को हिंदी भाषा के सभी कौशलों में दक्ष कराने और हिंदी में सभी कार्यालय-कार्य करने के योग्य बनाने के लिए १००/६० दिवसीय शिक्षण पाठ्यक्रमों की श्रृंखला का क्रम संचालित हो रहा है।

ख. हिंदी-प्रशिक्षण-कार्यक्रम

हिंदी शिक्षण निष्णात पाठ्यक्रम : हिंदी-शिक्षण के स्नातकोत्तरीय पाठ्यक्रम में हिंदी अध्यापकों को प्रवेश दिया जाता है जो विभिन्न राज्य-सरकारों द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। इसके साथ हिंदी-शिक्षण पारंगत पाठ्यक्रम भी हैं जो स्नातक स्तरीय हैं। इन पाठ्यक्रमों को मान्यता भी प्राप्त है।

गहन हिंदी-शिक्षण-प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम : हिंदी के अतिरिक्त अन्य विषय पढ़ानेवाले प्रशिक्षित स्नातक अध्यापकों को एक वर्ष में हिंदी भाषा और साहित्य का पर्याप्त ज्ञान

बायें : सांस्कृतिक समारोह पर पुरस्कार वितरण करते हुए दिनकरजी
दायें : प्रो. रामनाथ सहाय (कार्यकारी निदेशक) वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए

कराने के साथ-साथ भाषा शिक्षण की अधुनातन प्राविधियों का प्रशिक्षण प्रदान करने वाले गहन हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम धीरे-धीरे राज्यों में लोकप्रिय हो रहे हैं। विशेषकर नागालैंड, मिजोरम और उड़ीसा की राज्य सरकारें अपने सैकड़ों शिक्षकों को इस पाठ्यक्रम के लिए भेज चुकी हैं।

ग. नवीकरण कार्यक्रम

विश्वविद्यालयों के हिंदी अध्यापकों के लिए उच्च नवीकरण पाठ्यक्रम : विश्व-विद्यालय स्तर पर होने वाले हिंदी भाषा व साहित्य के शिक्षण को आधुनिक बनाने के लिए संस्थान ने यह पाठ्यक्रम चलाया है। इसी क्रम में विद्यालयों के हिंदी अध्यापकों के लिए भी पृथक पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं।

घ. अनुसंधान और शिक्षण-सामग्री-निर्माण

भारत के विभिन्न अहिंदी भाषी प्रांतों में हिंदी-शिक्षण-संबंधी सामग्री और विधि के निर्माण हेतु भाषाशास्त्रियों की विचारगोष्ठियां आयोजित की जाती हैं जिनमें विभिन्न पहलुओं पर लेख पढ़े जाते हैं। शोध प्रबंध भी तैयार करवाये और प्रकाशित किये जाते हैं। व्याख्यानमालाओं का आयोजन भी किया जाता है जिनमें विभिन्न क्षेत्रों के अधिकारी विद्वानों को आमंत्रित किया जाता है।

ङ. प्रकाशन

संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका है—**गवेषणा**। इसमें शोध-संबंधी निबंधों का संकलन किया जाता है। एक वार्षिक पत्रिका

डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा : संस्थान के निदेशक

समन्वय का प्रकाशन किया जाता है। यह एक छात्र-पत्रिका है। संस्थान की गतिविधियों को प्रचार-प्रसार देने के उद्देश्य से समय-समय पर **संस्थान-बुलेटिन** प्रकाशित किया जाता है। इसके अतिरिक्त शोधप्रबंध पुस्तक रूप में प्रकाशित होते हैं।

छात्रों के लाभ को ध्यान में रखते हुए वाद-विवाद प्रतियोगिताएं एवं अध्ययन-यात्राएं आयोजित की जाती हैं। संस्थान के अपने पुस्तकालय में इस समय १५,००० के करीब पुस्तकें हैं।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत संस्थान अन्य दो क्षेत्रीय-केंद्र हैदराबाद और शिलांग में खोलने जा रहा है जिससे दक्षिण में और नगालैंड, मिजोरम, अरुणाचल में हिंदी प्रसार-कार्य विस्तार पा सके।

मोटे रूप में संस्थान दो प्रकार के कार्य कर रहा है—एक, हिंदी न जानने वालों को हिंदी का ज्ञान कराना और दूसरा
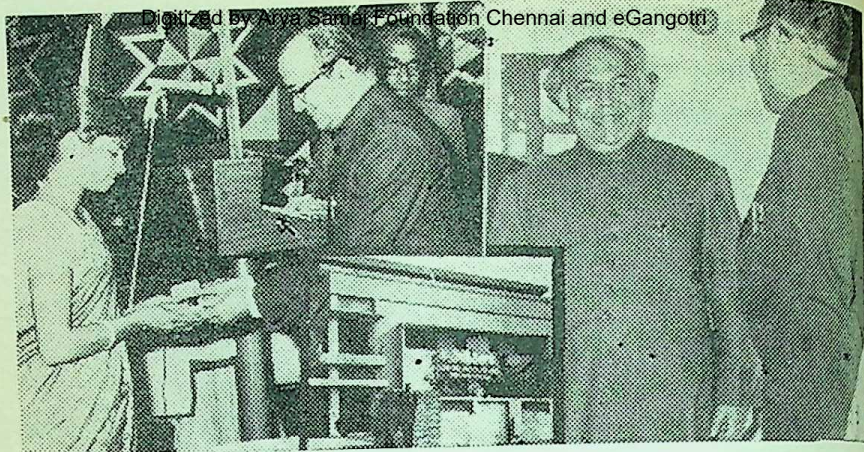
सर्वश्रेष्ठ मलयालम भाषी छात्रा पुरस्कार ग्रहण करते हुए

समारोह के अवसर पर शिक्षा राज्यमंत्री प्रो. नूरुलहसन

हिंदी-शिक्षण को वैज्ञानिक आधार देना, किंतु ये दोनों कार्य उपयोगी होने के वावजूद इतने अपर्याप्त हैं कि उनसे लाभ की आशाएं नगण्य ही मानी जाएंगी। हमारे विचार में संस्थान को अपने प्रयत्न हिंदी-शिक्षण-कार्यों पर अधिक केंद्रित करने चाहिए, न कि प्रशिक्षण कार्यों पर, और प्रत्येक अहिंदी भाषी राज्य में प्रथक केंद्र की स्थापना कर व्यापक स्तर पर हिंदी का प्रसार करना चाहिए।

वैसे देखा जाए तो हिंदी का व्यवहार-क्षेत्र संपूर्ण देश है। आज रेडियो, सिनेमा, आदि जन-माध्यम, रेल, वस आदि जन परिवहन और अखिल भारतीय आंदोलनों में हिंदी का व्यवहार ही अधिक होता है। भारत की किसी अन्य दूसरी भाषा का इतना व्यवहार नहीं होता, 'किंतु हिंदी के इस व्यापक व्यवहार-क्षेत्र में अंगरेजी का अधिकार स्थापित है, वदले हुए संदर्भ में उसके हामी इस अधिकार को पुनः व्यवस्थित करने में जुट गये हैं और तरह-तरह के नये उपाय करने लगे हैं, जिनमें अन्य भारतीय भाषाओं को हिंदी के विरोध में खड़ा करने के अधम उपाय प्रायः चिंता पैदा करते हैं।' (गवेषणा अंक—१६, १९७१ में, डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा)

संस्थान के निदेशक डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा से भेंट के समय हमने प्रश्न किया कि—

क्या यहां से हिंदी-शिक्षण पानेवाले सरकारी कर्मचारी अपने विभागों में जाकर हिंदी का प्रयोग कर पाते हैं?

"यह संस्थान पहले उच्च श्रेणी के

अधिकारियों के लिए खुला था किंतु उन लोगों ने आना जरूरी नहीं समझा। कोई उनसे कहता भी नहीं। अतः अब छोटे कर्मचारी ही यहां से शिक्षण पाते हैं किंतु वे लौटकर कितना कार्य हिंदी में कर पाते हैं, नहीं कहा जा सकता।"

उन की बात से और शिक्षण-प्राप्त कर्मचारियों से मिलकर जो तथ्य ज्ञात हुआ वह यह है कि उनके ऊंचे अधिकारी कभी भी हिंदी में कार्य को पसंद नहीं करते। अधीनस्थ कर्मचारी बेचारे बॉस के इशारे और मरजी पर चलने के लिए बाध्य होते हैं।

यह सरकार का कर्तव्य है कि उच्च अधिकारियों के लिए हिंदी ज्ञान और उसका व्यवहार अनिवार्य घोषित करे, अन्यथा २६ वर्षों के इतने लंबे काल के उपरांत भी ढुल-मुल नीतियां कहीं पहुंचानेवाली नहीं हैं। इस प्रकार मात्र करोड़ों रुपयों को बहाते रहना अधिक शंकाएं पैदा कर रहा है।

हिंदी प्रसार में आनेवाली कठिनाइयों का नीति विषयक पक्ष उघाड़ने वाला डॉ. वर्मा का एक और उद्धरण हम देना चाहेंगे, "साहित्य अकादमी के जो भी उद्देश्य हों, भाषाओं को मान्यता देने का अधिकार उसे कहां से और कैसे मिला? संविधान की अनुसूची के बाहर मैथिली, राजस्थानी या अन्य किसी बोली को बारी-बारी से साहित्य की स्वतंत्र भाषाएं घोषित कर क्या यह विद्वत्संस्था संविधान में लगातार संशोधन कराने का उपक्रम करना चाहती है? पर, संविधान की व्यवस्था से भिन्न अकादमी द्वारा मान्यता दिये जाने का यह कार्य क्या स्वयं संविधान-विरोधी नहीं कहा जा सकता?"

इस प्रकार हिंदी-प्रसार के मार्ग में आज जहां अपर्याप्त साधन रोड़ा बने हैं, वहां साहित्य अकादमी-जैसी संस्थाएं हिंदी के 'एकभाषिक क्षेत्र' को छिन्न-भिन्न करने पर तुली हैं।

—सी-१/१७३ लाजपतनगर, नयी दिल्ली

एक कलाकार को 'हरक्यूलिस' का माडल चाहिए था। वह रात के अंधेरे में धर्मार्थ अस्पताल में लावारिस लाशों को चीरफाड़ कर ज्ञान प्राप्त करने लगा। मुखमंडल की अस्थियां और मांस-पेशियां कैसी होती हैं जो सौंदर्य का साधन होती हैं। वे हड्डियां कैसी होती हैं जो वृषभ-स्कंध प्रदान करती हैं? यह सब ज्ञान उसने उस समय प्राप्त किया जब शव को 'नश्तर' चुभाना भी अधार्मिक कृत्य समझा जाता था।

यह कलाकार था माइकेल एंजेलो।

कालेज के कम्पाउंड से

एक दिन मैं सहमी-सहमी राजनीतिशास्त्र की कक्षा में आंखें नीची किये बैठी 'सर' का धाराप्रवाह लेक्चर अपने में जज्ब करने की कोशिश में थी कि उन्होंने रुककर एक प्रश्न पूछ लिया । मैंने कौतूहल से 'सर' की तरफ देखा। वे नाराज हो रहे थे, "अभी दो दिन पहले मैंने उसके तीन प्वाइंट्स बताये थे, भूल गये ?" हम सबको खामोश देखकर वे जोर से बोले, "ग्यारहवीं में क्या घास खोदते थे ? तुम सबके सब गधे हो।" तभी पीछे से किसी लड़के ने धीरे से कहा, "सर, गधी भी हैं।" और सारी कक्षा लड़कों के ठहाके से गूंज उठी। इतना सुनना था कि मेरा खोया स्वाभिमान एकाएक जाग्रत हो उठा, और न जाने किस अदृश्य शक्ति से संबल पा मैंने खड़े होकर दो प्वाइंट्स बताये। संयोगवश तीसरा प्वाइंट मेरी सहेली ने पूरा कर दिया। 'सर' बड़ी रहस्यमय मुसकराहट से बोले, "सचमुच मानना पड़ेगा, कक्षा में केवल गधे हैं।"

—प्रभा अरजडिया, महासमुंद (म.प्र.)

यह स्तंभ युवा-वर्ग के लिए है । कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

—संपादक

उन दिनों हमने कालेज में प्रवेश लिया ही था। हम सभी जूनियर छात्र अपने सीनियर छात्रों के रोबीले एवं अभद्र व्यवहार से परेशान एवं क्षुब्ध हो गये थे। विशेषकर एक सीनियर छात्र तो हमें सताने के लिए निकृष्ट से निकृष्ट किस्म के हथकंडे तक अपना लेता था।

मैं विचारों की अथाह धाराओं में खोया हुआ साइकिल पर घर की ओर बढ़ा जा रहा था। एकाएक सामने से आती हुई वृद्धा को बचाने के चक्कर में मैंने अगले पहिये का ब्रेक लगा दिया। इससे मेरा संतुलन बिगड़ गया और मैं सामने से आते हुए एक मिलिट्री ट्रक के नीचे गिरने को हुआ। तभी पीछे से आती किन्हीं बलिष्ठ भुजाओं ने मुझे सड़क के किनारे की ओर ढकेल दिया। मुझे खींचनेवाला और मैं, ट्रक से कुछ दूर औंधे मुंह गिर पड़े। कुछ संभलते हुए मैंने आभार प्रदर्शित करती अपनी निगाहें जब नया जीवन प्रदान करने वाले सज्जन पर डालीं तो एकदम भौंचक्का-सा रह गया। हृदय को झंझोड़ देनेवाली मधुर मुसकराहट लिये

खड़ा था वही तथाकथित घिनौना चेहरा, जिसे मैं कभी कालेज में देखना तक पसंद नहीं करता था।

—रमेशकुमार गांग, जोधपुर

उस समय मैं बी. ए. प्रथम वर्ष का छात्र था। कक्षा के अधिकांश छात्रों ने शुल्क मुक्ति के लिए आवेदन-पत्र दिया था। शुल्क मुक्ति के संबंध में प्राचार्य प्रायः प्रति-वर्ष लेक्चर थियेटर में ही छात्रों से आर्थिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करते थे। इस बार भी प्राचार्य महोदय दो वरिष्ठ प्राध्यापकों सहित आये। सभी छात्रों से क्रमशः उनकी आर्थिक स्थिति से संबंधित प्रश्न पूछने लगे। एक लड़का खड़ा हुआ, जो देखने में सामान्य स्तर का प्रतीत होता था। प्राचार्यजी ने पूछा, 'तुम कहां के रहनेवाले हो ?' लड़के ने उत्तर दिया, 'मैं महेंद्रनगर का रहनेवाला हूं।' प्राचार्यजी ने कहा, 'मैं उस गांव को भली-भांति जानता हूं। वहां तो कोई गरीब है ही नहीं।' लड़के ने छूटते ही उत्तर दिया, 'क्या काबुल में गधे नहीं होते ?'

—नरेंद्रराम त्रिपाठी, वाराणसी-१

तब मैं इंटर का छात्र था। भौतिक विज्ञान की प्रयोगात्मक कक्षा चल रही थी। विद्युत-संबंधी एक प्रयोग विद्युतवाहक तारों और पेंचों का संपर्क ढीला होने के कारण ठीक हो नहीं रहा था। तभी हमारे अध्यापक उधर से निकले। मेरा प्रयोग देखने के बाद एक शरारतभरी मुसकान के साथ उन्होंने कहा, "तुमने यह पगड़ी जाड़ों में बांधी थी न! अब गरमियां हैं, इससे यह फैलकर ढीली हो गयी है और तुम्हारा प्रयोग ठीक नहीं हो रहा।"

उनका संकेत समझकर मेरे साथी हंसने लगे। लेकिन तभी मैंने जोड़ दिया, "ऐसा कैसे हो सकता है सर? मेरे सिर और पगड़ी के रेखीय,क्षेत्रीय और आयतन प्रसार गुणांक बिलकुल एक हैं। जितना मेरी पगड़ी गरमी से फैली है उतना ही मेरा सिर भी तो बढ़ा है।" फिर तो उनका चेहरा देखने लायक था। —गुरदीप सिंह, बरेली

नरेंद्रराम त्रिपाठी, रमेशकुमार गांग, गुरदीप सिंह, प्रभा अरजडिया

"जन्म : १२ सितंबर, १९५५, पटना विश्वविद्यालय में स्नातक कला (अंतिम वर्ष) हिंदी 'सम्मान' की छात्रा। कविताएं कई लिखी हैं, पर सब अप्रकाशित। लिखने के बाद दूसरा बड़ा शौक पत्रिकाएं पढ़ने का। लेखन से आत्मतुष्टि अनुभव करती हूं। परिवेश को कविता में समेट लेने को मन करता है। इसी दिशा में प्रयत्नशील हूं, और रहूंगी।"

किसी पंछी का पंख फड़फड़ाते हुए
दूर आकाश में ऊंचे उड़ जाना
हलके प्रकाश में नहाया-सा
स्वच्छ नीलाकाश
चारों ओर के शून्य में उभरती हुई
कोई चिरपरिचित आवाज
पुरानी ईंटों की गंध में रुका हुआ समय
सीलन में खोयी जिज्ञासाएं
अंधेरे में कंपकंपाते उपलब्धि के क्षण
और अंधेरी गलियों से गुजरने की कल्पना
एक रीतापन है, जो किसी तरह
भरने में नहीं आता
वह क्या है
कल से टकराता कल
और उस कल से टकराता आज

——विभा त्रिपाठी

द्वारा, श्री शिवाधारी तिवारी, एडवोकेट,
हरमंदिर गली, पटना सिटी, (बिहार)

नयी कृतियाँ

पुनर्नवा : विचारोत्तेजक ऐतिहासिक उपन्यास

● डॉ. ऋतुशेखर

समाज को नियंत्रित करनेवाले नियम-कानून परिस्थितियों के अनुसार बदलते रहते हैं। किसी काल अथवा प्रदेश-विशेष में अधर्म एवं अनैतिक समझा जानेवाला कार्य लोकमानस का समर्थन पाकर व्यवहार की दुनिया में प्रतिष्ठा पा लेता है। यदि ऐसा न हो तो व्यवस्थाएं समाज की प्रगति का मार्ग रुद्ध कर देंगी। और एक समय ऐसा भी आएगा, जब वे स्वयं तो टूटेंगी ही अपने साथ धर्म को भी तोड़ देंगी। जिस जाति या समाज ने इस सत्य अनुसार स्वयं को ढाल लिया है, उसने ही आगे तरक्की की है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपनी नवीनतम औपन्यासिक कृति **पुनर्नवा** में चौथी शती के भारत में घटी घटनाओं के माध्यम से इसी सत्य की पुनः प्रतिष्ठा की है।

यों तो **पुनर्नवा** एक ऐतिहासिक उपन्यास है पर आचार्य द्विवेदी ने उसमें अपने समग्र जीवन के प्रखर चिंतन-मनन, अध्ययन और अनुभव का सार तत्त्व उपलब्ध करा दिया है जो सामयिक संदर्भों में अधिक उपयोगी हो उठा है। ऐतिहासिक उपन्यासों की सार्थकता भी इसी में है। इस उपन्यास की कथावस्तु मुख्यतः आचार्य देवरात, उनकी पालित पुत्री मृणाल मंजरी, दो योग्य शिष्यों श्यामरूप और गोपाल आर्यक तथा कौमार्यावस्था से ही गोपाल आर्यक पर आसक्त, किंतु बलपूर्वक अन्य व्यक्ति से विवाहित, युवती चंद्रा के इर्द-गिर्द घूमती है। लोकापवाद के भय से गोपाल आर्यक पत्नी मृणाल मंजरी को छोड़कर दर-दर भटकता है, पर चंद्रा उसका पीछा नहीं छोड़ती। गोपाल आर्यक की समस्या आज के पुरुष की भी समस्या है। आचार्य द्विवेदी ने तो चंद्रा के पक्ष का समर्थन कर उसे गोपाल आर्यक और मृणालमंजरी के साथ रहने की सुविधा जुटा दी, पर आज का हमारा समाज ऐसे संबंधों पर अपनी मान्यता की मुहर कहां तक लगाएगा, विचारणीय है। आचार्य देवरात और चंद्रा उपन्यास के सशक्त चरित्र हैं। मानवीय गुणों और दुर्बलताओं से युक्त ये दोनों पात्र पाठक पर अपनी

छाप छोड़ते हैं पर इनसे भी अधिक प्रभाव डालते हैं—सुमेर काका जो सामान्य ग्रामीण होते हुए भी अपनी दो टूक तर्क-सम्मत बातों से विद्वानों को भी हतप्रभ कर देते हैं।

शिल्प की दृष्टि से **पुनर्नवा** रस परिपाक के सारे नियमों को निभाता है। उसमें सभी रसों का समावेश है, कहीं-कहीं सहज और कहीं-कहीं सायास। **पुनर्नवा** का पूर्वार्द्ध जितना रोचक और अभिभूत करनेवाला है, उतना उत्तरार्द्ध नहीं। कुछ संवाद अस्वाभाविक से हो उठे हैं, पर वे पाठक को खलते नहीं, क्योंकि वहीं आचार्य द्विवेदी का चिंतक रूप उभरा है। यह बात दूसरी है कि ऐसे लंबे संवाद कथा-प्रवाह को शिथिल बना देते हैं।

गुजराती कथाकार 'धूमकेतु' ऐतिहासिक उपन्यास लिखने में सिद्धहस्त हैं। गुप्तकालीन एवं चालुक्यवंशी घटनाचक्रों पर आधारित उपन्यास पढ़ने में रोचक तो होते ही हैं, साथ ही वे तत्कालीन परिस्थितियों और उनके बीच निखरते-बिखरते चरित्रों का परिचय देते हैं। **पाटनपति** भी उनका एक ऐसा ही उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने चालुक्य वंश के प्रतापी नरेश मूलराज देव से संबंधित घटनाओं का चित्रण किया है। षड्यंत्रों, राजनीतिक घात-प्रतिघातों तथा मनुष्य की सामर्थ्य और सीमाओं का परिचय देने वाला यह उपन्यास रोचक है।

उपन्यास विधा में आजकल एक नयी तकनीक का चलन बढ़ गया है। इस तक- नीक में लेखक पात्रों को आत्मविश्ले- के लिए मुक्त छोड़ देता है। प्रत्येक अन्य पात्रों के परिप्रेक्ष्य में अपनी खोलता है। डायरी शैली से मिलती हुई यह तकनीक उपन्यास के परागत कथा-सूत्रों का बहिष्कार है। इसमें लेखक और उसके पात्रों आब्जेक्टिविटी भी बढ़ गयी है। पीढ़ि- के संघर्ष पर आधारित **तीस चालीस** डॉ. प्रभाकर माचवे का इसी तकनीक लिखा नवप्रकाशित उपन्यास है। पीढ़ियों का 'जैनरेशन गैप' तीसरी पीढ़ी को एकदम नयी लीक पर ला पटकता है उपन्यास में आचार्य वासुदेव, मोहन और अनिरुद्ध अपनी-अपनी पीढ़ी का प्रति- धित्व करते हैं। तीनों की अपनी विचार- धाराएं हैं। वासुदेव यदि कांग्रेसी विचार- धारा का पोषक है तो मोहन की आस्था कम्युनिज्म में है। अनिरुद्ध इन सबसे अलग हिप्पीज्म का शिकार है। परिणाम- स्वरूप वह न मोहन की तरह मनुष्य के विवेकमय संकल्प को परिवर्तन का आधार मानता है और न वासुदेव की तरह सब कुछ ब्रह्मार्पण। वह क्षणवादी, अस्तित्व- वादी है। विभिन्न परिस्थितियों तथा देश- विदेश में घूमते पात्र लेखक की अनेक मान्यताओं, आस्थाओं को मुखरित करते हैं।

दूसरा उपन्यास **एक लड़की की डायरी** डायरी-शैली में लिखा शानी का नया उपन्यास है, जिसकी नायिका

अपने जीवन में आये अनेक व्यक्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करती है। पितृहीन होने के कारण बानू आर्थिक संकट से भी ग्रस्त है। उसकी एक अध्यापिका अनीस बाजी उसे आश्रय देती है। एक बार यह अध्यापिका अपने विगत जीवन का कच्चा चिट्ठा उसके समक्ष खोल देती है, जिससे पाठकों को ज्ञात होता है कि अनीस किन-किन संघर्षों से गुजरी है। इसके साथ ही बानू एक दिन देखती है कि अन्नू के प्रति, जिससे वह प्रेम करती है, अध्यापिका भी आकर्षित है। यहां उसकी प्रेम के प्रति समस्त आस्था डगमगा जाती है और वह प्रत्येक स्थिति के प्रति शंकालु हो उठती है। प्रस्तुत डायरी पाठक की जिज्ञासा को जाग्रत करने में सफल है।

—डॉ. शशि शर्मा

पुनर्नवा

लेखक : आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. ८, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-११०००६, पृष्ठ : ३१७, मूल्य : बाइस रुपये

तीस चालीस पचास

लेखक : डॉ. प्रभाकर माचवे, प्रकाशकः राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृ. : १३६, मूल्य : छह रुपये

एक लड़की की डायरी

लेखक : शानी, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ. : १३६, मूल्य : छह रुपये

द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' एवं फणीश्वरनाथ 'रेणु' हिंदी कहानी की दो विशिष्ट पीढ़ियों और शैलियों के प्रतिनिधि कथाकार हैं। **मेरी प्रिय कहानियां** में इन दोनों कथाकारों की चुनी हुई कहानियां हैं।

'निर्गुण' की सभी कहानियों में मन छू लेनेवाली किशोर-सुलभ भावुकता और अभिव्यक्ति की सहजता होती है। इस संग्रह की अधिकांश कहानियों में भी यही बात है। 'रेणु' एक आंचलिक-कथाकार के रूप में विख्यात हैं। इस संग्रह में उनकी प्रसिद्ध आंचलिक कहानियों—'तीसरी कसम', 'रसप्रिया', 'लालपान की बेगम' के अलावा 'अगिन खोर', 'रेखाएं, वृत्त-चक्र'-जैसी आधुनिक विषयों पर लिखी गयी श्रेष्ठ कहानियां भी संकलित हैं। 'रेणु' की ये कहानियां उनके समग्र लेखन का प्रतिनिधित्व करती हैं। पात्रों और उनकी स्थितियों का सजीव चित्रण, घटनाओं का नाटकीय गठन और सहज भाषा इन कहानियों को एकाधिक बार पढ़ने के बाद भी उन्हें पुराना नहीं पड़ने देती।

मेरी प्रिय कहानियां

लेखक : द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण,' प्रकाशकः राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ : १६४, मूल्य : पांच रुपये

मेरी प्रिय कहानियां

लेखक : फणीश्वरनाथ 'रेणु', प्रकाशक, एवं मूल्य उपर्युक्त, पृष्ठ : १४७,

अशक्त जनपद ग्रीक भाषा के प्रसिद्ध कवि कोस्तिस पापाकोंगोस की कविताओं का हिंदी अनुवाद है जो कवि के समकालीन परिवेश तथा संघर्ष को मुखरित करता है। १९६७ की सैनिक क्रांति के बाद कवि ग्रीस से निष्कासित हो गया था पर अनेक वर्षों के प्रवासकाल के बाद भी वह किसी-न किसी स्तर पर ग्रीस से जुड़ा रहा। वह अहसास इस संग्रह की 'बीस साल बरसात में', 'एक और ग्रीस'-जैसी कविताओं में बराबर होता रहता है। इसके साथ ही तानाशाही के ध्वंस पर ग्रीस के पुनर्स्थापन की कामना अनेक कविताओं की प्रेरणा रही है। इस प्रेरणा ने कहीं-कहीं संघर्ष का रूप धारण कर लिया है। प्रायः सभी कविताएं काव्य कला की दृष्टि से सुंदर हैं। अनुवाद सुंदर है।

पुष्पचरित एक अन्य छंदोबद्ध कविता संग्रह है। ओम प्रभाकर की ये कविताएं एक ओर जहां प्रकृति के जाने-माने विषयों को लेकर चली हैं, वहां 'टूटी झरी बस्ती', 'बीत गए सावन,' 'भीड़ से निकला' आदि कविताएं जीवन के आधुनिक बोध से संबद्ध हैं। ये कविताएं पाठकों तक अपने भावों को संप्रेषित करने में सफल कही जा सकती हैं।

जलसाघर में श्रीकांत वर्मा की कविताएं हैं। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जीवन का मूल्यांकन करती ये कविताएं कहीं-कहीं प्रयोगवृत्ति से युक्त दिख[ाई] पड़ती हैं। इस दृष्टि से 'प्रजापति', 'प्र[...]' 'जोसेफ अब्रुकुआ' आदि कविता[ओं में] देखा जा सकता है। आधुनिक जी[वन के] भीषण अंधकार से निकल मानव[...] प्रकाश के लिए लालायित कवि [...] कहीं अत्यंत मार्मिक होकर पाठ[कों को] किसी स्तर पर छू गया है। यु[द्ध में] पिसती मानवता के प्रति कवि सम्वे[दना]त्मक है।

राष्ट्रीयता एवं देशभक्तिपूर्ण [भाव]नाओं से पूर्ण कविताओं का एक [...] महत्त्व होता है। **नौजवान देश के** [...] ही सैंतीस कविताओं का संकलन है।

अशक्त जनपद
लेखक : कोस्तिस पापाकोंगोस, अ[नु]वादक : सती कुमार, प्रकाशक : इंद्र[...] प्रकाशन, दिल्ली-५१, पृष्ठ : ४५, मूल्य : सात रुपये

पुष्पचरित
लेखक : ओमप्रभाकर, प्रकाशक : नेश[नल] पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृष्ठ : [...] मूल्य : सात रुपये

जलसाघर
लेखक : श्रीकांत वर्मा, प्रकाशक : रा[ज]कमल प्रकाशन, दिल्ली-पटना, पृष्ठ : १०[...] मूल्य : नौ रुपये

नौजवान देश के
कवयत्री : सरला भटनागर, प्रकाशक : अलंकार प्रकाशन, ६६६, झील, दिल्ली-५[१] पृष्ठ : ९४, मूल्य : छह रुपये

सार-संक्षेप

विदूषक के आंसू

• चार्ल्स चैप्लिन
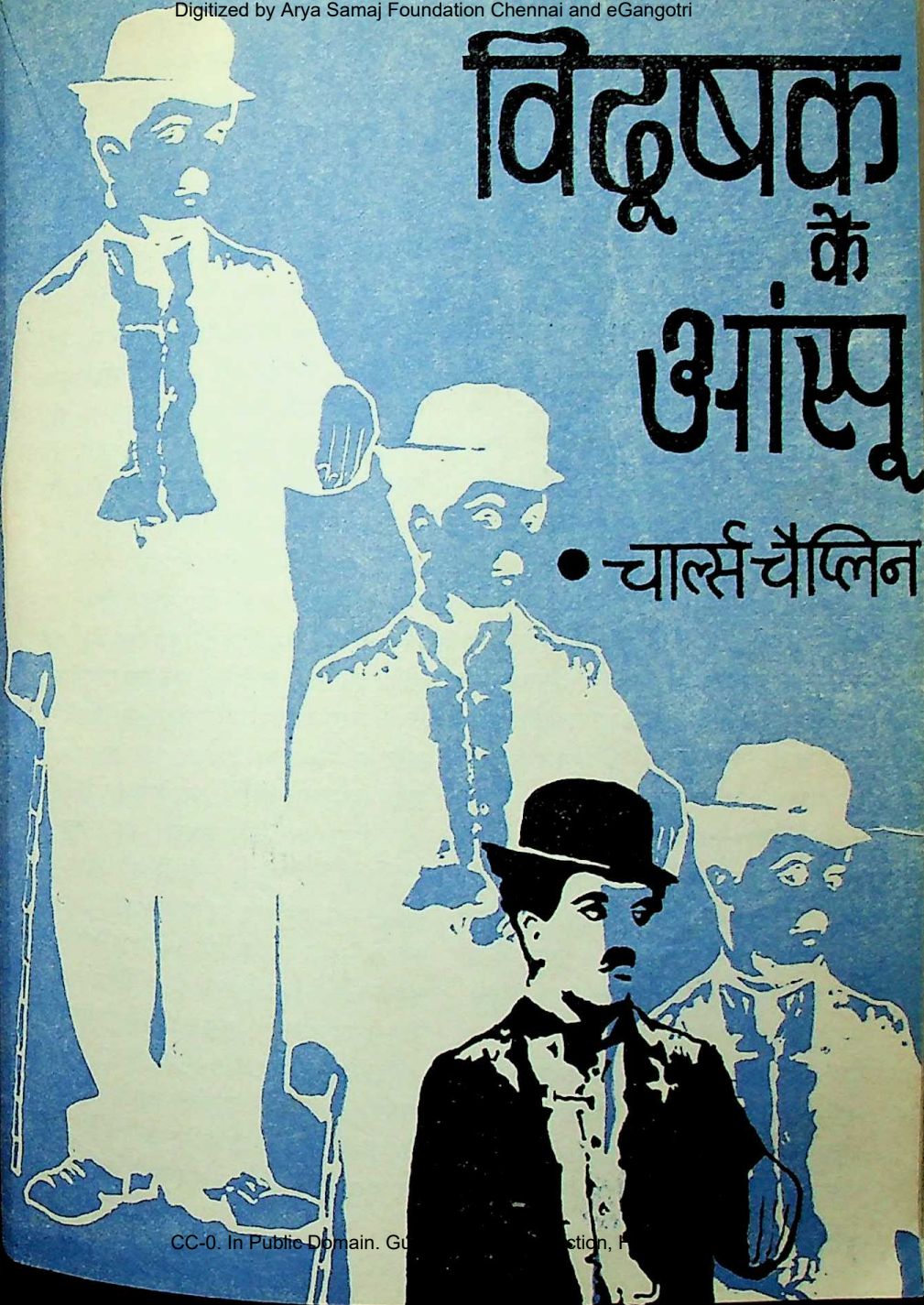
मां कहती थी कि तेरा बचपन बहुत मजे में गुजरा। उसी ने यह भी बताया कि सन १८८९ के अप्रैल महीने की १६ तारीख को रात के आठ बजे हुआ तेरा जन्म ! यह अंतिम बात ही ऐसी है जिसको मैं नहीं काट सकता। अलबत्ता मां की यह बात मैं बझिझक काट सकता हूं कि बचपन बहुत मजे में गुजरा। मेरे जन्म के समय सब वालवर्थ की ईस्ट लेन में रहते थे। बाद में, लैम्बेथ की सेंट जॉर्ज रोड पर वेस्ट स्क्वायर में पहुंच गये।

शुरू-शुरू में हमारी हालत मामूली तौर से कुछ अधिक आरामदेह थी। हम लोग तीन सुरुचिपूर्ण ढंग से सजे कमरों में रहते थे। बचपन की घटनाओं में एक मुझे यह याद है कि हर रात थियेटर जाने से पूर्व मां मुझे और सिडनी भैया को दुलराकर और फुसलाकर एक गुदगुदे बिस्तर में लिटाकर रजाई की तह में छिपा देती थी। इसके बाद वह नौकरानी को हिदायत देती कि बच्चों का ध्यान रखना।

हर काम कर लेती थी मां। बीस के आस-पास थी उसकी उम्र तब। उजली रंगत, गहरी नीली आंखें और लंबे हलके भूरे बाल ! अपनी मां को हम पूजते थे। हालांकि वह ऐसी कोई बहुत सुंदर न थी, पर हमें तो वह एक देवी ही लगती थी। हम लोगों को सजाने में उसे बड़ा गर्व अनुभव होता था। प्रायः वह सिडनी भैया को ईटन स्कूल के छात्रों-जैसा सूट (अंतर सिर्फ खूब नीची पतलून का था) और मुझ नीले मखमल का सूट और ऐसे ही दस्ताने पहनाती थी। ऐसी वेश-भूषा में जब हम निकलते तब बड़ा मजा आता।

उन दिनों लंदन एक बड़ा खामोश शहर हुआ करता था। घोड़ा-जुती ट्राम गाड़ियां वेस्टमिनिस्टर पुलवाली सड़क से बिना किसी शोर-शराबे के गुजरतीं और उसी खामोश चाल से पुल के पास बने अंतिम स्टेशन की तरफ भी चुपचाप गोल-गोल घूम जातीं। हम वेस्टमिनिस्टर पुलवाली सड़क के पड़ोस में भी रहे। बड़ा उन्मुक्त और मैत्रीपूर्ण वातावरण था वहां। सजी-धजी दूकानों, होटलों और संगीत-भवनों से घिरा हुआ था वह क्षेत्र। पुल के सामने कोनेवाली जो फलों की दूकान थी, क्या कहने थे उसके ! लगता था कि विविध रंगों की आकाशगंगा बह रही हो ! दूकान में करीने से चुने हुए नारंगियों, सेबों, नाशपातियों और केलों के पिरामिड और बाहर, नदी के पार भूरे पत्थरों से बने गंभीरता ओढ़े संसद के भवन थे !

ऐसा था मेरे बचपन का लंदन ! यादों के किन-किन झरोखों को खोलूं ! लैम्बेथ का वह वसंत; घोड़ा-जुती बस में मां के साथ सबसे ऊपर बैठकर रास्ते में पड़नेवाले पेड़ों को छूने की कोशिश करते हुए सफर करना; बसों के रुकने के बाद फुटपाथों पर बिखरे और बिखरते हुए नारंगी, नीले, हरे, हलके गुलाबी रंगों के टिकट देखना; वेस्टमिनिस्टर पुल के कोने पर गुलाब के फूल बेचनेवाली लड़कियां,

जिनकी कुशल अंगुलियां गांठ और कांपते हुए पौधों को दक्षतापूर्वक एक-दूसरे से मिलाती रहती थीं; पानी के ताजे छिड़काव से गुलाबों में से उठती हुई तर गमक जो मुझे एक अस्पष्ट-सी उदासी से भर जाया करती थी; वे एकाकी रविवार और पन-चक्कीवाले खिलौने तथा रंग-बिरंगे गुब्बारे लिये वेस्टमिनिस्टर पुल पर जाते हुए बच्चे और पीले चेहरेवाले उनके माता-पिता और वे स्टीमर जो अपनी चिमनियां आहिस्ता से झुकाकर पुल के नीचे से सरक जाते थे—क्या-क्या याद करूं ? लग रहा था जैसे किसी कुएं की तलहटी में बैठा उन सारी बातों को सुन रहा होऊं। मां की आंखें आंसुओं से भरी हुई थीं। वह बार-बार किसी का नाम ले रही थी —'आर्मस्ट्रांग ने यह कहा . . . आर्मस्ट्रांग जंगली है', आदि। उस दिन दोपहर को मुझे सारी बात का पता लगा। मां सुबह से कचहरी के लिए चली गयी थी। मां ने हमारे पिता पर बच्चों को सहारा न देने के कारण मुकदमा दायर कर रखा था। उस दिन सुबह मुकदमा मां के पक्ष में बहुत अच्छा नहीं रहा था इसीलिए वह उत्तेजित

चार्ल्स चैप्लिन—हास्य और करुणा के अद्भुत सृष्टा ! आत्मकथा 'माई ऑटोबाईग्राफी' में ८४ वर्षीय चैप्लिन ने संघर्षपूर्ण बचपन, ममतामयी मां और फिल्मों के मक्का हॉलीवुड की विजय-यात्रा का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। विश्व की प्रमुख भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। हिंदी में पहली बार इसे 'कादम्बिनी' प्रस्तुत कर रही है। —प्रस्तोता हैं : विजयसुन्दर पाठक

मेरा विश्वास है कि ऐसी छोटी-छोटी बातों से ही मेरी आत्मा, या इसे चेतना कह लीजिए, का जन्म हुआ ।

तभी कुछ घट गया। एकाएक महसूस हुआ कि मां और बाहरवाली दुनिया के साथ सब ठीक-ठाक नहीं है। सुबह से ही मां अपनी एक सहेली के साथ बाहर चली गयी थी। जब वह घर लौटी तब उत्तेजित स्थिति में थी। मैं फर्श पर खेल रहा था। ऊपर जो गरमागरमी हो रही थी मैं उससे नावाकिफ न रह सका। मुझे तो यों थी। आर्मस्ट्रांग हमारे पिता का वकील था।

अपने पिता के बारे में मैं मुश्किल से ही कुछ जानता था। जानता भी कैसे ? मुझे याद ही नहीं पड़ता कि वे हम सबके साथ कभी रहे भी हों! वे एक गंभीर प्रकृति के तथा विचारों में मगन रहनेवाले व्यक्ति थे। आंखें उनकी काली थीं और वे भी रंगमंच पर अभिनय करते थे। मां की राय में वे नेपोलियन की तरह थे। हलके मध्यम सुरवाली आवाज के मालिक थे वे। उन्हें बहुत अच्छा कलाकार कहा
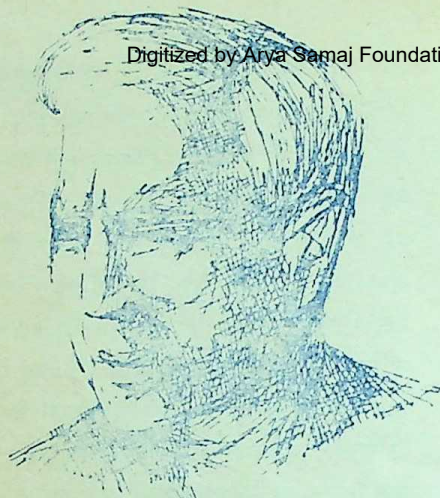
चार्ली : संघर्षों के बाद

जाता था। उस सस्ते जमाने में भी उन्हें प्रति सप्ताह चालीस पौंड की आय थी। परेशानी यह थी कि वे नशा बहुत करते थे। मां कहती थी कि उसने इसी कारण उनसे संबंध विच्छेद किया।

पिताजी के बारे में मां जब कुछ सुनाती तब उदास भी होती और विनोदी भी। पिताजी जब पीते थे तब आपे से बाहर हो जाते थे। ऐसे ही एक मौके पर मां घबराकर अपने कुछ मित्रों के साथ किसी दूसरे शहर में चली गयी। परेशान पिताजी ने उसे तार भेजा —'क्या इरादा है? फौरन जवाब दो!' तार से ही मां ने जवाब भेजा—'पार्टियां, दावतें और मौज-मस्ती प्रियतम!'

मां जब सत्रह वर्ष की थी, वह एक प्रौढ़ के साथ अफ्रीका भाग गयी। बाद में, अकसर वह अपने उन दिनों के बारे में बताती थी कि बाग-बगीचों, मकानों और जीन कसे घोड़ों की मालकिन के रूप में कैसा ऐश किया उसने।

अठारह वर्ष की उम्र में मां ने मेरे भाई सिडनी को जन्म दिया। मुझे बताया गया कि वह एक लार्ड का बेटा है और जब वह इक्कीस साल का हो जाएगा तब वसीयत के अनुसार दो हजार पौंड का मालिक हो जाएगा। यह सुनकर मुझे खुशी भी हुई और परेशानी भी।

मेरे जन्म के एक वर्ष बाद मां और पिताजी अलग हो गये। वह स्वयं एक अभिनेत्री थी, और अपने ढंग की अभिनेत्री थी। वह प्रति सप्ताह पच्चीस पौंड कमा लेती थी और हम दोनों भाइयों का भरण-पोषण करने में खुद समर्थ थी। बदकिस्मती के दिनों में ही उसने मदद मांगी।

वह काफी समय से अपनी आवाज के बिगड़ने से परेशान थी। इसीलिए पांच वर्ष की उम्र में मैंने पहली बार रंगमंच पर कदम रखा।

मुझे याद है कि जब मंच पर मां का स्वर लड़खड़ाया तब मैं पार्श्वभाग में खड़ा था। दर्शकों ने तुरंत हो-हुल्लड़ शुरू कर दिया। मैं तब समझ ही नहीं पा रहा था कि सब शोर-शराबा आखिर है किसलिए। पर शोर बढ़ता गया। मजबूर होकर मां जब मंच से हट आयी तभी वह शोर बंद हुआ। मां बहुत परेशान थी। मैनेजर ने मुझे मां के मित्रों के सामने अभिनय करते हुए देखा था, अतः जब उसने मां से कहा

कि इसे अपनी जगह मंच पर भेज दो तब वह उससे बहस करने लगी।

इस हुड़दंग में मैनेजर ने मेरा हाथ पकड़ा और मंच पर ले जाकर खड़ा कर दिया। जो गाना मैंने चुना, बड़ा हिट था।

आधे गाने के दौरान ही मंच पर सिक्के बरसने लगे! मैं एकदम रुका और घोषणा की कि पहले मैं सिक्के उठाऊंगा, बाद में गाना पूरा करूंगा। इस पर लोग खूब हंसे। मैं पूरे आत्मविश्वास में था। मैंने दर्शकों से बातचीत की, नाचा और खूब नकल उतारी। जिन-जिन की मैंने नकल उतारी उनमें मां भी थी। मां की नकल उतारने के पीछे मेरा मंतव्य उसका मजाक उड़ाना नहीं था। मैं तो बिना कुछ सोचे-बूझे नकलें उतार रहा था सो मां के स्वर की भी नकल उतार डाली। मैंने जब मां के लड़खड़ाते स्वर की नकल उतारी तब दर्शकों पर उसकी प्रतिक्रिया देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। वे हंस रहे थे, तालियां बजा रहे थे और दूने जोश से मंच पर सिक्के फेंक रहे थे! मां जब मंच पर मुझे उठाकर ले जाने के लिए आयी तब दर्शकों ने और जोर-जोर से तालियां बजाकर उसकी उपस्थिति का स्वागत किया। मंच पर वह मेरी पहली रात थी और मां की आखिरी रात!

इस बीच एक कमरे में पहुंच गये थे हम। घर का सामान कम होता गया और पड़ोस भी क्रमशः शुष्क मिलता गया।

मजबूर होकर मां ने नाटकों में पहनी जानेवाली अपनी पोशाकों को बेचने के लिए निकाला। अब तक उसने उन्हें इस आशा में नहीं बेचा था कि कंठ ठीक हो जाएगा, तब इनकी जरूरत पड़ सकती है। प्रायः वह पोशाकोंवाले उस संदूक में कुछ ढूंढ़ती तो हमें उसमें कोई विग या सलमा-सितारे जड़ी पोशाक दिखायी पड़ जाती। हम उससे कहते, "मां, इसे पहन ले।" ऐसे ही एक मौके पर उसने एक जज की टोपी

चार्ली : संघर्षों के दौरान

और गाउन पहना और कमजोर आवाज में अपना लिखा एक हिट गीत गाने लगी—

आई 'म ए लेडी जज
ऐंड ए गुड जज, टू
जजिंग केसेज फेयरली
दे आर सो वेरी रेयरली
आई मीन टू टीच द लॉयर्स
ए थिंग ऑर टू
ऐंड शो देम जस्ट एक्जेक्टली
व्हाट द गर्ल्स कैन डू...

फिर आश्चर्यजनक सहजता के साथ वह एकदम सुंदर नृत्य करने लगी और जो काम करना था उसे भूल गयी। ऐसे अवसर प्रायः आते ही रहते थे।

वह शाम मैं कभी नहीं भूल पाऊंगा! ओकले स्ट्रीट के तहखाने में बने एक कमरे-वाले किराये के मकान में बीमार पड़ा था। सिर्फ मां मौजूद थी मेरे पास। सिडनी रात्रिकालीन स्कूल में गया हुआ था। 'न्यू टेस्टामेंट' और छोटे बच्चों के लिए ईसा के प्यार के संबंध में वह मुझे पढ़कर और अभिनय के द्वारा समझा रही थी। शायद मेरी बीमारी के कारण वह भावुक हो उठी हो, पर ईसा की उसने बहुत प्रभावोत्पादक और मार्मिक व्याख्या प्रस्तुत की। उसने उस पापिन स्त्री के प्रति, जिसे भीड़ पत्थरों से मार डालने को तत्पर थी, ईसा के सहिष्णुतापूर्ण शब्दों को पढ़ा—"तुममें से जिसने कभी पाप न किया हो, पहले उसी को इस स्त्री पर पत्थर फेंकने दो।" उसने ईसा के बंदी किये जाने और उनके शांत, सौम्य स्वभाव के बारे में बताया। भाव-विह्वल हो वह बताती रही कि उन लोगों ने ईसा के कपड़े तार-तार कर दिये, उन्हें घसीटा, कांटों का ताज पहनाया और उन पर थूका। इसके बावजूद वे शांत रहे और बगलवाली सूली पर लटके चोर के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते रहे। मां के गालों पर आंसू बह रहे थे। सिसकियों के बीच वह कहती रही, "आया तुम्हारी समझ में? कितने मानवीय थे वे... बिलकुल हमारी तरह! उन्हें भी संदेहों का शिकार बनना पड़ा!"

मां के शब्दों ने मुझे इतना विह्वल और अभिभूत कर दिया था कि मेरा मन हुआ, आज रात मैं मर जाऊं और ईसा के सामने पहुंच जाऊं। अंधेरे-से कमरे में मां मुझे इस संसार का अतुलनीय और सर्वाधिक सहृदय प्रकाश लगी, ऐसा प्रकाश जिसने विश्व-साहित्य और रंगमंच को महानतम और समृद्धतम प्रेम, करुणा और मानवता के कथानकों से भर दिया है।

सर्दियां आ रही थीं और सिडनी के पास कपड़े नहीं रहे थे। सो, मां ने अपनी मखमल की पुरानी जैकेट से उसके लिए कोट तैयार कर दिया। आस्तीनों पर लाल और काली पट्टियां, कंधों पर चौड़ी तहें—सिडनी ने जो रोना शुरू किया तो इंतहा कर दी। "लड़के मजाक उड़ायेंगे ... स्कूल वाले क्या कहेंगे," वह रोता जाता और कहता जाता। मां ने उसे समझाया कि दूसरों के कुछ कहने की कौन परवाह करता

है, और इसे पहनकर तू बहुत अमीर भी तो लगेगा !

मां लंबी बीमारी से ठीक हुई तो हम समुद्र-किनारे छुट्टियां मनाने गये। मां ने हम लोगों को सारे नये कपड़े पहनाये थे।

पहली बार जब समुद्र की और मेरी आंखें मिलीं तब उसने मुझे सम्मोहित कर दिया। किसी जीवंत, कांपते हुए दैत्य की तरह वह लटका हुआ-सा लगा। क्या दिन था वह भी —केसरिया समुद्र-तट, गुलाबी और नीली बालटियां, लकड़ी के फावड़े, रंगीन शामियाने और छाते, हंसती हुई छोटी-छोटी लहरों पर मौजभरी फिसलती नौकाएं, समुद्री घासपात और बिरोजे की गंध ! उस दिन की स्मृति मुझे प्रसन्नता और तृप्ति से भर देती है।

बालू-घड़ी में भरी रेत की तरह अंत में, हमारा पैसा भी खत्म हो गया। फिर वे ही मुसीबत भरे दिन ! मां ने नौकरी के लिए हाथ-पैर मारे, पर कुछ नहीं बना। समस्याओं के पहाड़ सामने खड़े होने लगे।

और कोई चारा था नहीं। दो बच्चों का बोझ, गिरता हुआ स्वास्थ्य, सो मां ने निश्चय किया कि लैम्बेथ दरिद्राश्रम में जाना चाहिए। दरिद्रों को ये आश्रम ही काम दिया करते थे। एवज में भरण-पोषण की सामग्री उपलब्ध हो जाती।

तीन सप्ताह बाद हमें लंदन से बारह मील दूर 'हानवेल स्कूल्स फॉर ऑर्फन्स ऐंड डेस्टिट्यूट चिल्ड्रन' में भेज दिया गया। शुरू के कुछ दिन मां बहुत याद आयी। सिडनी तो खैर, बड़े बच्चों के साथ स्कूल जाने लगा पर मैं छोटे बच्चों के साथ रहा। हम दोनों अलग-अलग वार्डों में सोते थे, अतः कभी-कभार ही एक-दूसरे को देख पाते थे। छह वर्ष से कुछ ही अधिक रहा होऊंगा मैं, लेकिन उस एकाकी जीवन ने मुझमें निपट निस्सहायता की भावना भर दी। सोने से पहले प्रार्थना के लिए जब मैं अपने साथियों के साथ झुकता तब खिड़की के बाहर गहराता सूर्यास्त और झोका खाती हुई-सी पहाड़ियां मुझे गहन अवसाद और नैराश्य से भर देती थीं। 'मेरे साथ रहो; तेजी से सांझ झुकी आती है; अंधेरा गहराता आता है; स्वामी मेरे साथ रहो'—प्रार्थना की इन पंक्तियों का अर्थ तो मैं नहीं समझता था, पर इसकी धुन और गोधूलि का वह समय मेरी उदासीनता को बढ़ा देते थे।

मुझे अपना नाम लिखना सिखाया गया—'चैप्लिन'। शब्द ने मुझे अपनी ओर खींच लिया। मैं सोचने लगा कि यह मेरी तरह ही दिखायी पड़ता है ! आश्रम को हमने छोड़ दिया।

केन्निंगटन पार्क के पीछे मां ने किराये पर एक कमरा ले लिया था। लेकिन हमें फिर दरिद्राश्रम लौटना पड़ा। मां को नौकरी नहीं मिल सकी थी, और पिताजी को मिलने वाले रोल भी घटते जा रहे थे। अब हम नॉरवुड स्कूल में पढ़ने जाने लगे। यह स्कूल और भी अधिक आनंदहीन था।

एक बार जब सिडनी फुटबाल खेल रहा था, दो नर्सों ने उसे सूचना दी कि तुम्हारी मां सनक गयी है और उसे केन

हिल पागलखाने में भेज दिया गया है। सुनकर सिडनी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखायी। खेल के बाद एकांत में जाकर वह फूट-फूटकर रोया। जब मुझे उसने सूचना दी तब रोया तो मैं नहीं, पर व्याकु कर देनेवाली निराशा ने मुझे घेर लि क्यों किया उसने ऐसा ? खुशमिजाज मजाकिया मां पागल कैसे हो सकती है

हमें सरकारी सूचना मिली कि हरी के आदेशानुसार पिताजी को सि की और मेरी देखभाल करनी होगी

दरिद्राश्रम के कुछ लोग और कारी हमें डबलरोटी ढोनेवाली एक गा में बिठाकर २८७ केन्निंग्टन रोड आये। दरवाजा खोलनेवाली महिला पिताजी की दूसरी पत्नी थी। देखने में अस्तव्यस्त और चिड़चिड़ी लगती थी इसके बावजूद वह आकर्षक, लंबी सुगठित थी। उदास हिरनी-जैसी आं और भरे ओठोंवाली वह महिला तीस वर्ष के आसपास रही होगी। लू उसका नाम था।

पिताजी जब आये, उन्होंने सहृदय से हमारा स्वागत किया। वे मुझे चुं की तरह खींचते थे। खाने के वक्त मैं बड़े गौर से देखता रहा—वे कैसे खाते कैसे छुरी, कांटा पकड़ते हैं और कैसे कराते हैं, आदि। आगे चलकर वर्षों मैं उनकी नकल करता रहा।

कुछ दिनों बाद, जब पिताजी नाटक मंडली के साथ बाहर गये हुए थे, लूसी तार मिला कि हमारी मां को पागलखा से मुक्ति मिल गयी है। एक-दो दिन मकान-मालकिन ने आकर बताया दरवाजे पर एक महिला सिडनी और

चार्ली को बुला रही है।

सिडनी अब सोलह वर्ष का हो गया था, अतः अफ्रीका जानेवाली एक यात्री-नौका पर उसे बिगुल-वादक का काम मिल गया। तनख्वाह उसकी तय की गयी दो पाउंड दस शिलिंग प्रति माह। मालिक उसे पैंतीस शिलिंग एडवांस में देने को तैयार था। हम लोग चेस्टर स्ट्रीट में एक नाई की दूकान के ऊपर दो कमरोंवाले फ्लैट में चले गये।

इन्हीं दिनों केन्निगटन रोड में श्री और श्रीमती मैकार्थी रहने के लिए आये। श्रीमती मैकार्थी एक विदूषिका थीं और मां की मित्र। पति चार्टर्ड एकाउंटेंट थे। लेकिन मां बहुत कम मिलने जाती।

सिडनी की खबर नहीं आयी। मुझमें लड़कपन कम होता तो मैं समझ सकता था कि मां बहुत परेशान है?

एकाएक श्रीमती मैकार्थी की मृत्यु हो गयी। तुरंत मेरे मन में आया कि 'अगर मां मैकार्थी साहब से विवाह कर ले तो कितना अच्छा रहे! मां की सारी दिक्कतें दूर हो जाएंगी।'

जैसे ही श्रीमती मैकार्थी की अंत्येष्टि हुई मैंने मां से कहा, "तुम मैकार्थी साहब से खूब मिला-जुला करो। शर्त लगाता हूं, वे तुमसे शादी का प्रस्ताव करेंगे।"

एक फीकी मुसकराहट से मां ने कहा, "बेचारों को मौका तो मिलने दो!"

"तुम अगर पहले की तरह सज-धज बन रहो तो वे जरूर तुमसे कहेंगे, पर तुम तो कुछ करतीं नहीं! इस गंदे कमरे में पड़ी रहती हो, बस!"

दूसरे दिन मैं जब घर के पास पहुंच ही पाया था कि पड़ोस के कुछ बच्चों ने मुझे रोक लिया। एक छोटी लड़की ने मुझसे कहा, "तुम्हारी मां पागल हो गयी है।" मुझे थप्पड़-सा लगा। दूसरी ने कहा, "पास-पड़ोस में वह सबको कोयला बांट रही थी और कह रही थी कि तुम्हारे बच्चों की वर्षगांठ पर भेंट दे रही हूं।"

मैं आगे नहीं सुन सका। भड़ाक-से दरवाजा खोलकर कमरे में घुस गया। चढ़ती सांस के थमने का इंतजार करते-करते मैंने देखा कि मां खिड़की में बैठी है। मैं दौड़कर उसकी गोद में गिर गया। मैंने सुबकते हुए पूछा, "क्या तुम घर-घर जाकर कोयले..."

"मैं सिडनी को ढूंढ़ रही थी। उन लोगों ने उसे छिपा रखा है... मैकार्थी-लोगों को पता है कि वह कहां है?"

अस्पताल में मां हर टेस्ट के लिए तैयार हो गयी। बच्चे की तरह उसने डॉक्टरों और नर्सों के हर आदेश का पालन किया, लेकिन जैसे ही नर्स मां को अलग ले जाने लगी, वह एकाएक मुझे मुड़कर देखने लगी। उसे यह दुःखद अनुभूति हो गयी थी कि मैं अकेला रह जाऊंगा।

"अच्छा, कल आऊंगा मां," मैंने कृत्रिम उत्फुल्लता से कहा। और वे उसे ले गये।

तरह-तरह के काम किये मैंने । अखबार बेचे, प्रेस में छपाई की, खिलौने बनाये, डॉक्टरों के यहां माडल का काम किया; पर सिडनी की ही तरह अंतिम लक्ष्य को सदैव ध्यान में रखा मैंने। कोई भी काम करता होता, पर समय निकालकर टिप-टाप होकर ब्लैकमोर की थियेटर एजेंसी में काम की तलाश के लिए जरूर पहुंचता। पहली बार जब वहां गया, बड़े-बड़े खुर्राट अभिनेता-अभिनेत्री वहां लाइन लगाये खड़े थे। मुझे बड़ी शर्म लग रही थी। अतः मैं दूर एक कोने में खड़ा हो गया। एक क्लर्क आया और उसने धीरे-धीरे भीड़ छांटना शुरू कर दी। मैं ही रह गया।

उसने मेरा सारा विवरण नोट कर लिया और कहा कि अगर कभी कोई रोल तुम्हारे लायक हुआ तो सूचना भेज देंगे। एक दिन मुझे पोस्टकार्ड द्वारा सूचना दी गयी कि मैं एजेंसी पहुंच जाऊं। उस दिन मैं नये सूट में था। स्वयं ब्लैकमोर से मेरी बातें हुईं। उसने मुझे एक पत्र दिया और कहा कि चार्ल्स फ्रामैन के दफ्तर में इसे सी. ई. हैमिल्टन को दे देना। हैमिल्टन को बड़ा आश्चर्य हुआ कि मैं इतना छोटा हूं। जाहिर है कि मैं झूठ ही बोलता! साढ़े बारह की अपनी उम्र में मैंने डेढ़ वर्ष और जोड़ा, और तुरंत कह दिया, "मैं पूरे चौदह साल का हूं जी!" हैमिल्टन ने मेरे लिए 'शर्लाक होम्स' नाटक में एक नौकर का रोल तजवीज किया था। मुझे मंडली के साथ चालीस सप्ताह तक भ्रमण करना था। शरद ऋतु में मुझे चल पड़ना था।

"इस बीच", उसने कहा, "एक नये नाटक 'जिम द रोमांस ऑव एकॉकनी' में भी तुम्हारे लिए रोल है। 'शर्लाक होम्स' नाटक के नायक सेंट्सबरी साहब इसके लेखक हैं। तनख्वाह मिलेगी प्रति सप्ताह दो पौंड दस शिलिंग। 'शर्लाक होम्स' के लिए भी यही वेतन मिलेगा। हालांकि वेतन आशा के विपरीत बहुत ज्यादा था, पर मैंने पलक तक नहीं झपकायी। बड़ी गंभीरता से मैंने जवाब दिया "जी, मुझे अपने भाई से मशविरा करना होगा शर्तों के बारे में।" वह हंसने लगा। लगता था उसे बड़ा मजा आ रहा है। हैमिल्टन ने मुझे सेंट्सबरी के नाम एक पत्र देकर कहा कि लीसेस्टर स्क्वायर में 'ग्रीन रूम क्लब' में उन्हें दे देना।

'ग्रीन रूम' में सेंट्सबरी ने मुझे मेरे रोल के संवाद पकड़ा दिये और कहा कि यह एक महत्त्वपूर्ण रोल है। घर जाकर इन्हें याद कर लो क्योंकि रिहर्सल अगले सप्ताह से पहले नहीं है।

घर पर सिडनी मेरा रोल पढ़कर सुनाता और संवाद रटने में सहायता करता। रोल बहुत बड़ा था, पर तीन दिन में मैं पूरी तरह अपने संवाद रट चुका था। रिहर्सल में एक शब्द ही मैं गलत बोला। संवाद था—"हू डू थिंक यू आर—मिस्टर पिअरपांट मार्गन?" पर नाम बोलता मैं—"पुटरपिंट मार्गन!" सेंट्सबरी ने पुटरपिंट मार्गन ही पसंद किया।

रिहर्सल के उन दिनों तकनीक की एक नयी दुनिया मेरे सामने उजागर हुई।

चालीस सप्ताह के बाद हम 'शर्लाक होम्स' के लिए लंदन के निकटवर्ती क्षेत्रों के लिए चल दिये। सिडनी और मैं अब अधिक समृद्ध कालोनी केन्निंगटन रोड पर रहने के लिए आ गये। प्रबंधकों से मैंने प्रार्थना की कि वे सिडनी के लिए भी कोई रोल दे दें। उन्होंने इस नाटक के अगले दौरे के लिए उसे ३५ शिलिंग प्रति सप्ताह पर बुक कर लिया। अब हम दोनों साथ चल दिये। सिडनी हर सप्ताह मां को पत्र लिखता था। दूसरा दौरा जब समाप्त होने को आया, अस्पताल से हमें मां के पूर्णतया स्वस्थ हो जाने का समाचार मिला। जल्दी-जल्दी हमने तैयारियां कीं। हमने मां की अस्पताल से छुट्टी का और उसे 'रीडिंग' पहुंचवाने का प्रबंध किया, पर मां ने लंदन लौट जाने की इच्छा व्यक्त की, क्योंकि वह स्थिर हो जाना चाहती थी ताकि नाटक-मंडली के दौरे से जब हम लौटें तब आराम करने के लिए हमारे पास सुविधाजनक घर हो। सो, लंदन में चेस्टर स्ट्रीट में नाई की दूकान के ऊपर उसने पुरानावाला फ्लैट किराये पर ले लिया। मां अब बदल-सी गयी थी!

कुछ दिनों बाद एकाएक हमें अधिकारियों ने सूचना भेजी कि मां फिर पागल हो गयी है। फिर कभी उसका मस्तिष्क पूरी तरह संतुलित नहीं हो पाया। कई वर्ष तक वह केन हिल चिकित्सालय में रही। जब हम कुछ समर्थ हुए, हमने एक निजी चिकित्सालय में उसका इलाज करवाया, पर अपने जीवन के अंतिम सात वर्ष उसने सुख-सुविधा में बिताये।

'शर्लाक होम्स' का अंतिम शो खत्म हुआ और एक बार फिर हम दोनों भाई बेकार हो गये। पर जल्दी ही उसे चार्ली मैनोन की मंडली में विदूषक का रोल मिल गया। फ्रेड कार्नो ने सिडनी का काम पसंद किया तो अपनी कंपनी में उसे प्रति सप्ताह चार पौंड पर रख लिया।

एक महीने बाद कार्नो ने सिडनी से कहा कि जरा अपने भाई से मिलवाओ। मैं जब पहुंचा, कार्नो बोला, "सिडनी तुम्हारी बहुत तारीफ करता है। क्या 'फुटबाल मैच' में तुम वेलडन के साथ अभिनय कर सकते हो?" वेलडन को विशिष्ट वेतन मिलता था—चौंतीस पौंड प्रति सप्ताह। मैंने बड़े विश्वास से कहा कि मुझे सिर्फ मौका मिलने भर की बात है। कार्नो मुसकराया, बोला, "सत्रह वर्ष की उम्र बहुत कम होती है, पर तुम तो और भी छोटे लगते हो!"

मैंने सहज भाव से कंधे उचकाकर कहा, "मेकअप भी तो कोई चीज होती है।" कार्नो हंस पड़ा। बाद में उसने सिडनी को बताया कि चार्ली को कंधे उचकाता देखते ही मैंने उसे रख लेने का निर्णय ले लिया था।

इस प्रहसन में जब तक वेलडन मंच

पर नहीं आता था, दर्शकों को हंसी ही नहीं आती थी। जिस रात नाटक शुरू होना था मेरे स्नायु ऐसे हो गये थे जैसे किसी घड़ी में कसकर चाभी भर दी गयी हो। विशाल मंच के पीछे मैं काफी देर तक व्यग्रता में चहल-कदमी करता रहा।

संगीत शुरू हो गया! लो, परदा भी उठ गया। भावनात्मक उथल-पुथल के बीच मैं मंच पर जा पहुंचा। ऐसे में या तो कोई बन जाता है या बिगड़ जाता है। मंच पर पहुंचते ही मेरा उद्वेग शांत हो गया। मैंने अपने कंधे उचकाये, अंगुलियां चटकायीं। मंच पर आगे बढ़ते समय मेरा पांव मुदगरों की एक जोड़ी पर पड़ गया। फिर एक लटकते हुए भरे हुए झोले में मेरा बेंत अटक गया, और जब उससे छूटा तो तड़ाक से झोला मेरे चेहरे पर आ लगा। मैं धक्के के कारण आगे-पीछे झूमने लगा तो मेरा सिर बेंत से जा लगा। दर्शकों ने अट्टहास किया।

तीसरी रात कार्नो भी शो में आया। जैसे ही मैंने मंच पर कदम रखा, दर्शकों ने तालियां बजाकर मेरा स्वागत किया। बाद में कार्नो मुसकराता हुआ मेरे पास आया और सुबह दफ्तर में आकर कांट्रैक्ट पर हस्ताक्षर करने को कह गया। पर वेलडन मुझसे कुढ़ गया। मंच पर उसे कई बार मेरे तमाचा मारना होता था। कभी-कभी मुझे जानबूझकर वह अनावश्यक रूप से जोर से तमाचा मार देता था।

मेरी दिनचर्या और वातावरण बड़े नीरस थे। जिंदा रहने के लिए कुछ अ[illegible] कर लेना ही मेरा उद्देश्य नहीं था। मैं [illegible] एकाकी हो चला था। एक बार 'स्ट्री[illegible] एम्पायर' में हमारा कार्यक्रम था। भयं[illegible] गरमी के कारण आधा हॉल खा[illegible] था। हमारे कार्यक्रम से पहले एक नृ[illegible] गान मंडली ने कार्यक्रम प्रस्तुत किय[illegible] इस कार्यक्रम के दौरान मैं विंग में एका[illegible] खड़ा था। नृत्य करते-करते एक लड़[illegible] जब घेरे में से निकल आयी तब अन्य ल[illegible] कियां हंसने लगीं। एक लड़की मेरी तर[illegible] देखने लगी कि मैं मजाक का आनंद [illegible] रहा हूं या नहीं।

लड़की सुंदर थी। मुझे मानों क[illegible] छू गया। हम-लोग बाद में मिलने, जु[illegible] और घूमने, फिरने लगे। लेकिन यह रोमां[illegible] चार दिन में ही चल बसा। हेटी—लड़[illegible] का यही नाम था—एक दिन मिलने आ[illegible] तो अजीब मूड में। प्यार में कही, पू[illegible] गयी हर बात का जवाब वह यही देती [illegible] 'अभी तो पंद्रह साल की हूं।' उसने मे[illegible] हाथ तक पकड़ने से इनकार कर दिया[illegible] जब हम बिछुड़े तो उसने कहा, "नमस्ते... मुझे अफसोस है।" उसके इन शब्दों [illegible] जैसे मुझे चाबुक मार दिया हो।

डूबा हुआ मन लिये मैं मंडली के सा[illegible] दौरे पर निकल गया। एक दिन लं[illegible] कार्यालय से खबर आयी कि 'फुटबा[illegible] मैच' में इस बार वेलडन का स्थान मु[illegible] दिया गया है। प्रदर्शन भी लंदन के स[illegible] त्कृष्ट संगीत-भवन ऑक्सफोर्ड में हो[illegible]

था। मुझे लगा कि मेरा सितारा चढ़ रहा है, लेकिन पहले रिहर्सल में मेरी आवाज भर्रा गयी। किसी तरह ठीक ही नहीं हुई। जिस रात नाटक शुरू हुआ, मेरी आवाज दर्शकों तक पहुंच ही नहीं पायी। मेरे सपने चूर-चूर हो गये। कार्नो नाराज हुआ सो अलग। इन्फ्लुएंजा ने भी धर दबाया। कांट्रेक्ट खत्म होने का समय आ रहा था। अतः मैं कार्नो के पास गया और वेतन-वृद्धि की मांग की। कार्नो बड़े हीले-हवाले के बाद माना।

कार्नो की अमरीकी कंपनी का मैनेजर आल्फ रीव्स जब इंगलैंड आया तब अफवाह हुई कि वह एक मुख्य विदूषक की तलाश में आया है। मैं भी अमरीका जाने का इच्छुक था कि शायद वहां नये वातावरण में मेरा आत्मविश्वास फिर लौट आये। रीव्स मेरी कला से प्रभावित हो गया था अतः उसने कार्नो से कहा कि मैं चैप्लिन को अमरीका ले जा रहा हूं। वह सहमत हो गया। जानेवाले दिन मैं ने सिडनी को तार भेजा—"अमरीका जा रहा हूं। खबर भेजता रहूंगा.. "

एक रविवार को सुबह दस बजे हम न्यूयार्क पहुंच गये। अमरीका में कार्नो का बड़ा यश था। हालांकि प्रहसन मुझे पसंद नहीं था, पर जिस दिन शो शुरू हुआ, मैंने अभिनय में पूरी ईमानदारी से परिश्रम किया। पर दर्शक पत्थर बने बैठे रहे।

तीसरे सप्ताह फिफ्थ एवेन्यू थियेटर में हमने कार्यक्रम प्रस्तुत किया। दर्शक अधिकतर अंगरेज बटलर या नौकर थे। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब हमारा कार्यक्रम खूब पसंद किया गया। इसी सप्ताह एक एजेंट ने हम सब को बीस सप्ताह के भ्रमण-प्रदर्शन के लिए बुक कर लिया।

जब हम न्यूयार्क लौटे, विलियम मॉरिस ने हमें अपने थियेटर में छह सप्ताह तक कार्यक्रम प्रस्तुत करने के लिए निमंत्रित किया। यहां भी खूब सफलता मिली। इस कार्यक्रम को देखने एक युवक भी अपने मित्रों के साथ चला आया था। उनमें से एक ने कहा, "अगर कभी मैंने नाम कमाया तो इसे रोल जरूर दूंगा।" उसका मतलब मुझसे था, और मैं उस समय मंच पर 'ए नाइट इन एन इंगलिश म्यूजिक हाल' में शराबी का अभिनय कर रहा था।

रीव्स के नाम एक तार आया —वहां चाफिन या मिलते-जुलते नाम का कोई व्यक्ति हो तो उससे 'केसेल ऐंड बाऊमैन,' २४ लांगेकर बिल्डिंग, ब्राडवे पर संपर्क करने को कहो।

चार्ल्स केसेल, जो 'कीस्टोन कामेडी फिल्म कंपनी' का एक मालिक था, ने बताया कि 'मैक सेन्नेट ने आपको एक बार शराबी का अभिनय करते देखा था। अगर आप वही कलाकार हैं तो फोर्ड स्टर्लिंग की जगह काम करना मंजूर कर लीजिए।' मैंने कहा कि मैं प्रति सप्ताह २०० डालर वेतन लूंगा। केसेल ने कहा

कि यह तो सेन्नेट निर्णय लेंगे, और आपको सूचना भेज दी जाएगी। सूचना आयी कि पहले तीन माह १५० डालर, फिर शेष नौ माह के लिए १७५ डालर प्रति सप्ताह पर साल के लिए कांट्रेक्ट हो सकता है।

मैक सेन्नेट मुझे तुरंत स्टूडियो में ले गया। एक-दो अभिनेताओं से परिचय के बाद मैं काम देखने में व्यस्त हो गया। तीन सेट थे और तीन कामेडी कंपनियां काम कर रही थीं। एक सेट पर मेबल नार्मंड एक दरवाजा खटखटा रही थी और चिल्ला रही थी—"अंदर आने दो।" फिर कैमरा रुक गया। मुझे पता नहीं था कि फिल्में इस तरह टुकड़ों में बनती हैं।

कई दिन तक मैं स्टूडियो घूमता रहा, पर मुझे काम के लिए नहीं कहा गया।

और वह दिन भी आ गया। सेन्नेट मेबल के साथ खड़ा था। मैं भी मौजूद था। होटल की लॉबी का सेट लगा हुआ था। एकाएक सेन्नेट मुझसे बोला, "विदूषक का मेकअप कर लो। कुछ हंसी-मजाक चाहिए।"

मैंने खूब चौड़े पायचेवाली पतलून पहनी, बड़े जूते पहने और एक डर्बी हैट पहनकर हाथ में बेंत ले लिया। कोट बहुत कसा हुआ पहना। बड़ी उम्र का दिखायी देने के लिए एक छोटी मूंछ लगा ली। चरित्र के बारे में कुछ पता नहीं था मुझे। लेकिन यह पोशाक पहनते-पहनते मेरे मन में उस अज्ञात चरित्र की रूप-रेखा स्पष्ट हो गयी। बस, मैं सेन्नेट के सामने एक-से-एक बढ़कर मजाक करने लगा। मेरे दिमाग में मानों कहीं खजाना खुल गया था। सेन्नेट तो हंसते-हंसते कांपने लगा। मेरा उत्साह बढ़ा। मैंने उस चरित्र के बारे में उसे बताना शुरू किया, "यह व्यक्ति विविध व्यक्तित्वों का है। यह आवारा, भद्र, कवि, सपनों में खोया रहनेवाला, एकाकी, रोमांस के मामले में हमेशा आशावादी और जांबाज—सब कुछ है। यह आपको यकीन दिलाना चाहेगा कि मैं वैज्ञानिक भी हूं, संगीतज्ञ भी; ड्यूक भी हूं और पोलो का कुशल खिलाड़ी भी। पर यह व्यक्ति किसी बच्चे से मिठाई छीनने को भी तैयार रहता है और सड़क से सिगरेट के झूठे टोटे उठाने को भी। यह किसी महिला के लात भी मार देगा, पर बहुत क्रोध आने पर ही।" सेन्नेट को पसंद आयी बात। बोला—"शुरू हो जाओ फिर!"

कहानी का सिर्फ मुझे यह पता था कि मेबल अपने पति और प्रेमी के द्वंद्व में फंसी है। सो, होटल की लॉबी में मैं शुरू हो गया। एक महिला की टांग में मेरा पांव अड़ गया: मुड़कर मैंने टोप उठाया और माफी मांगी। इसके बाद मुड़ा तो लॉबी में एक कुरसी से टकरा गया। मैं मुड़ा और टोप उठाकर उससे माफी मांगने लगा। कैमरे के पीछे लोगों का हंसते-हंसते बुरा हाल होने लगा। अन्य लोग अपने सेटों का काम छोड़कर मेरा अभिनय देखने चले आये।

मैंने करीब पांच फिल्में की। अपनी प्रतिभा तथा रचनात्मकता के लिए मैं कहानी लिखने और उसे डायरेक्ट करने का इच्छुक था।

मुझे भी मौका मिला। मेरी डायरेक्ट की हुई पहली फिल्म थी 'कॉट् इन द रेन।' पहले दिन का काम जब सेन्नेट ने पसंद किया, मेरा उत्साह बढ़ गया। फिल्म पूरी हुई। प्रोजेक्शन रूम में उसका ट्रायल शुरू हुआ तो मैं अंदर नहीं गया। सेन्नेट देखकर लौटा और मुझसे पूछने लगा, "दूसरी कब शुरू कर रहे हो?"

कांट्रेक्ट नया होने का समय आया तो मैंने प्रति सप्ताह १,००० डालर मांगे। सेन्नेट बात टाल गया। सिडनी ने 'कीस्टोन' के बैनर में कई सफल फिल्में बनायी थीं। मैंने उससे कहा कि चलो हम लोग अपनी फिल्में बनायें, पर वह खतरा नहीं उठाना चाहता था। खैर! 'एस्सेने कंपनी' ने मुझे १,२५० डालर प्रति सप्ताह तथा ६०० डालर बोनस के रूप में पेशगी की शर्त पर रख लिया। शेष ५,४०० डालर का बोनस मुझे शिकागो में मिलना था।

शिकागो में स्टूडियो मैनेजर से तो भेंट हुई, पर कंपनी के दूसरे भागीदार जार्ज के. स्पूर का पता नहीं चला जिससे शेष बोनस लेना था। इसके बावजूद मैंने काम शुरू कर दिया। वर्षों बाद पता चला कि अपने भागीदार ऐंडरसन पर स्पूर अनाप-शनाप शर्तों पर मुझे रखने के लिए बहुत नाराज था क्योंकि पहले ही कंपनी की बनायी कामेडी फिल्में घाटा दे रही थीं। जब वह शिकागो के एक होटल में खाना खा रहा था तो लोगों ने उसे मुझसे कांट्रेक्ट करने पर बधाई दी। सारांश यह कि स्पूर ने मुझसे अपने व्यवहार के लिए क्षमा मांगी और पैसा अदा कर दिया।

यह सुनहरा भविष्य क्या लाएगा मेरे लिए? आंधी की तरह से मेरी गोद में धन और यश बरस रहा था। डर भी लगता था, और अच्छा भी। 'कारमेन' के निर्माण के समय मैं सांता मोनिका में समुद्र के सामने बने एक मकान में रहता था। फिल्म समाप्त हो चुकी, तो तुरंत सिडनी को मैंने तार से सूचित कर दिया कि किस ट्रेन से आ रहा हूं। पांच दिन में मैं वहां पहुंचा। बिना मेकअप के मुझे कोई पहचानता नहीं था। टेक्सास के अमारिलो स्टेशन पर गाड़ी रुकी तो भीड़ ने डब्बा घेर लिया। नाश्ते से भरी मेजें प्लेटफार्म पर थीं। जगह-जगह झंडियां और बंदनवार थे। एकाएक मुझे सुनायी दिया, "चार्ली चैप्लिन कहां हैं?"

मैं पूछ बैठा, "क्या बात है? मैं ही हूं।" उस समय मैं शेव करने के लिए चेहरे पर साबुन रगड़ चुका था।

एक सज्जन बोले, "इस नगर के मेयर और आपके तमाम प्रशंसकों की ओर से हम आपको अपने साथ नाश्ता करने को आमंत्रित करते हैं।"

मैंने जल्दी-जल्दी मुंह धोया, कमीज पहनी टाई बांधी और कोट का बटन लगाते प्लेटफार्म पर आ गया। मेयर ने स्वागत-भाषण देने की कोशिश की, पर लगातार तालियों की गड़गड़ाहट में उसके शब्द डूब गये। भीड़ मेयर को धक्का देकर मेरे करीब आने की कोशिश कर रही थी। पुलिस ने बड़ी मुश्किल से मेयर के लिए और मेरे लिए रास्ता बनाया। मेयर का उत्साह भंग हो गया था, बोला, "ठीक है, ठीक है चार्ली! आप ट्रेन में बैठ जाएं।" कुछ शांति हुई तो मेयर ने भाषण दिया। मुझसे भी उसने कुछ बोलने के लिए कहा। अस्फुट स्वरों में एक मेज पर खड़े होकर मैंने सबको उनके प्रेमपूर्ण व्यवहार के लिए धन्यवाद दिया, और फिर मेयर से बातें करने बैठ गया।

शिकागो में सिडनी मिला। वह साथ में शानदार कार लाया था। बहुत खुश था वह। उसने कान में कहा, "तुम्हें देखने के लिए सुबह से भीड़ जुटी है। रोज अखबार बुलेटिन प्रकाशित करते थे। 'मुचुअल फिल्म कार्पोरेशन' से मैंने एक कांट्रेक्ट किया है। प्रति सप्ताह १०,००० डालर की दर से कुल ६,७०,००० डालर मिलेंगे। बीमावालों की परीक्षा में सफल हो जाने पर कांट्रेक्ट साइन करने पर तुम्हें १,५०,००० डालर का बोनस मिलेगा।" प्लाजा होटल में उसने मेरे लिए एक कमरा बुक करा दिया था। दिन भर उसे वकील से मशविरा करना था, अतः वह सुबह आने के लिए कहकर चला गया।

मैं अकेला था अब। गलियों में घूमता रहा। पर जाऊं कहां'—मैं सोच रहा था।

मैं किसी खास को चाहता था, शायद हेटी केली को जिसने मेरा प्रेम पंद्रह वर्ष की आयु होने की आड़ में ठुकरा दिया था! अर्से से मुझे उससे कोई समाचार नहीं मिला। उसकी प्रतिक्रिया जानना मनोरंजक होता।

तब वह न्यूयार्क में अपनी विवाहिता बहन फ्रैंक गूल्ड के साथ रह रही थी। टहलता हुआ उसके पते—फिफ्थ एवेन्यू ८३४ पर पहुंच गया। मैं घर के बाहर ठिठका, शायद वह घर में हो, पर बुलाने का साहस नहीं हुआ। सोचा, शायद संयोग से वह बाहर आये और उससे मेरा सामना हो जाए। मैं इसी आशा में आधा घंटा प्रतीक्षा करता रहा। न कोई घर में घुसा, न बाहर ही आया।

उस शाम भीड़ के साथ 'टाइम्स स्क्वायर' में मैं खड़ा था कि टाइम्स के भवन पर 'स्पॉट न्यूज' का बोर्ड बिजली की रोशनी से जगमगा उठा—'चैप्लिन साइन्स विद मुचुअल एट सिक्स हंड्रेड ऐंड सेवंटी थाउजेंड ए इयर'!

मैंने बड़ी तटस्थता से समाचार पढ़ा, जैसे किसी और के बारे में हो।

मेरे साथ इतना कुछ घटा था कि मैं भावनाशून्य हो चला था। ●

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

महाशयजी

आप वैसे तो चुस्त-दुरुस्त हैं, लेकिन इस कार्य के लिए हमें एक जिम्मेदार व्यक्ति की जरूरत है
सर, मुझसे अधिक जिम्मेदार और कौन हो सकता है?
वह कैसे ?
जहां कहीं मैंने काम किया वहां सबने हर गलती का जिम्मेदार मुझे ही ठहराया
यहां भी हम आपके साथ वैसा ही व्यवहार करेंगे

अंग-प्रत्यंग की कमाल
BUS STOP
रीटा की मनमोहक चाल
इतनी सुन्दर इतनी सरल,
रीटा जब चलती है तो
सभी का मन मोह लेती है।
जी हाँ आपके हाथ का जरा सा
इशारा पाते ही रीटा दौड़ पड़ेगी।
उत्तम माप दण्डों के अनुरुप बनी
रीटा अब केवल भारत में ही नहीं
विदेशों में भी अपनी श्रेष्ठता
के लिए विख्यात है।
★ सीधी एक समान सिलाई करने वाली
★ अत्याधुनिक टेकअप सिस्टम सहित
★ सेन्ट्रल बाबिन से युक्त
★ हर तरह की सिलाई के सर्वथा योग्य
★ हाथ से, पैर से अथवा बिजली की मोटर
सभी तरह से चलाई जा सकने वाली
रीटा
रीटा मैकेनिकल वर्क्स
लुधियाना।
adEnvoys

मई १९७४
कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

Racold
the first choice
of
everyone

नयी ! पंजाब आनंद बैटरीज़

विशेष रूप से तैयार किया हुआ डिपोलराइज़िंग मिश्रण इस की अधिक शक्ति की ज़मानत देता है तो स्टील जैकेट इसे अधिक समय तक सुरक्षित रखती है।

तोशीबा रे-ओ-वैक जापान के तकनीकी सहयोग में

JAISONS-3265-HIN

शब्द सामर्थ्य बढ़ाइए

• विशालाक्ष

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ८ पर दिये उत्तरों से मिलाइए।

१. **गरदनिया**--क. अंगूठा और तर्जनी के अर्धवृत्त से गले में धक्का मारना, ख. गले का रोग, ग. मोटी गरदनवाला, घ. पहलवान।

२. **थोपना**--क. जड़ना, ख. मढ़ना, ग. थापना, घ. रखना।

३. **अर्वाचीन**--क. प्राचीन, ख. सामयिक, ग. आधुनिक, घ. अद्यतन।

४. **आंकना**--क. लिखना, ख. तौलना, ग. जोखना, घ. अंदाजना।

५. **उद्रेक**--क. खिलना, ख. स्फोट, ग. उन्मेष, घ. अंकुरित होना।

६. **कतराना**--क. मुड़ना, ख. किसी को बचाकर निकल जाना, ग. डरना, घ. भाग जाना।

७. **काण्ड**--क. घटना, ख. प्रसंग, ग. कथा, घ. पर्व।

८. **भक्षण**--क. आहार, ख. भखना, ग. भोजन करना, घ. निगलना।

९. **धुकधुकी**--क. कंप, ख. दहलना, ग. दिल धकधकाना, घ. कलेजा।

१०. **तंद्रा**--क. निद्रा, ख. आलस्य, ग. स्फूर्ति, घ. ऊंघ।

११. **कुंद**--क. श्वेत, ख. गतिरुद्ध, ग. भरा हुआ, घ. प्रखर।

१२. **चाटुकार**--क. चटोरा, मिठबोला, ग. चापलूस, घ. खिलौने बनानेवाला।

१३. **हिमायत**--क. सिफारिश, ख. प्रशंसा, ग. वकालत, घ. तरफदारी।

१४. **समावेश**--क. शामिल होना, ख. साथ होना, ग. घिरा होना, घ. ढकना।

१५. **प्रचुर**--क. यथेष्ट, ख. बहुत, ग. बड़ा, घ. भारी।

१६. **बहुश्रुत**--क. प्रशंसित ख. विख्यात, ग. विद्वान, घ. वेद।

१७. **प्रगल्भ**--क. बातूनी, ख. अभिमानी, ग. कूटनीतिज्ञ, घ. हाजिरजवाब

१८. **थुक्काफजीहत**--क. संकट, ख. धिक्-धिक्, ग. गाली-गलौज, घ. झगड़ा।

१९. **ऐकवाक्यता**--क. ऐकमत्य, ख. सूक्ष्मता, ग. एकता, घ. जटिलता।

२०. **निरसन**--क. त्याग, ख. निराकरण, ग. उखाड़ना, घ. उपवास।

संकेत

तत्--तत्सम। तद्.--तद्भव। लो. भा.--लोक भाषा। सं.--संज्ञा। वि.--विशेषण। क्रि.--क्रिया। क्रि. अ.--क्रिया अकर्मक। क्रि. स.--क्रिया सकर्मक। क्रि. वि.--क्रिया विशेषण। पु.-- पुलिंग। स्त्री.--स्त्रीलिंग। उ. लि.--उभय लिंग। •

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. क. अंगूठे और तर्जनी के अर्धवृत्त से गले में धक्का मारना । **गरदनिया** देकर निकाल दिया । लो०भा०-**गरदन** । सं०, स्त्री। अर्धचंद्र ।

२. ख. मढ़ना, माथे **मढ़ना** । उस पर जिम्मेदारी मत थोपो । अपना काम दूसरों के माथे मढ़ना अच्छी बात नहीं । तद० (सं०—स्थापन), क्रि०स० । छोपना ।

३. ग. आधुनिक । उन्होंने प्राचीन और **अर्वाचीन** में समन्वय स्थापित किया । तत्०, वि०, उ०लि० ।

४. घ. अंदाजना । मकान की कीमत **आंको** । तद् (सं०—अंकन), क्रि० स० । **कूतना** ।

५. ग. उन्मेष । ज्ञान या भावों का **उद्रेक** । तत्०, सं०, पुं० । **उदय, उमड़-घुमड़कर प्रकट हो जाना** ।

६. ख. किसी को बचाकर निकल जाना । उससे **कतराते** क्यों हो ? कीचड़ को **कतराकर** निकल जाना । लो० भा०—**कतरना**, क्रि० स० ।

७. क. घटना । अग्नि-काण्ड, एक **काण्ड** ही बन गया । तत्०, सं०, पुं० । **प्रकरण, प्रसंग, विषम घटना** ।

८. ख. भखना, बड़े-बड़े कौलों जल्दी-जल्दी खाना । शेर बकरी का **भक्षण** कर गया । तत्०, सं०, पुं० । **भकोसना** ।

९. ग. दिल धकधकाना । लड़ाई की बात सुनते ही उसमें **धुकधुकी** होने लगी । लो० भा०, सं०, स्त्री० । **भय, घबराहट, व्याकुलता** ।

१०. घ. ऊंघ । तुम तो **तंद्रा** में थे, बातें सुनते कैसे ? तत्०, सं०, स्त्री० । **निद्रालुता, झपकी** ।

११. ख. गतिरुद्ध । तालाब का कुंद पानी, कुंदजहन । फारसी, वि० उ० लिं० । **स्तब्ध, कुंठित, मंद** ।

१२. ग. चापलूस । बड़े लोग **चाटुकारों** से घिरे रहते हैं । तत्०, सं०, पुं० । **खुशामदी** ।

१३. घ. तरफदारी । देखो, आ गये उसकी **हिमायत** के लिए । अरबी, सं०,स्त्री० ।

१४. क. शामिल होना, निहित होना । असत्य में हिंसा का **समावेश** है ही । तत्०, सं०, पुं० । समाव ।

१५. ख. बहुत । **प्रचुर** साधनमयी भारत-माता । तत्०, वि०, उ० लिं० । **पुष्कल, प्रभूत, ढेर-सा** ।

१६. ग. विद्वान, जिसने बहुत सुनकर ज्ञानार्जन किया हो । **बहुश्रुत** और बहु-पठित में अंतर समझिए । तत्, वि०, उ० लिं० ।

१७. घ. हाजिरजवाब । धृष्ट-प्रगल्भ मनुष्य से सब सावधान रहते हैं । तत्० वि०, पुं० ।

१८. ख. धिक्-धिक् । उसकी सर्वत्र **थुक्का-फजीहत** हो गयी । हिंदी-थूक, अरबी फजीहत । सं०, स्त्री० । **थू-थू, थुड़ी-थुड़ी** ।

१९. क. ऐकमत्य-विदेशी आक्रमण के समय नेताओं में पूर्ण **एकवाक्यता** रही । तत्०, सं०, स्त्री० । **एकीभाव, सुसंवादिता** ।

२०. ख. निराकरण-अधिनियम का **निरसन** । निवारण—शत्रु का निरसन । तत्०, सं०, पुं० । **परिहार** ।

इधर 'कादम्बिनी' की सेवा में भी आपने चमत्कार दिखाया है,और यह पत्रिका पाठकों में जबरदस्त घर कर गयी है।

—विवेकी राय, गाजीपुर, उ. प्र.

अप्रैल की 'कादम्बिनी' पसंद आयी, लेकिन दो बातें खटकीं। एक तो 'नेपोलियन के प्रेम-प्रसंग' लेख में केवल नेपोलियन की पत्नियों के बारे में ही उल्लेख है जबकि पोलैंड की काउंटेस वैलवेस्का-जैसी प्रेयसी को छोड़ दिया गया है। वैलवेस्का ने नेपोलियन के प्रेम-निवेदन को कई बार ठुकराया था; अंत में नेपोलियन का प्रेम-निवेदन स्वीकार करने से पोलैंड को होनेवाले लाभ का ध्यान करके वह नेपोलियन के पास गयी। नेपोलियन ने उसे एक किले में रखा। वह अपनी शेष जिंदगी में पूरी वफादार रही—जो कि नेपोलियन की ब्याहताओं के संबंध में नहीं कहा जा सकता।

—राधेश्याम मिश्र, गाजियाबाद, उ. प्र.

'दूसरा मोर्चा' के अंतर्गत उठाया गया यह प्रश्न कि क्या देश की राजनीतिक व्यवस्था में फासिस्ट प्रवृत्तियां चोरी छिपे आयी हैं? काफी विचारोत्तेजक है। पर केवल सरकार पर इस तरह का आरोप एकपक्षीय होगा। जब लोकतंत्र में कुछ दल या व्यक्ति अपनी बात मनवाने के लिए हिंसा का सहारा लें तो उन्हें दबाने में बल-प्रयोग से बचा नहीं जा सकता। फासिस्टी प्रवृत्तियों के लिए सरकार पर दोषारोपण कुछ 'उत्साहातिरेक' या पूर्वाग्रह-दूषित ही प्रतीत होता है।

—श्यामल सेन, नयी दिल्ली

'नकली सम्पर्क की भाषा अंगरेजी' लेख रचनात्मक होने की अपेक्षा विशुद्ध आलोचनात्मक रहा, समालोचनात्मक भी नहीं। वैदिकजी को चाहिए था कि वे केवल हिंदी-भाषा का वैज्ञानिक स्वरूप उभारते तथा उसकी जीवंतता का पक्ष दृढ़ करते। "हिंदी में बड़े को आप,

बराबरीवालों को तुम और छोटों को तू कहने की सुविधा है, लेकिन अंगरेजी में सपाट संबोधन है—'यू'–जैसे अंतहीन और बचकाने तर्क देने मात्र से हिंदी का पक्ष मजबूत कैसे किया जा सकता है? हिंदी जैसी भी हो हमारी राष्ट्रभाषा है, यही तर्क हमें काफी समझना चाहिए। बल इसी बात पर होना चाहिए न कि अंगरेजी को हीन भाषा ठहराने पर। भारत सरकार तथा कई निजी संस्थाएं रोमन संख्याओं का धड़ल्ले से प्रयोग कर रही हैं। लेखक को चाहिए था कि इसका विरोध करते और हिंदी संख्याओं के प्रयोग की मांग करते। **—बुद्धिसेन, आगरा**
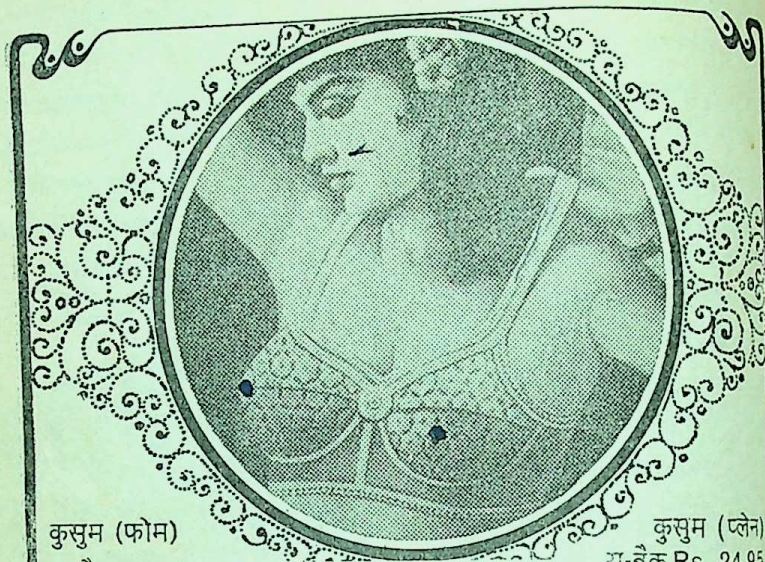
रिचर्ड स्टर्न की कहानी 'उपहार' तथा 'काल-चिंतन' बहुत पसंद आये। 'कादम्बिनी' के किसी अंक में रिचर्ड स्टर्न तथा उनके साहित्य के बारे में पूर्ण परिचय दें तो आभारी रहूंगा। **--सुमनेश रस्तोगी, मेरठ**

'चौदह दिन का युद्ध' (सार-संक्षेप) बेहद पसंद आया। 'काल-चिंतन' हृदयग्राही रहा। 'आविष्कार के बहाने' लेख पसंद नहीं आया। फिल्मी लेखों में जो नाटकीयता होनी चाहिए वह नहीं मिली। बिंदु-भास्कर (गोष्ठी-लेखक) महिला हैं या पुरुष? **--ब्रजलाल बनवारी, लश्कर**

अमृत पंड्या का 'द्रविड़ संस्कृति पर आर्यों का प्रभाव' तथा चन्द्रभाल ओझा का लेख 'दैव से मनुष्य श्रेष्ठ' बहुत पसंद आया। दैव पर भरोसाकर पुरुषार्थ को त्याग देनेवाले लोगों का इससे बहुत कल्याण होगा।

--साधुशरण पाण्डेय,
गौराजयनगर, देवरिया

अप्रैल अंक अचानक हाथ लगा। 'काल-चिंतन' में सत्य और असत्य समय सापेक्ष है। जो आपने स्पष्ट किया है, वह सही अनुभव की उपज है। डॉ. श्यामनंदन किशोर तथा सुशील राकेश की कविता बेहद पसंद आयीं। शायद मनमोहक अंक देने की आपने प्रतिज्ञा कर ली है। मुझे भी पूर्ण विश्वास है कि 'कादम्बिनी' राष्ट्र भाषा की उत्कृष्ट पत्रिका है।

--नीलम कृतपूर्ण नागपुर

क्यों और क्यों नहीं

इक्कीसवें लेखक

भवानी प्रसाद मिश्र

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, डॉ. बच्चन, यशपाल, डॉ. भारती, जैनेन्द्र कुमार, दिनकर, रेणु, महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती तथा निर्मल वर्मा के संबंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं। अब इक्कीसवें लेखक हैं: भवानीप्रसाद मिश्र।

इस लेखमाला का उद्देश्य, लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए--'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ के लिए। संपादक के पास प्रश्न पहुंचने की अंतिम तिथि है: १५ मई, १९७४

प्रमुख कृतियां: गीतफरोश, चकित है दुख, अंधेरी कविताएं, गांधी पंचशती, बुनी हुई रस्सी, खुशबू के शिलालेख, व्यक्तिगत।

वर्ष १४ : अंक
मई, १९

कादम्बिनी

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

सार-संक्षेप

स्थायी स्तंभ

मुखपृष्ठ के छायाकार : सूर्यकांत एम. दुधेडिया

समय के हस्ताक्षर

पिछले कुछ दिनों में ऐसी घटनाएं हुई हैं, जिनसे एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उभरा है। एक घटना का संबंध पंजाब-सरकार द्वारा प्रकाशित कैलेंडर से है। उसे लेकर संसद में कुछ सदस्यों ने आपत्ति उठायी। दूसरी घटना हरिद्वार में घटी। एक पढ़े-लिखे (विद्रोही) साधु स्वामी प्रेमानंद (मृत्युंजय) ने आकाशवाणी के लिए एक इंटरव्यू दिया था। उसमें उन्होंने मठाधीशों के विरुद्ध सही बातों की अभिव्यक्ति की और उनके सारे कारनामों का पर्दाफाश किया। उन्होंने यह भी प्रश्न उठाया कि ये लोग जो कई लाख रुपये खर्च करते हैं, वे कहां से आते हैं? निश्चित ही यह संकेत 'कालेधन' की ओर है। इस पर असंतुष्ट होकर मठाधीशों के गुंडों ने स्वामी प्रेमानंद

हम कितने आजाद हैं?

को घेरकर बुरी तरह पीटा। पता चला है कि वे गंभीर स्थिति में अस्पताल में पड़े हैं। तीसरी घटना बंगाल की है, जहां एक पुस्तक जब्त हुई और फिर न्यायालय द्वारा मुक्त कर दी गयी।

इस तरह की और भी घटनाएं समय-समय पर सुनने के लिए मिलती रहती हैं। इनसे एक प्रश्न उठता है--'हम कितने आजाद हैं?'

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को वास्तव में दो तरफ से खतरा पैदा हो गया है--(१) सत्ता से, और (२) समाज से। षड्यंत्रों का उद्घाटन, व्यवस्था की लक्ष्मणरेखा का अतिक्रमण और स्पष्टोक्ति, समाज-तंत्र के आक्रमण के शिकार होते हैं। वहां सरकार तमाशबीन बनी रहती है और तब यह आभास होने लगता है कि सत्ता, निरपेक्ष और तटस्थ है। सत्ता की निरपेक्षता और तटस्थता तभी तक है, जब तक कोई लेखक अपने को केवल समाज पर आक्रमण तक सीमित रखता है। यदि वह सत्ता पर आक्रमण करने लगता है तो उसे बर्दाश्त नहीं किया जाता। रूसी लेखक सोलझिनित्सिन इसके उदाहरण हैं।

आज का लेखक दोहरे खतरों के बीच जी रहा है। फलतः साहित्य धीरे-धीरे व्यक्ति का एकांत संगीत बनता जा रहा है।

ऊपर हमने पंजाब-सरकार के जिस कैलेंडर का उल्लेख किया है, उसमें

मुगलों एवं ब्रिटिश अत्याचारों का चित्रण है। यहां एक प्रश्न यह और उभरता है--क्या इतिहास को लिखना और पढ़ना आपत्तिजनक है? यदि किसी वर्ग या जाति विशेष ने अपने पीछे अत्याचारों-भरी कहानी ही छोड़ी है तो उसे दबाया क्यों जाना चाहिए? इतिहास बीती हुई घटनाओं का लेखा-जोखा है। एक तो हमारे यहां उपलब्ध इतिहास वह है जो अंगरेज-विद्वानों की कृपा से मिला है। वे निष्पक्ष शासक नहीं थे। इसलिए उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों को अपनी सुविधानुसार तोड़ा-मरोड़ा और प्रस्तुत किया। हम गलत इतिहास के उत्तराधिकारी बने। आजादी के इतने वर्षों बाद भी हमारी सरकार ने इस ओर नहीं सोचा। इतना ही नहीं 'संरक्षित हितों' और 'अल्पसंख्यकों' के नाम पर सही इतिहास लिखना भी उचित नहीं समझा गया। जो कुछ घट चुका है और यदि वह सही है, तो उसे अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए। नागरिक-अधिकार सबके लिए सामान्य होते हैं। 'हितों का संरक्षण' एक सीमा तक किया जा सकता है। वह इतना सीमातीत नहीं हो सकता कि सत्य को झुठला दे।

स्वामी प्रेमानंद

हरिद्वारवाली घटना समाज की बर्बरता का स्पष्ट प्रतीक है। यह कृत्य उन व्यक्तियों का है जो समाज के नाम पर निजी 'मठों' के प्रतिष्ठाता हैं और सत्ता निरंकुश ढंग से अपने हाथ में रखे हैं। सर्वविदित है, बंबई—जैसे महानगर में कई 'गॉड फादर' हैं और उनके लिए कोई कानून नहीं है।

आज हमारा देश जिस नाजुक स्थिति से गुजर रहा है, उसे देखते हुए लेखकों अथवा विचारकों की अभिव्यक्ति पर दोहरी तालेबंदी समस्त घटती हुई घटनाओं और स्थितियों पर काला परदा डालने का उपक्रम है। यहां किसी भी व्यक्ति को अपनी बात कहने का अधिकार होना चाहिए। व्यतीत को सही रूप में प्रस्तुत करने के लिए समूचे इतिहास का निष्पक्ष पुनर्लेखन आवश्यक है। उसे 'हित-संरक्षण के इच्छुक' किसी व्यक्ति या व्यक्तियों पर नहीं छोड़ा जा सकता।

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक, प्रूफ-रीडर : स्वामी शरण। साजसज्जा और चित्रकार : सुकुमार चटर्जी।
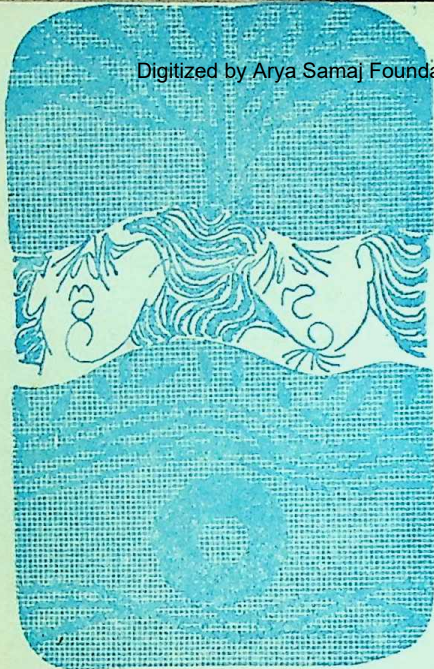
काल-चिंतन

—एक जंगल से गुजरते हुए तीन व्यक्तियों ने वन-धतूरे का फूल देखा।

—एक के लिए वह मात्र फूल था।

—दूसरे को वे कागज के नोटों की तरह लग रहे थे।

—तीसरा उस फूल के अंतिम छोर तक पहुंचकर अनायास परेशान हो उठा। उसके भीतर की समूची अक्षौहिणी क्रियाशील हो उठी थी।

—वन-धतूरे का फूल तीसरे आदमी को सृष्टि के केंद्र-बिंदु तक ले गया : सृष्टि के आरंभ में जब संस्कृति नहीं थी, विचार-धारा नहीं थी, तब मनुष्य के भीतर एक प्रश्न उठा, 'कोऽहं', यानी 'मैं कौन हूं।'

—'कोऽहं' से आरंभ हुई जिज्ञासा 'सोऽहं' में जाकर समाप्त हुई।

—आगे बढ़कर अब आज का मनुष्य यह नहीं पूछता कि मैं कौन हूं। अब वह पूछता है—मेरे जीवन का प्रयोजन क्या है?

—यह पूछते हुए उसने अपने प्रयोजन भी निर्धारित कर लिये हैं।

—परिणाम?

—संघर्ष!

—व्यक्तियों के हितों में, संस्थाओं में, सीमाओं में, खेमे में बंटे राजनेता और चिंतकों में, हर जगह संघर्ष!

—नारे, हड़तालें और प्रदर्शन, ये सब उद्देश्यहीन नहीं हैं?

—सांप से लड़ाई कर चूहों की बस्ती में रहने का उपक्रम नहीं है?

●●

—संघर्ष ने परिभाषाएं बदल दी हैं।

—जो स-हित है वही सत्य है!

—विश्वास यानी श्वास-रहित! यानी दूसरे पर निर्भरता। किसी पर भी विश्वास कर हम एकदम निर्भर हो जाते हैं। निर्भर होने वाला वह विश्वास टूट रहा है।

—मेरा मन आक्रांत हो उठता है।

—यह संघर्ष आखिर किससे है?

—कौन, किससे लड़ना चाहता है?

—सभी भयभीत हैं। भय के आधार पर खड़ी रहने वाली संस्कृति (और व्यक्ति भी) अस्थिर होती है।

—भयभीत व्यक्ति अयोग्य होता है।
—वह कमजोर हो जाता है और कमजोर ही पीटा जाता है।

●●

—संघर्षों ने इतिहास की धाराओं को बदला है!
—संघर्षों ने नये व्यक्तियों को और नये राष्ट्रों को जन्म दिया है!
—लेकिन वे संघर्ष मनुष्य की अपनी आंतरिकता की सही अभिव्यक्ति थे!
—आज का संघर्ष किससे है! . . . आज सभी दबे-पांव छत पर सोयी चांदनी को पकड़ने का उपक्रम कर रहे हैं। कोई आवाज देकर चांदनी के पास तक जाने की हिम्मत नहीं करता!
—सब अपनी कायरता को ढोल पहना रहे हैं!

●●

—धुरी पर घूमती हर वस्तु की अवधि निश्चित है!
—एक-न-एक दिन धुरी की कील घिसकर कमजोर होगी और वह टूटेगी।
—इसलिए अपने को व्यर्थ उलझाने में कोई सार नहीं है।
—क्षमताओं की सार्थकता कृतित्व में है!
—घृणा का अंत घृणा से नहीं हो सकता, घृणा का अंत हो सकता है—प्रेम।
—जीवन का प्रयोजन खोजने के संघर्ष में एक दूसरे संघर्ष को जन्म देना दो पत्थरों की टकराहट है!
—परिणाम होता है उनका टूटना, रेत बन जाना।
—ऐसा कोई भी संघर्ष जो रेत बना दे, जानबूझकर मोल लेना अपनी बुद्धि के साथ छल है।
—इसलिए 'सोऽहं' के बाद की सीमा प्रश्न नहीं, कार्य हो सकती है!
—हम वही हैं, जो हमें होना है!
इसके आगे उलझाने से फायदा!
—तीसरे आदमी का धतूरे को लेकर ज्ञानकेंद्र तक पहुंचना क्रियाशीलता का प्रतीक है।
—क्रिया को सार्थक कामों की ओर मोड़ना बुद्धि की परख है।

●●

—आज की दुनिया के बनावटी उलझाव और बनावटी संघर्ष को जन्म दिया है—कमजोरी ने।
—उसका मुकाबला करनेवाले दूसरी कमजोरी से ग्रस्त हैं।
—मैंने कहा था सांप से लड़ाई कर चूहों की बस्ती में जाना व्यर्थ है!
—दो कमजोरों का मुकाबला दोनों को तोड़कर रेत बना देगा!
—दोस्तो! तब छत पर सोयी चांदनी को पकड़ने के लिए हम दबे-पांव क्यों चलें, क्यों न हम आवाजें देकर आगे बढ़ें!
—ऐसा करने से ही हमारे वन-धतूरे का ज्ञान सार्थक होगा!

[signature]

महंगाई
एक विश्व व्यापी संकट

• श्रीराम शुक्ल

कीमतें अदृश्य ऊंचाइयों तक पहुंच गयी हैं और वेतन, कीमतों की सतह पर पहुंचने के लिए निरंतर अग्रसर हैं। न जाने कितनी सरकारें मुद्रास्फीति की महामारी का शिकार हो चुकी हैं और बहुतेरी आसन्न-संकटग्रस्त हैं। कुछ अर्थशास्त्रियों ने घोषणा की है कि अगर वर्तमान दमतोड़ महंगाई यूं ही जारी रही तो संसार का समूचा आर्थिक और राजनीतिक ढांचा उसी तरह ध्वस्त और अव्यवस्थित हो जाएगा, जैसा गत चौथी दशाब्दी की महत मंदी के दिनों में हुआ था।

आज अर्थशास्त्री आश्चर्यचकित हैं और राजनीतिज्ञ अवाक। साधारण उपभोक्ता रोष में उबल रहे हैं। अकस्मात सारी पारंपरिक बुद्धिमत्ता चकनाचूर हो गयी है और बारीक से बारीक गणना भी कालातीत बन गयी है। एक साल से कम समय में ही अधिक संपत्ति और अधिक संपन्नता तथा अधिकाधिक उत्पादन की ओर अग्रसर होती विश्वव्यापी धारा मानों एक भयंकर प्रपंच द्वारा, जिसे मुद्रास्फीति की प्रतिदिन ऊंची उठती लहर कह सकते हैं, रोक दी गयी है। वेशक, मुद्रास्फीति इतिहास में कोई नयी चीज नहीं है, लेकिन वर्तमान स्थिति अपनी व्याप्ति और तीव्रता दोनों में अभूतपूर्व है। उसने धनी और गरीब राष्ट्रों पर समान कठोरता से प्रहार करते हुए सरकारी अधिकारियों को चिंतनीय नपुंसकता की भावना में डुबा दिया है।

एक विश्वव्यापी प्रपंच

केनिया के वित्त एवं योजना मंत्री ने यह रोना रोया है कि चूंकि यह विश्वव्यापी प्रपंच है, इसलिए केनिया—जैसा छोटा देश कीमतों को बढ़ने से रोकने के लिए कुछ भी नहीं कर सकता। इसी प्रकार अमरीका के बजट-मुख्याधिकारी रॉय ऐश ने बड़ी सफाई के साथ स्वीकार किया है कि हम अब मुद्रास्फीति की समस्या को शुद्धतः राष्ट्रीय संदर्भ में नहीं हल कर सकते।

मुख्यतः मुद्रास्फीति के दबाव का सामना करने में असफलता के कारण ही गत वर्ष इंगलैंड, इटली, चिली और अर्जेंटीना की सरकारों का भी पतन हुआ और भारत, इथियोपिया और अमरीका—जैसे देशों में जिलाफ हिंसा और कड़ विरोध-प्रदर्शन बढ़े।

मुद्रा-स्फीति के दो कारण

इस विश्वव्यापी महामारी के कारण बहुत पेचीदा हैं लेकिन अधिकतर अर्थशास्त्री इस बात पर सहमत हैं कि वर्तमान मुद्रा-स्फीति दो कारणों से तीव्र हुई है, (१) माल के मूल्यों में असाधारण और अप्रत्याशित विस्फोट जिसे अधिकतम नाटकीय रूप में ऊर्जा-संकट में देखा जा सकता है, लेकिन जिसका विस्तार बुनियादी खाद्य-पदार्थों से लेकर अखबारी कागज—जैसे मालों की कमी तक में है; (२) संसार के संपन्न और असंपन्न दोनों प्रकार के राष्ट्रों का यह आग्रह कि वे उत्पादन की अपेक्षा उपभोग को अधिक तेजी से बढ़ा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, उससे उत्पन्न मुद्रास्फीति को यह सोचकर स्वीकारने की तत्परता भी एक कारण है कि उसके द्वारा आर्थिक विकास की अधिक तीव्र गति उपलब्ध कर सकेंगे।

सबसे बुरी बात यह है कि अनेक अर्थ-पंडित मुद्रास्फीति के इस उभार को रोकने का कोई प्रत्यक्ष मार्ग नहीं देख पा रहे हैं। अमरीका के प्रख्यात श्रम-अर्थशास्त्री जॉन डनलप कहते हैं, "हम नहीं जानते कि मुद्रास्फीति को कैसे नियंत्रित किया जाए।"

ऊपर से देखने पर लगेगा कि साक्ष्य डनलप की बात का समर्थन करते हैं। कुछ ही साल पहले औद्योगिक जगत के प्रवीण आर्थिक-नीति-निर्माता 'सूक्ष्म नियंत्रण' की अपनी योग्यता में विश्वास व्यक्त किया करते थे, अब यह स्पष्ट हो गया है कि वह विश्वास अपनी जगह ठीक नहीं था। जापान इसका प्रमुख उदाहरण है। पिछले वर्ष वहां जीवन-यापन का व्यय लगभग २० प्रतिशत बढ़ गया। इस वृद्धि के अधिकांश कारण आयातित ईंधन, खाद्य-पदार्थ और कच्चे मालों के बढ़ते हुए मूल्य थे, लेकिन उस बढ़ती के कुछ अंश के कारण जापानी स्वयं थे। अनेक बड़े जापानी औद्योगिक निगमों ने स्वीकार किया है कि उन्होंने ऊर्जा-संकट के दौरान निस्संकोच कीमतें बढ़ायीं।

जापान की तरह ही ब्रिटेन ने पिछले वर्ष १२ प्रतिशत की मुद्रास्फीति उत्पन्न की और १९७४ के लिए १५ प्रति--
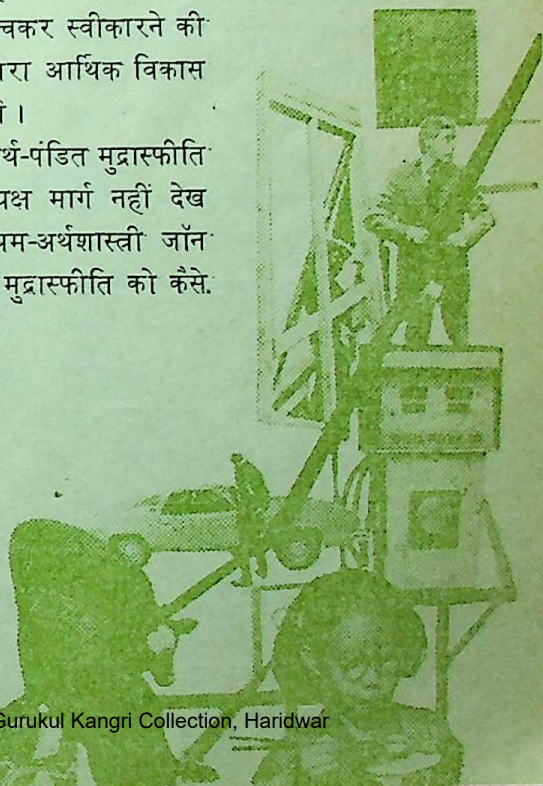
शत की मुद्रास्फीति अनुमानित है। अपना ४५ प्रतिशत खाद्य-पदार्थ और ७० प्रतिशत कच्चा माल आयातित करने के लिए विवश ब्रिटेन विश्व-बाजार की कीमतों की दया पर आश्रित है, लेकिन ब्रिटेन की परेशानियों का कुछ भाग स्पष्ट ही उनका अपना उत्पन्न किया हुआ है। भूतपूर्व प्रधान मंत्री एडवर्ड हीथ की वेतन-मूल्य-नियंत्रण नीति की विनाशकारी असफलता ने कोयला-मजदूरों के साथ मुठभेड़ पैदा की जो अब ३५ प्रतिशत वेतन-वृद्धि द्वारा निपटायी गयी है। वहां के अर्थ-शास्त्रियों को आशंका है कि विलसन की अल्पमत सरकार के पास ऐसी राजनीतिक शक्ति नहीं है कि वह राष्ट्र की तीव्रगति से बढ़ती मुद्रास्फीति को नियंत्रित कर सके।

इटली की आर्थिक दुर्दशा मुद्रास्फीति की उफनती लहर से और भी बढ़ गयी है और स्कैंडिनेविया के राष्ट्र भी तीव्रगति मुद्रा-स्फीति के असाध्य लक्षणों से ग्रस्त हैं, और ये लक्षण हैं मंद विकास और बढ़ती कीमतें। अमरीका—जैसे राष्ट्र ने भी, जो कभी अपनी मुद्रास्फीति की निम्न दर पर गर्व करता था, एकाएक यह पाया कि वह भी मुद्रा-स्फीति की ऊपर उठती हुई वर्तमान लहर से मुक्त नहीं है।

निस्संदेह, कुछ देश अब तक इस महामारी से बहुत कुछ बचे हुए हैं। सोवियत गुट की सरकारी सूचनाओं के अनुसार पूर्वी यूरोप के शासन उस मुद्रास्फीति के शिकार नहीं हुए हैं जो पश्चिमी देशों को खोखला कर रही है, फिर भी पश्चिम के साथ सोवियत गुट के बढ़ते हुए व्यापार और ईंधन की कीमतों में समग्र वृद्धि से यह असंभव प्रतीत होता है कि विश्वव्यापी बाजार-शक्तियों से पूर्वी यूरोप अप्रभावित रह सकेगा।

बढ़ते हुए मूल्यों से लाभान्वित देश

इस समय मूल्यों के वर्तमान चढ़ाव से उन्हीं देशों को अधिकतम लाभ हो सकता है जो बेहद मांगवाले बुनियादी साधनों के उत्पादक हैं। पश्चिमी आयातों के बढ़े हुए मूल्यों की अदायगी के बाद भी अरब देशों के तेल-सम्राटों के राजस्व इस वर्ष कई गुना बढ़ जाएंगे। इसी तरह ईरान, नाइजीरिया, वेनेजुएला और इंडोनेशिया-जैसे गैर-अरब तेल-उत्पादक देश भी संपत्ति की ऐसी ही वृद्धि उपलब्ध करेंगे।

'तीसरी दुनिया' के कुछ तेलविहीन छोटे राष्ट्र भी आयात की ऊंची लागतों को उपभोक्ता-पदार्थों की उत्पादन-वृद्धि द्वारा संतुलित करने की आशा कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, थाईलैंड का चावल एक साल पहले की अपेक्षा १०० प्रतिशत अधिक प्रतिटन मूल्य पर बिक रहा है, लेकिन भारत और बांगला देश-जैसे 'तीसरी दुनिया' के राष्ट्रों के लिए मुद्रा-स्फीति की इस उत्ताल तरंग से विनाश के अतिरिक्त और कोई आशा नहीं की जा सकती। तेल की कीमतों में एकतरफा वृद्धि के धक्के ने आर्थिक विकास की योजनाओं का उलट-पलट कर दिया है

और दुर्भाग्य तो यह है कि चाय और जूट— जैसे इन देशों के मुख्य निर्यात बिलकुल नहीं बढ़े हैं। फलतः इन दोनों सरकारों में से किसी को यह पता नहीं कि देश के जीने के लिए आवश्यक खाद्य-पदार्थ और ईंधन की न्यूनतम मात्रा की कीमत वह किस प्रकार अदा करेगी।

एक राजनीतिक प्रश्न

अधिकतर परंपरावादी अर्थशास्त्रियों की दृष्टि में आज की मुद्रास्फीति मुख्यतः वर्षों की यथार्थतारहित राजनीतिक नीतियों की उपज है। अमरीका के अर्थशास्त्री एलन ग्रीन स्पैन ने कहा है, "मुद्रास्फीति आर्थिक नहीं, राजनीतिक प्रश्न है। राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का आधार दीर्घकालिक लागतों का हिसाब लगाये बिना ही जनता के लिए अल्पकालिक लाभ पैदा करना होता है।" इस तर्क के अनुसार स्व. राष्ट्रपति जानसन ही इस बात के लिए अधिकांशतः उत्तरदायी थे कि वियतनाम-युद्ध में होनेवाले भारी अमरीकी व्यय को संतुलित करने के लिए आवश्यक कर न लगाकर मुद्रास्फीति के कीटाणुओं को सारी दुनिया में फैला दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि पश्चिमी यूरोप के बाजार अमरीकी डालरों से पट गये जबकि वहां की सरकारें इस बात के लिए वचनबद्ध थीं कि वे निश्चित विनिमय-दर कायम रखेंगी और उन दरों के चलते उनकी अपनी मुद्राएं स्फीत हो गयीं। यद्यपि आगे चलकर डालर के अवमूल्यन और अन्य मुद्राओं से विनिमय के लिए मूल्य निर्धारित करने हेतु मुक्त छोड़ देने से दबाव कम हुआ, फिर भी अनेक पूंजी लगानेवालों ने डरकर सभी मुद्राओं से हाथ खींच लिया और अस्थिर मुद्राओं में पूंजी लगाने के बजाय उन्होंने सोने की जोरदार खरीदारी प्रारंभ कर दी, जो आज तक जारी है।

विकास और कम बेरोजगारी की चेष्टा में प्रायः सभी सरकारों ने किसी हद तक मुद्रास्फीतिकारी व्यय को झेला क्योंकि नये कर लगाने और सार्वजनिक खर्च में कटौती करने की अपेक्षा मुद्रा की
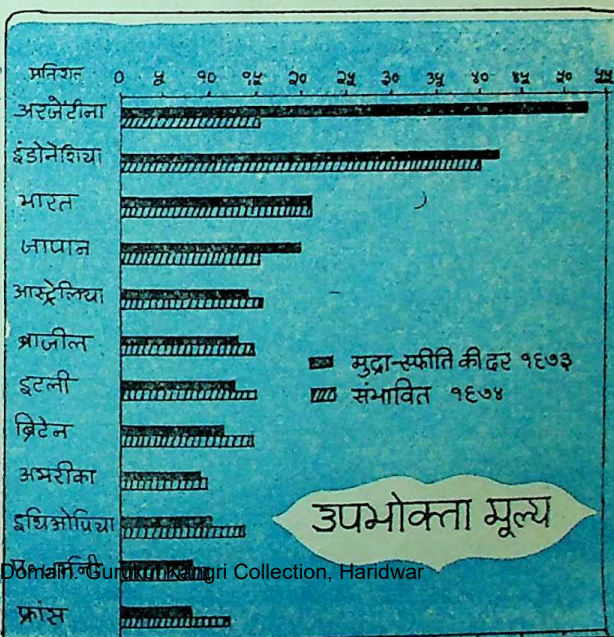
पूर्ति को बढ़ाना हमेशा आसान होता है। एक ब्रिटिश अर्थशास्त्री ने कहा है कि एक जनतांत्रिक समाज का ढांचा ऐसा होता ही नहीं कि वह मुद्रास्फीति का सामना कर सके। कोई सरकार अधिक बेरोजगारी और यथार्थतः कठोर नये करों का खतरा नहीं उठा सकती। इस प्रकार यद्यपि प्रतिरक्षा-व्यय और सामाजिक तथा जनकल्याण-कार्यों के व्यय, जैसे बजट के बंधे-बंधाये मद, बढ़ते रहते हैं, फिर भी हर सरकार इनके लिए खर्च करना जब तक संभव होता है, टालती रहती है। नतीजा यह होता है कि हर समाज में मुद्रास्फीति पैदा होती है और उसके बाद दूसरे देशों के साथ व्यापार में वह आगे बढ़ा दी जाती है।

लेकिन कुछ अन्य विश्लेषकों का दावा है कि मुद्रा-नीति-समस्या का केवल आंशिक कारण होती है। उनका कहना है कि वर्तमान मुद्रास्फीति की लहर की तह में जो कारण है, उसकी जड़ें अपने परिवेश के साथ मानव के रिश्ते में होती हैं। सीधे शब्दों में कहा जाए तो विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या, विशेषतः समृद्ध जीवन-की आशा करनेवाले लोगों की तेजी के साथ कई गुना होती हुई संख्या जीवन हेतु अपरिहार्य प्राकृतिक साधनों की अत्यधिक मांग पैदा कर रही है।

वर्तमान मुद्रास्फीति को जिस तथ्य ने बढ़ाया है, वह यह नहीं है कि संसार के साधन सीमित हैं, बल्कि यह है कि उन साधनों का काफी तेजी से और क[illegible] मात्रा में उपयोग नहीं किया जा र[illegible] ताकि मांग पूरी की जा सके।

विश्वबैंक के भूतपूर्व प्रमुख अ[illegible] शास्त्री इरविंग फ्रायडमैन का दावा [illegible] कि सारा संसार कमियों और बढ़ती [illegible] उपभोक्ता–मांगों का शिकार है। [illegible] कोई यह नहीं कह सकता कि कोई [illegible] से मुझे मेरा सस्ता खाना या सस्ता [illegible] या सस्ती पूंजी अथवा कोई भी [illegible] भेज देगा। अब मुद्रास्फीति की लहर [illegible] चलते कोई चीज सस्ती नहीं रह [illegible]

मूल्य-नियंत्रण के निष्फल प्रयोग

इस लहर को रोकने के लिए क्या किया [illegible] सकता है? अब तक अधिकतर सरक[illegible] ने अपने को केवल मुद्रा-नीतियों में हे[illegible] फेरी करने पर ही केंद्रित किया है। [illegible] राष्ट्रों ने विभिन्न प्रकार के वेतन [illegible] मूल्य-नियंत्रणों के प्रयोग किये हैं, लेकि[illegible] इनमें से अधिकतर प्रयासों के नतीजे ब[illegible] कम निकले हैं। अनेक परंपरावादी अ[illegible] शास्त्रियों का कथन है कि नियंत्रणों [illegible] और अधिक सफलता न प्राप्त करने [illegible] कारण यह नहीं है कि वे अपने आप [illegible] अव्यावहारिक हैं, बल्कि यह है कि उ[illegible] कारगर होने के लिए काफी समय त[illegible] रहने ही नहीं दिया गया। वे इस बात प[illegible] भी जोर देते हैं कि जब चार्ल्स द [illegible] ने सचमुच सख्त और देर तक चलनेवा[illegible] मुद्रा-संकोच का कार्यक्रम चलाया तो [illegible] फ्रांस की मुद्रास्फीति को वर्षों तक स्थिर[illegible]

सीमाओं के भीतर रखने में सफल हुए।

अधिकतर देशों में आर्थिक सलाहकार और सरकारी अधिकारी बुनियादी तौर से वे ही फारमूले आजमा रहे हैं जिनका अतीत में बार-बार उपयोग किया जा चुका है, अर्थात अर्थ-व्यवस्था पर हलका अंकुश जो मुद्रास्फीति को रोक सके, लेकिन बेरोजगारी और आर्थिक पश्चगति को बचा सकें। दुर्भाग्य से कई देशों में इन नीतियों की परिणति अधिक मुद्रास्फीति और अधिक बेरोजगारी में ही हुई हैं।

स्पष्ट है कि पुराने आर्थिक ढांचे कालातीत हो चुके हैं और वैसे ही पुराने हल भी। फिर भी दुर्भाग्यवश अपेक्षाकृत कम अर्थशास्त्री और राजनीतिज्ञ इस तथ्य को स्वीकारने को तैयार हैं, उलटे अधिकतर अपने इस विश्वास से चिपके हुए हैं कि अगर मुद्रा-संबंधी और धन-संबंधी नीतियों को सही ढंग से व्यवस्थित किया जाए तो सब कुछ ठीक हो जाएगा।

मुद्रास्फीति--एक कैंसर

अधिकांश गंभीर अर्थशास्त्री भी स्वीकार करते हैं कि मुद्रास्फीति के गुब्बारे को पिचका देना आसान नहीं होगा। ब्रिटेन के ब्रियान ग्रिफिक्स ने कहा है, "मुद्रास्फीति कैंसर के समान है, उसे काटा ही जाना चाहिए। वह दर्दनाक होगा और उसमें बरसों लगेंगे।"

व्यावहारिक शब्दों में इसका अथ यह हुआ कि संसार की सरकारों को अपनी जनता की भूख को कम करना पड़ेगा, वस्तुतः जो सबसे आवश्यक बात है वह यह है कि राजनीतिज्ञों में इतना साहस हो कि वे अपने देशवासियों को बता सकें कि माल और सेवाओं के उत्पादन में वृद्धि के बिना जीवन-मानक हमेशा नहीं उठता रहेगा, कि पूर्ण बारोजगारी वांछनीय सामाजिक लक्ष्य होते हुए भी आम आर्थिक विध्वंस के मोल पर नहीं पैदा की जा सकती और यह कि आदमी जो कुछ भी चाहे उसे फौरन खरीद सकना हमेशा संभव नहीं हो सकता। कभी किसी राष्ट्र के लिए नये उर्वरक कारखानों और नये अस्पतालों के बीच चुनना आवश्यक हो सकता है।

बेशक, इलाज बताना आसान है, अमल में लाना मुश्किल और टोकियो से लेकर वाशिंगटन तक हर जगह कमजोर सरकारों के सत्तारूढ़ होने से यह बात वस्तुतः संदिग्ध है कि संसार के राष्ट्रों में ऐसी सख्त सार्वजनिक नीतियां अपनाने के लिए सामूहिक अनुशासन है कि नहीं। आशा यही है कि अंततः यथार्थताएं उनके लिए कोई अन्य विकल्प नहीं छोड़ेंगी। जैसा कि इरविंग फ्रायडमैन ने कहा है कि अगर हम अधिकाधिक मुद्रास्फीति की बीसवीं शताब्दी वाली सड़क पर लुढ़कते ही चले गये तो उसकी परिणति सचमुच ही अभूतपूर्व विनाशकारी दुर्घटना में ही होगी।

—४/९७७, आर. के. पुरम,
नयी दिल्ली—११००२२

कमी है सही नेतृत्व की

● डॉ. गोविंद पांडुरं[illegible]

विश्व के वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य को थोड़ा ध्यान से देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि लगभग सभी राजधानियों में छोटी समझवाले मीडियाकर नेताओं के हाथों में सत्ता की बागडोर है। द्वितीय विश्वयुद्ध के भयंकर विनाश के दौरान पश्चिम में भी चर्चिल, रूजवेल्ट और द् गाल-जैसे व्यापक व्यक्तित्व वाले महान नेताओं का प्रादुर्भाव हुआ, लेकिन आजकल उस स्तर का कोई नेता नहीं।

एक समय था, जब इस देश को महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस, सरदार वल्लभ भाई पटेल, पं. जवाहरलाल नेहरू जैसी महान विभूतियों का प्रौढ़ और शक्तिशाली नेतृत्व प्राप्त था, पर आज यह आशंका बलवती होती जा रही है कि शायद राष्ट्र के प्रति पूरी तरह समर्पित और स्वार्थ से ऊपर उठकर समष्टि के लिए जीनेवाला कोई व्यक्ति ही नहीं रहा है जो अपने कुशल नेतृत्व में देश को एकान्वित गति दे सके। स्वतंत्रता के बाद से ही और विशेष रूप से पं. नेहरू के अंतिम दिनों में यह

बाय से--नेतृत्व की विषमता : लेनिन और ब्रेझनेव, जवाहरलाल नेहरू और इंदिरा गांधी, चर्चिल और हेरॉल्ड विलसन

प्रश्न बड़ी तेजी के साथ उभरा था कि 'नेहरू के बाद कौन?' उस समय तो स्वयं नेहरू ने इस सवाल को दबा दिया था और अन्य नेताओं ने भी इस प्रश्न की घोर उपेक्षा की थी।

महान नेताओं की टूटती परंपरा

भारत ही नहीं, इस समय पूरी दुनिया का यही हाल है। सभी जगह महान नेताओं की परंपरा धीरे-धीरे टूटती हुई समाप्त हो चुकी है। विराट व्यक्तित्वों के स्थान पर बौने व्यक्तित्वों की स्थापना हुई है। सही नेतृत्व का यह लंबा अंतराल आखिर कहां ले जाएगा?

नेताओं में कुशलता का ह्रास और सही नेतृत्व का बढ़ता हुआ अभाव दिशाहीन जनता और राष्ट्र के भविष्य को अनिश्चय की स्थिति में छोड़ देता है। नेताओं का अपांक्तेय व्यक्तित्व कहां खो गया? अब तो लगभग सभी देशों में एक-जैसे लक्षणों और समान प्रवृत्तियोंवाले लघु व्यक्तित्वों की भीड़ ही दिखायी पड़ती है। इन नेताओं को जनता का प्रबल समर्थन प्राप्त नहीं है।

कुछ माह पूर्व ब्रिटेन में एडवर्ड हीथ सत्ता से हटे। उनके आर्थिक कार्यक्रम लागू ही न हो सके, ज्यों-के-त्यों रखे रह गये। उनके बाद, विगत ४५ वर्षों में पहली बार, अल्पमत प्रधानमंत्री के रूप में हेरॉल्ड विलसन ने सत्ता संभाली।

दगाल-जैसे महान राजनीतिज्ञ के बाद राष्ट्रपति के पद पर प्रतिष्ठित होनेवाले जार्ज पाम्पिदू के अंतिम दिनों में उनके

जिन्ना और भुट्टो, दगाल और फ्रांस की अस्थिर स्थिति, एडेनावर और विली ब्रांट, रूजवेल्ट और निक्सन
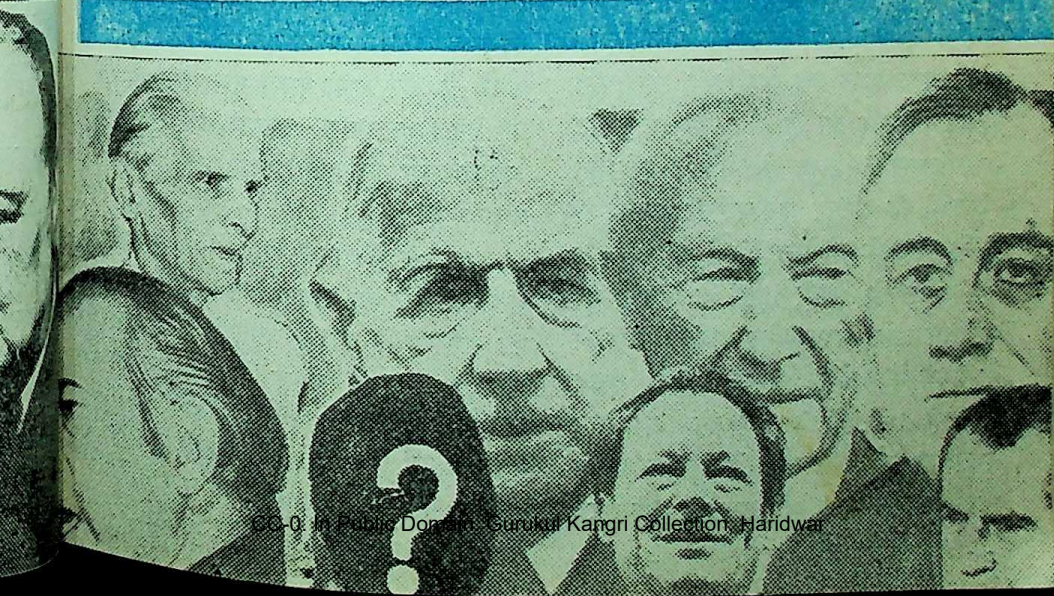
आलोचक अधिक कटु हो चले थे और समर्थक भी आक्षेपों की झड़ी लगाने लगे थे। उनका देहांत हुआ और फिर सवाल खड़ा हो गया कि अब फ्रांस का नेतृत्व कौन करेगा ? यह तो सहज ही स्वीकार किया जा सकता है कि फ्रांस को अब शायद ही दगाल जैसा कुशल नेता मिल सके।

पश्चिमी जरमनी के नोबल शांति पुरस्कार विजेता चांसलर विली ब्रांट को स्थानीय चुनावों में उनकी सोशल डेमोक्रेट पार्टी की पराजय से गहरा धक्का लगा है। जापान के प्रधान मंत्री काकुई तनाका को औद्योगिक अशांति के कारण परेशानी का सामना करना पड़ रहा है और इस प्रकार उनकी लोकप्रियता घटी है।

इजरायल की प्रधानमंत्री गोल्डामायर ने असंबद्ध और अनियंत्रित सहयोगियों को जोड़कर बड़ी मुश्किल से साझा सरकार का गठन किया था। ११ अप्रैल' ७४ को उन्हें विवश होकर त्यागपत्र देना पड़ा। सबसे बुरा हाल तो अमरीकी राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन का है, जिनकी वाटरगेट कांड के कारण प्रतिष्ठा धूल में मिल गयी है। न्यूयार्क की सिटी यूनीवर्सिटी के राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर हैंस जे. मोर्गेनथाऊ का कहना है, "सही नेतृत्व के अभाव का वर्तमान संकट मध्ययुगीन सामंती सरकारों के समय में भोगे गये संकट से कम दुखद नहीं है। अपनी जनता को प्रसन्नता, स्वतंत्रता और जीवन की सुरक्षा प्रदान करने में वर्तमान बौनी सरकारें पूरी तरह असमर्थ हैं।"

छोटे-छोटे गणतंत्रों के नेताओं की हालत भी अच्छी नहीं है। रोम में मेरियानो र्यूमर ने त्यागपत्र दे दिया और इस प्रकार पिछले ३१ वर्षों में स्थापित इटली की ३५वीं सरकार गिर गयी। फिर इतालवी राजनीति की परंपरा के अनुसार उन्होंने सत्ता संभाल ली। कनाडा पर अभी तक अल्पमत सरकार का शासन है। वहां प्रधान मंत्री त्रूदो और उनके दल ने २६४ सदस्यीय हाउस ऑव कामंस में केवल १०९ सीटें प्राप्त कीं। राजनीतिक व्याख्याता स्कैंडिनेविया देशों तक व्याप्त मध्यवर्गीय विद्रोह की चिंता से ग्रस्त हैं।

सही नेतृत्व के अभाव के कारण

राजनीतिक पर्यवेक्षकों की दृष्टि में सही नेतृत्व के अभाव के विभिन्न कारण हैं। कभी मूल्यों में वृद्धि, मुद्रास्फीति और तेल के उत्पादक तथा उपभोक्ता देशों के बीच मूल्य-असंतुलन की ओर इंगित किया जाता है और कभी कच्चे माल के अभाव, बढ़ती हुई जनसंख्या, अकाल, अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की अनिश्चितता को कारण बताया जाता है।

यह भी विचार है कि वर्तमान नेताओं में नयी दृष्टि का अभाव है। आठवें दशक की समस्याओं को सुलझाने के लिए जब छठे और सातवें दशक के हल अपनाये जाएंगे तो समस्या अधिक उलझेंगी ही। बदलती हुई स्थितियों की पहचान, युग के अनुरूप मौलिक और नयी सूझ न होने के

कारण नेतृत्व का एक पांव समस्या में और दूसरा हल के विकल्पों में उलझा रहता है।

हेनरी किसिंगर के मतानुसार अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से ही इन नयी समस्याओं के जाल से निकला जा सकता है, पर क्योतो सैंग्यो विश्वविद्यालय के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के प्रोफसर की वैकाजुमी के अनुसार ऊर्जा, मुद्रास्फीति, व्यापार, जनसंख्या एवं खाद्य के मामलों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय हितों का टकराव अवश्यंभावी है।

अब पुराने संबंधों और नीतियों पर अधिक भरोसा नहीं किया जा सकता। हालांकि बड़ी-बड़ी समस्याओं के समाधान-हेतु पहले तो युद्ध ही हल होता था, लेकिन आजकल आणविक युद्ध की विभीषिका ने युद्ध की कल्पना को असंभव बना दिया है।

नोमुरा रिसर्च इंस्टीच्यूट के मैनेजिंग डायरेक्टर जीरो टोकूयामा के अनुसार तेल-संकट इसका एक अच्छा उदाहरण है। इस तेल-संकट से ही तीसरा विश्व-युद्ध हो सकता था, लेकिन नहीं हुआ।

रैंड कार्पोरेशन के डॉ. गाईपाकर के अनुसार राजनीति का नाम बदनाम हो गया है। नेतृत्व की क्षमता का अभाव है। कतिपय प्रेक्षकों के अनुसार उच्चवर्गीय प्रतिभा का निरंतर ह्रास हो रहा है। अब राजनीति की ओर असाधारण प्रतिभाएं आकर्षित ही नहीं होतीं।

ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के प्रोफेसर अलस्तैर बूचान का विचार है कि राजनीति के प्रति अरुचि के कारण शिक्षा, आमोद-प्रमोद, प्रबंध-व्यवस्था-जैसे क्षेत्रों के प्रति प्रतिभाओं का आकर्षण स्वाभाविक है।

डेनमार्क में १७९ में से केवल २२ सीटें प्राप्तकरने वाले प्रधान मंत्री पोल हार्टलिंग देश के इतिहास में सबसे कमजोर अल्पमत सरकार चला रहे हैं। स्वीडन में सोशलिस्ट प्रधान मंत्री ओलोफ पाम संसदीय बहुमत से भी कम शक्ति होने के कारण अब-तब पदच्युत होने की स्थिति में हैं और बेल्जियम में तो कोई सरकार ही नहीं है!

सोवियत रूस ने अपनी शक्ति और शासन-प्रणाली की सहज गति के द्वारा जो प्रतिष्ठा अर्जित की है, उसके मूल में लेनिन की बहुमुखी प्रतिभा और व्यापक व्यक्तित्व ही दिखायी देता है। पर लेनिन की तुलना में ब्रेझनेव कहां ठहरते हैं? क्या वे उस क्षमता, कुशलता और बुद्धि-विराटता को पाने में समर्थ हैं? अब तो स्थिति यह है कि कई ओर से विरोधों और अंतर्विरोधों में फंसा नेतृत्व अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने में भी कठिनाई का अनुभव कर रहा है। अभी तक केवल चीन ही ऐसा देश है जहां माओ का नेतृत्व मजबूत है। लेकिन यह मजबूती अब भय के कारण अधिक है, क्रियाशीलता पर नहीं।

भारत के पड़ोसी देश पाकिस्तान में भी नेतृत्व का स्तर लगातार गिरता ही गया है। जिन्ना ने अपने बुद्धि-चातुर्य, परिपक्व कूटनीति और कुशल राजनीति

के द्वारा दुनिया के नक्शे पर एक राष्ट्र को जन्म दिया और अपने सही नेतृत्व में उसका सफल संचालन किया। उनके बाद अनेक नेता आये और गये, लेकिन वह रचनात्मकता किसी में भी नहीं मिली।

हर बार अपना वक्तव्य बदल देने और अपने देश में नित्य होने वाले उपद्रवों को शांत कर पाने की क्षमता न रखनेवाले वर्तमान नेता भुट्टो क्या कभी जिन्ना का व्यापक स्तर पा सकते हैं, ?

बहुत पहले वाल्टर लिपमैन ने कहा था, "प्रजातंत्र की सबसे बड़ी देन यही है कि वह वास्तविकताओं को सामने लाकर शासकों को निर्णय के लिए प्रेरित करता है, लेकिन इसमें यह भी होता है कि कुछ कटु वास्तविकताएं भी सामने आ जाती हैं और कुछ ही शासक उन्हें हल कर पाते हैं।"

सेंटा बार्बरा के हैनरी एस. ऐशमोर के मतानुसार आज युग का सवाल यही है कि क्या जनप्रतिनिधि शासन-प्रणाली अपने को सुधार सकती है ?

प्रजातंत्रीय सरकारों के दोषों के लिए केवल निकम्मे राजनीतिज्ञ उत्तरदायी नहीं हैं। कोलंबिया विश्वविद्यालय के बीनीव ब्रजेंन्स्की के कथनानुसार, "द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से प्रजातंत्रीय प्रणाली-वाले देशों में जनता की आमदनी और आय-व्यय में पर्याप्त वृद्धि हुई है, पैसा कमाना ही एक ध्येय रह गया है। राष्ट्र के प्रति निष्ठा, श्रद्धा, समाज के हितों को सर्वोपरि समझने की भावना घटती रही है।"

सारे विश्व के प्रजातंत्रीय देशों के आम नागरिक अपने को अत्यंत कठिन परिस्थितियों में पा रहा है। जनता किसी चमत्कारी पुरुष की कामना कर रही है जो उनकी समस्याओं को चुटकी बजाते हल कर दे।

फासिज्म के शिकंजों का भय

'एस्केप फ्रॉम फ्रीडम' नाम पुस्तक में एरिक फ्रोमैन ने अनुभव किया है कि प्रजातंत्रीय देशों की ऐसी हालत होती जा रही है कि वे किसी भी दिन फासिज्म के शिकंजे में जकड़े जा सकते हैं। एबर हार्डशुल्ज के अनुसार आम आदमी यह सोचने में असमर्थ है कि आखिर मुद्रास्फीति और ऊर्जा की समस्या को हमारे राजनीतिज्ञ क्यों नहीं हल कर पा रहे हैं ?

भूतपूर्व अमरीकी परराष्ट्र सचिव डीन रस्क के मतानुसार उथल-पुथल और सामयिक तनाव एवं अड़ंगेबाजी तो संसदीय और प्रजातंत्रीय प्रणाली की ही देन है।

पूरे विश्व में किसी न किसी प्रकार अपनी स्थिति और पद बनाये रखने में व्यस्त नेतागण किस तरह खोखले हैं, वर्तमान परिस्थितियों से सहज ही इसका अनुमान लगाया जा सकता है। यह खोखलापन और बढ़ता हुआ नेतृत्व-संकट दुनिया को किसी ऊंचाई की ओर नहीं ले जा सकता।

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का नया मोहरा दिएगो गार्शिया

• अरुणकुमार

मालदीव द्वीप-समूह के दक्षिण में स्थित १३ मील लंबे और ४ मील चौड़े सुनसान द्वीप दिएगो गार्शिया को अमरीका ने अपनी राजनीतिक शतरंज का एक मोहरा बनाकर नया विवाद खड़ा कर दिया है। हिंद महासागर के सभी देश गंभीरता के साथ इस खतरे के विरोध में विश्वमत जुटाने में लगे हैं।

खतरा है भी ठीक। दिएगो गार्शिया पर अमरीका १२ करोड़ रुपये की लागत से एक नौसैनिक अड्डा बना रहा है। अमरीका के अनुसार इसका उद्देश्य हिंद महासागर में बढ़ रहे रूसी प्रभाव को कम करना है।

हिंद महासागर के देशों में ही नहीं, स्वयं अमरीका में भी निक्सन-प्रशासन के इस कुचक्र का भरपूर विरोध हो रहा है। भारत के अलावा बंगलादेश, श्रीलंका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, मलयेशिया, थाईलैंड और मालदीव की सरकारें इस नौसैनिक अड्डे की स्थापना को संयुक्त राष्ट्र संघ के उस प्रस्ताव का घोर उल्लंघन मान रही हैं, जिसमें हिंद महासागर को शांति तथा सहयोग का क्षेत्र माना गया है। १८८ वर्ष पहले यह द्वीप फ्रांस के आधीन था, किंतु बाद में ब्रिटिश साम्राज्यवाद हिंद महासागर के देशों पर छा गया। ईस्ट इंडिया कंपनी की व्यापारिक सुविधाओं का विस्तार करने के लिए अंगरेजों को इस द्वीप की आवश्यकता महसूस हुई। सन १७८६ में शक्तिशाली प्रतिद्वंद्वी के रूप में हिंद महासागर क्षेत्र में फ्रांस के

मुकावले में ब्रिटेन खड़ा हो गया था। अव उसने इस द्वीप को फ्रांस से छीनने के लिए आक्रमण कर दिया। ब्रिटेन भारतीय सैनिकों के बल पर ही इसे फ्रांस से छीन सका था।

इस घटना चक्र में एक तथ्य यह भी सामने आता है कि भारतीयों के बल पर छीनी भूमि को ब्रिटेन अपनी इच्छा से अमरीका को कैसे सौंप सकता है?

मारीशस ने इसी सिलसिले में एक नया रहस्योद्घाटन किया है। १९६७ में जब ब्रिटेन से स्वतंत्रता प्राप्त करते हुए उसने यह द्वीप उसे दिया था, तब यह बात स्पष्ट कर दी गयी थी कि इस द्वीप का किसी सैनिक उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं किया जाएगा, बल्कि यहां ऐसा संचार केंद्र स्थापित किया जाएगा, जो ब्रिटेन और मारीशस दोनों के लिए हित-कारी होगा। अब मारीशस ने इस नयी कार्यवाही का डटकर विरोध करते हुए घोषणा की है कि यदि दिएगो गार्शिया पर नौसैनिक अड्डा स्थापित करने की योजना को त्यागा नहीं गया, तो वह इस प्रश्न को विश्व अदालत में ले जाएगा। मगर ब्रिटेन का कहना है कि मारीशस की नेशनल असेंबली ने यह बात भी मान ली थी कि जरूरत पड़े तो इस द्वीप का उपयोग सुरक्षा के लिए भी किया जा सकता है।

इस अड्डे के निर्माण को रोकने में जल-कानून भी आड़े आ रहा है। समुद्रीय जल कानून के अनुसार किसी भी तटवर्ती देश से २१ मील दूर तक समुद्र उसका है, बाकी सबका। यह द्वीप मालदीव से ६५० मील, श्रीलंका से १,१०० मील और भारत से १,२०० मील दूर है। कोई भी देश इस द्वीप के इतना निकट नहीं कि वहां चलनेवाली किसी भी गति-विधि को कानूनी तौर पर चुनौती दे सके। हिंद महासागर के तटवर्ती देशों की इसी विवशता का लाभ उठाकर ब्रिटेन से मिले इस द्वीप को अमरीका अपने रणपोतों, प्रक्षेपास्त्रों तथा अन्य युद्ध-सामग्री से लैस कर रहा है। पहले अमरीका को विश्वास था कि वह अरब-भूमि में अपने सैनिक-अड्डे स्थापित करके एशिया से रूसी प्रभाव को हटाता रहेगा। मगर अब स्थिति बदल गयी है। फारस की खाड़ी में बहरीन का शानदार अड्डा अमरीका को मिल भी गया था, किंतु अब अक्तूबर, ७४ तक उसे खाली करने का नोटिस आ चुका है।

दिएगो गार्शिया जहां एकांत में है, वहां एक बात और पता चली है। यह द्वीप तेल, यूरेनियम, सोने और हीरों के भंडार से भरा हुआ है। इस तरह अम-- का एक तीर से दो शिकार खेल रहा है—उसकी अपनी सैनिक-शक्ति का पड़ाव हिंद महासागर में भी हो जाएगा और मुफ्त में बेशकीमती खनिज भी उसे मिल जाएंगे।

हमारा मुखपृष्ठ
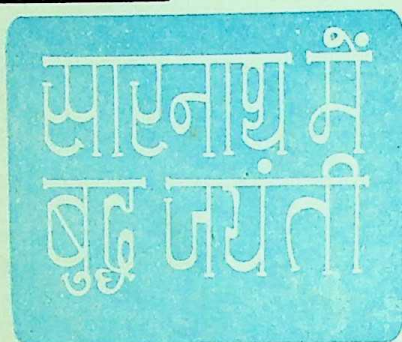
• शोभना नारायण

सूर्यास्त की लालिमा मिटते ही सारनाथ के भग्नावशेषों पर शांत वातावरण छा गया और मैं संधिकाल की मौन भाषा में खो गयी। हवा का एक झोंका आया और धीरे-धीरे मेरी आंखें सारनाथ में स्थित पुराने मूल गंधकुटी विहार पर जा टिकीं, जो भगवान बुद्ध का कभी निवासस्थान रहा था। इसके बाद आंखों में छा गया अशोक का वह गौरवमय स्तंभ, जो धार्मिक विचारों द्वारा दी गयी शिक्षाओं की एक अनोखी साक्षी है।

कितना अविश्वसनीय सत्य है कि माणिक-मुक्ताओं के ढेर में पले सिद्धार्थ ने अपने राजकीय वैभव-विलास को संसार में व्याप्त दुःखों के निवारणार्थ त्याग दिया और महानिर्वाण प्राप्त कर अपनी अनुभूतियों का धर्मोपदेश किया जो देश-देशांतर में फैला। चीन, जापान, लंका और दक्षिण-पूर्व एशिया के समूचे क्षेत्र ने बुद्ध धर्म को स्वीकार किया और हजारों वर्षों बाद आज भी वे इसके पक्के अनुयायी हैं। भारतवर्ष में, जो इस धर्म का जन्म-स्थान रहा है, विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक आंदोलनों के कारण यह धर्म अब केवल अल्पवर्गों की मान्यता का विषय रह गया है। बुद्ध धर्म के प्रचार का मुख्य कारण था इसका अष्टपदी पथ

सारनाथ के मूल गंध कुटी बिहार में अंकित वे दृश्य जिन्होंने राजकुमार सिद्धार्थ को गौतमबुद्ध बना दिया
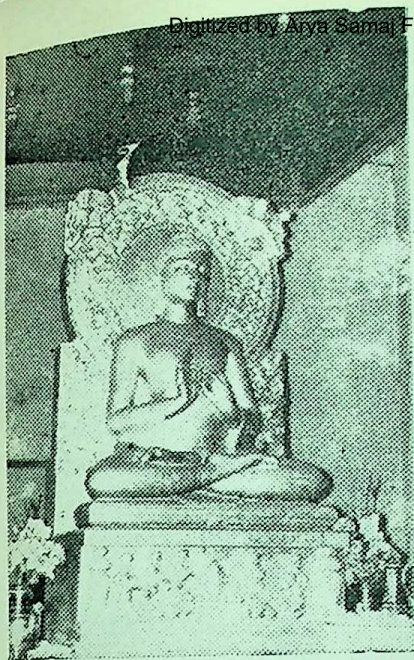
मूल गंध कुटी, बिहार में
रखी बुद्ध की स्वर्णमूर्ति

जिसे 'मध्य पथ' भी कहा जाता है। इससे अंतर्दृष्टि और विवेक मिलता है, जो शांति, ज्ञान और बुद्धत्व की ओर ले जाता है। इसके द्वारा 'निर्वाण' की प्राप्ति होती है। भगवान बुद्ध ने पुस्तकों की अपेक्षा अनुभव से ज्ञान प्राप्ति पर जोर दिया है।

भगवान बुद्ध से संबंधित जितने स्थान हैं, उनमें सारनाथ का महत्त्व सर्वोपरि है। वाराणसी से १० किलोमीटर दूर सारनाथ में स्थित 'मृगदाव' था, जहां बुद्धत्व की प्राप्ति के बाद भगवान बुद्ध पैदल पहुंचे और यहां के शांत वातावरण में अपने पांच शिष्यों को प्रथम उपदेश दिया, जो 'धर्म चक्र प्रवर्तन सूत्र' के नाम से प्रसिद्ध है। अशोक ने उसी पवित्र घटना की स्मृति में एक सिंह-शीर्ष स्तंभ निर्मित कराया था, जो अब सारनाथ संग्रहालय में सुरक्षित है।

बद्ध से ३०० वर्ष बाद, मौर्य राजाओं ने (खासकर अशोक ने) बुद्ध धर्म को राजकीय धर्म घोषित किया और देश-देशांतर में इसका प्रचार किया। युअन-च्वांग ने यहां के एक मठ का वर्णन करते हुए लिखा है कि इसमें १५०० भिक्षुओं के

हमारी राष्ट्रीयता का प्रतीक
सारनाथ का सिंह-शीर्ष स्तंभ
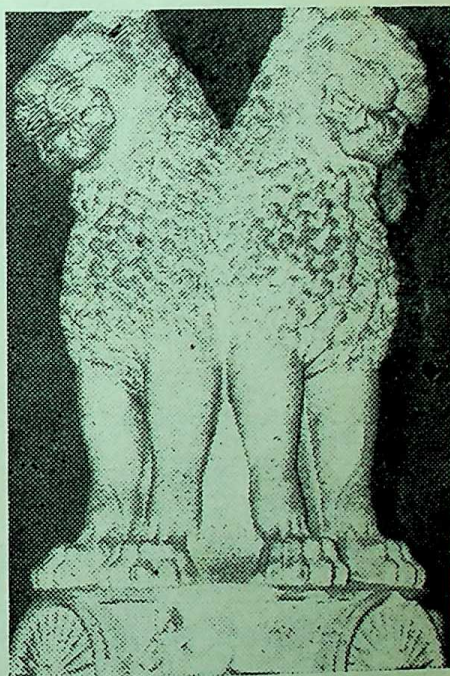
रहने का स्थान था तथा अशोक के द्वारा बनाया हुआ एक स्तूप और चमचमाता, ७० फीट ऊंचा एक स्तंभ था। १९०४ में लॉर्ड कर्जन के प्रोत्साहन पर सारनाथ की टूटी इमारतों और खंडहरों की कुशल कारीगरों द्वारा पुनः मरम्मत करायी गयी।

भगवान बुद्ध ने प्रथम वर्षा-ऋतु सारनाथ स्थित मूल गंधकुटी में व्यतीत

नवयुवक सिद्धार्थ के जीवन की कहा... राजपाट त्यागने की परिस्थितियां, ... निर्वाण प्राप्त करने के मार्ग की ... महानिर्वाण प्राप्त भगवान बुद्ध के ... उपदेश तथा मनुष्य के स्वाभाविक ... स्वतंत्रता के बाद भारत ने पंचशील ... सिद्धांतों का अनुसरण किया और सार... के सिंह-शीर्ष स्तम्भ को ही हमारी ...

सारनाथ के भग्नावशेष
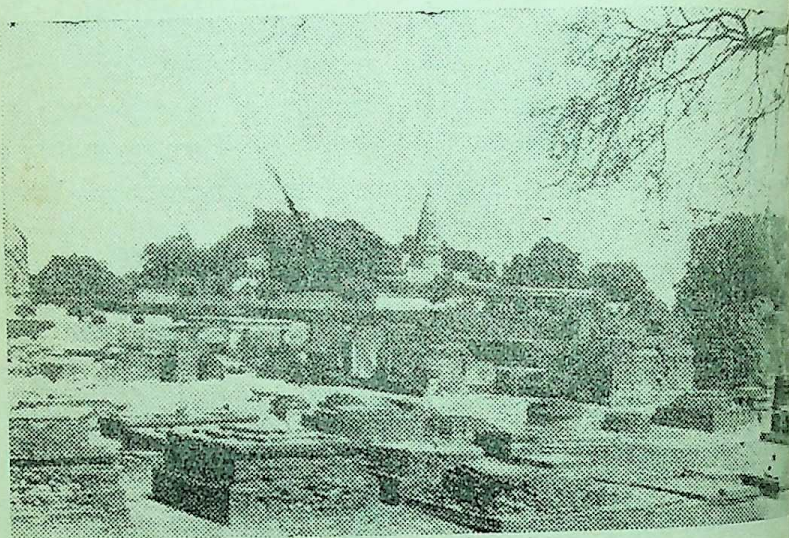
की थी। महाबोधि समिति द्वारा निर्मित यह मूल गंधकुटी विहार उसी घटना से संबंधित है। इसमें भगवान बुद्ध के सर्वाधिक पवित्र तथा प्रामाणिक अवशेष रखे गये हैं। बुद्ध के इस मंदिर में मुख्य आकर्षण की वस्तु है—भगवान बुद्ध की स्वर्ण मूर्ति और दीवारों पर चित्रकला में चित्रित

यता का प्रतीक माना।

रात ढलने लगी और मैं सार... के प्राचीन वैभवों की महानता के ... से धीरे-धीरे वाराणसी की ओर ब... कानों में 'बुद्धम् शरणं गच्छामि', ... शरणम् गच्छामि', 'संघम् शरणम् ग... की मधुर-ध्वनि ही गूंजती रही।

एक भ्रष्ट राष्ट्रपति

• राजेन्द्रकुमार राजीव

उगांडा एक पिछड़ा हुआ देश है। वहां सेना में ऊंचे पदों के लिए किसी का चुनाव करने के लिए उसकी असाधारण ऊंचाई, उत्तम स्वास्थ्य और भारी डीलडौल तथा आंख मूंदकर तुरंत राइफल दागने की योग्यता को ही विशेष आधार माना जाता है। ईदी अमीन ने इन्हीं विशेषताओं के कारण उत्तरोत्तर पदोन्नति प्राप्त की। सन १९४६ में सेना में साधारण सैनिक के रूप में भरती होने वाले ईदी अमीन को सात वर्षों के भीतर ही लांस कारपोरल बना दिया गया। अंगरेज अफसरों के प्रति अंधभक्ति और वेशभूषा के प्रति सतर्कता ही अमीन की उन्नति का मूल कारण थी।

ईदी अमीन के व्यक्तिगत जीवन से जो व्यक्ति भलीभांति परिचित था, वह था एक यूरोपियन मेजर इयानग्राहमा जो सन '५३ में अमीन के साथ 'किंग्स अफरीकन राइफल्स' की साठवीं शाखा में था।

ग्राहम के कथनानुसार, 'सन १९५३ में ही यह स्पष्ट रूप से प्रकट हो चुका था कि ईदी अमीन बहादुर, कुशल नेतृत्व के गुणवाला, प्रबल व्यक्तित्व से संपन्न, वफादार और एक अच्छा खिलाड़ी है। यद्यपि अमीन 'गुड मार्निंग सर' कहने के अतिरिक्त अंगरेजी नहीं जानता, फिर भी उन्नति करने की क्षमता रखता है।'

ईदी अमीन अपने 'बौद्धिक-अभाव' से परिचित था इसलिए राष्ट्रपति-पद हथियाने के बाद उसने अपने लिए एक यूरोपीय शिक्षक नियुक्त किया। राष्ट्रपति बनने के पूर्व ईदी अमीन ने सेना के विभिन्न पदों पर कार्य किया। १९५८ में वह वारंट-आफीसर प्लाटून-कमांडर था। सन १९५९ में उसे पुनः उन्नति का अवसर मिला, जबकि उसे 'एफेंडी'—वारंट - आफीसर की ट्रेनिंग के लिए भेजा गया। एफेंडी का कोर्स पूर्ण कर जब वह सम्मान के रूप में मिली तलवार लेकर लौटा तो उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गयी।

१९६१ में जब रेजिमेंट का अफरीकीकरण हुआ तो कुछ वारंट-अफसरों को कमीशन दिया गया। इनमें अमीन भी था।

चौथी बटालियन में से दो प्रमुख अफरीकी एफेंडी - कमीशन के लिए चुने गये। इनमें ईदी अमीन और उसका सबसे बड़ा शत्रु शवानी ओपोलोटो था।

सेकेंड लेफ्टिनेंट के पद से उन्नति कर अमीन लेफ्टिनेंट बन गया, फिर कंपनी-कमांडर के पद से मेजर बन गया।

अक्तूबर, १९६३ में जैसे ही उगांडा को स्वतंत्रता मिली, सेना का अफरीकीकरण भी नाटकीय ढंग से बढ़ता गया।

अनेक युवक अफ़रीकी सेना में आफीसर्स-ट्रेनिंग के लिए भरती किये जाने लगे। ईदी को भी कमांडिंग विल्ट शायर के इन्फेंट्री स्कूल में भेजा गया।

स्वतंत्रता के समय 'किंग्स अफरीकन राइफल्स' ने दो नयी बटालियनों का निर्माण किया। अमीन ने प्रथम बटालियन का कार्यभार संभाला और द्वितीय बटालियन का शवानी ओपोलोटो ने।

सन १९६५ में भ्रष्टाचार की उस पहली सनसनीखेज घटना की खबर फैली, जिसमें ईदी अमीन भी शामिल था। उस समय ईदी अमीन सेना का डिप्टी कमांडर था और उसे शोंबे-विरोधी क्रांतिकारी सेना की सहायता के लिए विशेष रूप से कांगो में नियुक्त किया गया था। ऐसा कहा जाता है कि अमीन ने उत्तर-पूर्व कांगो के खजाने से बहुत सोना और हाथीदांत इकट्ठा किया और उसे बेचकर नकद रुपये अपने नाम जमा कर दिये।

१३ मई, १९६५, को अमीन पर भ्रष्टाचार के आरोप के संबंध में सेना की ओर से तीन आरोप-पत्र प्रधान मंत्री को दिये गये। अमीन पर चोरी का अभियोग भी लगाया गया था, पर ठोस प्रमाण के अभाव में राष्ट्रपति ओबोटे ने अमीन के विरुद्ध कोई कार्रवाई करने से पहले कांगो के अधिकारियों से इस मामले की जांच की अपील की। साथ ही, उन्होंने ओपोलोटो और अमीन को एक दूसरे से अलग स्थानों पर नियुक्त कर दिया।

इसी बीच ४ फरवरी, १९६६ ... विरोधी पार्टी के एक सदस्य दाउ... ओचेंग ने ईदी अमीन के विरुद्ध ... बैंक एकाउंट के एक घोटाले के प्रश्न को उठाया। उसने अमीन द्वारा ... काले धन का लेखाजोखा दिया। ... मिलाकर यह धनराशि ३,४०,००० शि... थी जो केवल २४ दिन की अल्पावधि ... जमा की गयी थी।

पर अमीन के विरुद्ध अदालती का... वाई करने में देर की जाती रही क्यों... ओबोटे ने भी सोने और हाथीदांत ... बिक्री में से आधी रकम हड़प ली ... दो-तीन सप्ताह बाद ओबोटे ने संविधान ही भंग कर दिया।

संविधान के स्थगन और इस कांड ... अपूर्ण बहस के दौरान ओबोटे ने पांच ... मंत्रियों को गिरफ्तार कर लिया और ... प्रेस कान्फ्रेंस में कहा कि "भ्रष्टाचार ... आरोप एकदम मूर्खतापूर्ण थे। इस सं... में जो कार्रवाई की जा सकती थी, ... की जा चुकी है। फिर भी इस संबंध ... आगे भी अदालती जांच-पड़ताल जा... रखी जाएगी।"

कुछ समय बाद जब अमीन अवका... से लौटा तो उसे सेना का चीफ ऑव स्टा... बना दिया गया।

बाद में ओबोटे ने अपनी कड़ी नि... रानी में जो अदालती जांच-समिति बना... उसने सभी अपराधियों को साफ ब... कर यह घोषणा की कि कांगो से वह ...

सोना, हाथीदांत, नकद धनराशि तथा अन्य सामान प्राप्त हो गया है, जो गायब हो गया था। सेना के बल पर अदालती जांच-समिति से यह भी कहलवाया गया कि सरकार का तख्ता पलटने के लिए ही कुछ व्यक्तियों ने सरकार के सम्माननीय नेताओं तथा अधिकारियों के विरुद्ध षड्यंत्र रचकर यह आरोप लगाया था।

ओबोटे ने भी शपथपूर्वक कहा कि कांगो के राष्ट्रवादियों द्वारा बेचा जाएगा।

"हवाईअड्डे जाते समय मार्ग में अमीन ने अपने घर ले जाकर मुझे बीस पौंड वजन की सोने की छड़ें भी दिखायी थीं।" अमीन के द्वारा ही वेंटर को ज्ञात हुआ कि ईदी अमीन तथा उसके अन्य साथियों के मध्य लगभग पांच टन सोने में समान हिस्सा था। लेकिन वेंटर जेनेवा जाने के बजाय ब्रुसेलस चला गया। वहां
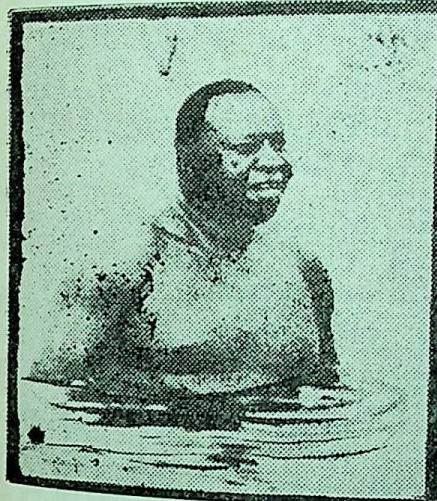
ईदी अमीन : कितने पानी में ?

एक पैसे का भी दुरुपयोग नहीं किया गया है। इस प्रकरण में 'कमर्शियल बैंक ऑव अफरीका' के व्यवस्थापक एस. एम. वेंटर ने अपने साक्ष्य में ईदी के विरुद्ध कहा, 'एक दिन मैं जब ईदी अमीन से उगांडा-क्लब में मिला तो उसने मुझे जेनेवा जाकर सोना खरीदनेवाली पार्टी का पता लगाने को कहा, और यह भी कहा कि यह सोना

उसके हेड आफिस में विचार-विमर्श किया गया कि इस सौदे में तब तक हाथ नहीं डालना चाहिए, जब तक सोने के वास्तविक मालिक का पता न चल जाए।

अंत में ईदी अमीन और ओबोटे ही पूछताछ के लिए शेष थे। जब उनसे इस मामले में पूछा गया तब अमीन ने बताया कि सारा रुपया, लगभग ४८०,०००
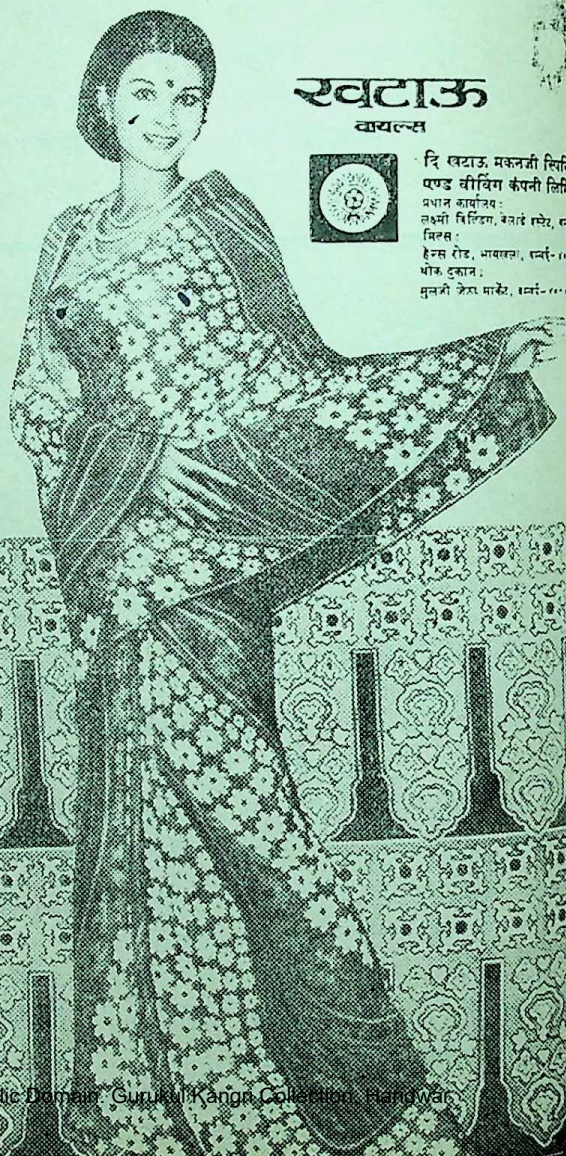
खटाऊ
वायल्स
दि खटाऊ मकनजी स्पिनिंग
एण्ड वीविंग कंपनी लिमिटेड
प्रधान कार्यालय :
मिल्स :
थोक दुकान :

शिलिंग, उसे कांगो के राष्ट्रवादियों द्वारा प्राप्त हुआ था। उसका उपयोग उसने सैनिक साज-सामान खरीदने में किया और उसकी रसीदें भी भेज दी थीं।

परंतु इयान ग्राहम के पूछने पर स्वयं अमीन ने यह स्वीकार किया कि सोने और बैंक के प्रकरणों में वह भी सम्मिलित था। ग्राहम ने बताया कि रुपया अमीन की सबसे बड़ी कमजोरी रही है।

अमीन की तीन पत्नियां थीं। वे तीनों ही बहुत खर्चीली थीं, पर अमीन भी तब एक ऐसी स्थिति तक पहुंच गया था जिसमें वह मनचाहा धन किसी भी ढंग से उपलब्ध कर सकता था।

अदालती जांच-समिति की कार्यवाही समाप्त होने के ठीक एक मास पश्चात ओबोटे ने राष्ट्रपति कबाका को पदच्युत कर दिया। इजराइल में प्रशिक्षित विशेष सैन्यदल को राष्ट्रपति कबाका के महल पर आक्रमण करने को भेजा गया, फिर ओबोटे ने स्वयं राष्ट्रपति का पद ग्रहण कर लिया।

शासन-परिवर्तन के इस कुचक्र के साथ-साथ ओबोटे ने षड्यंत्रकारी दलों, प्रेस, पुलिस और सेना का भारी जमाव किया। उसने ब्रिगेडियर अमीन को भीतरी क्षेत्र में होने वाले विद्रोह का दमन करने के लिए विशेष रूप से नियुक्त किया ताकि दूरवर्ती क्षेत्र के लोग भड़क न उठें, पर वास्तविकता यह थी कि अमीन के बढ़ते प्रभाव से स्वयं ओबोटे भी आशंकित थे।

इसी बीच अमीन ने खुफिया-विभाग से भी साठगांठ कर ली। उसने राष्ट्रपति के निजी अंगरक्षक को चुनने के लिए बड़ी उत्सुकता से तत्परता प्रकट की। १९७१ में जब अमीन ने राष्ट्रपति-पद हथिया लिया, तब पता चला कि अमीन ने इस अंगरक्षक को नियुक्त करने में क्यों इतनी रुचि दिखायी थी।

इन वर्षों में अमीन द्वारा किये गये एक और अनुचित कार्य का रहस्योद्घाटन उगांडा के महालेखा-परीक्षक ने, असंभावित आंकड़े प्रस्तुत कर, किया।

महालेखा-परीक्षक ने लोक-निधि के इस प्रकार बड़ी मात्रा में दुरुपयोग की कटु आलोचना की। उन्होंने सेनाधिकारियों पर भी आरोप लगाया कि उन्होंने सेना के आकार-प्रकार तथा खरीदे गये नये साज-सामान का सही विवरण कभी नहीं दिया।

१९७० के प्रारंभ तक तो उगांडा की संसद को भी सेना के वास्तविक आकार और खर्च की सही-सही जानकारी नहीं थी। सेना के प्रत्येक कर्मचारी को उत्तम वर्दी, प्रतिदिन बढ़िया भोजन तथा भोग-विलास की सभी वस्तुएं उपलब्ध थीं।

जनवरी, १९७१ में जब सिंगापुर में आयोजित राष्ट्रकुल सम्मेलन में भाग लेने ओबोटे गये उन दिनों उनके पास अमीन के विरुद्ध दो अंतरिम रिपोर्टों के कागजात विचाराधीन थे। इनमें से एक तो सेना में धन के अति दुरुपयोग से संबंधित था तथा दूसरा एक वरिष्ठ सेनाधि-

new!
det
detergent washing cake
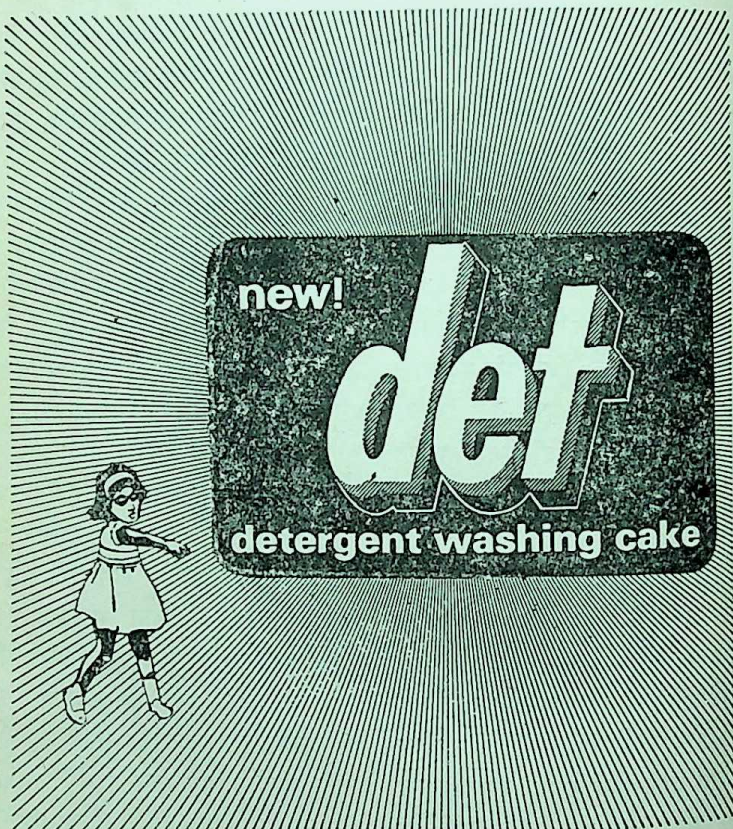
कारी की रहस्यपूर्ण हत्या से संबंधित था। दोनों ही मामलों में अमीन के विरुद्ध प्रमाण मौजूद थे। राष्ट्रपति ओबोटे को अब निर्णय करना था कि अमीन को निलंबित किया जाए या नजरबंद कर रखा जाए। कुछ भी हो, यह तो निश्चित हो गया था कि अमीन अब इन आरोपों से मुक्त नहीं हो सकता था।

सिंगापुर से वापस लौटने से पूर्व ही ओबोटे ने यह निश्चय कर लिया कि इसके पहले कि अमीन कोई षड्यंत्र रचे, दृढ़ कदम उठा ही लेना चाहिए।

२४ जनवरी, १९७१ की शाम को टेलीफोन आया। उसकी लाइन जिंजा-स्थित अधिकारियों के होटल में दी गयी, जहां ओबोटे-समर्थक अधिकारियों का जमाव रहता था। उन्हें अमीन तथा उसके साथियों को तुरंत गिरफ्तार करने का आदेश दिया गया, परंतु संयोगवश उस समय होटल में टेलीफोन-स्विच-बोर्ड पर टेलीफोन-आपरेटर मौजूद नहीं था। टेलीफोन पर गिरफ्तारी का आदेश एक ऐसे सारजेंट मेजर ने सुना जो अमीन के इलाके वेस्टनील से आया हुआ था।

कुछ ही क्षणों में यह समाचार सारजेंट मेजर मूसा तक पहुंचा, जो अमीन-समर्थक था। मूसा तथा वेस्टनील की समर्थक बख्तरबंद सशस्त्र सेना ने अमोली तथा लांगी जनजाति के ओबोटे समर्थकों को घेर लिया। जब यह कांड घटित हो रहा था, अमीन बत्तखों का शिकार करने कहीं दूरस्थ स्थान में था। जब वह शिकार से अपने घर लौटा तो मूसा पहले से ही वहां मौजूद था।

ओबोटे के सिंगापुर से वापस लौटने के पहले ही अमीन ने अपने आपको मेजर-जनरल से जनरल बना लिया और ओबोटे-समर्थक सभी अधिकारियों और नेताओं को गिरफ्तार कर स्वयं को राष्ट्रपति घोषित कर दिया। उसने संसद को भंग कर सभी राजनीतिक दलों पर प्रतिबंध लगा दिया। साथ ही सेना को अविलंब दोगुना करने का आदेश दे दिया।

राष्ट्रपति-पद से राष्ट्र के नाम अपने 'प्रथम भाषण में अमीन ने घोषणा की कि मेरी सरकार सब से पहले बुरी तरह से फैल रहे भ्रष्टाचार और भाई-भतीजा-वाद को समाप्त करने के लिए दृढ़ कदम उठायेगी।' इस घोषणा के तुरंत बाद ही उसने अपने साले वेनुमे किवेदी को विदेश मंत्री नियुक्त कर दिया। लेकिन अभी हाल ही में उसने एक भूतपूर्व फैशन माडल तथा उगांडा के एक कबीले की राजकुमारी को, जो उसकी प्रेमिका भी है, विदेशमंत्री नियुक्त किया है।

--१७७, शिवकला मंदिर-मार्ग
रामनगर, दिल्ली-११००५१

"यहां टिकट लगा दीजिए।"
"ओह, तो टिकट मुझे लगानी होगी!"
—"नहीं, रसीद पर ही लगा दीजिए।"

ऊंटवाहिनी हमारे रेतीले सीमांत की प्रहरी

● राजेन्द्र छाबड़ा

हमारे देश की पाकिस्तान से लगनेवाली सीमा-रेखा एक हजार किलोमीटर से अधिक दूरी तक राजस्थान के रेगिस्तानी प्रदेश से और लगभग दो सौ किलोमीटर तक गुजरात के वंजर और दलदली प्रदेश से होकर गुजरती है। राजस्थान की सीमा में गंगानगर, जैसलमेर, वाड़मेर और वीकानेर जिले आते हैं। इस सीमा-क्षेत्र में ऊंचे-ऊंचे रेतीले टीबों के सिवा और कुछ नहीं है। कहीं-कहीं पानी की वेरिया हैं, जिनके इर्द-गिर्द थोड़ा जन-जीवन पाया जाता है। इसके अलावा दूर-दूर तक पानी का कहीं नामोनिशान तक नहीं मिलता। बंजर टीलों पर केवल बबूल के कुछ वृक्ष पाये जाते हैं।

गरमी यहां का सबसे विकट मौसम है। जेठ की तपती दुपहरियों में जब यहां का तापमान ११० डिग्री फारेनहाइट से भी अधिक हो जाता है, तब पूरे इलाके में मानो आग बरसने लगती है। प्रचंड गरमी, लू के थपेड़ों और रेतीले तूफानों के बीच जीना दूभर हो जाता है। और सर्दी में जब यहां का तापमान ६० डिग्री फारेनहाइट से भी नीचे उतरता है तब ऐसी कड़ाके की ठंड पड़ती है कि हड्डियां भी गलने लगती हैं। वर्षा प्रायः नगण्य होती है, जिससे अनुपजाऊपन के साथ ही पेयजल की भी गंभीर समस्या बनी रहती है। इस तरह यहां की जलवायु शुष्क तथा विषम है।

गुजरात की सीमा कच्छ के रन से होकर गुजरती है। यहां कहीं रेतीले मैदान हैं, तो कहीं ऊंचे-नीचे टीले। कहीं नखलिस्तान हैं, तो कहीं दलदल। यह इलाका

भारतीय ऊंट सेना की एक टुकड़ी जो विश्व की ऊंटवाहिनी में बेजोड़ है
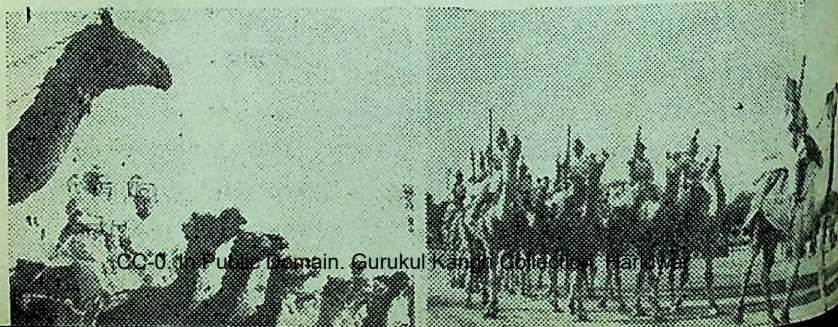
नमकीन मिट्टीवाला होने के कारण बंजर है। यहां उमस और दलदल की सड़ांध रहती है। यहां भी गरमी में अधिक गरमी और सर्दी में अधिक सर्दी होती है। वरसात नगण्य होती है।

रेतीले युद्धक्षेत्र की समस्याएं

हमारी ऊंटवाहिनी इस विकट और निर्जन सीमांत की सुरक्षा का कार्य, सतर्कता के साथ करती आ रही है। १९६५ और १९७१ में दुश्मन ने हमारे इस सीमांत पर आक्रमण किया, और दोनों ही बार हमारी ऊंट-रेजीमेंट ने अपने पराक्रम का परिचय दिया।

रेगिस्तानी इलाके में कई विकट समस्याएं हैं। यहां भारी टैंक, तोपगाड़ियां रेत और दलदल में तेजी से नहीं चल सकतीं। उनके रेत एवं दलदल में फंसने का अंदेशा रहता है। रेतीला मैदान एकदम सपाट रहता है। यहां 'ओट' न मिलने से लुक-छिपकर गोलाबारी नहीं की जा सकती और झाड़-झंकाड़ न होने से दुश्मन को भ्रम में नहीं रखा जा सकता।

रेगिस्तानी इलाके में पैदल सेना भी ज्यादा नहीं चल सकती। घोड़े और खच्चर पानी और घास पर आश्रित होने के कारण इस क्षेत्र के लिए अनुपयुक्त हैं।

ऊंटों की रेजीमेंट ही ऐसी है जो रेगिस्तानी इलाके में आसानी से लंबे सफर को तय कर सकती है और हर मौसम में क्रियाशील रह सकती है। ऊंट-सवार सैनिक राइफलें, स्टेनगनें, मोर्टार, ब्रेनगनें, हलकी मशीनगनें लेकर इस पर बैठकर आसानी से आक्रमण कर सकते हैं। ऊंट को बैठाकर और खड़े रखकर दोनों स्थितियों में दुश्मन पर निशाना साधा जा सकता है। यदि बैठने की हालत में उसे गोली लगती है तो वह कभी लुढ़केगा नहीं। दूसरे, इस रेतीले, निर्जन सीमाप्रदेश में जहां इनसान सहज ही रास्ता भटक जाता है, ऊंट आपसे-आप सवार को उसकी मंजिल तक पहुंचा सकता है।

वास्तव में 'रेगिस्तान का यह जहाज' एक चलता-फिरता टैंक है, जो अपने इलाके में मैदानी टैंक से कहीं ज्यादा तेज और भयंकर है। ऊंट-रेजीमेंट को न तो भारी-भरकम बख्तरबंद गाड़ियों की आवश्यकता है और न ही टैंकों की।

रेतीले सीमांत की रखवाली में व्यस्त ऊंटवाहिनी के सैनिक
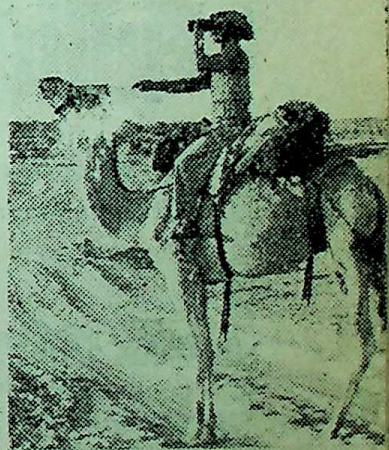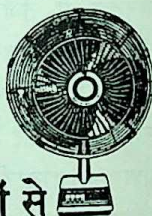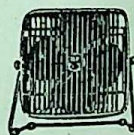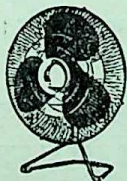
स्थापना का इतिहास
'१३ ग्रेनेडियर्स' (गंगा-जैसलमेर) नाम से पुकारी जानेवाली हमारी यह ऊंट-रेजीमेंट भारतीय सेना की एक प्राचीनतम इकाई है, जिसने पिछली पांच शताब्दियों में कई लड़ाइयों में हिस्सा लिया है और अपने करतब दिखाये हैं। १४६५ में जोधपुर के राजा बीकाजी ने अपने नये राज्य बीकानेर की सुरक्षा के लिए सर्वप्रथम एक ऊंट-सेना बनायी थी। इस ऊंट-सेना ने बाद में बीकानेर के महाराजा करणीसिंह (प्रथम) के नेतृत्व में सिंध नदी के किनारे औरंगजेब की फौज का कड़ा मुकाबला किया था।

१८८९ में फिर बीकानेर के महाराजा गंगासिंह ने इस सेना का ५०० ऊंटों के साथ पुनर्गठन किया और प्रथम बार अलग से एक ऊंट-रेजीमेंट की स्थापना की और उस विख्यात रण-बांकुरे के नाम पर ही उसका नाम 'गंगा-रिसाला' रखा गया। नवगठित ऊंट-रेजीमेंट को पहली बार करतब दिखाने का अवसर विदेशी भूमि पर मिला। १९०० में, तृतीय चीनी युद्ध में, बक्सर-विद्रोह के समय यह सेना ट्रियंस्टोन भेजी गयी। महाराजा गंगासिंह ने तब स्वयं अपनी ऊंट-वाहिनी का नेतृत्व किया था। वहां इस सेना ने ऐसे शौर्य का प्रदर्शन किया कि महाराजा गंगासिंह को अनेक वीरता-पदक प्राप्त हुए। इसके बाद १९०२ और १९०४ के बीच 'गंगा-रिसाला' ने सोमालीलैंड-अभियान के अंतर्गत 'जिडाबाली' और 'धरातोला' की ऐतिहासिक लड़ाइयां लड़ीं। सोमालीलैंड फील्ड फोर्स के प्रधान सेनापति फील्ड मार्शल सर चार्ल्स इगस्टन ने 'गंगा-रिसाला' की खूब प्रशंसा की थी।

प्रथम विश्व-युद्ध में मिस्र के नहरी क्षेत्र में 'गंगा-रिसाला' ने अभूतपूर्व शौर्य का प्रदर्शन किया। 'गंगा-रिसाला' इस्माइलिया के फेरीपोस्ट पर तैनात था। तुर्की की सेना नहर की ओर बढ़ रही थी। महाराजा गंगासिंह के नेतृत्व में 'गंगा-रिसाला' ने ऐसा भीषण युद्ध लड़ा कि तुर्की सेना को पीछे हटना ही पड़ा।

१९४० में द्वितीय विश्व-युद्ध में 'गंगा-रिसाला' ने जरमनी के विरुद्ध अदन और ब्रिटिश सोमालीलैंड की युद्ध-भूमि पर महाराजा गंगासिंह के नेतृत्व में बड़ी वीरता दिखायी थी। महाराजा गंगासिंह के साथ युद्धभूमि में बीकानेर के भूतपूर्व महाराजा कर्णीसिंह भी रिसाले की कमान संभाले हुए थे।

विभाजन के पश्चात 'गंगा-रिसाला' का पुनर्गठन किया गया। १९४८ में गठित एक अन्य ऊंट-सेना 'जैसलमेर-रिसाला' को भी 'गंगा-रिसाला' में मिला दिया गया। १९५१ में नयी संयुक्त सेना का नाम 'गंगा-जैसलमेर-रिसाला' रखा गया। १९५४ में यह रिसाला भारतीय सेना की ग्रेनेडियर्स का एक अंग बना दिया गया और इसे '१३ ग्रेनेडियर्स' (गंगा-जैसलमेर)' नाम दिया गया।

देखा तुम्हें, लगीं तुम मुझको
जैसे गम की एक गजल हो
लिखा समय-शायर ने तुमको
गाता फिरे चमन आवारा
गीतों के गुनाह को धो दे--
ऐसी तुम गंगा की धारा
किसी जनक की तुम जमीन में--
खड़ी हुई गुलजार फसल हो
देखा तुम्हें, लगीं तुम मुझको
जैसे गम की एक गजल हो

केवल फर्क नजर भर का है
मंदिर और महल दोनों हो
कोई राज समझ क्या पाये
पाप पुण्य का फल दोनों हो
जाने कौन सत्य में उलझी
प्यार भरी फरियाद विकल हो
देखा तुम्हें, लगीं तुम मुझको
जैसे गम की एक गजल हो

कोई कबिरा कलम उठाये
ऐसी तुम बेचैन वजह हो
सूरदास रख सके जहां स्वर
ऐसी एक हसीन जगह हो
मेरा तुलसी यही बताये
जैसे सीता खड़ी सजल हो
देखा तुम्हें लगीं, तुम मुझको
जैसे गम की एक गजल हो

--डा. निर्द्वन्द्व मिश्र

सन १९६५ में पाकिस्तान से हुए युद्ध में ऊंट-वाहिनी ने शत्रु के इलाके में घुसकर कई सफलताएं प्राप्त कीं, उदाहरणतः १५ सितंबर--'डाली चौकी' (पाक-सीमा में २१ मील अंदर) पर कब्जा, १६ सितंबर--'खोखरापार' और 'नया-छोर' के मध्य रेल-लाइन को उड़ाया, १९ सितंबर--पाक सीमा में 'घूनेवाला' पर आक्रमण, ३० सितंबर--'साचू' पर कब्जा, ७ अक्तूबर--'रायचंदवाला' पर कब्जा, ३१ अक्तूबर--'शाहगढ़' पर कब्जा, १३ नवंबर--'साढ़ेवाला' पर कब्जा, १७ एवं १८ नवंबर--'तन्नोट' की सुरक्षा के लिए भीषण लड़ाई, 'घंटियाली' एवं 'मायाजलार' पर कब्जा।

१९७१ के भारत-पाक-युद्ध में भी १३ ग्रेनेडियर्स (गंगा-जैसलमेर) ने थार के रेगिस्तान में अदम्य साहस के साथ शत्रु से लोहा लिया और उसे खदेड़ने में सफलता प्राप्त की। लोंगावाला की रक्षा, इस्लामगढ़, भाई खां बालाखू पर अधिकार, मिरजेवाला टीबा, अहमद खां का टीबा आदि पर आक्रमण तथा शाहगढ़ क्षेत्र से पाकिस्तानी घुसपैठियों को मार भगाना, ये सब वे उपलब्धियां हैं जो हमारी ऊंट-सेना ने इस लड़ाई में अर्जित की थीं।

हमारी ऊंट-रेजीमेंट आज संसार की ऊंट-रेजीमेंटों में बेजोड़ है।

--जमनालाल बजाज रोड, 'सी' स्कीम, जयपुर-१

बंगला कहानी

उन्मेष

● नारायण गंगोपाध्याय

सड़क के नुक्कड़ पर एक हलचल-सी मच गयी। दो चार लोग सड़क पर उतर आये और कुछ लोग दोनों ओर कतार बांधकर खड़े हो गये। जो लोग नहीं उतरे, उन लोगों ने बगुलों की तरह अपनी गरदन बरामदे से लंबी कर दी।

मामला कोई खास नहीं—नृपेन राय आ रहे हैं।

छह हाथ लंबे। सिर पर ढेर-से घुंघराले बाल—इस वक्त बिखरे-बिखरे। ढाल-सा चौड़ा-चकला सीना, आजानु, पेशल बाहों को महाबाहु के सिवा और कुछ कहा नहीं जा सकता। पद्मपलाश-सी फैली हुई आंखें और वैसी ही रक्ताभ।

ब्रीचेज पहने हुए, कंधे से दो-दो बंदूक लटकती हुईं। भयंकर मनुष्य, इससे अधिक वीभत्स लगता है। उनके साथ एक लड़की भी है। उन्हीं की बेटी।

बारह साल की लड़की। बॉब कटाई के धूल से सने रूखे बाल। खाकी रंग की सलवार के ऊपर खाकी कमीज। उस लड़की के गले में कारतूसों की माला। केवल कारतूसों की नहीं, और भी एक माला है। उसमें पांचेक खून सने स्नाइप (चट्टा) और एक जोड़ा चायना-डक झूल रहे हैं। मानो भैरवी की मूर्ति हो।

अंग-प्रत्यंग करें कमाल
रीटा की मनमोहक चाल
इतनी सुन्दर इतनी सरल,
रीटा जब चलती है तो
सभी का मन मोह लेती है।
जो हाँ आपके हाथ का जरा सा
इशारा पाते ही रीटा दौड़ पड़ेगी।
उत्तम माप दण्डों के अनुरूप बनी
रीटा अब केवल भारत में ही नहीं
विदेशों में भी अपनी श्रेष्ठता
के लिए विख्यात है।
* सीधी एक समान सिलाई करने वाली
* अत्याधुनिक टेकअप सिस्टम सहित
* सेन्ट्रल बाबिन से युक्त
* हर तरह की सिलाई के सर्वथा योग्य
* हाथ से, पैर से अथवा बिजली की मोटर
सभी तरह से चलाई जा सकने वाली
* जीवनभर चिन्तामुक्त सेवा के लिए
रीटा
रीटा मैकेनिकल वर्क्स
लुधियाना।

सब मिलाकर दृश्य को भयानक कहा जाए फिर भी कम है।

"देखा माजरा! इस लड़की को भी क्या बना डाला है!"

किसी दूसरे ने कहा, "यह आदमी बिलकुल हैवान है।"

यह समझ में नहीं आया कि ये फिकरे बाप-बेटी दोनों में से किसी को सुनायी पड़े या नहीं। अगर सुनायी भी पड़े हों, तो नृपेन राय ने उसकी परवाह नहीं की।

★

शहर के एक सिरे पर नृपेन राय की कोठी है। सामने छोटा-मोटा एक बाग। उसमें एक गंधराज, एक मैगनोलिआ और दो हरसिंगार के दरख्त। एक तरफ बहुत पुराना आम का पेड़ है, उसमें आजकल फल नहीं आता। बाग की सबसे बड़ी विशेषता है जतन से रोपे हुए तरह-तरह के कैक्टस-पौधे। शिकार करना और कैक्टस की परिचर्या करना नृपेन राय के मुख्य व्यसन हैं।

गिरस्ती तनख्वाह-जैसी शेयर की एक नियमित आय पर चलती है। फिजूलखर्ची नहीं हो सकती लेकिन रुचि के अनुसार अपव्यय में कोई बाधा भी नहीं है अभी तक। वह अपव्यय अब शिकार और विलायती शराब के सूराख से हो रहा है।

नृपेन और उनकी बेटी गौरी, इन दोनों को लेकर ही गिरस्ती है। बाप के जमाने का एक बूढ़ा नौकर भी है—आंखों में मोतियाबिंद, कान से भी ऊंचा सुनता है। गिरस्ती की सारी परेशानी उसे ही झेलनी पड़ती है। गौरी जब दो वर्ष की थी, नृपेन राय की पत्नी ने पति के अड़तीस बोर वाले रिवाल्वर से आत्महत्या कर ली थी। तब से उस ओर से नृपेन राय बेफिक्र हो गये थे।

बाहर के कमरे में दाखिल हो एक सोफे पर उन्होंने दोनों बंदूकें रख दीं। फिर बूट समेत पैर लिये ही वे एक कोच पर ढुलक गये। चिड़ियां और कारतूस की मालाएं लिये गौरी इस वक्त भी सामने खड़ी है। मानों क्या करना है, उसे नहीं मालूम—बाप के आदेश की वह प्रतीक्षा कर रही है।

"आज काफी तकलीफ उठानी पड़ी—है न रे?"

"जी बाबू।"

थके गले की मधुर आवाज। इतनी देर बाद मानो वह लड़की अच्छी तरह दिखायी पड़ी। मनहूस, बॉब किये हुए रूखे बालों की पृष्ठभूमि में शांत, सलोना मुखड़ा। गहरी काली पुतलियों में दर्दीला त्रास।

जरा और गौर करने से दिखायी पड़ता—उसके मुख पर कहीं भी भाव का कोई स्पष्ट आभास नहीं। कुछ निष्प्राण-सा, जानवर-जैसा ही प्राकृतिक भय—प्राकृतिक क्लेशानुभूति। कोई डाक्टर देख ले तो पहली ही नजर में कह देगा कि यह लड़की घामड़ है।

शुरू-शुरू में एक डाक्टर ने परीक्षण किया था। धिक्कारती हुई आंखों से नृपेन राय की ओर देखकर उसने कहा था,

"आप ही के पाप का वह प्रायश्चित कर रही है, इसकी कोई दवा नहीं।"

"मतलब ?"

"जन्म से पूर्व ही उसके जीवन को आपने चौपट कर रखा है। आज उसको चंगा करने का प्रयास व्यर्थ है।"

कुरसी छोड़कर नृपेन राय खड़े हो गये थे। फीस के रुपये वे डॉक्टर की मेज पर फेंककर बेटी का हाथ घसीटते हुए बोले थे, "चल।"

गौरी का फिर इलाज नहीं हो सका था।

कुछ दिन गहरे अपराध-बोध से वे अभिभूत रहे। फिर क्रमशः अपने मन के भीतर ही उनको एक बल मिला। यदि अन्याय उन्हीं से हुआ हो तो उसके प्रतिकार का दायित्व भी उन्हीं का है। गौरी को वे जाग्रत करेंगे। उसके अंधेरे मन में वे ही चेतना का प्रकाश पहुंचाएंगे।

प्राण अगर न भी मिले—कम से कम अन्य दिशा से वे उसे सजग कर डालेंगे, बार-बार निर्दय हिंसक ढंग से कोंच-कोंच कर। फिर उस डॉक्टर से वे निबट लेंगे।

आज भी धुंधले ढंग से यही चिंता उनके दिमाग में घुमड़ रही थी। अधमुंदी आंखों से वे गौरी की ओर आविष्ट-सा ताकते रहे।

"शिकार पर जाना तुझे अच्छा नहीं लगता ?"

"लगता है।"

"तकलीफ नहीं होती ?"

"होती है," गौरी ने बाहर आम के दरख्त की ओर दृष्टि प्रसारित कर के "बेहद कांटे और तगड़ी धूप।"

"इतनी तकलीफ न उठाने पर क्या कोई शिकारी बन सकता है?" उत्साह से नृपेन राय ने अपनी दृष्टि पूर्णरूप से मुक्त कर दी, "शिकार क्या इतनी आसानी से पकड़ में आता है ? काफी परिश्रम करना पड़ता है, काफी धूप और कांटे सहने पड़ते हैं। एक बार नशा चढ़ जाए तो और सारी बातें भूल जाती हैं।"

"लेकिन चिड़िया मारने से क्या फायदा बाबू ?" गौरी की बेजान आंखों में जानवरों की-सी वेदना उभर आती। "देखने में कितनी खूबसूरत, और कितनी मीठी है उनकी चहक !"

अचानक नृपेन राय को मानों कुछ चुभ गया, किसी अशुभ संकेत से वे चौंक पड़े। गौरी के गले से उलटा राग निकल रहा है !

"और खाने में कैसा लगता ?" विकृत स्वर से उन्होंने कड़वा सवाल फेंक मारा।

गौरी डर के मारे कुछ देर चुप रही।

"क्यों बोलती क्यों नहीं री ?" नृपेन राय ने फर्श पर अपने बूट ठोंके।

गौरी का खामोश-सा जवाब आया, "खाने में तो अच्छा ही लगता है बाबू।"

"खाने में जो अच्छा लगता हो उसे मारने में भी बुरा नहीं लगना चाहिए। जाओ, चिड़ियों के पर-वर साफकर काट-कूटकर तैयार कर आओ।"

ललौंछ हो गयी अंतिम धूप में नृपेन राय बाग में चहलकदमी कर रहे थे। अद्भुत कौतुक से वे गौर कर रहे थे कि सूरज डूबने से पूर्व ही कहीं से एक पहाड़ी मॉथ निकल आया है। घूम-घूमकर वह मॉथ केवड़े के पत्तों पर बैठने की कोशिश कर रहा है लेकिन पैने कांटों की वजह से अगले ही क्षण वहां से उड़ा जा रहा है। अचानक एक अमानवीय उल्लास से नृपेन राय ने अपने पंजे से उस मॉथ को दबोच

लिया। मुट्ठी में आते न आते ही वह पिस गया—हथेली पर सफेद पराग—जैसे सफेद रेणु चिपके रह गये।

अचानक ही कान खड़े कर वे खड़े हो गये। गाने का सुर। गौरी गा रही है!

अंगुली में कैक्टस की जहरीली जलन लिये नृपेन राय कमरे की ओर बढ़े।

बाहर के कमरे में खिड़की के पास बैठी गौरी तन्मय-सी बूढ़े आम की ओर देख रही है। उसकी गोद में दो ताज़े खिले गंधराज। जाने क्या वह गुनगुना रही है!

"गौरी?"

तीखे स्वर में उन्होंने पुकारा। बिजली के वेग से गौरी खड़ी हो गयी और गोद में रखे दो गंधराज जमीन पर गिर गये।

"क्या देख रही थी?"

"दो फाख्ते बाबू। कितनी सुंदर इनकी बोली है!" गौरी के गले में आनंद और कौतूहल का आभास, लेकिन उसमें किसी चेतन सत्ता के बोध का कोई लक्षण नहीं।

"कहां हैं वे फाख्ते?"

"वे रहे," अंगुली उठाकर गौरी ने दिखा दिये, "कैसे सटकर बैठे हैं! अभी घू घू कर बोल रहे थे।"

नृपेन राय खिसक आये। दीवार के कोने में रखी बंदूक उठा लाये। लोड की

हुई थी। अनलोडेड बंदूक वे अपने कमरे में नहीं रखते।

गौरी के हाथ में बंदूक देते हुए उन्होंने कहा, "मार !"

हिरनी की आंखों में मानो बाघ की परछाईं पड़ी।

"बाबू !"

"मारो," नृपेन राय का स्वर पत्थर-सा सख्त लगा। सम्मोहक-दृष्टि प्रज्जवलित हो उठी।

पसीने से तर हाथों से गौरी ने बंदूक थाम ली। इसके बाद ही एक विकट शब्द के साथ-साथ रुई के गेंद की तरह फाख्तों का जोड़ा छटपटाता हुआ जमीन पर आ गिरा।

छतफाड़ ठहाके से नृपेन राय फट पड़े।

लेकिन गौरी दोनों हाथों से मुंह ढांपकर वहां से भाग गयी।

दसेक दिन बाद घर में दो बड़े-बड़े बक्से आये, और उन्हीं के साथ-साथ मजबूत तार की जालीवाला एक बहुत बड़ा पिंजड़ा। पिंजड़े के बीचोबीच जाली का एक पार्टीशन—अगल-बगल दो जानवर रखने की व्यवस्था।

गौरी ने अवाक विस्मय से कहा, "इससे क्या होगा बाबू ?"

"तमाशा।" नृपेन राय हंसे। हथेली पर एक तितली पीस डालने-जैसी हंसी। बक्सा खोलते ही पिंजड़े के इधरवाले खाने में एक मझोले आकार का लेपर्ड उछलकर आ घुसा। जंगली और जोम से भरा।

"वाह, कितना खूबसूरत बाघ है!" खुशी से गौरी ताली बजाने लगी, "बड़ा मजा आया, और उस बक्से में?"

दूसरे बक्से से जो निकल आया, उसको देखकर गौरी के मुंह से एक अव्यक्त शब्द निकला। पिंजड़े का दरवाजा बंद होते ही वह बिजली की गति से पलटा। फिर तीखी सीटी-जैसी आवाज कर वह चार हाथ ऊंचा हो गया—विशाल फन उठाकर प्रचंड वेग से पिंजड़े के दरवाजे पर आघात किया।

आठ हाथ लंबा शंखचूड़ सांप !

गौरी पीछे खिसक रही थी, नृपेन ने उसका हाथ दबोच लिया। इतनी जोर से पकड़ा कि गौरी की हड्डी कड़क उठी।

"भागती क्यों है, ठहर ! अभी तो तमाशा शुरू होगा।"

गौरी विह्वल-सी खड़ी रही।

पिंजड़े में घुसकर वह चीता थका-सा बस बैठा ही था और अपना अगला एक पंजा चाटने भर लगा था कि शंखचूड़ का गरजन सुनते ही वह बिजली की गति से खड़ा हो गया।

प्रतिद्वंद्वी उसकी बगल में—बस एक इंच पतली एक जाली का व्यवधान है। उस जाली के उस पार वह लतर-सा डोल रहा है, आंखें दिन की रोशनी में भी दो सुलगी सिगरेटों की तरह धधक रही हैं।

चीता पग-पग पिंजड़े के इस ओर खिसक आया। उसने दबी आवाज
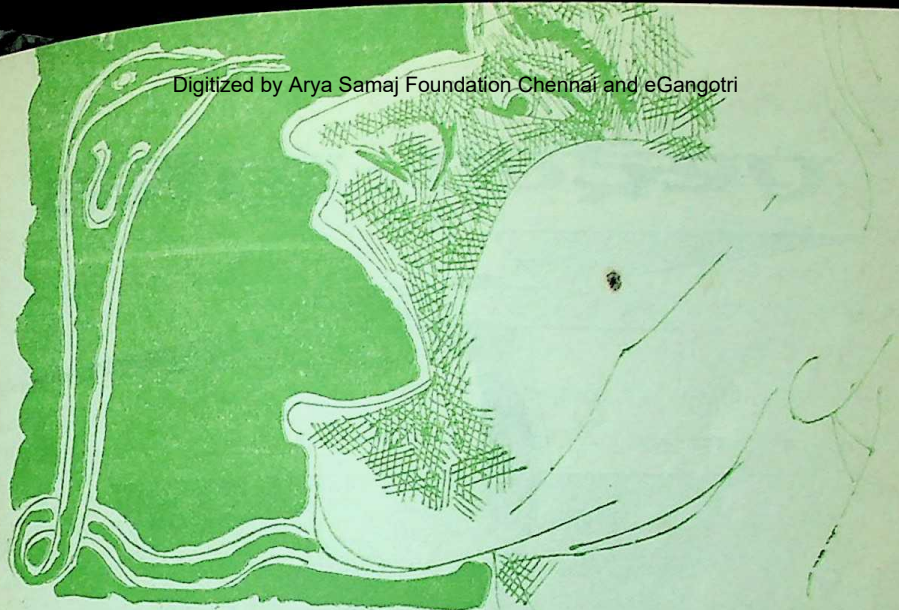
में खौफनाक गरजन किया। लेकिन उस गुर्राहट से कोई दिलेरी नहीं जाहिर हुई। उसकी आंखों में चरम भय छा गया।

रीढ़ की हड्डी को धनुष की तरह टेढ़ी कर सांप ने फन पसारा, फिर एक तीखी सीटी-सी आवाज कर प्रचंड वेग से पार्टीशन की जाली पर उसे दे मारा। मरियल मुद्रा में एक पंजा उठाकर चीता अस्पष्ट स्वर में गुर्रा उठा।

नृपेन राय ने बेटी की ओर देखा। गौरी की आंखों में अब भाषा मुखर हो उठी है। एक अद्‌भुत प्रत्याशा से बदन रोमांचित हो रहा है।

सिगरेट की आग-जैसी सर्प की आंखों में जहरीली नीलाभ लौ लहकने लगी। चीते ने फिर पूंछ पटकी, थोड़ी देर टकटकी लगाये शंखचूड़ की ओर ताकता रहा, उसके बाद मानो जान पर खेलकर ही वह पार्टीशन पर टूट पड़ा।

अब सांप के पिछड़ने की बारी है, लेकिन उसमें भय का नामोनिशान नहीं, केवल आत्मरक्षा की चेष्टा! अपने को दृढ़ कर फिर उसने पिंजड़ा-तोड़ फन दे मारा।

बिजली की गति से चीता पिंजड़े के सुरक्षित कोने में खिसक आया। रुलायी-सी एक आवाज निकली, "गर्र-र-र..."

फिर दिन भर यह अमानवीय स्नायुयुद्ध चलता रहा। शाम को चीता पिंजड़े के बीचोबीच थककर निढाल पड़ गया। लेकिन गौरी उसको छुट्टी नहीं देगी। एक छोटी-सी लाठी से बार-बार कोचने लगी और चीता जीवित रहने की अंतिम अभिलाषा से रह-रहकर क्षुब्ध रुलाई के साथ पिंजड़े के इधर-उधर टूट पड़ने लगा।
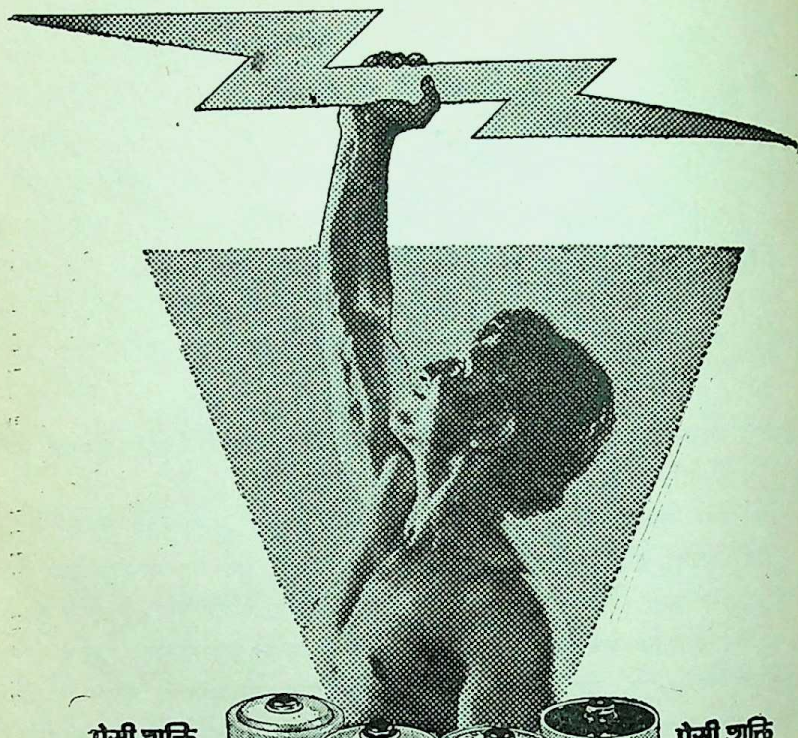
दिन भर पिंजड़े के सामने से गौरी को हटाया नहीं जा सका। हिंसक आनंद से बीच-बीच में वह चिल्ला उठने लगती।

काफी रात गये गौरी को सोते हुए वृंदावन उठाकर ले गया।

उस वक्त रात के लगभग दो बजे होंगे। गौरी उठकर बैठ गयी। खून में एक अस्थिर चंचलता। बिस्तर से वह उतर आयी। सामने की मेज से हंटिंग टार्च उठा ली।

बगल के कमरे में बाबू के नाक बोलने की आवाज। दबे पैर वह बरामदे पर निकल गयी। टार्च की रोशनी में दिखायी पड़ा कि सांप कुंडली मारे सो रहा है। अधीर भाव से पिंजड़े पर चंद टहोका लगाने पर शंखचूड़ तो जाग उठा पर चीते की ओर से कोई आहट नहीं मिली।

छोटी लाठी उठाकर गौरी ने शेर को कोंचा। न वह हिला और न ही गुर्राया।

लेकिन शंखचूड़ उठकर खड़ा हो गया है। अपनी रीढ़ के सहारे खड़ा हो गया है। प्रतिद्वंद्वी की टोह है। पार्टीशन पर फिर एक जबरदस्त फन आ पड़ा--लेकिन उसका दुश्मन हिला नहीं। शायद आगे भी न हिले।

निराशा और क्षोभ से गौरी कुछ देर चुपचाप खड़ी रही। उससे सहा नहीं जा रहा है। उसके सारे जांतव बोध पर एक प्रागैतिहासिक हिंसक उल्लास हावी है। नशे का सामान चाहिए। कैसे भी हो--किसी भी ढंग से हो!

चंद क्षण स्थिर रहकर गौरी ने पिंजड़े पर जोर से एक धक्का मारा। नहीं खिसका। और एक धक्का--और जोर से। पिंजड़े के लकड़ी के बने पहिये अब चंद कदम लुढ़के। जरा-सा और ठेल देने से नृपेन राय के कमरे का दरवाजा। बहुत रात तक शराब पीने के बाद नृपेन राय फर्श पर लुढ़के हैं।

शंखचूड़ की फुफकार से आतंक-विह्वल नृपेन राय उठ खड़े हुए, उस वक्त भी उनकी आंखें उनींदी हैं। देखा, आठ हाथ लंबी आरण्यक विभीषिका उनकी ओर टकटकी लगाये है, हिल रही है, और आंखों में हिंसा की नीलाभ दीप्ति है।

एक छलांग में वे दरवाजे की ओर हट गये। किवाड़ खींचा पर वह नहीं खुला। गौरी ने सांकल चढ़ा दी है।

"गौरी! गौरी!!"

आर्त्तस्वर में नृपेन राय चिल्ला उठे। गौरी का कोई जवाब नहीं आया, सिर्फ हंसी की आवाज सुनायी पड़ी। शीशे की खिड़की में से वह सारे मामले को निहार रही है। एक नया खेल है, एक नया नशा।

प्रचंड वेग से सांप ने फन मारा। अड़तीस बोर का रिवाल्वर दराज से निकालने की अब फुरसत नहीं, आखिरी कोशिश में वे सांप को दबोचकर पकड़ने को हुए। कलाई पर डसने की तीव्र जलन का अनुभव करते हुए उन्होंने देखा, शीशे की खिड़की पर गौरी ताली बजाती हुई हंस रही है। शंखचूड़ सांप की तरह उसकी भी जांतव आंखों पर आदिम हिंसा की नीलाभा छा गयी है।

—अनु. प्रबोधकुमार मजूमदार

● मुहम्मद हुसेन नकवी 'शाहिद'

स्वतंत्रता-प्राप्ति और देश का दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन—प्रकाश और अंधकार—सुख तथा दुख की आंखमिचौनी के पश्चात भारत के मुसलमानों के हिस्से में केवल एक प्रश्नचिह्न छोड़ गया है। इसके लिए उत्तरदायी कौन है, कुछ कहा नहीं जा सकता !

मैं किसके हाथ पे अपना लहू तलाश करूं
तमाम शहर तो पहने हुए है दस्ताने

जब तक अंगरेजी हुकूमत थी, अपनी कमजोरियों पर परदा डालने का हमारे पास एक अच्छा बहाना था। देश की प्रत्येक अव्यवस्था के लिए विदेशी शासन उत्तरदायी था। आज स्थिति दूसरी है। हमारे मुल्क पर हमारी अपनी हुकूमत है इसलिए देश की प्रत्येक अव्यवस्था के लिए हमें अपने अंदर ही झांककर देखना है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद से मुसलमानों का आर्थिक स्तर गिरता जा रहा है। मुसलिम वर्ग गरीब होता जा रहा है। इसके लिए कौन उत्तरदायी है ?

अपने पिछड़ेपन के लिए बहुत कुछ अंशों में मुसलिम समाज स्वयं उत्तरदायी है। उसके अंदर कुछ ऐसी भावनाएं हैं, उसके कुछ ऐसे मानसिक संस्कार हैं, जो उसे उन्नति की दौड़ में कभी भी आगे नहीं बढ़ने देंगे। गलत रस्म-रिवाज और संस्कारों से अब भी उनका पीछा नहीं छूटा। जब भी समाज से किसी कुरीति को हटाया गया है तब समाज की स्वीकृति की प्रतीक्षा नहीं की गयी। फिर मुसलमानों के रस्म-रिवाज में परिवर्तन के लिए उनकी स्वीकृति की प्रतीक्षा क्यों की जाती है ?

यदि हमारी धर्मनिरपेक्ष सरकार समाज के किसी रस्म और रिवाज को उसकी उन्नति में बाधक समझती है तो उसे ऐसे रस्म और रिवाज के विरुद्ध कानून बनाने का पूरा अधिकार है। मुसलिम

समाज के समक्ष हव्वा खड़ा करने की बजाय अच्छा होता यदि मुसलिम नेता अपनी शक्ति भारतीय मुसलमानों के लिए कोई ठोस आर्थिक कार्यक्रम बनाने में लगाते।

लखनऊ, जिसे मुसलिम तहजीब और अदब का घर कहा जाता है, वहां की सड़कों पर शरीफ-खानदान की कितनी ही बुर्का-पोश महिलाएं-भीख मांगती नजर आती हैं। यह शहर मुसलिम उलेमाओं का गढ़ है। क्या कभी किसी आलिम ने इन असहाय मुसलिम महिलाओं की आर्थिक दशा सुधारने का कोई ठोस एवं रचनात्मक कार्यक्रम सामने पेश किया है? यदि कोई बुर्का-पोश औरत नौकर की हैसियत से काम करने जाती है तो फिर उसके पर्दे का क्या अर्थ रह जाता है?

हमारी सरकार मुसलमानों के रस्म-रिवाज, रहन-सहन और सामाजिक ढांचे में परिवर्तन या सुधार की बातें करते समय डरती है कि कहीं मुसलिम समुदाय इसका विरोध न करे, मुसलमानों की शरीअत में हस्तक्षेप न हो। भारत सरकार इसलामी शरीअत से इतना डरती है, परंतु ऐसी सरकारें जो शुद्ध रूप से मुसलिम हुकूमतें कहलाती हैं, इसलामी शरीअत के विरुद्ध नियम बनाने में तनिक

दिल्ली में जामा मसजिद के आसपास का माहौल अभी भी मुसलमानों के सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन का एक आइना है
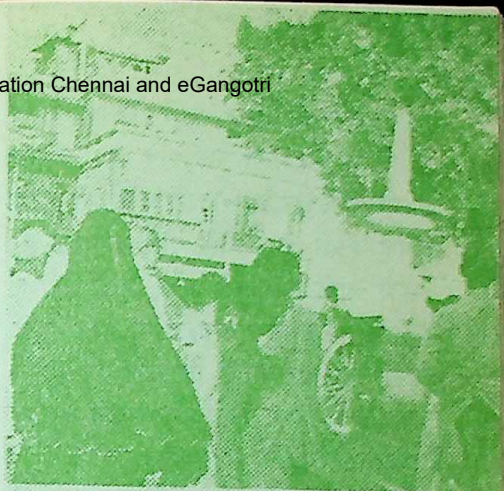
भी संकोच नहीं किया करतीं। उनकी दृष्टि में जनता का हित सर्वोपरि है। जनता के सर्वांगीण विकास में यदि कोई भी चीज बाधक होती है—चाहे वह शरीअत हो अथवा शरीअत–जैसी और कोई चीज, तो जनता की सरकार कहलायी जाने वाली हुकूमत का कर्तव्य है कि उसे दूर करे। इसके लिए सरकार को भय पालने अथवा आगा-पीछा देखने की जरूरत नहीं है।

'आउटलाइंस ऑव मोहम्मडन लॉ' –नामक विश्वप्रसिद्ध इसलामी शरीअत की पुस्तक के लेखक, जम्मू और कश-मीर विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री ए. ए. फैजी के मतानुसार सभी भारतीयों के लिए एक समान नागरिक संहिता होनी चाहिए, तभी देश का सर्वांगीण विकास संभव है।

राष्ट्रपति अयूब के जमाने में इस-लामी कानूनों में आवश्यक परिवर्तन करने के लिए एक कमीशन नियुक्त किया गया था। पाकिस्तान तो एक मुसलिम हुकूमत है फिर वहां शरीअत में परिवर्तन की बात कैसे चलायी गयी? इसलिए कि जनता के सर्वांगीण विकास में शरी-अत के कुछ नियम बाधक पड़ रहे थे।

यदि आंकड़ों की भाषा प्रयोग की जाए तो अंगरेजों के जमाने से लेकर आज-तक इसलामी शरीअत में ८० प्रतिशत तक संशोधन एवं परिवर्तन हो चुके हैं।

परिवार-नियोजन आज की एक मानवीय आवश्यकता है। भारत में चलाये जा रहे परिवार-नियोजन का कार्यक्रम व्यापक राष्ट्रीय हित में है। फिर मुसल-मानों को इससे छूट कैसे? यदि परिवार-नियोजन इसलामी शरीअत के विरुद्ध है तो मुसलिम हुकूमतें परिवार-नियोजन का कार्यक्रम क्यों चला रही हैं?

मुसलमानों को परिवार नियोजन जैसे व्यापक राष्ट्रीय हित के कार्यक्रम से अलग रखने की नीति सही नहीं है। मुसलमान सोचते हैं कि परिवार-नियोजन की अवहेलना करने से उनकी जन-संख्या बढ़ेगी। यही बात कुछ हिंदुओं के मन में भी भ्रम पैदा करती है, परंतु वास्तवि-कता यह है कि जनसंख्या के आधार पर किसी जाति की उन्नति नहीं हुआ करती। उन्नति होती है तब, जब उसका आर्थिक ढांचा मजबूत होता है और उसमें प्रगति-शीलता के बीज पाये जाते हैं।

मुसलमानों के गिरते हुए आर्थिक और सामाजिक स्तर का एक कारण अशिक्षा भी है। मुसलमानों का सामाजिक स्तर ऊंचा करने के लिए पुरुषों की अपेक्षा स्त्री-शिक्षा की अधिक आवश्यकता है परंतु मुसलमान स्त्री-शिक्षा का सदैव विरोध करता रहा है। मौलवी-मुल्ला तो स्त्री शिक्षा के और भी कट्टर विरोधी हैं क्योंकि वे जानते हैं कि यदि स्त्रियां पढ़-लिख जाएंगी तो मौलवी-मुल्लाओं का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाएगा।

कुछ लोग तो यहां तक कह देते हैं कि स्त्री-शिक्षा इसलामी शरीअत के

खिलाफ है। विश्वास नहीं होता— इसलाम-धर्म के प्रवर्तक हजरत मोहम्मद साहब तो स्त्रियों का इतना आदर करते थे कि जब उनकी बेटी हजरत फातिमा उनके घर आतीं थीं तो वे उनके सम्मान में खड़े हो जाया करते थे। वे भला स्त्रियों को शिक्षा —जैसी न्यामत से कैसे दूर रख सकते हैं?

दूसरी बात परदा-प्रथा है, जो स्त्री-शिक्षा में बाधक है। परदा—अब केवल एक प्रथा बन कर रह गया है। परदे के उन सिद्धांतों का जो इसलाम ने प्रतिपादित किये थे कहीं भी पालन नहीं किया जाता। परदा अब सिर्फ एक रस्म है।

कहा जाता है कि लड़कियों को क्यों पढ़ाया जाए, क्या उन्हें नौकरी करनी है? दूसरी बात यह कही जाती है कि पढ़ने से लड़कियां चरित्रहीन हो जाती हैं। कुछ लोगों को शिक्षित लड़कियां चरित्रहीन दीखती हैं, पर क्या हर अशिक्षित और जाहिल लड़की सती सावित्री, सीता और हजरत फातिमा बनकर समाज के सामने आती है? कहना न होगा कि मुसलमानों में स्त्री-शिक्षा का विरोध शरीअत की रक्षा के लिए नहीं, परंतु पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष के कारण किया जाता है।

मुसलमानों के निरंतर गिरते हुए आर्थिक स्तर के ये वे कारण हैं जिनके लिए मुसलिम वर्ग स्वयं ही उत्तरदायी है। भारतीय मुसलमान हीन भावना का शिकार है। वह सोचता है कि भारत में वह असहाय है। उसके साथ भेद-भाव किया जाता है। उसके पास व्यापार करने के लिए पूंजी नहीं है, तो भला वह कैसे तरक्की करे? पर वास्तव में उसके पिछड़ेपन का एकमात्र कारण यह है कि उसके अंदर आत्म-विश्वास और आत्मबल की कमी है, सफलता के लिए पूंजी अथवा पक्षपात की नहीं—परिश्रम, धैर्य और लगन की आवश्यकता होती है। भारत गरीब देश है और यहां का मुसलिम वर्ग ही नहीं हिंदू-वर्ग भी पिछड़ा है। इसलिए केवल मुसलमानों को पिछड़ेपन का रोना लेकर नहीं बैठ जाना चाहिए।

मुसलमानों का कोई सच्चा राजनीतिक प्रतिनिधि नहीं है, ना ही उनका कोई ऐसा राजनीतिक दल है जिसका उद्देश्य सिर्फ मुसलमानों का पिछड़ापन दूर करना हो। यह भी मुसलमानों के गिरते हुए आर्थिक स्तर का एक कारण है। खेद है कि भारतीय मुसलमान मुसलिम लीग-जैसे दल पर विश्वास कर बैठता है, जब कि शेख अब्दुल्ला के शब्दों में, 'मुस्लिम लीग का उत्थान स्वयं भारतीय मुसलमानों के लिए एक खतरा है।' चाहे वह जमाते इसलामी हो अथवा जमीअत-उल-उलमा, कोई भी दल मुसलमानों की आर्थिक दशा सुधारने का कोई भी ठोस एवं रचनात्मक आर्थिक कार्यक्रम नहीं रखता। तथाकथित मुसलिम प्रतिनिधि मुसलिम-हित की आड़ में हमेशा अपनी हित-साधना करते हैं।

—७ लैंड रिकार्ड्स, मोतीमहल, ग्वालियर

• मन्मथनाथ गुप्त

अंदमान तो बस गया

स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में अंदमान का नाम हरेक की जबान पर था। उस समय किसी अज्ञात कवि की यह पंक्ति नारे का रूप धारण कर चुकी थी—

बसेगा हिंद पीछे को बसेगा अंदमान पहले

यानी इतने देशभक्त अंदमान भेजे जा चुके होंगे कि वह वीरान द्वीप पुंज बस जाएगा और तब कहीं भारत आजाद होगा। किंतु स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेने वाले कुछ 'बहुत खतरनाक' व्यक्ति ही अंदमान भेजे जा सके। इस समय लगभग २७० व्यक्ति ही ऐसे जीवित हैं जो अंदमान भेजे गये थे। इनमें से ६५ के साथ मैं अंदमान की तीर्थ-यात्रा पर गया था।

बंगाल की खाड़ी में कलकत्ता से लगभग ८०० किलोमीटर दक्षिण में अंदमान द्वीप पुंज हैं। इनका कुल क्षेत्रफल ८,२९३ वर्ग किलोमीटर है, राजधानी पोर्ट ब्लेअर है और आबादी है लगभग १,५०,००० । द्वीप में नारियल और हरिण खूब हैं। पूरा द्वीप-पुंज प्राकृतिक बंदरगाह है। इस दृष्टि से हमारे समुद्री बेड़े के लिए एक आदर्श स्थल है। अब यह द्वीप पुंज पहले की तरह 'मनुष्य के लिए न रहने योग्य' स्थान नहीं है। अब पोर्ट ब्लेअर कलकत्ता और मद्रास से अधिक बसने योग्य स्थान है। हां, यहां आठ महीने वर्षा होती है। भूतपूर्व कैदियों के वंशजों के अलावा इन टापुओं में बंगालियों और तमिल-भाषियों की प्रधानता है। यहां की आम भाषा हिंदी है। वर्षा का पानी बटोर एक विराट सरोवर में जमा किया जाता है। उसी को नल से द्वीपवासियों को पहुंचाया जाता है। हमने यह धनिकधार्ग बांध देखा जहां पानी जमा किया जाता है।

अंदमान में उतरने पर यह प्रश्न कचोटता रहा कि आदिवासी कहां गये, जिनका यह देश है! १८७० में इनकी संख्या ५ हजार से अधिक थी, जो १९८३ में घटकर २ हजार रह गयी। वे क्यों घटते चले गये? एक तो, उनमें गुप्त रोग बहुत फैले, जो सभ्य लोगों की कामुकता की देन थे। दूसरे, उनका शोषण बहुत हुआ। तीन दिन तक द्वीपों में फिरने पर भी हमें तो आदिवासी नहीं मिला। प्रधान आयुक्त ने कहा कि कुछ दिन पहले वे निकोबार गये थे। वहां के जंगलों में कुछ आदिवासी हैं। जब उनका जहाज पहुंच रहा था, तो आदि-

वासी दिखायी पड़े, पर जमीन पर उतरने पर कोई नहीं मिला। पेड़ में एक तीर मारकर ही उन्होंने अपने अस्तित्व से आगाह कर दिया। मित्रता के प्रमाणस्वरूप वे कुछ सामान छोड़ वापस आ गये। अनुमान है कि उस इलाके में ४०० आदिवासी हैं।

सड़क बनाते थे। कुछ कैदियों को ठेके पर ठेकेदारों को दे दिया जाता था।

इसके बाद पेनांग, सिंगापुर और मलक्का में भी कैदी - उपनिवेश बनाये गये, किंतु १८७३ तक इन सभी स्थानों के कैदी अंदमान पहुंचा दिये गये।
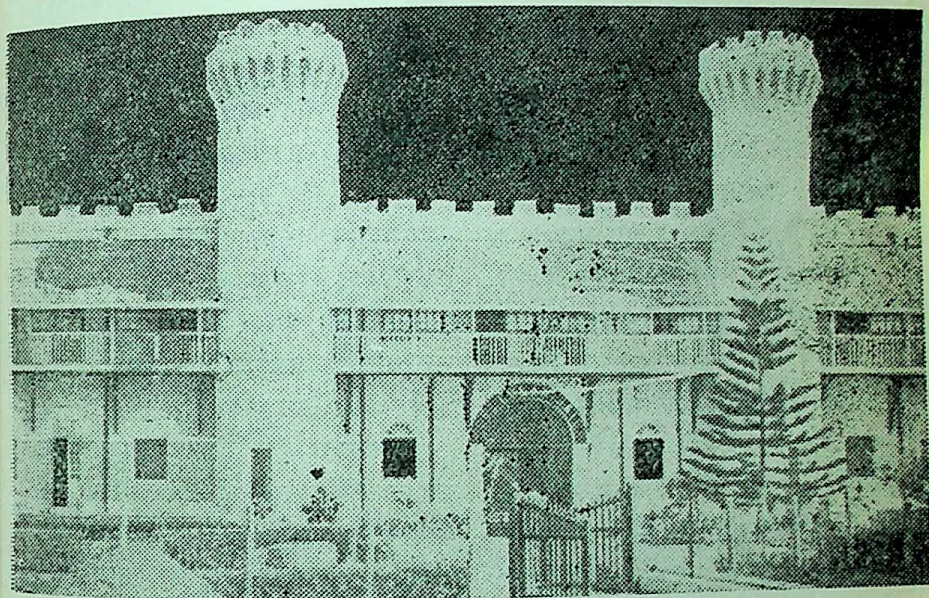
पोर्ट ब्लेअर में सेलूलर जेल की गुमटी

आमतौर से यह धारणा गलत है कि अंदमान द्वीपपुंज शुरू से ही सरकश कैदियों का जिंदा कब्रिस्तान रहा। १७८४ में ब्रिटिश सरकार ने ईस्ट इंडिया कंपनी पर आंशिक नियंत्रण प्राप्त किया और इसके तीन साल बाद १७८७ में सुमात्रा के दक्षिण-पश्चिम में बनकोलेन में लंबी मियाद के भारतीय कैदियों का पहला जत्था पहुंचा था। ये जंगल साफ करते तथा

स्वतंत्रता-सेनानियों के लिए ही अंदमान में 'सेलुलर जेल' की सृष्टि हुई। 'सेलुलर जेल' का नक्शा यों है—बीच में एक ऊंची गोल गुमटी और उसके गिर्द सात लंबी बैरकें। गुमटी से जेल के कैदियों पर निगरानी रखी जा सकती थी, पर कैदी जेल से भागकर क्या करते ? समुद्र को पार करना असंभव था। अंदमान के साथ उन दिनों एकमात्र संपर्क 'महाराजा'

नामक जहाज से था, जो हफ्ते में एक बार कलकत्ता से वहां पहुंचता था।

भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन का प्रारंभ १८५७ से माना जाता है। वहुत-से विद्रोही, जो फांसी का फंदा और तोप के मुंह से बच गये, समुद्र-पार भेजे गये। प्रश्न उठता है कि क्या १८५७ के बंदी अंदमान भेजे गये या अन्य कैदी उपनिवेशों में और वहां से १८६७ में जब अंदमान कैदी - उपनिवेश बना, तो वहां भेजे गये। इस पर शोध होना चाहिए। यह ज्ञात है कि १८५७ के कैदी अल्लामा फजली समुद्र-पार भेजे गये थे और वे वहीं मर गये। एक अन्य नेता मौलाना लियाकत अली की भी यही दशा हुई, पर थानेश्वरी मीर जाफर अली २० साल काटकर लौटे। प्रश्न यह कि वे अंदमान गये थे या और कहीं।

वहाबी आंदोलन के कई कैदी अंदमान भेजे गये। पुस्तकों में पढ़ाया जाता है कि एक साधारण कैदी ने वाइसराय लार्ड मेयो को मार डाला, पर सचाई यह है कि वहाबी कैदी शेर अली ने लार्ड मेयो को मार दिया था।

क्रांतिकारी आंदोलन फिर महाराष्ट्र में भड़का। इसके नेता थे वलवंत फड़के, सावरकर वंधु, श्यामजी कृष्ण वर्मा, मादाम कामा आदि। सावरकर पेरिस चले गये थे। वहां से वे लंदन लौटे, जहां उन्हें गिरफ्तार करके भारत रवाना किया गया। उन्हें आजन्म काले पानी की सजा हुई, और अंदमान भेजा गया।

१९०५ में बंग-भंग हुआ। इसके विरोध में स्वदेशी आंदोलन चला। स्वदेशी आंदोलन को जब दबाया गया तो वह गुप्त आंदोलन बन गया। श्री अरविंद बंगाल के क्रांतिकारियों के नेता के रूप में सामने आये। महाराष्ट्र के क्रांतिकारी भी बड़े सौभाग्यशाली रहे क्योंकि लोकमान्य तिलक उनके नेताओं में थे।

भारत के स्वतंत्रता-संग्राम में अंतिम कड़ी है आजाद हिंद फौज, जिसके नेता थे रास विहारी और सुभाष बोस। नेताजी ने अंदमान में पधारकर इसे 'शहीद-द्वीप' कहा। यदि अंदमान का नाम नहीं बदलना है तो कम-से-कम पोर्ट ब्लेयर का नाम बदलकर 'शहीद बंदर' किया जा सकता है। भारतीय स्वतंत्रता के साथ अंदमान पुण्य-तीर्थ का घनिष्ठ संबंध है।

कलकत्ता में भूतपूर्व अंदमान कैदियों का एक सर्वदलीय संगठन है। उसने एक कार्यक्रम बनाया कि क्यों न मृत्यु के पहले भूतपूर्व अंदमान कैदी फिर एक बार सपरिवार अंदमान की तीर्थ-यात्रा करें। यह भी तय पाया गया कि मुख्यभूमि की जेलों में लंबी सजा काटनेवाले कुछ स्वतंत्रता-सैनिकों को भी ले चला जाए। तदनुसार मुझे व डॉ. श्रीमती सुनीति घोष को भी (जिन्होंने शांति नामक किशोरी के साथ कुमिल्ला के मजिस्ट्रेट स्टीवेंस की हत्या की थी) इस काफिले में स्थान मिला। इस समय लगभग २५० भूतपूर्व अंदमान-कैदी जीवित हैं, पर इनमें ९५ ही इस यात्रा

में हमारे साथ शामिल हो सकें।

अभियान और अच्छा हो सकता था। उत्तरप्रदेश के नाम पर इसमें केवल कुंदन-लाल और मैं था, जबकि अब हम दोनों बीसेक साल से क्रमशः नागपुर और दिल्ली में हैं। डॉ. भगवानदास माहौर आना चाहते थे, पर वे नहीं आ पाये। परिवार के लोगों को ठीक से स्क्रीन नहीं किया गया।

हम २० जनवरी, १९७४ की संध्या के समय 'रंगत' जहाज पर चढ़े। गंगा पार करने में ही दो रातें नष्ट हुईं। जब हम समुद्र-दर्शन से थक जाते तो शतरंज, ताश में जुटते। २३ जनवरी, यानी नेताजी का जन्म-दिवस सभा करके समुद्र में मनाया गया। रात के समय पृथ्वी सिंह, गणेश घोष, सुनीति घोष ने संस्मरण सुनाये। कुछ गीत भी गाये गये। नेताजीवाली सभा में खास बात यह रही कि सभी दल के लोगों ने उनको श्रद्धांजलि दी। अंद-मान पलट ९५ लोगों में सभी पार्टियों के प्रतिनिधि थे। यहां तक कि एक गांधी-विनोबावादी भी थे—श्री राखालचंद्र। वे दक्षिणेश्वर बम-कांड के थे और एक बहुत बड़े पुलिस अफसर को जेल में मसहरी के डंडों और छड़ों से मारकर (१९२६ में) कालापानी भेजे गये थे। बड़े मधुरभाषी और शांत थे, घुटनों तक धोती बांधते थे, पर ढोंगी नहीं थे। इनमें से मुश्किल से बीस व्यक्तियों में ही क्रांति की कुछ चिन-गारियां बाकी थीं। स्पष्ट शब्दों में इन भूतपूर्व क्रांतिकारियों में कुछ ही लोग ऐसे थे, जो आज के संदर्भ में क्रांतिकारी कहे जा सकते थे।

हम लोग अभी समुद्र में बीचोबीच थे कि खबर आयी कि पोर्ट ब्लेयर में बाजार काफी हद तक जल गया। इससे हमारे स्वागत में फर्क पड़ेगा, यह भय हुआ जो सच निकला। हम २६ जनवरी के प्रातःकाल पोर्ट ब्लेअर बंदरगाह में पहुंचे। अग्निकांड के कारण ठहरने की व्यवस्था गड़बड़ा गयी थी। जहाज में सोते और दिन भर कार्यक्रम में भाग लेते या घूमते। हमने अपने कोष से १००१ रुपये की प्रतीकात्मक रकम क्षति-पूर्तिकोष में दी।

जीमखाना मैदान तथा जेल के प्रांगण में सभाएं हुईं। हमारी इस यात्रा का उद्देश्य यह था कि मुख्य भूमि से लोग तीर्थ-यात्रा के रूप में वहां जाएं। इस कड़ी में पहली यात्रा थी।

लौटते समय समुद्र के कई रूप देखे। काला पानी देखा, नीला पानी देखा। हमारे भीतर भी समुद्र हिलोरें लेता रहा कि इस देश का क्या होगा। इतना त्याग, इतने सपने सब व्यर्थ जाएंगे क्या ? अंद-मान तो इस तरह बस गया, लेकिन भारत ? भारत कब बसेगा ? आज भारत की जो तस-वीर है वह क्या उन अमर शहीदों की कल्पना के अनुरूप है ? शहीदों के त्याग और रक्त ने अंदमान—जैसे निर्जीव भूखंड को जीवंत कर दिया है, फिर भारत क्यों प्राण-हीन हो रहा है ? उत्तर हम सबको ढूंढ़ना पड़ेगा।

—डी १४, पूर्वी निजामुद्दीन,
नयी दिल्ली-११००१३

भागी हुई लड़की

तोड़कर रिश्ते पुरानी व्यस्त राहों से
चल रही बचकर जमाने की निगाहों से
जिंदगी है आजकल भागी हुई लड़की

छोड़कर अपनी पुरानी
रूढ़ियों के घर
आस्था, अनुशासनों के
बांधकर बिस्तर
फिर बढ़ा नाखून लंबे, खोलकर निज केश
आ गयी जो खुद बगावत की नदी के देश
जिंदगी है आजकल बागी हुई लड़की

आज है जिस ठांव
उसका नाम है जंगल
रह रहे जिसके तिमिर में
दस्युओं के दल
क्रूर, भूखे भेड़ियों के चीखते स्वर से
चोर, डाकू औ' लुटेरों के बढ़े डर से
जिंदगी है रात भर जागी हुई लड़की !

एक दिन पूछा अचानक
जब कि मैंने नाम
बहुत धीरे-से बताया
जिंदगी ने—'शाम'
कर लिये हैं दांत तब से मौत ने पैने
और तब से नाम उसका रख दिया मैंने
वक्त की बंदूक से दागी हुई लड़की !

—कुंअर

महल्ला सुक्खीमल, डासना गेट, गाजियाबाद
(उ. प्र.)

मिट जाता है सूरज

बार-बार
जब भी मैंने खोला है
अपनी आश्वस्त मुट्ठियों को
उग आया है खोखलापन
और अट्टहासी रिक्तता—पूर्ववत
आकाश हो गया सपाट
दिशाओं से मुक्त, और मैं
जैसे अनजान शहर के
अजीब चौराहे पर खड़ा
बंध गया सड़क की दूरियों से
रात गये
कुत्ता चीखता है
मरनेवाली छटपटाहट
उग आती है हथेलियों पर
मिट जाता है सूरज
और आदमी मर जाता है
बुरी तरह जागकर
खाइयां फिर भी नहीं पटतीं
कहीं कुछ भी तो नहीं होता
कुछ भी तो नहीं होता कहीं

—दिविक रमेश

बी—५७, अमर कालोनी,
लाजपतनगर, नयी दिल्ली-११००२४

बुद्धि-विलास

अपनी बुद्धि पर ज़ोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

१. **रीता** और नीता ने एक मैदान के बीचोंबीच गड़े खंभे को केंद्र-बिंदु मानकर समान गति से दो मनचाही दिशाओं में चलना शुरू किया। रीता पश्चिम की ओर बढ़ी और नीता उत्तर की ओर। कुछ समय बाद दोनों बायीं दिशा की ओर मुड़ गयीं। कुछ देर चलने के बाद वे पुनः बायीं ओर मुड़ीं। अब आप बताइए—(अ.) किस दिशा में (१) रीता जा रही है? (२) नीता जा रही है? (ब.) वे अपने चलने के स्थान से किस दिशा में हैं?

२. एक कमरे में पांच व्यक्ति हैं। इनमें से दो तो हमेशा सच बोलते हैं और शेष तीन सदा झूठ। क्या आप इनमें से किसी भी एक व्यक्ति से कोई साधारण-सा प्रश्न पूछकर सदा सच बोलनेवाले एक व्यक्ति का पता लगा सकते हैं?

३. **रामबाबू** के लिए १ जनवरी बड़ा अनोखा दिन है। वह न केवल उनका, बल्कि उनकी पत्नी और चार कन्याओं का भी जन्म-दिन है। उनकी चारों कन्याएं एक ही शाला में पढ़ती हैं तथा अभी तक कभी फेल नहीं हुई हैं। इस वर्ष तो उनके सबके जन्म-दिन पर एक और अनोखी बात हुई। उनकी कन्याओं की उम्र का योगफल, उनकी पत्नी की उम्र के बराबर था। अब यदि रामबाबू की कन्याओं की उम्र का गुणनफल ५००५ है तो क्या रामबाबू की उम्र छोड़कर शेष सबकी उम्र आप बता सकते हैं?

४. **हरीश** अपनी मोटर साइकिल पर दिल्ली से ११० मील दूर स्थित एक नगर के लिए रवाना हुआ। उसकी मोटर साइकिल की रफ्तार तीस मील प्रति घंटा थी और हर घंटे के बाद वह १० मिनट विश्राम करता था। यदि वह सुबह साढ़े

दस बजे रवाना हुआ तो अपनी मंजिल पर कितने बजे पहुंचा?--(१) ३.१० पर, (२) ३ बजे, (३) ३.३० पर?

५. एक घड़ी प्रतिदिन तीन मिनट पीछे हो जाती है। यदि सोमवार को दोपहर १२ बजे ठीक समय मिलाया गया तो बुध और गुरु की मध्य रात को वह कितना समय बताएगी?
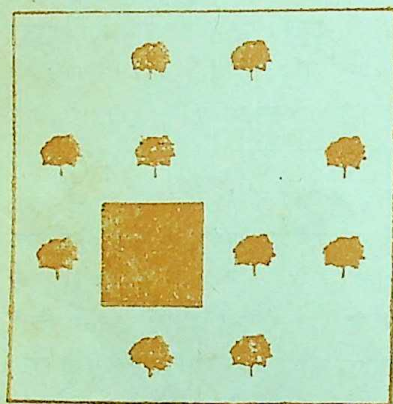
६. बाबू श्यामनारायण के पास भूमि का एक चौकोर टुकड़ा था, जिसमें एक मकान तथा आम के दस वृक्ष थे। उस भू-भाग में मकान और वृक्षों की स्थिति ऊपर प्रकाशित चित्र की भांति थी। उन्होंने वह भू-भाग अपने पांचों पुत्रों को इस शर्त पर दिया कि वे घर में एकसाथ रहेंगे तथा भूमि का ऐसा बंटवारा करेंगे कि सबके हिस्से समान होंगे तथा प्रत्येक पुत्र के हिस्से आम के दो-दो वृक्ष आएंगे। बताइए, यह बंटवारा किस तरह किया जाएगा?

७. **रघुनंदनप्रसाद** अपनी पत्नी से ५ वर्ष बड़े हैं; जो अपनी बेटी मंजु से दस गुना बड़ी है। तीन वर्ष बाद मंजु ८ वर्ष की हो जाएगी, तो बताइए रघुनंदनप्रसाद की आज क्या अवस्था है?

८. **हमारे** सौर मंडल में राहु और केतु नामक कोई ग्रह नहीं हैं, फिर भी भारतीय ज्योतिष में इनका अस्तित्व माना गया है! क्या आप बता सकते हैं कि ये दो ग्रह किस तथ्य के सूचक हैं?

९. **नीचे** प्रकाशित दोनों बातें सही हैं या गलत--

(अ) काला रंग (पेंट) सफेद रंग (पेंट) को और अधिक सफेद बनाता है।

(ब) तेल और पानी आपस में मिल सकते हैं।

"एक हॉर्सपावर' का क्या अर्थ है?"

"इसका अर्थ है एक घोड़े की शक्ति!"

"और साढ़े दस 'हॉर्स पावर' का?"

"इसका अर्थ है दस घोड़ों तथा एक बछेड़े की शक्ति।"

*

"डॉक्टर कहते हैं कि सभी को मछली खानी चाहिए।"

"क्या बढ़िया तैराक बनाने के लिए?"

आदिवासी दिन

दिन हुए फिर
आदिवासी,
फैलती जाती
उदासी
टूटते
चौखटे-घेरे
फिर,
सवेरे ही सवेरे
ठहरती जाती हवा सी
नींद जागे
काम के दिन,
दो घड़ी
दो ग्राम के दिन
बात कहने को जरा सी
प्यार के किस्से
पुराने
अब कहां हैं
राम जाने,
हर तरफ है बदहवासी

माहेश्वर तिवारी
शनीचरा, होशंगाबाद
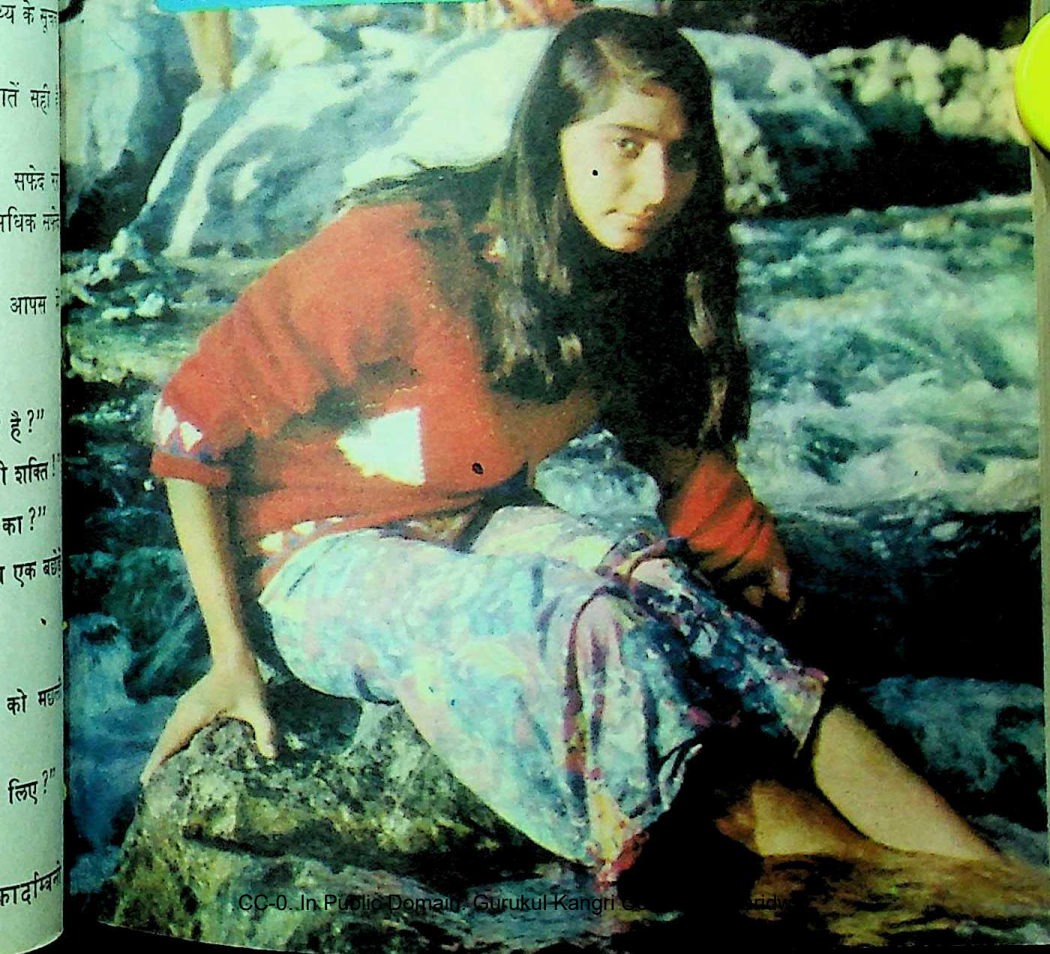
अगर लेखक अपने ही लिखे हुए शब्दों के प्रति बेईमान है,
तो उसके वही शब्द उसके परम शत्रु हो जायेंगे
लक्ष्मीनारायण लाल
छाया० ए० एस० आवाल

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृत लाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेंद्र, 'रेणु', महादेवी, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचंद्र जोशी एवं राजेंद्र यादव पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल।

लेखक की ईमानदारी कहां है?
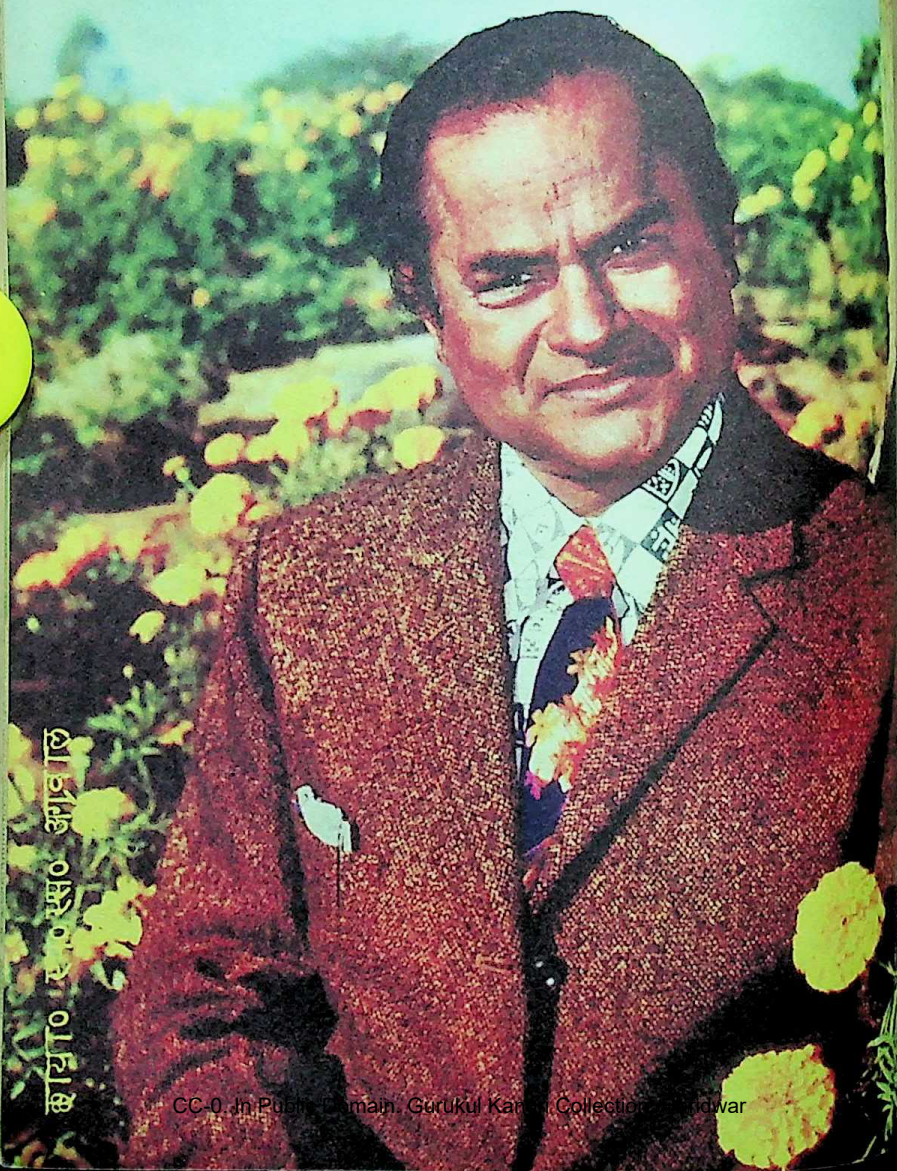
डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

राजीव कांत, इलाहाबाद : (क) आपके साहित्य-सृजन का मुख्य उद्देश्य क्या है और आप अपने को इसमें कितना सफल मानते हैं? (ख) रचना करते समय आप किस वर्ग का खयाल अधिक रखते हैं—पाठक का या आलोचक का?

जीवन की अनुभूतियों को रचना-स्तर पर जीने और अपने विशाल पाठक-वर्ग से आंतरिक रूप से जुड़ने के लिए मैं रचना करता हूं। सफलता-असफलता को मैं नहीं जानता, लेकिन अपने लेखन-कर्म से, जिसे मैं अपनी अस्मिता मानता हूं, पूर्णतः संतुष्ट और अभिभूत रहता हूं। (ख) अपना और पाठक-वर्ग का।

अरविंदकुमार वर्मा, नयी दिल्ली, (क) आपने लेखक बनना ही क्यों पसंद किया? (ख) आज का लेखक किस हद तक स्वतंत्र है?

लेखक मैं बना नहीं, बल्कि सहज ही हुआ और हूं। (ख) जिस हद तक लेखक अपने अंतस में स्वतंत्र है। किंतु मैं इसके आगे की बात अनुभव करता हूं—लेखन का संदर्भ स्वतंत्रता से भी आगे उसकी स्वयं की मुक्ति से है। सृजन करना अपने आप में मुक्त होना है।

राकेश श्रीवास्तव, शाहदरा : (क) आपकी जन्मतिथि क्या है? (ख) आपको ज्योतिष आदि में विश्वास है?

(क) कुंडली के हिसाब से मेरी जन्मतिथि शुक्रवार, ४ मार्च, १९२७ है, पर कुछ पुस्तकों में भूल से १९२५ छप गया है। (ख) हां, मुझे ज्योतिष में विश्वास है। यह शुद्ध विज्ञान है।

रमेश शर्मा, लखनऊ : (क) 'मन-वृन्दावन' उपन्यास की हिरनमयी काल्पनिक चरित्र है या कोई ऐसी जीवित नारी जो आपके संपर्क में आयी! (ख) 'मन-वृन्दावन' के माध्यम से आप क्या कहना चाहते थे? (ग) निर्माणाधीन 'मन-

वृन्दावन' फिल्म में आपने क्या कुछ समझौते किये हैं ?

(क) हिरनमयी निस्संदेह एक जीवित नारी है, लेकिन जीवन को रचना में ढालने के लिए जितनी सृजन-कल्पना की जरूरत होती है, वह सब हिरनमयी के चरित्र की रचना में इस्तेमाल हुई है, तभी तो हिरनमयी नारी से अधिक चरित्र है और चरित्र से अधिक एक स्त्री है। (ख) 'मन-वृन्दावन' के माध्यम से मैंने जो कहना चाहा है वह अब अलग से बताने में अच्छा नहीं लगता। उसे अगर पढ़कर नहीं जाना जा सकता अथवा अनुभूत नहीं किया जा सकता तो इसे मैं अपनी असफलता मानता हूं। (ग) कतई नहीं। जो उपन्यास की प्रकृति है, उसका प्राण है, उसका संवेदन है, बिलकुल उसी को ही प्रकट करने के लिए फिल्म उसी कलात्मक स्तर से बनेगी, अन्यथा मैं नहीं बनने दूंगा। मैं रचना के स्तर से कोई भी समझौता कभी नहीं कर सकता, जीवन के स्तर से चाहे जितने समझौते कर लूं। पर हुआ यही है कि मेरे प्रबल रचनाकार ने मेरे जीवन को समझौतों से बार-बार बचाया है। इसी-लिए मैं अपनी रचना के प्रति कृतज्ञ [illegible]

कमलाप्रसाद मिश्र, फैजाबाद: (क) 'प्रेम अपवित्र नदी' में मंत्रपाठ करते सम[illegible] गरुणपुराण से भी मंत्र पढ़ने का पौराणि[illegible] उल्लेख है। (ख) पत्नी दान देने के [illegible]रांत ही, पतिभुक्ता बने, ऐसी परंपरा [illegible] है ?

(क) भाई, मैं पौराणिक मं[illegible] नहीं जानता और उपन्यास में यह [illegible] बातें बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं होतीं। (ख) खत्री परिवारों में पहले पत्नीदान [illegible] एक धर्म प्रचलित था, लेकिन इन्हीं कु[illegible]तियों एवं अधर्मों के कारण यह बंद [illegible] गया और जिसकी सूली पर ब्रजरानी-जैसी नारी को बलिदान होना पड़ा।

विनोद कुशवाहा, इटारसी: (क) जिस सूरज को आपने चंदौसी में देखा [illegible] था, क्या इन वर्षों के लंबे अरसे में आपकी उससे मुलाकात हुई ? (ख) आपकी सर्वप्रथम रचना कौन-सी थी और [illegible] और कहां प्रकाशित हुई ?

(क) जी, हां। इन वर्षों में सूरज [illegible] मेरी मुलाकात कई बार, कई जगह [illegible] चुकी है। 'प्रेम अपवित्र नदी' में वही [illegible]

लेखक के तीन मूड :

लेखन में व्यस्त, चिंतन में त्रस्त, अपने ही चेहरे का संधान

सूरज कपूर के रूप में आया है। (ख) एकांकी क्षेत्र में मेरी पहली रचना 'ताज-महल के आंसू' है, जो सर्वप्रथम १९५१ में प्रयाग विश्वविद्यालय की पत्रिका में प्रकाशित हुई थी और म्योर हॉस्टल के दीक्षांत-समारोह में पहली बार मंच पर खेली गयी थी। उपन्यासों में मेरी पहली रचना 'कसक' है, जो १९५१ में माया प्रेस की माया सीरीज में प्रकाशित हुई थी। मेरी पहली कहानी लगभग इन्हीं दिनों भारती भंडार, इलाहाबाद के प्रसिद्ध साप्ताहिक 'संगम' में संपादक श्री इला-चंद्र जोशी ने प्रकाशित की थी।

कैलाशचंद्र, जबलपुर : अगर आप लेखक न हुए होते तो क्या होते ?

भाई, इससे बेहतर होता आप यह पूछते कि मैं मनुष्य योनि में न आता तो क्या होता !

रविशंकर तिवारी, पटना : (क) विद्यार्थी-जीवन के बाद और साहित्यिक जीवन के पहले की जिंदगी आप कैसे जीये ? (ख) आधुनिक साहित्य का भविष्य कैसा है ?

विद्यार्थी-जीवन और साहित्यिक-जीवन दोनों एक-दूसरे से संपृक्त होकर ही मेरे जीवन में आये थे। बाद और पहले का कभी कोई इतिहास ही नहीं बन पाया। (ख) मैं भविष्य के प्रति सदैव आशा-वान रहा हूं।

प्रेमप्रकाश शुक्ल, मिर्जापुर : (क) आपके दिन भर के कार्यक्रम क्या हैं ? क्या सारा दिन आप लिखते-पढ़ते हैं ? (ख) 'प्रेम अपवित्र नदी' उपन्यास के शीर्षक से प्रेम को अपवित्र क्यों कहा गया है ?

(क) मैं सुबह करीब पांच बजे निश्चित रूप से उठ जाता हूं। छह बजे तक टहल-घूमकर और ईश्वर को प्रणाम कर घर लौटता हूं। पिछले दो वर्षों से सुबह मेरे साथ मेरा प्रिय साथी काजल (कुत्ता) रहता है। घर लौटकर स्नान-नाश्ता करने के बाद प्रायः साढ़े आठ बजे तक कुछ-न-कुछ लिखने अवश्य बैठ जाता हूं। अगर घर में चित्त न लगा तो गाड़ी लेकर चुपचाप कहीं बाहर चला जाता हूं और शाम तक लिखने-पढ़ने का ही कार्य करता हूं। शाम को बच्चों के साथ, परि-वार में होता हूं। करीब नौ बजे भोजन

नाटक की एक भूमिका,
स्थान : घर, समय ?

एक पारिवारिक प्राणी

रूमानिया के नेशनल थियेटर स्कूल के डाइरेक्टर के साथ लेखक। पीछे हैं मास्को के आर्ट थियेटर के दो अभिनेता

कर नियम से पढ़ता हूं और पढ़ते-पढ़ते सो जाता हूं। (ख) प्रेम अपवित्र तभी हो जाता है जब प्रेम के नाम पर जो दिया जाता है, जिसको दिया जाता है, जिस तरह से दिया जाता है, वह स्वार्थ या अहंकार के वशीभूत हो।

चन्द्रमोहन, प्रधानाध्यापक, हरसौर (नागौर), राजस्थान: (क) 'अब्दुल्ला दीवाना' में जज का चरित्र-व्यवहार एक जोकर-जैसा क्यों हैं? (ख) अब्दुल्ला कौन है? और वह दीवाना क्यों है?

(क) 'अब्दुल्ला दीवाना' नाटक एक शुद्ध प्रहसन है और यह जिस रंग-शैली में निर्मित है उसमें जज का चरित्र ऐसा ही संभव था। (ख) अब्दुल्ला, हमारे जीवन-मूल्यों का एक ऐसा प्रतीकात्मक चरित्र है जो स्वभावतः मंच पर कभी नहीं आता, क्योंकि उसी की हत्या का मुकदमा न्यायालय में चल रहा है। वह दीवाना इसीलिए है कि उसे कहीं शरण नहीं मिल पा रही है। सब उसे मारना ही चाहते हैं।

गोपालकृष्ण गौड़, सबलगढ़ (मध्य-प्रदेश): (क) अपने नाटक 'रातरानी' का लेखन-कार्य कब और किस प्रेरणा से किया है? (ख) इसका नाम 'रातरानी' क्यों रखा?

(क) 'रातरानी' की रचना १९५९-६० में इलाहाबाद की नाट्य संस्था 'स्कूल ऑव ड्रामेटिक आर्ट' की रंग-प्रेरणा से की थी। (ख) 'रातरानी' जिस पुष्प का नाम है इस नाटक की नायिका कुंतल और उसका चरित्र उसी का प्रतीक है।

ब्रजमोहन कुम्पावत, डीडवाना (राजस्थान): (क) 'प्रेम अपवित्र नदी' लिखने के पीछे आपका क्या उद्देश्य था? (ख) आप प्रेम करने में विश्वास करते हैं या उसे केवल लिखने में?

'प्रेम अपवित्र नदी' उपन्यास में मैंने प्रेम के संदर्भ में तीन बातों की तलाश करनी चाही है—प्रेम में दिया क्या जाए? किसे दिया जाए? कैसे दिया जाए? जहां तक यह प्राप्त किया जा सका है वहां तक प्रेम पवित्र है, शेष अपवित्र रह गया है। (ख) निश्चय ही मैं प्रेम करने नहीं बल्कि उससे आगे उसे जीने में विश्वास करता हूं। जीने में जितना असंभव रह जाता है, उसे ही तब मैं अपनी रचना द्वारा जीना चाहता हूं। जीने से ही मुक्ति मिलती है। यही मेरा अनुभव है।

कुसुमलता, दतिया: (क) 'रातरानी' की नायिका कुंतल के समान आदर्श पात्र की स्थापना करते समय क्या आप

यह नहीं मानते कि नाटक के चरित्र जीवन के यथार्थ प्राणियों के समान होने चाहिए ?

जीवन के यथार्थ प्राणी अगर चरित्र हो सकते तो उन्हें प्राणी क्यों कहा जाता ! दरअसल जीवन से यथार्थ पात्र लिये जाते हैं, फिर नाटक में उन पात्रों को उनकी पात्रता के अनुकूल कार्यों द्वारा उन्हें चरित्र बनाया जाता है, जैसे——यह जरूरी नहीं कि यथार्थ जीवन में हर प्राणी को उसका व्यक्तित्व मिल जाए। ठीक उसी तरह यह जरूरी नहीं कि नाटक में हर पात्र चरित्र बन जाये।

कृष्णगोपाल श्रीवास्तव 'रिक्तेश', गोरखपुर : (क) परिवेश और सामान्य-जन के साथ किसी ईमानदार सहयात्री के रूप में जुड़े होने के नाम पर उद्देश्यहीन कहानियां लिखी जा रही हैं, क्या यह सही है ? (ख) आपने उपन्यासकार, नाटककार, कथाकार व चिंतक के रूप में साहित्य को अभिव्यक्ति देकर पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। इसमें से आप किस विधा में संतुष्ट हुए हैं ?

दरअसल परिवेश एवं सामान्य जन से, उद्देश्यहीन और अमर्यादित कहानियां लिखनेवाले लोग कतई नहीं जुड़े हैं, न उनके प्रति ईमानदार ही हैं। अपनी सुविधा के लिए ये लोग एक परिवेश भी बना लेते हैं और एक अयथार्थ जन भी पैदा कर लेते हैं। फिर उनके नाम पर या तो ये अरण्यरोदन करते हैं या अपनी कुंठाएं जीने की कोशिश करते हैं। (ख) मेरे रचनाकार व्यक्तित्व के लिए मेरे जितने रूप हैं वे सब मिलकर ही अलग-अलग धरातलों से मुझे अभिव्यक्ति देते हैं और अभिव्यक्त हो जाना ही मेरा सबसे बड़ा संतोष है, आनंद है।

अशोककुमार सरावगी, जबलपुर : आप–जैसे साहित्यकार की पुस्तकें इतनी महंगी होती हैं कि उन्हें प्राप्त करना ही कठिन है, फिर उन्हें पढ़ने और प्रश्न पूछने

ग्रामलेखक, 'ग्राम्या' के कवि पंत के साथ

की स्थिति कैसे आ सकती है ? क्या इसका कोई विकल्प आपके पास है ?

मैं स्वयं नहीं चाहता कि मेरी पुस्तकों का दाम अधिक हो, पर यह प्रकाशकों के ही अधीन है। मेरी तो इच्छा है कि मैं सर्व-साधारण तक अपनी रचनाओं द्वारा पहुंच सकूं।

सूर्यकांत त्रिपाठी, नारायणपुर बिहार : आपकी निगाह में आपकी सर्वश्रेष्ठ रचना कौन-सी है ?

श्रेष्ठ रचना का मूल्यांकन मैंने हमेशा

पाठकों के ही हाथों में दे दिया है।

श्याम वशिष्ठ, सुजानगढ़, चूरू : उपन्यास, कहानी और नाटक-संग्रह के अलावा क्या आपने अनुसंधान अथवा समालोचना की भी कोई कृति लिखी है ?

'हिंदी कहानियों की शिल्प विधि का विकास' मेरा शोध-प्रबंध है। इसके अतिरिक्त 'पारसी हिंदी रंगमंच', 'रंग-मंच और नाटक की भूमिका', 'आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच' नामक पुस्तकें भी प्रकाशित हैं।

अशोककुमार श्रीवास्तव, गोरखपुर : साहित्य-जगत में आपका प्रवेश किसी प्रेरणावश हुआ या यशपाल की तरह आकस्मिक ? (ख) क्या आप देशी, विदेशी साहित्यकारों से भी प्रभावित हुए हैं ?

(क) अपना पहला उपन्यास मैंने इलाहाबाद में छात्र-जीवन में आर्थिक संकटों के कारण ही लिखा, लेकिन मुझे यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि मैंने आंतरिक प्रेरणा से ही साहित्य के मंदिर में नतशिर प्रवेश किया है। (ख) निश्चय ही मैं तमाम भारतीय और विदेशी साहित्यकारों की रचनाओं से प्रभावित हुआ हूं। हिंदी में कबीर, तुलसी, प्रसाद; बंगला में विभूति-भूषण बंद्योपाध्याय, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, ताराशंकर, विमल मित्र; विदेशी साहित्य-कारों में ताल्सताय, दास्तवस्की, हेमिंग्वे, काफ्का।

विद्याभारती, चित्तौड़गढ़ : (क) प्रेम अपवित्र नदी है तो घृणा क्या है ? (ख) आपकी दृष्टि में श्रेष्ठ रचना की कसौटी क्या है ?

(क) सच्चा प्रेम कभी अपवित्र नहीं है, लेकिन जिस प्रेम का प्रसंग मेरे उपन्यास में है उसका संदर्भ चूंकि अहं है, इसलिए वह अपवित्र है। घृणा तो साहित्य का बुनियादी विषय नहीं माना जा सकता। (ख) श्रेष्ठ रचना की कसौटी है—पाठक से रचना एकाकार हो जाए और पाठक में किसी महत्त्वपूर्ण मानवीय मूल्य की सृष्टि हो। उसे रचना पढ़कर सहज ही कोई नया संस्कार प्राप्त हो।

श्रीमती ज्योत्सना भावे, नयी दिल्ली : आपके उपन्यासों में—'बया का घोंसला और सांप' से लेकर 'मन वृन्दावन' और 'प्रेम अपवित्र नदी' तक सभी स्त्री-चरित्र विवाहिता नारियां ही क्यों? (ख) सच्चे लेखक का मित्र कौन है? उसका परम शत्रु कौन है ?

आपने पूछा, तब मुझे लगा, हां हुआ तो ऐसा ही है। पर क्यों हुआ ऐसा, आज स्वयं से पूछने पर उत्तर मिलता है—विवाहिताओं की ही शय्या सूली पर देखने भोगने को मिली है, और क्या कहूं। (ख) सच्चे लेखक का सच्चा मित्र उसका लेखन, उसी के शब्द हैं, बशर्ते कि वह उनके साथ ईमानदार है। अगर लेखक अपने ही लिखे हुए शब्दों के प्रति बेईमान है, तो उसके वही शब्द उसके परम शत्रु हो जाएंगे। वे उसे मारकर ही दम लेंगे।
—८/१७ ईस्ट पटेलनगर, नयी दिल्ली

कटे हुए लोग

रज्जन त्रिवेदी

रिकार्ड प्लेयर की धुन बराबर गूंज रही थी। लगता, बार-बार लांगप्लेइंग रिकार्ड लगाये जा रहे थे। नयी फिल्म के लगते ही चंदन बाबू के घर उसके रिकार्ड आ जाते। ड्रॉइंगरूम में, खिड़कियों के परदों में, ऊपर के रोशनदानों में, सीढ़ियों पर हर कहीं धुनें थिरकतीं।

नीचे दीनू एक-के-बाद-एक बातों को पकड़ने की कोशिश करता। एक बात दिमाग पर अपना पूरा असर दिखाने जाती ही कि दूसरी पहली पर सवार हो जाती। दीनू न चाहकर भी पहली बात को बदलने के लिए मजबूर हो जाता। मां की कराहटें बीच-बीच में उभरकर पास रेंगने लगतीं।

चौके से लगी जीने की छोटी-सी जगह में मां पिछले दो सालों से कराहती पड़ी हुई है। चंदन उसी जीने पर दनदनाते ऊपर चढ़ जाया करता है। बड़े लोगों की तरह पहले मिजाजपुर्सी के लिए भी आ जाया करता था और अब उसके पम्पशू की खटखटें मां की आवाजों को, कराहटों को कुचल-कुचल जाया करती हैं। मां ने दीनू को हमेशा साफ और सुखी जीवन जीने की प्रेरणा दी है। किसी को दबाने, सताने या ठगने की उसकी कभी कोई सीख नहीं रही। मां के दिये संस्कारों के साथ वह जुड़ा हुआ है, वह उन्हें जिला रहा है और भविष्य में भी जिलाता जाएगा। पर कभी-कभी उसके मन में शंका होती है, क्या वह उन्हें जिला सकेगा?

दीनू की इच्छा हुई कि ऊपर जा कह आये, 'चंदन भाई, रिकार्ड बंद दो। मां की तबीयत ज्यादा खराब उसका दम घुट रहा है।' पर वह नहीं कर सका। वैसे वह अकसर जाकर पैसे, आटा, चावल, अचार, इयां मांगकर लाता रहा है। चंदन भी उससे हमेशा कहते, "दीनू, (दीनू-भाई भी कहते थे) मांगने में न करना, पड़ोसी ही दुख-दर्द में काम आये तो कौन आएगा!" पर दीनू यह अनुभव करता कि उसे कुछ देते चंदन बाबू या उनकी पत्नी की अनायास चमक जातीं, क्षण भर में बड़प्पन उभर आता है। उनकी सहा भूति ने उसे हमेशा जैसे 'निकम्मा', पोक,' 'मोहताज', 'अपाहिज' होने का दोष दिया।

चंदन बाबू और उनकी नफरत सहानुभूति का खयाल आते ही दीनू शरीर पर जैसे कांटे उभर आये। बाबू! कचहरी में दीनू—जैसे ही साधारण मुलाजिम, पर किस अदा असामियों को पटाते हैं। कहते हैं, पुजापा लिये तो भगवान तक पुजारी जाने नहीं देता। अपनी सुंदर बीवी भी वह कितना खयाल रखते हैं। बाबू ने एक दिन बड़ी अदा से कहा 'दीनू, सुंदर बीवी बड़े भाग से मिलती है 'हाई लेवल एप्रोच' उसी से संभव होता है

मां की कराहों ने उसकी विचारधारा भंग कर दी। दीनू ने दौड़कर उसके ओठों से पानी की कटोरी लगा दी। मां ने दवा लेना बंद कर दिया है। मां कहती है, 'बेटा, अब तो मुझे जाना ही है। फिर इस दवा को ले-लेकर तुझ पर कहां तक बोझ बढ़ाऊं? जब तक चलती हूं, चल रही हूं।'

अब तो मां की जबान भी साफ नहीं रह गयी, बात करते हुए लड़खड़ा जाती है। फिर भी मां की आंखें जैसे सब कुछ कह देती हैं।

दीनू ने देखा कि सामने वीनू बाल बिखराये थका-थका चला आ रहा है। उसके हाथ का थैला खाली है, तेल का डब्बा भी खाली ही लग रहा है। भगवान, यदि राशन न मिला होगा तो चूल्हा कैसे जलेगा, रात को दिया सांस कैसे लेगा? कुछ समझ में नहीं आता।

अपनी विवशता ने दीनू को एक बार फिर चंदन बाबू की याद दिला दी। चंदन बाबू को कभी राशन की लाईन में खड़े होने की जरूरत नहीं पड़ी, उसके बच्चे भी कभी लाईन में तेल लाने के लिए खड़े नहीं हुए। वे हर चीज के ज्यादा दाम दे देते हैं, फलतः हर चीज उनके घर पहुंच जाती है। फीस न दिये जाने के कारण कभी उनके बच्चों का नाम नहीं कटा। वीनू के हाथ में तेल के खाली डब्बे को देखकर दीनू ने सोचा, चंदन बाबू कितने मजे में हैं। उन्हें ईंधन की कोई कमी नहीं। उनके

आत्म-कथ्य

कहानी जिंदगी को समझने का, अपने आपको, अपने आसपास को समझने का माध्यम है। पहचाने हुए क्षण अनेक अवसरों पर सही ढंग से यदि न आ पायें तो मुझे कोफ्त होने लगती है। कदाचित इसलिए कि आदमी के भीतर बाहर से पहचान कराने वाले रिश्ते का दूसरा नाम मुझे कहानी ही मिला है। असमानता और असंगति व्यक्ति के लिए हो या समाज के लिए खौफनाक है। यहीं आकर आस्था की लड़ाई शुरू हो जाती है। उससे सचेत रहने की कोशिशों में अकसर मैं लिखने लगता हूं।

पढ़ने और सीखने का मोहभंग जीनियस कहलाने के गुरुडम से हो, यह कभी जरूरी नहीं माना। सभी से कुछ न कुछ मिला है—यह बात भी नहीं, पर कुछ न कुछ पाने की दृष्टि और आगे खोजने की ललक देती रहती है। इस ललक को कभी मैं खत्म होने देना नहीं चाहता। शिविर की शरण हथियाने का 'टेलेंट' यदि होता तो पिछले दो दशकों का अरसा कंटीला न होकर खुशबुए-शोहरत से लबालब हो गया होता।

यहां गैस का चूल्हा बराबर जला है। कितनी शांति और सुख है, उनके पास। और यहां, लकड़ी का चूल्हा, कोयले की अंगीठी। छोटा भाई या वह, दोनों जिंदगी के बेहतरीन क्षणों को पंक्ति में नंबर आने के इंतजार में गंवाये जा रहे हैं।

वह अपने में इस कदर डूबा हुआ था कि वीनू उसके पास आकर कब खड़ा हो गया, पता ही नहीं चला। विचारों को झटकारते हुए पूछा, "क्यों वीनू, क्या आज भी कुछ नहीं मिला?"

वीनू ने डूबे स्वरों में कहा, "मैं... आज राशन की दूकानवाले ने किसी को धतूरे के बीजवाला अनाज दे दिया। किसी के थैले में गेहूं के साथ लोहे के छोटे-छोटे टुकड़े दिये। किसी को चावल ही ... दिया। लोग गुस्से में दूकानदार को गालियां देने लगे। दूकानदार ने भी गरमी दिखाई, बोला, 'अनाज मेरे घर से नहीं, सरकारी गोदाम से आता है। तुम्हारे सामने बोरे खोल-खोलकर दे रहा हूं, मुझ पर झूठी तोहमत क्यों लगाते हो? मैं अपने बाप के घर से तो यह अनाज नहीं लाया। जो आया है वही दे रहा हूं। मुनाफा मिलता नहीं, उलटे परेशानियों के साथ गालियां सुननी पड़ती हैं। कैसा जमाना आ गया है?' उसका यह लेक्चर सुनते ही लोग भड़क गये।"

"आखिर हुआ क्या?" दीनू ने ... जानना चाहा।

"अरे होना क्या था, पहले तो लोगों ने पत्थरबाजी की, उसके बाद अनाज लूटा। ...

दूकान बंद करने लगा तो लोगों को लगा, बेटा बच रहा है, तपाक से आग लगा दी। उसका नौकर तो मजमे का मूड उखड़ता देखते ही पीछे से भाग गया, पर राशनवाला पकड़ा गया। क्या धुनाई हुई है बेटे की। तबीयत मस्त हो गयी होगी। सारी नेतागिरी भूल गया होगा।"

वीनू वहां की हुल्लड़बाजी की बातें करते-करते हंसने लगा, लेकिन दीनू हंसी में उसका साथ नहीं दे पाया। उसकी हंसी तो राशन की दूकान में लुट गयी थी। वीनू को अभी क्या मालूम। १४–१५ वर्ष की कोई उम्र होती है? इसके बावजूद उसमें एक सेंस डेवलप हो रहा है। हर बात को समझने लगा है, तभी तो कह रहा है, 'भैया, मैट्रिक तो कर ही लूंगा, आज नहीं तो कल। वैसे रेलवे में अप्लाई कर दिया है। कौन जाने मैट्रिक के बाद भी नौकरी मिले या नहीं। मेरी तनख्वाह से कम से कम मां की सांसें तो बढ़ेंगी।'

व्यंग्य करते-करते हम लोग अब व्यंग्य के प्रतीक हो गये हैं। कांटेवाले कैक्टस! दीनू ने सोचा, फिर कहा, 'हां वीनू . . . हां, तुम कुछ गलत नहीं सोचते हो, हम दो ही तो मां के स्नेह के दावेदार हैं। हमें उसकी याद नहीं होगी तो किसे होगी? जरा-सी चेतना आते ही आदमी ने स्थिति को, अपने आसपास को न पहचाना तो क्या किया? तुम मां को भी समझने लगे और घर को भी। परेशानियों को ही बांट लें, यह कम है? लोग तो धन-दौलत बांटते हैं। कहते-कहते दीनू की निगाहें सामने बनी झोपड़ियों की ओर चली गयीं।

इन झोपड़ियों से जाने कितने दिनों से धुआं नहीं निकला, वहां कोई चूल्हा नहीं जला। छोटी-छोटी घास-फूस की झोपड़ियों से बनी बस्ती, और उसमें रहनेवाले बेसहारा लोग आदमी के ही बच्चे हैं! किस कदर फटेहाल हैं, खाने को मिल गया तो खा लिया, पहनने को मिल गया तो पहन लिया। वरना जो है, उसी में गुजर-बसर किये जा रहे हैं।

और, एक हम हैं। न तो ऊपरवालों की तरह, चंदन बाबू की तरह जी सकते हैं और न इन झोपड़ियों वालों की तरह। जियें तो कैसे? दोनों तरफ से कट गये हैं, काट दिये गये हैं। हम डरपोक हैं? किस-किससे लड़ें? सुविधाओं के लिए लड़ते-लड़ते पिछली पीढ़ी लकवे का शिकार हो गयी है और अगली वर्तमान का व्यंग्य!

"ऊईई . . . मांमां . . . उई . . . मां . . . मरी रेरेरे"

दर्दीली आवाजें सुन दीनू चौंका। बीवी को फिर से दर्द आने शुरू हो गये हैं। क्या होगा, कुछ मालूम ही नहीं। पांच साल की वैवाहिक जिंदगी में दो बार गर्भपात। ठीक वक्त पर कभी डाक्टर नहीं आये। आते भी कैसे? उन्हें दर्द की आवाज कभी सुनायी पड़ी है। उन्हें पैसा बुलाता है। काश, समय पर पैसा होता? आज इस घर में भी रिकार्ड प्लेयर की

बढ़ते बचपन का साथी – इन्क्रिमिन* !
बढ़ता बचपन!
ड्रॉप्स—२ महीने से २ साल तक के बच्चों के लिये।
सिरप—१४ वर्ष तक के बच्चों के लिये।
10 ml.
Incremin* drops LYSINE-VITAMINS
TONIC APPETITE STIMULANT
ये छलकता बचपन... ये हसते खेलते तंदरुस्त बच्चे !
इन दिनों जब इनका शरीर दिन दुगनी रात चौगुनी गति से बढ़ता और विकसित होता है, इन्हें इन्क्रिमिन ड्रॉप्स ज़रूर दीजिये। लाभदायक विटामिन और आवश्यक अमीनो एसिड युक्त इन्क्रिमिन ड्रॉप्स, २ महीने से २ साल तक के बढ़ने बच्चों के लिये खासतौर से बनाये गये हैं।
इन्क्रिमिन* टॉनिक –
बढ़ते बच्चों के लिये वरदान !
Lederle
* अमेरिकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क।

धुनें न सही नन्हे-मुन्नों की आवाजों का जलतरंग गूंजता होता।

पत्नी की चीखें बढ़ती ही जा रही थीं। दीनू ने बीनू को पुकारा, "बीऽऽनू ऽऽ।" उठते-उठते मिट्टी के तेल का डब्बा ठोकर खाकर गिर पड़ा। डब्बे की गड़-गड़ाहट के बीच दीनू के स्वर शायद खो गये। दीनू फिर से चिल्लाया, "बी . . नू . . !"

"भैया, क्या आप डर रहे हैं ? इतनी जोर से क्यों चिल्ला रहे हैं ? आपके पीछे ही तो खड़ा हूं। सोचता हूं, तेल की लाइन में जाकर खड़ा हो जाऊं।"

"नहीं, तेल की लाइन के लिए मत जा। तेरी भाभी की तबीयत खराब हो रही है, जा डॉक्टर को बुला ला।"

"डॉक्टर तो विजिट के पैसे पहले मांगता है, भैया !" बीनू ने कहा।

दीनू का दिल सहसा डूब गया— पैसे ! पैसे !! पैसे !!! . . . उसे लगा, दर्द अब उसकी बर्दाश्त के बाहर होता जा रहा है। वह अस्फुट स्वरों में जैसे चीख-सा उठा, "हे भगवान !"

"भैया, यहां भगवान नहीं, मैं हूं। आप किसे बुला रहे हैं ? कहिए न, फिर किसे लाऊं ? भाभी तो बुरी तरह से चीखें मारे जा रही हैं। उधर देखिए, मां जीने के नीचे खाट पर किस कदर इधर से उधर सिर घुमाये जा रही है। आज मां को क्या हुआ जा रहा है ?"

"अच्छा तो जा, अहीरटोले से दाई को ही बुला ला। कम-से-कम नकद तो नहीं मांगेगी। नेग-दस्तूर के नाम पर आशा से बंधी सभी काम कर जाएगी। तू जा, जल्दी।"

उधर दीनू की पत्नी की चीखें बढ़ती ही जा रही थीं। मां की तकलीफ भी शायद ज्यादा बढ़ गयी थी। वह साफ-साफ बोल नहीं पा रही थी। 'हे राम, हे राम' कितने थके हुए लड़खड़ाते स्वरों में बोल रही है। आखिरी शब्द तो, लगता है, जैसे फूटे हुए बरतन से निकल रहे हैं दीनू ने सोचा, और दौड़कर मां की खाट के पास पहुंच गया। वह टूटे-फूटे स्वरों में कह रही थी, "बे.त्ता. ब्बू ह्.हू क्को...द्देखो..." पर उसके स्वर ऊपर बज रहे रिकार्ड प्लेयर के तेज स्वरों में डूब गये। वे जैसे दीनू को उसकी अपनी विवशता का बोध करा गये। दीनू के दिमाग में एक बार फिर चंदन बाबू घूम गये।

चंदन बाबू जीना जानते हैं, बीवी रखना जानते हैं, बीवी की सार्थकता जानते हैं। बीवी के कारण ही अनेक बार चंदन बाबू का ट्रांसफर रुक गया, रिश्वत का झमेला दब गया। माल ठिकाने पहुंच गया। वैसे दीनू को लगा कि तमाम ऐशो-आराम और शान-शौकत के बावजूद चंदन बाबू भीतर से टूटे हुए हैं। जैसे उन्हें कोई चीज धक्का मार गयी है, हिला गयी है। पर शायद अब वे इन सब बातों के आदी भी हो गये हैं।

भीतर से आने वाली कराहटें कुछ कम हो गयी थीं। शायद दाई पहुंच गयी थी। दीनू अपनी पत्नी के बारे में सोचने

लगा। चंदन बाबू की पत्नी से वह कितनी अलग है।

एक दिन वीनू को समझा रही थी, 'वीनू कुछ समझ भी। जिंदा रहने के लिए हर कोई गलत तरीके अपनाने लगा है। सही रास्ते से चलकर इतने ठाठ से नहीं जिया जा सकता, लाला। चूल्हे पर ही क्या बाहर भी मंडरानेवाली देशी घी की सोंधी महक, रोज बनने-संवरने वाले नक्काशीदार चेहरे; इन सबको

जुटाने के लिए चंदन बाबू को क्या नहीं करना पड़ता है, लाला। तेरे भैया और बाबू में कोई फर्क नहीं है। फर्क है तो समझ का। इन सबको जुटाने में तेरे भैया समझौता नहीं कर पाते। अपने को मार नहीं पाते। और चंदन बाबू अपने को, अपने सही आदमी को एक दूसरे ही किस्म का बना चुके हैं। पर दूसरों को मारने के लिए, चंदन बाबू ने अपने को कितनी बार मारा है, कौन जानता है।'

तब दीनू ने उससे साफ-साफ [illegible] था, 'तो मैं भी चंदन बाबू के रास्ते [illegible] चलने लगूं ? यदि तुम कहो ?'

और तब वीनू की भाभी ने इतना [illegible] कहा था, 'समझौतों का जीना आ[illegible] को बौना बनाता है। बाहर से कट [illegible] का दर्द नहीं वीनू के भैया, भीतर से क[illegible] और लकवे की जिंदगी जीना बराबर है।'

वीनू सिर झुकाये बैठक के दर[illegible] पर प्रश्नचिह्न-सा खड़ा था। सहसा [illegible] रोने लगा। दीनू उठा और उसकी [illegible] पर हाथ फेरते हुए कहने लगा, [illegible] रोता है रे, हमारे जैसों की जिंद[illegible] आने से बच गया, बिना घुले-मिले, [illegible] शानियों में फंसे बाहर का बाहर चला [illegible]

—सीताबर्डी, नागपुर

दर्दे-दिल . . .

'रीडर्स डाइजेस्ट' में हृदय-रोग पर एक अत्यंत दिलचस्प और ज्ञानवर्द्धक लेख छपा है। यह लेख अमरीका के प्रसिद्ध कारडियोलाजिस्ट डॉ. ग्लेन टर्नर के प्रयोगों के आधार पर तैयार किया गया है।

इसके अनुसार यह धारणा कि हृदय छाती के बायीं ओर होता है, गलत है। हृदय छाती के बीचोबीच होता है (देखिए चित्र १, २, ३) और यदि इसी हिस्से में कभी दर्द हो तो तुरंत चिकित्सक से परामर्श करना चाहिए। इस दर्द में दबाव की सनसनी, सिकुड़न, कसक अथवा भरेपन की अनुभूति होती है। यह दर्द मांसपेशियों में ओषजन के अभाव के फल-स्वरूप होता है।

कई बार यह दर्द छाती के बीचोबीच न रहकर एक या दोनों बाहों तक भी पहुंच सकता है। (देखिए चित्र : ४) कभी-कभी इसे संधिवात के कारण होने वाला दर्द समझ लिया जाता है। दोनों दर्दों का अंतर बाहें उठाकर जाना जा सकता है। यदि बाहें उठाने पर दर्द बढ़े तो उसे संधिवात का दर्द समझिए और यदि वह पूर्ववत रहे तो दिल के दौरे का संकेत जानिए। यह दर्द गरदन के अलावा जबड़ों में भी हो सकता है। दिल के दौरे का दर्द गरदन झुकाने पर भी नहीं बढ़ेगा। (देखिए : चित्र ५)

यदि पेट के ऊपरी भाग में दबाव, सिकुड़न अथवा कसक के कारण दर्द हो और जी घबराने के साथ-साथ मितली आये तो सावधान व्यक्ति को उसे भी दिल के दौरे का संकेत समझना चाहिए। (देखिए चित्र ६)

पीछे पीठ में, कंधों के बीचोबीच होनेवाला दर्द भी दिल के दौरे का लक्षण है। (देखिए चित्र ७) दिल के दौरे के कारण छाती, बाहों, गरदन और जबड़ों में अलग-अलग, अथवा एक साथ भी दर्द हो सकता है। छाती में होनेवाले दर्द की

इस स्तंभ के अंतर्गत विज्ञान के क्षेत्र में नयी उपलब्धियों की चर्चा रहेगी। स्तंभ एक-एक महीने के अंतराल से प्रकाशित होगा——सं.

वजाय यह दर्द काफी तेज होता है और उसके साथ सांस लेने में तकलीफ हो सकती है, जी घबराता है और मितली आने लगती है। यदि उन लक्षणों के साथ अकारण पसीना भी आ जाए तो उसे निश्चय दिल के दौरे का संकेत समझिए। (देखिए चित्र ८, ९, १०)

अकसर छाती में बायें स्तनाग्र (निपल) में या उसके आसपास होनेवाले दर्द को

दिल के दौरे का लक्षण समझ लिया जाता है। (देखिए चित्र ११, १२)। यह धारणा गलत है। बायीं छाती में कभी-कभी मिनटों अथवा घंटों एक पीड़ा-सी अनुभव होती है। आम तौर पर यह दिल के दौरे के कारण नहीं होती, किंतु यदि ऐसा दर्द बराबर बना रहे तो किसी डॉक्टर से सलाह ली जा सकती है। ये तो हुए दिल के दौरे के कारण होने वाले दर्दों के लक्षण। यदि आप उपर्युक्त दर्दों में से किसी भी प्रकार के दर्द को अनुभव करते हैं तो आपको निम्नलिखित उपाय काम में लाने चाहिए:

सबसे पहले अपने डॉक्टर को फोन कीजिए। वह न हो तो पास के अस्पताल में जाइए। डॉक्टर से पहले संपर्क करने का लाभ यह है कि वह दर्द के लक्षण सुनकर बतला सकता है कि दर्द किस प्रकार का है। डॉक्टर या अस्पताल से संपर्क करते वक्त यह अवश्य बताइए कि दिल के दौरे का मामला है, फौरन राहत की जरूरत है। डॉक्टर के पास या अस्पताल जाने के लिए तेज गतिवाले वाहन का प्रबंध करें। यदि एम्बुलेंस आने में १०-१५ मिनट की भी देर हो तो कार का उपयोग कीजिए। इस बात से न डरें कि सफर के धक्कों के कारण स्थिति और बिगड़ेगी। वैसे भी हृदय इतना कमजोर नहीं होता कि वह ऐसे धक्कों को सह न सके। जहां तक बने रोगी को स्वयं कार नहीं चलानी चाहिए, पर यदि कोई अन्य उपलब्ध न हो तो वह स्वयं कार चला कर डॉक्टर के पास पहुंचे। घर में पड़े रहने की अपेक्षा यह कम खतरनाक है।

सफर करते वक्त लेटने की बजाय सीधे बैठे रहने की कोशिश कीजिए। लेटने पर दिल के दौरे का दर्द अकसर बढ़ जाता है। यदि हो सके तो नाइट्रोग्लेसरिन की एक गोली जीभ पर रखिए। इससे कुछ मिनटों के लिए दर्द कम हो जाएगा।

यदि राह में रोगी चेतनाशून्य हो जाए या उसके दिल की धड़कनें छाती पर कान रखने के बावजूद न सुनायी पडें तो कार रोककर उसे तुरंत सड़क पर लिटाइए। इसके बाद एक हथेली से उसकी छाती के दो तिहाई भाग को जोर से दबाकर दूसरी हथेली से उसे ढंक कर जोर दीजिए और एक सेकंड के अंतर से दबाते-उठाते रहिए। यह तब तक कीजिए जब

तक रोगी होश में न आये। इससे हृदय में एकत्र रक्त शरीर के अन्य भागों की ओर प्रवाहित होने लगेगा। यह क्रिया रोगी के चेतनाशून्य होने के दो मिनट के भीतर ही की जानी चाहिए। उसके बाद करना व्यर्थ है, क्योंकि तब तक या तो रोगी की मृत्यु हो जाएगी अथवा उसका मस्तिष्क स्थायी रूप से क्षतिग्रस्त हो जाएगा।

चाय पीजिए : दिल के दौरे के खतरे कम कीजिए

चाय न केवल सुंदर और स्वादिष्ट होती है, वह दिल के दौरे के खतरों को भी कम करती है। 'दि लैंसेट' पत्रिका को लिखे गये एक पत्र में, 'रिच्यूमेटिज्म रिसर्च यूनिट' के डॉक्टर डोनाल्ड राजापकसे के अनुसार चाय केंद्रीय नाड़ी प्रणाली को उत्तेजित करती है और इस तरह हृदय के लिए अच्छी सिद्ध हो सकती है। चाय में थियोफिलिन नामक एक तत्त्व होता है जो रक्त-वाहिनियों को शिथिल करता है। इससे दिल के दौरे की आशंका भी काफी कम हो जाती है। डॉ. राजापकसे का विश्वास है कि चाय न पीनेवालों की बनिस्वत चाय पीनेवालों को दिल के दौरों का खतरा कम होता है, पर कॉफी पीनेवाले लोगों के लिए एक चिंता की बात है। कॉफी न पीनेवालों की बजाय उन्हें दिल के दौरों का अधिक खतरा होता है।

धात्विक नमक बनाम मानसिक बीमारी

डॉक्टरों ने मानसिक बीमारी का एक सरल, सहज उपाय खोज निकाला है। इस चिकित्सा में आम तौर पर पायी जाने-वाली लिथियम धातु के नमकों का प्रयोग किया जाता है। इस में खर्च भी कम पड़ता है—अर्थात केवल १९० रुपयों में पूरे वर्ष भर का इलाज!

जहां लेनिन ने राज्यक्रांति की योजना बनायी

• प्रमोदशंकर भट्ट

बात प्रथम महायुद्ध के समय की ही है। ज्यूरिख के काफे ओडियन में उन दिनों दो नवयुवक हर रोज आकर बैठा करते थे। दोनों घंटों बैठे गुपचुप बातें किया करते, पत्र लिखते और रूसी भाषा की पत्र-पत्रिकाएं पढ़ा करते। इनमें से एक का नाम था——उल्यानोव, जिसने बाद में कुछ राजनीतिक कारणों से अपना नाम 'लेनिन' रख लिया तथा दूसरा था लिओन ट्राट्स्की। दोनों ही बोलशेविक नामक नये राजनीतिक दल से संबद्ध थे, जो जार सरकार का तख्ता उलटने के लिए संगठित किया गया था। दल की स्थापना और रूस की राज्यक्रांति की मुख्य योजना इसी काफे में तैयार की गयी थी।

जर्मनी रूस पर घात लगाये बैठा था ताकि रूस को हथियाकर वह पश्चिमी देशों का सामना कर सके। जर्मनी के हाथों रूसियों को एक-के-बाद एक पराजय स्वीकारनी पड़ी, जिसके फलस्वरूप उनका उत्साह ठंडा पड़ गया। दो वर्ष में लगभग ६० लाख रूसी युद्ध में मारे गये। सेना के पास हथियार और सामान की कमी थी और उधर नागरिक भूख से पीड़ित थे। परिवहन और संचार-व्यवस्था प्रा[...] ठप हो गयी थी।

१९१७ के प्रारंभ में जार-सरकार [की] प्रतिष्ठा लगभग समाप्त हो गयी थी। रूसी सेना की भारी हार और जार[-] परिवार पर किसान रहस्यवादी रा[स]पुतिन के प्रभाव के कारण अफसर और सामंतवर्ग भी नाराज हो गया था। वास्त[व] में इन्हीं दो वर्गों के समर्थन के कार[ण] पिछली क्रांतियों को दबाया जा सक[ा] था।

१ मार्च, १९१७ को रोटी का रा[शन] लागू किया गया और अगले दिन रोटि[यों] के लिए पंक्तियों में खड़े लोगों ने पेत्रोग्राद (सेंट पीटर्सबर्ग) की बेकरियों और दूका[नों] को लूट लिया। १० मार्च को जार निको[]लस ने संसद भंग करने का हुक्म दे दिया। इसके बाद एक भारी भीड़ पेत्रोग्राद के केंद्र में जमा हुई। जो फौजी टुकड़ी भीड़ के नियंत्रण के लिए भेजी गयी थी वह उनसे मिल गयी। भीड़ ने जार सरकार के मंत्रियों को गिरफ्तार कर लिया और जेलों पर हमला कर राजनीतिक ब[ं]

अन्य कैदियों को रिहा कर दिया। यह थी फरवरी-क्रांति।

वास्तव में फरवरी-क्रांति मुख्यतः स्वयं-स्फूर्त और असंगठित लोकप्रिय क्रांति थी। इसे राजनीतिक निर्देशन उदार समाजवादी दल—मेनशेविक और समाजवादी क्रांतिकारी दल—से प्राप्त हुआ था। इन्हीं दलों ने श्रमिकों और सैनिकों के प्रतिनिधियों की 'पेत्रोग्राद सोवियत' की स्थापना की थी।

इधर लेनिन, जो स्विट्जरलैंड में निर्वासित थे, फरवरी की घटनाओं से चिंतित हुए और वे किसी-न-किसी तरह युद्ध को समाप्त करना चाहते थे। जब जर्मनी ने देखा कि वे अपने शत्रु की इस कमजोरी का लाभ उठा सकते हैं, तो जर्मनी इस बात के प्रति और भी अधिक उत्सुक हो उठा कि रूस युद्ध से अलग हट जाए। जर्मनी ने लेनिन के पास अपना एक विशेष प्रतिनिधि काफे ओडियन में मुलाकात के लिए भेजा। जर्मनी लेनिन को इस समय रूस पहुंचाना चाहता था। उसने लेनिन को एक बंद रेलगाड़ी में गुप्त रूप से रूस के सीमावर्ती क्षेत्र में पहुंचाने की योजना रखी, ताकि वे वहां जाकर अपने बोलशेविक अनुयायियों की मदद से अस्थायी सरकार की आलोचना कर सकें।

लेनिन के लिए यह एक मुंहमांगी मुराद थी। ८ अप्रैल, १९१७ की रात को अपने अनुयायियों के साथ लेनिन काफे ओडियन में आये। एक विशाल पार्टी का आयोजन किया गया। दूसरे दिन प्रातः लेनिन ने अपने साथियों सहित वह महान-यात्रा प्रारंभ की।

'जर्मनी और रूस की क्रांति' नामक पुस्तक के लेखक जेड. ए. बी. जर्मन ने लिखा है, "बोलशेविकों को जर्मनी से बहुत बड़ी धनराशि प्राप्त हुई, जिसका अधिकांश भाग अग्रिम मोर्चों पर लड़नेवाले सैनिकों की वफादारी को, जो उस समय तक रूस की अस्थायी सरकार के प्रति निष्ठावान थे, समाप्त करने के लिए खर्च किया गया।" जर्मनी के एक दस्तावेज के अनुसार बोलशेविकों को जब तक हमसे,

राज्यक्रांति के प्रेरणा-सूत्र लेनिन

विभिन्न माध्यमों से, निरंतर बड़ी मात्रा में धन उपलब्ध नहीं हुआ, वे अपना मुख्य समाचार-पत्र 'प्रावदा' चालू नहीं कर सके।

१६ अप्रैल को लेनिन पेत्रोग्राद पहुंचे, और जो बोलशेविक सरकार को समर्थन दे रहे थे, उनकी उग्र आलोचना करने लगे। उन्होंने कहा कि सरकार को तुरंत समाप्त कर देना चाहिए और सोवियत को सत्ता अपने हाथ में ले लेनी चाहिए।

लेनिन की इस आलोचना का प्रभाव यह हुआ कि कुछ सप्ताहों के भीतर ही उनके कार्यक्रम को स्वीकार कर लिया गया। उसी समय दल ने अस्थायी सरकार को गलत सिद्ध करके तथा सोवियतों और सेना पर अपना प्रभाव जमाकर सत्ता हथियाने का जबरदस्त अभियान छेड़ दिया। प्रदर्शन हुए, हड़तालें हुईं, जिसके फलस्वरूप सरकार का पुनर्गठन हुआ। इस सरकार में छह समाजवादी मंत्री शामिल किये गये, जिसमें केरेंस्की युद्ध-मंत्री बनाये गये। १७ मई को ट्राट्स्की, स्तालिन और कामेंनेव भी जो निष्कासित कर दिये गये थे, पेत्रोग्राद लौट आये।

यद्यपि परिस्थिति बोलशेविकों के अनुकूल थी, लेकिन मजदूर संघों पर मेनशेविकों का प्रभाव था। लेनिन ने प्रत्येक जिले और कारखाने में ऐसे संगठन बनाने का प्रयास किया जिनका पार्टी की केंद्रीय समिति से गहरा संबंध हो, ताकि मजदूरों में उदार समाजवादी पार्टियों के प्रभाव का मुकाबला किया जा सके। लेनिन ने 'पेत्रोग्राद सोवियत' की कार्यकारिणी के प्रस्ताव की अवहेलना करते हुए लाल रक्षकों का गठन किया, जिसमें सशस्त्र मजदूरों को संगठित किया गया। जुलाई तक पेत्रोग्राद में दस हजार लाल रक्षक हो गये, जिनका उपयोग बाद में सोवियतों और पार्टियों के बीच हुए संघर्ष में किया गया।

इधर अस्थायी सरकार ने जब देखा कि उसकी सत्ता को खतरा पैदा हो गया है, तो उसने बोलशेविकों को दबाने का प्रयत्न किया। लेनिन, कामेंनेव और जीनोवियेव की गिरफ्तारी के आदेश जारी किये गये। कामेंनेव गिरफ्तार कर लिया गया और लेनिन आदि फिनलैंड में जा छिपे। अस्थायी सरकार को सोवियत के उदार समाजवादियों का समर्थन प्राप्त हो गया।

आठ अगस्त को बोलशेविकों का छठा अधिवेशन पेत्रोग्राद में गुप्त रूप से हुआ। यद्यपि अधिवेशन में लेनिन मौजूद नहीं थे, तथापि उन्हें अवैतनिक अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। लेनिन ने एक पत्र द्वारा पार्टी को सलाह दी कि 'सब अधिकार सोवियतों को दो' नारे को उस समय तक त्याग देना चाहिए जब तक वे अपने सब राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों को बाहर निकालकर सब सोवियतों पर नियंत्रण न कर लें। लेनिन के इस विचार को स्वीकार किया गया और पार्टी की गति-

विधियों के नियंत्रण और संचालन के लिए एक नयी केंद्रीय समिति बनायी गयी।

३ सितंबर को जर्मनी ने जब रीगा पर कब्जा कर लिया तब पेत्रोग्राद में तहलका मच गया। सोवियतों ने बोलशेविकों को इस बात पर राजी किया कि वे हथियार लेकर केरेंस्की सरकार का समर्थन करें। लेनिन ने, जो अब तक फिनलैंड में ही छिपे थे, अपनी केंद्रीय समिति से कहा कि बोलशेविकों को जनरल कोरनिलोव को हराने में मदद करनी चाहिए, लेकिन उन्हें कैरेंस सरकार का विरोध नहीं त्यागना चाहिए। इस प्रकार लेनिन सत्ता हथियाने के अपने कार्यक्रम को केवल स्थगित ही कर रहे थे।

अक्तूबर के आते ही मेनशेविकों के सुझाव पर 'पेत्रोग्राद सोवियत' ने क्रांतिकारी-सनिक-समिति की स्थापना की। समिति का उद्देश्य पेत्रोग्राद सोवियत और पेत्रोग्राद की सैनिक छावनी की फौजी टुकड़ियों में सहयोग बढ़ाना था। बोलशेविकों ने समय का लाभ उठाया और समिति में अपने सदस्यों को अधिक से अधिक स्थान दिया, फलस्वरूप ट्राट्स्की को अध्यक्ष नियुक्त किया गया और राजधानी की सैनिक टुकड़ियों का, जो सोवियतों के प्रति वफादार थी, नियंत्रण उनके हाथ में आ गया।

२३ अक्तूबर को पेत्रोग्राद में बोलशेविक केंद्रीय समिति की एक गुप्त बैठक हुई और इसमें लेनिन ने भी भाग लिया और 'सशस्त्र विद्रोह अनिवार्य है और इसका उचित अवसर आ गया है' का नारा बुलंद किया। सरकार का तख्ता उलटकर सत्ता हथियाने की तैयारियां शुरू हो गयीं।

६–७ नवंबर की रात को लाल रक्षकों ने पेत्रोग्राद में विंटर-पैलेस को घेर लिया। ७ तारीख की रात तक अस्थायी सरकार बरखास्त कर दी गयी और अधिकांश मंत्रियों को गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद मास्को में थोड़ी लड़ाई हुई और १५ नवंबर को बोलशेविकों ने क्रेमलिन पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार ज्यूरिख के प्रसिद्ध रेस्तरां में राज्य-क्रांति की जो योजना प्रारंभ हुई थी वह सफलीभूत हुई। ज्यूरिख से लेनिन का विदाई समारोह धूमधाम से संपन्न हुआ।

—सी १/६, गवर्नमेंट हाउसिंग कॉलोनी
राजावाड़ी, घाटकोपर, बंबई-६६

एक व्यक्ति—"मैं सदैव अपने बॉस को कोई न कोई उपहार देता रहता हूं। उन्होंने कई बार मना भी किया। इस बार तो उपहार लाने की सख्त मनाही कर दी है। कह रहे थे 'यदि अब भी कोई उपहार लाया तो सीधा आग में झोंक दूंगा।' बड़े सोच में हूं, इस बार क्या उपहार दूं?"

दूसरा व्यक्ति—"एक अच्छे से कागज में कोयले पैक करके लेते जाओ।"

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. अ. (१) रीता पूर्व की ओर (२) नीता दक्षिण की ओर। ब. रीता उत्तर-पश्चिम तथा नीता उत्तर-दक्षिण। २. एक प्रश्न यह भी हो सकता है—'कृपया उस व्यक्ति की ओर संकेत कीजिए जो मेरे प्रश्न का उत्तर बिलकुल आपकी भांति देगा।' यदि यह प्रश्न किसी झूठ बोलनेवाले व्यक्ति से पूछा जाएगा तो वह सच बोलनेवाले व्यक्ति की ओर संकेत करेगा (क्योंकि उसका उत्तर भिन्न होगा) और यदि यह प्रश्न किसी सच बोलनेवाले व्यक्ति से पूछा जाएगा तो वह सच बोलनेवाले दूसरे व्यक्ति की ओर इशारा करेगा। दोनों स्थितियों में सच बोलनेवाले व्यक्ति की ओर ही इशारा होगा। ३. **रामबाबू** की कन्याओं की उम्र हैं—५, ७, ११ तथा १३ वर्ष एवं उनकी पत्नी की उम्र है ३६ वर्ष। इस प्रश्न को हल करने के लिए पहले ५,००५ के फैक्टर निकालिए जो १, ५, ७, ११ तथा १३ आएंगे। चूंकि उनकी सभी कन्याएं स्कूल में पढ़ती हैं, अतः १ को निकाल दीजिए। शेष संख्याएं उनकी कन्याओं की उम्र की द्योतक हैं और उनका जोड़फल उनकी पत्नी की उम्र का। ४. **हरीश** ३.१० पर अपनी मंजिल पर पहुंचेगा। ५. १२ बजकर ७॥ मिनट।

६. यहां प्रकाशित चित्र के अनुसार भूमि का बंटवारा किया जा सकेगा—
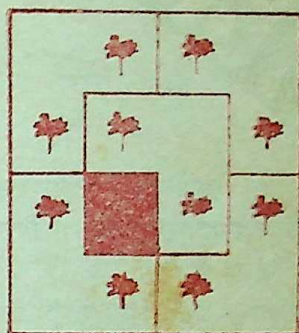
७. **पचपन** वर्ष। ८. **पृथ्वी** के आस-पास चंद्रमा परिक्रमा करता है और चंद्रमा सहित पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है। इस प्रकार पृथ्वी की परिक्रमा-परिधि को चंद्रमा अपनी परिक्रमा में दो स्थानों पर काटता है। इसे यों भी कह सकते हैं कि पृथ्वी और चंद्रमा की परिक्रमा की परिधि एक-दूसरे को दो स्थानों पर काटती है। इनमें से नीचे से ऊपर की ओर जाने वाले बिंदु को राहु और उसके ठीक विपरीत ऊपर से नीचे आनेवाले बिंदु को केतु कहते हैं। ९. **दोनों** बातें सही हैं। (अ) यदि हम सफेद पेंट से भरे डब्बे में काले पेंट की चार-पांच बूंदें डालें तो वह सफेद पेंट को और अधिक सफेद बनाएंगी। यहां काले पेंट की बूंदें 'ब्लीचिंग एजेंट' का काम करेंगी।

(ब) थोड़ा-सा साबुन मिलाने पर तेल और पानी आपस में मिल सकते हैं।

हंसिकाएं

पुलिस इंसपेक्टर--"सभापति को मूर्ख कहने के अपराध में आपको गिरफ्तार किया जाता है।"

रमेश--"क्यों यह कोई अपराध तो नहीं!"

पुलिस इंसपेक्टर--"अपने समान व्यक्ति को पहचानना कोई अपराध नहीं किंतु तुमने दो और अपराध किये हैं। एक इतने महान व्यक्ति का भेद खोल दिया, दूसरे सभापति बनने के लिए क्या योग्यता चाहिए सबको बता दिया। अब हर कोई अपने आपको उम्मीदवार समझेगा और यहां भीड़ लग जाएगी।"

*

"पागलखाने में डाक्टर को आते देख एक सज्जन बोले, --आइए, आइए डाक्टर! कहिए कैसा लगा यहां आपको?"

डाक्टर--"बस, कुछ न पूछिए, मुझे देखकर सभी पागल इतने प्रसन्न हैं कि क्या कहूं--सुना है पिछले डाक्टर को तो काटने को दौड़ते थे।"

सज्जन--"वाह! प्रसन्न क्यों नहीं होंगे? आखिर उन्हें भी तो अपने-जैसे व्यक्ति की तलाश थी।"

दूकानदार--"इस साथ की दूकान ने तो काम खराब कर रखा है। प्रति दिन रेट घटाता-बढ़ाता रहता है। अब देखिए न, लिख दिया है यहां पचास पैसे में हजामत होती है। अपनी दूकान पर मैं क्या लिखूं ताकि उसके सभी ग्राहक मेरे पास आने लगें?"

श्रीजी--"लिख दो, यहां पचास पैसे में हजामत करवानेवालों की हजामत ठीक की जाती है।"

*

एक सज्जन होटल में गये और वेटर से बोले--"यह चीज-बाल्स, चप्स, कटलेट्स, यह सब इतने छोटे-छोटे क्यों लग रहे हैं?"

वेटर--"जी, जब से होटल बड़ा करवाया है, हर चीज छोटी नजर आती है।"

★

एक--"जब मैं सुबह उठता हूं तो आधे घंटे तक सुस्त ही रहता हूं। कुछ बताइए न क्या करूं?"

दूसरा--"आप आधे घंटे के बाद ही क्यों नहीं उठते?"

लेखिका

रमेश--"एक मिनट और एक सदी में क्या अंतर है ?"

सुरेश--"बहुत बड़ा अंतर है। जैसे कि यदि मैं आपके सामने एक मिनट भाषण दूं तो आपको उसे समझने में एक सदी लग जाएगी।"

★

प्रताप--"अच्छा, तो आप ही वह डाक्टर हैं जिनकी चर्चा अकसर होती है ?"

डाक्टर--"जी, मैं विशेषज्ञ हूं।"

प्रताप--"आंख,कान, नाक-विशेषज्ञ?

डाक्टर--"जी नहीं, मैं सिर्फ नाक-विशेषज्ञ हूं।"

प्रताप--जी, नाक के कौन-से नथुने के ?"

★

एक महिला--"क्या बात है बहन, जब तुम्हारे तीन बच्चे थे तब भी तुम उन्हें एक ही रंग और डिजाइन के कपड़े पहनाती थीं, और अब जब नौ हैं तब भी एक-से ही कपड़े पहनाती हो ?"

दूसरी महिला (संजीदगी से)--"क्या करूं बहन, जब तीन थे तो डर था कि कहीं कोई खो न जाए, और अब नौ हैं तो डरती हूं कि कहीं कोई और बाहर का शामिल न हो जाए।"

★

श्रीजी : बेचारा उम्र भर दाने-दाने को मोहताज रहा। किस्मत पलटी भी तो कहां आकर !

मित्र : कहां ?

श्रीजी : जब उसकी कब्र खोदी जा रही थी तो जमीन से तेल निकलने लगा !

हंसिकाएं : काव्य में

दुविधा

गंगा गये तो गंगादास !
जमुना मिली तो
उसके प्रवाह में बहने लगे
और कहने लगे सोच है मुझको
कृष्णा कावेरी नर्मदा क्या सोचेंगी
छोड़ूं किसे अपनाऊं किसको

जंप

हाई जंप के समय
काश, उनका वश चलता
बताते जनता को
कि उनका मन भी था
बल्लियों उछलता

कथाएं

जाल काटती चुहिया पर
झपटता हुआ शेर
और बिल्लियों को
रोटी बांटता हुआ बंदर
पंचतंत्र की यह सारी कथाएं
मिलेंगी आपको प्रजातंत्र के अंदर

कर

नून तेल लकड़ी राशन पेट्रोल
बढ़ती अव्यवस्था परिवार पर कंट्रोल
बढ़ते हुए दाम
बढ़ता यह आयकर
चिल्लाती जनता
आयकर--हायकर

● डॉ. सरोजनी प्रीतम

ध्यानाकर्षण!

Indane उपभोक्ताओं

घटनाएं प्रकाश में आई हैं कि 'इण्डेन' इण्डियन आयल की कूकिंग गैस को हाउस होल्डर्स द्वारा अनधिकृत रूप से ऐसे शहरों एवं क्षेत्रों में प्रयोग किया जा रहा है जहां कि अभी हमारी वितरण प्रणाली (नेट-वर्क) द्वारा सेवा किया जाना है। प्रत्यक्ष रूप से, गैस सिलिन्डर ऐसे क्षेत्रों से प्राप्त किया जाता है जो कि हमारे वितरण प्रणाली (नैट-वर्क) परि-सीमा में है और उन्हें ऐसे स्थानों पर उपयोग के लिए ले जाया जाता है जो कि हमारे वितरकों की परिसीमा में नहीं है।

अनधिकृत व्यक्तियों द्वारा गैस सिलिन्डरों का स्थानान्तरण गैर-कानूनी है और गैस कनेक्शन जिन नियम एवं शर्तों के अंतर्गत प्रदान किए गए हैं, का उल्लंघन है। नियम एवं शर्तों में निर्धारित है 'उपभोक्ता उस वितरक जिससे कि मूल रूप से उपकरण लिया था, को परिसीमा से बाहर नहीं ले जाएगा।'

यह देखा गया है कि गैस-सिलिन्डरों का कार, जीप और अन्य प्रकार के वाहनों द्वारा अनधिकृत ट्रांसपोर्टेशन तथा सिलि-न्डरों के अप्रशिक्षितों द्वारा कनेक्शन या डिसकनेक्शन से गंभीर दुर्घटनाएं हुई हैं जिसमें लोगों की मृत्यु या पास-पड़ोस में लोगों को गंभीर चोटें भी शामिल हैं।

व्यक्ति जो इंडेन सिलिन्डरों का अनधिकृत स्थानों में उपयोग कर रहे हैं जो कि हमारे इंडेन-वितरण प्रणाली (नैट-वर्क) में नहीं है को गैस कनेक्शनों के जोखिमपूर्ण दुरुपयोग के लिए चेतावनी दी जाती है और उनके अपने हित में है कि वे ऐसे सिलिन्डरों को लौटा दें।

इण्डियन आयल कारपोरेशन लिमिटेड

भारत का एकमात्र शनि-मंदिर

• एन. रामकृष्ण

हमारे देश में शनि के मंदिर बहुत कम हैं। नव ग्रहों के साथ तो शनि की पूजा कई स्थानों पर होती है, और उनके अलग-अलग मंदिर भी सुदूर-वर्ती स्थानों पर हैं लेकिन केवल शनि का मंदिर तिरुनल्लार में ही है। इसी विशेषता के कारण यह स्थान एक बड़ा तीर्थ बन गया है।

शनि भयभीत करनेवाला ग्रह माना गया है। शनि के सामने कड़वे तेल का दिया जलाकर पूजा की जाती है और सरसों के बीज चढ़ाये जाते हैं। सरसों का चूर्ण, चावल में मिलाकर बालकों तथा ब्राह्मणों को दान दिया जाता है।

शनि ३० वर्ष में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करता है। ऐसा माना जाता है कि ३० वर्षों में एक बार प्रत्येक मनुष्य पर इसका प्रकोप होता है। ऐसा भी विश्वास है कि यदि शनि किसी पर कृपालु हो जाए तो उसकी सात पीढ़ियों का उद्धार कर दे और रुष्ट हो जाए तो नष्ट कर दे। इसी आशंका के कारण शनि से सर्वाधिक भय खाया जाता है।

राजा नल शनि के पहले शिकार थे। प्रचलित कथा के अनुसार दमयंती ने देवों के भुलावे में न आकर नल से विवाह किया था। रुष्ट देवों ने अपार कष्ट देकर नल से बदला लिया। अंततः नल ने तिरुनल्लार में स्नान किया और शनि

स्वर्ण - कवच मंडित शनि

के पंजों से मुक्ति पायी। शनि ने इस मंदिर में वास करना प्रारंभ किया और आश्वासन दिया कि जो मनुष्य यहां आकर नल को जपेगा, वह मेरे प्रकोप से मुक्त रहेगा। इस घटना की स्मृति में प्रत्येक ढाई वर्ष के बाद तीर्थ-यात्री यहां आते हैं और दीवार में जड़ी शनि-मूर्ति के आगे तेल का दीपक अर्पित करते हैं। शनि का यह मंदिर देवी के मंदिर के पास ही स्थित है। शनि की मूर्ति पत्थर से निर्मित है।
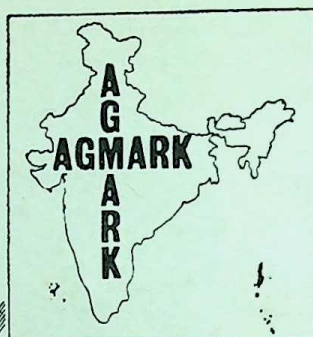
तिरुनल्लार का मुख्य मंदिर श्री धरमा-

ण्णेश्वर को समर्पित है। ये कुश के देवता माने जाते हैं। देवी का नाम बोग मर्थ पून मुलायल और प्राणेश्वरी है।

पुराणों में तिरूनल्लार को नलस्वरम कहा गया है। यह सात विडंग क्षेत्रम में से एक है। त्यागराज सन्निधि मंदिर के गर्भ गृह के साथ ही है। इस मंदिर में मरकत लिंग की प्रस्तर-प्रतिमा भी है। मान्यता है कि इसका निर्माण देवलोक में ही हुआ था। यहां नीलोत्पलंबल देवी का भी मंदिर है। कुश का एक पवित्र पौधा भी है। श्रद्धालु यहां से तृण तोड़कर उसकी गांठ बांधते हैं और इस विश्वास से चढ़ाते

मुक्ति पायी थी।

शनि का वाहन कौआ माना गया है। इस मंदिर में कौए की प्रतिकृति चांदी में ढली रखी है। उत्सव के दिन कौए पर शनि की मूर्ति को स्थापित कर सवारी निकाली जाती है। १९६८ में पुनरोद्धार के पश्चात मंदिर का कुंभाभिषेक संपन्न किया गया।

दान-राशि और जन-सहयोग से उस अवसर पर एक करोड़ अर्चनाएं समर्पित की गयीं। एक आधुनिक विश्रामालय है जहां नाममात्र के शुल्क पर ठहरने की व्यवस्था हो सकती है।

थिरुग्गन संबंदार, तिरूनवक्करसर

बायें से : शनिमंदिर का प्रवेश द्वार, मंदिर के बाहर उगी कु धरमाण्णेश्वर मंदिर जहां कुश के देवता का वास

हैं कि उनके पाप इसी तरह टूट जाएंगे।

यहां पर कई तीर्थ-सरोवर हैं। इनमें सबसे प्रमुख नल-तीर्थ है। शनि की दशा परिवर्तन के दिन भक्त-जन यहां तैल-स्नान करते हैं। सरोवर के मध्य में एक मंडप है जिसमें नल और दमयंती की मूर्ति स्थित है। विश्वास किया जाता है कि नल ने यहीं स्नान करके शनि से

सुंदर-मूर्ति स्वामीगल और अरूणागिरीनथर संतों ने यहां शनि की स्तुति की है।

तिरूनल्लार पहुंचने के लिए मयुरम, कुबांकोनम, पोरम्यार, नगाईपट्टीनम, कहीं से भी बस ली जा सकती है। यह मद्रास से २०० किलोमीटर दूर मयरम-पेरालम कराइकल रेलवे लाइन के क्षेत्र में स्थित है।

बम्बई में बाल गंगाधर तिलक को छः वर्ष का कठिन कारावास हुआ। प्रतिक्रिया में इलाहाबाद में एक सभा हुई। इस सभा की अध्यक्षता पं. बालकृष्ण भट्ट ने की। इस सभा में भट्टजी के सुपुत्र पं. लक्ष्मीकांत भट्ट भी थे। पहला व्याख्यान श्री सुंदरलाल जी का हुआ। इसके पश्चात, पं. बालकृष्ण भट्ट बोलने को खड़े हुए। वे आक्रोश से भरे थे और अपने उद्‌गारों को बड़ी निर्भीकता से श्रोताओं के समक्ष रखने लगे, "हमें दुख तिलक का नहीं है, वे तो फिर आएंगे, और फिर जाएंगे। दुख तो हमें उन अधखिले फूलों का है, जो विकसने के पहले ही तोड़ लिये गये। नदी पार करने को कूदे ही थे कि निठुर मल्लाह ने पत्थर बांधकर जल में उन्हें डुबो दि... वे खुदीराम सरीखे बच्चे अब कहां मिलें... इस निर्भीकता से उपस्थित जनता ... रह गयी। अंगरेजों के राज्य में इतनी नि... कता मामूली बात नहीं थी।

इसका फल भी उन्हें तत्काल ही ... गया। दूसरे ही दिन से खुफिया पु... चील की तरह उनके मकान के चारों ... मंडराने लगी। सरकार ने कायस्थ ... शाला के अधिकारियों को आदेश दि... वे भट्टजी को अपनी संस्था से हटा ... पाठशाला की ओर से भट्टजी को ... गया कि कुछ दिनों के लिए वे प्रोफेस... पद से हटाकर केवल हेड पंडित कर ... गये हैं, और वेतन में पांच रुपये की ... कर दी गयी है। यह व्यवस्था थोड़े दि... के लिए है, बाद में वे फिर पुराने स्थान ... नियुक्त कर दिये जाएंगे। भट्टजी को ... बात अत्यंत अपमानजनक लगी। ... प्रोफेसर का पद त्यागकर घर चले ... और अपने जीवन में फिर कायस्थ ... शाला नहीं गये।

—परशुराम ति...

रामकृष्ण परमहंस की मां कुछ ... के लिए दक्षिणेश्वर रहने आ... थीं। रामकृष्ण के आश्रयदाता श्री म... नाथ विस्वास ने चाहा कि वे अपनी ... से मां को कुछ भेंट दें। उन्होंने मां से ... "मां, आपको जिस वस्तु की कामना ... आप निस्संकोच बता दें, मैं आपकी से...

उपस्थित कर दूंगा।"

मां ने बहुत सोचा, लेकिन उन्हें किसी चीज की आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई। वे बोलीं, "सब कुछ तो है बेटा। मेरा आशीष लो और प्रसन्न रहो।" मथुरा बाबू ने भेंट देने का बहुत आग्रह किया तब मां बोलीं, "ठीक है। अगर तू कुछ देना ही चाहता है तो मेरे लिए थोड़ी तंबाकू मंगवा दे। वह खत्म हो गयी है।"

ऐसी सादगी पर मथुरा बाबू की आंखों में आंसू आ गये। सोचने लगे—ऐसी मां को रामकृष्ण-जैसा पुत्र मिले तो इसमें आश्चर्य क्या है।

कनफ्यूशियस बूढ़ा हो चला था। उसकी कीर्ति चीन में फैल चुकी थी। वह चाहता था कि उसके सिद्धांतों के आधार पर शासन में कुछ सुधार हो, किंतु चीन के किसी शासक ने उसे ऐसा करने का अवसर नहीं दिया। एक राज्य से उसे निमंत्रण मिला कि वह आकर वहां रहे और सुख से जीवन व्यतीत करे। कनफ्यूशियस ने कहला भेजा, "जाओ, सम्राट से कह देना कि कनफ्यूशियस कुछ करके खाना पसंद करता है। उसे भीख या दान की आवश्यकता नहीं है। न उसे ऐश्वर्य की आकांक्षा है। एक सुव्यवस्थित शासन और समाज के लिए वह कुछ करना चाहता है। उसके बदले ही वह कुछ स्वीकार करेगा। आलस्य का पुरस्कार उसे नहीं चाहिए।"

महर्षि रमण अपने अंतिम दिनों कैंसर-ग्रस्त हो गये थे। कैंसर पीठ पर था और बड़ा कष्टदायी था, परंतु वे सदैव अविचलित तथा शांत ही दिखायी पड़ते थे। एक दिन किसी ने पूछा, "इतनी पीड़ा में भी आप इतने शांत कैसे बने रहते हैं? डाक्टर भी आपकी सहनशक्ति पर आश्चर्य व्यक्त करते हैं।"

महर्षि ने कहा, "यह सहनशक्ति की बात नहीं है। जो भी आत्मा को शरीर से अलग समझ लेता है वह शरीर के कष्टों को वैसे ही अनुभव करता है जैसे वे उससे अलग हों। शरीर और आत्मा के

महर्षि रमण

तादात्म्य को तोड़ देने के बाद फिर संसार के कष्ट ज्ञानी को विचलित नहीं कर पाते।"

डा. राधाकृष्णन ने महर्षि को जीवंत और सशरीर अद्वैत-दर्शन की संज्ञा दी थी।

सत्य और ज्ञान के उपासकों ने कभी पद, मान, मर्यादा और राजनीतिक शक्ति की परवाह नहीं की। उन्हीं में एक थे आर्कमिदीज। एक जटिल वैज्ञानिक प्रश्न का हल निकल आने पर ये ही एक बार सड़क पर नंग-धड़ंग 'यूरेका . . . यूरेका' (मिल गया . . . मिल गया) कहते भागते चले गये थे।

मार्सिलस ने आर्कमिदीज के देश पर धावा बोल दिया और विजयी हुआ। उसने आर्कमिदीज की ख्याति सुन रखी थी, इसलिए मिलने की इच्छा प्रकट की। हरकारा भेजा गया। उसने आर्कमिदीज को आज्ञा सुनायी, "सेनापति ने तुमको बुलाया है।"

"कौन सेनापति और कैसा बुलावा ?" अपने में तल्लीन, गणित में डूबा वह वैज्ञानिक बोल उठा, "चले जाओ ! मैं इस समय गणित का प्रश्न हल कर रहा हूं।"

सैनिक को यह कैसे सहन होता ! उसे तो उन्हें ले जाना था। उसकी तलवार वैज्ञानिक के हृदय को चीरती चली गयी और वैज्ञानिक की समस्या सदा के लिए हल हो गयी।

—ध्रुव शुक्ल

स्वतंत्रता से पूर्व की बात है। लीग ऑव नेशंस की बैठक जेनेवा में हो रही थी। बीकानेर के महाराजा भारत-सरकार के प्रतिनिधि बनकर भाग लेने गये थे। वे ब्रिटिश सरकार की कठपुतली की ही भूमिका निभा रहे थे और भारत के राष्ट्रीय हितों के खिलाफ अंगरेजों की वकालत कर रहे थे। डॉ. लोहिया गोल... के अपने मित्र जूलियस मेंजीस के स... दर्शक-दीर्घा में विराजमान थे। ज्योंही बीकानेर के महाराजा भाषण देने खड़े हुए और अंगरेजों की सिखायी-पढ़ायी बातें कहने लगे त्योंही डॉ. लोहिया ने बि... की बोली बोलकर उनकी खिल्ली उड़ानी शुरू कर दी। इस घटना से लीग ऑव नेशंस के हाल में खलबली मच गयी। डॉ. लोहिया को उनके दोस्त मेंजीस के साथ दर्शक-दीर्घा से निष्कासित कर दिया गया। इस तरह डॉ. लोहिया ने अपने प्रारंभिक जीवन में अदम्य साहस और देशभक्ति का परिचय दिया था और देश के विरुद्ध कार्य करनेवालों के प्रति उनकी यह खुली चुनौती थी।

घटना समस्तीपुर स्टेशन की है। डॉ. लोहिया उस समय बिहार के दौरे पर थे। ट्रेन की प्रतीक्षा में वे प्लेट-फॉर्म पर घूम रहे थे। इसी बीच एक अन्य ट्रेन प्लेटफॉर्म पर आकर लगी। आर. एम. एस. के डिब्बे से चिट्ठियों का एक थैला गिर पड़ा और चिट्ठियां बिखर गयीं। डॉ. लोहिया ने यह देखा तो वे दौड़कर वहां पहुंचे और चिट्ठियां स्वयं बटोरने लगे। डाक-कर्मचारी को संबोधित कर वे बोले, "इसमें किसी के सुहाग की बातें होंगी, किसी की रोजी-रोटी होगी, किसी का प्यार होगा, इसे जरा संभालकर रखो।"

—कृष्णनंदन ठाकुर

व्यंग्य

कतार में खड़ा देश

● कुलदीप बग्गा

अखबार पतले हो गये थे। मुफ्त में आनेवाली पत्रिकाएं कागज की कमी के कारण बंद हो गयी थीं। नयी पुस्तकें बहुत महंगी हो गयीं थीं पर पढ़ने की भूख उसी तरह रोज लगती थी। पहले भी मैं कबाड़ी बाजार से पुरानी किताबें खरीद लाया करता था।

उस दिन मैं कुछ किताबें खरीदने कबाड़ी बाजार गया। कबाड़ी की दूकान के सामने एक लंबी कतार देखकर कुछ आश्चर्य हुआ। मैंने सोचा, जरूर आस-पास कोई घी या मिट्टी के तेल की दूकान होगी। यह लाइन उसके लिए ही होगी। मेरी धारणा गलत निकली। सचमुच ही यह लाइन कबाड़ी की दूकान के सामने ही लगी थी। यह जानकर सुखद आश्चर्य हुआ कि हमारे यहां पुस्तक-प्रेमी इतने बढ़ गये हैं।

कतार में खड़े लोगों में कुछ खुसर-पुसर हुई। मैंने पीछे मुड़कर देखा कि एक आदमी वापस जा रहा था क्योंकि वह अपना राशन कार्ड नहीं लाया था। कुछ दिनों से मैं अखबार ढंग से नहीं देख रहा था। मुझे पता भी नहीं था कि अब कबाड़ी के पास पुरानी किताबें भी राशन कार्ड पर मिलेंगी।

मैं अब असमंजस में पड़ गया था। वैसे रोज ही मेरी बीवी राशन कार्ड मेरी जेब में रख देती थी। मैंने झुंझलाकर पूछा था, "यह राशन कार्ड और पैसे मेरी जेब में क्यों रखती हो?"

"बाजार आते-जाते कभी भी किसी दूकान पर भीड़ कम हो या कतार छोटी हो तो आप वहां जो कुछ भी मिले, ले आया करें," उसने कहा था।

आज ही पेंट बदलते समय मैंने राशन कार्ड निकालकर अलमारी में रख दिया था। अब मेरी बारी निकट थी क्योंकि दो आदमी डब्बे के दूध की कतार समझ-कर खड़े हो गये थे। वह कतार पांच दूकानें छोड़कर लगी थी।

मैं यह सोचकर कतार में खड़ा रहा कि शायद कबाड़ी मेरी मिन्नत पर राजी हो जाए। उसके साथ मेरी पुरानी जान-पहचान थी। अचानक ही मुझे एक नयी तरकीब भी सूझ गयी। मैंने चेहरे पर ऐसे भाव बनाये, जैसे सचमुच मेरे पास राशन कार्ड हो! मैंने एक बड़े तथा मोटे कागज को तह करके उसमें एक रुपये का नोट रखकर अपनी बारी आने पर बड़ी बेपरवाही का भाव दिखाते हुए कबाड़ी के हाथ थमा दिया। उसने कागज उलटाकर देखा। उसमें एक रुपये का नोट देखकर उसके होंठों पर एक हलकी-सी मुसकराहट कुछ क्षणों के लिए आयी। फिर वह गंभीर हो गया। उसने कागज पर जोर से मुहर लगायी और अपनी कार्रवाई करने लगा। कुछ क्षणों बाद वह उठा और एक पुस्तक मुझे पकड़ा दी। मैं उसे गौर से देखने लगा।

कबाड़ी बोला, "अब वह दिन गये हैं जब आप एक किताब के लिए मेरी सारी दूकान उलट-पुलट कर रख देते थे। अब यह सरकारी दूकान है।"

मैंने उसका पुराना ग्राहक होने की दुहाई दी और कहा, "तुम तो मेरा शौक जानते हो। यह तो है नहीं कि राशन कार्ड पर किताबें मिलने के कारण ही खरीदने आया हूं। पुराना शौकिया हूं।"

उसके दिल में पता नहीं क्या आया कि उसने एक फटी पुरानी पांडुलिपि मेरे हाथ पकड़ा दी और बोला, "बाबूजी, इसे ले जाइए। बहुत कीमती चीज है, पर अब तो राशन के कारण स्टाक नहीं कर सकता।"

वह संस्कृत की एक दुर्लभ पांडुलिपि थी। उसमें चार हजार वर्ष पूर्व के [illegible] संस्मरण हैं। एक विद्वान लेखक ने समुद्र पार कई देशों का भ्रमण किया था। [illegible] देश द्वारा गरीबी दूर करने की बहु[illegible]

योजना का वृत्तांत भी है।

आज हमारे देश में भी गरीबी हटाने का महा अभियान चल रहा है। मैं उस पांडुलिपि के कुछ अंश आपकी उत्सुकता को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत कर रहा हूं :

पंडितजी लिखते हैं कि मैं चार समुद्रपार करके एक बड़े देश में पहुंच गया। वहां एक नेकदिल राजा था। जनता भी राजा की भक्त थी। वहां गरीबी बहुत थी। अमीर और गरीब में बड़ी विषमता थी।

जनता में असंतोष बढ़ता गया। धीरे-धीरे राजा के प्रति जनता की भक्ति कम होने लगी थी। असंतोष की आग भड़कने लगी थी।

जनता की दिक्कतें बढ़ती गयीं। महंगाई बढ़ने लगी। पांच लाख लोगों ने हाथ में तख्तियां उठाये राजधानी की सड़कों पर एक प्रदर्शन किया। वे राजा के महल के सामने तख्तियां लिये खड़े रहे। तख्तियों पर आलू, चीनी, घी, गेहूं और चावल के भाव लिखे हुए थे।

महल में बैठे हुए राजा ने एक दूरबीन से प्रदर्शन को देखा।

"इनके हाथों में तख्तियां हैं ?" राजा ने मंत्री से पूछा।

"हां, सरकार, तख्तियों पर भाव लिखे हैं।"

"बाजार जाकर ये लोग चीजें खरीद क्यों नहीं लेते ?"

"सरकार, ये गरीब आदमी हैं। इतनी महंगी चीजें नहीं खरीद सकते हैं।"

राजा नेकदिल आदमी था तुरंत बोला, "मंत्री, मेरे राज्य से गरीबी दूर हटा दो। इतना बड़ा प्रदर्शन बड़ा खतरनाक है। महल के सामने ऐसे प्रदर्शन नहीं होने चाहिए।"

राजा के एक हरकारे ने महल के ऊपर से राजा की घोषणा पढ़कर सुनायी।

"देश में गरीबी दूर कर दी जाएगी। जनता के दुश्मन जनता में ही बैठे हैं। महल में उनके परम पूज्य राजा विराजमान हैं। उनमें पूरी आस्था रखो।"

राजा की जय-जयकार करती जनता खुशी-खुशी घर चली गयी। राजा की

शाहजहाँ के प्रेम की अमर यादगार...

ताजमहल के सौन्दर्य को नष्ट किया जा रहा है

ताजमहल की ही नहीं, देश के सभी स्मारकों की यही करुण कहानी है — पत्थर इत्यादि से खरोंचे भद्दे निशान उनके सौन्दर्य को नष्ट कर रहे हैं।

कलाकार की छैनी ने वर्षों की साधना के बाद निर्विकार पत्थर को रूप दिया, शिल्पकार ने अपनी आत्मा को इनके कण-कण में उड़ेला, अपनी जवानी तथा बुढ़ापा इन पर न्यौछावर किया। तब कहीं जाकर मुमताज महल का मजार ताजमहल कहलाया।

लेकिन आज उसी महान कला को नष्ट किया जा रहा है। सौन्दर्य के दुश्मन सुन्दर से सुन्दर स्मारकों पर अपने नाम की नक्काशी [illegible] बाग-बगीचों को उजाड़ते हैं और नदी व समुद्र तटों को कूड़े-करकट से [illegible] पंजार बना देते हैं।

यही सुन्दर स्मारक, महकते बाग-बगीचे और सुनहले नदी-समुद्र तट हमारी राष्ट्रीय धरोहर का महत्वपूर्ण अंग हैं। इनके आकर्षण से खिंच कर पर्यटक हमारे देश की यात्रा करते हैं, हमारे लिये विदेशी मुद्रा लाते हैं और अनेक भारतवासियों के लिये रोजगार का साधन हैं। अपनी महान कला को अत्याचार और संहार से बचाइये। युवा पीढ़ी में इसके प्रति गौरव की भावना जागृत कीजिये।

अपनी विरासत को नष्ट होने से बचाइये — आपके देखते देखते कहीं यह लुप्त न हो जाए

भारत पर्यटन विकास निगम द्वारा भारत सरकार के पर्यटन विभाग की ओर से जारी किया गया।

ASP/ITDC-3/75

घोषणा ने जनता का मन मोह लिया था।

राजा की नीयत साफ थी। मंत्रियों को तुरंत हुक्म दिया कि गरीबी हटाने की योजना तैयार की जाए।

बूढ़े मंत्री ने राजा के सामने अपनी योजना रखी, "राज्य के खर्च में कमी कर दी जाए। मंत्रियों और नवाबों की तनख्वाहें कम कर दी जाएं। फौजों पर खर्च कम किया जाए। उत्पादन बढ़ाने के लिए जनता के सभी वर्गों के साथ सद्भावना-पूर्ण वातावरण तैयार किया जाए।"

दूसरे सभी मंत्री इस योजना से बहुत क्रुद्ध हुए। राजा को योजना पसंद आ गयी थी। सभी मंत्री बड़े दुखी हुए और उन्होंने राजा की रानी को अपने साथ कर लिया।

रात को जब रानी सात बार सुगंधित जल से स्नान कर चौंसठ श्रृंगार करके राजा के पास पहुंची तो उसने मुसकराकर कहा, "सुना है कि अब आप किसी कुटिया में रहेंगे। हमारे सारे सोने के गहने खजाने में चले जाएंगे।"

"यह क्यों होगा?" राजा ने पूछा।

"आपके मंत्री की तो यही योजना है।" रानी ने विस्तार से मंत्री की योजना की धज्जियां उड़ा दीं। राजा ने उसी समय अपने सेनापति को बुलाकर बूढ़े मंत्री को कारावास में डालने का हुक्म दे दिया।

अन्य मंत्रियों की बन आयी थी। एक सनकी बूढ़े से उन्हें छुट्टी मिल गयी थी। अब गरीबी दूर करने के लिए नयी योजना राजा के मंत्रियों ने तैयार की। उस योजना का पहला चरण यह था।

गांव-गांव, शहर-शहर मुनादी कर दी गयी, "हर आदमी कतार लगाकर खड़ा हो जाए। हर आदमी को काम कम करना चाहिए। चाहे वह मिल में काम करता हो या खेत में। यदि कोई आदत से मजबूर हो काम करे तो उसे आधा उत्पादन करना चाहिए। देश में गरीबी दूर करने की योजना शुरू हो गयी है।"

योजना का पहला चरण पूरे देश में जोर-शोर से शुरू हो गया था। देश में हड़तालें और 'बंद' शुरू हो गये थे। उत्पादन कम और महंगाई बढ़ गयी थी। कीमतें आसमान छूने लगी थीं। लोग कतार लगाकर खड़े हो गये।

जनता राजा की सलाह का पालन पूरी श्रद्धा से करने लगी। जनता की सोयी हुई इच्छाएं जाग उठी थीं कि गरीबी दूर होगी। अमीर-गरीब समान हो जाएंगे।

राजा को जब महंगाई का पता चला तो मंत्रियों को बुलाया। राजा पहले प्रदर्शन से ही बहुत घबराया हुआ था।

"महंगाई तो बढ़ रही है! तुम्हारी गरीबी दूर करने की योजना का क्या हुआ?"

मंत्री ने हाथ जोड़कर कहा, "सरकार, अपनी योजना ठीक चल रही है। जनता आपके गुण गा रही है।"

राजा मुसकराये, "यहां महल के सामने प्रदर्शन नहीं होना चाहिए। मेरे लिए जनता के मन में शुभ-भावनाएं हर

हालत में बनी रहे।"

मंत्री ने हाथ जोड़कर कहा, "सरकार आप चिंता न करें। आज ही दूत रिपोर्ट लेकर आये हैं। सारे देश की जनता बड़ी व्यस्त हो गयी है। उत्पादन कम कर दिया है। जनता अब कतारों में खड़ी होकर सुबह दूध लेती है। दोपहर को मिट्टी के तेल, घी या गेहूं के लिए कतार में खड़ी रहती है। हम अमीर और गरीब को बराबर बांट रहे हैं। अब लोगों को प्रदर्शन करने की फुरसत नहीं है। दूसरे, अब जिस भाव भी जनता को कुछ मिले, उसे शिकायत नहीं है। जनता उलझ गयी है।"

दूसरे मंत्री बोले, "सरकार, जनता में एक नयी क्रांति लानी है। हमें उसे बदलना है। जनता में खाने के पुराने रिवाज हैं। बेसन की पकौड़ियां, गुलाब जामुन, मक्खन और डबल रोटी, समोसे, पूड़ी और कचौड़ी, इडली और दोसा; इनका खाना हम धीरे-धीरे बंद करा देंगे। जनता स्वयं ही खाना छोड़ देगी। हमारी योजना ही ऐसी है। सरकार, अब जनता कपड़े पहनती है तरह-तरह के, परंतु आदमी तो नंगा पैदा होता है।"

राजा बड़े गौर से मंत्री की बातें सुन रहे थे। वह बोले, "यह कैसे होगा?"

"सरकार, योजना के अनुसार आधे कारखाने बंद हो गये हैं। खेतों में भी लोग कम काम करते हैं। गेहूं जो पैदा होता है, उसे हमने गोदामों में भरकर रख दिया है। हमारे लोग मालिकों और मजदूरों में झगड़ा कराने हर जगह पहुंच रहे हैं।"

देश अब लाइनें लगाकर खड़ा हो गया था। मकानों की समस्या हल हो गयी थी। सभी लोग लाइन में लगे रहते। तीसरे दिन राशन की बारी आती और वहीं बनाकर और उसे खाकर खड़े हो जाते थे।

योजना का अगला पड़ाव भी आ गया। सब का पैसा धीरे-धीरे खत्म हो रहा था। अमीर और गरीब का भेद मिटता जा रहा था। शुद्ध वायु के सेवन का कार्यक्रम जोर से चलाया गया। 'ठंडा, गुनगुना और गरम जल पीने से आयु बढ़ती है। जीव का असली संतुलित भोजन शुद्ध वायु और पानी है। उसका सही प्रयोग सबको आना चाहिए। जिह्वा का स्वाद ही गरीबी पैदा करता है। अपनी जीभ को काबू में रखिए। गरीबी दूर हो गयी है। अपने राजा की जय बोलो।' राजा के हरकारे गांव-गांव शहर-शहर पहुंचकर इस संदेश को जनता तक पहुंचा रहे थे।

यह सब उस पांडुलिपि में हमारे विद्वान ने चार हजार वर्ष पूर्व चार समुद्रों के पार के देश के बारे में लिखा है। उस पांडुलिपि के बहुत-से पृष्ठ फट गये हैं। उस देश का क्या हुआ? वायु-सेवन और पानी पीने के प्रयोग कहां तक सफल हुए! इतिहास में इसका कुछ पता नहीं चलता।

—एच–३५५, डी. डी. ए. नारायणा,
नयी दिल्ली-११००२८

इतिहास का खोजी कथा-शिल्पी

• वियोगी हरि

संयोग की ही बात समझिए कि जिन प्रख्यात साहित्यकारों के साथ सद्-भाग्य से मेरा संपर्क हुआ, उनके कृतित्व की अपेक्षा उनके व्यक्तित्व ने उनकी ओर मुझे अधिक आकृष्ट किया है। वृन्दावन-लालजी के दो-तीन उपन्यास अवश्य पढ़े हैं और उनकी बार-बार प्रशंसा की है, किंतु उनके व्यक्तित्व से ही मैं अधिक प्रभावित रहा। ऐसा क्यों? कदाचित कारण गिनाये जा सकते हैं कि वे बुंदेल-खंडवासी थे और मैं भी हूं, फिर उनका रहन-सहन बड़ा सरल और सहज था। इसलिए भी शायद सौहार्द हमारा अधिक बढ़ गया हो। किंतु एक सफल लेखक के अलावा उनमें और भी गुण थे। जैसे, वे अच्छे संगीतज्ञ थे, शौकिया पहलवान थे, शिकारी थे, कृषक थे और वकील थे। लेकिन इन सबसे बढ़कर उनकी मिलन-सारी और आत्मीयता ने मुझे तथा अन्य अनेक मित्रों को प्रभावित किया था। जब-जब मैं झांसी में उनसे मिला, साहित्य पर चर्चा प्रायः नहीं हुई। चर्चा हमेशा घरेलू रही। बुंदेलखंडी भोजन बड़े उमंग से वे तैयार कराते और हंसते-हंसते चौके में हम लोग भोजन करने बैठ जाते थे। एक बार मेरे परममित्र स्व. धोत्रेजी ने भी वर्माजी का प्रेमपूर्ण आतिथ्य ग्रहण किया था। खाने के बाद बैठक जमती थी। अनेक प्रसंगों पर चर्चा होती और उस्ताद आदिल खां को बुलाकर उनके मधुर-कंठ से शास्त्रीय संगीत हम लोग सुनते थे। उस्ताद को वर्माजी आधुनिक 'तानसेन' कहा करते थे। स्वयं भी वे सितार लेकर बैठ जाते थे।

जब भी कभी वर्माजी दिल्ली आते, मेरे निवास-स्थान पर अवश्य आकर मिलते थे। मेरठ का गुड़ उनको बहुत

डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा

पसंद था। भोजन के साथ गुड़ अवश्य होता था और झांसी भी उसे अपने साथ ले जाते थे। घर के बच्चों के साथ भी उनका घरेलू स्नेह रहता था। आते ही बहू को आदेश देते थे कि भोजन में अमुक चीज जरूर तैयार करायी जाए।

बुन्देलखंड के शब्दों और मुहावरों को अपने उपन्यासों में इस खूबी के साथ वर्माजी ने बिठाया है कि दूसरे प्रांतवालों को भी वे बड़े मधुर लगते हैं। तिथि-त्योहारों, रीति-रिवाजों और गांवों के जीवन का सूक्ष्म और गहरा अध्ययन था उनका। बच्चों को सहज ही अपनी ओर वे खींच लेते थे उनकी मन-पसंद कहानियां और चुटकले सुना-सुनाकर।

वर्माजी के केवल तीन पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं। नीचे ६ दिसंबर, १९५० का पत्र मैं उद्धृत कर रहा हूं, जिसमें उनके अंतर की वेदना व्यक्त होती है राष्ट्रभाषा हिंदी पर निरंतर कुठाराघात पड़ते देखकर :

प्रिय हरिजी,

सप्रेम नमस्कार।

२६ नवम्बर का कृपापत्र अब मिला।

देवगढ़, दुधई इत्यादि की यात्रा मैंने जनवरी के लिए स्थगित कर दी है। संभव है, तब आपको अवकाश मिल जाए। दो लोककथाओं के आधार पर एक सामाजिक उपन्यास, 'फूलों की सेज' लिखा है। प्राण उसका लोककथाएं हैं, पूरा कलेवर तर्क और मनोविज्ञान की मिट्टी से बनाने का प्रयत्न मेरा है। प्राण-तत्व है उसका 'श्रम का गौरव'। चाहता हूं, इसका भी फिल्म बने। जब देखता हूं कि गंदे और सड़ियल फिल्म उर्दू की बहारों को हिंदी का नाम देकर समाज और साहित्य की जड़ों के नीचे और ऊपर कुल्हाड़े चलाये जा रहे हैं, तब कभी-कभी कांप जाता हूं। क्या हिंदी वास्तव में राष्ट्रभाषा इन और उन कुठाराघातों के निरंतर पड़ते हुए भी कभी हो पाएगी? जब तक साधारण जनता के कानों ने हिंदी के शब्दों को नहीं अपना पाया, तब तक आप और मैं कितना कर पाएंगे? जब दिल्ली में आपसे मिलूंगा, बात करूंगा।

'अक्षर अनन्य' की सामग्री अभी तक मेरे हाथ नहीं आयी है। छतरपुर के श्री अम्बाप्रसाद को लिखा था। उन्होंने उत्तर दिया था कि साथ लिये आ रहा हूं। अभी तक नहीं आये हैं। फिर लिखा है। मेरे पास जैसे ही सामग्री आयी अविलंब भेजूंगा।

मैं स्वस्थ हूं।

आशा है कि आप सदावत् स्वस्थ और प्रसन्न होंगे।

आपका ही

वृन्दावनलाल वर्मा

अपने लिखे उच्च कोटि के इतिहास-प्रधान उपन्यासों पर वर्माजी को कुछ भी गर्व नहीं था। उनके मित्र जब उनकी कृतियों की प्रशंसा करते, तो उनका हृदय कृतज्ञता से भर जाता था। गुणग्राहकता उनमें इतनी अधिक थी कि नौसिखिए लेखक उनकी तरफ़ सहज ही खिंच जाते

थे और उनको असीम उत्साह मिलता था। नीचे जो पत्र उद्धृत कर रहा हूं, उस पर न जाने क्यों तारीख देना वे भूल गये थे।

प्रिय हरिजी,

सप्रेम वंदे।

२५ दिसम्बर का कृपापत्र ९-१० दिन के उपरांत मिला। हमारे साभाजिक जीवन की अवस्था पर डाकघर भी झाड़ूं मार गया। एक नहीं, ऐसे अनेक उदाहरण सामने आ रहे हैं।

आपने 'लक्ष्मी बाई' उपन्यास के संबंध में जो कुछ लिखा है वह मेरे लिए बड़ा भारी पुरस्कार है। आपकी और डॉ. अमरनाथ झा की सम्मतियों ने मुझको जो आनंद प्रदान किया, वह लाखों रुपये पाने पर भी न होता, सच मानिए, इतने रुपयों का मैं क्या करता। उसके तय करने के लिए ही काफी समय चाहिए था।

आपके पत्र को अपनी निधि में रख लिया है। वकालत को छोड़े छह-सात वर्ष हो गये, परंतु अभी तक 'वकील' कहलाता हूं और इस शब्द को त्यागता भी नहीं हूं।

पैसे तो पास में नहीं हैं, परंतु मस्ती बहुत आ गयी है। चिट्ठी लिखते समय लग रहा है हम दोनों राजगढ़ के बंगलों में केन के किनारे हंसते-खिलखिलाते हुए ही गंभीर समस्याओं पर कुछ कह रहे हों।

आप उस दिन झांसी स्टेशन पर मिले, फिर हम लोग मिल ही न सके। ९-१ को आपके पास पहुंचूंगा और डट-कर खाऊंगा। दावा तो मेरा है खाने का।

मैं बंबई न पहुंच सका। हाल में एक एकांकी 'काश्मीर का कोटा' लिखा है। उसका अभिनय झांसी में २८-१२ को था। मुझे उसके लिए रहना पड़ा।

छपने पर आपके पास भेजूंगा।

आपको उत्तर बिलंब से इसलिए भेज रहा हूं कि आप बंबई से आजकल में आये होंगे।

स्नेहाकांक्षी
वृन्दावनलाल वर्मा

११ जुलाई, १९४९ के पत्र में उन्होंने राष्ट्र-भाषा हिंदी के प्रति अपनी असंदिग्ध आशा व्यक्त की थी। लिखा था :

"हिंदी के राष्ट्रभाषा (केंद्रीय) होने पर मुझको तो कोई संदेह नहीं जान पड़ता। जब इस भाषा और देवनागरी अक्षरों का समर्थक अधिकारी-वर्ग में कोई भी नहीं था, तब भी यह आगे निकल आयी। अब तो—अभी न हो सका तो आगे सही—इसको कोई रोक नहीं सकता।

वर्माजी का हिंदी-जगत में सदा एक विशिष्ट स्थान तो रहेगा ही किंतु मेरे हृदय पर उनके व्यक्तित्व का जो चित्र सहज ही अंकित हो गया है उसकी रेखाएं और उसके रंग कभी मिटने और पुछनेवाले नहीं।

—एफ-१३/२, माडल टाउन, दिल्ली-९

यदि तुम किसी मूर्ख को देखने से बचना चाहते हो तो सबसे पहले अपने सामने का दर्पण तोड़ दो। —रेबेल्ज

ब्रजेशकुमार शुक्ल, भोपाल : यदि कोई व्यक्ति टेलीफोन पर किसी को परेशान करता है, तो उस व्यक्ति को पकड़ने या उसका पता लगाने के लिए क्या व्यवस्था है ?

परेशान करने के लिए किये जाने वाले टेलीफोन-काल की शिकायत टेलीफोन एक्सचेंज में की जा सकती है, लेकिन यह तभी संभव है जब शिकायत किसी दूसरे टेलीफोन से की जाए और जिस टेलीफोन पर परेशान किया जा रहा है, उसे तब तक परेशान करनेवाले से जोड़े रखा जाए। इसके लिए एक व्यवस्था यह की जा सकती है कि 'कालिंग पार्टी होल्ड सर्किट' के स्थान पर 'काल्ड पार्टी होल्ड सर्किट' कर दिया जाए, यानी टेलीफोन को बंद करना टेलीफोन करनेवाले के हाथ में न होकर उसके हाथ में हो, जिसे टेलीफोन किया जाए। लेकिन सबसे उत्तम, किंतु बहुत महंगी, व्यवस्था यह है कि टेलीफोन चालू भी रहे और एक बटन दबाकर एक्सचेंज को सूचित भी कर दिया जाये कि इस समय टेलीफोन पर जो बातचीत हो रही है, किसी अवांछित व्यक्ति के द्वारा की जा रही है और एक्सचेंज यह पता लगाये कि वह व्यक्ति कहां से फोन कर रहा है। भारत में यह व्यवस्था केवल गुप्त सेवाओं या कुछ अत्यंत महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के टेलीफोनों के लिए है, जिन्हें 'वेरी-वेरी इंपोर्टेण्ट पर्सन' कहा जाता है। आम जनता को यह सुविधा उपलब्ध नहीं है।

नारायणदास हैड़ा, खिरकिया (म. प्र.) : अंधविश्वास के बारे में वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्या है ?

अंधविश्वास तर्कहीन ढंग से स्वीकार कर ली जानेवाली मान्यताओं को कहते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अंधविश्वास उन झूठे विश्वासों को कहते हैं, जो वास्तविक घटनाओं के बीच काल्पनिक संबंधों पर आधारित होते हैं (जैसे बिल्ली रास्ता काट गयी, इसलिए काम बिगड़ गया) और जिनकी सच्चाई तर्क और विवेक के आधार पर प्रमाणित नहीं की जा सकती।
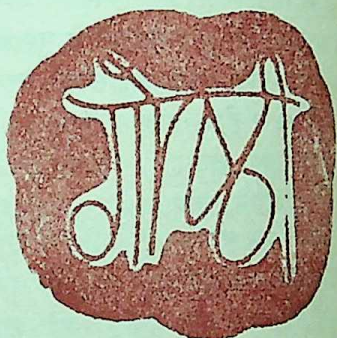
अंधविश्वास उन विश्वासों को भी कहते हैं, जिनके आधार पर उन काल्पनिक शक्तियों का अस्तित्व मान लिया जाता है, जिनका कोई अस्तित्व होता ही नहीं, जैसे भूत-प्रेत, नजर लगना आदि। अंधविश्वासों के बारे में सबसे मजेदार बात यह है कि प्रत्येक धर्म के कट्टर अनुयायी अन्य धर्मों के विश्वासों, रूढ़ियों, रीतियों और धार्मिक अनुष्ठानों को अंधविश्वास मानते हैं और अपने धर्म की उन्हीं चीजों

विश्वास करते हैं। यही कारण है कि नास्तिक लोग सभी धर्मों को अंधविश्वास मानते हैं।

अनीता चंद्रा, जयपुर :'फ्लेवर' स्वाद को कहते हैं या गंध को?

फ्लेवर स्वाद और गंध के मिश्रण को कहते हैं। स्वाद और गंध दोनों के एक साथ प्राप्त होने से आनेवाला आनंद ही फ्लेवर है। यह तब और बढ़ जाता है, जब किसी खाद्य अथवा पेय पदार्थ के वाष्पशील होने पर उसकी गंध बाहर से भी नाक में पहुंचती हो और मुंह के अंदर जाकर भी घ्राणेंद्रिय तक पहुंचती रहे। यही कारण है कि गरम खाना ठंडे खाने से ज्यादा अच्छा लगता है।

निर्मल महतो, रानीगंज (पूर्णिया) तथा विनोद जैन (जयपुर) : स्वप्न आने का क्या कारण है? हम इन्हें कैसे देखते हैं? इनका शरीर से क्या संबंध है?

स्वप्न का संबंध मनुष्य के अवचेतन मस्तिष्क से है। मस्तिष्क सोते समय भी सक्रिय रहता है, किन्तु सोते समय मनुष्य की बिंबात्मक बोधशक्ति कल्पनाशीलता में परिवर्तित हो जाती है और मनुष्य सोते-सोते यथार्थ-जैसे प्रतीत होनेवाले काल्पनिक बिंबों को अपनी कल्पना में 'देखने' लगता है। यहां 'देखने' का अभिप्राय आंखों से देखना नहीं है, क्योंकि वे बिंब न तो यथार्थ होते हैं और न (इसीलिए) उन्हें आंखों से देखा जा सकता है। कल्पनाशील व्यक्ति जागृत अवस्था में भी अपनी चेतना में असंख्य काल्पनिक बिंबों का 'निर्माण' करते रहते हैं और वे बिंब देखी-अनदेखी दोनों प्रकार की चीजों के हो सकते हैं। उदाहरण के लिए जागृत अवस्था में जब हम किसी व्यक्ति या वस्तु को याद करते हैं, तो वह वस्तु सामने न होने पर भी उसका बिंब हमारे मन में आ जाता है। स्वप्न ऐसे ही बिंब हैं। स्वप्न में देखी गयी ऊटपटांग चीजों को समझने के लिए एक और उदाहरण दिया जा सकता है : जब हम किसी अपरिचित व्यक्ति, वस्तु या स्थान का विवरण सुनते हैं तो अपनी कल्पना के आधार पर उस व्यक्ति, वस्तु या स्थान का एक काल्पनिक बिंब अपने मन में बना लेते हैं। ऐसा बिंब धुंधला और अस्पष्ट हो सकता है, उसमें विचित्रताएं भी हो सकती हैं, किंतु वह मनुष्य के यथार्थ ज्ञान पर ही आधारित होता है। इसी प्रकार स्वप्न चाहे जितने विचित्र और अस्पष्ट हों, यथार्थ बिंबों से उनका थोड़ा-बहुत साम्य अवश्य होता है। स्वप्न के विषय में ध्यान देने की बात यह है कि जब हम गहरी नींद में होते हैं, हमें सपने नहीं आते। इसका मतलब यह है कि स्वप्न हम तभी देखते हैं जब सोते हुए भी हमारी चेतना जागृत होती है। उस जागृत चेतना में विचार, कल्पना और शारीरिक वास-नाओं (इच्छाओं) का मिश्रण होता है और इनमें से जो भी चीज प्रमुख हो जाती है, स्वप्न-बिंब वैसे ही बनने लगते हैं।

शारीरिक वासनाओं के उत्तेजित होने पर भूख, प्यास, कामेच्छा आदि से संबंधित स्वप्न आते हैं और इंद्रियों का संबंध मस्तिष्क से होने के कारण इंद्रियां उत्तेजित हो सकती हैं। स्वप्न देखते-देखते ठंडी सांसें भरना, रोने या हंसने लगना, हाथ-पैर चलाने लगना या स्वप्नदोष हो जाना इसीलिए संभव होता है।

वली मोहम्मद कुरैशी, बाड़मेर (राजस्थान) : कभी-कभी चेहरे पर काले-मटमैले धब्बे उभर आते हैं, ये शारीरिक कारणों से होते हैं या मानसिक कारणों से?

शारीरिक कारणों से, जैसे आहार की कमी, आवश्यक पोषक पदार्थों का न मिलना, अत्यधिक काम या नींद का अभाव, अथवा रक्त या त्वचा संबंधी कोई रोग।

अरुण गांधी, नयी दिल्ली : वैशेषिक दर्शन में गुण और संख्या संबंधी धारणाएं क्या हैं?

वैशेषिक दर्शन के अनुसार जगत के मूल में छह तत्त्व माने जाते हैं—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय। गुण द्रव्य में स्थित माने जाते हैं। कुछ गुण सामान्य तथा कुछ विशेष होते हैं। सामान्य गुण सभी द्रव्यों में रहते हैं और विशेष गुण विभिन्न द्रव्यों की विशेषता प्रकट करते हैं। ये गुण २४ माने गये हैं—रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म और संस्कार। संख्या वह गुण है, जिसके कारण वस्तुओं की गिनती की जाती है, जैसे—एक, दो, तीन आदि। लेकिन वैशेषिक दर्शन के अनुसार 'एक' ही ऐसी संख्या है, जिसे गुण माना जाता है, क्योंकि यही संख्या प्रत्येक वस्तु में पायी जाती है। दो, तीन, चार आदि **संख्याएं** किसी वस्तु का गुण नहीं है। इनका व्यवहार मूल संख्या 'एक' के ही आधार पर होता है, अर्थात जब एक संख्यावाली अनेक वस्तुएं होती हैं, तब अपेक्षा-बुद्धि से दो, तीन, चार आदि संख्याओं का व्यवहार होने लगता है।

भागो, भागो, कपड़े पहनो,
मानव-विज्ञानी आ रहे हैं!

चलते-चलते एक प्रश्न और

गोपालदास माहेश्वरी, खिरकिया (म. प्र.) यदि आंखें दो की बजाय एक होतीं तो?

तो कौए को लेकर प्रचलित किंवदंती का कोई अर्थ न होता! —बिंदु [illegible]

मेरे एकांत क्षणों के ईमानदार साथी

• मंजुश्री

मैं कितनी भी उनकी प्रतीक्षा करूं, अब वे लौटनेवाले नहीं हैं। इस बार वे बनारस, बंबई या दिल्ली नहीं गये, बल्कि अपनी ही पसंद की दुनिया में चले गये हैं। यों कोई भी यहां हमेशा रहने के लिए नहीं आता। उसे एक-न-एक दिन उस दुनिया में जाना ही पड़ता है। यह चरम सत्य है कि मनुष्य-जीवन नश्वर है, फिर भी मानव-मन के साथ अनेक संवेग जुड़े हुए हैं, मैं भी उनसे अलग कैसे रह सकती हूं? मैं यह कैसे मान लूं कि जिसे मैंने अपने जन्म से ही बाबा नाम से जाना था, वह व्यक्ति अब मेरे साथ नहीं रहा!

बाबा मेरे एकमात्र घनिष्ठ मित्र थे। उनके सामने मेरी सारी मुश्किलें हल हो जाती थीं। उनके साथ मेरी एक-दो बातें नहीं जुड़ी हैं जो थोड़े में कह दूं। वास्तव में सारी उम्र कहती रहूं, फिर भी खत्म नहीं होने की।

बाबा हम सबकी नस-नस पहचानते थे। किस क्षण हम क्या चाह या सोच रहे हैं, इसको वे समझ लेते थे। पिछली घटनाएं खुली किताब के सफों की तरह सामने उभर जाती हैं—सात-आठ वर्ष की एक लड़की रात की ट्रेन से अपने पिता के साथ कहीं जा रही है। पिता बातें करते हैं, "बेटा, एक बगीचे में हमारा एक छोटा-सा बंगला होगा, जिसमें हमारा पूरा कुनबा रहेगा। उस बगीचे में हर तरह के पेड़ होंगे। सड़क के दोनों ओर युकिलिप्टस और शाल के पेड़ों की कतार होगी।" लड़की के मन में घर का ऐसा ही सपना तिरता रहा। एक दिन सपना पूरा भी हो गया।

पहाड़ों से घिरे खूबसूरत शहर रांची के पास आखिर एक गांव बाबा के मन को भा गया। शहर से आठ मील दूर जमीन खरीदी गयी। एक बड़े बगीचे में एक छोटा-सा घर बनवाया गया। अपने ही हाथों से उन्होंने ढेर-सारे पेड़ लगाये। एक-एक गाछ को वे सुबह-शाम सहलाया करते और बेटी को समझाया करते, "इनकी अवहेलना कभी मत करना। तुम्हारे एकांत क्षणों के एकमात्र ये पेड़ ही तुम्हारे साथी होंगे।"

एक और चित्र उभरता है — लड़की कुछ बड़ी हो चुकी है। गरमी के दिन हैं। चटाई पर लुंगी लपेटे नंगे वदन बैठे पिता बेटी को प्रूफ देखना सिखा रहे हैं। अचानक कहते हैं, "तुम मेरे संघर्षों की साक्षी हो। इसलिए मेरे अधूरे कामों को तुम्हें हर हालत में पूरा करना है।" पिता ने उसे यह भी बताया कि बचपन में उसे बिस्तर कभी नसीब नहीं हुआ था, वह अखबारों पर ही सुलायी जाती थी।

शायद यही कारण है कि आज हम सभी भाई-बहन हर तरह की परिस्थितियों के साथ टक्कर लेने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। यहां यह बताने की आवश्यकता नहीं कि लेखकों को प्रायः संघर्ष का जीवन ही बिताना पड़ता है। बाबा, इसके अपवाद नहीं थे। उन्हें अपनी बाल्यावस्था में जो नहीं मिला, वह सब कुछ उन्होंने अपनी संतानों को देने का प्रयत्न किया। जिन व्यक्तियों से उन्हें कटु अनुभव हुए थे उनके प्रति भी उन्होंने सदैव सद्भावना ही प्रदर्शित की। बाबा के स्नेह-मिश्रित शासन में हममें से किसी को भी यह साहस नहीं हो सकता था कि उन व्यक्तियों का हम असम्मान करते।

घर का सुख उन्होंने विवाह के बाद ही जाना था। उसके पूर्व शायद नौ वर्ष की अवस्था से ही वे घर से बाहर रहने लगे थे। विद्वान पिता के कठोर शासन ने उन्हें कभी यह महसूस ही नहीं होने दिया कि पिता के स्नेह का विशाल बरगद कैसा होता है? तभी उन्होंने सोच लिया था कि अपने बच्चों को वे ऐसी अनुभूति कभी नहीं होने देंगे कि बच्चों के मन में पिता का आतंक बैठ जाए।

बाबा हम लोगों को केवल स्नेह ही नहीं देते रहे, हम पर उनका कठोर शासन भी था। बाबा के किसी भी आदेश को हम ब्रह्मवाक्य ही मानते थे। अंत तक हममें से किसी को भी उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने का साहस नहीं हुआ। इसका मतलब यह नहीं कि वे किसी गलत बात को भी आंखें बंदकर मान लेने के लिए कहते थे।

सन '६३ के नवंबर मास तक (जबकि उन्हें पहला और दूसरा तीव्र दिल का दौरा एक साथ हुआ।) हर रविवार को वे हम भाई-बहनों को एकसाथ बैठाकर हमारी समस्याओं और हमारे ही द्वारा उनके निदान, घर की व्यवस्था, साहित्यिक विषयों आदि पर चर्चा करते थे। अतः बचपन से ही हममें किसी समस्या पर स्वतंत्र रूप से निर्णय करने की समझ पैदा हो गयी थी। कुछ बड़ी होने पर तो उनसे कई विषयों पर बहस ही हो जाती थी। हमें ऐसा मौका वे जान-बूझकर ही देते थे, ताकि किसी समस्या पर हम निर्भीक होकर उचित निर्णय ले सकें। वे जीवन में मूल सिद्धांतों पर कभी नहीं झुके और न हमें ही झुकना सिखाया। व्यक्तिगत जीवन में मैं जहां अकसर उनसे एकमत हुआ करती थी, वहीं ज्यों-ज्यों मुझमें कुछ समझ

आती गयी, उनके साहित्यिक विचारों से मेरा मतभेद भी हो जाता था।

बाबा का यह सूत्रवाक्य भी मुझे सदैव स्मरण रहेगा कि 'भावुकता से हमेशा बचने की कोशिश करना'।

११ सितंबर, १९७३ का वह दिन भी मैं कभी नहीं भूल सकूंगी।

दो बजे के करीब फिर अस्पताल आयी। बाबा खाने बैठ चुके थे। कई दिन बाद उन्हें उस दिन का खाना पसंद आया था। कहीं नौकरी न मिल पाने के कारण मैं उदास थी। बाबा ने समझाते हुए कहा, "कठिन से कठिन घड़ी में भी घबराना नहीं चाहिए। फिर तुम तो संघर्षों से ही गढ़ी हुई हो। अब तुम्हें नौकरी की बात नहीं सोचनी है। रिसर्च की तैयारी करो। और हां, घर के लिए चावल का इंतजाम हुआ या नहीं?" अस्पताल में भी उन्हें घर की फिक्र रहती थी।

इसी बीच होमोग्लोबिन की रिपोर्ट आयी। बहुत आशाप्रद थी। बाबा के पीले चेहरे पर भी रौनक दौड़ गयी। बच्चों की तरह वे किलक उठे, "अब मैं ठीक हो गया। कल-परसों तक बच्चों के बीच होऊंगा।"

थोड़ी देर में वहां एक नाई आया और बाबा दाढ़ी बनवाने लगे। दूसरे दिन खून चढ़ाया जानेवाला था।

अगले दिन घर पर अचानक फोन की घंटी बजी। मैंने रिसीव किया। मुझे तुरंत अस्पताल बुलाया गया था। सहसा लाइन कट गयी। मैंने पुनः डायल कर २८ नंबर बेड के मरीज का हाल जानना चाहा। मैंने सुना—"मरीज नहीं रहा।" उसके बाद कुछ सुनने का होश नहीं रहा।

मां बेहोश हो गयी थीं। बाबा की पूरी देह उनकी प्रिय गेरुआ चादर से ढकी हुई थी। मैंने चेहरे पर से चादर हटा दी। दाढ़ी बनी हुई थी। चिकने, फूले हुए गालों में अब-भी थोड़ी गरमी मालूम होती थी। मैंने हलके-से चेहरे को सहलाया, धीरे-से पुकारा, कहीं नींद न खुल जाए—बाबा, आपकी 'बेटा' आयी है। सो जाइएगा तो रांची कैसे जाइएगा?

स्वर्गीय शिवचंद्र शर्मा

फिर क्या हुआ, मुझे याद नहीं। मशीन की तरह सब देखती भर रही। आज भी यही लगता है, बाबा कहीं दिल्ली या बंबई गये हैं।

—द्वारा श्रीमती पुष्पा आर्याणी,
आकाशवाणी, पटना

• अमृतलाल बेगड़
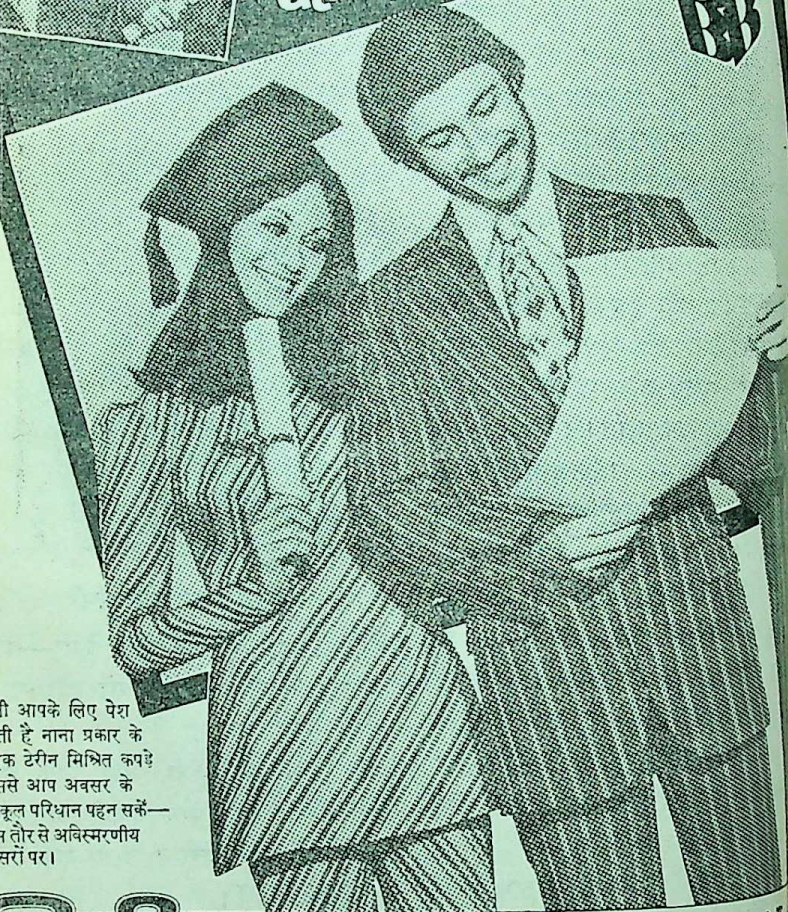
प्राचीनतम कला पुतलीखोह

दीपावली की छुट्टियों में मैं बरमान गया था। बरमान मध्यप्रदेश में नर्मदा किनारे नरसिंहपुर के निकट एक सुंदर तीर्थस्थान है। एक दिन एक स्थानीय मित्र को लेकर पास के एक गांव गया। वहां किसी गोंड राजा की एक प्राचीन गढ़ी थी। उस पर चढ़कर मैं गांव का स्केच बनाने लगा।

स्केच पूरा होने पर हम नीचे उतरे। गांव के बाहर खेरमाई तक पहुंचे ही थे कि बड़ी तेजी से आता हुआ एक पहलवान-सा जवान दिखायी दिया।

पास आते ही उसने कड़ककर पूछा, 'कौन हैं आप लोग ? कहां से आये हैं ? चलिए, आपको मालगुजार साहब बुला रहे हैं।'

मालगुजार साहब के घर के बाहर खासी भीड़ जमा हो गयी थी। उसमें वह ग्रामीण भी था, जिसने हमें गढ़ी पर स्केच करते देखा था।

अपनी कैफियत देते हुए मैंने कहा, "मैं कलाकार हूं। कला का अध्यापक भी हूं। लिखने का शौक भी है। छुट्टियों में प्रायः भ्रमण के लिए निकल पड़ता हूं। नर्मदा-तट के जन-जीवन का चित्र बनाता हूं। प्राचीन कलात्मक या ऐतिहासिक महत्त्व के स्थानों का अवलोकन भी करता हूं। इसी उद्देश्य से बरमान आया था और आज आपके गांव आया हूं।"

मालगुजार साहब उलझन में पड़ गये। कहने लगे, "आपको असुविधा हुई, लेकिन एक बार हमारे गांव में एक गलत ढंग का आदमी आ गया था, इसीलिए हमें सावधान रहना पड़ता है।"

किंतु हमें बुलाने के वास्तविक कारण का बाद में पता चला। गांव के लोगों का विश्वास है कि उस गढ़ी के बीच कहीं खजाना गड़ा हुआ है और हम उसी की टोह में आये हैं। मैं वहां 'नक्शा' जो बना रहा था!

स्थिति को संभालते हुए मालगुजार साहब ने कहा, "अभी तो हम आपकी क्या सेवा करें, लेकिन आप सर्दियों में आने का कष्ट करें तो हम आपको केरपानी ले चलेंगे। वहां पुतलीखोह नामक एक स्थान है। वहां की चट्टानों को आप यूं

ही देखेंगे, तो कुछ दिखायी नहीं देगा, लेकिन यदि आप एक कपड़ा गीला करके फेरेंगे, तो तरह-तरह की 'पुतलियां' दिखायी देने लगेंगी। ये या तो दैवी आकृतियां हैं, या प्राकृतिक। आप कलाकार हैं, आपके काम की चीज है। लेकिन अभी कीचड़ के कारण वहां जाना संभव नहीं।"

उन्हें धन्यवाद देकर वापस बरमान चल दिया। किंतु 'पुतलीखोह' नाम मेरे मन के गह्वर में जमकर बैठ गया था। उसकी

प्रायः पंद्रह मील पैदल चलकर आये थे। थकान तो थी ही, भूख भी सताने लगी थी। लेकिन पुतलीखोह का पलड़ा भारी था। एक स्थानीय जानकार को लेकर हम निराहार ही चल दिये। पुतलीखोह ऐसे दुर्गम स्थान पर है कि यदि भोजन के फेर में पड़ते, तो उसी दिन पहुंचना संभव न होता।

एक बरसाती नाले ने दो पहाड़ियों को काटकर अपना रास्ता बनाया है।
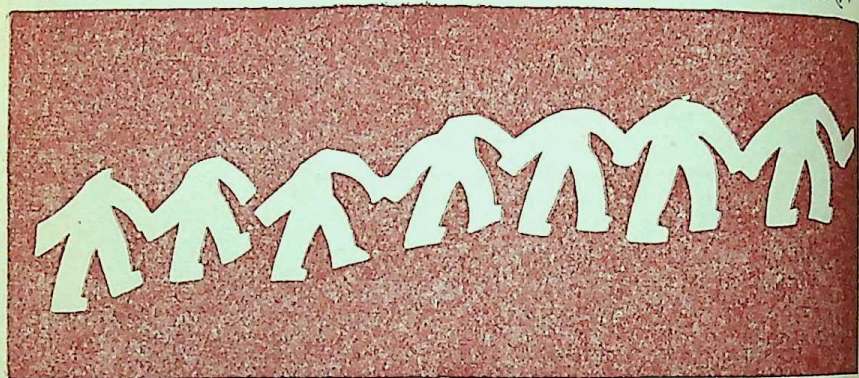
पुतलीखोह में चित्रित स्थूलकाय आकृतियां, जो सेना का एक काफिला भी हो सकती हैं

मोहनी माया ने मुझे बेचैन बना दिया। एक दिन अपने उसी साथी को लेकर बड़े भिनसारे निकल पड़ा। साथ में एक जानकार ग्रामीण को भी ले लिया था। कभी पहाड़ व जंगल में से, कभी ज्वार के हरे-भरे खेतों में से, तो कभी नर्मदा की टेढ़ी-मेढ़ी कगारों पर से होते हुए ठीक दोपहर को हम केरपानी पहुंचे।

वहां पता चला कि पुतलीखोह यहां से कोई चार मील और आगे है!

इसी नाले में पुतलीखोह है और यही नाला वहां जाने का रास्ता भी है। आगे चलकर वह बहुत संकरा हो गया है। दोनों ओर ऊंची व खड़ी कगारें हैं। बीहड़ नाले के घुमावों में बड़े-बड़े प्रस्तर खंडों पर से होते हुए हम आगे बढ़ रहे थे। कहीं छोटे-छोटे सुरम्य जल प्रपातों के बाजू से हो कर ऊपर चढ़ रहे थे। आखिर हम एक ऐसे स्थान पर आ पहुंचे, जहां नाला हठात चौड़ा हो गया है। यहां वह एकदम सपाट

चट्टानों पर से नीरव बहता है, मानो पक्के फर्श पर से बह रहा हो। नाले के एक ओर प्रायः डेढ़ सौ फुट ऊंची अर्द्ध-चंद्राकार खड़ी कगार है। समूची कगार आड़ी पर्तदार चट्टानों की बनी है। यही पुतलीखोह है।

हमारे ग्रामीण साथी ने हाथ जोड़कर कहा, "देवी, दर्शन दो। बहुत दूर से परदेसी आये हैं। इन्हें दर्शन दो, दर्शन दो!"

यहां के निवासी इसे देवी का स्थान मानते हैं। प्रसाद लेकर ही आते हैं।

नाले के पानी में डुबोकर उसने अपना अंगोछा गीला किया। फिर खड़ी कगार की आड़ी चट्टानों की पर्तों को अपलक देखता रहा। इसके बाद एक जगह उसने गीला अंगोछा फेरना शुरू किया।

मैं विस्मय-विमुग्ध देखता रहा। चट्टान के गीले होते ही उसमें सचमुच अनेक आकृतियां उभरने लगीं।

मैंने पास जाकर देखा, तो मेरी खुशी का ठिकाना न रहा। ये न तो प्राकृतिक आकृतियां थीं, न देवी-देवताओं की प्रतिमाएं (जिसके कारण इसका नाम 'पुतलीखोह' पड़ा), ये तो थे आज से कई हजार वर्ष पूर्व गुहा-मानव द्वारा बनाये गये शैल-चित्र!

धूप, वर्षा और हवा के कारण चित्र धूमिल पड़ गये हैं। लेकिन जब इन पर गीला कपड़ा फेरा जाता है, तो रंग में चटक आ जाती है। ये चित्र चट्टानों की परतों की मुटाई पर बने हैं। मुटाई अधिक से अधिक आठ या नौ इंच है। अतः चित्रों की औसत ऊंचाई छह इंच के करीब है। सभी चित्र हलके गेरुए रंग में अंकित हैं। और कोई रंग यहां नहीं है।

यहां के चित्रों में एक ऐसी विशेषता है, जो इन्हें अन्य प्रागैतिहासिक शैल-चित्रों से भिन्न कोटि में रखती है। शैल-चित्रों में प्रायः पशुओं, आखेट-दृश्यों या योद्धाओं के चित्र मिलते हैं। यहां इन
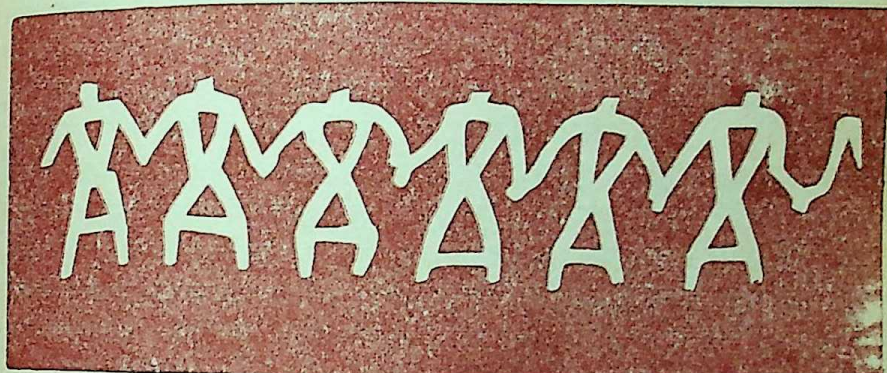
पुतलीखोह के चित्रों की विशेषता : नृत्योल्लास का सजीव एवं अकृत्रिम चित्रण

विषयों का अभाव-सा है। यहां एक-दूसरे का हाथ अपने हाथ में लिये अनेक मानव आकृतियां या तो नृत्य कर रही हैं, या कहीं जा रही हैं। एक जगह ऐसी तीस से भी अधिक मानवाकृतियां एक ही पंक्ति में अंकित की गयी हैं। एक पैनल के रूप में नृत्योल्लास का ऐसा सरल, सजीव एवं अकृत्रिम चित्रण अन्यत्र शायद ही मिले।

आकृतियां दो प्रकार की हैं: स्थूलकाय और कृशकाय। स्थूलकाय आकृतियों का काफिला एक के पीछे एक कहीं जा रहा है। स्थानीय लोग इसे सेना मानते हैं। ये पैर में भारी भरकम जूते–जैसा भी कुछ पहने हैं। कृशकाय आकृतियों का आकार डमरू–जैसा है। ये भी एक दूसरे का हाथ पकड़े हैं, किंतु ये नृत्य करती जान पड़ती हैं। एक जगह तीन आकृतियां कुछ हटकर हैं। ध्यान से देखने पर बीच की आकृति पुरुष की तथा दोनों ओर की आकृतियां नारी की जान पड़ती हैं। दुर्भाग्य से ऊपर की पर्त से पानी के रिसने के कारण अधिकांश मानवाकृतियों के सिर मिट गये हैं।

मैंने कुछ अनुकृतियां कीं। दूसरे दिन सवेरे फिर पहुंचे। चित्रोंवाली खड़ी कगार धूप से नहा उठी थी। मैंने पुनः अनुकृतियां कीं। अधिकतर चित्र पांच-छह फुट की ऊंचाई पर हैं और आसानी से देखे जा सकते हैं। किंतु सीढ़ी की सुविधा हो, तो ऊपर भी चित्र मिल सकते हैं। एक जगह ऐसे चित्र हैं भी। एक अन्य जगह एक योद्धा हाथ में ढाल और तलवार लिये खड़ा है। एक जगह कुछेक पशु-पक्षियों के, तो एक जगह एक बिच्छू का चित्र अंकित है। किंतु ये इक्के-दुक्के चित्र यहां की विशेषता नहीं। बहुमूल्य चित्र तो वे हैं, जिनमें एक ही पंक्ति में अनेक आकृतियां या तो नृत्य कर रही हैं, या कहीं जा रही हैं।

कभी-कभी किसी महत्त्वपूर्ण चीज की खोज अनायास ही हो जाती है। वह दिन दूर नहीं, जब देश-विदेश के पुरातत्त्वविद यहां आएंगे, इन चित्रों का जायजा लेंगे और इनकी जन्मपत्री तैयार करेंगे।

दोपहर को जब हम लौट रहे थे तब मैं सोच रहा था, प्रागैतिहासिक चित्रकला के जितने नमूने मध्यप्रदेश में मिले हैं, उतने भारत में अन्यत्र नहीं। पचमढ़ी, होशंगाबाद, भीमबैठका और अब पुतलीखोह। मजे की बात यह कि ये सभी स्थान नर्मदाघाटी में पड़ते हैं। पुतलीखोह तो नर्मदा से केवल चार मील दूर है।

ऐसा क्यों? नर्मदा के आस-पास विंध्य और सतपुड़ा की गुहाओं में, इतनी बड़ी तादाद में प्रागैतिहासिक चित्र क्यों?

इस प्रश्न का मेरे पास कोई उत्तर नहीं था। इसे लेकर मैं परेशान होना भी नहीं चाहता था। मैं तो इन्हें देखकर मुग्ध था और अपनी मस्ती में मगन चला जा रहा था। मुझे उस गढ़ी में गड़े संभावित खजाने से कहीं बढ़कर खजाना मिल गया था।

——१८३६ राइट टाउन, जबलपुर-२, म.प्र.

उम्मीद

पूछो मत खुरदरे जीवन का हाल
उम्मीद लगा बैठा हूं
शुरू हुआ जीवन में
जबसे नया साल
पग पग पर दुरूहता
कुरेदता कमाल
पूछो मत खुरदरे जीवन का हाल
सर्प और दर्प दंश का उत्पीड़न
छीज गया छीज गया
मन का जीवन
बात बात पर विरोध आजकल
तलाश रहा खून को
दिल का दलदल
अंकुराई हो उम्मीद क्या मजाल
पूछो मत खुरदरे जीवन का हाल

—डॉ. उमाशंकर सतीश
ए-९, डिफेंस कालोनी, नयी दिल्ली-२४

समर्पित प्यार

उठ रहा जब तक गुलाबी ज्वार
समर्पित हर पंखुरी का प्यार
हर पहर हर दिन तुम्हारी प्रीत
बांसुरी में तुम्हारा संगीत
श्वास की हर कनी हीरा है
सफल है जीवन-मरण व्यापार
एक तृण भी नहीं तुमसे दूर
भरे उपवन में तुम्हीं भरपूर
सुरभि की विह्वल तरंगों पर
तुम्हारा ही अनूठा अभिसार
रूप रंग, सुवास का क्या दाम
देह यदि आये तुम्हारे काम
वासना के पंक में खिलकर
सार्थक है प्राण का श्रृंगार
समर्पित हर पंखुरी का प्यार
उठ रहा जब तक गुलाबी ज्वार

—डॉ. रवीन्द्र भ्रमर
हिंदी विभाग, अलीगढ़ विश्वविद्यालय

अमरीका क्रिकेट के मैदान से क्यों भागा?

• योगराज थानी

राजनीति की तरह खल-कूद की दुनिया में भी अमरीका का बड़ा दबदबा है। ओलंपिक और दूसरी बड़ी अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में अमरीकी खिलाड़ी ढेरों स्वर्ण-पदक प्राप्त करते हैं, लेकिन अमरीका क्रिकेट की दुनिया से अचानक क्यों अलग हो गया, यह बात बहुतों की समझ में नहीं आती। एक समय था कि अमरीकी जनता भी क्रिकेट की बड़ी दीवानी थी, लेकिन अब वह केवल बेसबाल की दीवानी है और क्रिकेट के खेल को 'बेसिरपैर का खेल' मानती है। आज अमरीकी लोग क्रिकेट के बारे में बेरुखी से बात करते हैं। उनका कहना है कि यह एकदम नीरस और बेकार लोगों का खेल है। इस खेल में केवल उन्हीं लोगों की दिलचस्पी हो सकती है, जो खाली हैं और वक्त काटने और धूप सेंकने के लिए पांच-पांच दिन तक क्रिकेट के मैदान में पड़े रहते हैं।

प्रश्न उठता है कि क्रिकेट-जैसे खेल में अमरीका की दिलचस्पी क्यों घटी? यदि क्रिकेट के १०० वर्ष पुराने इतिहास पर नजर दौड़ायी जाए तो पता चलेगा कि एक जमाने में अमरीका और इंग्लैंड के बीच बाकायदा मैच खेले जाते थे। यों अमरीका में क्रिकेट की शुरुआत १७४३ में ही हो गयी थी। अमरीका के पूर्वी भाग में ब्रिटिश प्रवासियों के कारण क्रिकेट का खेल काफी लोकप्रिय हो गया था, लेकिन जैसे-जैसे वहां बेसबाल की लोकप्रियता बढ़ती गयी, क्रिकेट की लोकप्रियता घटती गयी। बेसबाल के पहले व्यावसायिक क्लब 'सिनसिनाटी रैड स्टॉकिंग्स' के मैनेजर हैरी राइट क्रिकेट के पेशेवर खिलाड़ी थे।

१८४० और १८७० के बीच अमरीका के लोग उसी उत्साह से क्रिकेट खेलते जिस उत्साह में इंग्लैंड के लोग। १८५९ में पहली बार इंग्लैंड की क्रिकेट टीम ने कनाडा और अमरीका का दौरा किया। इस दौरे का श्रेय कनाडा के 'मांट्रियल क्रिकेट क्लब' को है। लेकिन इंग्लैंड की टीम ने मांट्रियल में केवल एक मैच खेला और अमरीका में छह मैच खेले। ताज्जुब की बात तो यह है कि उसके ठीक दो साल बाद यानी १८६१ में इंग्लैंड की टीम ने आस्ट्रेलिया का दौरा किया, जहां 'ऐशेज' के महान संघर्ष की शुरूआत हुई।

१८५९ में इंग्लैंड की जिस टीम ने अमरीका का दौरा किया, उसमें इंग्लैंड के चोटी के जिन १२ खिलाड़ियों को शामिल किया गया उनके नाम इस प्रकार थे, नॉटिंघमशायर के जेम्स ग्रण्डी और जॉन जैक्सन, ससेक्स के जॉन विसडेन और फ्रेड लिलिव्हाइट, कैम्ब्रिज के टॉमस हेवर्ड और रॉवर्ट कार्पेंटर तथा सरे के डकी डाइवर, एच. एच. स्टीफेंसन, जूलियस सीजर, टॉम लॉकयर और विलियम कैफिन। इस टीम का नेतृत्व जार्ज पार ने किया था। जार्ज पार को इंग्लैंड की टीम का 'शेर' और सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज माना जाता था।

जब होबोकन (न्यूयार्क) में इंग्लैंड और अमरीका के बीच पहला क्रिकेट मैच खेला जा रहा था उस समय मैदान २५ हजार उत्साही दर्शकों से ठसाठस भरा था। यह ठीक है कि यह मैच एकतरफा था और इंग्लैंड के मुकावले अमरीका की टीम बहुत हलकी और कमजोर थी। यह मैच इंग्लैंड की टीम एक पारी और ६४ रनों से जीत गयी थी।

दूसरा मैच फिलाडेल्फिया में खला गया था। उन दिनों यह शहर खेलकूद का केंद्र माना जाता था। जिस मैदान में मैच खेला जाना था वह भारी वर्षा के कारण काफी गीला हो गया और उसमें जगह-जगह गड्ढे पड़ गये थे। बुरादा वगैरा डालकर उसे खेलने लायक बनाया गया। इस मैच को देखने के लिए हजारों नर-नारी मैदान में इकट्ठे हुए।

उसके बाद हैमिल्टन (न्यूयार्क) में भी एक मैच खेला गया। इंग्लैंड के खिलाड़ी कैफिन ने अपनी यात्रा संबंधी पुस्तक '७१ नाट आउट' में इन मैचों का रोचक विवरण प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि तब अमरीकी जनता में एक विशेष उत्साह था। जगह-जगह खान-पान और स्वागत-समारोहों का आयोजन किया गया था। हमारे विकेटकीपर टॉम लाकयर ने अपने खेल से दर्शकों का दिल जीत लिया। लाकयर ने तेज गेंदबाज जॉन जैक्सन की गेंदों को लौटाने में इतनी चुस्ती, फुर्ती

आजकल अमरीका का सर्वाधिक लोक-प्रिय खेल बेसबाल

और तत्परता दिखायी कि अमरीकियों को यह विश्वास तक नहीं हुआ कि गेंद सचमुच फेंकी भी गयी थी या नहीं।

उसके बाद रोचेस्टर में भी एक मैच खेला गया। इस मैच के दौरान काफी हिमपात हुआ। इंग्लैंड के बहुत से खिलाड़ी बाकायदा बड़े-बड़े कोट, गुलूबंद और दस्ताने पहनकर मैदान में उतरे। इस दौरे के दौरान इंग्लैंड की टीम ने सारे मैच बड़ी आसानी से जीत लिये। इस शानदार जीत के बाद इंग्लैंड की टीम जिस समुद्री जहाज पर बैठकर स्वदेश लौटने लगी उसे झंडियों से सजाया गया। मोटे-मोटे अक्षरों में पट्टों पर लिखा था—'वन आल मैचेज'।

अमरीका का तेज गेंदबाज

यों तो अमरीका और इंग्लैंड के बीच जितने भी मैच खेले गये उनमें इंग्लैंड का ही पलड़ा भारी रहता, लेकिन अमरीका के पास एक ऐसा तेज गेंदबाज जरूर था जिसके सामने खड़े होते इंग्लैंड के बड़े-बड़े बल्लेबाजों के हौसले पस्त हो जाते। इस गेंदबाज का नाम जे. बी. किंग था। १९०८ में जब अमरीका की टीम ने तीसरी बार इंग्लैंड का दौरा किया तो फिलाडेलफिया के इस खिलाड़ी ने अमरीका की टीम का नेतृत्व किया और ११.०१ रनों के औसत से ८७ विकेट लिये। इससे पहले १८९७ और १९०३ में भी अमरीका की टीम ने इंग्लैंड का दौरा किया। किंग बचपन में बेसबाल का खिलाड़ी था, लेकिन बाद में उसने क्रिकेट में प्रवेश किया। वह तेज हुक फेंकने में बहुत दक्ष था। नयी गेंद से तो वह सचमुच घातक गेंदबाजी करता था।

भारतीय नेतृत्व में अंग्रेजी टीम

भारतीय क्रिकेट-प्रेमियों को यह जानकर सुखद आश्चर्य होगा कि १८९९ में जब इंग्लैंड की टीम ने अमरीका का दौरा किया तो उसका नेतृत्व भारतीय खिलाड़ी के. एस. रणजीतसिंह ने किया था। उसी वर्ष रणजीतसिंह ने (जिन्हें क्रिकेट-जगत में लोग स्नेहवश रणजी नाम से स्मरण करते हैं) एक मौसम में ३,००० से अधिक रन बनानेवाला पहला बल्लेबाज होने का गौरव प्राप्त किया था।

एक क्रिकेट इतिहासकार का कहना है कि रणजी ने अमरीका में निर्भीकता और सूझबूझ के साथ बल्लेबाजी की और वहां के लोगों का दिल जीत लिया।

कुछ लोगों का यह भी कहना है कि अमरीका में क्रिकेट में दिलचस्पी कम होने का एक कारण यह भी था कि वह इस खेल में इंग्लैंड की बराबरी नहीं कर सका और बार-बार हारते-हारते वह निराश हो गया।

लेकिन सुनते हैं कि इन दिनों अमरीका में क्रिकेट-प्रेम फिर प्रबल हो उठा है और कुछ क्रिकेट-प्रेमियों ने मिलकर एक क्रिकेट-क्लब भी बना लिया है। उन्होंने मेलबोर्न क्रिकेट-क्लब (एम. सी. सी.) से उसे मान्यता देने को कहा है।

—१११२ रोहतक रोड, सराय रोहिल्ला स्टेशन के पास, नयी दिल्ली-११०००५

• राजश्री शुक्ला

ध्वनि-माध्यम का शिकारी चमगादड़

अपने कंठ से निरंतर ध्वनि-तरंगे उत्पन्न करता हुआ, झिल्लीदार पूंछ को प्याले के आकार में मोड़कर, चमगादड़ सामने उड़ते हुए कीड़े को मुड़ी हुई पूंछ में लपेट-कर मुंह में डाल लेता है; फिर हवा में विमान की भांति गोता मार जाता है। यह सब पलक झपकते ही हो जाता है, आधे सेकंड के भीतर-भीतर!

अठारहवीं शताब्दी में किये गये प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि चमगा-दड़ आंख बंद कर दिये जाने पर तो सामान्य रूप से काम करता रहता है, परंतु कानों के बंद हो जाने पर वह विवश हो जाता है। जीवशास्त्रियों ने प्रयोगों के बाद यह मत व्यक्त किया कि या तो वह छठवीं इंद्रिय की सहायता लेता है अथवा फिर उसकी त्वचा में अलौकिक स्पर्श की क्षमता है। किंतु बाद में उन्हें अपना यह मत त्याग देना पड़ा क्योंकि हार्वर्ड विश्वविद्यालय के एक वैज्ञानिक ने अपने इलेक्ट्रॉनिक-संयत्रों के द्वारा यह प्रदर्शित किया कि चमगादड़ अपने मुंह से छोटे-छोटे अल्ट्रा-सानिक संदेश भेजते हैं और मार्ग में आयी बाधा से टकराकर लौटनेवाली प्रतिध्वनि को सुनकर अपना मार्ग स्थिर करते हैं। तब तक नौसेना विभाग के द्वारा भी इन तथ्यों की पुष्टि हो चुकी थी कि सागर के गर्भ में कुछ मछलियां भी अपना मार्ग इसी प्रकार के संकेतों के आधार पर स्थिर करती हैं। कासेल विश्वविद्यालय के वैज्ञा-निकों का तो यहां तक दावा था कि प्रति-ध्वनि के द्वारा मार्ग-निर्धारण की यह प्रतिभा मनुष्य जाति में भी विद्यमान है—विशेषतः उनमें जो नेत्र-विहीन हैं।

संचार-विकास के क्रम में मनुष्य ने राडार तथा सोनार यंत्रों का भी निर्माण किया। आकाश में जहाज और सागर में चट्टान वैसे चाहे हमें दिखायी न पड़ें, परंतु इन उपकरणों द्वारा आसानी से आकार-प्रकार के सहित पकड़ में आ जाते हैं। चमगादड़ भी नैसर्गिक रूप से इन्हीं उप-करणों से संपन्न है।

पिछले पांच करोड़ वर्षों से अपरि-वर्तित चमगादड़ों की जाति अपनी दिशा का निर्धारण तथा अपने भोजन का आधार इसी सिद्धांत पर आधारित क्रिया द्वारा करती आ रही है।

इस विषय पर हुई शोध की एक योजना के अंतर्गत चमगादड़ को प्रयोगशाला के एक बड़े कमरे में बंद कर लिया गया।

फिर एक कीड़े को बीचों-बीच हवा में उछाला गया। चमगादड़ निरंतर परिक्रमा करता हुआ बिजली की फुरती से अपने शिकार की ओर मुड़ा। उसने अपनी झिल्लीदार पूंछ को प्याले के आकार का बनाकर हवा में तैरते कीड़े को उसमें समेट लिया और उसे झट से मुंह में डाल-

कर फिर गोता लगा लिया। इस समूची प्रक्रिया की फिल्म तेज गति से चलनेवाले कैमरे में खींची गयी, जो कि एक सेकंड में सात सौ अड़सठ चित्र खींचता है। कैमरे के समक्रम से एक टेप-रिकार्ड भी था, जो साथ उत्पन्न हुई ध्वनियों को अंकित करता जा रहा था। इसी फिल्म तथा टेप को जब सामान्य गति पर चलाकर देखा गया तब चमगादड़ की संपूर्ण गति-विधि विस्तारपूर्वक समझ में आने लगी।

चमगादड़ अपनी छोटी-सी कंठनली के द्वारा लगभग दो सौ संकेत प्रति सेकंड की गति से ध्वनि उत्पन्न करता हुआ आगे बढ़ता है। ये संकेत मार्ग में आयी बाधा—कीड़े-मकोड़े आदि—से टकराकर लौटते हैं जिन्हें वह अपने बड़े-बड़े कानों के द्वारा लौटी हुई प्रतिध्वनि के रूप में ग्रहण करता है, और अगले पल ही उसका मस्तिष्क विचार कर दिशा एवं गति का निर्धारण कर लेता है। चमगादड़ का यह संकेत प्रसारण एक आवृत्ति-माडुलित रेडियो प्रसारण की भांति होता है। आरंभ में संकेत-प्रसारण की गति एक लाख चक्र

प्रति सेकंड तक की होती है, जिन्हें वह शीघ्र ही चालीस हजार चक्र प्रति सेकंड तक ले आता है। जैसे-जैसे वह लक्ष्य के निकट आता है, संकेत-प्रसारण की गति तीस हजार और फिर बीस हजार चक्र प्रति सेकंड तक उतर आती है। इस गति से उत्पन्न सूक्ष्म ध्वनि तो मनुष्य के कानों को भी सुनायी दे जाती है।

दिशा निर्धारित करने के लिए चमगादड़ लौटी हुई प्रतिध्वनि को अपने दोनों कानों में ग्रहण करता है और उनकी सापेक्ष तीव्रता से बाधा की दिशा स्थिर करता है। यदि उसका एक कान बंद कर दिया जाए, तो केवल एक ही कान के द्वारा ग्रहण की गयी प्रतिध्वनि के बल पर वह अपने मार्ग में पड़ने वाली बड़ी बाधाओं को तो शायद बचा ले, किंतु छोटे-छोटे कीट-पतंगों का शिकार करने में समर्थ नहीं हो पाता।

लक्ष्य अथवा बाधा की दूरी भी चमगादड़ बिलकुल उसी प्रकार निर्धारित करता है, जिस प्रकार मनुष्य अपने राडार-यंत्र के उपयोग से करता है। मुंह से भेजे गये संकेत तथा लक्ष्य से टकराकर लौटी प्रतिध्वनि के बीच का समयांतर, दूरी का सूचक होता है। इस प्रकार यदि संकेत और प्रतिध्वनि के बीच कालांतर एक सेकेंड का एक सहस्र भाग हो तो मुंह से लक्ष्य की अनुमानित दूरी छह इंच के लगभग होगी, ऐसी खोज हुई है।

अब तक वैज्ञानिक इस तथ्य से परिचित थे कि चमगादड़ की रेशम-जैसी झिल्लीदार पूंछ का उपयोग उसकी भोजन प्रणाली में भी होता है, किंतु अपना शिकार वह मुंह से ही पकड़ता है; किंतु उस प्रयोग में खींची गयी फिल्म ने यह धारणा निर्मूल करते हुए प्रदर्शित किया कि शिकार वस्तुतः पूंछ की संरचना के द्वारा पकड़कर मुंह में डाला जाता है।

फिल्म के एक अध्ययन से यह भी पता चला कि चमगादड़ अपनी विशिष्ट कलाबाजी का उपयोग करते हुए आधे सेकंड के अंदर-अंदर दो शिकार कर गया। एक दूसरे अध्ययन ने प्रदर्शित किया कि एक चमगादड़ पंद्रह मिनट में दो सौ बीस कीड़े हजम कर गया।

ध्वनि-उपकरण की इस विलक्षण प्रतिभा के स्वामी चमगादड़ आदिकाल से अपनी कार्यवाही इतने प्रभावशाली ढंग से कर रहे हैं कि वैज्ञानिकों को भी अपने इलेक्टॉनिक संयंत्रों में सुधार करने की प्रेरणा उनसे मिल रही है। संकेत-प्रसारण के बल पर यदि चमगादड़ अपने दोस्त और दुश्मन—भोजन अथवा मार्ग-बाधा—के बीच पहचान कर सकता है, तो क्या कभी मानव-निर्मित इलेक्ट्रॉनिक उपकरण भी यह कर पाएंगे?

उत्तर है—शायद!

—७/११७ लोदी कालोनी,
नयी दिल्ली-३

नृत्य के समाप्त होने तक वह युद्ध करता रहा

● अलकनंदा घोष

पश्चिम बंगाल के पुरुलिया जिले में व्यापक रूप से प्रचलित छो नृत्य वस्तुतः भारतीय लोकनृत्य की कड़ी का एक अनुपम नगीना है, तथा इस लोक-नृत्य के साथ जुड़ा हुआ मुखौटे-निर्माण का हस्त-शिल्प भी वस्तु की मनोहरता और निर्माण-कुशलता के कारण अत्यंत सराहनीय है। असीम महतो के अनुसार, " 'छो' शब्द की उत्पत्ति 'छद्म' से हुई। छो नृत्य, अर्थात चेहरे और पोशाक छो द्वारा छद्म रूप धारण कर किया जाने-वाला नृत्य।" डॉ. आशुतोष महाचार्य के अनुसार, " 'छो' शब्द 'छह' से बना। छह लोगों का नृत्य ही शुरू में 'छो' नृत्य कहलाया।" पुरुलिया के अतिरिक्त छो लोकनृत्य पश्चिम बंगाल के जिला बाकूड़ा तथा उड़ीसा और बिहार के कुछ क्षेत्रों में प्रचलित है।

पुरुलिया जिले में ही आनुमानिक तौर पर लगभग ढाई सौ छो नृत्य करने-वाले दल हैं, अर्थात जिले के प्रति तीन या चार गांव पीछे एक दल। छो नृत्य की लोकप्रियता का मुकाबला करनेवाला दूसरा कोई लोकनृत्य पश्चिम बंगाल में नहीं है। संगीत नाटक अकादमी के आमंत्रण पर यह नृत्य अब तक दिल्ली तथा कल-कत्ता—जैसे कुछ बड़े शहरों में ग्रामीण कलाकारों द्वारा दिखाया जा चुका है। लोक संस्कृति को अनुप्रेरित करने के प्रयास में सरकारी तौर पर पुरुलिया जिले में भी कुछ प्रतियोगिताएं आरंभ की गयी हैं, जिनमें श्रेष्ठ निर्वाचित होनेवाले दल को दिल्ली लाया जाता है तथा ललित कला के मर्मज्ञ एवं उत्साही दर्शकों के सम्मुख उसके नृत्य का कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता है।

छो नृत्य की मूल कथावस्तु पुराणों, रामायण, महाभारत आदि से ली गयी मुख्यतः युद्ध अथवा शिकार की छोटी-छोटी घटनाओं पर आधारित होती है। इसमें पौराणिक के अलावा और भी अनगिनत पात्रों, चरित्रों का समा-

वेश किया जाता है। सिंह, भालू, मोर, बाघ इत्यादि जीवों की भूमिकाएं भी कुशलतापूर्वक अभिनीत की जाती हैं। कुछ लोगों के मतानुसार लगभग सौ वर्ष पूर्व कुर्मी (पुरुलिया के आदिवासी) जनता जब हिंदू बनी तब उनके अंदर हिंदू धर्म की भावनाओं को बद्धमूल कराने के लिए हिंदुओं ने उन्हीं के युद्ध और शिकारों के लोकनृत्यों को पुराण की घटनाओं पर ढाल दिया। यही कारण है कि छो नृत्य में पैरों की गति और संचालन युद्ध-नृत्य अथवा शिकार करने की भाव-भंगिमाओं का अनुकरण मात्र है।

छो नृत्य के कलाकार मुख्यतः स्थानीय गरीब, किसान या मजदूर वर्ग के लोग होते हैं। केवल नृत्य के माध्यम से भी रोजगार किया जाता है, ये इन्हें नहीं मालूम। अपने गांव से बीस, पच्चीस मील दूर तक अपने नृत्य के साज, पोशाक तथा अन्य सामग्रियों को ढोते ये उत्साह के साथ पैदल चलकर जाते हैं और रात भर नाच दिखाकर सवेरे पुनः पैदल घर को चल पड़ते हैं। बदले में सिर्फ एक वक्त का भोजन और छोटी-मोटी दान सामग्री इन्हें मिल जाती है। कुछ समय पहले तक जमींदार इन नृत्यदलों के रखवाले होते थे। चेहरे तथा साज पोशाक इत्यादि का खर्च वे ही उठाते थे। बदले में छो नृत्य करनेवाले इनके खेतों में मजदूरी करते थे।

नृत्य का आरंभ

छो नृत्य-शैली की विशेषता का आभास तो नृत्य-परिदर्शन से ही स्पष्ट हो सकता है या उनके अक्षरशः वर्णन से। लगभग बीस फुट चौड़े, तीस फुट लंबे साफ और लिपे-पुते हुए किसी स्थान पर छो नृत्य अनुष्ठित होता है। इस नृत्य में भाग लेनेवाले सभी पुरुष कलाकार होते हैं, मुख्यतः किशोर, युवा और कुछ बच्चे भी। नृत्य

कृष्ण और अभिमन्यु के मुखौटे लगाकर दो कलाकारों का छो नृत्य
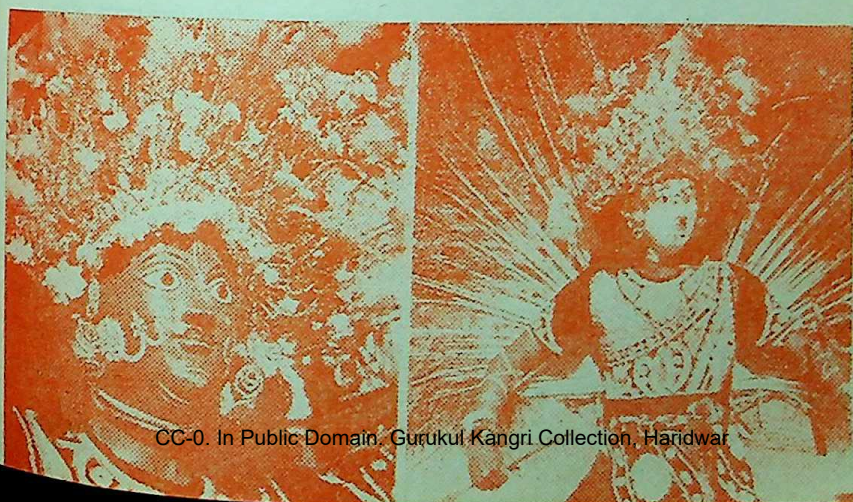
शुरू होने से काफी पहले ही दमामा बजना शुरू होता है। नृत्य शुरू होने से थोड़ी देर पहले इनके वादक नृत्यांगन में दमामा बजाते हुए प्रवेश करते हैं। इन दमामों का व्यास लगभग तीन फुट होता है। ये संख्या में दो होते हैं। इनके साथ कुछ ढोल कभी होते हैं, जिन्हें वादक अपने गले में रस्सी के सहारे लटका लेते हैं। ये ढोलक-वादक पूरे नृत्यांगन में उछलते कूदते हुए ढोलक बजाते हैं। ढोलक तथा दमामों के अतिरिक्त शहनाई भी बजती है। शहनाई-वाले अपने सुर के साथ शरीर को विभिन्न प्रकार से तोड़-मरोड़कर संगत करते हैं।

दुर्गा-महिषासुर युद्ध

महिषासुर-वध प्रसंग में प्रायः सबसे पहले नृत्यांगन में घोर काले रंग का लंबे बालों और लटकती मूंछोंवाला एक आदमी प्रवेश करता है। थोड़ी देर तक अपनी धुन में मस्त हाथ, पैर और कमर मटकाते हुए देवी-वंदना और प्रासंगिक गीत गाकर अचानक ही नृत्यांगन से बाहर चला जाता है। इसके बाद बारी-बारी से गणेश, कार्तिक, सिंह तथा दुर्गा का प्रवेश तथा उनके साथ महिषासुर का घोर युद्ध दिखलाया जाता है। अंत में असुर का वध करके दुर्गा सपरिवार मंच से बाहर जाती हैं। लक्ष्मी तथा सरस्वती—जैसे पात्रों की यद्यपि महिषासुर-वधकांड में कोई आवश्यकता नहीं, लेकिन मंच से दुर्गा के प्रस्थान को आकर्षक बनाने के लिए ही उनको मंच पर लाया जाता है। दुर्गा-पूजा के पर्व पर दुर्गा की मूर्ति के साथ लक्ष्मी, सरस्व- गणेश तथा कार्तिक को जिन भंगिमाओं दिखलाया जाता है, ठीक उसी भंगिमा वे मंच से प्रस्थान करते हैं।

सरस्वती तथा लक्ष्मी के सिर के रंगीन कागज, कार्डबोर्ड तथा पत्तियों बनाये गये गोल बड़े-बड़े चकते दिये जाते हैं, जिससे उनका मूर्ति से सादृ- हो जाता है। इस कांड में एक आद- दुर्गा-वाहन सिंह बनता है और युद्ध में स- भाग लेता है। दूसरा कार्त्तिक के उनका वाहन मयूर बनकर घूमता-फि- है। प्रायः किसी बालक के कमर में पंख के गुच्छे लगाकर उसे मयूर बना- जाता है। उसका चेहरा आदमियों-जै- ही, मगर बिलकुल सफेद होता है। उस- दोनों हाथ-पांव छाती से लपेटकर बां- दिये जाते हैं। गणेश को कभी-कभी कौतु- अभिनेता के रूप में भी दिखाया जाता है युद्ध के दौरान वह कलाकार भी क- बाजियों से दर्शकों का मनोरंजन करता है।

विभिन्न पात्रों (विशेषकर देवी-दे- ताओं) की वेशभूषा लगभग एक- होती है। चेहरों का रंग हरा, नीला औ- पीला होता है। भौंहें कुछ ऊपर को उ- हुई तथा चेहरे में मंद मुसकान झलक- है। आंखें बड़ी-बड़ी होती हैं। पुरुष त- नारी देवताओं की मुखाकृति में सिवा- मूंछों के कोई विशेष अंतर नहीं होता। उनके सिर पर बड़े-बड़े मुकुट होते हैं जो मुख्यतः मोती, जरी, पन्नी सल-

मोरपंख इत्यादि जुटाकर बनाये जाते हैं। मुख्य पात्रों, जैसे राम, अर्जुन, कृष्ण, अभिमन्यु, दुर्गा, सीता, हनुमान इत्यादि के मुकुट कुछ अधिक भड़कीले होते हैं। इन भड़कीले मुकुटवाले चेहरों को 'पंच-खिलान' कहते हैं। असुर तथा दैत्य दानवों को यथासंभव भयंकर बनाया जाता है। उनके कान ऊंचे और बड़े होते हैं, बाल रूखे भूरे और फैले हुए होते हैं। मुंह अकसर खुला हुआ तथा दांत बाहर निकले हुए होते हैं। इन चेहरों के अतिरिक्त अन्य पोशाक लगभग सभी देवताओं के एक से अर्थात सलमा सितारे लगे हुए कुरते और धोती होते हैं। देवियों को रंगीन साड़ी पहनायी जाती है। दैत्य, दानवों के अनावृत्त शरीर पर नीले रंग की धारियां बनी होती हैं। नंगे पैरों पर सभी पात्रों के घुंघरू बंधे रहते हैं। देवताओं तथा वीरों के हाथों में अस्त्र-शस्त्र होते हैं, जिनमें जरी और पन्नी लपेटकर उन्हें भड़कीला बनाया जाता है। कालीमाता को काले रंग का बिना हाथोंवाला ब्लाउज तथा छोटा काला स्कर्ट पहनाया जाता है और गले में नरमुंडों की माला।

नृत्य-नेपथ्य का हस्त-शिल्प

बहुचर्चित छो नृत्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करनेवाले छो नृत्य के चेहरे वस्तुतः हस्त-शिल्प के दृष्टिकोण से अनुपम हैं। वैसे तो संपूर्ण एशिया में और भी कई देशों जैसे तिब्बत, सिक्किम, भूटान, चीन, जापान, लंका, बर्मा, नेपाल तथा मलेशिया के लोकनृत्यों में चेहरों का प्रयोग किया जाता है, किंतु भारत के लोकनृत्य में उपयुक्त चेहरों में विशिष्ट आंचलिकता की छाप उत्कृष्ट कोटि की है। इन चेहरों का निर्माण करनेवाले पश्चिम बंगाल के कुछ सीमित समुदाय के लोग हैं। पुरुलिया जिले के चड़िदा तथा डुमुर-डिही, इन दो गांवों में इन कारीगरों का निवास है। कुल मिलाकर पचास-साठ घर हैं। उनमें प्रमुख तथा सबसे पुराने कारीगर, मधु राय तथा गोकुल राय हैं। कारीगरों की संख्या इतनी कम और उपादान वस्तुओं के महंगे होने के कारण छो नृत्य के चेहरों का वितरण कम और दाम अधिक है। साधारण गरीब छो नृत्यदल इन चेहरों को मुश्किल से जुटा पाते हैं। उत्कृष्ट चेहरों के पूरे सेट का दाम हजार डेढ़ हजार रुपये तक पड़ जाता है। एक बार खरीदे गये चेहरे दस, पंद्रह बार नृत्य के बाद नहीं चलते, मुख्यतः युद्ध-नृत्यों के बाद। गरीब छो दलों को तो कई बार तक उन चेहरों को जोड़-तोड़कर काम चलाना पड़ता है। लेकिन छो नृत्य के उत्कृष्ट और मंहगे चेहरों में कारीगरों की कला-निपुणता का स्पष्ट आभास मिलता है। इन चेहरों को बनाने में कारीगरों को एक लंबी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है जिसमें यथेष्ठ समय तथा परिश्रम की आवश्यकता पड़ती है। एक चेहरा पूरा करने में लगभग दस, बारह प्रक्रियाओं से गुजरना

...ता है। इसके बाद उसमें आभूष
लगाये जाते हैं। आभूषण जड़ने तथा मुकु
बनाने के कार्य सर्वाधिक परिश्रम-सा
होते हैं। महीन तार, मोती, रेशम,
तथा पक्षियों के पंख इत्यादि की
आभूषण तथा मुकुट बनाये जाते हैं।

संभवतः इसी परिश्रम के फलस्व
एशिया में प्रचलित चेहरों में भार
छो लोकनृत्य के चेहरों का अपना वि
स्थान है, किंतु खेद का विषय है कि
प्राचीन उद्योग अब तक उपेक्षित है।

छो नृत्य में मुख्य रूप से युद्ध
आक्रमण का ही चित्रण किया जाता है
अन्य किसी भी भारतीय लोकनृत्य
अपेक्षा इसमें अधिक गतिशीलता
वैचित्र्य है। छो नृत्य के एक ही अनु
में विभिन्न कांड दिखलाये जाते हैं
प्रत्येक कांड की समाप्ति और दूसरे
आरंभ के मध्यांतर में प्रायः विभिन्न प्र
के नृत्य और गीत प्रस्तुत कर लोगों
मनोरंजन किया जाता है। विदेशी प
दर्शक का कहना है कि नृत्यांगन के च
तरफ घेरे गये लोहे के कांटों में एक
किसी कलाकार को नृत्य के दौरान हो
वाले युद्ध में उसने गंभीर रूप से घा
होते देखा और आश्चर्य की बात यह
कि बिना रुके ही वह कलाकार नृत्य
समाप्त होने तक युद्ध-नृत्य करता रहा।

हस्तलिपि की दृष्टि से छो नृत्य के चे
काली और गणेश : सामने पृष्ठ पर

लोकनृत्य में रावण के चेहरे पर आंचलिकता की छाप स्पष्ट है
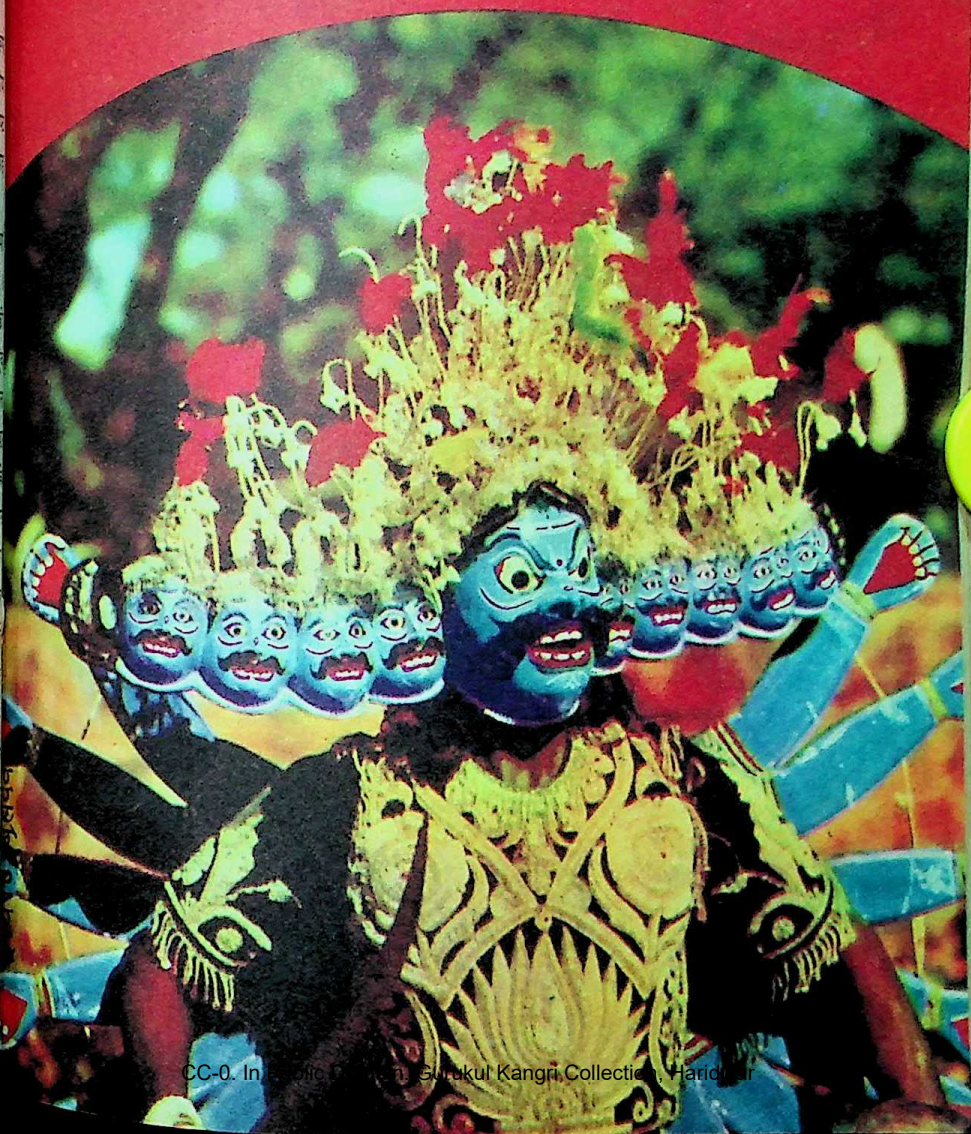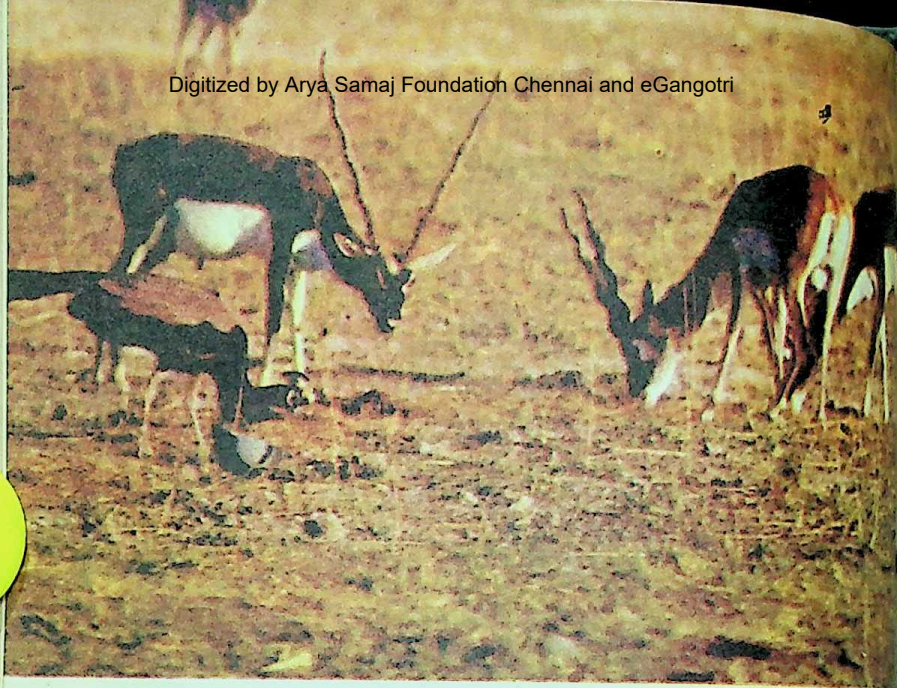
जिन क्षेत्रों में पाया जाता था, अब उनमें अनेक जगहों पर या तो बिलकुल ही लुप्त हो गया है या बहुत कम संख्या में मिलता है। जंगली रोमंथी पशुओं में से कृष्णसार का मांस सबसे अच्छा होता है, इसीलिए यह दूसरे हिरणों की तुलना में अधिक मारा जाता है। इसे बचाने के समुचित उपाय नहीं किये गये तो इसकी नस्ल मिट जाने का खतरा है।

काले हिरण की नस्ल को नष्ट होने से बचाने के लिए राजस्थान में बीकानेर से जयपुर जानेवाली सड़क पर ताल छापर नामक एक अभय-स्थल (सैंक्चुअरी) बनाया गया है। बीकानेर से यह एक सौ चालीस किलोमीटर दूर है। सड़क के एक तरफ गांव है जिसे ताल छापर कहते हैं। इसी के नाम पर सैंक्चुअरी को ताल छापर अभयस्थल कहते हैं। इसका क्षेत्रफल लगभग २०५० एकड़ है। अब वहां दो-ढाई सौ काले हिरण बचे होंगे। पहले करीब साढ़ चार सौ थे। सैंक्चुअरी में एक रेंज ऑफिसर रहता है, जो हिरणों की देखभाल के लिए जिम्मेदार है। यहां एक फारेस्ट गस्टहाउस है, जिसके साथ तीन आउटहाउस हैं। कुछ कदमों के फासले पर बीकानेर के भूतपूर्व नरेश की कोठी है। इसमें अब बच्चों का स्कूल लगता है। पहले जमाने में यह महाराजा की शिकार-कोठी थी। सारे शिकार के कार्य-क्रम को वायरलेस के द्वारा नियंत्रित तथा संचालित किया जाता था। महाराजा इस बात को जानते थे कि यह सुंदर हिरण किस तेजी से नष्ट होता जा रहा है, इसलिए वे बड़े संयम से इसका शिकार खेलते थे।

वर्षा और सर्दियों में जब गांव में खेती शुरू हो जाती है तो कृष्णमृग सैंक्चुअरी छोड़कर गांव की तरफ निकल जाते हैं और फसल खाते हैं। तब इन्हें चोरी-छिपे मार लिया जाता है। गरमियों में सूखा पड़ा रहता है। तब सैंक्चुअरी की ओर से खाना दिया जाता है। बीस किलोग्राम मोठ का चारा और दस-पंद्रह किलोग्राम चने हर रोज दिये जाते हैं। शाम को तीन-चार लंबी पंक्तियों में आहार डाल दिया जाता है। हिरण खुद-ब-खुद खाने के लिए

मस्ती में बेफिक्री से घूमते काले हिरण
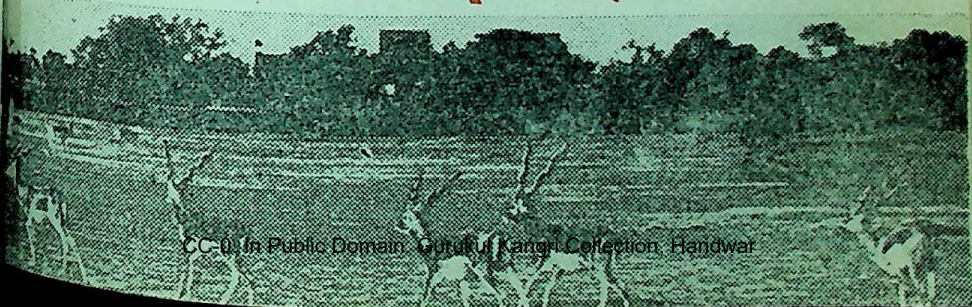
आने लगते हैं। हिरणों के साथ कुछ मोर और जंगली कबूतर भी शाम की दावत में शामिल हो जाते हैं। आहार के लिए तीन हजार रुपये सालाना मिलते हैं। यह रकम गरमियों के दो महीनों (अप्रैल-मई) में ही समाप्त हो जाती है।

भोजनालय और कोठी के बीच में एक कुआं है। कुएं के बाहर एक गड्ढे में पानी भरा रहता है। रात को हिरण इसमें पानी पीने आते हैं। सैंक्चुअरी में दूसरी जगहों पर भी कुंड बने रहते हैं। वैसे हिरण गांव में भी पानी पीने चले जाते हैं।

सैंक्चुअरी के कर्मचारी कृष्ण-मृगों की हर तरह से हिफाजत करते हैं। कभी-कभी छौने खाई में गिर पड़ते हैं। उन्हें सैंक्चुअरी के गार्ड बाहर निकालते हैं।

कृष्ण-मृग आसानी से पल जाते हैं। साधुओं और फकीरों की कुटियों में कभी-कभी देखे जाते हैं। छौने को बकरी के थन से लगा देते हैं और बकरियों के रेवड़ के साथ ही वह चरने जाता है। कहा जाता है कि इन... दोगली संतान भी पैदा होती है। नर... जब पूरे सींग निकल आते हैं तो वह ख... नाक बन जाता है, खासकर बच्चों... लिए। राजधानी की पशुवाटिका में ... १९६८ में काले हिरणों का एक ज... नीलगायों के बाड़े में छोड़ा गया था... इस जोड़े का नर बड़ा क्रोधी था। नील... उसे देखकर परे हट जाती थीं।

एण (ऐंटीलोप) गण में केवल का... हिरण भारत में कुछ स्थानों में पा... जाता है। संस्कृत में इसे मृग, कृष्ण... कृष्णसार, एण, सारंग और हरिण क... हैं। अंगरेजी में इसे ब्लैक बक और इंडि... ऐंटीलोप कहते हैं। भारत में इ... निम्नलिखित नसलें पायी जाती हैं: ऐं... लोप सर्विकाप्रा लिन, ऐंटीलोप रुफि... मुल्लर, ऐंटीलोप राजपूतनाए जुकोव्... और ऐंटीलोप सेंट्रालिस जुकोव्स्की।

सफेद शेर के समान सफेद रं...
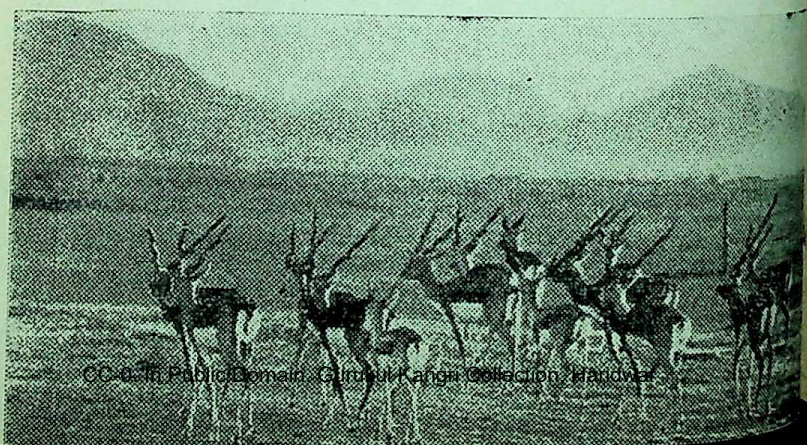
काले हिरणों का शानदार झुंड

काले हिरण भावनगर में मिले थे। वहां के महाराजा ने सफेद नसल को अलग से विकसित किया था। यह परीक्षण सफल रहा था। महाराजा कोल्हापुर ने भी काले हिरण की श्वेत और अंशतः श्वेत किस्मों से बारह श्वेत मृग विकसित कर लिये थे। इस परीक्षण में उन्हें पच्चीस बरस का लंबा समय लग गया था। सफेद रंग के मृग अब दिल्ली, मैसूर आदि नगरों की पशुवाटिका में देखे जा सकते हैं।

अपने गण के मृगों में यह सबसे खूबसूरत है। इसका शानदार रंग और पेचदार लंबे सींग इसे ऐसा रूप प्रदान करते हैं जो किसी भी एण (ऐंटीलोप) को नहीं मिला।

तीन साल की उम्र तक नर और मादा बच्चों का रंग एक-जैसा होता है। ऊपर से यह चमकीला बादामी और निचले भागों में तथा टांगों के अंदर सफेद होता है। तीन साल की उम्र में नर का रंग काले में बदलने लगता है। वयस्क हिरणों का रंग भी हलके काले से गाढ़ा काला हो सकता है। दक्षिण-भारत में काले रंग के वयस्क नर बहुत कम देखे जाते हैं, वहां इनकी खाल गहरे भूरे रंग की ही हो पाती है। इसी तरह देश के सभी भागों में भूरे रंग के पूर्ण तरुण कृष्णसार मिल जाते हैं। सामान्य नियम यह प्रतीत होता है कि गरमियों में रंग फीका पड़ जाता है और बरसात के बाद खाल की मखमली चमक में वृद्धि हो जाती है। काले रंग की तुलना में पेट, छाती और अंगों के अंदर की विशुद्ध सफेदी खूब चमकती है। काले चेहरे पर आंखों और नाक के चारों ओर सफेद घेरे बने होते हैं। पूंछ छोटी होती है। मादा के कंधों से पुट्ठों तक एक हलकी-सी पट्टी होती है।

अच्छा नर कंधे पर बत्तीस इंच ऊंचा होता है। लंबाई लगभग चार फुट और पूंछ सात इंच होती है। औसत वजन चालीस किलोग्राम होता है। मादा छोटी होती है।

चक्रीदार सींगों से सुशोभित काला हिरण

यह हमेशा की बात है: स्विश से दाढ़ी बनानेवाले को कोई मात नहीं दे सकता! परन्तु आप उसके साथ अवश्य शामिल हो सकते हैं

नर का सिर चूड़ीदार सींगों से शोभायमान होता है। सींग बिलकुल गोल होते हैं और सिरे की ओर पतले होते जाते हैं। सिरे चिकने और नुकीले होते हैं।

सींगों की औसत लंबाई बीस इंच, असाधारण रूप से चौबीस और छब्बीस इंच होती है। सर बैरो एलिस के पास साढ़े छब्बीस इंच का एक जोड़ा था। ट्रायेंगल ने अट्ठाईस इंच का सींग लिखा है। इसमें कोई शक नहीं कि सबसे लंबे सींग उत्तर-भारत के जंगलों से प्राप्त किये गये हैं।

दक्षिण में सींग बीस इंच से अधिक कम ही जाते हैं। उत्तरभारत में पच्चीस इंच तक चले जाते हैं। किसी-किसी मादा के भी सींग निकल आते हैं, पर यह अपवाद ही समझना चाहिए।

सतयुग में चार आंखें

मृगों में गाय और भेड़ दोनों जातियों की विशेषताएं मिलती हैं। मृगों की आंख के नीचे एक ग्रंथि होती है जो गोवंश में और भेड़ में नहीं पायी जाती है। कृष्णमृग की यह ग्रंथि इतनी फूली हुई होती है कि झट उधर ध्यान जाता है। बाहर से यह काली दरार दीखती है, जिसकी खाल पर बाल नहीं उगे होते।

किंवदंतियों के अनुसार ये आंखों के निशान हैं। कहते हैं कि सतयुग में इन हिरणों के चार आंखें होती थीं। राजा जब किसी को फांसी का हुक्म देता था तो फांसी देने के बाद उस आदमी की आंखें राजा को दिखानी होती थीं जिससे उसे विश्वास हो जाए कि वास्तव में फांसी दे दी गयी है। कोई-कोई जल्लाद दयावान होता था। वह अपराधी को अपने देश की सीमा से बाहर जंगल में छोड़ जाता था। लौटते हुए काले मृग की आंखें निकाल लाता था और राजा के सामने प्रमाण रूप से पेश कर देता था। बस वही आंखों के गढ़े अब भी इन मृगों में बच गये हैं।

ये घास और अनाज की विभिन्न फसलों को खाते हैं। प्रायः दोपहर से जरा पहले तक चरते हैं, फिर दोपहर बाद देर से चरने निकलते हैं। दिन के गरम घंटों में लेटकर आराम करते हैं।

इनमें सुनने की शक्ति मध्यम श्रेणी की और सूंघने की शक्ति अच्छी है। अपना बचाव यह तेज दृष्टि और गति से करते हैं। जवान मृग और मृगी बीस फुट लंबी कुलांच भर सकते हैं।

कृष्णमृग सभी मौसमों में जोड़े बनाते हैं। फरवरी और मार्च में मादाओं के लिए नरों की लड़ाइयां होती हैं।

लड़ते समय कृष्णमृगों के सींग एक-दूसरे से उलझ जाते हैं। ये लड़ाई में इतने मगन होते हैं कि सिर पर दुश्मन के पहुंच जाने पर ही अलग होते हैं। लड़ाई में टूटे हुए सींगोंवाले मृग भी प्रायः दीख जाते हैं।

एक नर के हरम में कभी-कभी पचास-साठ हिरणियां होती हैं। बड़े गिरोहों से खदेड़े हुए छोटे नर अलग झुंडों में चरते पाये जाते हैं। कई बार एक झुंड में विभिन्न उम्र के तीस छौने होते हैं। एक

बार में एक या दो बच्चे पैदा होते हैं। मादा इन्हें घास में छिपा देती है। ये तेजी से शक्ति प्राप्त कर लेते हैं और फिर झुंड में मिल जाते हैं। झुंड में सभी उम्र के बच्चे दीख जाते हैं।

शिकारी को चकमा

समतल और सूखे मैदानों में यह इतना तेज दौड़ता है कि न तो शिकारी कुत्ते और न ही घुड़सवार की पकड़ में आता है। बरसात में धरती गीली हो जाती है। उस पर छलांग मारते हुए इसके पैर कीचड़ में धंस जाते हैं, तब यह जल्दी थक जाता है और पकड़ में आ जाता है। पूरे वेग में दौड़ने पर यह साठ मील प्रति-घंटे के हिसाब से दौड़ लेता है।
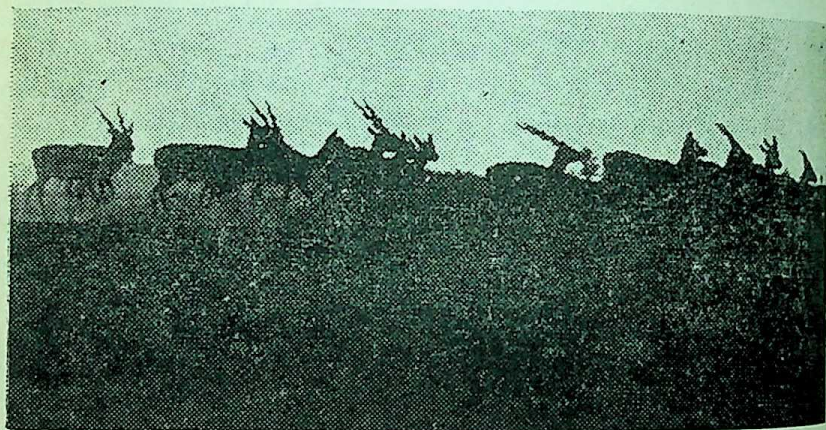
शिकारी को धोखा देने के लिए यह कहीं छिप जाता है।

एक कृष्णसार के साथ मृगी और बहुत छोटा छौना था। शिकारी को देखकर पार्टी भाग खड़ी हुई। छौना बहुत नन्हा था, इसलिए मां-बाप ने उसे लिटाने की कोशिश की। वह न माना और उनके पीछे चलता गया। इस पर कृष्णसार घूमा, उसने बार-बार मारकर उसे लेटने के लिए मजबूर कर दिया। उसे लिटाकर शिकारी का ध्यान बटाने के लिए वे कपास के खेतों में दौड़ गये। झुंड के छोटे छौने प्रायः स्वयं छिप जाया करते हैं और खतरा टलने तक चुपचाप पड़े रहते हैं।

खतरे के समय हिरणियां पीछे रह जाएं तो नर हांककर ले जाता है। किसी को पीछे नहीं छूटने देता।

पंक्ति बद्ध हिरण सुंदर सिलवट बनाते हैं

कृष्णमृग अच्छा तैराक होता है। तमिलनाडु की पायंट कैलिमेर सैंक्चुअरी में एक कृष्णमृग को करीब पचीस गज चौड़े जोहड़ को तैरकर पार करते हुए देखा गया था।

ए.२/७५ राजौरी गार्डन, नयी दिल्ली-२७

बैठे-ठाले

व्यर्थ व्यथा मैंने पाली
चुपचाप पड़ी थी कमरे में
पदचाप तुम्हारी सुन जागी
झांक झरोखे से देखा
तुम द्वार खड़े थे वैरागी

मेहमान आये, भगवान आये
झटपट भागी, खोली सांकल
पदचाप-साध भीतर आये
बैठे कुरसी पर पल दो पल

कुछ भी न कहा, कुछ भी न सुना
सानिध्य लगा पर चिर-परिचित
जो नियति खींच लायी मुझ तक
संयोग कहूं तो क्या अनुचित

अपनी न कही, मेरी न सुनी
क्यों मेरा मन बोला उमगा
आकर्षण बरबस यह कैसा
संदेह-जनित विश्वास जगा

बहता पानी रमता जोगी
आखिर ठहरे तुम बैरागी
क्षण भर को बैठे, चले गये
दुर्दम पीड़ा मन में जागी

जाते, जाते तो कह जाते
क्या लौटोगे इस राह कभी
उस पार मिलोगे या फिर से
जिस आशा पर मैं जिऊं अभी

तुम चले गये तो चले गये
मैं देख रही कुरसी खाली
व्यर्थ व्यथा मैंने पाली

——सुशीला अवस्थी

रोशन द्वार करूं

तुम्हारा रोशन द्वार करूं
अंजुरी भर ले सुबह
तुम्हारा रोशन द्वार करूं
यह उदास-सी व्यथा बुहारूं
प्रीत सुगंध भरूं

करतल भरे उजाले तेरे
फिसल पड़े आकाश
गीतों का अंजन ले आंजूं
बांधूं सुख के पास

घिर आये बादल विषाद के
बिखरे मन के भाव
कहां छिपा है तेरे उर में
वह अनदेखा घाव

मधुर चांदनी में नहला दूं
ढल जाए दुख रात
देखूं उज्ज्वल रूप तुम्हारा
गीतों-भरा प्रभात

सुमन हास अधरों पर धर दूं
आंचल गंध भरूं
मिट जाए उर तिमिर नेह का
दीपक वारि धरूं

——चंद्रकला मिश्र

ये सफेदपोश अपराधी

● डॉ. जयसिंह 'प्रदीप'

एक गंभीर रोगी को निरंतर एक के बाद एक पेनीसिलीन के पांच इंजेक्शन लगाये जाने पर भी कुछ असर न देख, अनुभवी डाक्टर मिनट भर को चक्कर में पड़ गया। लेवल पर लिखे हुए फारमूले को पढ़ा, सब कुछ ठीक था। अंत में अंतर्वस्तु (कंटेंट) की वैज्ञानिक परीक्षा की, तो देखा कि पानी और 'कलर-स्मेल' के अतिरिक्त कुछ भी न था। डाक्टर का रुचि लेना स्वभाविक ही था। अनजान बनकर तथा अधिक आर्डर देने का लालच दे उसने पता लगाया कि वह नकली इंजेक्शन वनता कहां है। अंत में पकड़ाने की बात की गयी तो पता चला कि ऊपर से नीचे तक सभी बड़े लोगों की कृपा थी उस पर। यह घटना कुछ दिनों पहले मिरजापुर ज़िले में घटी थी।

ढाई साल तक लगातार वह आर. टी. ओ. बना मिरजापुर में टैक्स वसूलता रहा। मई १९७३ में जिस दिन पकड़ा गया अकेले उस दिन उसके पास पांच हजार रुपये वरामद हुए, पर तुरंत बड़े लोगों ने उसकी जमानत ले ली। प्रदेश के सबसे बड़े व्यक्ति की छत्रच्छाया उस पर थी, क्योंकि 'आय का' मोटा हिस्सा वह सीधे उनके पास भिजवा देता था।

हमारे समाज में आज ऐसे सफेदपोश अपराधियों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही है, पर व्यवसाय और वस्त्रों से संभ्रांत दीखनेवाले ऐसे व्यक्तियों को पहचानना बड़ा कठिन है। हाल ही में हमने सफेद-पोश अपराधियों के विषय में एक सर्वेक्षण किया, जिसके दौरान अनेक सनसनीखेज रहस्योद्घाटन हुए।

डॉक्टरी का पेशा पवित्र माना जाता है, पर सफेदपोश अपराधियों ने इसे भी अपनाकर बदनाम कर दिया है। दिक्कत यह है कि अपराध की इस बीमारी ने शासकीय डॉक्टरों को भी जकड़ लिया है। झूठे सर्टीफिकेट देना, दवाओं के 'रिएम्बर्स-मेंट' के लिए झूठे प्रमाण-पत्र देना, अवैध गर्भपात करवाना आदि उनके रोजमर्रा

के काम हैं। कुछ डॉक्टरों ने अवैध गर्भपात के लिए मरीज की हैसियत और स्थिति के अनुसार नियमित रेट भी बांध रखे हैं। एक विवाहित स्त्री के लिए अलग और कुमारी लड़की के लिए अलग।

कुछ डाक्टर खूब प्रचार कर शहर-शहर टूर करते रहते हैं। निस्संतान महिलाओं को संतानवती बनाने के लिए हजारों रुपये लेने के बाद भी उन्हें कुछ भी संतोष नहीं दिला पाते।

प्रकाशन व्यवसाय में

प्रकाशक-वर्ग में भी ऐसे अपराधी घुस आये हैं। ऐसे प्रकाशक पचास हजार प्रतियां छापकर भी लेखक को केवल दस हजार बताकर उतने की ही रायल्टी अदा करते हैं। इसी तरह कुछ उपन्यास तथा पाकेट-बुक्स के प्रकाशकों ने कुछ नाम रजिस्टर्ड करवा लिये हैं, और नये-नये लेखकों की रचनाएं इन्हीं नामों से छापते हैं। उनका तर्क है कि 'आज का युग प्रोपेगैंडा का है। एक नये लेखक को लेकर हम खूब प्रचार-कार्य करते हैं। जब वह पाठकों को प्रिय हो जाता है, तो दूसरे प्रसिद्ध प्रकाशकों को पांडुलिपि देने लगता है या फिर अधिक की मांग करने लगता है। न कापीराइट का झगड़ा, न पैसे का रगड़ा। सब अपने आप पहुंचा जाते हैं।' कुछ प्रकाशक अश्लील पुस्तकें छापकर उनका गुप्त-विक्रय करते हैं और हजारों रु. कमाते हैं।

प्रकाशकों की भांति कुछ लेखक भी सफेदपोश अपराधी बन गये हैं। ऐसे लेखक छद्मनामों, विशेषकर लड़कियों के नामों से कामोत्तेजक उपन्यास लिखते हैं। कुछ लेखक अपराध-कथाएं लिखते हैं। इन सबका पाठकों, विशेषकर किशोर पाठकों पर घातक प्रभाव पड़ता है इसके अलावा लेखकों का एक वर्ग ऐसा भी है, जो औरों के लिए थीसिस लिखकर, उसे स्वीकार करवाता है और एवज में ५ से १० हजार रुपयों तक का पारिश्रमिक लेता है। ऐसा लेखक परस्पर-विरोधी दलों के लिए घोषणा पत्र तैयार करने का काम भी करता है।

मोटर एवं स्कूटर-चोर अपराधी

सफेदपोश अपराधियों का एक वर्ग स्कूटर, कार उड़ाने का काम करता है। इनके पास हर माडल के स्कूटर एवं गाड़ियां है। इनके एजेंट शहर में घूम-घूमकर इस बात का अवलोकन करते रहते हैं कि कहां, कौन, कितनी देर के लिए गाड़ी या स्कूटर छोड़कर जाता है। इनके पास एक 'मास्टर की' होती है, जिससे वे किसी भी स्कूटर या गाड़ी का 'लॉक' खोल सकते हैं। स्कूटर उड़ाने की घटना कुछ इस तरह

घटती है—दो व्यक्ति एकदम अपटूडेट वेशभूषा में स्कूटर पर साथ-साथ जाते हैं। उन्हें जिस स्कूटर को गायब करना होता है वे ठीक उसकी बगल में खड़े होकर मिनट भर इधर-उधर का बहाना करते हैं, टहलते- घूमते किसी दूकान से जाकर कुछ लेते हैं, फिर उनमें से एक व्यक्ति बगलवाले दूसरे स्कूटर को खोलकर लापता हो जाता है। यदि स्कूटर का 'लाक' खोलते हुए उसके मालिक ने उसे देख लिया तो कहता है 'एक्सक्यूज मी, भूल गया।' इसी तरह ये लोग गाड़ियां तक उड़ा देते हैं।

१९६५ के आसपास 'भारत हेवी इलेक्ट्रिकल कारपोरेशन' के नाम से ढेर सारे पदों के लिए आवेदन-पत्र मांगे गये, वेतनमान बहुत अच्छा था, तमाम सुविधाओं का आश्वासन था, इसलिए हजारों ने आवेदन पत्र भेजे। आवेदन-पत्र के साथ दस रुपये का पोस्टल आर्डर भी भेजना जरूरी था। इस प्रकार इस फर्म ने लाखों रुपया कमाया। बाद में पता चला कि सब नकली है।

संगीत नृत्य के क्षेत्र में भी घुसपैठ कुछ सफदपोश अपराधी संगीत, नृत्य, फोटोग्राफी सिखाने के स्कूल खोलकर चोरी-छिपे अनैतिक कार्यों का अड्डा चलाते हैं। ये लोग पॉश कालोनी में फ्लैट लेकर पति-पत्नी के रूप में रहते हैं। साथ ही कुछ
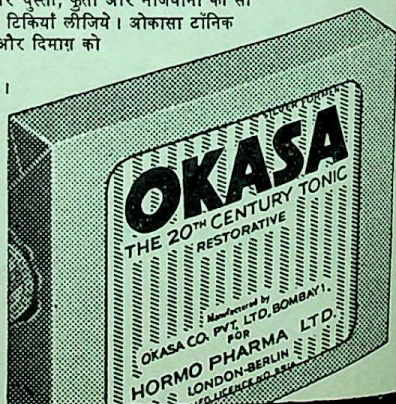
लड़कियां भी होती हैं। देश के विभिन्न शहरों में ऐसे कई अड्डे पकड़े जा चुके हैं।

सर्वेक्षण के दौरान पता लगा कि एक अनाथालय की संरक्षिका गजटेड अधिकारी होते हुए भी अनाथालय में अनैतिक व्यापार का अड्डा चला रही थी। इसके अतिरिक्त वह लड़कियों के विक्रय का भी काम करती थी। कागज पर लड़कियों के केवल पुनर्वास की बात लिखी जाती थी।

कुछ अन्य अपराधी

एक अपराधी जरा-से अभ्यास के बाद किसी भी व्यक्ति की आवाज की नकल कर सकता था, हस्ताक्षर बना सकता था। वह शरीर-सौष्ठव से भी अच्छा था। सदा अच्छी वेशभूषा में रहता। वह किसी शहर में जाकर अच्छी कालोनी में फ्लैट लेकर रहने लगता। सुबह दस बजे, टैक्सी बुलवाकर निकलता, पांच बजे लौटता। पूछने पर बतलाता कि आई. ए. एस. प्रोबेशन में है। वह कुछ ऐसी स्थिति पैदा करता कि विवाह-योग्य कन्याओं के पिता उसके पास शादी का प्रस्ताव लेकर पहुंचते। अच्छा दहेज लेकर वह शादी भी कर लेता, पर कुछ समय बाद गायब हो जाता। ऐसा ही एक युवक कुछ समय पूर्व मध्यप्रदेश में भी गिरफ्तार किया गया था।

'स' रेलवे में बुकिंग-क्लर्क था। टी. सी. से उसकी सांठ-गांठ थी, फलतः उसके पास पुनः टिकट आ जाते। वह उन पर नयी तारीख डालकर लोगों के हाथ बेच देता।

'द' स्लीपर-कंडक्टर था। वह अपने पास दो रसीदें रखता—एक असली, एक नकली। नकली रसीद काटकर वह काफी पैसा कमाता।

'क' एक सफेदपोश महिला थी। वह बड़े-बड़े कार्यालयों एवं संस्थाओं में जाकर स्वयं को सैनिक अधिकारी की विधवा बतलाकर सहानुभूति पैदा कर पैसा एकत्र करती।

'नटवरलाल' का नाम शायद ही किसी ने न सुना हो। कहते हैं, उसके चेहरे, डील-डौल वाले दस व्यक्ति और थे। इन सभी के हाथों में 'नटवरलाल' लिखा था, सभी की पीठ में घाव का निशान भी बताया जाता है।

'नटवरलाल' से की गयी भेंट का कुछ संक्षिप्त अंश :

'आप ऐसा क्यों करते हैं?'

'पहले गांव के महाजन ने अत्याचार किया, थोड़े पैसे के लिए। उससे पुलिस अफसर बनकर बदला लिया। फिर बहुत से अत्याचारियों को देखा। बस, तब से आदत-सी बन गयी है।'

'क्या फिर से आप स्वस्थ सामाजिक प्राणी नहीं बन सकते?'

'नहीं, किसी बात को दबाया नहीं जा सकता, बहाव को बदला नहीं जा सकता, रोका नहीं जा सकता है। शर्त

नई पुस्तकें जो आप पढ़ना चाहेंगे

गृहदाह — शरत्चन्द्र
महान बंगला उपन्यासकार की बहु-चर्चित रचना।

एक काली लड़की — ताराशंकर बनर्जी
बंगला देश के मुक्ति-संघर्ष की पृष्ठ-भूमि पर लिखा उपन्यास।

झील के उस पार—गुलशन नन्दा
बहुचर्चित रचना जिसपर अब एक अत्यन्त सफल फिल्म बनी है।

जब खेत जागे—कृश्न चन्दर
एक ऐसे नौजवान की कहानी जिसे फाँसी की सज़ा दी गई . . . .

संयोग —शेखर
एक सेल्ज़-गर्ल के प्रेम और वासना की दर्दभरी कहानी।

गहरी चाल—कर्नल रंजीत
लोकप्रिय जासूसी उपन्यासकार का नया रोमांचकारी उपन्यास।

ऊंचे मकान —गुरुदत्त
यह उपन्यास आज की राजनीति का कच्चा चिट्ठा प्रस्तुत करता है।

मेरी फिल्मी आत्मकथा-बलराज साहनी
लोकप्रिय अभिनेता बलराज साहनी के फिल्मी जीवन की रोचक कहानी।

अपने स्थानीय पुस्तक-विक्रेता से खरीदें

हिन्द पाकेट बुक्स प्राइवेट लि०
जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032

के साथ कहता हूं—प्रदीपजी, मुझे सरकार यदि चीन या पाकिस्तान में (उस समय युद्ध चल रहा था) 'स्पाई' बनाकर भेज दे तो सैकड़ों गुप्तचरों के काम से अधिक काम अकेले कर सकता हूं। मेरी क्षमता का भरसक उपयोग होना ही चाहिए।'

'आपको यदि सब सुविधाएं दे दी जाएं, तो क्या-क्या चाहेंगे ?'

'असंभव है, क्योंकि मुझे ५७ हजार रुपये प्रतिदिन तो केवल वेतन बांटना रहता है, देश-विदेश में फैले अपने सहयोगियों को।'

'अपराध-जगत में कुछ प्रयोग ?'

'हां, फरलांग पार करते मेरी गाड़ी का कलर, नंबर सब बदल जाता था, ऐसा सबसे पहले मैंने ही किया था।'

'क्या आप समझते हैं कि आपका जीवन, . . ।'

बीच में ही बात रोककर नटवरलाल ने कहा, 'बिल्कुल अच्छा नहीं समझता, मगर क्या करूं विवशता है !'

आज सफेदपोश अपराधियों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही है, पर ऐसे लोगों को पकड़कर कारावास दे देने मात्र से यह समस्या दूर नहीं होगी। आवश्यकता है उन स्थितियों को समाप्त करने की, जिनके कारण कोई व्यक्ति अपराधी बनता है।

—द्वारा मंडल वाणिज्य अधीक्षक,
पूर्वोत्तर रेलवे, वाराणसी

वचन-वीथी

आदर्श की प्राप्ति परिणाम-मात्र है। साधन उसका कारण है। अतः साधनों की चिंता ही जीवन की सफलता की कुंजी है।
—विवेकानंद

अपनी सामर्थ्य का ज्ञान हमें शीलवान बना देता है।
—प्रेमचंद

प्रकृति में स्थिति और गति का सामंजस्य हम केवल एक जगह देख पाते हैं और वह है प्रेम।
—रवींद्रनाथ ठाकुर

जिन-जिन मनुष्यों से मैं मिलता हूं वे किसी-न-किसी रूप में मुझसे श्रेष्ठ होते हैं, और इस प्रकार मैं उनसे कुछ सीख पाता हूं।
—इमर्सन

जो अपना सुधार कर लेता है, वह लंबी-चौड़ी बातें करनेवाले देशभक्तों से कहीं ज्यादा जनता का सुधार करता है।
—लेवेतर

जब मैं स्वयं पर हंसता हूं तो मेरा बोझ हलका हो जाता है।
—रवींद्रनाथ ठाकुर

'स्व' का बलिदान करनेवाला व्यक्ति कभी गलती नहीं करता।
—लार्ड लिटन
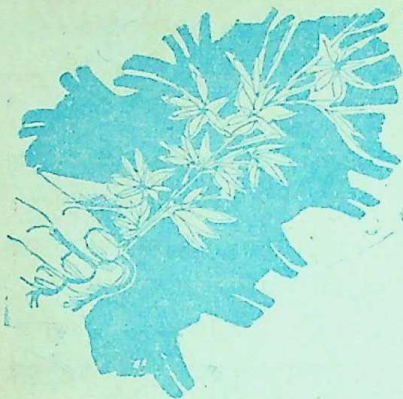
मिनी पेड़ लगाइए

• रितु कुमार

पीपल, जामुन, आम-जैसे विशालकाय वृक्षों को देखकर सपने में भी अनुमान नहीं किया जा सकता कि इन्हें किसी छोटे-से फ्लैट में भी लगाया जा सकता है। लेकिन मनुष्य के उर्वर मस्तिष्क ने इसे भी सच कर दिखाया है। इस क्रिया को बसाई-विधि या मिनी पेड़ लगाने की विधि भी कह सकते हैं।

इस विधि से पेड़ लगाने की कला का आविष्कार चीन में हुआ या जापान में, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। कुछ लोगों का कहना है कि इसकी शुरूआत चीन में हुई और विकास जापान में हुआ। इसके विपरीत कुछ लोगों का कहना है कि इस कला का जन्म और विकास जापान में ही सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी में हुआ। अब तो सारी दुनिया के लोग इस कला से परिचित हो गये हैं।

इस विधि से लगाये गये पेड़ों की विशेषता यह है कि एक नया पौधा भी काफी पुराना, चीन या जापान की पुरानी कलाकृतियों की तरह ही लगता है। चूंकि ऐसे पेड़ बीस सेंटीमीटर से ज्यादा नहीं चौड़े नहीं होते, इसलिए इन्हें लगाने के लिए ज्यादा जगह की जरूरत नहीं होती। कुछ ही महीनों की मेहनत और धैर्य से ऐसे मिनी पेड़ लगाकर घरों में प्राकृतिक एवं ग्राम्य सौंदर्य की अनुभूति की जा सकती है।

चूंकि हमारे देश की जलवायु प्रायः एक-सी नहीं रहती, इसलिए देश के भिन्न-भिन्न भागों के लिए खास किस्म के पौधे ही उपयुक्त हो सकते हैं। शहतूत, अनार, अमरूद, गुलमोहर, लाल-चंपा और चंपा आदि के पौधे दक्षिण, मध्य तथा पश्चिमी भागों की जलवायु के अनुरूप हैं। अनार, हजारा, नासपाती, आड़ू, आलूबुखारा, जामुन, पीपल तथा फूलवाले अनेक झाड़ीदार पौधे उत्तर भारत के लिए ज्यादा उपयुक्त हैं। इनमें शहतूत या लाल-चंपा का पौधा तेजी से बढ़ता है।

अनन्नास के मिनी पौधे को लगाने में सबसे ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है। अनार और बेगमबेलिया के पौधे और

सहनशील होते हैं।

थोड़ी-सी लागत से आप बसाई-विधि से पेड़ लगाने की शुरूआत कर सकते हैं। जैसे, अनार का पौधा गमला सहित किसी नर्सरी से ले लीजिए। साथ ही एक और गमला इस पौधे के स्थानांतरण के लिए ले लें। फिर खाद, कैंची, चाकू आदि लेकर शुरूआत कर सकते हैं। चूंकि इस विधि से पेड़ लगाने का उद्देश्य पौधे को लुभावना आकार देना है, इसलिए पौधे के चुनाव में सावधानी बरतनी चाहिए, नहीं तो आगे चलकर पौधे के बेडौल तथा बदसूरत हो जाने की आशंका रहती है। जिन पौधों का 'कलम' उतारा जाता है, वे इस विधि के लिए अधिक उपयुक्त होते हैं। कभी-कभी ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे पौधे मिल जाते हैं, जो इस विधि के लिए ठीक होते हैं, लेकिन जब तक उन्हें खोदकर, स्थानांतरित किया जाता है, वे मुरझा जाते हैं। इस की वजह समयानुसार पड़नेवाली गांठ एवं उनकी उम्र है। इससे अधिक विश्वसनीय आठ-दस वर्ष पुराना नर्सरी का पौधा होता है जो २३ सालों तक एक ही गमले में रहा हो। कई पौधे ऐसे भी होते हैं जिनका तना अधिक पुष्ट हो जाता है किंतु जिनकी जड़ें बहुत कम होती हैं। यह जान लेना आवश्यक है कि कहीं इनका विकास अप्राकृतिक ढंग से तो नहीं हुआ है? ऐसा होने पर सारा परिश्रम व्यर्थ हो जाता है।

इन पौधों के लगाने और काट-छांट करने की क्रिया उपयुक्त मौसम में ही होनी चाहिए। सामान्यतः इनके लगाने का उपयुक्त समय वसंत या मानसून के प्रारंभ का है। इस समय इनकी कोंपलें निकल आती हैं और जड़ें क्रियाशील होने के पूर्व की स्थिति में आ जाती हैं। कुछ पौधों की पत्तियां समयानुसार झड़ जाती हैं, जैसे आड़ू, आलूबुखारा, अनार आदि। असल में कोंपलें निकलने के समय इनकी जड़ें निश्चेष्ट रहती हैं, इसलिए किसी प्रकार का नुकसान होने का भय बहुत कम रहता है। दक्षिण भारत में, आम शहतूत आदि वृक्षों के लिए जाड़े की ऋतु अच्छी मानी जाती है।

गमले में लगा मिनी पेड़

इन पौधों को लगाने के लिए जब भी जमीन से उखाड़ा जाए तो आसपास की ढेर-सारी मिट्टी, गोलाकार काटकर, पौधे को उठा लेना चाहिए। बाद में अनावश्यक मिट्टी गिराकर अतिरिक्त जड़ें काट देनी चाहिए। जड़ों के अनुपात में इनकी शाखाएं भी काट देनी चाहिए। अगर मौसम अनुकूल हो तो, दो-तीन साल का पुराना पौधा भी नर्सरी से लाकर लगाया जा सकता है। पौधा लगाने से पहले इस पर ध्यान देना जरूरी है कि फूलदान में रखी मिट्टी ज्यादा ताकतवर न हो, अन्यथा पौधों के तेजी से बढ़ने तथा लंबा होकर फैल जाने का अंदेशा रहता है, जिससे आगे काट-छांट करने में असुविधा हो जाती है। अनार के पौधे को एक गमले से दूसरे गमले में स्थानांतरित करने के लिए फरवरी महीना ठीक रहता है। सामान्यतः इन पौधों को नर्सरी से लाने के बाद ही काट-छांट शुरू कर देनी पड़ती है। ज्यादा पुरानी शाखाओं को काटने से तना ज्यादा मोटा हो जाता है।

यदि आप अनार के पौधे को कलमी विधि से लगाना चाहते हैं तो पहले उसे पांच-छह इंच की लंबाई से काट लीजिए। अतिरिक्त पत्तियां छांट दीजिए और गमले की मिट्टी में उंगली-जितना मोटा सूराख करके लगा दीजिए। मिट्टी पहले से ही तैयार रहनी चाहिए। इसमें दो भाग बलुआई-मिट्टी और एक भाग
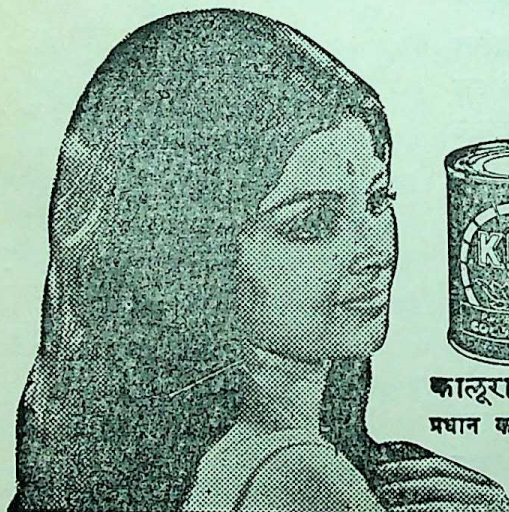
होनी चाहिए। नाइट्रोजन जहां पौधों को बढ़ाने में सहायक होता है, वहीं अधिक नाइट्रोजन पौधों को सुखा भी देता है। इसलिए शुरू में अत्यधिक खाद से बचना चाहिए।

इसके बाद छह महीने तक उसी गमले में रहने देना चाहिए, क्योंकि इस विधि से तैयार होने में पौधों को कम-से-कम दो साल का समय लगता है। जब पौधा तैयार हो जाए तो दूसरे गमले में बदलने के लिए उसकी मिट्टी पर ध्यान देना जरूरी है। एक भाग पोटाश, दो भाग नाइट्रोजन, और चार भाग फास्फेट को बलुआई-मिट्टी में अच्छी तरह मिलाना चाहिए। अब पौधे को सावधानी से पकड़ते हुए गमले को धीरे-धीरे पटकिए ताकि गमला फूटकर मिट्टी से अलग हो जाए। अलग हो जाने पर तीन इंच का व्यास छोड़कर, फालतू मिट्टी धीरे-धीरे गिरा दीजिए ताकि उसकी सारी जड़ें बाहर निकल आयें। बालनुमा जड़ों को कैंची से कतर दीजिए। फिर उन्हें गमले में रखकर पानी से भर दीजिए। इसके बाद इसे सूखने छोड़ दीजिए। जड़ें धीरे-धीरे अपनी जगह बना लेंगी। इसके बाद कुछ दिनों तक इस गमले की मिट्टी को सेवार से ढंक दीजिए।

जब यह नन्हा पौधा लग जाए और इसकी जड़ें जम जाएं तो इसकी शाखाओं की काटछांट अपनी रुचि के अनुसार शुरू कर दीजिए। आप उसे कोई भी

एक महाशय लंच टाइम में बैठे पत्नी को पत्र लिख रहे थे। तभी मित्रों ने आकर बाहर चलने के लिए कहा। इस प्रस्ताव पर वे बोले: "ओफ्फो! तंग मत करो। देखते नहीं पत्नी को पत्र लिख रहा हूं?"

मित्र: "तो इतना धीरे-धीरे क्यों लिख रहे हो?"

महाशय: "इसलिए कि वह पत्र धीरे-धीरे ही पढ़ती है।"

आकार दे सकते हैं। इसके लिए आप महीन तारों का उपयोग कर सकते हैं। जैसे-जैसे पौधा आपकी रुचि की शक्ल लेने लगे वैसे-वैसे तारों को छोटा करते जाइए।

शाखाओं के बाद कोंपलों को हटाना आवश्यक है। अवांछित कोंपलों को निकालते ही हटा दें। ऐसा करने से शाखाओं का स्वस्थ विकास होता है। लेकिन फल देनेवाली कोंपलों को सामान्यतया नहीं हटाना चाहिए।

पत्तियों के हटाने की तकनीक इतनी बारीक है कि इससे साल भर के पौधे को दो साल के पौधे में बदला जा सकता है। लेकिन ज्यादा पत्तियों को हटा देने से छोटी-छोटी शाखाएं निकल आती हैं। इस प्रकार का प्रयोग स्वस्थ एवं मोटे तनेवाले पौधों पर ही करना ठीक होता है। अधिक शाखाओंवाले पौधों की कोंपलें आने से पहले तथा फूल देनेवाले पौधों को फूल झड़ जाने के बाद दूसरे फूलदान में बदल देना चाहिए।

फल या फूल देनेवाले या जिनकी पत्तियां झड़ जाती हैं, ऐसे पौधों को हर बारह महीने बाद स्थानांतरित कर देना चाहिए, क्योंकि इनकी मिट्टी न बदलने पर इनके नष्ट हो जाने की आशंका रहती है। सदाबहार पौधों को हर दूसरे-तीसरे साल दूसरे फूलदान में स्थानांतरित कर देना चाहिए। बदलते समय एक तिहाई मिट्टी निकाल देनी चाहिए। पौधे की काटी गयी जड़ का आखिरी छोर मिट्टी के पिंड से जरा-सा बाहर निकला हुआ होना चाहिए ताकि वे नीचे की ओर सीध में बढ़ सकें। बरतन बदल देने के बाद पानी से भर देना चाहिए। इन्हें स्वस्थ रखने के लिए नियमित रूप से पानी मिलना जरूरी है।

समयानुसार, इन पर फव्वारे या स्प्रे से हलका छिड़काव उत्तम होता है। पत्तियोंवाले पौधों के लिए नाइट्रोजन और फलवाले पौधों के लिए फास्फेट की जरूरत होती है। इसलिए तीस ग्राम नाइट्रोजन या फास्फेट खाद को पांच लीटर पानी में घोलकर पत्तियों पर छिड़कें।

इस प्रकार का छिड़काव साल भर में तीन-चार बार तो करना ही चाहिए। मिट्टी में अतिरिक्त खाद के प्रयोग से बचना चाहिए। इनमें खाद तब तक नहीं देना चाहिए जब तक ऐसा न लगे कि वे खत्म हो गये हैं।

—द्वारा राधेश्याम, १७ अकबर रोड, नयी दिल्ली-११०००१

ज्ञान-गंगा

विस्मयः सर्वथा हेयः प्रत्यूहः सर्वकर्मणाम्।
तस्माद्विस्मयमुत्सृज्य साध्ये सिद्धिर्विधीयताम्॥ (महाभारत)

सारे कामों को रोकनेवाले संशय को छोड़कर अपना कार्य सिद्ध करना चाहिए। काम में जुट जाना ही सिद्धि का द्वार है।

अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं, सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।
जीवत्यानाथोऽपि वने-विसर्जितः, कृतप्रयत्नोऽपि गृहे विनश्यति॥ (हितोपदेश)

दैव से रक्षित व्यक्ति अरक्षित होते हुए भी बच जाता है, किंतु दैवहत चाहे कितना ही सुरक्षित हो, वह नष्ट हो जाता है। वन में छोड़ा हुआ सहायताहीन भी जीवित रहता है, पर लाख उपाय करने पर भी घर में नहीं जीता।

नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते मृगैः।
विक्रमोपार्जितसत्त्वस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता॥ (हितोपदेश)

हरिणों द्वारा सिंह का न तो विधिपूर्वक राजतिलक किया जाता है न संस्कार, परंतु सिंह अपने ही पराक्रम से मृगों का राजा बन जाता है। पराक्रम-पुरुषार्थ से मनुष्य अपना सर्वोच्च स्थान बना लेता है।

एतावज्जन्म साफल्यं यद ना यत्त वृत्तिता।
ये पराधीनतां यातास्ते वै जीवन्ति के मृताः॥ (चाणक्य)

स्वाधीनता ही जन्म की सफलता है। यदि पराधीन होने पर भी लोग जीवित कहे जा सकते हैं तो मृत कौन-से हैं? मृत वही हैं जो पराधीन हैं। —प्रस्तोताः ब्रह्मदत्त शर्मा

विष-कन्याएं और औषध-कन्याएं

● डॉ. शिवनंदन कपूर

मध्ययुगीन साहित्य में विष-कन्याओं का विशद उल्लेख मिलता है। आज विष-कन्याओं से संबंधित पुरानी घटनाएं किसी कल्पना-प्रवण लेखक की कथामात्र प्रतीत होती हैं, पर एक समय ऐसा था जब विष-कन्याएं ही नहीं, विष-पुरुष भी एक वास्तविकता थे। यही नहीं, विष-कन्याओं की भांति औषध-कन्याएं भी हुआ करती थीं।

भारत में कुछ राजा सांपों की भांति विष-कन्याओं का लालन-पालन भी करते थे। बचपन से ही सुंदर कन्याओं का चयन कर, उन्हें विष की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देकर पाला जाता था। धीरे-धीरे विष की मात्रा बढ़ायी जाती थी। विष-भोजन के अतिरिक्त, इन कन्याओं को हाव-भाव से सम्मोहित करने की शिक्षा भी बचपन से ही दी जाती थी। सौंदर्य के साथ अंग-भंगिमा का यह आकर्षण ही अनजाने मानवों को मृत्यु-जाल की ओर खींचता था।

विष-कन्याओं का पालन कुशल वैद्यों की देख-रेख में होता था। मां के उदर में रहने पर ही, मां को अति सामान्य विष दिया जाता था। फिर उत्पन्न होने के पश्चात उसे भी अल्प विष दिया जाता। ज्यों-ज्यों वह विष को पचाने लगती, विष की मात्रा और तीव्रता में वृद्धि होती जाती थी। अलकजवीनी के 'कास्मो-ग्राफिक' के अनुसार, शिशु-कन्या को बचपन से ही विष पर पाला जाता था। पहले कुछ दिनों तक 'अलविस' (विष-पादप का अरबी नाम का पौधा उसके पालने के नीचे रखा जाता था। फिर उस पौधे को उसके गदेले के तले रखकर उसे विष सहन करने के योग्य बनाते थे। फिर दूध के साथ उसकी किंचित मात्रा दी जाने लगती थी। इस प्रकार धीरे-धीरे उसे विषैली बनाया जाता था। अवस्था और पाचन के अनुसार विष की मात्रा बढ़ती जाती।

विष-कन्याएं उपहार रूप में

राजा अपने विलासी शत्रुओं को समाप्त करने के लिए विष-कन्याओं को उपहार भेजा करते थे। राजा पुरु ने भी सिकंदर को विष-कन्या उपहारस्वरूप भेजी थी। अरस्तू ने अपने शिष्य सिकंदर

को इस प्रकार की विष-कन्याओं से बचे रहने के संबंध में पत्र लिखे थे। इसलिए वह पहले से सावधान रहने के कारण बच गया।

राक्षस और चाणक्य की चोटें

राक्षस और चाणक्य की कूटनीतिक चालें इतिहास-प्रसिद्ध हैं। उनमें विष-कन्या का प्रयोग भी किया गया था। नंद-वंश का भक्त मंत्री राक्षस चंद्रगुप्त की हत्या करना चाहता था। इस प्रयोजन से उसने चंद्रगुप्त के पास एक अत्यंत सुंदर विष-कन्या भेजी थी पर चाणक्य दूरदर्शी और अनुभवी विद्वान थे। उन्होंने विष-कन्याएं देखी थीं, अत: उसे देखते ही उसकी यथार्थता जान ली। उपहार लौटाने की अपेक्षा उन्होंने उस नागिन नारी को दूसरे शत्रु पर्वतक के समीप भेज दिया। पर्वतक उसके विष-कन्या होने की बात नहीं जानता था। उसने उससे विवाह करना चाहा। यज्ञ-कुंड के समक्ष उठती लपटों के ताप से विष-कन्या की हथेलियां पसीज उठी थीं। उस पसीने के स्पर्श से ही पर्वतक बेहोश होने लगा। कुछ समय बाद उसकी मृत्यु हो गयी।

पाश्चात्य देशों में

भारत से ही विष-कन्याओं की चर्चा पाश्चात्य देशों में भी फैली थी। अरस्तू ने इसका वर्णन किया है। अमरीकी कवि हाथार्न ने अपने ग्रंथ 'रेपसिनीज डाक्टर' में एक पाश्चात्य विष-कन्या का उल्लेख किया है। विषों पर शोध करनेवाले इटली के एक चिकित्सक ने अपनी कन्या का ही पालन विष-कन्या के रूप में किया था। उसके एक उपवन में जहरीली जड़ी-बूटियां उगायी गयी थीं। उसी उद्यान में बचपन से कुछ-कुछ क्षणों के लिए वह संभालकर ले जायी जाती थी। धीरे-धीरे उसकी सांसों में विष समा गया। यहां तक कि शृंगार के लिए लाये गये फूल उसकी कोमल देहलता का स्पर्श होते ही मुरझा जाते थे। फिर भी एक युवक उसके रूप पर ऐसा मुग्ध हुआ कि इस स्थिति में भी उसे अपना जीवन-साथी बनाने के लिए बेचैन हो उठा। डाक्टर ने कन्या को विष-रहित बनाने के लिए प्रति-विष का प्रयोग किया। बाला विष-रहित तो हो गयी, पर विष उसके जीवन में इतना अनिवार्य हो उठा कि वह अधिक जीवित न रही।

और विष-पुरुष भी

इतिहास में विष-पुरुष भी हो गये हैं। एक दंत-कथा के अनुसार, नादिरशाह विष-पुरुष था, क्योंकि उसके दांत साफ करनेवाली बांदियां कभी-कभी बेहोश हो जाती थीं। एक बार तो उनमें से एक मर भी गयी थी। हो सकता है, उसके दांतों में विष की माला रही हो।

गुजरात के महमूदशाह ने तो विष-कन्याओं के समान अपने बेटे को ही विष-पुरुष बनाया था। उसके साथ रात्रि व्यतीत करनेवाली ललना सुबह का सूरज नहीं देख पाती थी। जिस पर उसकी कृपा-दृष्टि रहती, उसे वह एक अंगूठी दे देता था। उस अंगूठी में स्थित जहर-मोहरे की वजह से वह सुंदरी दूसरी दुनिया का सफर करने से बच जाती थी।

यह विष-पुरुष अपने शत्रुओं को भी अपने जहर से मार डालता था। जिसे वह अपना दुश्मन समझता, उसकी हत्या करने की उसकी एक अनोखी प्रणाली थी। वह उसे अपने महल में बुलवाकर पूर्ण रूप से विवस्त्र करा देता। फिर पान के साथ एक खास जहर चबाकर, उसकी नंगी देह पर थूक देता था। बेचारा तड़प-तड़प कर चंद लमहों में ही दम तोड़ देता। हो सकता है, किसी विशेष विष का सेवन करने से ही वह इतना जहरीला हो उठा हो। वह उस विष-विशेष का अभ्यस्त हो गया हो, या उससे सुरक्षा की कोई औषधि खाता रहा हो।

स्वास्थ्य-लाभ के लिए औषध-कन्या...

जिस प्रकार राजा अपने शत्रुओं ... विरोधियों को नष्ट करने के लिए वि... कन्याओं का प्रयोग करते थे, उसी त... स्वास्थ्य-लाभ के लिए औषध-कन्या... को भी अपने रंग-महल में स्थान देते ... विष-कन्याएं अगर मृत्यु की दूसरी ... थीं, तो औषध-कन्याएं जीवन देने वा... थीं। उन्हें बचपन से ही कुशल वैद्य ... प्रकार के रोगों की औषधें थोड़ी मा... में देकर पालते थे। उन्हें 'रसौषधि' ... दी जाती थी। इस प्रकार उनके ... में आनेवाला अस्वस्थ व्यक्ति शीघ्र ... स्वस्थ हो जाता था। राजा जब भी ... होता, औषध-कन्याएं उसकी सेवा ... प्रस्तुत की जाती थीं। उनकी समी... परिचर्या और स्पर्श उसे अन्य औ... की अपेक्षा अधिक आराम देता। वे सुं... होने के साथ कला-निपुणा भी होती ... यदि एक ओर उनका सौंदर्य पीड़ित ... को पुष्प-सा खिलाता, तो उनकी ... मधुरिमा उसे सुगंधिमय भी बनाया कर... वीणा और औषध-पात्र, दोनों के प्र... में वे अति निपुण होती थीं।

वैसे वाकपटु, सुंदर और सुश्रूषा-कु... नर्सों को भी हम आधुनिक औषध-कन्या... ही कह सकते हैं। उनकी मधुरवाणी ... परिचर्या बीमार का आधा रोग यों ... हर लेती है।

—३८७ टपाल चाल, ...
(म. प्र.)

क्षणिकाएं

आग्रह

मित्र ने
मित्र-पत्नी ने
बहुत आग्रह किया
कुछ लीजिए
कुछ पीजिए
अतिथि मित्र ने
कहा मुसकराकर
मुझे, पिया ही समझिए

—संकटाप्रसाद शुक्ल

मध्यम वर्ग

जिसे हर पल
मर कर
जीने का खटका है
जो हर चीज के बीचोबीच
त्रिशंकु-सा
अटका है

—उदयशंकर 'उदय'

सामयिक अभाव

अब मुद्रा-स्फीति का
होगा रुकाव
नोट कम छपेंगे
कितना सामयिक है
कागजों का अभाव

—दुर्गादत्त 'दुर्गेश'

भूदान

इन्होंने भूदान का
विस्तृत अर्थ लिया है
सारी भूमि का त्यागकर
आकाश मार्ग से
चलना स्वीकार किया है

—सूर्यकुमार पांडेय

सूक्तियां

ऐसा हैंगर जिस पर
दूसरों के लिए विचार टांगे
जाते हैं

आवेश

अवश्य खाने लायक
ऐसा पकवान
जिसे न खाने पर
यह आदमी को खा जाता है

—बिंदुशेखर

पिछला दरवाजा

आगे के दरवाजे यहां
सबके लिए बंद रहते हैं
जो पिछले दरवाजे से
अंदर जाने की सामर्थ्य रखते हैं
उन्हीं के सब काम सुविधा से बनते हैं

—रामकुमार आत्रेय 'प्रभाकर'

दूब
एक सर्वजन सुलभ अमृत

• शैला नार

भारतीय संस्कृति में दूब को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। प्रायः प्रत्येक हिंदू धार्मिक विधि में गणेश पूजन अनिवार्य होता है और बिना कोमल हरी दूब के यह पूजन शुरू नहीं किया जाता। लगता है कि दूब के पौष्टिक एवं रोग-निवारक गुणों के कारण ही उसे इतना महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

दूब सर्वत्र उपलब्ध होती है। शायद इसीलिए इसके गुणों की ओर सबका कम ध्यान जाता है। मुख्यतः दूब दो प्रकार की होती है: सफेद और नीली। दोनों प्रकार की दूब अत्यंत पौष्टिक होती है। इसके विधिवत सेवन से स्फूर्ति बनी रहती है तथा थकावट महसूस नहीं होती। इसी लिए घोड़ों को हरी दूब खिलायी जाती है। दूब में एक और गुण है। वह सदाबहार होती है। उसकी जड़ें धरती में दूर तक जाती हैं। वह जल्दी सूखती भी नहीं है। खेल के मैदानों और लॉनों को हरा-भरा रखने के लिए दूब लगायी जाती है।

त्वचा विकारों के लिए

दूब का स्वाद कुछ मीठा, कुछ कड़ुवा, कुछ कसैला होता है। यह रक्तशोधक होती है और अतिसार, ज्वर, पित्त-दोष को दूर करती है। कय, शरीर या पेट की जलन में भी वह गुणकारी है। त्वचा के रोगों को दूर करने में दूब का सफलता-पूर्वक उपयोग किया जा सकता है। शरीर में जलन, खुजली, चकत्ते और फुंसियां होने पर लगभग दो तोला दूब का रस लेना चाहिए। थोड़ा रस शरीर पर भी लगाना चाहिए।

शरीर में गरमी के कारण अनेक व्याधियां हो जाती हैं—नाक से खून गिरने लगता है। नाक के भीतर पपड़ी-सी जम जाती है। इससे सांस लेने में तकलीफ होती है। ऐसी स्थिति में नाक में दूब का रस डालना चाहिए। दूब के उपयोग की एक और विधि है। एक पाव दूब का रस निकालकर उसमें १० तोले गाय का घी मिलाना चाहिए। फिर आंच में औटाकर इस घी को प्रतिदिन नाक में डालना चाहिए।

कान से पानी बहने, मवाद निकलने, बहरापन महसूस करने या सिर भारी होने पर भी दूब का उपयोग करने से लाभ होता है। उन रोगों को दूर करने के लिए दूब का उपयोग इस प्रकार करना चाहिए: थोड़ी दूब को जड़ समेत उखाड़कर, उसे

साफ कर लें। फिर उसका रस निकाल-कर उसमें तिल्ली अथवा नारियल का तेल मिला लें। बाद में आंच में पकाने के बाद इस तेल की कुछ बूंदें प्रतिदिन कान में डालें।

आंखों की जलन के लिए

आंखों की जलन में भी दूब से काफी आराम मिलता है। दूब को बारीक पीस-कर उसकी टिकिया बनाकर कपड़े में लपेट लें तथा इस कपड़े को आंखों पर रखें। इससे तुरंत लाभ होगा।

घाव ठीक करने के लिए भी दूब का उपयोग किया जाता है। कुछ घाव जब बिलकुल ठीक नहीं हों तो दूब का इस तरह उपयोग करना चाहिए। दस तोले दूब के रस में दस तोले तिल्ली का तेल मिलायें। फिर इसे आंच पर तब तक औटायें, जब तक कि रस बिलकुल न सूख जाए। बाद में इस तेल से कपड़े की पट्टी को भिगोकर उसे घाव पर रखें। इससे घाव शीघ्र भर जाएगा। यह एक अनुभूत प्रयोग है।

स्त्रियों के अनेक रोगों में भी दूब लाभ पहुंचाती है। अनियमित मासिक धर्म, पेट-दर्द, कमर-दर्द आदि को दूर करने के लिए दूब का इस तरह उपयोग किया जाता है; सफेद दूब का रस और अनार की तीन कलियों को एक साथ पीसकर उसे चांवल के मांड के साथ लें। जब तक कष्ट दूर न हो, उसे लेते जाएं। सिर-दर्द दूर करने के लिए दूब को बारीक पीसकर उसका माथे पर लेप करना चाहिए। इस नुस्खे को सभी इस्तेमाल कर सकते हैं।

मूत्र-विकार में भी दूब गुणकारी है। अधिक मात्रा में मूत्र आने पर दूब तथा बेल के रस को आधा-आधा तोला मिलाकर दिन में दो बार लें।

बच्चों की छाती में सूजन होने और इस कारण ज्वर ग्रस्त होने पर दूब का रस पिलाने से आराम पहुंचता है।

इस तरह दूब के और भी अनेक उप-योग हैं। दूब की उपयोगिता को देखते हुए हम उसे सर्वजन सुलभ अमृत कह सकते हैं। ●

"तानपूरा मैंने भिखमंगे को दे दिया है, कमाई का आधा हमें दे जाया करेगा।"

भाग्य अंक छह

• ऐगन

रेलगाड़ी तेजी से चल रही थी। मैं समाचार-पत्र में राशिफल पढ़ रहा था। मेरी राशि में जो लिखा था उसे पढ़ते समय मुझे हंसी आ गयी। 'क्या बेवकूफी है !'—मैं बड़बड़ाया। मेरे सामने बैठे बाबा ने मुझे घूरकर देखा।

"सभी ने राशिफल लिखना शुरू कर दिया है। अब कौन इसमें विश्वास करेगा ?" मैंने अपना मत प्रकट किया।

"यह हंसी की बात नहीं है", बाबा ने गंभीरता से कहा, "मैं भी पहले इसे देखकर

तुम्हारी तरह हंसता था। लेकिन तब मेरे साथ एक घटना घटी। उसके बाद मैं बदल गया। घटना इस प्रकार है—

"एक दिन मैं सोकर उठा था। रात में मैंने एक सपना देखा था। मैं और जो

सब भूल गया, मगर एक बात याद रही वह था अंक छह।

"तुरंत घड़ी देखी, ठीक छह बजे थे। कैलेंडर देखा तो तारीख भी छह थी। स्नान करके मित्रों से मिलने चला। जिस बस में चढ़ा उसका नंबर था ६६६। टिकट लिया, उसका नंबर था—६६६६६। मुझे संदेह होने लगा। क्या मैं सपना तो नहीं देख रहा हूं ? नहीं, मैं जाग रहा हूं—यह जानकर मुझ हंसी आ गयी। मुझे जिस स्टाप पर उतरना था वह छठा स्टाप था। स्टाप पर उतरकर देखा तो मित्र प्रतीक्षा कर रहे थे। उनकी संख्या छह थी। होटल में काफी पीने गये तो ठीक छह रुपये देने पड़े।

"शायद यह छह मेरा भाग्य अंक है! मैं घुड़दौड़ के मैदान की ओर लपका।

"मेरा भाग्य-अंक छह मेरी मदद करेगा, इस प्रकार सोचते हुए पर्स देखा—६६ रुपये थे। किस घोड़े पर पैसा लगायें, इस पर अधिक सोचने की जरूरत नहीं थी। लिहाजा छह नंबर के घोड़ पर दांव लगाया। अब इस घोड़े के जीतने पर किसे संदेह हो सकता है? सुनो, मैंने जिस घोड़े पर पैसा लगाया था नंबर छठा निकला।"

—अनुः के. नील...

प्रवेश

"अवस्था : तेईस वर्ष
शिक्षा : एम. एस-सी. (गणित)
जीवन के टूटते-से दीखनेवाले संदर्भ और तज्जनित संवेदन कभी-कभी ऐसे मोड़ पर छोड़ देते हैं जहां नयी दिशाएं खोजने तथा कुछ नया लिखने की प्रेरणा मिलती है और अपनी अमूर्त अनुभूतियों को कविता अथवा कहानी के माध्यम से अभिव्यक्त कर संतोष का अनुभव करता हूं !"

भ्रमित विहग-सा भटक रहा मन
गली-गली, हर गांव
भरी दुपहरी जली जिंदगी
ढूंढ़ न पायी छांव
आयासों से भी ऊंचे हैं
मंजिल के आयाम
पहुंच न पाये, चलते-चलते
लगी बीतने शाम
ठगे गये संकल्प अधूरे
थके हुए हैं पांव
विश्वासों की तहें टटोलीं
लगा नहीं कुछ हाथ
कभी नहीं कोई दे पाया
दो पल का भी साथ
द्वार सभी हैं बंद कहीं भी
मिलता ठौर न ठांव
कविताएं लिख-लिख कर काटीं
दिन यों हुआ व्यतीत
उकताहट से भरा हुआ मन
रचे कहां से गीत
राग हुए बेसुरे, और सुर
हुए 'कुहू' से 'कांव'

—योगेन्द्रदत्त शर्मा
—सी-११ माडलटाउन,
गाजियाबाद (उ.प्र.)

नेपाली कहानी

● जगदीश घिमिरे

निस्तब्ध रात किसी औरत का निर्जीव हृदय है, जिसे चीरते हुए एक तल्ख आवाज—कुत्ते के छोटे-से पिल्ले का प्रलाप — ध्वज के बांस की तरह खड़ी होती है—आकाश छूते हुए—कां...ऽ...कां...ऽ...य...कां...ऽ...य...कां...ऽ...ऽ...

यह चीत्कार दुहरती है, तिहरती है, चौहरती है, हर बार और सघन, और तीखी, और ऊंची होकर।

किसना को यह अच्छा नहीं लगता।

दरवाजे के बाहर, ठिठुरती ठंडी सड़क पर, नंगे आकाश के नीचे, अजस्र जलस्रोत की तरह यह आवाज बह रही है, प्रत्येक दूसरे क्षण बढ़ती जा रही है, और किसना दरवाजे के अंदर, निचले तल्ले के सर्द कमरे में ठिठुर रहा है। भयावह जाड़े से वह कांप रहा है। उसके तलवे जमीन—जैसे ठंडे हैं, अंगुलियों के छोर सुन्न हैं और घुटने में कुछ दर्द है। ठंडक जितनी बढ़ती है, पीड़ा भी उतनी ही ज्यादा होती जाती है। वह भी चाहता है, एक बार उसी कुत्ते के पिल्ले की तरह चिल्लाये, पर नहीं चिल्ला सकता क्योंकि वह आदमी का पिल्ला है और दरवाजे के अंदर है।

किसना को उस कुत्ते के पिल्ले की आवाज कड़वी लगती है। 'क्या दरवाजा खोल दूं, पिल्ला अंदर आ जाए, लिपट कर सोया जाए, उसे भी गरमी लगे, मुझे भी,' वह सोचता है। बात तो अच्छी है पर वह दरवाजा खोलने के लिए नहीं उठता। दो बेंचों को जोड़कर मुंह-नाक बंद कर सोया है। सांस की गरमी से चेहरा और सीना, कांख की गरमी से दोनों हथेलियां गरम हैं। यदि दरवाजा खोलने के लिए उठा तो वे सब सर्द हो जाएंगे। तलवे हिमालय हो जाएंगे। ना, उसके पास इतना साहस नहीं है।

पिल्ला और तीव्रतापूर्वक उगल रहा है--अपने छोटे-से सीने में न अटी हुई तल्खी।

रेस्तरां बारह बजे बंद हुआ होगा। उसके-जैसे तीन नन्हे छोकरे, तीन वयस्क रसोइयों के साथ चले गये। वे रसोइयों के यहां उनके साथ ही रहते हैं। वह चौथे रसोइये के साथ रहता था, जिसने सिर्फ एक महीने पहले एक वेश्या के साथ शादी कर ली है, और किसना का स्थान स्वत: उसी ने ले लिया है। संप्रति वह रेस्तरां में ही सोता है, अकेले। काठमांडू में वह दूसरी मरतवा जाड़े का अनुभव कर रहा है। पिछले साल जाड़ों में वह पॉल और जूली के साथ रहता था। पॉल एक फ्रेंच हिप्पी था और जूली एक डच हिप्पिन। ... उसके पहाड़ में तो कभी इतना जाड़ा नहीं होता है! गत वर्ष दशहरे के दिनों में वह फुटपाथ पर सोता था, फिर भी इतनी ज्यादा ठंडक महसूस नहीं हुई थी। 'पिल्ला इतनी जोर से क्यों चिल्ला रहा है? सुबह तक तो मर ही जाएगा। क्या दरवाजा खोल दूं?' वह सोचता है।

अव पिल्ले की आवाज की आवृत्ति घट रही है। रुक-रुककर, लेकिन बहुत लंबे समय तक वह 'कां ...ऽ य... कां ...य' कर रहा है।

घर से भागते वक्त भीख मांगने के लिए हाथ और खाने के लिए मुंह साथ लिये अपने पैरों पर सवार होकर भागा था वह—बड़ी सड़क पकड़कर। उसे मालूम था, सुन भी रखा था, पढ़े-लिखे लड़के नेपाल को काठमांडू भी कहते हैं—

लेखक

अतः उसने 'तीन शहर नेपाल' की राह ली। उसने छोटे-से शहर धुलिखेल को 'नेपाल' समझा, बनेपा को 'नेपाल' समझा, ठिमी को 'नेपाल' समझा और काठमांडू की प्रमुख न्यू रोड आ जाने पर उसे लगा कि असली नेपाल अभी दूर है।

जब वह धुलिखेल पहुंचा तो दो दिन का भूखा था। फिर उसने एक रेस्तरां में बरतन साफ करना शुरू किया। यह, अभी जहां वह लेटा है, आठवां रेस्तरां है। बीच में छह महीने बेकार रहा। दो महीने भिखमंगी की। वसंतपुर के फुटपाथ पर सोया। हिप्पी और टूरिस्टों के पीछे उसने भी और सभी छोकरों की तरह हाथ फैलाये पीछा किया—

'नो मामा
नो पापा
हंग्री प्लीज'

वहां सोनेवाले सभी छोकरों को यह गाना याद था। यह गाना उन्हें एक हिप्पी ने सिखाया था, जो खुद भी भीख मांगता फिरता और कभी-कभार उन्हीं लोगों के साथ वहीं सोता था।

किसना और ठंडा हो रहा है। सोते वक्त उसने अपने को काफी गरम किया था, गांजा और चरस के धुएं से। हीटर की जगह सुबह से सुलगती कोयले की बोरसियों और हिप्पियों की भीड़ से रेस्तरां का वह कमरा गरम ही था। सोने से पहले उसने सभी बोरसियों के कोयलों को जमाकर एक ही में डाल खूब आग बनायी और हाथ-पांव, सभी गरम किये थे। गरमी के उसी झोंके में वह दो-एक घंटे सो भी गया, पर अब जग गया है। इसलिए वह समझ नहीं पाता कि वह सोया है या जागा हुआ। सुबह सात बजे मालिक नीचे आएगा। उस वक्त से लेकर रात के बारह-एक बजे तक उसे काम करते रहना होगा। लंच-ऑवर के बाद भीड़ कुछ कम होती है और उस वक्त मालिक की, दोस्त बेयरों की, बावरचियों की आंखों से बचकर थोड़ी देर झपकी ली जा सकती है। इसलिए, कभी भी जी भरकर नहीं सो पाने की नींद, थकान और आलस्य के बोझ के चलते कितना भी जाड़ा क्यों न हो, कितनी भी ठंडक क्यों न हो वह अच्छी तरह जगा नहीं। पर पिल्ले के रोने का कटु स्वर वह अवश्य सुन रहा है और परेशान हो रहा है। दरवाजा खोलकर उसे अंदर आने देना है या नहीं, निश्चित नहीं कर पा रहा है।

उसकी थकान, निद्रा और आलस्य को शायद सर्द रात और जागना जीत लेता है। वह तकिये के नीचे से एक चरस-भरी सिगरेट निकालता है। यह आज ही उसे कैथरीना ने दी थी। उसे सुलगाकर वह गहरा कश खींचता है।

पॉल ने इसी जाड़े में, नवंबर में,

आने को कहा था। क्रिसमस हो चुका, पर वह नहीं आया। पॉल के साथ दोस्ती होने पर किसना उसी के साथ सोने लगा था, उसी के साथ खाने, उसी के साथ घूमने। पॉल उसे किराये की मोटर-साइकिल पर चीन के बनाये रास्ते पर बारहविसे तक घुमा लाया था। पॉल नंग-धड़ंग रहता था। उसने ही उसे गांजा-भांग पीना सिखाया था। पॉल कहता था, 'मैं तुम्हें प्यार करता हूं।'

किसना को भी पॉल अच्छा लगता है। इस जाड़े में, इस कड़ाके की सर्दी में वह पॉल के साथ नहीं रह पाया। पॉल नहीं लौटा, न जूली ही। जूली तो नेपाल में ही थी—यारों के साथ नाम्चे बाजार की ओर घूमने गयी थी, पर नहीं लौटी। लौटी होगी, पर उसे नहीं मिली। दोस्त—पीटर, क्रिस्टी, ओम, मेडलिन सभी लौटे, वह नहीं लौटी। जब किसना उसके बारे में पूछताछ करता है, सभी एक ही जवाब देते हैं, 'हू नोज!' जिसका ठीक अभिप्राय क्या है, वह कभी नहीं समझ पाया।

जूली ने भी उसे महीनों अपने कमरे में सुलाया था, अपने साथ।

एक रात, पता नहीं कहां से, रॉबर्ट आ पहुंचा और जूली ने उसे निकाल दिया—बेहया!

वह उसी सिगरेट से दूसरी चरसदार सिगरेट सुलगाता है। चरस के नशे में उसका सर चकराने लगता है। उसे लगता है, वह अपने बिस्तरे से ऊपर उठ रहा है। . . . बाहर पिल्ला चिल्ला रहा है . . .'

हिप्पी शायद इसी बेखुदी को नैसर्गिक अनुभूति कहते हैं। जूली कहती थी, चरस सीधे स्वर्ग पहुंचा देता है। बहुत मुश्किल से समझ पाया था वह यह बात। वह तो अंगरेजी का केवल 'यस' और 'नो' ही

जानता है, और टूटी-फूटी कामचलाऊ बात कर लेता है। उसे लगा कि वह स्वर्ग की ओर जा रहा है। पिल्ला रो रहा है, उसे भी मां की याद आ जाती है—जूली भी तो मां की तरह ही है। प्रेम से उसे अपनी बांहों में भर लेती थी। उसने एक जोड़े तिब्बती जूते खरीद दिये थे उसके लिए।

वह सन साठ की भुखमरी में पैदा हुआ था। पैदा होते ही बाप मर गया। सन सत्तर में उसकी मां ने जब दूसरी शादी कर ली तो सौतेले बाप के पीटे जाने की बेहोशी में दशहरे के पहले वह घर छोड़कर चल दिया था।

चरस के धुएं में उसे अपने सौतेले बाप की मूछों की आकृति दीखती है . . . उसे पॉल के अंदर अपना सौतेला बाप नजर नहीं आ सका . . . सचमुच वह कुछ भी नहीं सोच सकता . . . सचमुच वह स्वर्ग की ओर जा रहा है शायद . . . वह चरस का धुआं निगल रहा है . . . अब वह पिल्ले की कटु आवाज सुनना बंद कर देता है (यों पिल्ला अभी भी चिल्ला रहा है) . . . वह जूली को भूल जाता है . . . अपने ठंडे शरीर को भी . . . कल सुबह सात बजे से काम में जुटने की बाध्यता को भूल जाता है . . . दो स्लाइस ब्रेड और एक ब्लैक टी के नाश्ते को भी . . . महीने के अंत में मिलनेवाले नकद दस रुपये को भी . . . पर यह नहीं भूलता कि यदि उसके मालिक को पता चल जाए कि वह गांजा, चरस पीता है तो पकी-पकायी तनख्वाह छोड़कर उसे वहां से चला जाना होगा।

सिगरेट के ठूंठ को वह अच्छी तरह बुझाकर फेंक देता है—पर ठूंठ को फेंकने के लिए निकाला गया हाथ नहीं लौटा पाता—नशा इतना चढ़ गया है।

उसका मुंह चरस की कड़वाहट से भर गया है। कंठ सूख गया है।

दूसरे दिन वह देखता है, रात में रोता हुआ कुत्ते का वह पिल्ला मां का थन चूस रहा है। इस दृश्य ने उसे रात के लिए चरसदार सिगरेट की याद दिला दी, मां की नहीं।

—अनु. : जगदीशनारायण सिन्हा

एक पुरातत्त्ववेत्ता की लेखिका पत्नी से किसी ने पूछा, "जो व्यक्ति प्राचीन वस्तुओं में अपनी रुचि को केंद्रित रखता है उसका साथ आपको पत्नी के रूप में कैसा लगता है ?" तुरंत उत्तर मिला—"पुरातत्त्ववेत्ता की पत्नी होना किसी भी स्त्री के लिए सौभाग्य की बात है। ज्यों-ज्यों वह पुरानी होती जाती है त्यों-त्यों पति की दिलचस्पी उसके प्रति बढ़ती जाती है।"

अंगुलियां तथा पर्वत

• पी. टी. सुन्दरम्

पिछले अंक में आपने प्रख्यात हस्तरेखा-विद प्रो. पी. टी. सुन्दरम् से अंगुलियों के बारे में जानकारी प्राप्त की । अब यहां प्रस्तुत है शेष अंगुलियों का परिचय तथा हथेली पर बने पर्वतों की जानकारी

तर्जनी—महत्त्वाकांक्षाओं का दर्पण

तर्जनी को गुरु की अंगुली भी कहा जाता है । यह अंगुली नेतृत्व, महत्त्वाकांक्षा, अभिलाषा की जानकारी देती है। दैनं-दिन जीवन में भी हम इस अंगुली का अधिक उपयोग करते हैं—जैसे आदेश देते समय, संकेत करते समय। कोणीय तर्जनी सर्वोत्तम कही जा सकती है। ऐसी अंगुली अत्यंत विकसित शक्ति की परि-चायक होती है। गुरु के विकसित पर्वत के साथ मध्यमा की पहली पोर तक पहुं-चनेवाली तर्जनी व्यक्ति में नेतृत्व-शक्ति की सूचक होती है। सफल शिक्षकों की अंगुलियां ऐसी ही होती हैं। छोटी तर्जनी-वाले व्यक्ति में आत्म-सम्मान, निजी गर्व तथा आकांक्षा का अभाव होता है। तर्जनी की पहली पोर नेतृत्व तथा अंतः-

प्रेरणा की, दूसरी सफल व्यावसायिक रुचि की तथा तीसरी पोर, यदि मोटी और लंबी हो तो, आलस्य और पेटू स्वभाव की द्योतक होती है।

तर्जनी की तीसरी और दूसरी पोर पर तीन खड़ी रेखाएं भी होती हैं। दूसरी और तीसरी पोर पर स्थित ऐसी रेखाओं का अंतर ढाई वर्षों के अंतर का सूचक होता है। इनसे घटनाओं के काल का पता लगाया जाता है। अन्य अंगुलियों के बारे में निर्णय करते समय इस अंगुली के आकार का अध्ययन भी करना चाहिए। साथ ही, नाखून का आकार भी देखना चाहिए। यदि यह अंगुली अंगूठे की ओर झुकती है तो उससे स्वतंत्र रहने की इच्छा का पता चलता है। सशक्त अंगूठे के साथ लंबी और मजबूत तर्जनी ओजस्वी सार्वजनिक प्रवक्ता होने का सबूत है।

मध्यमा—चरित्र का संतुलित चक्र

मध्यमा को 'चरित्र का संतुलित चक्र' भी कहा जाता है। अच्छे आकारवाली मध्यमा संतुलित विचारों की द्योतक है। उससे बुद्धि, तर्क, संतुलन आदि का भी पता चलता है। चपटी नोकवाली अंगुली मौलिकता और सक्रियता की सूचक है। कोणीय नोकवाली छोटे आकार की मध्यमा संतुलन के अभाव की द्योतक है। ऐसी अंगुलीवाले व्यक्ति ओछे तथा भरोसे के नहीं होते हैं।

स्निग्ध तथा सामान्य मध्यमा संतुष्टि और कांति की सूचक होती है। यदि इस अंगुली की पहली पोर लंबी होती है तो व्यक्ति गुह्य विधाओं में दिलचस्पी रखता है। इसके साथ ही यदि तर्जनी भी लंबी तथा कनिष्ठा अच्छी होती है तो व्यक्ति इस विषय में आधिकारिक ज्ञान रखता है। मध्यमा की लंबी दूसरी पोर खेती तथा बागवानी में दिलचस्पी की सूचक होती है। ऐसे व्यक्ति व्यवसाय में सावधान होते हैं। यदि मध्यमा की तीसरी यानी निचली पोर लंबी हो तो व्यक्ति लोभी होता है। जिन व्यक्तियों की मध्यमा गांठदार और लचीली होती है, वे मानसिक रूप से सशक्त और दूसरे लोगों को समझने की अच्छी-खासी ताकत रखनेवाले होते हैं। हालांकि ऐसे व्यक्ति एकांतिक होते हैं, फिर भी उनके मान-सम्मान को मान्यता दी जाती है। यदि मध्यमा तर्जनी की ओर झुकी होती है और उसका पर्वत (शनि पर्वत) थोड़ा हटा होता है तो व्यक्ति में तर्क और आगे बढ़ने की प्रतिभा होती है। मुड़ी हुई सख्त मध्यमा वाले व्यक्तियों से जहां तक हो सके सावधानीपूर्वक बचना चाहिए, क्योंकि ऐसे लोग काफी सख्त और माफ न करनेवाले होते हैं।

अनामिका—यश की सूचक

अनामिका को 'प्रसिद्धि की अंगुली' भी कहा जाता है। सदा हंसमुख और प्रसन्न रहनेवाले व्यक्तियों की अनामिका की प्रथम पोर मध्यमा की प्रथम पोर से लंबी होती है। यदि अनामिका, मध्यमा

जितनी ही लंबी है तो व्यक्ति आशावादी, निर्भीक और किसी भी मामले में खतरे उठानेवाला होता है । इसका कारण यह है कि ऐसे व्यक्ति भविष्य के प्रति अत्यधिक आशावान होते हैं। लंबी या प्रमुख अनामिका वाली स्त्रियां सुंदर और मोहक होती हैं। जिन व्यक्तियों की अनामिका की नोक लंबी और नुकीली होती है, वे संगीत, कला, नाटक आदि के क्षेत्र में निश्चयत: सफलता प्राप्त करते है । लंबी, नुकीली अनामिका सौंदर्यभावना की भी द्योतक होती है। स्त्रियों की अंगुलियां अधिकतर ऐसी ही होती हैं।

कनिष्ठा–विभिन्न प्रतिभाओं की द्योतक

कनिष्ठा से हमें व्यक्ति की वक्तृत्व-प्रतिभा का पता चलता है। अच्छी कनिष्ठा वाले व्यक्ति सहजवक्ता होते हैं । वे सफल लेखक, पत्रकार और ग्रंथकार भी होते हैं। यदि कनिष्ठा बड़ी है और उसके साथ ही अंगूठा भी सशक्त है तो व्यक्ति में अभिव्यक्ति की शक्ति काफी बढ़ी-चढ़ी होती है। विंस्टन चर्चिल इसके अच्छे उदाहरण थे। यदि कनिष्ठा कोणीय अथवा नुकीली होती है तो वक्तृत्व-शक्ति कई गुना बढ़ जाती है । छोटी कनिष्ठा वाले व्यक्ति तुनुकमिजाज, पर ईमानदार होते हैं। वे अपने मन में किसी के प्रति कोई दुर्भावना नहीं रखते। वे स्वयं को चोट पहुंचानेवाले व्यक्तियों की बातों को आसानी से भुला देते हैं, उन्हें क्षमा कर देते हैं । और जब वे देखते हैं कि अन्य संबंधित व्यक्ति उन्हें क्षमा नहीं कर पाये हैं, या कोई बात भुला नहीं पाये हैं तो आश्चर्यचकित होते हैं। व्यावहारिक वैज्ञानिकों की कनिष्ठा सामान्य तथा चौकोर या चपटी नोकवाली होती है।
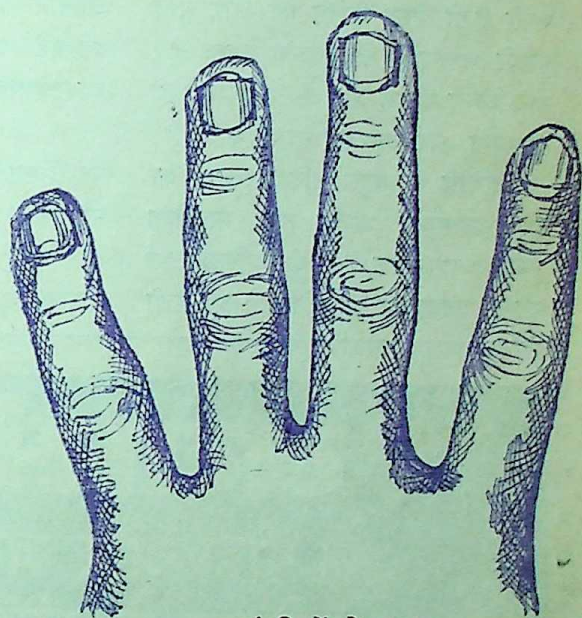
अंगुलियों के प्रकार

पर्वत और रेखाएं

किसी भी हाथ का अध्ययन करते वक्त हमें उसके पर्वतों और रेखाओं पर

सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए। प्रत्येक अंगुली के नीचे, हथेली का जो ऊपरी हिस्सा होता है, उसे पर्वत कहते हैं।

अत्यधिक व्यावहारिक तथा व्यावसायिक वृत्तिवाले लोगों के हाथ अंगुलियों के मूल के पास चौड़े तथा कलाई की ओर कुछ नुकीले अथवा कोणीय होते हैं। यदि हथेली का निचला हिस्सा चौड़ा और भारी है तो ऐसा व्यक्ति पेटू और यौन संबंधी समस्याओं से आक्रांत रहता है। यदि हथेली कोमल और अंगूठा दुर्बल है तो यह बात और उभरकर सामने आती है।

हथेली पर बहुत अधिक रेखाओं का होना उत्साही, भावुक तथा मानसिक दुर्बलता का सूचक है। ऐसे व्यक्तियों का जीवन घटनाशून्य भी होता है। हथेली में गड्ढा दुर्भाग्यपूर्ण चिह्न है। ऐसा व्यक्ति अलोकप्रिय और निरंतर निराशा का शिकार होता है।

लंबे हाथ सुंदर कार्य तथा प्रत्येक बात को विस्तार एवं वारीकी से जानने की प्रवृत्ति के द्योतक होते हैं। छोटे हाथ वाले व्यक्तियों में अपनी सामर्थ्य की सीमा से बाहर, विशाल योजनाओं को अपनाने की वृत्ति होती है। अधिकतर बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों और संस्थाओं के व्यवस्थापकों के हाथ ऐसे ही होते हैं।

पर्वतों का परि[illegible]

पर्वतों का नामकरण उनके गुणों के आधार पर किया गया है।

शुक्र पर्वत : अंगूठे के नीचे का हिस्सा शुक्र पर्वत कहलाता है। [illegible]

अंतर्गत हाथ की अधिकांश उपयोगी रक्त-शिराएं आती हैं। सुविकसित और विशाल शुक्र पर्वत एक प्रभावकारी संकेत है। ऐसे शुक्र पर्वतवाला व्यक्ति प्रेम और मौजमस्ती-वाला तथा सेक्स-प्रिय होता है। उसमें रंगों और संगीत के प्रति प्रेम होता है। चूंकि ये गुण हृदय से संबंध रखते हैं, अतः हृदय-रेखा के संदर्भ में ही इस पर्वत की विशेषताओं का अध्ययन करना चाहिए।

गुरु पर्वत : हथेली में तर्जनी के नीचे वाला स्थान गुरु का पर्वत कहलाता है। उठा हुआ गुरु पर्वत महत्त्वाकांक्षा, उत्साह, गर्व, और सत्ता तथा नियंत्रण की अभिलाषा का द्योतक होता है। मस्तिष्क-रेखा के संदर्भ में ही गुरु-पर्वत का अध्ययन करना चाहिए।

शनि पर्वत : यह मध्यमा के नीचे होता है। अच्छा शनि पर्वत एकांत-प्रियता, एकाग्रता, उद्योगशीलता आदि का परिचायक होता है। अच्छे शनि पर्वतवाला व्यक्ति पवित्र वस्तुओं का आदर करनेवाला, बुद्धिमान एवं व्यावसायिक होता है।

सूर्य पर्वत : सुविकसित सूर्य पर्वत चित्रकारी, काव्य, साहित्य के प्रति प्रेम का द्योतक होता है। ऐसे पर्वतवाला व्यक्ति प्रफुल्ल, उत्साही तथा ललित विचारोंवाला होता है। सूर्य पर्वत की स्थिति अनामिका के नीचे है।

बुध पर्वत : यह पर्वत कनिष्ठा अंगुली के नीचे होता है। अच्छे बुध पर्वतवाला व्यक्ति, यात्राओं व हास-परिहास का
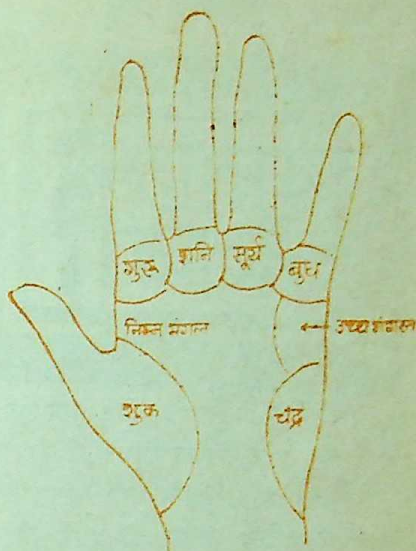
प्रेमी होता है। ऐसे व्यक्ति चतुर, कूट-नीतिज्ञ तथा किसी भी बात को शीघ्र सोचने तथा शीघ्र अभिव्यक्त करनेवाले होते हैं। पर ये बातें हाथ की अन्य रेखाओं और चिह्नों पर भी निर्भर करती हैं।

मंगल पर्वत : मंगल के दो पर्वत हैं—ऋणात्मक एवं धनात्मक। इनमें से एक तो गुरु पर्वत के नीचे होता है तथा दूसरा बुध और चंद्र पर्वत के मध्य स्थित होता है। यह पर्वत आत्मनियंत्रण, गलत काम करनेवाले लोगों के विरुद्ध प्रतिरोध-शक्ति का सूचक होता है।

चंद्र पर्वत : यह पर्वत मंगल पर्वत के नीचे तथा शुक्र पर्वत के सामने होता है। सुविकसित चंद्र पर्वत सुरुचि, कल्पना-प्रवणता, सहानुभूति, अंतःस्फूर्ति तथा काव्य-प्रियता का परिचायक है। ●

कार्यालय में पिछले पंद्रह दिन नित्य एक घंटा काम रोककर मैनेजमेंट विरोधी नारे लगाने का अभियान था। सड़क से निकलती तटस्थ जनता की हमसे कोई सहानुभूति न थी। उसके विचार में हम दफ्तरवाले अपनी सुविधाओं के प्रति तो सजग हैं, किंतु काम के प्रति अनियमित हैं —बहुत अनियमित!

बहुत ईमानदार नहीं हूं मैं काम के विषय में, फिर भी किसी दिन कुछ न करने पर अटपटा लगता है। उससे भी अटपटा लगता है उस काम को पूरा करने के लिए ओवरटाइम की बात करते हुए।

अतः दो-तीन दिन आफिस में ही एक घंटा अधिक ठहरने का निश्चय किया। पहला दिन बीत गया टिप्पणी बिना, किंतु अगले दिन का मेरा रुकना उनसे सहन नहीं हो सका।

"आजकल 'आइडिया' बनाया जा रहा है।"

"अपना दफ्तर, अपना राष्ट्र इन्हीं की कर्मठता के कारण टिका है!"

ये कमजोर वाक्य निश्चय से वि... तो नहीं पाते, किंतु चुभते बहुत हैं, दुःखी बहुत करते हैं। अनेक बार लगता है कि दफ्तर और समाज में बहुत साम्य है।

—सत्यस्वरूप दत्त, जमशेदपुर

हम लोग विकास-खंड कार्यालय में काम करते थे। वहां अविदर्शकों के दो पद होते थे। एक पर एक सज्जन कार्यरत थे। दूसरा पद रिक्त था। अतः वे दोनों पदों का कार्य देखते थे। उनका विकास-खंड अधिकारी से, जो कि कार्यालय के शीर्षस्थ अधिकारी थे, मनमुटाव था। इस कारण वे कार्य में बिलकुल रुचि नहीं लेते थे। विकास-खंड का निर्माण-संबंधी कार्य ठप पड़ गया था। विकास-खंड अधिकारी ने भी उनके स्थानांतरण के लिए अनेक बार वरिष्ठ अधिकारियों को लिखा था तथा उनका स्थानांतरण प्रतीक्षित था। ... से कुछ समय अनंतर विकास-खंड अधिकारी का ही स्थानांतरण हो गया। उनके नये विकास-खंड अधिकारी को उक्त अवि... दर्शक के खिलाफ खोली गयी नस्ती ...

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों तथा १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए।

—सं...

तथा उनसे सावधान रहने का निर्देश भी दिया, पर नये विकास-खंड अधिकारी ने चार्ज लेने के बाद उस नस्ती को बंद कर दिया तथा वरिष्ठ अधिकारियों को सूचित कर दिया कि फिलहाल अधिदर्शक के स्थानांतरण की कोई आवश्यकता नहीं है।

उन्होंने कुछ कार्य अधिदर्शक को सौंपा। दो-तीन दिन बाद वे प्रातः टहलते हुए उनके घर पहुंच गये। कुशल-क्षेम के बाद उन्होंने उनसे पूछा, "आपने काम शुरू कर दिया क्या ?" यद्यपि अधिदर्शक ने काम प्रारंभ नहीं किया था, फिर भी उन्हें कहना पड़ा कि 'शुरू कर दिया है तथा १-२ दिन में पूरा हो जाएगा।'

एक-दो दिन बाद विकास-खंड अधिकारी ने उन्हें चाय पर आमंत्रित किया तथा पूछा, "काम पूरा हो गया क्या ?" उन्होंने बताया कि वह कल पूरा कर देंगे। अंत में उनके व्यवहार के कारण उन्हें वह कार्य पूर्ण कर दूसरे दिन देना पड़ गया।

—नारायणप्रसाद शर्मा, भिलाई

बाईस वर्ष पूर्व, इसी आयुध-निर्माणी में नियुक्त हुए तब कुछ ही महीने हुए थे। घर से मां का पत्र मिला कि मेरी छोटी बहन शांता सख्त बीमार है। मैंने तुरंत दो दिन की छुट्टी का आवेदनपत्र लिखकर फोरमैन के पास भिजवा दिया। पेशी हुई। फोरमैन साहब बोले, "तुम क्या डॉक्टर हो जो तुम्हारा वहां पहुंचना जरूरी है? जितने रुपये आने-जाने में नष्ट करना चाहते हो, चुपचाप बहन के लिए मनीआर्डर कर दो।"

गरदन झुकाकर चुपचाप चला आया। एक सप्ताह बाद मां का दूसरा पत्र मिला। बहन चल बसी थी। मरने से पहले उसने कई बार मुझे याद किया था। 'नौकरी आत्महत्या से भी बड़ा पाप है' परमहंस की यह बात पहले से ही मालूम थी, तथापि अब तक मृत बहन और उन फोरमैन साहब को नहीं भूल पाया हूं और जब भी किसी की छुट्टी का आवेदनपत्र सामने देखता हूं तो उस घटना को याद रखता हूं।

—मदन शर्मा, आयुध-निर्माणी, देहरादून

वर्षों की कठिन तपस्या के बाद दफ्तर में नौकरी मिली। लेकिन मुझे क्या पता कि दफ्तर में अधिकारियों से लेकर लिपिक वर्ग तक की खरी-खोटी बातें सुननी होंगी? पदोन्नति की चाह लिये, चपरासी की नौकरी कर दफ्तर की फाइलों को ढोना, बाबुओं के लिए सब्जी आदि लाना, एक इंटरमीजिएट पास व्यक्ति के लिए कितना कष्टप्रद होता है, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

पढ़े-लिखे चपरासियों की उन्नति की कौन सोचता है? अब जीवन की कठिनाइयां जटिल होती जा रही हैं। आत्मग्लानि, कुंठा और दंभ से जलते हुए दफ्तर की घुटन में जीना पड़ रहा है।

—जगदंबाप्रसाद त्रिपाठी, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नयी दिल्ली-११००२२

एक प्रेरणास्पद जीवनी

हिंदी में जीवनी साहित्य की परंपरा को सुदृढ़ आधार मिलने लगा है, यह बड़ी शुभ बात है। जीवनी साहित्य की जो विशाल और गरिमामय परंपरा बंगला भाषा में है, काश वह हिंदी को भी मिल पाती! लगता है, जीवनी लिखने के लिए बुनियादी तौर पर लेखक के हृदय में जितने प्यार, निष्ठा के साथ-साथ जितनी निस्संगता की अपेक्षा है, उसी की कमी हममें है। पर कभी जब अच्छी जीवनी अपनी भाषा में पढ़ने को मिल जाती है, तब ऐसा लगता है महत्त्वपूर्ण जीवनी हिंदीभाषी ही लिख सकता है। श्रीमती आशाप्रसाद द्वारा लिखित **स्वामी विवेकानंद एक जीवनी** इसी विश्वास का एक सुंदर उदाहरण है।

स्वामी विवेकानंद निश्चय ही आधुनिक भारत के निर्माताओं में अन्यतम हैं और आज उनकी मृत्यु के सत्तर वर्ष बाद भी उनके व्यक्तित्व का प्रभाव निरंतर बढ़ता जा रहा है। इस अप्रतिम प्रभाव का मानवीय, सांस्कृतिक आधार क्या था, विवेकानंद के जीवनकार्यों में, उनके निजत्व में वे रहस्यमय तत्त्व क्या थे, कार्य-नीति और वागार्थ क्या थे, इन सबका आलेख इस जीवनी में है। विवेकानंद का सबसे शक्तिशाली संदेश स्वयं उनका जीवन था। चालीस वर्ष की अल्पायु में ही वे भारतीय जीवन पर अमिट प्रभाव छोड़ गये। इतने अल्पकाल में उस समय के भारत-जैसे राष्ट्र में एक नयी जान फूंकना और एक ऐसे विशाल सामाजिक दर्शन को प्रतिपादित करना, जो आज भी उतना ही सार्थक है, इसके मूल स्रोतों में जाकर इसका एक चित्र उपस्थित कर पाना, इस जीवनी ग्रंथ की अपनी एक उपलब्धि है। दक्षिणेश्वर का पुजारी, युवा नरेंद्र सत्य की खोज में, गुरु से साक्षात्कार, नये जीवन का प्रारंभ, भारत-दर्शन, विश्वविजय की ओर, धर्मसभा के रंगमंच पर से लेकर महाप्रयाण तक जो उनका जीवन था, उनकी पूरी अस्मिता थी, लेखिका ने बड़ी प्रतिभा से उसे अंकित किया है। पूरी मानवता को और विशेष कर भारतीय जनमानस को 'उत्तिष्ठत जाग्रत' मंत्र के योगदान और विवेकानंद

के समाज-दर्शन के विवेचन के साथ-साथ प्रस्तुत ग्रंथ में मनुष्य नरेंद्र और स्वामी विवेकानंद के अल्पज्ञात प्रसंगों, तथ्यों और जीवन-अनुक्रमों की झांकियां हैं।

तीन सौ अट्ठाइस पृष्ठों का पूरा ग्रंथ पढ़ लेने के बाद एक ओर स्वामी विवेकानंद के संपूर्ण व्यक्तित्व और उनके निजत्व की सच्चाई प्राप्त होती है, दूसरी ओर उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध के भारतीय नवजागरण का पूरा दस्तावेज मिलता है। व्याज रूप में हमें दक्षिणेश्वर के पुजारी का प्रसाद और रामकृष्ण परमहंस की ज्योतिशिखा का प्रकाश भी मिल जाता है।

निश्चय ही श्रीमती आशाप्रसाद द्वारा लिखित विवेकानंद की प्रस्तुत जीवनी अपने सभी अर्थों में एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। विशिष्ट इसलिए कि इतनी प्रवहमान, सुंदर भाषा-शैली में विवेकानंद का हिंदी में यह प्रथम मौलिक जीवनचरित है।

—डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल

स्वामी विवेकानंद : एक जीवनी
लेखिका : आशाप्रसाद, प्रकाशक : **सिंधु पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली, बंबई । पृष्ठ : ३२८, मूल्य : पैंतीस रुपये**

कविता-संग्रह

संस्कृत कवि अश्वघोष के 'सूत्रालंकार' में उल्लिखित एक लघु प्रसंग पर आधारित **मां** खंडकाय बुद्ध के सत्य, अहिंसा और करुणा का संदेश प्रचारित करता है।

कथा के कुछ पात्र काल्पनिक हैं। दस्यु-राज विराध के आतंक का मुकाबला करने के लिए स्वयं अधिराज अग्रसर होते हैं। विराध को पकड़कर उसे मृत्युदंड देने का कार्य उत्पल नामक बधिक को सौंपा जाता है। बधिक हिंसा का विरोध करता है। फलस्वरूप उसका शीश काट दिया जाता है। उसके साथ ही उसके छह अनुजों का भी उत्सर्ग होता है। अंत में उनकी मां आकर विराट करुणा, अहिंसा और दया का संदेश प्रेषित करती है। मुक्त और तुकांत छंदों में रचित यह खंडकाव्य अनेक स्थलों पर सुंदर चित्र प्रस्तुत करता है।

ऋग्वेद में आर्य-अनार्य के परस्पर विपरीत जीवन-दर्शनों की जहां टकराहट है, वहां सांस्कृतिक समन्वय भी परिलक्षित होता है। उसकी ऋचाओं का काव्य-लालित्य, कल्पनाप्रवणता तथा उपमा-सौंदर्य कुछ ऐसी चीजें थी जिसने कवि को इस ओर प्रेरित किया कि वह ऋग्वेद का भावानुवाद करे। **स्वर्णरेख** उसका ही परिणाम कहा जा सकता है। मातृ-भाषा हिंदी न होते हुए भी उसमें इस कृति की रचना का श्रेय निश्चित रूप से कवि को जाता है। इसके साथ तीन कथा-काव्यों की भ. रचना की है जो इसमें संकलित हैं। ती ों ही कथाए पौराणिक हैं। काव्य-कला की दृष्टि से अधिकां स्थल वर्णनात्मक हैं। इनकी अपेक्षा ऋग्वेद की ऋचाओं का अनुवाद अधिक काव्यपौष्ठव लिये हुए है।

—डॉ. शशि शर्मा

मां
लेखक : उमाकांत मालवीय, प्रकाशक : साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, इलाहाबाद-३, पृष्ठ ९३, मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

स्वर्णरेख
लेखक : बशीर अहमद 'मयूख', प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ : ९६, मूल्य : नौ रुपये

बंद कमरों की संस्कृति की कविताओं का स्वर संघर्ष और बेबाकी है किंतु कवि का व्यामोही रूप भी अप्रकट नहीं रह पाया है। वह जाने-अनजाने उन स्खलन-बिंदुओं के कभी निकट और कभी दूर हटता दीखता है जो सच्चे रचनाकार की मौलिकता को खंडित करते हैं और उसकी रचनात्मकता को संशयों से भर देते हैं। फिर भी कवि में उभरता स्वर आज के मुहावरे के निकट है।

बंद कमरों की संस्कृति
कवि : केवल गोस्वामी, प्रकाशक : आदर्श साहित्य प्रकाशन, दिल्ली-३१; पृष्ठ : १०४, मूल्य : आठ रुपये पचास पैसे

संचेतना विशेषांक हिंदी कविता की आज की पहचान को बखूबी सामने लाता है। नयी कविता के बाद कविता में भटकाव रीतिकालीन प्रवृत्तियों के चलन को तथा कविता के ह्रास को विराम ही नहीं देता प्रत्युत चुनौती-भरा विकल्प देकर अमित संभावनाएं जगाता है।

संचेतना : (विचार-कविता विशेषांक)
संपादक : महीपसिंह एवं नरेन्द्र मोहन
सम्पर्क : १०८, शिवाजी पार्क, नयी दिल्ली-२६, पृष्ठ : २३२, मूल्य : पांच रुपये

लाल कवि-कृत **छत्रप्रकास** न केवल बुंदेल-वीर छत्रसाल के मुगलों के विरुद्ध छेड़े गये जन-संघर्ष को चित्रित करता है वरन वह १७वीं शती के तीन-चौथाई अंश का मूल्यवान लेखा-जोखा भी प्रस्तुत करता है। इसीलिए इस वीर-काव्य का साहित्यिक ही नहीं, ऐतिहासिक महत्त्व भी है। आलोच्य पुस्तक में उसके संपादक डा. महेन्द्रप्रताप सिंह ने लाल कवि की इस प्रसिद्ध कृति के साहित्य-सौष्ठव के विवेचन के साथ-साथ एक इतिहास के रूप में भी इस कृति की उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। लेखक के अनुसार **छत्रप्रकास** को काव्येतिहास अथवा ऐतिहासिक काव्य न कहकर इतिहास-काव्य कहना अधिक समीचीन है क्योंकि इसका साधन काव्य न होकर इतिहास है। काव्य तो साधनमात्र है।

छत्रप्रकास
संपादक : डा. महेन्द्रप्रताप सिंह, प्रकाशक : श्री पटल प्रकाशन, एल-३१, कालकाजी कालोनी, नयी दिल्ली-४८, पृष्ठ : [illegible], मूल्य : २५ रुपये

—बलदेव वंशी

विविध

आस्मां और भी हैं मेजर हरि[illegible] सिंह अहलूवालिया की बहुचर्चित पु[illegible]

'हॉयर दैन एवरेस्ट' का हिंदी अनुवाद है। १९६५ में एवरेस्ट पर विजय प्राप्त करनेवाले भारतीय पर्वतारोही दल में मेजर अहलूवालिया भी थे और दल के कुछ अन्य सदस्यों के साथ वे भी संसार के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचे थे। बाद में भारत-पाक युद्ध के विराम के क्षणों में वे शत्रु-पक्ष की गोली से घायल हो गये थे। प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने अपने बचपन और युवावस्था के संस्मरणों की पृष्ठभूमि में इन्हीं दो घटनाओं का प्रभावपूर्ण चित्रण किया है। जहां उनकी एवरेस्ट-विजय की कहानी रोमांचक तथा पर्वतारोहण के आनंद और कष्टों का लेखा-जोखा रखती है, वहां शत्रु-पक्ष की गोली से घायल होने के बाद की घटनाएं मर्मस्पर्शी हैं और संघर्ष से जूझने की प्रेरणा देती हैं। पुस्तक का अनुवाद भी सरस और प्रवाहमय है।

आस्मां और भी हैं

लेखक : हरिपालसिंह अहलूवालिया:, अनुवादक : धर्मपाल पांडेय, प्रकाशक : विकास-पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., ५ दरियागंज अंसारी रोड, दिल्ली-११०००६, पृष्ठ : १८६, मूल्य : सतरह रुपये पचास पैसे

धर्मदर्शन की गुत्थियां बड़ी पेचीदी हैं और ज्यों-ज्यों कोई व्यक्ति उन्हें सुलझाने का प्रयास करता है, त्यों-त्यों वे और भी उलझती जाती हैं। प्राच्य एवं पाश्चात्य धर्मों के विषय में अनेक विद्वान लेखकों ने समय-समय पर विचार व्यक्त किये हैं। **धर्मदर्शन : प्राच्य एवं पाश्चात्य** शीर्षक पुस्तक में या. मसीह ने विभिन्न धर्मों एवं ईश्वर संबंधी धारणाओं का विश्लेषण-विवेचन करते हुए भावी धर्मदर्शन की रूपरेखा प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। लेखक के अनुसार 'यदि धर्म परंपरा के साथ मानवतावाद के आधुनिक रूप को संतोषजनक रीति से जोड़ दिया जाए तो यह विश्व का भावी धर्मदर्शन होगा। इसमें परंपरागत धर्मों के व्यक्तिगत विकास के मूल्यों एवं प्रतीकों के साथ तकनीक पर आधृत समाज-कल्याण, अंतर-राष्ट्रीयता. स्वतंत्र चुनाव आदि को भी स्थान देना होगा।' धर्म विषयक जानकारी देनेवाली यह पुस्तक पठनीय है।

धर्मदर्शन : प्राच्य एवं पाश्चात्य

लेखक : या. मसीह, प्रकाशक : भारती भवन, पटना ४, पृष्ठ ६३५, मूल्य : २० रुपये

बंगला देश के उदय के बाद अब यह सत्य स्वीकार कर लिया गया है कि जिन्ना साहब ने जिस पाकिस्तान का स्वप्न संजोया था, वह अब बिलकुल टूट-फूट गया है। **पाकिस्तान टूट गया** इसी 'स्वप्न-भंग' के कारणों और उसकी प्रक्रिया का अच्छा विश्लेषणात्मक चित्र उपस्थित करती है। **—डॉ. ऋतुशेखर**

पाकिस्तान टूट गया

लेखक : राजकुमार, प्रकाशक : हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, पृष्ठ : १८७, मूल्य : आठ रुपये

कालेज के कम्पाउंड से

बी. आर. पी. के संरक्षण में हो रही ग्रेजुएशन की वार्षिक परीक्षा में मैं भी सम्मिलित हुआ। प्राणि-विज्ञान की प्रायोगिक परीक्षा में झींगा मछली का नर्वस सिस्टम दिखाना था। प्रयोग बहुत सहज है पर उस दिन जब आधा इंच के करीब नर्व टूटकर गायब हो गयी तो मैं पसीने से भीग गया। मुझे घबराया देख एक मित्र ने कहा, "किसी तरह इसे जोड़ दो।" मैं यूं ही कुछ रख रहा था कि अचानक मेरे मस्तिष्क में एक बात आयी कि क्यों नहीं मैं जंतु के एनटेनी की नर्व चीरकर उसे टूटी हुई नर्व पर रख पानी के सहारे चिपका दूं। मैंने यही किया भी। कुछ देर के बाद परीक्षक आये और देखकर चले गये। उन्होंने कुछ नहीं कहा, तब कहीं जान में जान आयी।

--शंभुप्रसादसिंह, जगदम कालेज, छपरा

यह स्तंभ युवा-वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनक-डोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

--संपादक

तब मैं इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में बी. एस-सी. द्वितीय वर्ष का छात्र था। गणित की कक्षा में अध्यापक एक सवाल समझाने में उलझे हुए थे। सवाल का हर 'स्टेप' वे जबानी समझाने के बाद ब्लैकबोर्ड पर लिख देते थे और फिर जल्दी ही उसे मिटाकर आगे बढ़ जाते थे।

मैंने आपत्ति की कि 'सर, हम इसे लिख नहीं पाते हैं' तो वे जरा-सा मुस्कराये, और फिर आगे पढ़ाने लगे। अब वे हर 'स्टेप' लिखने के बाद मुझसे पूछते, 'लिख लिया या नहीं ?' और सब लड़के जोर से हंस पड़ते। मैंने अपने आपको बहुत अपमानित महसूस किया। तुरंत खड़ा होकर बोला, 'सर, आप मुझे बोर कर रहे हैं। इसका मतलब तो यह हुआ कि कोई आपसे कुछ पूछे नहीं।'

अध्यापक कुछ देर तो चुप रहे, फिर आगे पढ़ाने लगे। मैं डर गया कि जरूर वे मुझे दंडित कराएंगे। पर शाम तक कुछ नहीं हुआ। शाम को वे होस्टल में मेरे रूम में आये। और सिर झुकाये हुए बोले, "भाई, गलती हो गयी, क्षमा करना। अध्यापक होने के नाते क्लास में क्षमा नहीं मांग सका। मैंने अपनी भूल तभी महसूस कर ली थी।" मैंने देखा उनकी आंखों में प्रतिशोध की चिनगारी नहीं, दर्द झलक रहा था।

--रमेशचंद्र मिश्र, गणित विभाग, कुटीर महाविद्यालय, चक्के (जौनपुर)

एक दिन की बात है कि क्लास में शोर-गुल हो रहा था। अचानक प्रिंसिपल पहुंच गये और हल्ला करते हुए लड़कों में से एक को, जिसका नाम मधु था, बुलाकर क्लास और नाम पूछा। फिर अपनी आदत के अनुसार डायरी निकाल कर 'मधु, बी. एस-सी.' लिख डाला। पर वे अभी दो कदम भी नहीं चले होंगे कि 'लेडीज कामन रूम' से हल्ला सुनायी पड़ा। वे तुरंत उसमें गये और हल्ला करती हुई लड़कियों में से एक को बुलाकर डांटने लगे। उन्होंने उससे क्लास और नाम के बारे में पूछा तो उसने भी 'मधु, बी. एस-सी.' बताया। वे तुरंत डायरी निकालकर नोट करने लगे। तभी उन्होंने देखा कि वहां पहले से ही 'मधु, बी. एस-सी.' लिखा हुआ है। उन्होंने तुरंत उसे ५० रुपये फाइन कर दिया और कहा, "अभी-अभी तुमको वार्निंग दे चुका था। देखो, डायरी में नाम लिखा है।" उस लड़की ने लाख समझाने की कोशिश की, मगर बेकार! उसे प्रिंसिपल साहब की दार्शनिकता का शिकार बनना ही पड़ा।

—राकेश सिनहा, एम. एस-सी.
रांची विश्वविद्यालय, रांची

बायें से राकेश सिनहा, रमेशचन्द्र मिश्र, शंभुप्रसादसिंह, पुष्पी बाधवाड़ी

तब मैं जानकी देवी बजाज कन्या महाविद्यालय के अंतिम वर्ष में थी। एक दिन मैंने घंटे का डंडा दो घने पौधों के गमलों के बीच में छिपा दिया। थोड़ी देर बाद चपरासी को आते देखा। डंडा ढूंढ़-ढूंढ़कर बेचारा परेशान हो आजकल की लड़कियों को कोसने लगा। पंद्रह मिनट बीत गये, जब घंटा बजा ही नहीं तो कौतूहलवश वहां भीड़ लग गयी। तीस मिनट बाद डंडा मिला। तब कहीं घंटा बजा। बाद में कई लड़कियों को कोसते हुए सुना कि "हमारी तो आज की पढ़ाई ही खराब हो गयी। पता नहीं, कौन नालायक है जिसने..."

—पुष्पी बाधवाड़ी 'अयाचिता',
जा. दे. बजाज कन्या महाविद्यालय, कोटा

● अमरसिंह मेहता

भारतीय रत्न-ज्योतिष के अनुसार नवरत्नों में गोमेद राहु का प्रतीक माना जाता है। अपने चमकीले नीले एवं सफेद रंगों के कारण इसका उपयोग आभूषणों में बहुतायत से होता है। गोमेद स्फटिक हरे, नीले, भूरे, नारंगी, लाल, पीतवर्णीय रंगों में मिलते हैं। गहरे लाल, श्याम तथा पीत आभायुक्त गोमेद उच्च कोटि के माने जाते हैं। सफेद व हलके नीले रंग के स्फटिक दुर्लभ होने से भूरे रंग के टुकड़ों को विशेष प्रक्रिया द्वारा सफेद व नीले रंग में परिवर्तित किया जाता है।

गोमेद क्रिस्टल स्वरूप में मिलता है। ये क्रिस्टल जिरकोनियम के यौगिक होते हैं। इनमें अल्यूमीनियम, कैल्शियम, आक्सीजन व सिलिका के तत्त्व होते हैं। कुछ मात्रा में थोरियम व यूरेनियम भी विद्यमान होने से ये अणुधर्मी बन गये हैं, जिससे गोमेद का महत्त्व बढ़ गया है।

गोमेद मुख्यतया स्याम और हिंद-चीन में मिलता है। श्रीलंका में सभी रंगों के गोमेद मिलते हैं। ये अन्य रत्नों से अधिक चमकदार होते हैं। रूस, फ्रांस, तस्मानिया, मेडागास्कर और भारत में भी गोमेद मिलता है।

भारत में गोमेद केरल के चौगट, ब्लांगड़ और छावरा के रेतीले क्षेत्र तथा तमिलनाडु के कन्याकुमारी जिले में मिलता है। इस रेत में ५-१० प्रतिशत गोमेद के कण होते हैं। हमारे देश में सन १९२२ से गोमेद का उत्पादन चल रहा है। केरल में क्विलन जिले के कायनकुलम्—नींदाकराबर क्षेत्र में सर्वाधिक मात्रा अर्थात २.५—८.७ प्रतिशत में गोमेद कण प्राप्त होते हैं।

वैज्ञानिक परीक्षण के तौर पर गोमेद का विशिष्ट गुरुत्व ३.५५ से ३.६७ है। इसका काठिन्य ६-१/२ से ७ व रिफ्रेक्टिव इंडेक्स १.७४२ से १.७४८ है। गोमेद अपेक्षाकृत भारी स्फटिक है। इसमें काठिन्य की थोड़ी कमी होने से इसके स्फटिकों को आपस में रगड़ना नहीं चाहिए अन्यथा खरोंच पड़ती है और चमक भी कम हो जाती है।

दोषरहित, बिलकुल शुद्ध व स्वच्छ किस्म का गोमेद प्रायः दुर्लभ है। इसमें पाये जानेवाले दोषों में रूखापन, धब्बे, रेशे, जाले, अभ्रकी, छालें, चीरें आदि मुख्य

हैं। कटाई और पॉलिश से गोमेद का स्वरूप निखर उठता है।

'रत्नप्रकाश' में सर्वोत्तम किस्म के गोमेद के गुण इस तरह दिये गये हैं :

सुस्वच्छ गोजलच्छायं स्वच्छं स्निग्धं समंगुरु।
निर्दलं मसृणं दीप्तं गोमेदं शुभमष्टधा ॥
विच्छायं लघु रूक्षागं चिपिटं पटलान्वितम्।
निष्प्रभं पीतकाचाभं गोमेदं न शुभावहम् ॥

अर्थात, जो दूर से अति स्वच्छ गोमूत्र के से रंगवाला प्रतीत हो; जो पारदर्शी हो, स्निग्ध वर्ण का हो, समगात्र हो, अर्थात ऊंचा-नीचा और टेढ़ा-मेढ़ा न हो; गुरु अर्थात वजनी दड़कदार हो, जिसमें परत न हो; जो स्पर्श में भी कोमल हो और चमकदार हो। इस प्रकार आठ गुणवाला गोमेद उत्तम होता है।

और जो दूर से झाईं न देता हो, दड़कदार न हो, रूखापन लिये हुए हो, चिपटे अंगवाला दवा हुआ प्रतीत हो, परतदार हो, चमकविहीन अर्थात जो वर्ण को प्रकाशन करनेवाला न हो और पीले कांच के टुकड़े-जैसा दिखायी दे, वह गोमेद उत्तम नहीं होता।

अणुशक्ति अधिनियम १९६२ के अंतर्गत गोमेद को निर्धारित खनिजों में सम्मिलित कर लिये जाने के कारण इसके उत्पादन, मूल्य आदि की जानकारी सुलभ नहीं है। अणुशक्ति विभाग ने केरल में क्विलन जिले के नंदकारा और कायनाकुलम समुद्रतटीय क्षेत्रों में १२,९३,००० टन गोमेद के भंडार होने का अनुमान लगाया था। यह अनुमान १९५६-५७ में ४०५ हेक्टर (१०० एकड़) के क्षेत्र में ७.६२ मी. (२५ फुट) की अधिकतम गहराई के सर्वेक्षण पर लगाया गया था।

गोमेद जटित आभूषण पहने एक महिला

औद्योगिक क्षेत्र में भी गोमेद का उपयोग होता है। चीनी मिट्टी के बरतनों में यह 'स्पेसिफायर' की भांति काम में लाया जाता है। राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों के अनुसार भारतीय गोमेद शुद्ध जिरकोनियम (रिएक्टर ग्रेड)

...उत्पादों के लिए उपयुक्त पाया ... है। जिरकोनियम एल्पेयज का डिऑक्सी... डाइजर्स के रूप में उपयोग होता है। गोमे... रेत (जिरकन सैंड) भारतीय दुर्लभ मृ... लि. (इंडियन रेअरअर्थस लि.) द्वारा मुह... करायी जाती है।

चिकित्सा में उपयो...

गोमेद का उपयोग आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली में किया जाता है। इस प्रणाली के अनुसार यह वायुशूल, कृमिरोग, बवासीर, कफ, ज्वर, मुखगंध आदि रोगों के इलाज में लाभकारी है।

गोमेद को गुलाबजल, केवड़ाजल अथवा वेदमुश्क के जल में घोंटकर का... में लिया जाता है।

नवग्रहों में राहु गोमेद का स्वामी है, अतः राहु की दशा में गोमेद सायंकाल के बाद दो घंटा रात तक पहनना चाहिए।

आभूषणों में इसे रत्नरूप में जड़ित करने के लिए साधारणतया 'ब्रिलियंट कट' स्वरूप में काटा जाता है। लेकिन को... स्फटिक 'मिक्स्ड' या 'स्टेप कट' में का... जाते हैं। अंगूठियों में गोमेद का उपयोग करने पर इसे जल्दी-जल्दी पालिश करा... रहना चाहिए, क्योंकि इसमें रगड़ से खरोंच पड़ जाती है।

गोमेद मन को शांति व प्रसन्नता प्रदान करनेवाला, मस्तिष्क को शक्ति देनेवाला तथा सौभाग्य प्राप्त करानेवाला रत्न माना जाता है।

——कलकत्ता सप्लाई कं. के ऊपर, जयपुर-...

प्रेम पश्चाताप नह

• एरिक सेगल

हार्वर्ड में मेरा अंतिम वर्ष था कि मैंने अध्ययन के लिए रैडक्लिफ पुस्तकालय में जाना शुरू कर दिया। यह स्थान बड़ा शांत और निस्तब्ध था। एक दिन मुझे इतिहास की एक पुस्तक की आवश्यकता पड़ी। मैंने उस पुस्तक को इधर-उधर देखा, किंतु वह कहीं नजर न पड़ी। दो लड़कियां पास ही अध्ययन में मग्न थीं। मैंने उनसे उस पुस्तक के बारे में पूछा तो उनमें से एक कहने लगी, "हार्वर्ड का अपना पुस्तकालय है, पर तुम अमीर लड़के बड़े भुक्खड़ हो। अकारण लड़कियों को तंग करने के लिए यहां चले आते हो।"

"अरे नहीं!" मैंने उत्तर दिया, "मैं हार्वर्ड में अंतिम वर्ष का छात्र हूं और बेहद गरीब हूं।"

वह मुझे व्यंग्यात्मक दृष्टि से देखती रही। फिर बोली, "तुम्हारी आंखें बहुत सुंदर हैं, पर इस प्रशंसा पर ऐंठने न लगना। मैं तुम्हारे साथ काफी पीने कभी न जाऊंगी।"

पर कुछ मिनटों के बाद वह पुस्तक भी मेरे पास थी और वह लड़की भी मेरे साथ काफी पीने जा रही थी। हम एक छोटे-से रेस्तरां में चले गये। मैंने काफी का आर्डर दिया और उसके लिए कुछ खाने को भी मंगवा लिया। वह बेहद सुंदर थी, किंतु उसके स्वर में बड़ी तेजी थी। वह अपना परिचय कराने लगी, "मैं जैनीफर केवलेरी हूं। मैं तो अमरीकी हूं, पर मेरे पूर्वज इतालवी थे।"

"मेरा नाम ओलीवर है।"

"पूरा नाम बताओ।"

"ओलीवर बारे"—मैंने पूरा नाम बता दिया तो वह कहने लगी, "मैंने तो पहले ही अनुमान लगा लिया था कि तुम अमरीका के किसी धनिक परिवार से संबंध रखते हो। बारे परिवार वही है न जिसके कई बैंक हैं और जिसने हार्वर्ड कालेज को एक हाल बनाकर दिया है।"

मुझे स्वीकार करना पड़ा कि उसका अनुमान ठीक है। न जाने मुझे क्यों क्षुब्धता-सी अनुभव हो रही थी। जब उसे पता चला कि मैं अपने कालेज की आइस-हाकी-टीम का सबसे अच्छा 'खिलाड़ी' हूं तो वह भी इतराने लगी।

"लड़के गंवार होते हैं। इसीलिए उन्हें संगीत में कोई रुचि नहीं होती। मुझे तो संगीत से असीम प्रेम है।"

मेरा जी चाहा कि उसे खरी-खरी सुनाऊं, किंतु वह मुझे इतनी अच्छी लग रही थी कि मैं उसे कड़ी बात कह ही न सकता था।

रेस्तरां से निकलते-निकलते मैंने उसके ललाट को चूम लिया। वह रुक गयी।

"क्या मैंने कहा था?"—उसने पूछा।

"क्या?"

"कि तुम मेरा ललाट चूम लो!"

"अरे नहीं... मेरा जी चाहा था!"—मैंने उत्तर दिया।

इस बात पर मेरी उससे चख-चख हो गयी। मैं होटल में अपने कमरे में पहुंचा तो वहां मेरे साथी जमे हुए थे। मैंने जल्दी

जल्दी सबको वहां से निकाल दिया। फिर अपने कमरे में जूते उतारकर बिस्तर पर लेट गया। दूसरे क्षण मैं जैनी को फोन कर रहा था। हम दोनों ने धीमे स्वर में बातचीत की।

"जैनी! . . ."

"हां!"

"जैनी! मेरा खयाल है, मुझे तुमसे प्रेम हो गया है।"

"तुम बड़े मूर्ख हो!" जैनी ने उत्तर दिया और मैंने रिसीवर रखने की आवाज सुनी। उसका उत्तर सुनकर मुझे न तो दुःख हुआ था और न विस्मय। मैं बेहद प्रसन्न था।

अपने पिता के साथ वार्तालाप करते हुए मुझे अनुभव होता है, जैसे अजनबीपन की मजबूत दीवार हमारे मध्य बाधक है।

"ओलीवर बेटे, तुम लॉ-स्कूल में प्रवेश ले रहे हो न?"

"सर, अभी मैंने लॉ-स्कूल में जाने के बारे में कोई निश्चय नहीं किया।"

"मैं प्रिंसिपल को फोन कर दूंगा।" पिता ने कहा।

"सर! अभी इसकी जरूरत नहीं।"

फिर मैंने जाने की अनुमति मांगी तो पिता ने कहा, "बेटे, तुम्हें किसी चीज की जरूरत हो तो कहो।"

"धन्यवाद सर! गुड बॉय!"

फिर मैं जैनी से मिलने के लिए उसके होस्टल गया। वह उस समय नीचे टेलीफोन पर किसी से बात कर रही थी। बार-बार वह किसी को 'प्यारे फिल' कहती। एक बार उसने कहा, "हां फिल! मैं तुमसे प्यार करती हूं . . . बहुत . . ."

अमरीकी उपन्यासकार एरिक सेगल ने अपनी पहली ही रचना 'लव स्टोरी' से साहित्य-जगत में धूम मचा दी। १९७१ में इसकी गणना सर्वाधिक बिक्रीवाली पुस्तकों में हुई। इसपर फिल्म भी बनी, जो लोकप्रिय हुई। इसमें प्रेम का निश्छल रूप दर्शाया गया है। मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण इस उपन्यास का प्रथम हिंदी रूपांतर प्रस्तुत कर रहे हैं सुरजीत।

स्पर्धा और ईर्ष्या से मैं खौलने लगा। जब वह फोन कर चुकी तो मेरा जी चाहा कि उसका गला घोंट दूं, पर मैंने संयम से काम लिया। जब वह मेरे साथ पहले की तरह आस्तीन के साथ लगी बाहर निकली तो मैंने पूछा, "जैनी! यह फिल कौन था?"

"मेरे पिता!"—उसने उत्तर दिया।

मुझे विश्वास न आया। मैंने पूछा, "क्या तुम अपने पिता को फिल के नाम

से पुकारती हो?"

"हां, क्यों इसमें क्या बात है? उनका नाम फिल है। मैं भी उन्हें फिल कहती हूं। तुम अपने पिता को क्या कहते हो?"

"सर!" मेरा उत्तर सुनकर वह हंसने लगी।

"कोई पिता को 'सर' भी कहता है?"

"मैं कहता हूं!" मैंने क्षुब्ध होकर कहा, "मुझे अपने पिता से प्रेम नहीं है?"

"मैं फिल से असीम प्यार करती हूं।"

मैं चुप रहा। मैं उसे कैसे बताता कि मेरे और मेरे पिता के बीच एक बड़ी शून्यता बाधक है। वे रुपये, राजनीति, धन और एक विशिष्ट प्रकार के समाज का बहुत मजबूत स्तंभ हैं और मैं उस जीवन-ढंग को पसंद नहीं करता। जैनी को मेरे पिता की संपन्नता का एहसास था। वह मुझे चिढ़ाने लगी कि मैं तो बस बनता हूं, नहीं तो मैं भी बारे परिवार का ही सदस्य हूं—उसी परंपरा की कड़ी।

जैनी मेरे कमरे में आकर घंटों पढ़ती थी। मैं भी उसके पास चला जाया करता। एक दिन जब वह पढ़ रही थी और मैं भी अपने-आपको पुस्तक में उलझाने का प्रयास कर रहा था तो जैनी ने कहा, "ओलीवर! तुम पढ़ नहीं रहे! मेरी टांगों को बार-बार घूरते हो।"

"अरे नहीं जैनी! जब एक परिच्छेद खत्म हो जाता है तो फिर तुम्हें देखता हूं।" मेरा उत्तर सुनकर जैनी हंसते हुए कहने लगी, "तो फिर तुम्हारी पुस्तक के परिच्छेद बहुत छोटे हैं।"

मैंने पुस्तक फेंक दी और उसकी ओर बढ़ते हुए कहा, "जैनी! मैं कैसे पढ़ सकता हूं। मैं तुम्हारे प्रेम की आग में जल रहा हूं।"

"सचमुच . . . ओलीवर . . ." जैनी ने पूछा। यह कहकर उसने बड़ी तेजी से अपनी पुस्तक बंद कर दी और अपने हाथ मेरी गरदन में डाल दिये। फिर एक क्षण में सब-कुछ हो गया। वह बहुत अच्छी, बहुत मधुर और बहुत गहरी थी। मैं जो उसके प्रेम में फंसा था, उसके साथ मेरा प्रेम और गहरा हो गया।

जब मैंने अपने रूम-मेट स्ट्राइन से अपने प्रेम का जिक्र किया तो वह भौंचक्का रह गया—"पागल हो गये हो! तुम्हारे पिता को यह शादी पसंद न आएगी, समझे?"

यह बात सचमुच सोचनेवाली थी, पर मुझे पहले कौन-सा अपने पिता का इतना खयाल था! एक दिन मैं जैनी के साथ संगीत के एक प्रोग्राम में शामिल हुआ। मैं तो श्रोताओं में शामिल था और जैनी वाद्ययंत्र बजा रही थी। सचमुच उसे संगीत से बड़ी दिलचस्पी थी। जब प्रोग्राम खत्म हुआ और हम वापस आ रहे थे तो मैंने जैनी को बधाई दी। वह मुस्कराकर बोली, "ओलीवर! एक शुभ समाचार तो तुम्हें सुनाना मैं भूल ही गयी! मैं पेरिस जा रही हूं। मुझे छात्रवृत्ति भी मिलेगी।"

मैंने कठोरता से जैनी का हाथ पकड़ लिया, "तुम पेरिस जा रही हो? यह कैसे हो सकता है?"

"क्यों नहीं हो सकता है। मैंने वैसे भी यूरोप का कोई देश नहीं देखा।"

"मैं तुमसे दूर नहीं रह सकता," मैंने विवशता से कहा।

"वह ठिठक गयी—खैर, यह शादी की बात क्या हुई?"

"हां! हां! मैं तुमसे शादी कर रहा हूं," मैंने झुंझला कर कहा।

"क्यों?"

मैंने उसकी आंखों में आंखें डाल दीं—"क्योंकि..."

"यह तो हमारा भाग्य है!" हम एक-साथ कैसे रह सकते हैं?" जैनी ने कहा, "ग्रेजुएशन के बाद भी हमें बिछुड़ना पड़ेगा। तुम करोड़पति हो और मेरे पास एक पैसा भी नहीं।"

"फिजूल बातें न करो, जैनी! तुम मेरी हो। मैं तुमसे शादी करनेवाला हूं।"

जैनी ने मेरे मुंह पर हाथ रख दिया। वह मुसकरायी, फिर बोली, "अब कुछ न कहना। तुम्हारी आंखों ने सब कुछ कह दिया है।"

मैं जैनी को साथ लेकर बोस्टन चल दिया। अपने पिता को मैंने पहले ही सूचना दे दी थी। हम दोनों कार में गये, पर

वहां हमारा उत्साहप्रद स्वागत न हुआ।

मैं घर के पास पहुंचकर मोड़ से आगे निकल गया। कार को फिर पीछे लाना पड़ा। कार को बाहर ही खड़ा किया और हम दोनों भागते हुए घर में प्रविष्ट हुए। मकान को देखकर जैनी मुसकरा रही थी। नौकरानी ने हमारा स्वागत किया। मेरे माता-पिता पुस्तकालय में हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैंने जैनी का परिचय अपने पिता और माता से कराया, फिर इधर-उधर की बातें होने लगीं। चाय के प्याले हाथों में लिये हम बोलते रहे, निरुद्देश्य बातें! मुझे खिन्नता होने लगी थी। मैं देख रहा था कि मेरे पिता को जैनी पसंद नहीं है। मैं सहसा उठकर खड़ा हो गया।

"डैडी! हम जा रहे हैं!"

मेरे पिता ने मुझे अजीब नजरों से देखा। ठंडे और कठोर स्वर में कहा, "तुम रात का खाना खाकर जाओगे!'

"नहीं सर," मैं ने कहा, "हमें जल्दी है।"

जैनी ने एक अजीब बात की। बोली, "नहीं! हमें जल्दी नहीं है।"

मैं चिड़चिड़ा हो गया। जैनी और मेरे बीच तकरार शुरू हो गयी। मैं जाना चाहता था, वह रुकना चाहती थी।

"आखिर तुम क्यों रुकना चाहती हो?"

"मुझे भूख लगी है। मैं खाना खाकर जाऊंगी," उसने बड़ी सादगी से उत्तर दिया। मैंने कनखियों से देखा। मेरे पिता के चेहरे पर एक क्षीण-सी व्यंग्यात्मक मुसकराहट उत्पन्न हुई और फिर चेहरे पर किसी बूंद की तरह जज्ब हो गयी।

खाने की मेज पर बेलुत्फी रही। मेरे पिता जैनी से बात करते रहे, जिसमें उत्सुकता थी। खाने के बाद हमने जल्दी से अनुमति ली और फिर कार में बैठकर वापस चल दिये। जैनी ने रास्ते में कहा, "तुम अपने पिता के साथ बहुत बुरी तरह पेश आते हो।"

हार्वर्ड क्लब के एक समारोह में मुझे अपने माता-पिता से मिलना पड़ा। वह हार्वर्ड क्लब के संस्थापकों में से एक हैं। समारोह में उनका बड़ा आदर-सत्कार किया गया। मैंने पूछा, "डैडी, आपने जैनी के बारे में अपनी राय नहीं दी।"

"वह अच्छी लड़की है।"

"आप मुझे स्पष्ट राय बतायें।"

"तुम विद्रोही हो।"

"डैडी, बुद्धिमान और सुंदर लड़की से शादी करना विद्रोह तो नहीं कहलाता।"

"उस लड़की की कोई पारिवारिक परंपरा नहीं है। वह हमारे वर्ग से संबंध नहीं रखती।"

मैं उठ खड़ा हुआ। पिता ने कहा, "भावुक न बनो। एक पुरुष की तरह बातों को सुनो और समझो। यदि तुम उससे शादी करना चाहते हो तो जल्दबाजी से काम न लो। पहले लॉ-स्कूल की परीक्षा

पास करो। उसके बाद तुम्हें सत्य ज्ञात हो जाएगा। तब भी तुम समझो कि उसके साथ शादी जरूरी है तो फिर शादी कर लेना।"

"मैं उससे प्रेम करता हूं डैडी, इसलिए इस प्रकार की किसी भी परीक्षा में पड़ने के लिए तैयार नहीं।"

"तुम अभी बच्चे हो, नासमझ हो!"

"आप गलत समझते हैं।"

यह कहकर मैं वहां से चल दिया। अपने पिता के जीवन से निकल आया—अपने पैरों पर खड़ा होने का संकल्प मन में लिये हुए।

रहोड आईलैंड में एक भद्दे-से महल्ले में जैनी के पिता फिल केवलेरी रहते थे। जब हमने कार गली में खड़ी की तो मकानों के छज्जों और दरवाजों में बैठे धूप सेंकते हुए कई लोगों ने जैनी को आवाज देकर पूछा, "यह लड़का कौन है? कैसा है?" जैनी ने जलभुनकर उत्तर दिया "अपना ही है। बहुत अच्छा है।"

रास्ते में वह कार में बैठी बार-बार मुझे तंग कर रही थी कि मैं अपने पिता के साथ सुलह कर लूं, पर मैंने उसकी एक न सुनी थी। अब मैं उसके पिता के सामने खड़ा था। मैंने उनसे हाथ मिलाया, "आप कैसे हैं सर!"

"मैं फिल हूं, 'सर' नहीं!" उन्होंने मुझे समझाया।

पिता-पुत्री एक-दूसरे से यों मिले जैसे मित्र हों। दोनों में कितना प्रेम और कितनी समानता थी। मैं ईर्ष्या से जल गया। काश मेरे पिता भी कभी मुझसे इस तपाक के साथ मिलते।

खाने के बाद शादी का जिक्र हुआ। फिल केवलेरी ने संतोष प्रगट किया, बल्कि मुझे धन्यवाद भी दिया, पर मेरे और पिता के झगड़े की बात चली तो फिल कहने लगे, "बुरी बात। बहुत बुरी बात! मैं उनसे फोन पर बात करता हूं।"

मैंने उन्हें बहुत रोका, पर फिल केवलेरी ने एक न सुनी। जब जैनी ने कुछ जोर दिया तो वे मान गये। मैं प्रोटेस्टेंट था और जैनी कैथोलिक। शादी किस गिरजा में होनी चाहिए? मेरे मन में यह प्रश्न कभी नहीं उत्पन्न हुआ था। मेरे लिए दोनों गिरजे एक-से थे। धर्म के बारे में मैं कभी गंभीर न था। फिल कहने लगे, "शादी प्रोटेस्टेंट चर्च में ही होगी। ईश्वर इस शादी पर कृपा करेंगे।"

जब हम वापस लौटे तो सारे मामले तय हो चुके थे।

कुछ दिनों बाद जैनी को ग्रेजुएशन की डिग्री मिल गयी। ग्रेजुएशन तो मैं भी कर चुका था, पर डिग्री मिलने का समारोह जैनी के बाद हुआ।

मेरी और जैनी की शादी सादगी से हो गयी। उसमें न मेरे पिता शामिल हुए और न माता। शादी के बाद हमने मेहमानों को एक रेस्तरां में बीयर की दावत दी। मैंने अवसर निकालकर जैनी से कहा, "जैनी! अब हम पति-पत्नी हैं।"

"मैं पहले भी तुम्हारी थी," जैनी

ने तपाक से उत्तर दिया ।

शादी के बाद हमने पहले तीन वर्ष जिस प्रकार बिताये, उसका विवरण कुछ शब्दों में दिया जा सकता है । हर क्षण हम कोई काम करते रहते, ताकि घर का खर्च चल सके। सख्त संघर्ष के दिन थे। मैं कानून की परीक्षा की तैयारी भी करता था और छोटे-मोटे काम भी। यही हालत जैनी की थी। वह भी बच्चों के एक स्कूल में पढ़ाती और छोटे-मोटे काम भी करती। हमारे हाथ इतने तंग रहते कि मनोरंजन के लिए भी कहीं न जा सकते । हमने अपना हनीमून एक नौका में मनाया था, जहां हम दोनों नौका के यात्रियों की देखभाल के लिए नौकर थे। हनीमून मनाने के बाद हमने नार्थ कैम्ब्रिज में एक छोटा - सा और सस्ता-सा फ्लैट किराये पर ले लिया था। जब पहली बार हम अपने घर आये तो जैनी ने एक अजीब बात कही, "तुम मेरे पति हो!"

"हां ! क्यों?"

"सिद्ध करो।"

"कैसे?"

"मुझे उठाकर दहलीज तक ले चलो। यह रस्म है।"

मैंने उसे अपनी बांहों पर उठा लिया। कुछ सीढ़ियां चढ़कर मैं रुका तो वह बोली, "अभी दहलीज नहीं आयी मूर्ख, और आगे बढ़ो।"

दहलीज के अंदर उसे उतारकर मैंने कहा, "तुम बहुत भारी हो।"

हम दोनों हंसने लगे थे।

एक दिन मैं थका-हारा घर लौटा तो जैनी ने एक सुंदर निमंत्रण-पत्र मेरे हाथ में थमा दिया।

मेरे पिता के साठवें जन्मदिन का समारोह मनाया जा रहा था, जिसमें मुझे और जैनी को रात के भोजन पर आमंत्रित किया गया था। मैंने कार्ड फेंक दिया और कानून की एक पुस्तक खोलकर पढ़ने लगा । जैनी बोली, "ओलीवर, अब तुम्हें चाहिए कि अपने पिता से सुलह कर लो।"

"हरगिज नहीं!" मैंने उत्तर दिया।

"उन्होंने तुम्हें आमंत्रित किया है।"

मैंने जैनी को समझाया कि वह मुझे मजबूर न करे। मैं किसी मूल्य पर भी अपने पिता के साथ समझौता करने के लिए तैयार नहीं हूं। मैंने देखा, जैनी मुझे अजीब नजरों से देख रही है।

जैनी ने नम्रता से कहा, "हमें चाहिए कि हम उन्हें क्षमा-याचना का पत्र लिख दें या फोन पर सूचना दे दें कि हम नहीं आ सकते। फोन का नंबर बता दो।"

मैंने फोन का नंबर बता दिया।

पर मैं बेहद उत्तेजित हो चुका था। मुझे जैनी के व्यवहार पर क्रोध आ रहा था कि वह इस मामले में मेरा साथ क्यों नहीं देती। वह फोन पर कह रही थी, "गुड ईवनिंग सर! हमें खेद है... बेहद खेद है कि हम आपके जन्मदिन पर शामिल नहीं हो सकेंगे। हम बेहद लज्जित..."
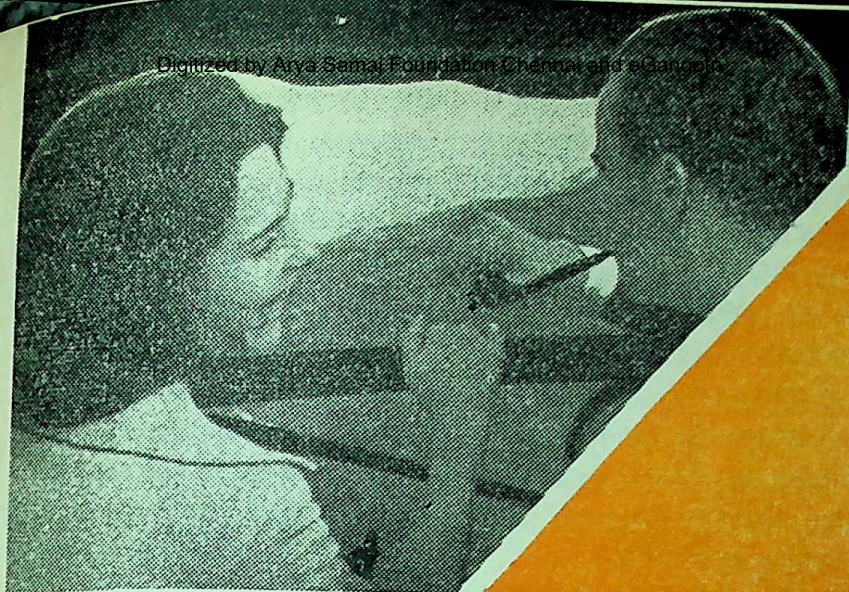
जैनी ने मुझे आवाज दी। मैंने मुड़कर देखा। उसने चोंगे के मुंह पर हाथ रखा था और मुझसे कह रही थी, "ओलीवर, क्या तुम अपने पिता से कोई बात नहीं करोगे ?"

"हरगिज नहीं। कभी नहीं !" मैं दहाड़ा।

"ओलीवर ! मेरे लिए, मेरी खातिर अपने पिता से एक बार बात ही कर लो।"

मैं चुप रहा। उसकी प्रार्थना का कोई उत्तर न दिया। वह चीखकर बोली, "तुम पत्थर-दिल हो !"

अब भी वह आंसू बहा रही थी। फिर उसने फोन पर रखा हुआ हाथ उठाकर मेरे पिता से कहा, "ओलीवर भी आपसे बेहद प्रेम करता है।"

मैं किसी पागल की तरह उठा। चोंगा उसके हाथ से छीनकर नीचे रख दिया और क्रोध से बोला, "जैनी, तुम मेरे जीवन को क्यों नरक बना रही हो ! निकल जाओ यहां से !" मैं यह कहकर कुरसी पर गिर पड़ा। मैंने अपने दोनों हाथों से अपना सिर थाम लिया। पसीने से मेरा शरीर भीग रहा था। कुछ मिनटों के बाद मैंने सिर उठाकर देखा, जैनी जा चुकी थी।

उसका कोट और स्कार्फ मेरा मुंह चिढ़ा रहे थे। मैंने उसे आवाजें दीं। उसे हर जगह ढूंढ़ा, पर वह मुझे कहीं न मिली।

मेरे अनुमान के अनुसार वह जहां-जहां जा सकती थी, मैंने वहां-वहां ढूंढ़ा, पर वह मुझे कहीं दिखायी न दी। हर जगह से मैं निराश लौटा। मेरा हर परिचित मुझे देखकर एक क्षण के लिए रुक जाता। मेरा चेहरा, मेरे दुःख और मेरे पश्चात्ताप की तसवीर बना हुआ था। मैं सड़कों पर खोया-खोया घूमता रहा। फिर घर की ओर

बढ़ा। जैनी के बिना खाली घर में जाने के लिए मन नहीं चाह रहा था। अभी मैं अपने घर से कुछ गज दूर था कि मैंने सीढ़ियों पर किसी को बैठे हुए देखा। वह जैनी थी।

वह सीढ़ियों पर बैठी थी। मैं उससे भयभीत था। धीरे-धीरे उसके पास पहुंचा।

"जैनी!"

"ओलीवर!"

उसने मेरी ओर देखा। फिर बोली, "मैं दरवाजे की चाबी अंदर भूल गयी थी। इसलिए सीढ़ियों पर बैठी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी।"

मेरा दिल चाहता था कि मैं उससे पूछूं कि वह कितनी देर से यहां बैठी है, पर मैंने धीरे से कहा, "जैनी! मुझे खेद ..."

"चुप रहो!" जैनी ने तेजी से कहा। फिर बड़े स्नेहपूर्ण और मधुर स्वर में बोली, "प्रेम का मतलब यह नहीं कि हर बार पश्चात्ताप प्रकट किया जाए।"

मेरी आंखों में आंसू आ गये। मैंने उन्हें छिपाने का प्रयत्न किया, पर एकाध आंसू गालों पर बह निकला। वह मुझसे कितना प्रेम करती थी! मेरी ज्यादती के बावजूद वह मुझे प्रेम का मतलब समझा रही थी। बिस्तर पर मेरे समीप लेटते हुए उसने प्यार से कहा, "ओलीवर! मैंने जो कहा था, उसे सदा याद रखना—प्रेम करनेवाले एक-दूसरे से प्रेम किया करते हैं, याचना नहीं!"

हमारा दिन-रात का परिश्रम काम आया। मेरा खयाल था कि मैं कानून की परीक्षा अच्छे नंबरों के साथ पास न कर सकूंगा। अध्ययन के लिए जितना समय चाहिए था, उतना नहीं मिल पाता था, पर जब मेरा परिणाम निकला तो मैं स्वयं विस्मित रह गया। मैं उस वर्ष तीसरे नंबर पर आया था।

कुछ दिनों में मुझे काम मिल गया। न्यूयार्क की एक फर्म 'जोनास ऐंड मार्टिन' की बड़ी ख्याति है। यह वकीलों की प्रसिद्ध और प्राचीन कंपनी है। मुझे उसमें नौकरी की पेशकश मिली। जैनी बेहद खुश हुई। मैंने अपने पिता से बगावत की थी। जैनी से प्रेम किया था। अब मुझे उस बगावत और प्रेम का फल मिल गया था। जोनास ऐंड मार्टिन कंपनी ने मुझे ग्यारह हजार आठ सौ डालर पर रख लिया था।

मेरे सामने अब सुनहरा भविष्य था।

पहली जुलाई, १९६७। यह दिन कितना खूबसूरत था! कितना उज्ज्वल और दिलचस्प! पहली जुलाई, १९६७ को मैं और जैनी न्यूयार्क के एक सुंदर इलाके में स्थानांतरित हो गये। यह हमारा घर था। यहां से जोनास ऐंड मार्टिन का कार्यालय दस फुट की दूरी पर था। हमने अपने घर को खूब सजाया। मेरी गणना देश के होनहार वकीलों में होने लगी थी। जीवन की सभी खुशियां विद्यमान थीं—सिवा बच्चे के!

हम दोनों पहर बच्चे के बारे में बातें किया करते। हमने उसका नाम भी रख

लिया था, "बोजों!' यह मसखरों और जोकरों-जैसा नाम हम दोनों को बेहद पसंद था। बच्चे की हसरत में हम दोनों तड़प रहे थे, पर आप जानते हैं कि बच्चे की रचना मनुष्य के वश की बात नहीं।

मैं और जैनी दोनों जांच के लिए डॉक्टर के पास गये। डॉक्टर ने हमारा मुआयना किया। वह हम दोनों को अजीब नजरों से देखता रहा। उसने दूसरे दिन जैनी को फिर अस्पताल आने के लिए कहा। जैनी मेरा मजाक उड़ाती रही, मैं उसका मजाक। हम दोनों को यह पता नहीं था कि भाग्य हमारा मजाक उड़ा रहा है!

दूसरे दिन डॉक्टर ने मुझे मेरे कार्यालय फोन किया। मुझे कुछ विस्मय तो हुआ, पर मेरे मस्तिष्क में कोई खयाल न आया कि वह क्यों बुला रहा है। जब मैं उससे मिला तो उसने मुझसे पूछा, "मिस्टर वारे! क्या आप जानते हैं कि आप दोनों पति-पत्नी में से किसमें त्रुटि है?" मैं एक क्षण चुप रहा। फिर बोला, "शायद जैनी में।"

"हां! मुझे खेद है कि जैनी संतान उत्पन्न करने के योग्य नहीं है," डॉक्टर ने मुझे अर्थपूर्ण नजरों से देखते हुए कहा। डाक्टर की बात से मुझे आघात तो अवश्य लगा, पर मैंने अपने मन में कहा, 'हम किसी बच्चे को अपना लेंगे।' यही बात मैंने डॉक्टर से कह दी।

"मिस्टर, समस्या बेहद गंभीर है। ये खतरनाक रूप से बीमार हैं।"

"क्या मतलब?"

"आपकी पत्नी मर रही हैं।"

"यह बकवास है... असंभव!" मैंने क्रोध में उत्तर दिया।

"मुझे खेद है मिस्टर वारे... कि सत्य वही है जो मैंने आपको बता दिया है। उसे रक्त का कैंसर है। जो लाइलाज है।"

जमीन ने जैसे मेरे कदम पकड़ लिये। मैं चुप रहा। मैं नहीं जानता कि मेरा मस्तिष्क क्या सोच रहा था। मैंने मुरदा स्वर में पूछा, "डॉक्टर, तुमने जैनी को तो नहीं बता दिया?"

"नहीं ... मैंने उसे कहा था कि आप दोनों नार्मल हैं और जल्दी बच्चे की आशा की जा सकती है!"

"उसकी बीमारी के बारे में उसे कब बताना चाहिए?" मैंने पूछा।

"यह फैसला आपको करना है।"

"मैं उसे कैसे बताऊंगा," मैं चीखने लगा, "कि वह मर रही है... डॉक्टर! अभी तो उसकी उम्र सिर्फ चौबीस वर्ष है।"

डॉक्टर ने मेरे कंधे पर हाथ रखा और बोला, "आप जब तक हो सके, अपनी पत्नी पर यह प्रकट न होने दें। उसके साथ इस प्रकार जीवन व्यतीत करें जैसे पहले करते रहे हैं। नार्मल रहिए।"

'नार्मल...!' मैंने अपने आप से कहा, 'वह मर रही है। मेरा प्रेम मर रहा है और मैं नार्मल रहूं!'

मैंने ईश्वर के बारे में सोचना शुरू किया। मैंने कभी उसे अपने जीवन में हस्तक्षेप न करने दिया था, पर अब मैं

ईश्वर के बारे में सोच रहा था। उससे प्रार्थना कर रहा था कि वह जैनी को बचा ले। मैंने ईश्वर से कहा, "सर ! आपसे मैंने एक मुद्दत से मुंह फेरे रखा है, पर अब मैं आपके सामने नतमस्तक हूं। आप जो मूल्य चाहें, मुझसे वसूल कर लें, पर जैनी को बचा लें।"

मैंने जैनी को कुछ नहीं बताया। मैं उसका अधिक से अधिक खयाल रखने लगा। वह मेरे इस व्यवहार से कभी-कभी चिढ़ जाती, "ओलीवर ! तुम फिजूल-खर्च होते जा रहे हो। भला रात का भोजन इतने महंगे होटल में खाने की क्या जरूरत थी!" मैं चुप रहता और कभी हंसकर टाल देता। उसे कैसे बताता कि मैं कितने भयानक सत्य से अवगत हूं और वह कितनी अनभिज्ञ है !

कार्यालय में काम करते, मुकदमों की तैयारी में उलझे हुए, घर से कार्यालय जाते और कार्यालय से घर आते, मुझे जैनी की एक-एक बात याद आती। मैं अपने आपसे कहता—'अच्छा ! तो जैनी मर जाएगी।'

एक दिन मुझे याद आया कि जैनी को पेरिस में संगीत की शिक्षा के लिए स्कालरशिप मिल रही थी, जिसे उसने मेरी खातिर छोड़ दिया था। उसे पेरिस जाने की कितनी इच्छा थी। मैंने मन में कहा, "मैं उसे पेरिस ले जाऊंगा।" जब मैं यह प्रस्ताव लिये लौटा तो देखा, जैनी का चेहरा तनिक पीला है। मैंने नित्य की तरह उसे छेड़ते हुए कहा, "जैनी ! हम ज... पेरिस जानेवाले हैं। खूब सैर होगी।"

"मैं पेरिस नहीं जाऊंगी। मुझे कि... चीज की जरूरत नहीं तुम्हारे सिवा।"

"मैं तो तुम्हें मिल चुका हूं। ... पेरिस जाने में क्या बुराई है ?"

जैनी ने करुणापूर्ण स्वर में ... दिया, "ओलीवर ! मैं अधिक से अधिक समय तुम्हारे साथ बिताना चाहती ... अब यही आकांक्षा मन में रह गयी है। मेरी तबीयत कई दिनों से खराब ... लगी थी। मैं आज डाक्टर से मिलने ... थी। उसने मुझे सब बता दिया है।"

मैं गुमसुम बैठा जैनी को देखता ...

जैनी ने मेरे कंधों पर बड़ी ... से हाथ रखकर कहा, "डाक्टर ... रक्त-विशेषज्ञ हैं। डाक्टर शेपर्ड ने ... मिलने के लिए कहा है। क्या हम कल ... मिलने जाएं ?"

"हां जैनी..कल जरूर जाएंगे।"

मौत का भेद निरावरण हो ... था——मौत जो धीरे-धीरे बढ़ रही थी, ... जिसने जैनी के जीवन के दिन गिन ... थे। हम दोनों एक-दूसरे के साथ ... करते, ऐसी बातें जो चौबीस वर्ष के ... के मुंह से अजीब लगती हैं। वह ... "देखो ओलीवर ! व्यायाम किया ... मैं तुम्हें कमजोर नहीं देख सकती।"

"अच्छा जैनी," मैं उत्तर देता।

"ओलीवर ! तुम विधुर हो ... आजाद...और निश्चिंत..."

"नहीं जैनी ! तुम नहीं मरोगी।"

"ओलिवर तुम शपथ दो कि दूसरी शादी अवश्य करोगे।"

"कभी नहीं जैनी ! ...हरगिज नहीं..."

"तुम दूसरी शादी अवश्य करोगे... ...शपथ दो...दो शपथ..."वह कहती।

"अच्छा जैनी..."मेरी आंखों में आंसू भर आते।

एक दिन वह रसोईघर में से बाहर निकली तो उसका रंग उड़ा हुआ था। मैंने पूछा, "जैनी ! क्या हुआ ?"

वह यातना से मुसकरायी और बोली, "ओलीवर, क्या तुम इतने धनी हो कि टैक्सी का किराया खर्च कर सको ?" जालिम की जान पर बनी थी, पर वह जिंदादिली से बाज न आ रही थी।

"जैनी। कहां जाना है ?"

"मुझे जल्दी-से अस्पताल ले चलो।"

वह क्षण आ चुका था जिसकी कि हमें प्रतीक्षा थी। मैंने जल्दी-जल्दी जैनी की आवश्यक चीजें इकट्ठी कीं। फिर उससे पूछा, "जैनी ! कोई विशेष चीज अपने साथ ले जाना चाहती हो तो मुझे बताओ।"

"हां . . . एक चीज!"

"कौन-सी चीज ?"

"तुम्हें... !" वह पीड़ा और यातना के बावजूद मुसकरा रही थी।

टैक्सीवाला बड़े मजे का आदमी था। जब हमने कहा कि हमें माउंट-सनाई अस्पताल जाना है तो वह बोला, "मेरे बच्चो, कोई चिंता न करो। तुम अनुभवी हाथों में हो।" जैनी पीड़ा से दोहरी हो रही थी। ड्राइवर ने प्रेम से पूछा, "तुम्हारा पहला बच्चा होनेवाला है?"

मेरा जी चाहा कि मैं ड्राइवर को

डांट दूं, पर जैनी ने पीड़ा के बावजूद कहा, "हां..."

अस्पताल में टैक्सी खड़ी कर ड्राइवर ने हमारा दरवाजा खोला। हमारे लिए प्रार्थना की, और फिर चला गया।

उससे चला नहीं जाता था। मैंने कहा, "जैनी! मैं तुम्हें उठाकर अस्पताल के अंदर ले जाता हूं।"

पर वह न मानी। जब मैंने आग्रह किया तो वह पीड़ा-भरे स्वर में बोली, "ओलीवर! यह मौत की दहलीज है। मैं स्वयं चलकर जाऊंगी। तुम्हें अपना बोझ अब नहीं उठाने दूंगी।"

डाक्टर एकरमान ने उसे जल्दी से वार्ड में पहुंचाया और मुझसे कहने लगा, "इस रोग में रोगी कभी नहीं बचता। अधिक से अधिक हम यह कर सकते हैं कि इसकी पीड़ा कुछ कम हो जाए और शरीर टूटने-फूटने से सुरक्षित रह सके, पर इसमें बहुत खर्च उठता है। अकारण फिजूल-खर्ची करनेवाली बात है।"

मैं चीखने लगा, "डाक्टर। मुझे इसकी बिलकुल परवाह नहीं कि कितने पैसे खर्च होते हैं, पर जैनी को कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। उसकी सुविधा का हर सामान मुहैया किया जाए। उसे प्राइवेट कमरा दिया जाए। रुपये की परवाह न करो। जितना खर्च होगा, चुका दिया जाएगा।"

"रुपया... रुपया...!"

मैं कार में बैठा-बैठा यही सोच रहा था। मैं बोस्टन की ओर चल दिया था। जब मैं अपने पिता के कार्यालय में पहुंचा तो कई सम्मानित और लखपति व्यक्ति उससे मुलाकात करने के लिए अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहे थे। मेरे पिता के सेक्रेटरी ने मुझे पहचान कर इंटरकॉम पर मेरे आगमन की सूचना दी। पिता ने उसे यह उत्तर नहीं दिया कि उसे अंदर भेज दिया जाए, बल्कि वे दरवाजा खोल कर स्वयं बाहर निकले और मुझे आवाज दी, "ओलीवर बेटे, अंदर आ जाओ।"

मैंने देखा कि उनके चेहरे की रंगत पीली हो गयी है। उनके बाल सफेद हो रहे थे। तीन वर्षों के बाद मैं उनसे मिल रहा था।

मैं अपने पिता के सामने बैठ गया। हम दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा। उनकी मूल्यवान और शानदार मेज पर एक कोने में मेरी और मेरी मां की तसवीर मौजूद थी।

"तुम कैसे हो बेटे?"

"बहुत अच्छा सर।"

"जैनी कैसी है?"

मैंने इस प्रश्न का कोई उत्तर न दिया। मैं उन्हें कुछ बताने के लिए तैयार नहीं था। इस प्रश्न का उत्तर न देने के प्रतिकार में मैंने जल्दी से कहा, "डैडी! मैं आपसे पांच हजार डालर उधार लेने आया हूं। एक जरूरी काम के कारण..."

उन्होंने मेरी ओर प्रश्नात्मक दृष्टि से देखा। फिर बोले, "क्या मैं उस काम के बारे में जान सकता हूं?"

"मैं आपको बता नहीं सकता। मुझे रुपये दे दीजिए..."

"क्या तुम्हें जोनास ऐंड मार्टिन कंपनी से वेतन नहीं मिलता ?"

"जी... मिलता है," मैंने उत्तर दिया, "प्लीज ! आप मुझसे प्रश्न न पूछिए। मुझ रुपये दे दीजिए।"

मेरे पिता ने दरवाजा खोलकर चेकबुक निकाली। चेक लिखना शुरू किया। फिर उन्होंने चेक मेरे सामने रख दिया। मैंने झुककर चेक उठाया। उसे बड़ी सावधानी से तह किया। जेब में रखा और उठकर दरवाजे की ओर चल दिया। दरवाजे के पास पहुंचकर मैंने अपने में हिम्मत पैदा की और कहा, "फादर.. थैंक यू.."

फिल केवलेरी को मैं पहले ही बता चुका था। जैनी अस्पताल में थी और वे मेरे घर में ठहरे हुए थे। सारा दिन वे फर्श रगड़ते, धोते और चमकाते रहते, जैसे उनकी बेटी अपना घर कुछ दिनों के लिए उनको सुपुर्द कर गयी हो और वे उसकी सफाई में लगे रहते हों कि जब बेटी वापस लौटे तो यह न कह सके कि घर साफ-सुथरा नहीं रखा गया।

क्या सचमुच फिल को अपनी बेटी के जिंदा बच जाने की आशा थी। शायद वे भी मेरी तरह इस आशा को सीने से लगाये हुए थे कि जैनी बच जाएगी।

मैं काम पर नहीं जा रहा था। मैंने जोनास ऐंड मार्टिन कंपनी को असल बात से अवगत कर दिया था। जीवन के वे दिन अजीब तरह से बीत रहे थे। भूख न लगती, पर कुछ न कुछ खाना पड़ता। रातों को नींद न आती।

एक रात में जैनी के पास पहुंचा तो वह फिल के साथ धीरे-धीरे बातें कर रही थी। मुझ देखकर वह चुप हो गयी। फिल उठकर जाने लगे, "जैनी ! तुमसे बातें करना चाहती है। मेरे पास सिगरेट खत्म हो गयी है। मैं ले आऊं।"

मैं जैनी के पास बिस्तर पर बैठ गया। उसकी सुंदरता मंद पड़ गयी थी।

"ओलीवर ?"

"हां !"

"ओलीवर ! क्या तुमने किसी को धीरे-धीरे पाताल में गिरते देखा है ?"

"नहीं.."

"मुझे कुछ इस प्रकार अनुभव हो रहा है, जैसे मैं धीरे-धीरे गिरती चली जा रही हूं।"

मैंने आंसूओं को संयत करने का प्रयास किया। वह देख रही थी।

"रोना नहीं," उसने कहा, "बॉख का एक गीत है। मुझे याद नहीं आ रहा.." वह चुप हो गयी। फिर बोली, "मैं अभी फिल से कुछ आवश्यक बातें कर रही थी। मैंने उनसे कह दिया है मेरा अंतिम-संस्कार कैथोलिक चर्च के अनुसार हो। तुम्हें स्वीकार है ?"

"हां !" मैं और क्या कह सकता था।

"देखो ओलीवर, तुम अपना खयाल रखना। तुम्हारा स्वास्थ्य मुझे खराब नजर

आ रहा है।"

"अच्छा !" मैं और क्या उत्तर देता।

"एक बात मानोगे ?"

"क्यों नहीं !"

"मुझे थाम लो।"

अब आंसू रोकना किसके बस में था, पर उसने मुझे फिर डांट दिया, "रोओ मत ! यदि रोना है तो यहां से चले जाओ।"

मैंने आंसू पोंछ लिये। उसके माथे को ऊपर उठाया। उफ् ! मेरे भगवान ! वह कितनी कृश, निर्बल, और दुबली हो चुकी थी।

"नहीं ओलीवर !...यों नहीं.. मेरे पास आकर बैठ जाओ। फिर मुझे थाम लो !"

मैं बड़ी सावधानी के साथ उसके पास बिस्तर पर बैठ गया। फिर उसे अपनी बाहों में समेट लिया।

"धन्यवाद, ओलीवर !" यह उसके अंतिम शब्द थे। ●

रात का अंतिम पहर था सारा अस्पताल सुनसान और बीरान था। मैं सीढ़ियां उतरकर अस्पताल की लाबी में पहुंचा। वहां भी निर्जनता और वीरानी थी। मुझे अपनी पदचाप के अलावा अन्य कोई आवाज सुनायी नहीं दे रही थी। मैं आगे बढ़ा। किसी ने पीछे से मुझे आवाज दी, "ओलीवर !" मैं रुक गया।

यह मेरे पिता की आवाज थी। मैंने मुड़कर देखा वही थे। मैं उनका सामना करने का साहस अपने अंदर न पा रहा था। मैं घूमनेवाले दरवाजे की ओर तेजी से लपका बाहर जाने के लिए, पर वे मेरे सामने खड़े थे।

"ओलीवर !" पिता ने कहा, "तुम्हें चाहिए था कि तुम मुझे सब कुछ बता देते।" बाहर बहद सरदी थी। मैं ठिठुर रहा था। मेरे चेहरे को शीत हवा सख्ती से सहला रही थी।

"बेटे, जैसे ही असल बात का पता चला, मैं कार में सवार होकर तुम्हारे पास पहुंच गया हूं।"

मैं सुनता रहा गुमसुम...

"ओलीवर !" मेरे पिता ने कहा, "मैं तुम्हारे काम आना चाहता हूं। तुम्हें मेरी जरूरत है।"

"जैनी मर चुकी है," मैंने उत्तर दिया।

"ओह ! मुझे खेद है", मेरे पिता ने धीमे स्वर में कहा, जिसमें विस्मय का अंश छाया हुआ था।

भगवान जाने कैसे मेरी जिह्वा पर वह वाक्य आ गया जो कभी उस खूबसूरत लड़की ने मुझसे कहा था, जो अब मर चुकी थी, "प्रेम का मतलब यह नहीं है कि हर बार पश्चाताप प्रकट किया जाए..."

और फिर न जाने कैसे... मुझसे वह हो गया जो अपने पिता की उपस्थिति में पहले कभी न हुआ था।

मैं अपने पिता की बाहों में सिमटकर चीख-चीखकर रोने लगा।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

महाशयजी

चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

COOL

सिल्वर प्रिंस
अपना वादा पूरा निभाता है...
आपकी हर शेव साफ़,
सुथरी और मुलायम
SILVER PRINCE
STAINLESS
SILVER
PRINCE
STAINLESS
सिल्वर प्रिंस
शेव के बाद शेव-
मज़ेदार शेव
Grant.6 HN

शब्द सामर्थ्य बढ़ाइए
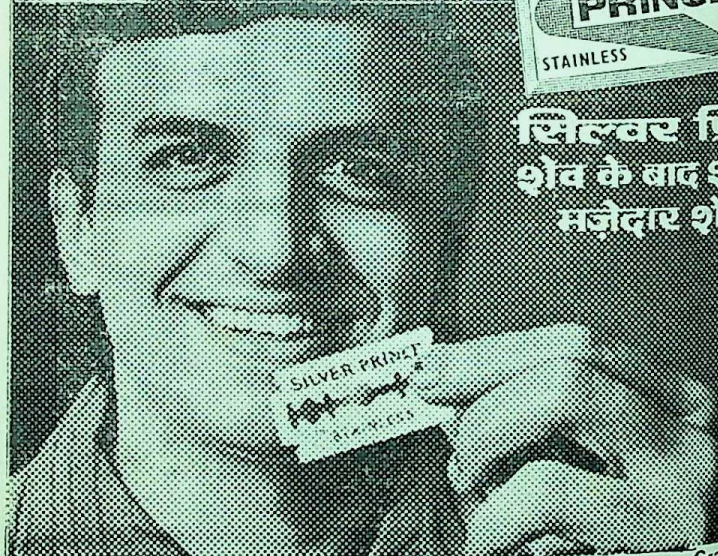
निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और अगले पृष्ठ पर दिये उत्तरों से मिलाइए ।

१. **परिधान**—क. वस्त्र, ख. आभूषण, ग. वेश-भूषा घ. रंग-रूप ।

२. **रीझना**—क. खुश होना, ख. मुग्ध हो जाना, ग. मचलना, घ. आतुर होना।

३. **समरस**—क. रुचि की एकता, ख. समभाव, ग. तुल्य रसज्ञता घ. घुलमिल जाना ।

४. **अजर**—क. जो बूढ़ा न हो, ख. अमर, ग. शाश्वत, घ. युवा ।

५. **लक्षणा**—क. शब्द की वह शक्ति जिससे शब्द के अर्थ के साथ अन्य अर्थ का भी बोध हो, ख. गुण-दोष, ग. विशिष्टता, घ. मर्म ।

६. **व्यंजना**—क. स्पष्टार्थ, ख. शब्द की गूढ़ अर्थ प्रकट करने की शक्ति, ग. गूढ़ार्थ, पक्वान्न ।

७. **अत्युक्ति**—क. बहुत बोलना, ख. पवाड़ा, ग. बढ़ा-चढ़ाकर कहना, घ. ऊबानेवाली बात ।

८. **आक्रांता**—क. जिस स्त्री पर आक्रमण किया गया हो, ख. आक्रमणकारी, ग. विजेता, घ. शत्रु ।

९. **कलेवर**—क. रूप-रंग, ख. प्रातभोजन, ग. शरीर, घ. आकार ।

१०. **खीज**—क. क्रोध, ख. दुःख, ग. द्वेष, घ. झुंझलाहट ।

• **विशालाक्ष**

११. **चुनौती**—क. युद्ध या विवाद के लिए आह्वान, ख. संघर्ष, ग. धमकी, घ. बदाबदी ।

१२. **तालमेल**—क. संयोग, ख. सही जोड़ बैठना, ग. एकता, घ. मेलजोल ।

१३. **प्रपंच**—क. सरपंच, ख. दुर्घटना, ग. झमेला, घ. झगड़ा ।

१४. **तथाकथित**—क. जैसा कहा गया, ख. मिथ्या, ग. अतिरंजित, घ. जैसा कहा जाता है परंतु जिसके सत्य होने में शंका होती है ।

१५. **दिव्य**—क. दिन-संबंधी, ख. प्रकाशमान, ग. अग्नि-परीक्षा, घ. महान ।

१६. **भीनी**—क. स्वादिष्ट, ख. भीगी हुई, ग. मंद, घ. तीव्र ।

१७. **प्रचंड**—क. उग्र, ख. कठिन, ग. प्रखर, घ. भारी ।

१८. **प्रभुत्व**—क. बड़प्पन, ख. स्वामित्व, ग. मिलकियत, घ. वश ।

१९. **अपकारी**—क. उपकारी, ख. दुराचारी, ग. हानिकारक, घ. द्वेषी ।

२०. **सर्वथा**—क. पूर्णतः, ख. सर्वत्र, ग. बिलकुल, घ. सब प्रकार से ।

१. क, वस्त्र, ग. वेश-भूषा। उन्होंने प्रत्येक वाक्य नये-से-नये **परिधान** में प्रस्तुत किया। तत्., सं., पुं.। लिवास, पोशाक।

२. ख. मुग्ध हो जाना। प्रकृति अपने किसी-किसी उपासक पर **रीझ** जाती है। तद्. (सं.—रंजन) क्रि. अ.।

३. घ. घुलमिल जाना। जन-जीवन में **समरस** आप-जैसे व्यक्ति। तत्., सम -।- रस, वि. उ. लिं.। ऐकात्म्य, समभाव।

४. क. जो बूढ़ा न हो। **अजर**-अमर कवि का **अजर**-अमर काव्य। तत्.-जरा- वि., उ. लिं.। जरारहित, अक्षय्य।

५. क. शब्द की यह शक्ति जिससे शब्द के अर्थ के साथ अन्य अर्थ का भी बोध हो, जैसे देश की लज्जा, अर्थात देशवासियों की लज्जा। तत्., सं., स्त्री.।

६. ख. शब्द की गूढ़ अर्थ प्रकट करने की शक्ति, जैसे, अरण्य-रोदन, चीख-पुकार का व्यर्थ होना। तत्., सं., स्त्री.।

७. ग. बढ़ा-चढ़ाकर कहना। बारह फुट ऊंचा आदमी। यह तो **अत्युक्ति** है। तत्., अति-।-उक्ति, सं., स्त्री.।

८. क. जिस स्त्री पर आक्रमण किया गया हो। बंगला देश में **आक्रांताओं** की गिनती लगाना असंभव हो गया। तत्. सं., स्त्री.। आक्रमिता।

९. ग. शरीर। **कलेवर** बदल दिया, पत्र का **कलेवर** बहुत छोटा है। तत्., सं., पु. आकार-प्रकार, ढांचा, डीलडौल, चोला।

१०. घ. झुंझलाहट—आखिर खीझकर चीख उठा, निकल जाओ यहां से। लो. भा., सं., स्त्री., क्रि.—खीजना। चिढ़, संताप।

११. क. युद्ध या विवाद के लिए आह्वान। उसने मुझे **चुनौती** दी, कर्मचारी या शासन को न्यायालय में **चुनौती**। तत्., भा., सं., स्त्री.। ललकार, ताल ठोंकना।

१२. ख. सही जोड़ बैठाना, ताल और सुर का मेल। उसकी कथनी और करनी में **तालमेल** नहीं रहता। लो. भा. (ताल-।-मेल) सं., स्त्री.।

१३. ग. झमेला। इस प्रपंच से मैं तो तंग आ गया। तत्., सं., पु.।

१४. घ. जैसा कहा गया है, पर जिसके सत्य होने में शंका होती है। तथा-**कथित** नेता, व्यवस्था, आदर्शवाद, समाजवाद। तत्., वि., उ. लिं.। अंगरेजी—सो-कॉल्ड।

१५. ग. अग्नि-परीक्षा। गांधीजी का संपूर्ण जीवन ही कठोर दिव्य था, सीता का दिव्य, इंदिराजी एक घोर दिव्य से गुजर रही हैं। तत्., सं. पु.।

१६. ख. भींगी हुई। सोंधी-सोंधी रस-**भीनी** सुगंध। लो. भा., वि., स्त्री.।

१७. क. उग्र। **प्रचंड** आंधी, प्रचंड व्यक्ति, व्यवहार। तत्., वि., उ. लिं.।

१८. ख. स्वामित्व। भाषा पर उनका असाधारण **प्रभुत्व** है। तत्., सं., पु.।

१९. ग. हानिकारक। यह औषधि **अपकारी** है। **अपकारी** व्यक्ति, प्रवृत्ति। तत्., वि., पु.। स्त्री. अपकारिणी।

२०. घ. सब प्रकार से। सर्वथा अनचित, **सर्वथा** सकुशल। तत्., क्रि. वि.।

मई अंक में रज्जन त्रिवेदी की कहानी 'कटे हुए लोग' में विषमता के विष से कुंठित और संत्रस्त सामाजिक ढांचे की प्रस्तुति बहुत मर्मस्पर्शी रही। अलकनंदा घोष का 'छो' नृत्य-संबंधी लेख आंचलिक परंपरा में पिरोयी मृतप्राय कला को पुनर्जीवित करने में पूर्ण सफल रहा।

—गोपीकान्त 'मधुकर', कानपुर

मेरी मातृभाषा तेलुगु है। मैं पिछले तीन वर्ष से 'कादम्बिनी' से गहरा संबंध स्थापित कर लिया हूं। मुझे गर्व हैं कि मैं 'कादम्बिनी' की सहायता से कुछ-न-कुछ मेरी हिन्दी भाषा सुधार लिया हूं। मेरा पढ़ाई में भी 'कादम्बिनी' बहुत सहयोग दे रही हैं। मैं पूज्यनीय श्री विनोबा जी की स्वप्न सफल बनाने का पक्ष में हूं, इसलिये मैं मेरी प्रिय पत्रिका सम्बन्धित राय देवनागरी लिपि के सहारे मेरा मातृभाषा में प्रकाशित किया हूं। हिन्दी में लिखना मेरा कर्तव्य समझकर दो शब्द अशुद्ध भाषा में लिखा हूं अतः मैं आशा करता हूं कि आप मेरी गलतियों को क्षमा करेंगे, धन्यवाद।

—रामुलुकाबलि, खुंटोवाली, अंबरनाथ

मई अंक संतोषजनक ही बन पड़ा है। 'कमी है सही नेतृत्व की', 'भारतीय मुसलमान किस ओर' तथा 'मेरे एकांत क्षणों के ईमानदार साथी' लेख अच्छे कहे जा सकते हैं।

कविताएं कुछ बुझी-बुझी रहीं। 'काल-चिंतन' उच्च कोटि का है तथा 'समय के हस्ताक्षर' ने एक बार पुनः हमारे स्वयं के अस्तित्व पर चोट करते हुए सोचने के लिए मजबूर कर दिया कि 'क्या हम वास्तव में स्वतंत्र हैं? यदि हां, तो कितने?'

स्वामी प्रेमानंद संबंधी जिस घटना का आपने उल्लेख किया है, वह निश्चय ही हृदय-विदारक है। हमारा देश एक गणतंत्र भी है, जहां सबको लिख, बोलने,
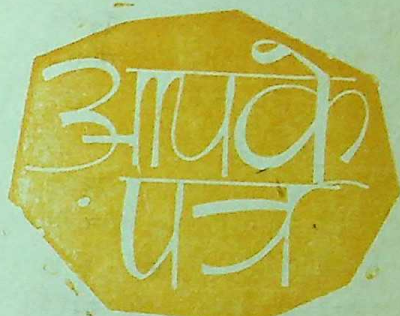
करने की इच्छानुसार छूट है। लेकिन क्या वास्तव में यही स्थिति है। क्या मठों तथा सरकार के विरुद्ध हम निर्भीकता से आवाज उठा सकते हैं?

'कादम्बिनी' ने 'हम कितने आजाद हैं?, सवाल उठाकर एक महत्त्वपूर्ण, किंतु कटु सत्य तथ्य को आलोकित करने का प्रयास किया। साधुवाद स्वीकार करें।

'सार-संक्षेप' (प्रेम पश्चाताप नहीं) अच्छा लगा, पर लगभग सभी ब्लाकों की छपाई कादम्बिनी' के स्तर की नहीं है।

—सुरेन्द्रकुमार श्रीवास्तव, शामली

'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ लेखकों तथा पाठकों को आमने-सामने लाने का प्रशंसनीय कार्य है। पर एक बात की ओर

ध्यान खींचना चाहता हूं। हम लोग अहिंदी भाषा-भाषी राज्य (पं. बंगाल) में रह रहे हैं। लोग 'कादम्बिनी' बड़े चाव से पढ़ते हैं, पर सबकी एक ही शिकायत है कि वे इस स्तंभ में भाग नहीं ले पाते। प्रश्न आप तक पहुंचने की अंतिम तिथि प्रत्येक महीने की पंद्रह है, पर यहां अधिकांश स्थानों में पत्रिका इसके बाद ही पहुंच पाती है।

अगर आप इस तिथि को बढ़ा दें तो अच्छा हो। यह तिथि प्रत्येक माह की २० कर दी जाए तो अच्छा रहे।

—विन्देश्वरी प्रसाद मंडल, वर्धमान

आपके सुझावानुसार अब यह तिथि प्रत्येक माह की २० तारीख कर दी गयी है—सं.)

(अप्रैल अंक में डॉ. किशोर रचित 'द्वार का गुलमुहर' कविता भा गयी। एक खास ताजगी है उसमें। खिले हुए गुलमुहरों और अमलतास के बीच उस कविता को पढ़ना और बारंबार पढ़ना अपने आप में एक अनुभूति है। समय के अनुकूल इतने सुंदर चयन के लिए बधाई।

—डॉ. सुधा गुप्ता, मेरठ

'दूब' तथा 'गोमेद' लेख काफी ज्ञानवर्द्धक थे। 'कादम्बिनी' में सामग्री की विविधता ही मुझे आठ वर्ष से इसका पाठक बनाये हुए है।

—ज्ञानेश्वर दास, वीरभद्र (ऋषिकेश)

'प्रेम पश्चाताप नहीं' (सार-संक्षेप) विशेष पसंद आया। इस स्तंभ के अंतर्गत कृतिकार का विस्तृत परिचय आपको देना चाहिए।

—सतीश मिश्र, ...

'प्रेम पश्चाताप नहीं' तथा '...चिंतन' ने बहुत प्रभावित किया। '... गोमेद' की तरह नीलम, पुखराज, ... सुनिया आदि के संबंध में भी लेख प्रकाशित कीजिए।

—विजयकान्त मिश्र, ...

शनि-मंदिर के संबंध में एक ... बात की ओर ध्यान आकर्षित ... चाहता हूं। खंडवा में भी एक शनि-मंदिर है। प्रति शनिवार को सड़कों पर ... गलियों में छोटी-छोटी शनि-मूर्तियां ... लोग दान मांगते नजर आते हैं। अतः ... कथन समीचीन नहीं है कि शनि-मंदिर केवल तिरुनल्लार में है। खरगोन ... अन्यत्र भी नव-ग्रह मंदिर हैं ... अन्य ग्रहों के साथ शनि की मूर्ति ... प्रतिष्ठित है।

—शिवनन्दन कपूर, खंडवा (म. प्र.)

'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत ... व्यक्ति की समस्या की चर्चा विचारो... जक एवं सामयिक रही। इतिहास को ... संदर्भ में देखना ही न्यायसंगत है। ... आवश्यकता इस बात की है कि सही ... के आधार पर भारतीय इतिहास का ... लेखन किया जाए। पंजाब सरकार ... सही कैलेंडर छापकर कोई अपराध ... किया। सही समझवालों द्वारा सही ... वालों की यदि स्वामी प्रेमानन्द की ...

दुर्गति होती रही तो अभिव्यक्ति की 'स्वतंत्रता' का नामोनिशां मिट जाएगा।

—डॉ. रामनारायण सिंह 'मधुर', होशंगाबाद

'प्रेम पश्चाताप नहीं' (सार-संक्षेप) में सूक्ष्म सम्वेदनाओं को बड़ी कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया था। 'काल-चिंतन' चिंतन-पूर्ण रहा। 'कतार में खड़ा देश' (व्यंग्य), 'अंदमान तो बस गया' एवं 'एक भ्रष्ट राष्ट्रपति' (निबंध) भी पसंद आये।

—हरचरण सिंह, सागर

'समय के हस्ताक्षर' के लिए आंतरिक प्रशंसा स्वीकार कीजिए। 'भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता छिन रही है', इसकी शिकायत करनेवालों की कमी नहीं है किंतु सत्य को उसके वास्तविक रूप में व्यक्त करनेवाले सत्यकाम चिंतक देश में कितने हैं? लकीर की फकीर, भेड़ों की भीड़ को आपका यह संपादकीय आत्मचिंतन की सामग्री देगा, ऐसी आशा है क्योंकि संस्कारों से ही हम सब आशावादी हैं। वैसे तो, परंपरा से अलग कुछ सुनने, सोचने और कहने की हमारे देश में वृत्ति ही नष्ट हो गयी है।

आपके इस संपादकीय को मैं अपने पत्र में प्रकाशित कर रहा हूं, टिप्पणी सहित। केवल सत्य के प्रति प्रतिबद्धता रखनेवाला तेजस्वी ब्राह्मणत्व आपके लेख में दीप्त हुआ है, अतः पुनः धन्यवाद।

—आचार्य धर्मेन्द्र, संपादक 'स्वर', विराट नगर, जयपुर

क्यों और क्यों नहीं?

बाइसवें लेखक

शिवप्रसाद सिंह

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, डॉ. बच्चन, यशपाल, डॉ. भारती, जैनेन्द्र कुमार, दिनकर, रेणु, महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा तथा भवानीप्रसाद मिश्र के संबंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं। अब बाइसवें लेखक हैं: शिवप्रसाद सिंह।

इस लेखमाला का उद्देश्य, लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ के लिए। संपादक के पास प्रश्न पहुंचने की अंतिम तिथि है: २० जून, १९७४।

प्रमुख कृतियां: उपन्यास: अलग-अलग वैतरणी, गली आगे मुड़ती है। कहानी संग्रह: इन्हें भी इन्तजार है, कर्मनाशा की हार, मुरदा सराय, कस्तूरी मृग, चतुर्दिक। नाटक: घाटियां गूंजती हैं।

वर्ष १४ : अंक
जून, १९

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

कथा-साहित्य

कविताएं

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

सार-संक्षेप

कविताएं

स्थायी स्तम्भ

मुखपृष्ठ के छायाकार : प्रेम कपूर

इस समय समूचा देश एक संकट-कालीन स्थिति से गुजर रहा है। संकट बाहरी नहीं, नितांत भीतरी है और यदि गहराई से देखा जाए तो आस्था का संकट है । अनास्था और मूल्यहीनता ने सारे देश को एक संत्रास की स्थिति में जकड़ लिया है। यहां का प्रत्येक वर्ग पीड़ित है और अपने सामने जर्जर होते हुए देश को असहाय देख रहा है ।

यहां तक पहुंचाने के लिए सत्ता ही नहीं, देश की अन्य आंतरिक शक्तियां भी

अल्प संख्यक प्रजातंत्र

उत्तरदायी हैं । व्यक्ति, समाज और देश के उत्थान-पतन के लिए वहां की 'नैतिकता' जिम्मेदार होती है। हम नैतिक रूप से एक नितांत खोखले देश के नागरिक हैं। यह भी सत्य है कि जब नैतिक मूल्यों का ह्रास (नैतिकता का अर्थ सीमित दायरे में नहीं लिया जाना चाहिए) होता है तब विघटनशील प्रवृत्तियां सिर उठाती हैं।

इन दिनों अल्पसंख्यकों के हितों को लेकर जिस तरह प्रश्न खड़े किये जाते हैं, महज एक मजाक लगते हैं। हाल ही एक घटना का पता लगा है कि कुछ गांववालों ने एक हरिजन युवक को काफी मारा । वह हरिजन युवक अराजक तत्त्वों का नेतृत्व करता था और स्वयं वहां के हरि... उससे परेशान थे। लेकिन इस सच्चाई को छोड़कर 'हरिजन संस्था' का प्रश्न सामने ला दिया गया ।

इसी संदर्भ में रक्षा प्रतिष्ठानों में संभावित परिवर्तनों को लेकर भी चिं... व्यक्त की जा रही है । पता चला है कि सरकार ऐसा कुछ नियम स्वीकार करने जा रही है, जिसके अंतर्गत सेना में नियु... क्तियां प्रादेशिक अनुपात और अल्प... संख्यकों के प्रतिनिधित्व को लेकर होंगी। अभी तक योग्यता के आधार पर सेना में प्रवेश मिलता है। हमारे देश में कुछ 'मार्श... जातियां है, जो पीढ़ियों से सेना में ... कर रही हैं । उसे बदलकर प्रादेशिक ... जातीयता को सेना में प्रविष्ट होने से समूची 'रक्षा-शक्ति' के लिए भविष्य में संकट उपस्थित करना है ।

इनके साथ-साथ तमिलनाडु सरकार का एक अध्यादेश भी है, जो चौंका देनेवाला है । उसके अंतर्गत कहा गया है कि ... के मंदिरों में वहां के अर्जकों (पुजारियों) को पूजा के मंत्र संस्कृत की जगह तमिल में पढ़ने होंगे । मंदिरों के अर्जकों के लिए तमिल का ज्ञान आवश्यक बताया ... है । इसे लेकर अर्जकों ने विरोध किया तो तमिलनाडु की द्रविड़ मुनेत्र कड़गम सरकार ने आदेश दिया है कि ...

पुजारियों ने अब भी संस्कृत में मंत्रोच्चारण शुरू रखे तो सरकार वहां ओडुवर रखेगी, जो तमिल में मंत्रोच्चारण करेंगे। ओडुवर केवल थिवराम गाने के लिए नियुक्त किये जाते हैं। 'थिवराम' तमिल के परंपरागत पूजा-गीत हैं। इनके लोक गायक न तो विद्वान होते और न मंदिरों में पूजा के अधिकारी हैं।

तमिलनाडु, हिंदू मंदिरों का महत्त्वपूर्ण राज्य है। यहां रामेश्वरम्, कन्याकुमारी, मदुराई, कांची, श्रीरंगम् और त्रिवेन्द्रम् के प्राचीनतम शैव मंदिर हैं। ये मंदिर भारतीय संस्कृति और संस्कृत-साहित्य के विशालतम केंद्र हैं। इनके अर्जक साधारण पंडित नहीं संस्कृत साहित्य के महाज्ञानी और विद्वान व्यक्ति हैं।

अब तक द्रमुक सरकार नास्तिक थी और उसने ईश्वरीय सत्ता को नकारा था। स्वयं मुख्यमंत्री करुणानिधि कहते रहे हैं, 'ईश्वर कहीं बाहर नहीं है। वह गरीबों की हंसी में देखा जा सकता है और जनता की आवाज ही ईश्वर की आवाज है।'

आश्चर्य है कि अचानक द्रमुक सरकार में आस्था के स्वर कहां से उभर आये। उसे हिंदू मंदिरों की चिंता क्यों होने लगी?

क्या यह सब अल्पसंख्यक संरक्षण के नाम पर होनेवाली मांग का वह स्वरूप नहीं है, जो यहां तक आ पहुंचा कि उसने मूल भारतीय संस्कृति और साहित्य तक को नष्ट करने का रास्ता अपना लिया है और संरक्षण की आड़ में बहुमत को चुनौती दी है।

प्रजातंत्र में विश्वास रखनेवालों को बहुमत पर आस्था रखना उतना ही जरूरी है, जितना अल्पसंख्यकों के संरक्षण की मांग करना। फिर यह सब क्यों और कहां से हो रहा है? ऐसी शक्तियों को आखिर कब तक प्रोत्साहन मिलेगा? विघटन के कगार पर खड़े होकर ऐसे तत्त्वों को मौन होकर देखते रहना, देश और समाज को अराजक और प्रति-संस्कृति के पोषकों के हवाले करना है।

हमें इन सब स्थितियों के सामने विवश होकर सोचना पड़ रहा है कि वास्तव में हम पर शासन करनेवाली सत्ता स्वयं तीस प्रतिशत वोट पर स्थापित अल्पसंख्यक सत्ता ही तो है और इसीलिए सभी अल्पसंख्यकों का वह मौन रूप से समर्थन करती है। यह समर्थन 'हरिजन अत्याचारों' के नाम पर किया जा रहा है। अब सेना में अल्पसंख्यकों की रक्षा के नाम पर और भाषा के प्रश्न को लेकर दक्षिण के मंदिरों में संस्कृत-साहित्य के विनाश में वह फले और फूलेगा।

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक। चित्रकार : सुकुमार चटर्जी।

कण चिंतन

——वन-फूलों को देखकर वह अचानक रुक गया, निपट एकांत में खिले हुए फूलों को न किसी प्रेमिका के बालों की चाह थी, न देवता तक पहुंचने का संकल्प। हाथी के पैरों से भी कुचले जाने के लिए वे तैयार थे !

——फूलों के सौंदर्य को देखकर रुकनेवाला दार्शनिक उनके मिथ्या-अस्तित्व पर अट्टहास कर उठा।

——वह जीवन के अस्तित्व की खोज में निकला था। यहां पहुंचकर उसे अनुभव हुआ, दृष्टि के अभाव ने ही मूल्यहीनता को जन्म दिया है ! उसने पहली बार जाना, सौंदर्य का वास्तविक मूल्य प्रतीक्षा में है !

——वह उसी रास्ते लौट गया जिधर से आया था !

*

——भीड़ के बिना हमारी नियति नहीं है ! वह एकांत अर्थहीन है जो हमसे ही अलग होकर हमारे सामने खड़ा हो जाता है और फिर बातें करने लगता है !

——अपने-आपसे बातें करना सचमुच कितना कष्टसाध्य है !

——तो क्या हम भीड़ में खो जाएं ?

*

——एक जापानी दार्शनिक ने सौंदर्य-बोध अपने अकेलेपन में पाया था। उसने कहा था, 'अकेलापन मेरी नियति है।'

——वह टोकियो में रहता था !

——टोकियो, यानी एक भीड़-भरा सैलाब !

——अर्थ यह हुआ कि अकेलेपन की बात करना भीड़ से कटना नहीं है। कोलाहल के बीच रहकर उसके शब्दों को अर्थहीन करते जाना, आज की आधुनिकता है !

——कोलाहल-भरी भीड़ अनर्गल होती है। वह जीवित व्यक्ति से भागती है।

——केवल मृतक व्यक्ति ही अपने आसपास भीड़ इकट्ठी कर सकता है !

——नहीं... केवल.. नहीं ! एक नेता भी तो है, जो भीड़ इकट्ठी करता है !

*

——नेता की भीड़ का संबंध बल से है !

——दुनिया में दो ही बल हैं : अश्व-बल और पुरुष-बल !

——अश्व-बल की पहचान के लिए प्रतीक हैं लोहे की जड़-मशीनें !

—पुरुष-बल की पहचान दो तरह से होती है : बाहर से और भीतर से भी !

—बाहरी बल की पहचान के लिए एक घटना दृष्टव्य है : 'लार्ड वेलिंग्टन की पत्नी का हार खो गया। पुलिस में शिकायत की गयी। थोड़ी ही देर में पुलिस ने हार लाकर दे दिया। दूसरे दिन बिस्तर साफ करते हुए असली हार मिल गया तो लार्ड वेलिंग्टन ने पुलिस-अफसर को बुलाकर पूछा, 'यह क्या है ?' अफसर का उत्तर स्पष्ट था, 'सर, आपका हार खो जाए और हम न ला सकें... ?'

—ऐसे बल के लिए विवेक का कोई अर्थ नहीं होता ! वह समय और शक्ति की सीमा में आबद्ध है !

—भीतरी बल आदमी की वास्तविक संकल्प-शक्ति है। यह भीड़ में नहीं मिलता।

—सबको भीतरी बल की तलाश भी नहीं होती।

—संकट उन्हीं के लिए है जिन्हें इसकी तलाश है !

*

—जिंदगी की दौड़ में जब आदमी बहुत आगे निकल जाता है तब उसके पद-चिह्न पगडंडी बन जाते हैं !

—पगडंडी का निर्धारण करते हुए बार-बार भीतरी बल की परीक्षा होती रहती है !

—इस अवधि में आदमी न जाने कितनी बार टूटता, मरता और फिर जीता है !

—इन प्रक्रियाओं से गुजरते हुए वह अपने अकेलेपन से भी लड़ता है !

—अंतिम युद्ध के बाद उसका विजित-पौरुष उसे गरिमामय बना देता है !

—तब उसकी नियति होती है : भीड़ से घिरकर भी भीड़ से अलग; पानी में तैरता हुआ एक कमल-पत्र !

—वह अपना समूचा दर्शन भीड़ से ही खोजता है और उसी को वापस कर देता है !

—पुरुष-बल से संपन्न ऐसा व्यक्ति ही महामानव बन जाता है।

—वह तब भी प्रतीक्षा करता है : सौंदर्य के भीतरी रहस्य को पाने की !

—संभवतः इसीलिए वह वन-फूलों की निरर्थकता से आसन्न लौट आया था !

दो दशकों के बीच किसिंगर की यात्रा

भारत एवं अमरीका के मध्य मित्रता-पूर्ण संबंधों का इतिहास काफी पुराना है। भारतीय स्वाधीनता-संग्राम में अमरीकी योगदान की महत्ता को स्वीकार करते हुए १८ दिसंबर, १९५६ को प्रधान-मंत्री श्री नेहरू ने कहा था, "कोई भी भारतीय, स्वतंत्रता-संघर्ष के दिनों में अमरीका से प्राप्त पूर्ण सहयोग और समर्थन को भुला न सकेगा।" आगे उन्होंने घोषणा की थी, **"हमारे दोनों गणतंत्र प्रजातांत्रिक संस्थाओं और प्रजातांत्रिक जीवन-पद्धति के प्रति समान विश्वास रखते हैं तथा शांति और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए संकल्पबद्ध हैं। ऐसी स्थिति में इन दो देशों के बीच मित्रता और पारस्परिक सहयोग नितांत स्वाभाविक है।"**

किंतु पिछले १८ वर्षों में भारत और अमरीका के संबंध मजबूत होने की वजाय निरंतर विगड़ते रहे हैं। यह सच है कि बीच-बीच में, विशेषकर अमरीका में डेमोक्रेटिक पार्टी के सत्तारूढ़ होने के दौरान (केनेडी-बोल्स-गालब्रेथ-कार्यकाल), भारत-अमरीका कभी-कभी बहुत निकट आये, किंतु कुल मिलाकर दोनों देशों की दृष्टि से स्थिति बहुत संतोषप्रद नहीं रही। सन

• दुर्गाप्रसाद शुक्ल

१९७१ में भारत-पाक युद्ध के दौरान दोनों देशों के संबंध निम्न विंदु पर पहुंच गये थे।

तनाव का कारण : तीसरा पक्ष यह पहला अवसर नहीं था, जबकि किसी तीसरे पक्ष का (भारत-विरोधी) समर्थन कर अमरीका ने इस देश के तटस्थ प्रबुद्ध जनमत को भी अपना विरोधी बनाया। पहले भी तीसरे पक्ष के कारण ही भारत और अमरीका के संबंध बिगड़े। सन १९५८ में भारत ने लेबनान तथा जोर्डन में अमरीकी हस्तक्षेप का विरोध किया था तथा सन १९६१ में गोवा के प्रश्न पर अमरीका ने उसे पुर्तगाल का सागर-पार प्रांत स्वीकार कर भारत-विरोधी रुख अपनाया था। भारत का गोवा मुक्ति संग्राम, सुरक्षा परिषद में अमरीकी प्रतिनिधि स्टीवेंसन के शब्दों में, 'एक लज्जापूर्ण आक्रमणकारी कार्य' था। पूर्वी एशिया से संबंधित अनेक घटनाओं के कारण भी दोनों देशों के मतभेद बढ़े। सन १९५० के आसपास अमरीका को साम्यवादी चीन से भारत की दोस्ती नापसंद थी। कोरिया-युद्ध के बाद की

घटनाओं ने भी दोनों देशों की दूरी बढ़ायी थी। जापान पर अमरीकी प्रभुत्व स्थापित करने के उद्देश्य से आयोजित सन १९५१ के सॉनफ्रांसिस्को-सम्मेलन में भारत के शामिल न होने से भी दोनों देशों के बीच कटुता बढ़ी थी। हिंदचीन-संबंधी नेहरूजी की छह सूत्रीय योजना ने अमरीकी प्रशासन को नाराज ही किया था। इस तरह किसी तीसरे पक्ष के कारण ही भारत-अमरीकी संबंधों में दरारें पड़ती आयी हैं।

भारत-अमरीकी संबंधों का इतिहास ऐसे ही अनेक तथ्य उद्घाटित करता है। भारतीय स्वाधीनता के वर्ष, अर्थात १ दिसंबर, १९४७ को भारत-स्थित अमरीकी राजदूत ने कहा था, **'विश्व संघर्ष में भारत को अपने पक्ष में रखना अमरीका के लिए महत्त्वपूर्ण है।'** अमरीका ने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हर संभव तरीके अपनाये, पर जब भारत ने स्वतंत्र विदेश नीति अपनाकर, आवश्यकता पड़ने पर अमरीका का विरोध भी किया तब अमरीकी-प्रशासन का वास्तविक रूप सामने आ गया। अनेक प्रमुख अमरीकी नेताओं का यह सिद्धांत था कि **'जो देश स्पष्ट रूप से अमरीका के साथ नहीं हैं, वे उसके विरोधी ही हैं।'** इसी विश्वास ने अमरीका में यह भ्रम उत्पन्न किया कि भारत सोवियत संघ का पिछलग्गू है। जनवरी, १९४७ में जॉन फॉस्टर डलेस ने कहा था, **'भारत में सोवियत साम्यवाद अंतःकालीन हिंदू सरकार के माध्यम से अपने प्रभाव का विस्तार कर रहा है।'**
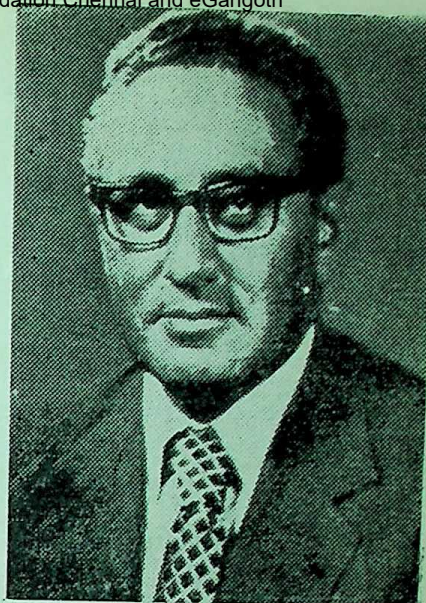
डां. हेनरी किसिंगर

इतनी पृष्ठभूमि समझ लेने के बाद यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि अमरीका ने भारत के खिलाफ क्यों पाकिस्तान को निःशुल्क सैन्य सहायता दी, कश्मीर के प्रश्न पर घोर भारत-विरोधी रुख क्यों अपनाया, और १९७१ के भारत-पाक युद्ध में खुलेआम पाकिस्तान का समर्थन कर हिंद महासागर में सातवें बेड़े को क्यों भेजा। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि लोकतंत्रीय देश होने के बावजूद अमरीका ने संसार में हमेशा ही सैनिक-तंत्र और राजतंत्र का समर्थन क्यों किया?

बुद्धिजीवियों का कत्ल

और फिर उस दिन
अनेक अनाम सूर्य
इतिहास के बदनाम
अंधेरों में कौंध गये

चैतन्य हवाएं
अपनी छाती पर सलीब उकेरतीं
मुर्दाघर के रोशनदान से
गुजरीं

नजरुल की नज्में
रवींद्र संगीत
पद्मा के होठों से निकले
रोशनी के गीत
सूली पर चढ़ गये

और फिर उस दिन
जो कयामत का दिन पुकारा गया
'उसका' इजलास लगा
'उसने' देखा, मुलजिम के कठघरे में
'वह' खुद खड़ा था

मित्रो, नहीं जाती यह सड़क सिर्फ
सुकरात के होंठों से गांधी के सीने तक

—बशीर अहमद मयूख
पत्रालय सालपुरा, कोटा (राजस्थान)

अच्छे संबंध मृगतृष्णा मात्र!
भारत और अमरीका के मध्य मधुर संबंधों के अभाव का मुख्य कारण अमरीका की अंतर्राष्ट्रीय व्यूह-रचना में भारत की अनुकूल भूमिका का न होना है। अतः जब तक अमरीका के इस मूलभूत दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं होता, तब तक वास्तविक संबंधों की स्थापना मृगतृष्णा मात्र होगी। वैसे निक्सन-प्रशासन ने १९७१-७२ के भारत-पाक युद्ध के दौरान अपनी भूमिका के दोष को स्वीकार कर लिया है। इसके साथ ही एक समय बहुचर्चित 'पी. एल. ४८०' के अंतर्गत भारत को दी गयी अमरीकी सहायता के सिलसिले में एकत्र विशाल धन-राशि के बारे में भी दोनों देशों के मध्य संतोषजनक समझौता हो गया है। १९६० में तत्कालीन भारतीय खाद्यमंत्री श्री एस. के. पाटिल तथा तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति आइजनहॉवर द्वारा हस्ताक्षरित इस समझौते के अंतर्गत भारत को खाद्यान्न-संकट का सामना करने के लिए चार वर्ष तक प्रति वर्ष गेहूं एवं चावल से भरे १,५०० जलयान भेजने की व्यवस्था की गयी थी। समझौते की समाप्ति के बाद भी इसी 'पी. एल. ४८०' के अंतर्गत भारत को सहायता जारी रखी गयी। इस सहायता के अतिरिक्त अमरीका ने सीधे, फोर्ड तथा रॉकफेलर संस्थानों के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के माध्यम से भारत के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण सहायता दी।

दरारों की खाई !

आइजनहॉवर के बाद केनेडी के राष्ट्रपतित्व-काल में भारत और अमरीका काफी निकट आये। इसी दौरान चीनी आक्रमण के समय भारत को अमरीकी सहायता भी मिली, पर निक्सन-प्रशासन के आते ही स्थिति पुनः बिगड़ने लगी। अब दोनों देशों के मध्य पुनः समझ-बूझ पैदा होने के दावे किये जा रहे हैं; किंतु सचाई यह है कि भारत-अमरीकी मैत्री संबंधों में अनेक दरारें पड़ चुकी हैं। मैत्री की तमाम घोषणाओं के बावजूद दोनों देशों में परस्पर अविश्वास और संदेह का वातावरण बना हुआ है। आम भारतीय अमरीका की हर नीति को शंका से देखता है। उसे लगता है कि अमरीका इस देश को, पाकिस्तान की भांति, अपनी कठपुतली बनाना चाहता है।

डॉ. किसिंगर और नयी उम्मीदें

इन स्थितियों के बीच अमरीकी विदेश मंत्री डॉ. हेनरी किसिंगर की भारत-यात्रा एक विशेष महत्त्व रखती है। अपनी जासूसनुमा गतिविधियों के कारण किसिंगर ने जहां पहले बदनामी पायी, वहां वियतनाम तथा अरब-इजरायली संघर्ष में एक कुशल मध्यस्थ की भूमिका का सफल निर्वाह कर उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना भी अर्जित कर ली है।

डॉ. किसिंगर का व्यक्तिगत जीवन उतार-चढ़ावपूर्ण रहा है। उनके पिता को यहूदी होने के कारण जरमनी छोड़ने पर विवश होना पड़ा तथा लंदन होते हुए वे न्यूयॉर्क पहुंचे। अमरीका में ही किसिंगर की शिक्षा-दीक्षा हुई। द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान एक सैनिक तथा प्रशासक के रूप में उनकी ख्याति बढ़ी। युद्ध की समाप्ति के बाद उन्होंने पुनः अध्ययन शुरू किया तथा डॉक्टरेट प्राप्त कर अनेक विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें लिखीं। केनेडी-जॉनसन-काल में वे राष्ट्रीय सुरक्षा-परिषद के परामर्शदाता के रूप में कार्य करते रहे। १९६८ में निक्सन के राष्ट्रपति बनने के बाद वे व्हॉइट हाउस में स्थानांतरित हुए। सन १९७२ में निक्सन के पुनः चुने जाने के बाद जब विदेश मंत्री रोजर्स ने स्वेच्छा से त्यागपत्र दिया तब डॉ. किसिंगर

"घबराते क्यों हो ? किसिंगर किस मर्ज की दवा हैं फिर ?"

को उनका उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। इसी बीच वियतनाम में शांति-स्थापना के लिए उन्हें शांति नोबल-पुरस्कार में सहभागी बनाया गया।

एशिया में भारत की महत्त्वपूर्ण भूमिका से डॉ. किसिंगर अच्छी तरह परिचित हैं। अमरीका-स्थित भारतीय राजदूत श्री टी. एन. कौल के शब्दों में, "**वे एक दूरदर्शी और जागरूक व्यक्ति हैं। इससे अधिक वे यह भी जानते हैं कि अमरीकी जनता का बहुमत तथा अमरीकी कांग्रेस भारत-अमरीकी मैत्री संबंधों पर विश्वास रखती है तथा चाहती है कि यह मित्रता ठोस रूप ग्रहण करे।**"

यहीं एक प्रश्न यह उठता है कि क्या वर्तमान अमरीकी प्रशासन वास्तव में भारत के साथ मित्रतापूर्ण संबंध स्थापित करना उपयोगी समझता है?

कश्मीर का प्रश्न भारत-पाक संबंधों के ही नहीं, भारत-अमरीकी संबंधों के बीच भी एक दीवार की भांति है। अमरीकी प्रशासन की पाक-समर्थक नीतियों ने इस दीवार को ऊंचा ही किया है। जब तक अमरीका कश्मीर-संबंधी प्रश्न पर यथार्थवादी रुख नहीं अपनाता, तब तक भारत-अमरीकी संबंधों में गुणात्मक परिवर्तन की आशा व्यर्थ है। कारण, यदि अमरीका भारत को आर्थिक सहायता देने के साथ-साथ पाकिस्तान को अत्याधुनिक शस्त्रों से लैस करता रहता है तो भारत को दी गयी सहायता का कोई विशेष उपयोग नहीं होगा। भार[तीय] उपमहाद्वीप के तीनों देशों—भारत, पा[कि]स्तान, बांगला देश की कोटि-कोटि ज[नता] की खुशहाली के लिए स्थायी शांति प[हली] अनिवार्य आवश्यकता है। एक वि[श्व]-शक्ति के रूप में अमरीका इस शांति [की] गारंटी दे सकता है। आशा की जा[नी] चाहिए कि डॉ. किसिंगर की वर्तमान या[त्रा] इसी गारंटी को ठोस रूप देने में सहा[यक] होगी। आर्थिक अथवा शस्त्र-सहायता [की] अपेक्षा ऐसी गारंटी भारतीय उप-महा[द्वीप] के लिए अधिक लाभदायक होगी। अ[म]रीकी पहल पर कश्मीर का मसला [सदा] सदा के लिए निपटाया जा सकता [है] क्योंकि वियतनाम युद्ध एवं अरब-इज़रा[यल] संघर्ष ने यह अच्छी तरह स्पष्ट कर दि[या] है कि छोटे देश तभी तक लड़ते हैं ज[ब] तक बड़े देश उन्हें लड़वाना चाहते हैं। वैसे अब, चीन भी अपनी स्वार्थ-सि[द्धि] के लिए इस विवाद को बढ़ावा दे सक[ता है] किंतु एक विश्व-शक्ति के रूप में अम[रीका] अब भी काफी निर्णायक-बल रखता है। प्रश्न यही है कि क्या अमरीका [ऐसा] करेगा?

"अजी सुनते हो! मुन्ना साबु[न का] टुकड़ा निगल गया।"

"तुम्हें कैसे मालुम हुआ?"

"उसके मुंह से झाग जो निक[ल रहा] है।"

काश, मैं किसी और की...

करवट बदलकर सोनेवाले ए बेखबर
मैं प्रेम-कविता लिखती हूं
काश मैं किसी और की विवाहिता होती
ताकि तुझसे भरपूर प्यार कर सकती
इन्हीं आंखों इन्हीं होंठों
इन्हीं खुशबूदार बाहों के लिए छटपटाती
इसी रहस्य का तिलिस्म तोड़ने
एकजुट जादू जगाती

अजीब मुसीबत है यह प्यार
दूर भी खिंचती है डोरी
तो पलटकर लौट आने को
कमबख्त
सात फेरों में नौ जिंदगियां लेकर आयी है
प्यार की बिलैया

छींका ही टूटा नहीं
हर बार तेरे दरवाजे ही
होती है दस्तक
तू पड़ा सोता है

तेरे प्यार की जात ही अलग है
चिड़िया का बच्चा
जब तक असहाय है
तब तक ही घोंसले में रुकता है

दरअस्ल
प्यार सिर्फ बेवकूफ करता है

—इन्दु जैन
—ए/८० पूर्वी निजामुद्दीन, नयी दिल्ली-१३

युद्धबंदियों का विद्रोह

• हरिलाल परीख

घटना द्वितीय विश्वयुद्ध की है। विश्वयुद्ध के दौरान नाजियों ने पोलैंड में ट्रेब्लिका नामक स्थान में मृत्यु-छावनी स्थापित की थी। उसमें रखे गये यहूदियों के सामने दो ही विकल्प थे—काम करो और जीवित रहो अथवा अपने साथियों की भांति गैस चैंबर में चले जाओ।

वारसा के इंजीनियर गालेवस्की ने इन अधमरे, अर्द्धमानव-जैसी दशा में आ पड़े कैदी यहूदियों को संगठित कर एक छोटी-सी विरोध समिति गठित की। लड़नेवाली छोटी-छोटी टुकड़ियां बनाकर विद्रोह करने की योजना भी बनायी गयी थी। इस विद्रोह का उद्देश्य था—छावनी में हो रहे पैशाचिक अत्याचारों की विश्व को जानकारी देना।

विद्रोह की योजना पर ट्रेब्लिका की छावनी क्रमांक एक में विचार किया गया था। इन्हीं स्थानों पर ट्रेनों से युद्ध-बंदी उतारे जाते थे और उन्हें नंगा कर छावनी क्रमांक दो में एकत्रित किया जाता था। छावनी क्रमांक एक गैस चेंबर के एक ओर थी। ट्रेब्लिका के एक हजार बंदियों में से आठ सौ वहीं रहते थे जब कि छावनी क्रमांक दो में दो सौ बंदी रहते थे। गैस चैंबर से शवों को निकालकर बड़े-बड़े गढ़ों में गाड़ा जाता था। दोनों छाव-नियों के बीच कोई संपर्क न था। विरोध समिति ने नाराजी से निर्णय किया कि विद्रोह के लिए यदि छावनी क्रमांक दो के दो सौ कैदियों का बलिदान भी करना पड़े तो भी ऐसा कर विद्रोह किया जाए।

इस विरोध समिति के पांच सदस्य थे। एक था जो फीडमेन फ्रांस की विदेशी सेना में था और पोलैंड में पदस्थ था। उसने ही विद्रोह के लिए इकाइयां संगठित की थीं। दूसरा सदस्य था सेना का कैप्टन डिजेलो ब्लाक, जिसने विद्रोह के कार्य-क्रम की रूपरेखा बनायी थी। तीसरा सदस्य था बाइस वर्षीय मोनिक, चौथा था साल्जबर्ग, ज़िसका लड़का हेनरिक छावनी की डिलीवरी वान चलाता था और पांचवां था कूललेंड, जो डाक्टर था और अपंग तथा दुर्बल यहूदियों को मार डालने के लिए इंजेक्शन लगाता था।

गालेवस्की ने नाजियों को गड्ढों से शव निकलवाकर जलाते हुए देखा था। उसने विरोध समिति को इसकी सूचना देते हुए कहा, "हम सब जानते हैं कि हम सब कहां हैं। कोई साक्षी न रहेगा, न...

साक्ष्य नष्ट [illegible] हत्याओं को अपनी आंखों से देखनेवाला कोई जीवित न रहेगा। हमारा विद्रोह उद्देश्यपूर्ण होता जा रहा है। हमें केवल अपने परिजनों के लिए ही नहीं, विश्व के लिए भी सफलता प्राप्त करना है।"

डिजेलो ने गैस चेंबरवाली दो नंबर की छावनी के बंदियों को भी साथ रखने का सुझाव रखा। नाजी उस छावनी का नामोनिशान मिटाना चाहते थे। छावनी निर्माणकार्य के कारण दो नंबर की छावनी का एक बंदी यांकेल विअरनिक रोज एक नंबर छावनी आता था। उस नर्कनुमा गैस चेंबर से जीवित लौटनेवाला वह पहला मनुष्य था। उसने अत्यंत सावधानीपूर्वक विरोध समिति को यह जानकारी दी कि नाजी गढ़ों में गाड़े गये शव निकालकर जला रहे थे।

गालेवस्की ने एडोल्फ और डिजेलो से सहमति व्यक्त करते हुए कहा, "हमें दो
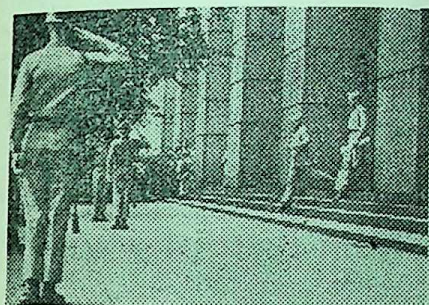
ट्रेब्लिन्का के युद्धबंदी शिविर के दो दृश्य

नंबर की छावनी में जाना चाहिए। शवों के निपटाने की गति देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि छावनी कब समाप्त होगी।"

का सर्वेसर्वा कर्ट फ्रांस उर्फ लाल्का कुशलतापूर्वक अपनी योजना के अनुसार कार्य कर रहा था।

यहूदी युद्धबंदियों को विद्रोह से दूर रखने के लिए लाल्का ने बांध निर्माण की एक योजना बनायी थी। कुछ ही दिनों में छावनी एक बांध निर्माण-स्थल के रूप में परिणित हो गयी।

कुछ ही दिनों बाद दो नंबर की छावनी से काला धुंआ उठने लगा। तुरंत ही विरोध समिति की बैठक हुई। बांध

दो नंबर की छावनी में जाने के उद्देश्य से डिजेलो और एडोल्फ ने जानबूझकर गलतियां कीं और फलस्वरूप उन्हें दो नंबर की छावनी में भेज दिया गया। वहां जाकर उन्होंने देखा कि बंदी ही गढ़ों से शव निकालकर चिता पर रखते थे।

हिमलर जब छावनी में आया तब

वहां मृत्यु का साम्राज्य था। वह चाहता था कि छावनी खाली करने से पहले सभी शव जला दिये जाएं। छावनी में तब सात लाख शव थे। बिना रुके प्रतिदिन एक हजार शवों का भी निपटारा किया जाता तब भी लगभग दो वर्ष लग सकते थे। लाल्का ने अधिक लकड़ियां मंगवाकर प्रतिदिन दस हजार शवों का निपटारा करना प्रारंभ कर दिया। बंदियों से अधिक कार्य लेने के उद्देश्य से उसने उन्हें कुछ सुविधाएं भी दीं।

इस छावनी को शुरू हुए एक वर्ष हुआ था। छावनी का प्रारंभ अव्यवस्था से हुआ था और अंत पागलपन से हो रहा था। सात लाख से भी अधिक स्त्री-पुरुष, बच्चे-वृद्ध, सुंदर-कुरूप, लंबे-ठिगने और निर्बल-बलवान का निराकरण किया गया था। बंदियों को स्वच्छंदता देकर नाजी अपना नाटक पूर्ण करने से पहले बंदियों से भाईचारा स्थापित करने का ढोंग रच रहे थे।

डिजेलो और एडोल्फ के दो नंबर छावनी में पहुंचते ही वहां भी विरोध समिति का कार्य प्रारंभ हो गया।

वसंत ऋतु आ गयी थी। गड्ढे तेजी से खाली हो रहे थे और बगीचे स्थापित हो रहे थे। अब अधिक देर रुकना बिलकुल संभव न था।

सन् १९४३ के जुलाई माह में दो नंबर की छावनी ने विरोध समिति को अल्टिमेटम दे दिया, "हम अंतिम खाई का काम शुरू कर रहे हैं। दो सप्ताह में छावनी नष्ट हो जाएगी। दो दिनों में विद्रोह का दिन निश्चित कर हमें सूचना भेजें वरना हम अकेले ही विद्रोह शुरू कर देंगे।"

वारसा से आयी एक बंदी महिला ने यहूदियों के युद्ध की कहानी सुनाकर बंदियों को और प्रोत्साहन दिया। विद्रोह की रूपरेखा के अनुसार कुछ चुने हुए सदस्यों को सैनिकों को मारने का काम सौंपा गया। विद्रोह प्रारंभ होते ही शेष बंदियों को भाग जाना था।

दो अगस्त के दिन सुबह बंदियों की उपस्थिति ली जा रही थी। गालेवस्की ने जरमन अधिकारी की उपस्थिति में बंदियों से कहा, "एक नया दिन शुरू हो रहा है। मुझे आशा है कि हममें से प्रत्येक अपना काम अच्छी तरह करने के लिए प्रयत्न करेगा।" सभी बंदी उसका संकेत समझ गये।

नौ बजे हेनरिक ने शस्त्रागार के पास कार रोकी। उसकी खिड़की खुली थी। पलक मारते हथगोलों की तीन पेटियां लादी गयीं। हेनरिक ने उन्हें गाड़ी में रखवाया। अब बंदूकें लेना शेष था। तभी पहरेदार सतर्क हो गया। हेनरिक ने तुरंत कार स्टार्ट कर दी। जिन दो स्थानों पर हथियारों का वितरण होना था, उन दोनों स्थानों पर हथगोले पहुंचा दिये गये।

सवेरे दस बजे। दो नंबर की छावनी में काम शुरू हो गया। डिजेलो ने सबको समझा दिया कि मार खाकर भी धीरे

काम करें। उधर एडोल्फ ने प्रत्येक टुकड़ी से संपर्क स्थापित किया, कभी वह शव जलाता कभी लकड़ियों पर गैसोलिन छिड़कता या शवों की राख छनवाता। अब तक एक नंबर छावनी से कोई सूचना नहीं मिली थी। सभी के मन में एक ही प्रश्न था—यह मृत्यु का दिन होगा या विजय का।

ग्यारह बजे। गैस चेंबर को साफ करनेवालों को नहीं भेजा गया था, इसलिए एक नंबर छावनी से संपर्क टूट गया। सब कुछ विगड़ जाने का डर पैदा हो गया। अब एक ही व्यक्ति स्थिति संभाल सकता था। वह था विअरनिक, दो नंबर की छावनी का सुनार।

उधर दो नंबर की छावनी में एक बजे काम बंद होनेवाला था। खोदकर निकाले गये सभी शवों को उसी दिन जलाना कठिन था। गरमी, शवों की दुर्गंध और थकान से बंदी लड़खड़ा रहे थे।

दो बजे। लंबी थकान के कारण बंदी नियंत्रण खोने लगे। डिजेलो ने काम शुरू करने से पहले सैनिकों कोअंदर भेजा।

सवा दो बजे रसोई घर के इंचार्ज कैदी ने यूक्रेनियन सैनिक से कहा कि पानी की टंकी खाली हो चुकी है, उसे भरवाना होगा। रसोईघर से बाहर लगभग बीस गज की दूरी पर कुआं था। सैनिक ने अनुमति दे दी और बंदी कतार बनाकर पानी लाने लगे। गरमी से घबराकर नाजी और यूक्रेनियन सैनिक लेटने चले गये। वे निश्चित-से थे।

तीन बजे। दो नंबर छावनी के बंदी सैनिकों ने जान पर खेलकर कई यूक्रेनियन सैनिकों को सोने के सिक्के दिखलाकर उन्हें टावर से नीचे उतारा।

तीन बजकर चालीस मिनट। दरजी की एक दूकान में विद्रोह के नेताओं की प्रतीक्षा की जा रही थी। एकाएक एक चीख सुनायी दी। गालेवस्की कांप उठा। तभी यमराज-सा एक यूक्रेनियन सैनिक अंदर आया और अंधकार ने उसे घेर लिया। समय थम-सा गया।

तीस सेकंड . . . एक मिनट . . दो मिनट . . . एक चीख! बैरक का दरवाजा हिला। तीन व्यक्ति दिखायी दिये। दो व्यक्ति बैरक में छिपे थे। उनकी जेबों में सोने के सिक्के थे।

गालेवस्की देख रहा था—तीसरे ने उन दोनों को आगे धकेल दिया।

कूललेंड ने धीमे से कहा, "वे दोनों घबराकर विद्रोह की बात बतला देंगे। हमें अभी ही विद्रोह प्रारंभ करना होगा।" गालेवस्की ने धीमे-से आदेश दिया, "उसे मार डालने के लिए एक स्वयंसेवक।"

एकाएक परछाइयां गतिशील हो उठीं। प्रत्येक परछाईं आगे बढ़ने लगी। वारसा का एक चोर राइफल उठाकर दौड़ा और बैरक के कोने में खड़ा हो गया। सैनिक के आते ही उसने उसे गोली मार दी। अब गालेवस्की ने हथगोला छोड़कर

विद्रोह प्रारंभ करने का संकेत किया।

निर्धारित समय से पहले शुरुआत! पूरी छावनी स्तब्ध रह गयी। लड़नेवाली टुकड़ियां, बंदी, जरमन और यूक्रेनियन सैनिक सभी अपने मार्ग पर स्तब्ध होकर रुक गये, आश्चर्यचकित, मौन, उलझन भरे! फिर सबसे पहले सचेत हुई लड़नेवाली टुकड़ियां।

फिर तो गर्जना, गड़गड़ाहट, धमाके... हथगोले एक के बाद एक फूटने लगे। लेकिन अब जरमन भी सचेत होने लगे। यूक्रेनियन सैनिक भी दौड़ पड़े। दोनों छावनियों के कोने-कोने से मुक्तिनाद गूंज उठा। विरोध समिति ने सुरक्षित बंदियों को एकत्रित कर मोरचा बनाया। कुछ लोगों ने गोलियों की बौछार के बीच दौड़कर जरमनों की बख्तरबंद गाड़ी पर अधिकार कर लिया। फिर उसी टुकड़ी के नायक ने एक भी गोली चलाये बिना गैरेज पर अधिकार कर लिया और गेसोलिन के पीपे बाहर निकालकर जरमन बैरकों को जलाने लगा। प्रत्येक स्थान से विद्रोह के स्वर सुनायी पड़ने लगे। सोने के सिक्कों के लालच में नीचे आये सैनिकों पर यहूदी बंदियों ने हमला कर दिया। एक बंदी ने गैस चैंबर को चालू रखनेवाली मोटर पर गेसोलिन छिड़ककर उसे जला डालने की कोशिश की लेकिन भागने से पहले ही वह लड़खड़ाकर गिर गया।

इसी बीच नाजी सैनिकों की गोलियों का उत्तर देते हुए बंदी जंगल की ओर भागने लगे। नाजी गाड़ियां उनका पीछा करने लगीं। भागते हुए बंदियों ने कई बार रुककर गोली चलाकर गाड़ियों को रोकने की कोशिश की। रात के अंधेरे में नाजी गाड़ियां लौट गयीं।

इधर छावनी में विद्रोह समाप्त हो चुका था। गालेवस्की, एडोल्फ के साथ विरोध समिति के सभी सदस्य और अधिकांश बंदी मारे गये। छावनी के एक हजार बंदियों में से छह सौ बंदी जंगल में छिप गये। विद्रोह के कुछ दिनों बाद ही ट्रेब्लिका छावनी को नेस्तनाबूद कर जमीन पर हल चला दिया गया और वहां के सभी सबूत नष्ट कर दिये गये। जंगल में छिपे छह सौ बंदियों में से चालीस ही जीवित बचे क्योंकि शेष को किसानों, पुलिस, यूक्रेनियन और जरमन सेना की विशेष टुकड़ियों ने मार डाला।

—७०, चं. शे. आजाद मार्ग, देवास म. प्र.

गुस्से से तमतमाता कर्मचारी वेतन का लिफाफा लेकर कैशियर के पास गया और बोला, "इसमें पांच रुपए कम हैं।"

कैशियर ने शांतिपूर्वककहा, "पिछली बार इसमें पांच रुपए अधिक थे, तब तो आपने कुछ नहीं कहा था।"

कर्मचारी ने आवाज ऊंची करते हुए कहा, "किसी एक महीने गलती हो जाए, तो मैं नजरन्दाज कर सकता हूं, मगर लगातार दो-दो महीने गलती हो यह मुझे मंजूर नहीं।"

आसमानी अस्वीकारवाद

● विवेकी राय

उस साल ऐसा ही हुआ।

जमीन पर परंपरावादी किसानों ने जेठ के गंगा-दशहरावाले मेले से खरीदकर बैलों की जोड़ियों को बैठाया। उनका हल खड़ा हुआ। घुघुर-घंटी ठीक-ठाक की। दो-दो हजार तक की जोड़ी चुपचाप चलेगी? रोहिनी में समहुत हुआ। धरती की पूजा हुई और मूठ ली गयी। 'जै महादेवजी', खेती शुरू। हल-फाल, नाधा-पैना सब दुरुस्त। खाद खेतों में बिछा दी गयी। शुभ-दिन पर बीज निकाल लिया गया। अपने पल्ले नहीं तो खरीदकर या मांगकर जुगाड़ बैठाया गया। नये बाछा को नकली हल में नाथ-नाथकर निकाल लिया गया, साध लिया गया। नयी जुआठ को हल्दी-तेल लगाकर चिकना दिया गया। एकदम तैयार, अब आसमान से कासन मिले। ...किंतु बादल आये और उड़ गये।

धरती पर आस्थावादी लोगों ने ललक-भरी दृष्टि से आसमान की ओर देखा। वहां एक अदद सूरज नये तेवर में जल रहा था। यह क्या माजरा है? खैर, जैसी तेरी मरजी! हमने तो सारा इंतजाम कर लिया है। बरसात में बैलों के खुर से दरवाजे पर कीचड़ न हो जाए, इसके लिए नयी बलुई माटी डालकर बैलों का अड़ार संवार दिया गया है। मच्छरों से बचने के लिए धुआं करने का इंतजाम कर लिया गया है। शुभ दिन पर उपलों की गोहरौर फोड़कर और उन्हें घर में ढोकर रख देने के बाद उनके
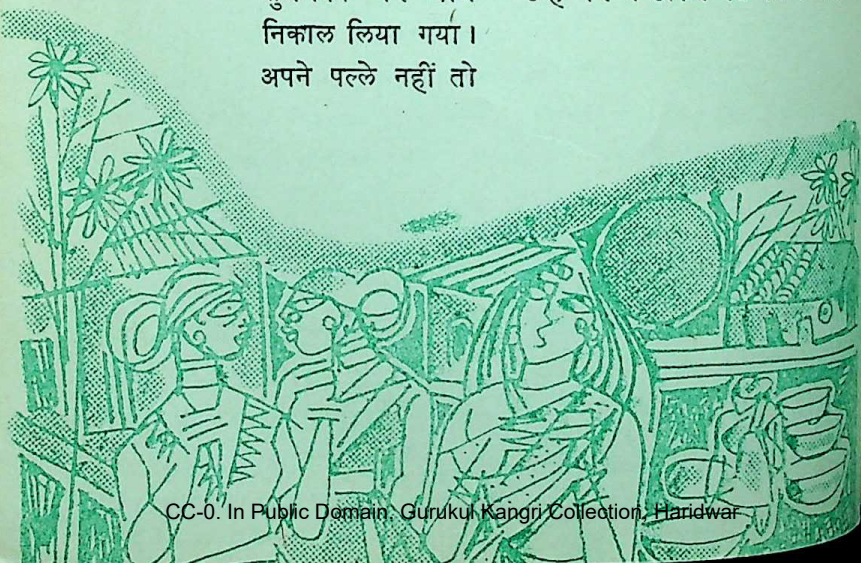
की करसी और भूसे की डांटी संभालकर रख दी गयी है। पूरी बरसात भर के लिए प्रबंध है। ऊंचे दरवाजे पर पानी-पांक में चढ़ते समय पैर न बिछल जाए, इसलिए सीढ़ी की तरह अरहर के सूखे पौधों या वांस की कइनि का बंडल बांधकर बीड़ बना दिया गया है। पानी के बहाव या कटाववाली जगहों पर भी ऐसी ही बीड़ लगा दी गयी है। छानी-झोपड़ी छा-बनाकर खड़ी कर ली गयी है। आर्द्रा लगने के पूर्व जल्दी-जल्दी बांस-बंड़ेरा जुटा, गिरे-पड़े घरों को उठा दिया गया। पनियारी में कहां गौं बैठता है? उघरी-बिखरी खप-रैलों को ठीक कर दिया गया। जहां पिछले साल चू रहा था, मरम्मत कर दी गयी। विशेष सावधानी से भूसेवाला घर फेर-फार दिया गया। सब दिन यही होता आया है। . . . किंतु आसमान पर तैरते सूखे बादलों के उड़ जाने और रात में चांदनी छिटक जाने पर पुरवा का तेज झोंका आया तो खाट पर बैठे किसानों की आंखें मठ गयीं।

भाग्यवादी ग्रामीणों ने कहा, 'पानी काहे नहीं बरसेगा? जिआ-जंतु और चिरई-चुरमुन कैसे जियेंगे? आज नहीं तो कल बरसेगा, आर्द्रा के भीतर बरसेगा।' कुछ ने हल उठाया और सूखे खेत में छोटे-छोटे हल, खुटहरा से सांवा छींटकर जोत दिया, धुरियाबावग कर दिया! जै बाबा बरमेसरनाथ, रात में पानी बरस जाय तो निहाल। सारे बीज बनबना कर निकल जाएंगे। 'आगिल खेती आगे-आगे, पाछिल खेती भागे-जोगे!' . . . लेकिन दस दिन बाद लगा कि बीआ माटी में मिल गया! सब बेकार, अकारथ। बैलगाड़ी उजाड़कर ठटरा-पहिया दालान में रख दिया गया। बरसात में कैसे कच्चे रास्ते पर चलेगी? क्या ऐसे ही उलटन होती रहेगी? पानी बरसेगा न! गोबर पाथना बंद कर दिया गया कि वर्षा की झड़ी में कैसे सूखेगा! कम-

जोर मिट्टी की दीवार टट्टी बनाकर ढक दी गयी कि कहीं बौछारों में ढह न जाए! लग-भिड़कर पनाले दुरुस्त किये गये कि कहीं आंगन में पानी न लग जाए! बाप रे बाप, धारसार पानी पड़ने लगने पर पनाह नहीं मिल पाती! बगीचे से बैलों के खूंटे उखड़ गये। अब उन्हें क्या छाया में बांधना है? दिन भर बादलों की छाया में वे हराई पर घंटी टुनटुनाते, हलवाहों की 'आव-आव' पर नाचते रहेंगे! ...

हां, विश्वास बना है। 'अग्रसोची सदा सुखी' वाली नीति के अनुसार भदई की फसल अगोरने के लिए जो छोटी झोपड़ी बनाकर मचान का सामान संभाल लिया गया था, सो सब दरवाजे पर ही पड़ा रह गया! आम के बगीचों में पेड़ों के चारों ओर थाले बना दिये गये कि पानी रुकेगा। बंसवारि में नयी मिट्टी फेंकी गयी कि नये कल्ले फूटेंगे। कुदाल से खेत की दूब खोद डाली गयी। कहा जाता है न कि 'सौ चास न एक पास!' मगर आर्द्रा उतरते ही खीर खाने का जोश ठंडा पड़ गया।

धरती पर जल-क्रांति हो गयी। कजरी कंठ में रह गयी। झूला भूल गया। इंद्रधनुष कभी-कभार शाम को पश्चिम में दिखायी पड़ने लगा। 'बिसवत बरखा जाइ!' उधर बिजली की चमक के लिए विरहणियां तरसकर रह गयीं। पछिमा हवा सद्धर्म की तरह दुबक गयी और पुरवा डाइनि की तरह हरहराने लगी। दरार फटे सीवान में गायें अभ्यासवश ही चरने जाती! मेढक बिला गये। पपीहा चुप, बीरबहूटी लुप्त, सपना झिल्ली झनकार! पनीली-सी सीत्कार, जुगनूई लपदप, बादलों की आंख मिचौनी, चूती ओरी, लहराती तलैया, अब सब कहां? बादल नौकरी की तरह आये फिर वेतन की तरह उड़ गये। कीर्तन, हवन, पूजा, हरपरवरी और शिवार्चन आदि, आसमान को अस्वीकार!

बहुत आशावादी बनते हैं धरतीवाले! देखो भला, मृगशिरा बीतता नहीं कि गांव का कुम्हार, आंवा समेटने लगता है। सोच लेता है, अब पानी बरसेगा ही। नदी-नाले के मछुआरे जाल-टाप सुधारने लगते हैं। सोच लेते हैं, जल आएगा ही। संन्यासी भी थिर हो गये। चौमासे का नियम है न? सनातन नियम। इसी 'सनातन नियम' से आसमान को चिढ़ है। सुनो, भट्ठे की चिमनी वालो, चिमनियां मत गिराओ। सरकार नदियों के पुल न तोड़े। अब पावस में नदियां सूखी रहेंगी। सचमुच, उस साल आंखें खुल गयीं कि चौमासे में रास्ते खुले रहेंगे और इंटीरियर में गेहूं की खरीदवाली ट्रकें धूल उड़ायेंगी! पर अब असाढ़ बीत जाएगा, सावन-भादो सरक जाएगा, घन नहीं गाजेगा। परंपरा नहीं चलेगी। बहुत चला 'घेर-घेर घोर गगन' का छायावाद! रिमझिमवाद, बुलबुलावाद! अब आया सनसनाता सूखावाद, अभिनव अकालवाद, आसमानी अस्वीकारवाद। स्वीकारो!

—प्रोफेसर्स कालोनी, सकलेनाबाद, गाजीपुर

उसे 'जनवादी' का नारा देकर दूसरे साहित्य से श्रेष्ठ करार नहीं किया जा सकता।

छोटी पत्रिकाओं के नाम पर एक पत्रिका है 'उत्तरार्द्ध जनवादी चेतना का साहित्यिक सांस्कृतिक मंच'। इसके सातवें अंक में 'बुर्जुआ लेखन संकट में' के अंतर्गत एक टिप्पणी है, जिसमें हिंदुस्तान टाइम्स और टाइम्स ऑव इंडिया प्रकाशनों द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में जो साहित्य, संस्कृति और कला प्रस्तुत की जाती है, उसके चरित्र पर प्रश्नवाचक चिह्न लगाया गया है। स्तंभ-लेखक को शिकायत है कि ये पत्रिकाएं लेखकों को इतना अधिक पारिश्रमिक

छोटी पत्रिकाएं बनाम कूड़ागाड़ी

छोटी पत्रिकाओं की अपनी भूमिका है, यह एक निर्विवाद तथ्य है; लेकिन हिंदी में इन दिनों जिस तरह कुछ छोटी पत्रिकाओं का संयोजन और संपादन हो रहा है, उसे देखते हुए लगता है उनकी भूमिकाएं या तो निजी स्वार्थों तक सीमित हैं अथवा वे राजनीतिक विचारधाराओं की शिकार हैं।

राजनीति को लेकर जो पत्र प्रकाशित किये जाते हैं, उनसे किसी को शिकायत नहीं है, लेकिन 'साहित्यिक मुखौटे' लगाकर गलत हथियारों का उपयोग निंदनीय है। साहित्य हमेशा प्रगतिशील होता है।

क्यों देती हैं? वे छोटी पत्रिकाओं की तरह उनसे मुफ्त में रचनाएं ही क्यों नहीं लिखवातीं, उनसे चंदा मांगकर अपना स्वार्थ साधन क्यों नहीं करतीं? लेखक महोदय को चिंता है कि बड़ी पत्रिकाओं में प्रकाशित सारा साहित्य बुर्जुआ है और वह प्रगति के रास्ते में रोड़ा है।

इसी अंक में प्रकाशित दो कविताओं की ओर हम पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। एक कविता छपी है **रेल हड़ताल पर :**

रेल का चक्का जाम करो
जाम करो भइ जाम करो

ऊंचा परचम लाल तुम्हारा
ऊंचा अपना नाम करो !

दूसरी कविता है **'नहिं चहिए सरकार सयानी नहिं चहिए ।'** आश्चर्य यह कि इन दोनों रचनाओं के लेखक अपने को 'साहित्यिक गीतकार' होने का दावा करते हैं।

पाठक स्वयं देखेंगे, ये साहित्यिक रचनाएं हैं अथवा राजनीतिक 'नारे' । इसी तरह की कई रचनाएं इस अंक में छपी हैं। दूसरों पर कीचड़ उछालना जितना आसान है उतना ही कठिन आईने में अपनी सूरत देखना होता है और सबसे आसान है 'कूड़ागाड़ी' को हांकना क्योंकि उसके गिरने और फिसलने का डर नहीं रहता।

हाल ही राजधानी की संस्था 'दिल्ली राइटर्स फोरम' ने 'भारतीय सामाजिक संदर्भ : लेखक की सत्ता' विषय पर गंभीर और व्यवस्थित चर्चा गोष्ठी आयोजित की थी। इसमें नये-पुराने लेखकों ने भाग लिया ।

अधिकांश साहित्यकारों का यह मत था कि पिछले २७ वर्षों में लेखक की सत्ता उसके 'शब्दों' के बिकने तक ही सीमित रही है और शब्दों के इस व्यापार द्वारा ही वह अपनी स्थिति को निर्धारित करता रहा है। इसी ले-दे में उसे लेखक की सार्थकता या लेखन की सही दिशा आदि प्रश्नों से टकराने की फुरसत नहीं मिली। वह अपनी निजी हित-चिंताओं को लेकर निश्चित रूप से यथा-स्थिति का पोषक बना रहा है। कुछ साहित्यकार नारेबाजी और राजनीतिक प्रचार को साहित्य मान लेने वाले पुराने प्रगतिवादी भ्रम के पुनः शिकार हो रहे हैं। वे भूल जाते हैं कि सृजनात्मक साहित्य और प्रचार-साहित्य में एक मौलिक अंतर होता है।

श्री जयप्रकाश नारायण का देश के राजनीतिकों में गणमान्य स्थान है। हाल ही उन्होंने स्पष्ट रूप से सरकारी नीतियों की आलोचना करते हुए ... में परिवर्तन की मांग की है। उन्होंने एक संस्था भी बनायी है। उसकी मीटिंगों में श्री छागला, श्री कृपलानी और श्री पालकी-वाला–जैसे व्यक्तियों ने भाग लिया था।

यह इस देश का दुर्भाग्य है कि ... अब तक युवा-शक्ति को पहचानने की कोशिश नहीं की। यहां कोई भी परिवर्तन जनतांत्रिक ढांचे में ही हो सकता है। ... जयप्रकाश बाबू को छोड़कर उनके ... युक्त तीन साथियों में कौन है जो ... जनता से जुड़ा है। 'नारे' और 'भाषणों' की फसलें इस देश में खूब हो रही हैं। उनके बीच हर जगह बूढ़ा नेतृत्व ... सांसें तेज कर रहा है।

वर्तमान सत्ता शिथिल है, इसमें कोई संदेह नहीं, लेकिन उसको उससे अधिक जर्जर व्यवस्था से तोड़ा नहीं जा सकता, यह भी उतना ही सत्य है।

● अश्वमे...

जंगली चिड़ियां पनाह मांगती हुईं

• मेहरुन्निसा परवेज

आदम और हव्वा ! याने स्त्री और पुरुष ! समुची जिंदगी के दो पात्र ! दोनों साथ-साथ मंजिल के लिए निकले तो थे पर एक आगे निकल गया और दूसरा उसका जीवन-साथी कहलाने के बावजूद पीछे, बहुत पीछे छूट गया । युग बीत गये, पर आज भी हव्वा बदनाम है । हव्वा के नाम थोपे गये आरोपों की फेहरिस्त आज भी वैसी की वैसी ही है जैसी कि युगों पहले थी । आज भी आदम छाती पीट-कर कहता है कि हव्वा की भूल की वजह से उसे जन्नत से निकालकर दुनिया में भेजा गया, पर साहब, यह सोचने की कोई कोशिश नहीं करता कि हव्वा को बहकाने-वाला, भटकानेवाला वह शैतान भी तो पुरुष ही था !

वस्तर ! चारों ओर से घिरे जंगल, पहाड़ और इंद्रावती और खोलाब का अगवाड़ा और पिछवाड़ावाला वस्तर । कुछ पुराने बूढ़े लोगों का कहना है कि पहले यहां राक्षसों का राज्य था । बाली और सुगरीम नाम के दो बंदर भाई-भाई थे, उन्हीं का यहां राज्य था । यहां की सबसे पुरानी माने जानेवाली जातियां धुरवा और परजा बाली और सुगरीम की वंशज हैं।

वस्तर नाम क्यों पड़ा, इसमें भी कई मत सामने आते हैं । महाराजा प्रवीरचन्द्र भंजदेव काकतीय ने अपनी पुस्तक 'लोहन्डीमुढ़ा तरङ्ग्ड़िनी' में कुछ शिलालेखों का वर्णन किया है । उनका अनुमान है कि शायद काकतीय राजवंश के प्रथम विजेता ने अपना अधिक समय वासंतरी, अर्थात बांस वृक्षों के नीचे व्यतीत किया हो, इसलिए बाद में इस क्षेत्र का नाम वस्तर रख दिया । दूसरा मत है कि वारंगल में अन्नम देव महाराज को दंतेश्वरी देवी ने एक वस्त्र प्रदान किया था और वरदान दिया था कि 'इस वस्त्र के पहनने से तू विजयी होगा' । वस्त्र यहां के लिए नयी चीज थी, इसलिए शायद इस राज्य का नाम वस्तर पड़ा ।

पुरुष पर आश्रित उन्मुक्त नारी

यहां, बस्तर में, नारी पुरुष की तरह उन्मुक्त जरूर है, किंतु वह पुरुष पर आश्रित

है। यहां की नारी भय और भूख से पीड़ित है। बाहर से आये शहराती लोगों के लिए वह स्वाद बदलने के लिए चटखारेदार जंगली पके हुए रसदार जामुन से अधिक नहीं है। यहां औरत की इज्जत पुराने उतरे हुए कपड़ों के बराबर ही है। बाजार में बैंगन महंगा मिलता है, पर यह सस्ती मिल जाती है।

आजादी के बाद बाहरी दुनिया से बस्तर का संपर्क बढ़ा है। इस संपर्क से जहां अनेक फायदे हुए हैं, वहां कुछ नुकसान भी! और बस्तर की नारी को ही यह नुकसान शायद ज्यादा उठाना पड़ा है।

यहां गरीब घरों की लड़कियां दस-बीस रुपयों के लिए घरों के काम करती हैं। घरों में काम करते शहरी हवा लगना जरूरी है। अब समस्या यह है कि यह पेट की आग बुझायें या नये फैशन की ओर ध्यान दें। मेरे घर जो लड़की काम करती है, उसका नाम है रयती। उसकी मां आये-दिन मेरे पास आकर उसकी शिका... का ब्योरा सुना जाती थी। वह क... कहती, "बाई, रयती अच्छी-अच्छी ... मांगती है। मनिहारी की दूकान से ... पाउडर, सुगंध, गोला तेल, साबुन ... खरीद कर कर्जा बढ़ाती है, मैं कहां से ... पैसा लाऊं ?"

मैंने रयती को बुलाकर डांटा तो ... चुप रह गयी। फिर दूसरे हफ्ते से ... रोज मेरे पास कुछ रुपये जमा करा... पूछने पर बताती कि उसका कोई ... है, वही उसे यह रुपये देता है। मेरी ... में नहीं आया कि इसके मामा को अ... इससे हमदर्दी कैसे हो गयी ? मेरे ... जोड़कर रखे रुपयों से वह नयी साड़ी ... फैशन की दूसरी चीजें खरीदती। अब ... मां को बेटी से कोई शिकायत नहीं ...

कुछ महीनों बाद रयती ने का... आना बंद कर दिया, उसके बदले उस... काम पर आने लगी। एक दिन उस...

श्रम की थकान उतारते आदिवासी

घबरायी-सी आयी । उससे पता चला कि रुपये कमाने के चक्कर में रयती गलत रास्ते पड़ गयी थी और नतीजा भी जल्दी ही मिल गया । घर में सीरा-गुना हाथ की दवा करके जब हार गये, तब उसे डाक्टर के पास ले जाने की सिफारिश करने आयी थी वह ।

मैंने रयती को बुलाकर पूछा तो उसने बड़े ही भोलेपन से कहा, "मेरे साथ की सब लड़कियां टेरलीन नायलोन और छींट की साड़ियां पहनती हैं । उनके साथ रहकर अपनी मोटी-मोटी, ऊंची, आदिवासी साड़ी अच्छी नहीं लगती ।"

मैं चुप रह गयी, जवाब भी क्या था ? सच ही तो है । आदमी दूसरे को दिखाने के लिए ही पहनता है । हम जो चीज एक बार छोड़ देते हैं, तो दोबारा अपनाने में कितना कष्ट होता है ! यह रयती को देख अंदाजा लगाया जा सकता है क्योंकि जब से वह बीमार पड़ी थी, उसके पास स्नो, पाउडर, साड़ी खरीदने के लिए पैसे नहीं थे और अब इनकी उसे आदत पड़ गयी थी । इनके अभाव में अब उसे घर से निकलने में भी शर्म आती थी । ऐसी न जाने कितनी रयती यहां मिलेंगी, जो हालात की गर्दिश से रोजाना टकराती हैं ।

तड़क-भड़क के जाल में फंसी लड़कियां

पिछले दिनों हम लोग बाजारवाली सड़क से लौट रहे थे कि सामने एक छोटी-सी आदिवासी कपड़ों की दूकान में मैं घुस पड़ी । दूकानदार ने बताया, "अब यह आदिवासी साड़ियां बिकती नहीं ! अब तो आदिवासी लड़कियां भी छींट की तड़क-भड़कवाली साड़ियां पसंद करने लगी हैं । अब उन्हें यह जांघों तक ऊंची मिनी साड़ी-जैसी दिखनेवाली आदिवासी साड़ियां पसंद नहीं आतीं । अब ये लोग भी ऐड़ियों तक लंबी साड़ियां पसंद करने लगी हैं ।"

नृत्य आदिवासियों के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है

पहले लोग दशहरे के लिए हजार, दो हजार की आदिवासी साड़ियां उठाते थे, पर अब वह साड़ियां धरी रह जाती हैं और दूसरा माल उठ जाता है। दिन-ब-दिन इन साड़ियों की बिक्री कम हो रही है। कुछ सालों बाद तो शायद आदिवासी साड़ियां केवल प्रदर्शनियों की शोभा बढ़ाएंगी।

दूसरे दूकानदार ने, जो मनिहारी-वाला है और जो मेलों में गांव-गांव अपनी दूकान ले जाता है, बताया कि उसकी अपनी दूकान से ऊंचे दामों के क्रीम, पाउडर जितने नहीं बिकते, उससे दुगनी-तिगनी खपत सस्ते पाउडर, स्नो और सुगंधवाले तेलों की है।

सस्ते जीवन : सस्ते बंधन

यहां शिक्षा का अभाव है जिसकी वजह से ये लड़कियां अपने बारे में, अपने भविष्य के बारे में सोच नहीं पातीं, समझने की शक्ति नहीं है। सस्ता जीवन, सस्ते बंधन। कोई कानून नहीं, कायदे नहीं। दशहरे में फूलरथ के पीछे गिरे फूलों को उठाकर ब्याह कर लिया, फिर दूसरे से चूड़ी पहन ली, फिर तीसरे से।

एक बार हमलोग एक गांव में हो रही मंडई देखने गये थे। कोटवार के घर चहल-पहल थी। कोटवार ने उसी समय एक औरत को चूड़ी पहनायी थी। दुलहन को देख मैं आश्चर्य में पड़ गयी। दुलहन के चेहरे पर उम्र ने इतनी सिलवटें डाल दी थीं कि लग रहा था मानो बरसों का पेटी में पड़ा मुड़ा-गुसा पुराना-सा चिथड़ा हो।

"तुई तो बुढ़ा गईस रे डोकरी, कायबर सादी करे ?"

गोदने से शरीर को सजाने की प्रथा आज भी प्रचलित है

"मरतो बेरा आदमी चो हाथ ले मुट्ठी भर माटी मिलही।"

कितना कड़वा सत्य है। एक मुट्ठी मिट्टी के लिए औरत पनाह मांग रही है। जंगली चिड़ियों की तरह पनाह मांगती, घरौंदे की तलाश में यह सारी उम्र डाल-डाल मंडराती है! पर इसे पनाह मिलती है? शायद नहीं।

—प्रतापगंज, जगदलपुर (बस्तर)

• टॉम गैलाथर

अलबानी काउंटी हवाईअड्डे के रनवे से विमान अभी हवा में उठा ही था कि व्योमबाला एलन मैक एलस्टर को अपनी पीठ पर किसी भारी चीज का दबाव महसूस हुआ। वह पीछे मुड़कर देखना ही चाहती थी कि एक मर्दाना धीमी आवाज ने उसके शरीर में कंपकपी-सी पैदा कर दी, "तुम्हारे विमान का अपहरण किया जा रहा है। अगर जिंदगी चाहती हो तो मेरे आदेशानुसार कार्य करो।"

एलन ने पायलट को सूचित करने के लिए टेलीफोन की ओर हाथ बढ़ाया और पीछे की ओर सिर घुमाकर पहली वार अपहरण करनेवाले पर दृष्टि डाली। खिंचा हुआ चेहरा, भिंचे हुए होंठ, गरदन की तनी हुई नसें और चमकदार आंखें। एलन सहायक पायलट विलियम ओहारा को फोन पर बता रही थी, "हमारे विमान का अपहरण किया जा रहा है। यहां एक आदमी मुझे गन से कवर किये खड़ा है। वह विमान को व्हाइट प्लेन ले जाना चाहता है। कहता है, दो बम भी रख दिये गये हैं।"

दूसरी ओर निस्तब्धता थी। शायद ओहारा कैप्टन कार्ल रीथ से सलाह कर रहा था। कुछ क्षणोपरांत ओहारा की आवाज सुनायी दी, "ठीक है, एलन! उसे इत्मीनान दिला दो कि हम विमान को उसी जगह ले जाएंगे।" एलन ने हाईजैकर को बता दिया कि पायलट उसके आदेशानुसार कार्य करने को तैयार है। वह अच्छी तरह जानती थी कि 'इत्मीनान दिला दो' से पायलट का क्या अभिप्राय है? वह मुसाफिरों को भयभीत नहीं करना चाहती थी। इस यात्री-विमान में ४२ व्यक्ति थे। ये सब मोहाक एयरलाइंस के विमान से न्यूयार्क जा रहे थे। एलन कुछ विलंब से बोली, "सुनो! कुछ लोगों ने मुझसे पेय लाने को कहा है। अगर मैंने वे नहीं दिये तो वे शक करने लगेंगे। मैं वचन देती हूं कि कोई ऐसी हरकत नहीं करूंगी जो तुम्हें पसंद न हो।" जिस समय एलन मुसकराती हुई मुसाफिरों

को पेय दे रही थी जहाज का पायलट रेडियो-सिगनल द्वारा कंट्रोल रूम को विमान के अपहरण का समाचार प्रसारित कर रहा था। न्यूयार्क से बीस मील उत्तर में व्हाइट प्लेन स्थान पर सशस्त्र जासूस एकत्र थे। अपहृत विमान हवाईअड्डे पर उतर चुका था।

एलन ने हाईजैकर से कहा, "मुसाफिरों के बारे में क्या विचार है? क्यों न इन्हें उतार दिया जाए?"

हाईजैकर सहमत हो गया। एलन अगले दरवाजे के निकट खड़ी हो गयी और हाईजैकर उसकी पीठ के पीछे गन चुभोकर खड़ा हो गया। सहमे हुए, घबराये से मुसाफिर एक-एक करके विमान से उतर रहे थे। ज्यों ही अंतिम मुसाफिर बाहर निकला, एलन को आदेश मिला, "तत्काल दरवाजा बंद कर दो और फोन पर कप्तान को मेरी मांगें बताओ। मुझे इसी वक्त दो लाख डालर, दो पैराशूट और दो वेदरप्रूफ लिबास चाहिएं। यह भी कह दो कि इन सब चीजों का प्रबंध आज रात साढ़े दस बजे तक हो जाना चाहिए, वरना इसके बाद बम फट जाएंगे।" एलन ने संदेश प्रसारित कर दिया।

"मैं पीटर हूं। तुम्हारा क्या नाम है?" अचानक हाईजैकर ने पूछा। एलन ने सहमे-सहमे उसे अपना नाम बताया।

हाईजैकर अपनी पत्नी और तीन बच्चों की बातें करने लगा। उसने एलन की दृष्टि गन पर केंद्रित देखकर कहा, "तुम इससे डर रही होगी! मैं तुम्हें अधिक भयभीत नहीं करना चाहता। तुम बहुत अच्छी लड़की हो।"

साढ़े दस बजे का अंतिम प्रहर पास आ रहा था, लेकिन रकम का अभी तक पता न था। वह फोन पर चीखकर अपनी रकम के लिए कहने लगा। अब साढ़े दस बजने में कुछ सेकंड शेष रहे थे। वह उठकर खड़ा हो गया। बार के ऊपर से उसने किसी धातु का एक तख्ता-सा उठा लिया, जिसका आधे से अधिक भाग बमों की फायरिंग-पिनों के नीचे रख दिया। "जब मैं इसे नीचे से खींचूंगा तब तुरंत

बम फट जाएंगे," वह बोला।

उसी क्षण कैप्टन रीथ की आवाज सुनायी दी, जो पूछ रहा था, "क्या एलन की जगह हवाई कंपनी के वाइस चेयरमैन आ सकते हैं?"

"नहीं, विमान में यही रहेगी," पैट ने कठोर स्वर में उत्तर दिया।

हाईजैकर ने ग्यारह बजे तक प्रतीक्षा की। वह टेलीफोन उठाकर दहाड़ा, "तुम लोग दिन निकलने की प्रतीक्षा कर रहे हो, ताकि दिन के उजाले में जासूस खिड़कियों में से आकर मुझे गिरफ्तार कर लें!" फिर वह हर खिड़की में से झुक-झुककर झांकने लगा।

उसने टेलीफोन की ओर इशारा करके एलन से कहा, "उनसे कहो, अगर गोली चलायी गयी तो ये बम फट जाएंगे।"

"सबको पता है कि विमान में मैं हूं। वे कदापि ऐसा न करेंगे।" एलन ने उसे इत्मीनान दिलाया। एक बजे पैराशूट आ गये। कप्तान फोन पर धीरे-धीरे एलन से कह रहा था, "अगर वह पैराशूट लेने के लिए तुम्हें बाहर ले जाए तो तुम वहां से भाग सकती हो।" लेकिन पैट ने सहायक पायलट को आदेश दिया कि पैराशूट यात्री-कक्ष तक स्वयं ही पहुंचा दे।

डेढ़ बजे सहायक पायलट को खिड़की द्वारा एक सूटकेस अंदर पहुंचाया गया, जिसमें दो लाख डालर और दो पैराशूट रखे हुए थे।

अब कप्तान ने टेलीफोन पर पूछा, "इस बात की क्या जमानत है कि जब विमान ऊपर पहुंचेगा तब तुम उसे बम से नहीं उड़ाओगे?"

हाईजैकर ने उत्तर दिया, "अगर दो मिनट में तुमने विमान नहीं उड़ाया तो मैं इसे अपने आप चलाऊंगा। मैं भी पायलट हूं। मुझे तुम्हारी जरूरत नहीं है।"

एलन रुआंसी हो गयी। उसने भर्राये स्वर में कहा, "कार्ल, जो कुछ ये कहते हैं, वैसा ही करो। कुछ क्षणों में इंजन चालू हो गये थे। फिर विमान धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। सेंट्रल रनवे पर पहुंचने से पूर्व ही हाईजैकर ने पायलट को आदेश दिया, "हवाईअड्डे के चारों ओर चक्कर लगाओ, और १५,००० फुट की ऊंचाई से अधिक इसे न ले जाना।'

एक केबिन में हाईजैकर की गन एलन की कमर से लगी थी और उसके दोनों बम कंबल में लिपटे पड़े थे। एलन ने महसूस किया कि विमान ऊपर उठ रहा था। आधे घंटे के अंदर विमान पिट्सन फील्ड के ऊपर उड़ रहा था। पैट खड़ा हो गया और एलन से कहने लगा, "आओ, अपने-अपने पैराशूट संभाल लें।" एलन बड़बड़ाने लगी, "देखो पैट, जो कुछ तुम चाहते हो, मैं नहीं कर सकती। यह आत्महत्या करना है।" पैट बैठ गया। उसने जेब से एक कागज निकाला और पढ़ने लगा। फिर उसने पायलट को एक नया और चौंका देनेवाला आदेश सुनाया, "अब हम पूफ कैपसी चलेंगे। जब हम

वहां पहुंचे तब विमान के बायीं ओर कार खड़ी होनी चाहिए, जिसका इंजन तो स्टार्ट हो, लेकिन उसमें ड्राइवर मौजूद न हो। उसके दरवाजे खुले हों, अंदर की रोशनियां जलती हों और उसमें रेडियो-सिगनल लगे हों। अगर किसी ने कोई गलत हरकत की तो मैं पूरे स्टाफ-सहित विमान उड़ा दूंगा।" पूफ कैप्सी पचास मील पीछे छूट गया था।

विमान जब उतरा तब हाईजैकर ने सहायक पायलट को आदेश दिया कि नीचे उतर जाओ और डालरों से भरा सूटकेस कार की पिछली सीट पर रख दो। उसने एलन की ओर मुड़कर कहा, "एक बम तुम उठा लो और मेरे साथ आओ।" एलन ने इनकार कर दिया। विमान के उतरने के कारण वह अपने को सशक्त अनुभव कर रही थी। पैट ने बायें हाथ में दोनों बम उठाये और एलन की कलाई पकड़कर दरवाजे की ओर बढ़ा।

वे विमान की सीढ़ियों से उतर रहे थे। नीचे कार मौजूद थी। हाईजैकर ने एलन को कार की अगली सीट पर धकेल दिया और दोनों बम उसके बराबर रख दिये, फिर बाहर से दरवाजा बंद कर दिया। वह कार के पीछे से घूमकर ड्राइवर की सीट पर पहुंचना चाहता था कि उसी समय दरवाजा खुला। एलन को कुछ पता नहीं चल रहा था। उसके सामने कोई धुंधली-सी चीज थी। गोली चलने की आवाज हुई, और हाईजैकर कार के बाहर लुढ़क गया। एलन ने देखा कि उसके और हाईजैकर के बीच एक सिपाही खड़ा था। गोली उसी ने चलायी थी।

एलन कार से कूद पड़ी और बिना सोचे-समझे एक ओर को भागने लगी। उसे डर था कि बम बस फटने ही वाले हैं। सिपाही ने लपककर उसकी बांह पकड़ ली और उसे हवाईअड्डे की इमारत में ले गया। सुबह के चार बजे थे तब।

". . . बमों को तभी प्रभावहीन कर दिया गया था। पिट्स फील्ड के निकट ब्रोक्टन में हाईजैकर के घरवाले रहते थे। उसके सात बच्चे थे। उसने तुम्हें गलत बताया था कि उसके तीन बच्चे हैं। पैट का असली नाम हैनरिच वान [illegible] है। वह बहुत ही शर्मीले स्वभाववाला है और हर समय ऋणग्रस्त रहता है। [illegible] आज तक विमान नहीं चलाया और न [illegible] कभी पैराशूट प्रयोग किया। वह [illegible] कल्पना-लोक में रहता था, जहां वह एक [illegible] जलयान का चालक भी था, बहुत [illegible] पशु-केंद्र का मालिक भी और [illegible] भी। विमान-अपहरण की योजना [illegible] काल्पनिक थी और उसके सहायक [illegible] ऐसे ही थे। उसके स्वप्नों के पीछे बस [illegible] इतना यथार्थ था कि उसके पास [illegible] १,००,००० डालर थे। अपहरण [illegible] प्रयत्न ही उसके स्वप्नों का साकार [illegible] था," एलन के पिता ने उसे बाद में बताया।

—ए-२०, तिब्बिया कालेज [illegible]
करौलबाग, नयी दिल्ली-११००[illegible]

पुरानी कब्रों ने विश्व को क्या दिया ?

• लक्ष्मीकांत 'सरस'

मिस्र की सभ्यता-संस्कृति तथा कला को उद्घाटित करनेवाली विशेष महत्त्व की कब्र तूतनखामन की थी। तूतनखामन की कब्र के तिलिस्म को तोड़ने के लिए कितनों ने प्रयत्न किये, कितनों की जानें गयीं ! मिस्र का वह किशोर सम्राट जहां सदियों से सोया पड़ा था उसके साथ ही सोये पड़े थे पहरुए, और वहां रखे थे उसके लिए वे सारे सामान जो उसके दैनिक जीवन के उपयोग में काम आ सकते थे। अकेले तूतनखामन की कब्र से प्राप्त दुर्लभ-वस्तुओं की संख्या १,७०० है। इनमें एक सोने का मुखौटा है जिसकी कीमत १९२२ई. में ५०,००० पौंड आंकी गयी थी। इस कब्र से प्राप्त वस्तुओं से २,९०० से २,३००ई. पू. की सभ्यता को समझाने में बड़ी मदद मिली। पुरातत्त्ववेत्ता कार्टर ने धैर्य और साहस से काम लेकर १९२२ ई. में तूतनखामन के तिलिस्म को तोड़ डाला था। जब कब्र पर से लाल पत्थर का ढक्कन उठाया गया और शव पर से परदा हटाया गया तब किशोर सम्राट के चेहरे पर दमकते सोने का आवरण देखकर लोग रोमांचित हो उठे थे। चेहरे पर सोने की आकृति उभरी थी, ललाट और भुजाएं सांचे में ढालकर बनायी गयी थीं तथा छाती पर टिके हाथों में राजदंड था। आंखें और भवें विशुद्ध रत्नों से निर्मित थे। जिस कक्ष में तूतनखामन का शव था उस कक्ष में अकूत धन के सामान भरे पड़े थे।

समुद्र के किनारे, जहां आज का विशाल नगर नेपिल्स है, से कुछ दूरी पर विसूवियस ज्वालमुखी है। ई. सन् प्रथम शताब्दी में यह फूट पड़ा था जिसके कारण हरक्यूलेनियम एवं पांपेई नगर जलती राख और आग की विकरालता में समा गये थे। पहले हरक्यूलेनियम और बाद में पांपेई नगर की खुदाई हुई जिससे मानव - सभ्यता के एक युग का पता तो चला ही, साथ ही अकूत धन भी प्राप्त हुआ।

होमर की दो महत्त्वपूर्ण कृतियों 'इलियड' और 'ओदिसी' में वर्णित कथाओं के कारण नारी-मोह से ध्वंस हुए त्राय नगर को खोजा जा सका। 'इलियड' महाकाव्य है। 'ओदिसी' काव्य - प्रबंध में रानी हेलन के लिए ग्रीक तथा त्रायवासियों के बीच हुए युद्ध का वर्णन है। इसकी खोज बहुत पापड़ बेलने के बाद श्लीमान ने की

थी। उसने त्राय को ही नहीं खोजा, बल्कि क्रीती सभ्यता को भी वह मानव के ज्ञान की परिधि में ले आया। अभी श्लीमान की खोज पूरी नहीं हुई थी। उसे तो अभी उन कब्रों का रहस्य पता लगाना था जिसमें पीढ़ियों की संपदा भरी थी। श्लीमान होमर के काव्य के अनुसार काम करता रहा। १७७६ ई. में श्लीमान ने अगामेनन, कसांद्रा और उसके साथियों के खजाने का पता लगाया था लेकिन

तूतनखामन की कब्र से प्राप्त धनराशि को छोड़कर, किसी दूसरी कब्र में इतना स्वर्ण न पहले मिला न बाद में। पहली कब्र में तीन अस्थिपंजर थे। एक - एक मानव अस्थिपंजर पर पांच-पांच सोने के ताज थे। उसी कब्र में तीन नारी अस्थिपंजर थे जिन पर ७०१ स्वर्ण - पत्तियां बनी थीं। सोने के आभूषण, खिलौने, सिंह, मछलियां, तितलियां आदि स्वर्ण निर्मित वस्तुएं थीं। एक अस्थिपंजर पर ताज था जिसे स्पर्श

बाय से : ज्यामिति तथा आड़ी तिरछी रेखाओं से युक्त हित्तियों का स्वर्ण जल पात्र, रानी शुबाद की कब्र से प्राप्त सुनहरी मेष वीणा, २६०० से २४०० ई. पू. की इस वीणा का प्रयोग उत्सवों पर होता था, किशोर सम्राट तूतान खानम की स्वर्ण सजायी ममी जिसकी कीमत १९२२ ई. में ५०,००० पाउंड आंकी गयी थी

वह उनका खजाना नहीं था, वह तो उनसे भी शताब्दियों वर्ष पूर्व कब्र में सोये लोगों का खजाना था। पांच समाधियों में कुछ राजाओं के तथा कुछ रानियों के १५ अस्थिपंजर थे। प्रत्येक अस्थिपंजर सोने से अटा पड़ा था। १९२२ ई. में,

करने मात्र से खोपड़ी तो धूल - धूल हो गयी, लेकिन ताज ज्यों - का - त्यों रहा। अस्थिपंजर की कमर पर बनी छत्तीस स्वर्ण पट्टियां मिलीं। आखिरी कब्र में अस्थि-पंजरों के चेहरे सोने के आवरण से ढंके थे और वक्ष सोने के कवच से। सारी

सारी समाधियां राज - परिवारों की थीं लेकिन वह स्वर्ण राशि ग्रीक के राजाओं की नहीं, सदियों पूर्व के राजाओं की थीं।

पांच हजार वर्ष पूर्व दजला और फरात के बीच और ऊपरी दोआबे में गैरसामी राजाओं का राज था। उन्हीं राजाओं में से एक का नाम शुबाद था। ऊर में उस सुंदरी रानी की काया दफनायी गयी थी। वह अपने पोतों की हत्या करवाकर सिंहासनासीन हुई थी। प्राचीन ऊर की खोज डॉ. लियोनार्द वूली ने की थी। जब १९२६-२८ ई. में डॉ. वूली ने रानी शुबाद की कब्र खोदी उस समय तक रानी शुबाद का सारा रूप रंग खत्म हो चुका था। अस्थिपंजर शेष रहा था जिससे लिपटा सोने का ताज जगमगा रहा था। पास ही दास-दासियों के अस्थिपंजर पड़े थे। कुछ विषपात्र भी लुढ़के पड़े थे, जिनमें से उन्होंने विष पिया था। वाद-वादक के हाथ में वीणा दबी पड़ी थी जिसकी झंकार सुनकर रानी शुबाद कभी नींद से जागती होगी।

केस्पियन सागर के तट पर बसा नगर काफी लंबे समय तक पर्वतीय प्रदेशों से चुराकर लायी पुरातात्विक महत्त्व की वस्तुओं के क्रय-विक्रय का केंद्र बना रहा। १९६१ ई. में ईरान की मालिक चोटी में जिसे चिराग अली चोटी भी कहा जाता है, इजत ओ निगहवान ने एक परीक्षण खाई खुदवायी थी। इसमें छोटे आकार की कांस्य मूर्तियां मुहरें, तथा चौदह स्वर्ण
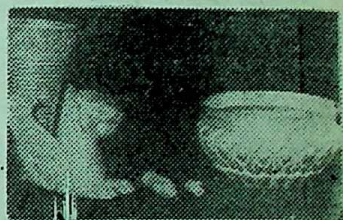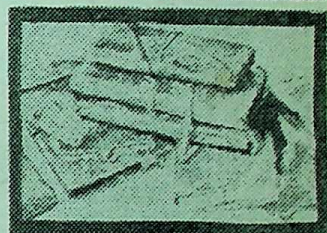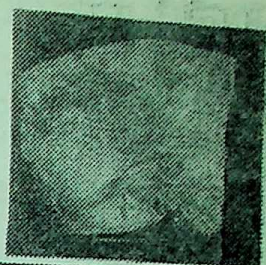
ऊपर से नीचे : स्वर्ण प्याला (९ वीं. शताब्दी) सोने की एक टोपी, १३ पांडु लिपियां, अफामोनियन खजाने की खोज में, खुदाई के समय प्राप्त स्वर्ण-पात्र।

सही पालन-पोषण का आधार
पराग (स्प्रे ड्राईड) शिशु दुग्ध आहार
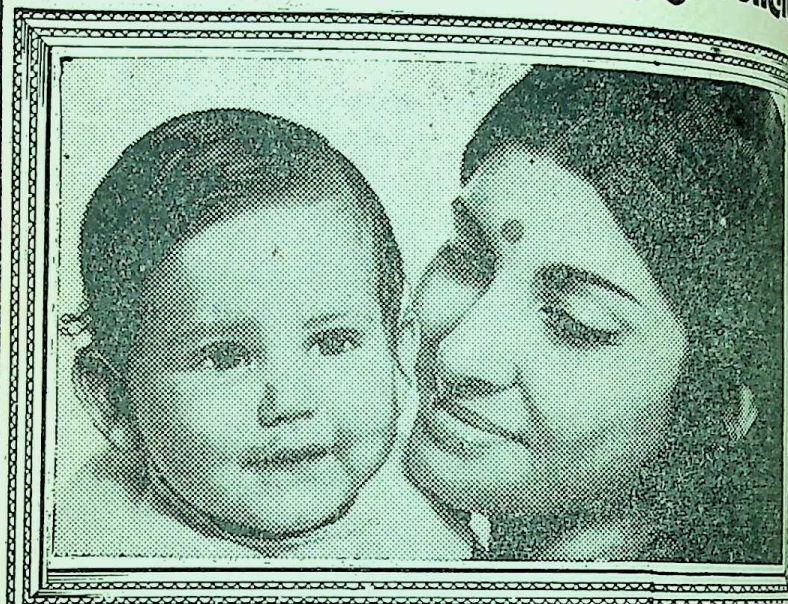
पूर्णतया संतुलित 'पराग' नवजात शिशु के सही पालन-पोषण के लिए विश्वसनीय दुग्ध आहार है। इसे आप शिशु को जन्म के पहले ही सप्ताह से दे सकती हैं। ताजे दूध से अत्याधुनिक स्प्रे-ड्राइंग द्वारा निर्मित, पल-भर में तैयार प्रोटीन, विटामिनों (आठ), खनिज पदार्थों तथा अन्य पौष्टिक तत्वों से भरपूर 'पराग' को आप अपने शिशु की कोमल पाचन शक्ति के अनुकूल पायेंगी।

एकमात्र वितरक: **स्पैंसर एण्ड कं० लिमिटेड**

प्रादेशिक कोऑपरेटिव डेरी फेडरेशन लि० लखनऊ द्वारा इन्फैंट मिल्क फूड फैक्टरी, दलपतपुर, (मुरादाबाद) में निर्मित

ASIAN/P...

बटन मिले। अब तो विधिवत खुदाई प्रारंभ हो गयी। जिसे लोग पहाड़ी समझ रहे थे वह वास्तव में पहाड़ी नहीं, वह मालिक का शाही मकबरा था। खुदाई करने पर ५३ मकबरों का पता चला जिन्हें हजारों साल पहले चोरों ने खोद डाला था। इसलिए विशेष कुछ संपत्ति के रूप में हाथ तो नहीं लगा, लेकिन इन समाधियों के रहस्य के उद्‌घाटन से ईरान की तीन हजार वर्ष पुरानी छिपी पड़ी सभ्यता का पता अवश्य चला।

ग्वाटेमाला के पटेन जंगल में ऊएक्सैक्टन स्थित सातवीं शती के एक 'माया' मकबरे को मानव ने देखा और परखा। इसमें एक भारतीय संगीत-शास्त्री के पेट में छेदकर तथा उसकी हत्या करके उसे दफनाया गया था। एक टूटी प्लेट पर अंकित उस संगीत-शास्त्री की तसवीर से यह पता चला। 'माया' लोगों की पुरानी परंपरा थी कि परलोक में जानेवाले लोगों के साथ जो सामान रखते थे उसे तोड़कर रखते थे।

सिंध के लरकाना कस्बे से करीब २५ मील दक्षिण में चार हजार वर्ष पुरानी सभ्यता को अपने गर्भ में छिपाये हुए कुछ टीले थे जिन्हें मोहन-जो-दड़ो, अर्थात 'मुर्दों का टीला' कहा जाता था। उन्हीं टीलों की खुदाई हो रही थी जिनमें पूरा एक नगर अपनी सभ्यता की गोद में सोया पड़ा था। वह दिन भी आया जिस दिन राखालदास बंद्योपाध्याय की कुदाल की एक चोट ने 'मुर्दों के टीले' की छाती फाड़कर रख दी। पांच हजार साल पहले का यह योजनाबद्ध निर्मित नगर विश्व का पहला योजनाबद्ध निर्मित नगर सिद्ध हुआ।

१९६८ में गरमी के महीने में लूकानिया प्रांत में पीस्तम के प्रसिद्ध मंदिरों के निकट एक कब्रिस्तान से ई. पू. ४८० में चित्रित भित्तिचित्र प्राप्त हुए हैं। १९६९ में कुछ अन्य कब्रों की भी खुदाई की गयी जिनसे एक नहीं अनेक लूकानियन कलाकारों की कृतियां प्रकाश में आयीं। एक चित्र बहुत मार्मिक है। इसमें एक योद्धा के घर लौटने पर उसकी प्रिया स्वागत कर रही है। पीस्तम में पायी गयी शव रखने की पत्थर की पेटियों की लंबाई १.८० मीटर और चौड़ाई १ मीटर है। कब्रों में १५० भित्तिचित्र हैं जिन्हें महत्त्वपूर्ण माना जाता है। प्राचीन ग्रीक चित्रों की यह प्रथम और अब तक की एकमात्र प्राप्ति है।

१९६९ ई. में रूस के प्रोफेसर ए. लोस्कोव के नेतृत्व में एक खोजी दल दक्षिणी उक्रेन के काखोव्का जिले में एक सीथियन मकबरे की खुदाई के लिए भेजा गया। स्तूप चोरों से अछूता बचा था। सीथियन योद्धाओं के अस्थिपंजर और ५२० स्वर्णमुद्राओं के साथ-साथ ऐतिहासिक महत्त्व की ढेर सारी वस्तुएं भी मिलीं।

सीथियन शव-स्तूप की खुदाई में जो सबसे अमूल्य और रोचक वस्तु मिली, वह थी कलात्मक सोने का एक प्याला

जिस पर सीथियन सरदारों लोगों के जीवन-चित्र खुदे हैं। स्तूप में भेड़ों और घोड़ों के अस्थिपंजर, टूटी सुराहियां और तीरों की नोकें भी मिलीं। स्तूप में दो प्रवेश द्वार थे जिनसे होकर गुजरने पर पचीस फुट नीचे एक गर्भगृह में एक रसोईघर था। रसोईघर के द्वार पर एक मानव का अस्थिपंजर था जिसके पास भाले और तीर पड़े हुए थे। कब्र में रसोई बनाने के सारे बर्तन थे। गोश्त निकालने के लिए कांसे के चमचे, एक पतीली, एक ट्रे, शराब छानने के लिए छलनी, कलछी, बालटी आदि बर्तन भी थे। लोगों में धारणा थी कि मृतक पुनः जीवित हो सकता है, अतः उसे कोई कष्ट न होने देने के लिए, सारे सामान रख दिये गये थे।

जटलैंड (डेनमार्क) के आसपास की कोयले के दलदलों में कई ऐसे शव पाये गये जो दो हजार साल तक बिल्कुल सुरक्षित थे। पुराने समय में अपराधियों को मारकर कोयले के दलदल में दबा दिया जाता था। इन्हीं दलदलों में एक ऐसे मानव का शव मिला, जिसने मृत्यु के समय जो कुछ खाया था वह उसके पास ज्यों-का-त्यों रखा था। देखने पर ऐसा मालूम देता था कि अभी-अभी किसी ने उसकी हत्या करके दलदल में फेंक दिया है। परीक्षण करने पर पता चला कि शव के सभी अंग सुरक्षित हैं केवल दिमाग थोड़ा सिकुड़ गया है। पूरे विश्व में प्राप्त शवों में यह एक ऐसे व्यक्ति का शव था जिसको फांसी देकर २१० ई. से ४५ ई. के बीच मारा गया था। उसके हाथ-पांव सुरक्षित थे। उसकी अंगुलियों की छाप ली गयी और वह छाप आज विश्व की सबसे पुराने मनुष्य की छाप मानी जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विश्व की पुरानी कब्रों ने मानव को धन ही नहीं दिया बल्कि धन से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण उन सभ्यताओं का राज खोला जो शताब्दियों से धरती में सोयी थीं।

—१७ अन्ना पिल्ले स्ट्रीट, थर्ड लेन, मद्रास-१

चुनाव में हार गये तो क्या हुआ ? पिछले पांच साल की 'दूरदर्शिता' काम तो अब आएगी !

बुद्धि-विलास

१. **रमेश** ने दफ्तर से छुट्टियां लीं और पत्नी के साथ नैनीताल जाने का कार्यक्रम बनाया। वहां झील में सैर करते हुए नौका उलट जाने के कारण पत्नी तो डूब गयी, पर रमेश किसी तरह बच गया। पुलिस ने इस दुर्घटना की जांच गुप्तचर-विभाग को सौंप दी। सिद्ध हुआ कि रमेश ने अपनी पत्नी को जान-बूझकर नदी में धक्का दिया था। वह एक ऐसी गलती कर बैठा था कि तुरंत पकड़ में आ गया। क्या आप बता सकते हैं कि वह कौन-सी गलती थी?

२. **ठीक** पांच बजे एक व्यक्ति की घड़ी दस मिनट आगे चल रही है जबकि उसी समय दूसरे व्यक्ति की पंद्रह मिनट पीछे चल रही है। इस स्थिति में क्या आप सही समय बता सकते हैं?

३. **ऊपर** से आनेवालों में कौन श्रेष्ठ है, और नीचे जानेवालों में कौन श्रेष्ठ है?

४. **एक** दिन के आसपास दो रातें होती हैं, मगर एक रात के आसपास क्या होता है?

५. **पहाड़** पर चढ़ते समय हमारी गति धीमी होती है और उससे उतरते समय गति तेज होती है। लेकिन एक वस्तु ऐसी भी होती है जिसकी गति पहाड़ पर चढ़ते समय तो बहुत तेज होती है किंतु उतरते समय उसकी गति कम हो जाती है। वह कौन-सी चीज है?

६. **वह** कौन-सी संख्या है जिसमें २ का भाग दें तो शेष १ बचे, ३ का भाग दें तो शेष २ बचें, ४ का भाग दें तो शेष ३ बचे, ५ का भाग दें तो शेष ४ और ६ का भाग दें तो शेष ५ बचें?

७. **जैन-धर्म** के त्रि-रत्न क्या हैं?

८. **नवधा-भक्ति** से आप क्या समझते हैं?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। एक प्रश्न के दो उत्तर भी हो सकते हैं। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

---

९. **दो** पिता और दो पुत्र हैं। एक पिता ने अपने पुत्र को २०० रुपये दिये और दूसरे पिता ने अपने पुत्र को १०० रुपये दिये। दोनों पुत्र जब मिले तब पता चला कि दोनों को मिलाकर कुल २०० रुपये ही मिले हैं। यह कैसे हुआ होगा?

१०. **निम्नलिखित** के संबंध में आप क्या जानते हैं—मदर टेरेसा, ब्लैक सेप्टेम्बर, ब्लैक दिसम्बर।

११. **भारत की** पंचवर्षीय योजना पर कितनी कुल राशि व्यय होने का अनुमान है?

१२. **एक** लड़का आमों के बाग में गया जिसके चार द्वार थे और वहां से आम तोड़कर बाहर आने लगा। आते समय बाग के प्रत्येक द्वार पर चौकीदारों ने उसे देखकर रिश्वत में आम मांगे। उसने कहा, "मेरे पास जितने आम हैं उनके आधे तथा एक आम मेरा। शेष आम तुम्हारे।" चौकीदारों की समझ में यह हिसाब नहीं आया। लड़के ने उदाहरण दिया कि यदि १०० आम मेरे पास हैं तो उनमें से ४६ तुम्हारे और ५१ मेरे। चौकीदार इसके लिए राजी हो गये और लड़के को अपने आम क्रम से चार चौकीदारों में बांटने पड़े। बाग से बाहर आकर वह खिलखिलाकर हंस पड़ा क्योंकि उसके पास उतने ही आम थे जितने वह तोड़कर लाया था। बताइए, वह कितने आम लेकर चला था?

१३. **वह** कौन-सा स्थान है जहां बड़े-बड़े समुद्र और नदियां हैं, पर उनमें पानी की एक भी बूंद नहीं है; बड़े-बड़े पहाड़ हैं, पर उनमें एक भी पत्थर नहीं है; मरुस्थल हैं, पर रेत का कोसों पता नहीं; घने जंगल हैं, पर पेड़ों के नाम पर हरियाली भी नहीं; बहुत से शहर, कस्बे और गांव हैं, पर आदमी ढूंढ़े नहीं मिलता?

१४. **दो** घंटाघर आमने-सामने हैं। जितनी देर में पहला तीन घंटे बजाता है, उतनी ही देर में दूसरा दो घंटे बजा पाता है। एक बार दोनों के घंटे साथ-साथ बजने प्रारंभ हुए। जब पहला सात घंटे बजा चुका, तब उसके बाद दूसरे घंटाघर ने दो घंटे और बजाये। बताइए, उस समय क्या बजा था?

१५. **एक** बाजीगर के पास सोने के दो गोले हैं। वह उन्हें एक पुल पर से ले जाना चाहता है। किंतु शर्त यह है कि वह उन्हें दोनों हाथों में उठाकर नहीं ले जाएगा। यदि बाजीगर एक गोले को पुल के इस पार रखकर दूसरे गोले को ले जाए तो शायद कोई चोर उस गोले को उठाकर भाग जाए और यदि एक गोला पुल के उस पार फेंक दिया जाए तो भी चोरी हो जाने की आशंका है। क्या आप बता सकते हैं कि वह दोनों गोलों को किस प्रकार पुल पर से ले जाए?

श्रद्धांजलि

नीचे की महफिल उजड़ गयी

• कन्हैयालाल 'नंदन'

२५ अप्रैल की सुबह के सूरज की किरणें अभी फूट भी नहीं पायी थीं कि रामानुज प्रसाद सिंह का फोन मिला, "बुरी खबर सुना रहा हूं, दिनकरजी का मद्रास में हार्टफेल हो गया है ! शव को दिल्ली हवाईअड्डे होकर पटना ले जा रहे हैं !" सुनते ही एक शून्य कमरे में टहल गया ! तिरुपति के दर्शन करने गये थे। उनकी नातिन उषा ने इस यात्रा से पूर्व उनसे पूछा था, "नानाजी, आपकी तबीयत ठीक नहीं रहती। क्यों जा रहे हैं इतनी लंबी यात्रा पर ?"

बोले, "बेटी, तिरुपति जा रहा हूं अपनी मौत मांगने !" इतना कहकर वे अपनी सहज हंसी में बात को घोलकर गंभीर होने से बचाकर चले गये थे। तिरुपति के मंदिर में उन्होंने क्या मांगा यह हममें से कोई नहीं जान सकता, लेकिन जो वे कहकर गये थे, वह उन्हें प्राप्त हो गया !

पिछले कुछ महीनों से उनकी बातचीत में अनायास मृत्यु के संदर्भ आ जाते थे। 'उर्वशी', जिस पर उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था, की अंतिम पंक्तियों में उन्होंने मृत्यु को अस्वीकार करते हुए कहा है :
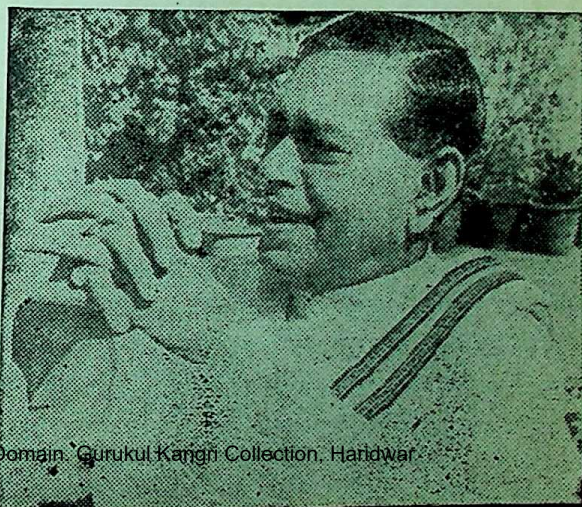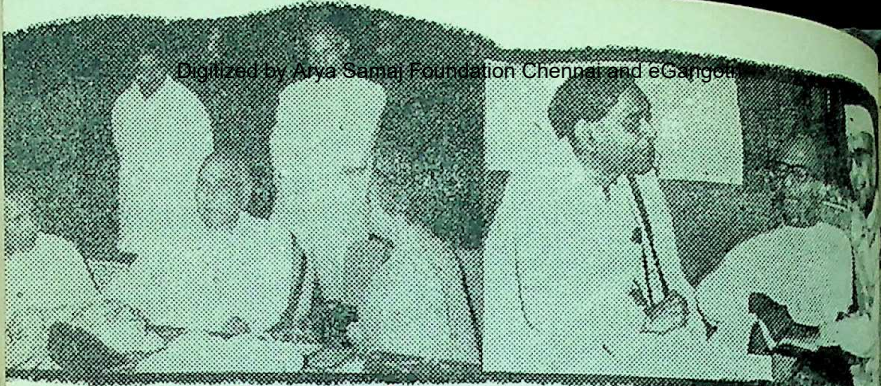
हिंदी-विश्वकोश के प्रकाशन के अवसर पर श्रीमती गांधी तथा श्री कमलापति त्रिपाठी के साथ

वियोगी जी एवं सेठ श्री गोविंददास के साथ मनोविनोद के क्षण

मरण कोट पर चढ़, जीवन की ध्वजा उड़ाकर
मैं मृत्युंजय कवि प्रकाश की जय का गान करूंगा।

'मरण कोट पर चढ़कर प्रकाश की जय' का गान करने की अभीप्सा उनमें पिछले दिनों इतनी बलवती होती चली गयी थी कि लगता है शायद मरण कोट की घंटियां उन्हें अनवरत बजती हुई सुनायी देने लगी थीं और उनकी अनुगूंज, उनकी यदाकदा वातचीत में विजय-आकांक्षा से प्रेरित होकर अपने आप उतर आती थी।

पिछले वर्ष अचानक जव लकवे ने हलका-सा हमला किया तो कहते थे 'घंटी वज गयी, चिट्ठी आ गयी है।' उस चिट्ठी को उन्होंने जिन अर्थों में वांचा, वह गाहे-बगाहे उनके मृत्यु संदर्भित वार्त्तालाप में झांककर निकटस्थ लोगों को अजाने भय से कंपा जाता रहा है। वही भय उस दिन सुबह फोन मिलने पर निर्धूम कमरे में टहल गया और छोड़ गया था एक भयानक शून्य!

सुबह ९.५५ पर मद्रास से हवाईजहाज उनका शव लेकर आ रहा था। पालम पर उनके दर्जनों चाहनेवाले, मित्र, साहित्य-प्रमी, पत्रकार, घर-परिवार के लोग, ढेर से चेहरे, एवं डबडवायी आंखें उनके शव को श्रद्धा-सुमन चढ़ाने पहुंचे हुए थे। उनके शव के अंतिम दर्शन दिल्ली में किसी को नहीं हो सके, शव को ताबूत में बंद रखा गया था। ताबूत पर पुष्पांजलियां थीं और आंखों में आंसू।

उनकी बेटी श्रीमती शोभा मिश्र को विलखते देख भवानी भाई फूट पड़े। गले से लिपटकर शोभाजी को सांत्वना देने की बजाय अपने मन का दर्द आंसुओं में पिघलाते रहे, फिर वे जाते-जाते शव को आंसुओं के झीने परदे से झांकते बाहर आ गये।

उसी शाम उनकी अंत्येष्टि पटना में की गयी और वह प्रतिभापुंज, जो अपने जीवन भर आग के अंगारों से उलझते हुए

कविता में फूल बांटता रहा था, अंततः आग की लपटों में बैठ महाज्योति में विलीन हो गया।

उनके सद्यःप्रकाशित संग्रह 'रश्मि लोक' की छव्वीस पृष्ठों की लंबी भूमिका को पढ़कर लगा कि दिनकर की काव्य-यात्रा के समूचे पड़ाव उन्हीं के दिखाये रंगों में अगर देखने हैं तो उनकी यह भूमिका, जिसमें पिछले वर्ष ज्ञानपीठ-पुरस्कार समारोह में दिया गया उनका भाषण भी सम्मिलित है, पर्याप्त है। पर्याप्त इस दृष्टि से कि इसके संदर्भ में दिनकर के समूचे मानस का, उनके मनीषी मन का, उनके कवि-मन के द्वंद्व का, द्वंद्व में व्याप्त उनके मन्यु का सच्चा खाका उभर आता है। एक बार कविता के प्रेरणा-स्रोत पर बात करते हुए वे बोले थे, 'कविता सारे खट्टे-मीठे अनुभवों के बीच से उपजती है। मैं अपनी कविता को मन्यु से उपजी मानता हूं। मन्यु को मैं बहुत बड़ा रस मानता हूं! मन्यु पुण्य-बोध से उपजा हुआ क्रोध होता है। सुगंधित और सुर्चाचित!' इसे कविता बनने तक की स्थिति में आने की प्रक्रिया उन्हीं के शब्दों में दे रहा हूं, "साहित्य में यह नहीं होता कि कवि ने सड़क पर एक थप्पड़ खाया और घर में आकर वह उसकी कविता बनाने लगा। जिन घटनाओं से कवि का जीवन-दर्शन बदलता है, जो दर्द आदमी के देखने की दिशा बदल देता है, उसे कविता बनने से पूर्व कवि के रक्त में घुलने के लिए समय चाहिए।"

जिन दिनों वे 'हारे को हरिनाम' की कविताएं लिख रहे थे, तो कहा करते थे, "वही थप्पड़ खाया दर्द अब मेरे कण-कण में फैल गया है, शायद इसीलिए मैं ये विचित्र प्रकार की कविताएं लिखने लगा हूं।"

हां, हारे को हरिनाम! तो क्या दिनकर की आग ठंडी होकर राख में परिणत हो गयी, या वे हारे हुए आदमी की कविताएं लिखने लगे थे? क्या वे टूटे हुए

पालम पर अश्रु-विगलित श्रद्धांजलियां
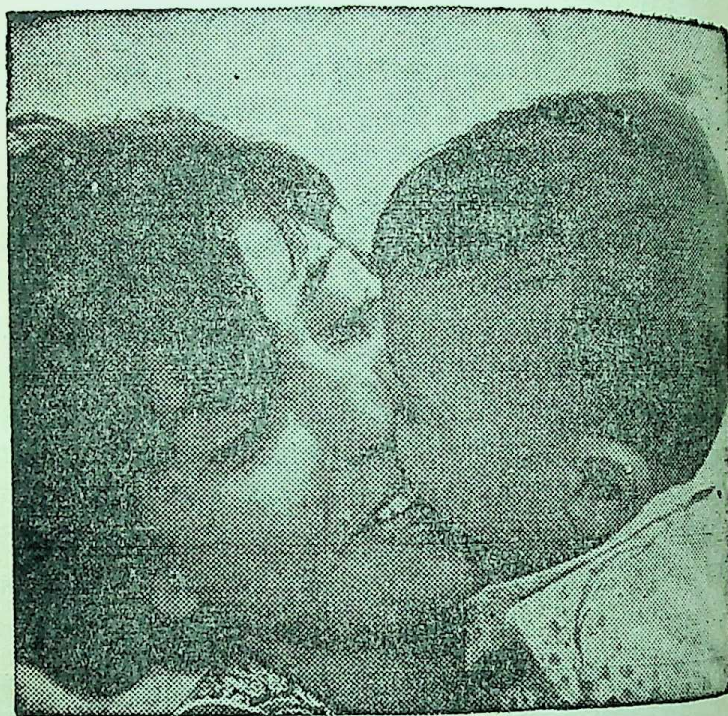
आदमी थे, जिसके शीराजे किस्मत ने बिखेर दिये थे ? शायद दिनकर को निकट से जाननेवाले भी ये शंकाएं करने लगे थे उन कविताओं को पढ़कर ! लेकिन जो जिंदगी भर संघर्षों से जूझा, उसके इस प्रकार के आर्तनाद का भी अपना अलग अर्थ था !

उन्होंने लिखा है, "हारे को हरिनाम लिखकर मैंने आशा की थी कि मेरी विनय-पत्रिका पूरी हो गयी किंतु लगता है अभी मेरी रामायण ही अधूरी है और उसका उत्तरकांड अब आरंभ हुआ है। उत्तरकांड यानी राम का राज्यारोहण। उत्तरकांड यानी सीता का पाताल प्रवेश, उत्तरकांड यानी राम का प्राण-विसर्जन !"

उन्होंने अपने प्राण विसर्जन से पूर्व, स्मृतियों के रूप में, साहित्य की अनूठी शैली के रूप में, भाव के अनूठे तेवर के रूप में जो कुछ दिया है वह पीढ़ियों की थाती बनकर रहेगा। उनके जीवन और साहित्य के विश्लेषण का न अभी मन है और न मौका! वे कहां-कहां टूटे और कितना टूटे, यह जानने की लालसा मन में नहीं है, हां, इतना जानता हूं कि ऊपर से उत्फुल्ल, हंसी के स्फुलिंगों में विहरनेवाली वह सुगठित काया अंदर से कहीं टूटी जरूर थी। इसे तोड़ने का अपराधी कौन है ? कुछ अंतरंग जानकार उनकी इस टूटन का सबसे बड़ा दोषी उनके अपने निजी परिवार को मानते रहे हैं, जिसके दायरे में कहीं प्रतिष्ठा प्राप्त कवि दिनकर की अपेक्षाएं चिटककर टुकड़े-टुकड़े हो जाती थीं। अभी मृत्यु से कुछ दिन पूर्व अपनी नातिन की शादी के लिए वर खोजते और दहेज की प्रक्रिया से गुजरते हुए ऊबकर वे यह कह देते थे कि भगवान सब कुछ दे लेकिन भारत में लड़की न दे ! लेकिन यह भी सच है कि दायित्वों से कभी भी उन्होंने मुंह नहीं मोड़ा तब फिर क्या कहीं उनका मनीषी धर्म उन्हें अंदर-अंदर तोड़ता था ? कानपुर में एक अधिवेशन में उन्होंने ललकार कर कहा था, "मैं कई बार मनीषी धर्म से विमुख भी हुआ हूं।" हो सकता है ऐसी कोई विमुखता उन्हें कभी-कभी कचोटती और तोड़ती भी रही हो, या अपना प्राप्य समय पर न पाकर वे खद अनजाने अपने को तोड़ते रहे हों। उन्होंने स्वीकार किया है कि 'कविता ने मुझे मित्र दिये, कीर्ति दी, सम्मान दिया, बड़े लोगों की संगति, जनता का आशीर्वाद और एक बड़ा पुरस्कार भी प्रदान किया . . .' तब फिर वह क्या था जो जीवन की अदम्य लालसा लेकर चलनेवाले दिनकर को मृत्यु मांगने के लिए प्रेरित करता रहा। खैर कुछ भी हो। कुछ जरूर था जो उन्हें अंदर-अंदर तोड़ता रहा और उसका हाहाकार वे अंदर-अंदर पचाते रहे लेकिन अब उन्हीं के शब्दों में—

आवरण गिरा जगती की सीमा शेष हुई
अब पहुंच नहीं तुम तक इन हाहाकारों की
नीचे की महफिल उजड़ गयी, ऊपर कल से
कुछ और चमक उठेगी सभा सितारों की !

—संपादक 'पराग', १० दरियागंज,दिल्ली-६

ज्वालामुखियों का डॉक्टर

• सुरजीत

संसार के किसी भी भूभाग में ज्वालामुखी पर्वतों के फूटते ही जिस एक व्यक्ति को तत्काल सहायतार्थ बुलवाया जाता है, उसका नाम है हारविन तेजेफ! वारसा (पोलैंड) में जन्मे तेजेफ को 'ज्वालामुखियों का डाक्टर' भी कहा जाता है! एक सौ पचास डिग्री फारेनहीटवाले तापमान में भी तेजेफ किसी कुशल डाक्टर की तत्परता से, बिना विचलित हुए अपने काम में लगा रहता है। तेजेफ अपने यंत्रों से ज्वालामुखी की जांच-पड़ताल करता है, कैमरे से ज्वालामुखी के सूराखों से बहनेवाले लावे की तसवीर लेता है और गहन अध्ययन कर अपने निष्कर्ष की घोषणा करता है।

एक वार पेरिस में कोस्टारीका के राजदूत ने तेजेफ के होटल में पहुंचकर उसे इराजो नामक ज्वालामुखी के फटने की सूचना दी। उस समय तेजेफ के पास सिसली से इसी आशय का 'बुलावा' आया था। तेजेफ क्षण भर के लिए हिचकिचाया फिर विश्वासपूर्वक बोला, "इर्दगिर्द वसी हुई वस्ती को स्थानांतरित करा दीजिए, मैं एक सप्ताह के वाद सिसली होता हुआ वहां पहुंच जाऊंगा।"

और, एक सप्ताह के वाद वह अपनी विशिष्ट वेषभूषा में कोस्टारीका के ज्वालामुखी पर्वत के निकट खड़ा था। अंधा कर देनेवाले अंगारों की चमक से बचने के लिए एक ऐनक लगी हुई थी। सिर पर एक इस्पाती टोपी थी। उस वेषभूषा में एक ऐसी कमर-पेटी भी थी जो आग से निकलनेवाली विषैली गैस को जज्ब कर लेती। पैरों में विशेष प्रकार के जूते पहनकर तेजेफ ने अग्नि-रोधी कैमरे और यंत्रों से धरती की तह में बहनेवाली आग का निरीक्षण किया। इन गैसों के दबाव और उनके तापमान को जांचकर उसने कह दिया कि खतरा अभी कोसों दूर है। यह ज्वालामुखी की केवल धमकियां हैं।

तेजेफ को ज्वालामुखी के बारे पहचानने और लोगों को सावधान करने की प्रेरणा कैसे मिली, इसकी भी एक कहानी है। १९४५ में उसे बेल्जियम

कांगो की खनिज, विशेषत: टीन की खदानों की खोज करने के लिए सरकार की ओर से भेजा गया था। वहां उसे समाचार-पत्रों से पता चला कि निकटवर्ती प्रदेश में स्थित 'किटरो' नामक ज्वालामुखी पर्वत से लावा निकल रहा है। समाचार सुनते ही किसी अदृश्य शक्ति ने उसे उकसाया और वह पर्वत के निकट जा पहुंचा। उस समय न उसके पास विशेष यंत्र थे, न अग्नि-रोधी वेषभूषा। बस एक दृढ़ संकल्प भर था।

इस आग्नेय द्रव्य की अवस्था का वर्णन करते हुए हारविन तेजेफ ने बताया कि समुद्र की निचली सतह से नीचे पाये जानेवाली खोखली सतह और उस धरती के बीच में लगभग एक मील मोटी तह है, जो पर्वतों और उस खोखली गुफा के बीच में लगभग १९९ मील मोटी है। धरती के नीचे उन खोखली गुफाओं में आधी गैस और आधे विभिन्न तत्त्वों पर आधारित एक द्रव है जिसका तापमान कभी-कभी एक हजार आठ सौ फारेनहीट तक गरम हो जाता है और वह द्रव्य उबलते हुए तेल से हजार गुणा अधिक खौलता रहता है। जब भी उसे मोटी तह से कोई सूराख मिल जाता है तब वह ज्वालामुखी के लावे का रूप धारण कर लेता है।

भूमंडल पर विद्यमान ज्वालामुखी पर्वतों के दो प्रकार हैं। एक प्रकार के ज्वालामुखियों को 'मौन' और 'अहानिकारक' कहा जा सकता है। दूसरे प्रकार के ज्वालामुखी, जो लगभग पांच सौ की संख्या में हैं, कभी भी मानवीय आबादी के लिए प्रलय का कारण बन सकते हैं। उनमें से अभी दो सौ ज्वालामुखी पर्वतों के बारे में सही जानकारी प्राप्त हो सकी है।

तेजेफ ने ज्वालामुखी पर्वतों की

अनंत उपादेयता के बारे में बताया कि आइसलैंड में पाये जानेवाले ज्वालामुखी पर्वत से वहां के लोग अपने घरों को गरम रखते हैं और नीचे बहनेवाले लावे के ताप के कारण जो गरम पानी प्राप्त होता है, उसका नहाने और खाना पकाने के लिए उपयोग करते हैं। इटली में कुछ ज्वालामुखी पर्वतों से इतनी अधिक मात्रा में विद्युत प्राप्त की जाती है कि सारे इटली में चलनेवाली रेलगाड़ियों का एक तिहाई भाग उनसे लाभान्वित होता है।

—सी-३४, सुदर्शन पार्क, नयी दिल्ली-१५

हंसिकाएं

दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक के जन्मदिन पर उनके छात्रों ने एक दावत का आयोजन किया। कक्षा में प्राध्यापक के आते ही एक छात्र ने कहा, "सर, हमने आपके लिए एक विशेष भेंट देने का विचार किया है। इसके लिए हमें काफी मेहनत करनी पड़ी।"

"अच्छा देखें तो," प्राध्यापक ने उत्सुक हो कहा।

छात्रों ने उन्हें केक दिखाया तो बोल पड़े, "यह ग्रामोफोन-रिकार्ड किसलिए? और इस पर जलती हुई मोमबत्तियां क्यों रख दी हैं?"

★

"अभी-अभी आपके यहां से जो साहब दावत खाकर निकले थे उनका एक्सीडेंट हो गया और हड्डी टूट गयी।"

"हड्डी! अरे, हड्डियां तो वे यहीं छोड़ गये थे। कुछ देर पहले एक कुत्ता उन्हें चिचोड़ रहा था।"

★

एक सज्जन मित्रों के बीच बैठे आरंभ से ही अपने स्वावलंबी होने की डींग हांक रहे थे। उनके मित्र पूछ बैठे, "आपका जन्म कौन से महीने में हुआ था?"

"जुलाई में।"

"और नौकरी किस महीने में मिली?"

"दिसंबर में।"

"तब तो आप वाकई शुरू से ही स्वावलंबी रहे हैं—चार महीने की आयु से ही आपने नौकरी शुरू कर दी!" आश्चर्य में डूबी प्रतिक्रिया हुई।

★

श्रीजी : अरे! तुम कब आ गये? मैं तो तुम्हें स्टेशन पर ढूंढ़ता ही रहा!

मित्र : हां मैंने भी तुम्हें स्नैक-बार में अपना इंतजार करते देखा था! मुझे भूख नहीं थी, सो तुरंत स्कूटर पकड़कर तुम्हारे घर चला गया।

★

डाक्टर : तुम अब घंटे भर के ही मेहमान हो, इसलिए कोई अंतिम इच्छा हो तो बताओ। कोई वकील वकील बुलाना है...

मरीज : एक मेहरबानी कीजिए बस... कोई भी दूसरा डाक्टर बुला दीजिए।

★

बस में कंडक्टर की किसी व्यक्ति से हाथापाई होने लगी। लोगों ने बीच-बचाव की कोशिश की और कहा, "मत लड़ो। देखते नहीं कि बस में महिलाएं बैठी हैं!"

"महिलाएं बेशक उतर जाएं, लड़ाई बहुत जरूरी है," कंडक्टर ने गुस्से में उफनते हुए कहा।

पिकासो कहीं से गुजर रहे थे कि एक सेंधमार पर उनकी नजर पड़ गयी। वे चिल्लाकर उसके पीछे दौड़े, लेकिन वह भाग गया। उन्होंने सेंधमार की आकृति का एक रेखाचित्र बनाया और समीपस्थ थाने में जरूर दे आये। उसके आधार पर पुलिस ने निम्नलिखित को कैद किया—

एक पादरी, एक मंत्री, कपड़ा धोने की मशीन और एक मीनार।

★

गायक — "कहिए साहब, आपको मेरा गाना कैसा लगा?"

श्रोता—"आपको तो रेडियो पर गाना चाहिए।"

गायक—"धन्यवाद, लेकिन रेडियो पर ही क्यों?"

श्रोता—"तब मैं रेडियो बंद तो कर सकूंगा।"

★

एक व्यक्ति दूसरे से, "मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए!"

दूसरा—"कहिए।"

पहला—"मेरी लंबाई छह फुट है। जिस सड़क पर मैं चल रहा हूं वह सात मील लंबी है। मैं एक घंटे में एक मील चल सकता हूं। मेरी उम्र क्या होगी?"

दूसरा—"जी, यही पचास बरस।"

पहला व्यक्ति—"अरे वाह, बिलकुल ठीक कहा आपने! लेकिन यों एकदम आपको पता कैसे चला?"

दूसरा व्यक्ति—"असल में हमारी गली में एक आदमी रहता है। वह (ठीक ऐसी ही बातें करता है) आधा पागल है, और उसकी उम्र पच्चीस बरस की है।"

प्रयाण

एक युग से दूसरे युग तक
प्रयाण यों किया
कि आराम हराम था पहले
अब
जीना हराम कर दिया

शौक

थे बच्चों के पिता
शादी का शौक बुढ़ापे में चर्राया
एक षोड्शी कन्या से जा
पुनः उन्होंने ब्याह रचाया
भोली-सी अनजान वधु, वह
बच्चों के संग हिलमिल रहती
वह पुकारते सजनी-रजनी
और वह डैडी-डैडी कहती

शक

'मेरे देश की धरती सोना उगले'
सहसा ज्यों आवाज यह आयी
बड़े-बड़े लोगों के घर-आंगन में
होने लगी तत्काल खुदाई

छवि

मेकअप की पर्तों तले
चेहरों के दर्पण
हो गये—धुंधले

● डॉ. सरोजनी प्रीतम

थनका
भूटान की चित्र-शैली का प्रतीक

● नरेश बेदी

कपड़े पर सुंदर रंगों द्वारा बौद्ध धर्म-संबंधी जो चित्र बनाये जाते हैं, उन्हें थनका कहते हैं। कपड़े की कतरनों को चिपकाकर भी ये चित्र बनाये जाते हैं। थनका के नीचे और ऊपर बेलनाकार गोल लकड़ियां गड़ी होती हैं। इन पर लपेटकर थनका को अलमारी में सुरक्षित रखा जाता है। प्रदर्शन के समय उसे कैलेंडर या नक्शे के समान लटका देते हैं।

थनका पर चित्रण के विषय मुख्यतया बुद्ध जातक कथाएं, तांत्रिक देवी-देवता और अवतरित लामा हैं। किसी समय बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए ये उपयोगी साधन थे। भूटान और तिब्बत में प्रत्येक व्यक्ति अपने घर में थनका रखने की कोशिश करता है। यह सुख और समृद्धि का प्रतीक तथा मोक्ष-प्रदायक माना जाता है। थनका को चित्रित करनेवाले कलाकारों का भी विश्वास था कि बुद्ध को इस प्रकार चित्रित करने से उन्हें मोक्ष प्राप्त हो जाएगा। ऊंचे कलाकार और लामा केवल स्वांतः सुखाय थनका बनाया करते थे। भूटान के जोंगों (किलों) में और ल्हागाओं (मंदिरों) में सैंकड़ों थनका सुरक्षित पड़े हैं।

बढ़ती हुई मांग के कारण आज थनका आजीविका के साधन बन गये हैं। विदेशियों में थनका की मांगें बढ़ने लगी हैं। पुराने थनका की अधिक कीमत उठती है क्योंकि उसका ऐतिहासिक और पुरातत्वीय महत्त्व है। इसकी मांग को देखते हुए और पुरानी कला के संरक्षण के लिए दिल्ली के हैंडीक्राफ्ट एम्पोरियम में व्यापारिक तरीके से थनका बनाने का काम शुरू किया गया है। दिल्ली के लद्दाख बौद्ध विहार में भी ये बनाये जाने लगे हैं। तिब्बत से आ[...] हुए शरणार्थियों में कुछ लोगों का पुश्तैनी पेशा थनका बनाना था। वे दिल्ली, ह[...] हौजी, धर्मशाला, दार्जिलिंग और म[...] में बस गये हैं। परंपरागत थनका बनाने वाले भारत में मुश्किल से एक दर्जन हैं और इनमें से केवल तीन ऐसे हैं जो कपड़े की कतरनों को सी कर थनका बनाते हैं।

इन पेशवर चितेरों द्वारा बनाया ग[...] दो फुट लंबा और डेढ़ फुट चौड़ा थनका

छह सौ रुपये से कम नहीं मिलता। इसमें सोने के तार और हीरे, जवाहरात जितने ज्यादा लगते हैं, उतनी ही उसकी कीमत बढ़ जाती है। थनका की पीठ पर जो छोटे मंत्र लिखे जाते हैं, वे सोने और रंग के मिश्रण से लिखे जाते हैं। इस मिश्रण में मोती और फिरोजा भी जरा-सी मिकदार में मिला लिये जाते हैं। मंत्र लिखने के बाद ही थनका पवित्र बनता है और यह साधारण पेंटिंग से अलग हो जाता है। तांत्रिक परंपरा के अनुसार मंत्रों को लिखने की स्याही में लामा गुरु के बाल, नाखून, हड्डी और राख के अंश भी डाले जाते हैं। तिब्बती ग्राहक जब अपने लिए थनका बनवाता है तो वह अपने दिवंगत आध्यात्मिक गुरु की इन चीजों को और जरूरत के मुताबिक सोने तथा रत्नों को भी जुटाकर पेंटर को देता है। ये सब चीजें रंग के साथ महीनों तक खरल की जाती हैं। कभी-कभी इसमें लामा के उतारे हुए कपड़े की कतरनें भी मिला ली जाती हैं। मंत्र सामान्यतया दस शब्दों से अधिक बड़े नहीं होते हैं। इस तरह आधुनिक छोटा थनका छह सौ रुपये से तीन हजार रुपये तक पड़ जाता है।

हिमालय की पवित्र गुफाओं से उतरकर मैदान में आने पर इस ललितकला में कुछ परिवर्तन आ गये हैं। हिमालय में थनका प्राकृतिक रंगों द्वारा चित्रित किये जाते थे। यहां रासायनिक रंगों द्वारा बनाये जा रहे हैं, फलतः आधुनिक थनका परंपरागत थनकों की भांति स्थायी नहीं होता है। ठीक तरह देखभाल करने से वे शताब्दियों तक अच्छे बने रहते हैं। पेंटिंग के रंग पत्थरों, मिट्टियों और जड़ी-बूटियों से प्राप्त किये जाते थे। सफेद, लाल, नीले, हरे और पीले रंग के पत्थर या मिट्टियां पहाड़ों से निकाल ली जाती हैं। इन्हें महीनों पीसने के बाद अभीष्ट रंग बनते हैं। पहाड़ों में रंगदार पत्थरों की तलाश भी पूजा-पाठ के साथ की जाती है। प्राकृतिक रंगों का बनाना बहुत श्रमसाध्य है। वे रंग कितने महंगे पड़ते हैं, इस बात पर

चित्र उलटा नहीं है
सौ फुट लंबे और उतने ही चौड़े कपड़े पर निर्मित थनका को उत्सव की समाप्ति पर लामा लोग भूमि पर बिछाकर लपेट भर रहे हैं
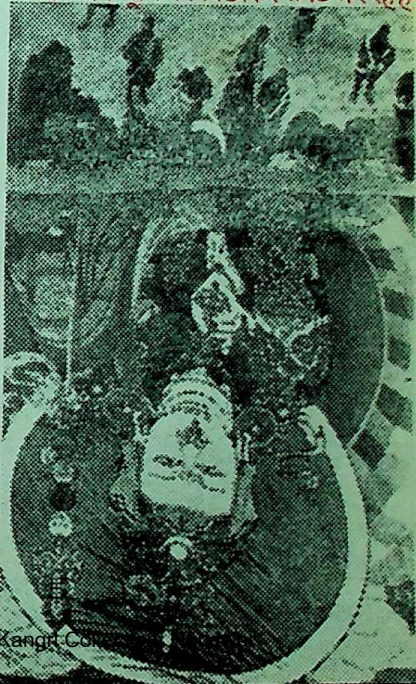
विचार करने की लामाओं को जरूरत नहीं थी। १९७२ में ऐसे एक रंग के सौदे का मुझे ज्ञान है। लामा ने इसे डेढ़ हजार रुपये प्रति पौंड के हिसाब से बेचा था।

पारो जोंग का महान थनका लामाओं के हस्त शिल्प का सुंदर नमूना है। इसमें गोटे का काम है। यह थनका रेशम की रंग-बिरंगी कतरनों को सीकर, चिपकाकर और फिर सारे चित्र को सुनहरे धागे से कसीदा करके बनाया गया है। इसमें गुरु रिम्पोचि की आकृति के दोनों ओर रहस्यमय पति-पत्नी की आकृतियां चित्रित की गयी हैं। गुरु रिम्पोचि कमल से पैदा हुए गुरु पद्म संभव ही हैं। गुरु पद्म संभव ने आठवीं शताब्दी के अंत में अपनी चमत्कारिक शक्ति से नास्तिक दानवों को वश में करके उन्हें बौद्ध धर्म में दीक्षित कर लिया था। गुरु रिम्पोचि का अर्थ है—'मूल्यवान अध्यापक'।

पारो ल्हागा के अंदर से सुबह तीन बजे ब्राह्म मुहूर्त्त में थनका निकाला जाता है। लामा लोग उसे अपने कंधों के ऊपर उठाये रखते हैं। एक लामा थनका का छत्र लेकर चलता है। कुछ लामा पवित्र मंत्रों का उच्चारण करते हुए साथ-साथ चलते हैं। लामा-वादकों की टोली ढोल, तुरही और बाजे बजाती आगे चलती है।

लिपटे हुए थनका को आंगन में रखकर उसके ऊपरी सिरे में बंधी रस्सियों की घुंडियों में बल्लियां पिरो दी जाती हैं। बल्ली में जगह-जगह लंबी रस्सियां बांध दी जाती हैं। इनके दूसरे सिरे दीवार के ऊपर खड़े हुए लामाओं के हाथ में पकड़े होते हैं। पुलियों के द्वारा ज्यों-ज्यों रस्सी खींची जाती है, थनका दीवार के साथ-साथ ऊपर उठता जाता है। जमीन से करीब तीन फुट ऊपर उठ जाने पर उसे वहीं बांध दिया जाता है।

उसके नीचे मेजों के ऊपर पूजा-सामग्री रख दी जाती है। पीतल के एक चौड़े बरतन में घी डालकर दीपक जला दिया जाता है। श्रद्धालु लोग अपने घरों से घी लाकर पुजारी लामा को देते रहते हैं। वह बरतन में घी डालता जाता है। आंगन के फर्श पर सैकड़ों लामा पंक्तियों में पालथी मारकर पूजा के लिए बैठ जाते हैं। गंभीर स्वरों में वे मंत्र पढ़ना शुरू करते हैं। बीच-बीच में ढोल और वाद्य बजते रहते हैं। एक वरिष्ठ लामा बैठे हुए लामाओं की पंक्तियों के बीच में चहल-कदमी करता रहता है। उसके बायें हाथ में माला और दायें हाथ में चमड़े का कोड़ा होता है। माला के मनके स्वचालित मशीन के समान एक-एक करके अंगुलियों के बीच में आकर आगे खिसकते जाते हैं। पूजा में बैठे हुए लामाओं में बहुत से लामा कम उम्र के चंचल बालक होते हैं। वे यदि शरारत करने लगें या अपने कर्त्तव्य में उपेक्षा दिखाने तो अध्यापक लामा उन्हें कोड़े से प्रताड़ित करता है। करीब पौन घंटे तक पूजा-पाठ होता है। पूजा समाप्त होने पर दर्शक थनका के निचले डंडे को हाथ से स्पर्श करके प्रणाम

ग्रहण करते हैं और उनके आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। अपनी सामर्थ्य के अनुसार वे थनका के आगे लामा को भेंट देते हैं।

नये थनका का निर्माण

भूटान के इतिहास में टोंग्सा के पेन्लप (गवर्नर) का पद बहुत महत्त्व रखता है। टोंग्सा पेन्लप टोंग्सा मठ के लिए एक महान थनका बनवाया करता है। इस बार जो नया थनका बनाया गया था, उसे देखने का मुझे अवसर मिला था। इसके लिए रेशम, सोने के तार आदि सब सामान हांगकांग और जापान से लाया गया था। अनुमान है कि केवल सामान पर दो लाख रुपये से अधिक लग गये थे।

१५ मई, १९७२ को इस थनका को लामाओं द्वारा आशीर्वाद देने की रस्म टोंग्सा में संपन्न हुई। टोंग्सा के पुराने महान थनका के दर्शन भी मैंने वहां किये।

लद्दाख, लेह, तिब्बत, सिक्किम, भूटान—सारे बौद्ध-हिमालय में थनका बनाने की कला विकसित हुई है। गढ़वाल और हिमाचल प्रदेश में कागज पर लघुचित्र बनाने की कला खूब पनपी थी। उनकी चित्र-शैली पर पड़ोसी बौद्ध चित्रकारों की कला का कुछ प्रभाव नहीं पड़ा। दोनों प्रदेशों के चित्रकारों के उद्देश्य भिन्न-भिन्न थे। बौद्ध लामा जहां केवल अपनी आध्यात्मिक क्षुधा को निवारण करने के लिए रंगों से चमत्कार पैदा करते थे, वहां कांगड़ा और गढ़वाल के चित्रकार अपनी जीविका अर्जन करने के लिए तूलिका पकड़ते थे। आज के युवा कलाकार को यूरोपीय चित्रकला ने खूब प्रभावित किया है। भारतीय लोक-कलाओं को अपनाने की भी उसने सफल कोशिश की है।

—ए २/७५ राजौरी गार्डन, नयी दिल्ली
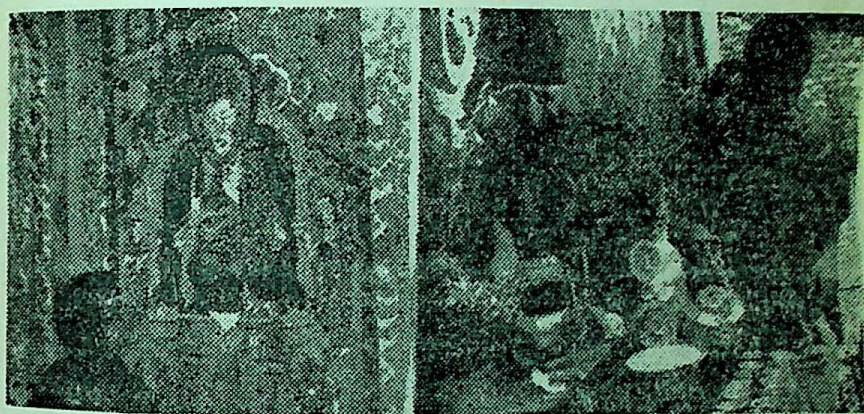
बायें : थनका को देखते हुए एक लामा दायें : पूजा का सामान तैयार करते हुए लामा

जंगल के नाग

ओ ! जंगल के नाग
शहर तू कभी न आया
फिर यह जहर कहां से पाया
चंदन की खुशबू में तूने सांसें ली हैं
शाखों से झरते फूलों पर तू सोया है
वनस्थली की सुषमा में प्रेयसि को लेकर
जाने कितनी बार खयालों में खोया है

ओ ! जंगल के नाग
शहर तू कभी न आया
फिर यह दंभ कहां से पाया
झरनों की कलकल में तूने गीत लिखे हैं
चिड़ियों के कलरव में तूने खोलीं आंखें
लता-द्रुमों की सघन-छांव में धीरे-धीरे
तेरे यौवन ने अपनी खोली हैं पांखें

ओ ! जंगल के नाग
शहर तू कभी न आया,
फिर यह क्रोध कहां से पाया
कोमल-मिट्टी में आवास बनाया तूने
ओस-नहाई हरी दूब पर, ली अंगड़ाई
सरिता की मासूम-रेत पर क्रीड़ा की है
नीलाकाश-तले तूने बांसुरी बजायी

ओ ! जंगल के नाग
शहर तू कभी न आया
फिर यह कपट कहां से पाया

—ध्रुवनारायण कपूर

—ल. ह. आयु. मेडिकल कालेज, पीलीभीत

अनाम के लिए

विना किसी संबोधन के
पुकारूंगी वह दिन
धूप-जैसा होगा, खुला हुआ
मैं तो जानती हूं सिर्फ यह
कि जब कभी सूरज
जून की तरह तपता है तब
सब कुछ भर जाता है, एक अविश्वास
प्रतीक्षा करता है दूर भविष्य में
शिशिर के दिनों तभी, जब
हलके आकाश में
विश्वास की कोई संभावना तैरेगी
मैं पुकारूंगी उस अनाम को

—अनामिका

२७/५३ रामजसरोड करोलबाग, दिल्ली-५

अर्थ जीवन

तप रहा मन, तप रहा मन
पूछता—क्या अर्थ ? जीवन

सांझ-बेला, दर्द-बेला
चुक गया है दिवस-मेला
भीड़ का हर शोर चुप है
रह गया फिर मन अकेला

सांझ-बेला, याद-बेला
रात-रानी ज्यों महकती
सिमट आयीं दूरियां सब
देह देहरी पर दहकती

बीच में दीवार सूनी
जो मनों ने खुद बनाई
प्यार से दीवार गिरती
सुख-पुलिन हो दर्द-खाई

सजल है मन, सजल है मन
जो स्वयं है मुक्ति औ' बंधन
तप रहा मन, तप रहा मन
पूछता—क्या अर्थ ? जीवन

—कांता डोगरा

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, रेणु, महादेवी, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचंद्र जोशी, राजेंद्र यादव एवं लक्ष्मीनारायण लाल पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं शैलेश मटियानी।

यातनाओं से मेरा जीवन

शैलेश मटियानी
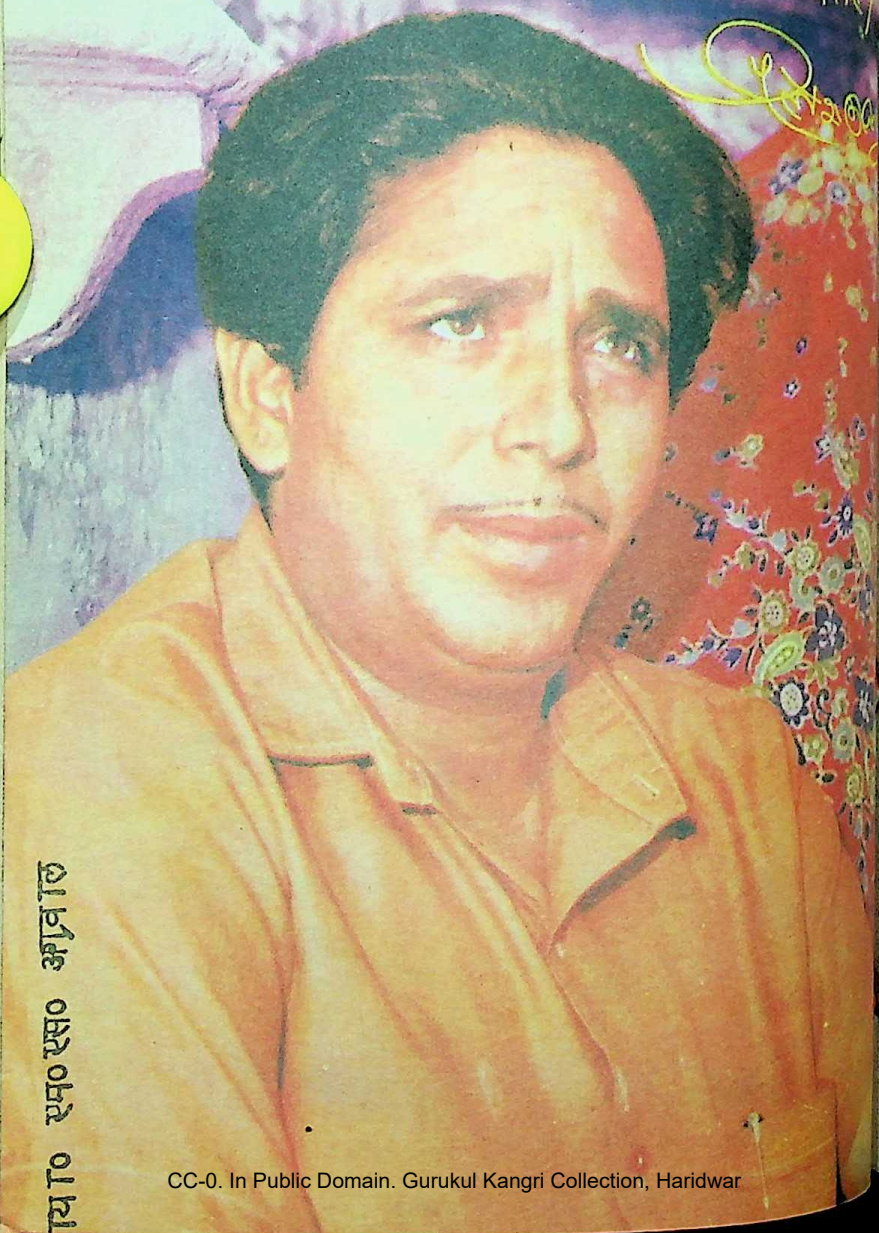
कृष्णकुमार अस्थाना, इलाहाबाद: लेखन की ओर आपकी प्रवृत्ति कैसे हुई, अंतकरण की प्रेरणा से या किसी बाह्य प्रेरणा से ?

बाहरी परिवेश और अंतर्प्रेरणा, किसी भी व्यक्ति के लेखक अथवा कलाकार होने में, इन दोनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है, किंतु आत्यंतिक महत्त्व अंतर्प्रेरणा का ही हो सकता है। अपने संघर्ष और दुःखों को अपने अंतर्भूत विवेक की कसौटी पर परखने की कला को जानना ही लेखक होने की दिशा में आगे बढ़ना है। यह कला ही व्यक्ति को हताशा के अंधकार में से आस्था के आलोक की ओर ले जाती है। दुःखों और कठिन परिस्थितियों के बीच यदि मनुष्य की सम्वेदना और चेतना कुंठित न होकर, ज्यादा धारदार और उद्बुद्ध हो सके, तो अपनी अभिव्यक्ति का निमित्त वह स्वयं खोज लेता है। लिखना प्रारंभ करना, मेरे लिए भी, एक निमित्त खोजना ही रहा है।

निर्गुण वैरागी, उज्जैन: (१) आपका कहानीकार आपके निजी जीवन से कितना और कहां तक अप्रभावित है। (२) आपने अपने कहानी के पात्रों को निजी जीवन में भी कभी महसूसा है ?

किसी भी लेखक के लिए अपने निजी जीवन का अर्थ अपने निजी चिंतन का भी पर्याय होता है। लेखक की निजी जीवन-दृष्टि ही उसे दूसरों के जीवन-संघर्ष को भी अनुभव और अभिव्यक्त करने की कला में समर्थ बनाती है। अधिकांशतः लेखक बाहर के परिवेश में से उन्हीं पात्रों को चुनता है जो उसकी सम्वेदना और उसके अनुभवों को प्रतिबिंबित कर सकें। ऐसे पात्र, रचना में आकर, लेखक के लिए अपेक्षाकृत अधिक आत्मीय और वास्तविक

हो जाते हैं।

दीपा बिष्ट, नैनीताल : (१) मनुष्य की वैयक्तिक अनुभूतियां आपकी दृष्टि में रचना किस प्रकार बनती हैं ? (२) आपका व्यक्तिगत जीवन जिस प्रकार के तनावों और यातनाओं से भरा है, उनसे जिस प्रकार के 'क्लासिक' की अपेक्षा है, वह अभी दिखायी नहीं दिया ?

अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों को मनुष्य-मात्र के संदर्भ में देखने, परखने और उन्हें कला तथा विचार की कसौटी पर खरी उतार देने का आत्मसंघर्ष ही लेखक को रचना में समर्थ बनाता है। यातनाओं के बीच जीते हुए भी मानवीय आस्था और आलोक का साक्ष्य बन सकने-वाला साहित्य ही 'क्लासिक' बनता है। मेरी चिंता भी यही है कि मेरा जीवन सिर्फ यातनाओं से भरा क्यों रह गया ! अपनी यातनाओं को अपने ही लिए नहीं, बल्कि मनुष्य-मात्र के लिए आलोक बना सकने की कला से जो लेखक वंचित रह जाए, उस लेखक की अंतिम नियति यही हो सकती है।

कुंजबिहारी मिश्र, बीकानेर : क्या रचना और भाषा का अस्तित्व अलग-अलग होता है ? इन दोनों के सहयोग या असहयोग का प्रभाव अंत में पाठक पर क्या पड़ता है ?

सामान्य व्यवहार की भाषा और साहित्य की भाषा में अंतर अकारण नहीं होता। अपनी अनुभूतियों के लिए भी लेखक भाषा के माध्यम का ही उपयोग करता है, सिर्फ अभिव्यक्ति के लिए नहीं। अनुभूति और अभिव्यक्ति, दोनों के लिए भाषा के माध्यम का उपयोग ही लेखक को सामान्य व्यक्ति की भाषा से भिन्न करता है। सामान्य व्यक्ति भाषा का उपयोग सिर्फ अभिव्यक्ति के स्तर पर करता है, अनुभूति और संवेदना के स्तर पर नहीं। किसी भी अच्छे लेखक की रचना में अनुभव और अभि-व्यक्ति का यह रचाव ही पाठक को ज्यादा गहरे तक प्रभावित करता है।

दुर्गादत्त दुर्गेश, चुरू, राजस्थान: मैंने आपके बचपन की अभावों-भरी जिंदगी की कहानी पढ़ी है। अब आपके जीवन में कितना अंतर आ चुका है ?

पहले सिर्फ आर्थिक अभावों की चिंता रहती थी, अब इसमें, एक लेखक की हैसियत से, उत्कृष्ट रचनाओं के अभाव की चिंता भी जुड़ गयी है।

महेश पांडे, रानीखेत : (१) आजकल आम आदमी की बड़ी चर्चा है। क्या आप यह मानते हैं कि साहित्य आम आदमी के लिए होता ही नहीं ? तो क्या साहित्य एक वर्ग विशेष की आवश्यकता है ? (२) देश और समाज की वर्तमान दशा के लिए आप लेखक को कितना जिम्मेदार ठहराते हैं ? लेखक और बुद्धिजीवी वर्ग को राजनीति में पड़कर देश और समाज का मार्ग-दर्शन और नेतृत्व करना चाहिए या नहीं ?

संक्षेप में, इतना ही कह सकता हूं कि सामान्य जन के जीवन पर लिखना अलग बात है, 'आम आदमी के लिए

लिखना अलग। जो व्यक्ति भाषिक और वैचारिक क्षमता से वंचित हो, साहित्य उसके लिए नहीं हो सकता। व्यक्तिगत रूप से मैं साहित्य के पाठक को साहित्य का आस्वाद ग्रहण करने में समर्थ व्यक्ति के रूप में देखना चाहूंगा—आम आदमी या विशिष्ट आदमी के रूप में नहीं। देश और काल के संदर्भ में, लेखक को सिर्फ अपनी भूमिका के प्रति दायित्वशील होना चाहिए। यदि वह अपने साहित्यकार होने की शर्त पूरी करता है, तो अन्य किसी कसौटी की उसे आवश्यकता नहीं। अपने परिवेश और अपने समय के बीच एक सम्वेदनशील और विचारवान व्यक्ति की हैसियत से लेखक जो कुछ स्वयं अनुभव करता है, अगर उसे वह रचना के स्तर पर कह सकता है तो इतना पर्याप्त होगा। साहित्य की जड़ें काल में और मनुष्य की चेतना में गहरी अवश्य होती हैं, किंतु मौजूदा हालत में वह उतना कारगर नहीं होता, जितनी कि साहित्येतर अपेक्षाओं से लैस लोगों के द्वारा अपेक्षा की जाती है। राजनीति में सक्रिय भागीदारी साहित्यकार का आपद्धर्म ही हो सकती है, उसका लक्ष्य नहीं, और आपद्धर्म भी सिर्फ वही निभा सकता है जो धर्म को निभा सके। अपने समकालीन समाज का वैचारिक नेतृत्व यदि कोई लेखक कर सके, तो यह उसकी बहुत बड़ी उपलब्धि होगी, किंतु सामान्यतया नेतृत्व-लोलुप लेखकों का समाजवाद सिर्फ बौद्धिक छद्म के स्तर पर होता
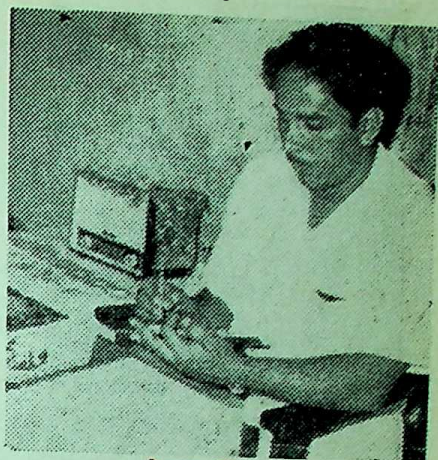
लेखन में व्यस्त

है, आचरण के स्तर पर नहीं। यों मैं व्यक्तिगत रूप से इस निर्णय के लिए लेखक को स्वतंत्र मानता हूं कि वह राजनीति में हिस्सा ले, या न ले।

रेखा रोहतगी, दिल्ली: क्या आप पहले कहानी लिखते हैं, तत्पश्चात उसमें निहित मुख्य तत्त्व को लेकर शीर्षक सोचते हैं?

मैं शीर्षक निश्चित किये बिना कहानी लिखना प्रारंभ नहीं कर पाता।

कुमार, चंडीगढ़: क्यों एक लेखक, जो महत्त्वपूर्ण साहित्य रचता है, कभी-कभी प्रभावहीन रचना का सृजन करता है?

उत्कृष्ट रचना सिर्फ प्रतिभा नहीं, गहरा आत्मसंयम भी चाहती है। मात्र जीविका-उपार्जन या लिखते रहने के लिए लिखने की स्थिति में स्तरहीन लेखन ही हो सकता है।

हरिश्चंद्र, नयी दिल्ली: (१) सेक्स और

एक अनौपचारिक मुद्रा

नैतिकता परस्पर कहां तक संबंधित हैं? साहित्य में इनको कहां तक स्थान दिया जाना उचित है? (२) क्या आपका 'कबूतरखाना' महाराष्ट्र सरकार द्वारा की गयी मद्यनिषेध-घोषणा की प्रतिक्रिया नहीं?

मनुष्य की संरचना अत्यंत संश्लिष्ट है। 'सेक्स' पशु-पक्षियों में भी होता है किंतु नैतिकता का विवेक और अंतर्द्वंद्व सिर्फ मनुष्य में। मेरी दृष्टि में 'सेक्स' न तो अनैतिक है और न नैतिकता अथवा मनुष्य के विवेक की मर्यादाओं से मुक्त ही। साहित्य के संदर्भ में लेखक के अपने विवेक को ही सीमा मानने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। हां, सामाजिकता के स्तर पर इसके औचित्य को परखने की स्वतंत्रता प्रत्येक को है।

जी नहीं, 'कबूतरखाना' मद्यनिषेध-नीति की नहीं, बल्कि सिर्फ एक संवेदनशील और भावुक, किंतु अपरिपक्व मस्तिष्क वाले महानगर बंबई की विकरालता से विचलित लेखक की प्रतिक्रिया-मात्र है।

साहू मधुप, अशोकनगर, गुना (म. प्र.): अकसर लेखक पाठकों के सीधे पत्रों के उत्तर चिढ़कर एवं अहंपूर्ण होकर क्यों देते हैं? क्या प्रश्नों के उत्तर देना कला नहीं, जिसमें लेखक अकसर असफल पाया जाता है?

इस तरह के निष्कर्ष सभी के लिए समीचीन नहीं हो सकते। प्रश्न करने की कला ही कलापूर्ण उत्तरों की भूमिका बनाती है। किसी भी लेखक के लिए उसके पाठक आत्मीय और अनुपेक्षणीय होते हैं, उनके प्रति अहमन्यता बरतने को उचित नहीं कहा जा सकता। यों सम्यक पत्राचार समय और मनःस्थिति, पत्र की सार्थकता आदि कई बातों पर निर्भर होता है। लेखक और पाठक के बीच की आत्मीयता पूर्वाग्रहमुक्त होनी चाहिए।

महेशसिंह चौहान, मथुरा: (१) अकसर कहा जाता है कि हिंदी में लेखकों का अभाव है लेकिन मैं जहां तक समझता हूं, पाठकों का अभाव है। आप इससे कहां तक सहमत हैं? (२) लेखकों को सरकारी पुरस्कार स्वीकार करने चाहिए या नहीं क्योंकि पुरस्कार प्राप्त करने पर लेखक की स्वतंत्रता का हनन हो सकता है।

ऐसे पाठकों की संख्या हिंदी में वास्तव में कम है, जो साहित्य अथवा

साहित्यकार को एक प्रेरणापूर्ण वातावरण दे सकें। साहित्य में पाठकों की अभिरुचि और भागीदारी काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका रखती है। पुरस्कारों को स्वीकार करने के संदर्भ में सिर्फ वही कारण महत्त्वपूर्ण और निर्णायक हो सकता है जो लेखक के भीतर हो। लेखक के स्वातंत्र्य का हनन पुरस्कारों को स्वीकार करने से नहीं, बल्कि 'पुरस्कृत व्यक्ति' की मानसिकता में जकड़ जाने पर होता है।

भी। चूंकि आलोचक साहित्य को 'समझाना' चाहते हैं, इसलिए वे वर्गीकरण की आवश्यकता अनुभव कर सकते हैं।

विजयकुमार अग्रवाल, अल्मोड़ा: (उ. प्र.) क्या आपने 'मंगलद्वीप' नाम की कोई पुस्तक लिखी थी? प्रथम संस्करण के बाद इसका प्रकाशन बंद क्यों हो गया?

'मंगलद्वीप' नहीं, 'एक मंगलदीप और' पुस्तिका १९६३ में मैंने अवश्य प्रकाशित की थी, किंतु विक्रय अथवा प्रसार

लेखक परिवार के साथ

के लिए नहीं। उसके पीछे अपनी वैचारिक अपरिपक्वता, प्रेम की असफलता का तात्कालिक आवेश, संबंधित लोगों की नासमझी आदि कई कारण थे जिनका उल्लेख इस समय न अपेक्षित है, न उचित ही। हां, वह घटना मेरे जीवन की एक निर्णायक घटना अवश्य रही है।
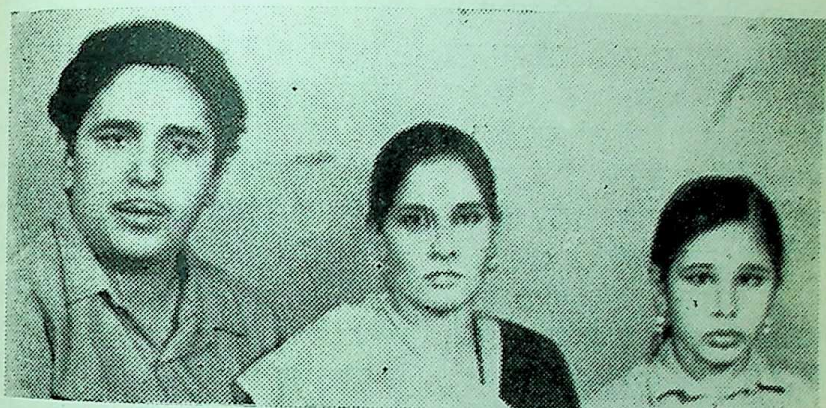
देवी लाल पंवार, जोधपुर: आपके उपन्यास 'बोरीबली से बोरी बंदर तक' में आलोचक समाजवादी यथार्थ ढूंढ़ने का प्रयत्न करते हैं, आपकी दृष्टि में समाजवादी यथार्थ क्या है?

समाजवादी यथार्थ, मानवतावादी यथार्थ या वर्गचेतनावादी यथार्थ—लेखक के लिए स्वयं अपने साहित्य का इस तरह का वर्गीकरण कठिन होगा। शायद, गलत

—२६१-अ, मोतीलाल नेहरू नगर, इलाहाबाद—२

मेरे संस्मरण : ५

एक निरभिमानी महापंडित

• वियोगी हरि

नाम तो बहुत पहले से सुन रखा था, शोध-संबंधी तथा पुरातत्त्वविषयक दो-तीन लेख भी देखे थे, पर श्री राहुल सांकृत्यायन से मेरा मिलना तो, जहां तक याद आता है, १९३७ या ३८ में प्रथम बार दिल्ली में हुआ था। रूस की यात्रा से बौद्ध भिक्षु के रूप में वे स्वदेश लौटे ही थे। दिल्ली में तब दो दिन हमारे हरिजन-निवास में आकर वे ठहरे थे। सुन रखा था कि राहुलजी नामी घुमक्कड़ हैं। तिब्बत की महाकठिन यात्राएं उन्होंने की थीं। उनके बारे में भी बहुत-कुछ सुना और पढ़ा था। यात्राओं के विविध वृत्तांत और संस्मरण सुनाने का उनका बड़ा रोचक ढंग था। मेरे आदरणीय मित्र प्रो. मलकानी ने उस दिन यात्रा-संबंधी अनेक प्रश्न उनसे पूछे थे। उन्होंने उन प्रश्नों के जो उत्तर दिये उनसे मलकानीजी और हम सब उनकी ओर आकृष्ट हो गये। बौद्ध भिक्षु के नियमों का पालन करते हुए वे मध्याह्न से पहले भोजन किया करते थे। हम लोग उस दिन लंबी चर्चाओं में व्यस्त हो गये कि पता नहीं चला कि बारह तो कभी के बज चुके हैं। संतरे का रस और एक गिलास दूध लेकर ही उस दिन उन्हें संतोष करना पड़ा।

रात को चांदनीचौक के एक पुस्तकालय में राहुलजी के अभिनंदन का आयोजन किया गया था। संस्कृत के एक प्रख्यात विद्वान आयोजन के सभापति थे। राहुलजी के मुख से उनकी विदेश-यात्रा के कितने ही मधुर संस्मरण बड़े ध्यान से हम सबने सुने, किंतु कदाचित गो-मांस का प्रसंग सुनकर, जो शायद ईरान-यात्रा का था, सभापति अपना आसन छोड़कर चल दिये। और लोग भी, जिनमें कई जैन मित्र भी थे, एक-एक कर उठने लगे। अच्छा होता कि उस प्रसंग का जिक्र राहुलजी ने न किया होता। अभिनंदनार्थ आयोजित सभा में उपस्थित सज्जनों को भी संयम से काम लेना चाहिए था।

बौद्ध भिक्षु के रूप में राहुलजी के यही एक-दो संस्मरण हैं। बाद में वे भिक्षु न रहकर भी राहुल सांकृत्यायन तो थे ही। मैं उनके अधिक समीप आ गया, हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के बंबई-अधिवे-

शन के दिनों में। एक वर्ष पहले मैं कराची-अधिवेशन का सभापति था। बंबई-अधिवेशन का एक बड़ा प्रेरक प्रसंग याद आ रहा है। एक प्रस्ताव पर एक सज्जन, जिनका नाम याद नहीं आ रहा, भाषण दे रहे थे। राहुलजी ने धीरे-से मुझसे कहा कि 'मैं अभी दो मिनट में आ जाता हूं, आप तो बैठे ही हैं।' फिर, मंच से वे उतर पड़े और हमने देखा कि एक वृद्ध पुरुष के चरणों पर वे झुक गये, उसका हाथ पकड़कर मंच पर ले आये और अपने पास बिठा लिया। उन्होंने खड़े होकर उनका श्रद्धापूर्वक परिचय दिया कि, 'इन पंडितजी से मैंने काशी में चार-पांच महीने संस्कृत पढ़ी थी। ये मेरे गुरु हैं,' कहते हुए उनको फिर प्रणाम किया। राहुलजी ने भारतीय संस्कृति का प्रत्यक्ष दर्शन करा दिया। तीन-चार उपस्थित नवयुवकों को आश्चर्य हुआ राहुलजी की इस गुरु-भक्ति को देखकर। एक ने कहा भी कि, 'राहुलजी तो साम्यवादी विचारों के प्रगतिशील साहित्यकार हैं। यह क्या दकियानूसीपन दिखा रहे हैं!' दूसरे दिन भी राहुलजी ने अपने उन पंडितजी की विद्वता और शिष्य-वत्सलता का श्रद्धापूर्वक वर्णन किया।

निस्संदेह राहुलजी के साम्यवादी विचार थे, किंतु अपनी सांस्कृतिक परंपरा से उन्होंने संबंध-विच्छेद नहीं किया था। हिंदी के प्रश्न पर, हम सभी जानते हैं, वे साम्यवादी दल से अलग हो गये थे। हिंदी को वे भारतीय संस्कृति तथा राष्ट्रीयता का एक निर्विवाद प्रतीक मानते थे। संस्कृत, पाली, तिब्बती आदि देशी-विदेशी भाषाओं के महान पंडित होते हुए भी हिंदी के प्रति उनकी सहज भक्ति थी।

राहुलजी को जरा भी अभिमान नहीं था। बौद्ध सिद्धों तथा मध्य एशिया पर अपूर्व शोधात्मक कार्य उन्होंने किया था। एक दिन उनके साथ चर्चा करते हुए जब मैंने कहा कि, 'आपका यह शोध-कार्य वास्तव में असाधारण है,' तब उन्होंने जैसे

राहुल सांकृत्यायन

मेरी बात को सुना ही नहीं और किसी दूसरे विषय पर बात छेड़ दी। दर्शनों पर लिखा हुआ उनका 'दर्शन-दिग्दर्शन' ग्रंथ अंगरेजी में लिखा गया होता, तब उसे उपयुक्त आदर मिलता। डॉ. राधाकृष्णन की जो आलोचना इस ग्रंथ में है, उससे कितने ही लोग, जो दर्शन-शास्त्र से प्रायः अपरिचित थे, बहुत रुष्ट हो गये थे, पर इस पर राहुलजी ने ध्यान नहीं दिया।

राहुलजी कितने ही विचारों में बड़े उदार थे और विनोदी भी। एक प्रसंग याद आ रहा है। वह इलाहाबाद का है, हिंदी-साहित्य-सम्मेलन का। सम्मेलन के अतिथि-भवन में बैठे हम लोग खीरे और ककड़ियां खा रहे थे। मैंने कहा कि नमक मंगा लेना चाहिए। राहुलजी बोले, "नमक की क्या जरूरत ? खीरे और ककड़ी में तो भगवान ने नमक पहले ही रख दिया है।"

"अच्छा! आप और भगवान की बात! आप तो भगवान को मानते नहीं," मैंने कहा।

"कभी-कभी भगवान को आप लोगों से उधार ले लेता हूं।"

"राहुलजी ! जमाना ऐसा है कि उधार ली हुई चीज को लोग प्राय: वापस नहीं किया करते। हो सकता है कि आप उन ना-दिहिंदों में न हों।"

तुलसीदासजी का राजापुर का स्मृति-स्थान राहुलजी देखने गये थे। देखकर लौटे तो किसी के पूछने पर उन्होंने कहा कि 'तुलसीदास को राम जितने प्रिय थे, उतने ही प्रिय मुझे तुलसीदास हैं।' मैंने एक दिन कहा कि 'यदि आपकी सचमुच ऐसी मान्यता है तो रेखागणित की प्रथम 'स्वयं-सिद्ध' बात हुई। मतलब यह कि राम भी प्रिय होने चाहिए।'

हंसने लगे, और बोले कि 'रेखागणित में क्या तो स्वत:सिद्ध है और क्या परत:-सिद्ध, उससे मेरा कोई प्रयोजन नहीं।'

दिल्ली-स्थित हमारे हरिजन-निवास में जब वे टहरे हुए थे, एक फोटोग्राफर ने उनके साथ मेरा चित्र खींचना चाहा। हम दोनों बैठे कुछ बात कर रहे थे। मेरी पोती भावना अलग खड़ी थी। नन्हीं बच्ची थी। राहुलजी ने बुलाकर उसे अपने पास बिठा लिया और कहा कि, 'इस बच्ची को छोड़कर हम बूढ़े लोग अपना फोटो खिंच-वायें यह मुनासिब नहीं।' वह फोटो मेरे पास सुरक्षित रखा है। एक दिन उसे देखा तो बच्चों के प्रति राहुलजी की वह स्नेह-भावना याद हो आयी। बच्चों में बैठकर जब वे कहानियां सुनाया करते थे, तब कौन कह सकता था कि इन्होंने ही पुरातत्त्व, इति-हास एवं दर्शन पर बड़े-बड़े ग्रंथ लिखे हैं।

मैंने एक दिन, बिना किसी संकोच के, राहुलजी से कहा, "आपकी प्रतिभा बहुमुखी है इसमें संदेह नहीं। सभी विषयों पर आपने लिखा है, लेकिन हिंदी-संसार तो आपसे वह चीज चाहता है, जिसे दूसरे नहीं दे सकते। पाली भाषा का उत्तम वाङ्-मय शोधपूर्ण भूमिका के साथ, एक आप ही हिंदी-जगत को दे सकते हैं। उपन्यास वगैरह लिखनेवालों की आज कोई कमी नहीं है।"

गंभीरता से सुना और बोले, "आप जो कहते हैं उस पर मेरा ध्यान है।"

राहुलजी ने कितना कुछ दिया और आगे भी वे क्या नहीं दे सकते थे! मगर काल को मंजूर नहीं था। कितनी कठिनाई से और किस-किस संकट में पड़कर तिब्बत से ढेरों ग्रंथ-रत्नों को राहुलजी भारत में ले आये। उनका अनुवाद करना—अनुवाद भी तिब्बती भाषा से संस्कृत में और उनका

बाद हिंदी में करने और संपादित रूप में उन्हें प्रकाशित कराने का उनका स्वप्न पूरा न हो सका। शासन ऐसे अत्यंत लोकोपयोगी कार्य की कोई योजना न बना सका।

भगवान बुद्ध की २,५०० वीं जयंती मनाने का आयोजन भारत में हुआ और विदेशों से अनेक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। बहुतों को आश्चर्य हुआ यह सुन और देखकर कि राहुल सांकृत्यायन का नाम वहां नहीं है ! न जाने इस अक्षम्य उपेक्षा के पीछे क्या कारण रहा होगा !

शरीर छोड़ने से कोई एक साल पहले उन्होंने कहा था कि 'अबकी बार जब दिल्ली में आऊंगा, तो हरिजन-निवास में मास-दो-मास भी रह सकता हूं।'

स्वास्थ्य राहुलजी का गिरा सो गिरा। इलाज जैसा होना चाहिए था वह नहीं हुआ। अंतिम दिनों में स्मृति भी विदा ले गयी। जबान भी लड़खड़ाती थी। दिल्ली में ही मेरी उनसे अंतिम भेंट हुई। मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये। अस्फुट स्वर में इतना ही कहा, "क्या मैं पढ़ा-लिखा हूं ?" पत्नी कमला से हाथ के इशारे से चाय बनाकर मुझे देने को कहा। बेबसी का वह करुण दृश्य देखा नहीं जा सका। आंखों में पानी भर आया। श्रद्धाभक्तिपूर्वक बंधुश्रेष्ठ राहुलजी को प्रणाम करके मैं चल दिया।

—एफ१३/२ माडलटाउन, दिल्ली-१०००९

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. **रमेश** ने वापसी-टिकट सिर्फ एक लिया था। २. **पांच** बजे। ३. **वर्षा** और बीज। ४. **दो** दिन। ५. **आग**। ६. ५९। ७. **सम्यक** ज्ञान, सम्यक दर्शन, सम्यक चरित्र। ८. **कीर्तन**, श्रवण, स्मरण, अर्चना, वंदन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन, चरण-सेवा। ९. दो पिता और दो पुत्र मिलकर चार व्यक्ति नहीं, बल्कि तीन व्यक्ति हैं—दादा, बेटा और पौत्र। १०. **भारत** में रहने वाली, जन्मत: युगोस्लावी नन जिन्हें 'नेहरू-पुरस्कार' मिल चुका है। इजरायल द्वारा सितंबर, ६७ के युद्ध में पराजित अरब राष्ट्रों द्वारा स्मरण किये जानेवाला समय। १९७१ के युद्ध में भारत से बुरी तरह पराजित होने पर पाकिस्तान द्वारा याद किये जानेवाला समय। ११. **कुल** ५३,४११ करोड़ रुपये—३७,२५० करोड़ रुपये सार्वजनिक क्षेत्र पर तथा १६, १६१ करोड़ रुपये निजी क्षेत्र के लिए। १२. **दो** आम। १३. **मानचित्र**। १४. **छह**। १५. **दोनों** गोले दोनों हाथों से उछालते हुए ले जाए, जैसा कि बाजीगर करते हैं। इस प्रकार एक ही गोला उसके हाथ में रहेगा।

कहानी

महीप सिंह

अब यह तय हो गया था कि मैं खाना खाकर ही जाऊंगा। हालांकि बीच में पांच वर्ष से बड़ा अंतराल था, पर मुझे अच्छी तरह याद था कि उसकी पत्नी खाना बहुत अच्छा पकाती है। उसकी पत्नी खाना बनाने की तैयारी करने लगी। उसकी लड़की एक ओर बैठकर सब्जी काटने लगी। छोटे से कमरे में हमें अपना बैठना बहुत भारी लगने लगा था। मैंने कहा, "आओ तब तक बाहर घूमें।"

हम दोनों सड़क पर निकल आए। बंबई से चालीस मील दूर के इस उपनगर में इकतल्ले मकान दूर-दूर तक छितरे दिखायी दे रहे थे। चारों ओर की जमीन पथरीली थी, इसलिए उन पर बने मकान ऊंचाई-नीचाई का बड़ा कुदरती खाका बना रहे थे।

मैंने उससे पूछा, "कैसा चल रहा है?"

वह बोला, "ठीक है, गाड़ी खिंच रही है।"

उसके जवाब के जवाब में मैं क्या कहता! लगता था, इस बातचीत के ऊपर मोटा ताला लगाकर वह उसकी चाबी किसी अंधेरे कुएं में फेंक देना चाहता है।

"तुम्हारी पत्नी कह रही थी कि तुम किसी फर्म के कमीशन एजेंट भी हो।"

"मैंने उससे झूठ कहा है ताकि उसके मन में इस बात का भरोसा रहे कि मेरी आमदनी का कोई पुख्ता जरिया है, पर काम वही है।"

चलते-चलते हम लोग एक पुलिया पर आगये थे। नीचे गंदा नाला बह रहा था, उसमें से बदबू की भभक उठ रही थी।

"पहले तो तुम्हारे फिल्मी इंटरव्यू पत्र-पत्रिकाओं में दिख जाते थे। अब तो बहुत दिनों से मैंने वहां भी कुछ नहीं देखा।"

"अब मैं वह काम ज्यादा नहीं करता।"

मुझे खीझ-सी हुई। मन हुआ पूछूं, 'तुम ये काम भी नहीं करते, वो काम भी नहीं करते। फिर करते क्या हो?' समझ में नहीं आ रहा था कि अपनी जिज्ञासा उसके सामने कैसे रखूं!

अंधेरा बढ़ने लगा था। उसका चेहरा अब मुझे काफी धुंधला-धुंधला-सा नजर आ रहा था। सड़क पर लगे लैंप पोस्टों की रोशनी बहुत कम थी। पर मैं उसका चेहरा देखना चाहता था, बार-बार देखना चाहता था। आज मैं इस चेहरे को लगभग पांच साल बाद देख रहा था। उससे पहले लगभग बीस वर्षों तक मैंने यह चेहरा दिन में कई-कई बार लगातार देखा था। तब मैं उस चेहरे को झट से पकड़ लिया करता था। हर बात उसकी आंखों

में से झलकती हुई उसके मुंह पर की रेखाओं में इतनी जल्दी उतर आती थी कि मैं उसे पकड़कर हंसते हुए उसकी हथेली पर रख दिया करता था।

पर आज मैं उसके चेहरे को पकड़ने में बुरी तरह नाकामयाब हो रहा था। वह पट्ठा हाथ ही नहीं रखने दे रहा था।

मैंने कहा, "साफ-साफ बताओ कि तुम आजकल क्या काम कर रहे हो?"

उसने उसी संजीदगी से कहा, "बहुत साफ - साफ बताने पर भी बात तुम्हारी समझ में पूरी तरह से नहीं आएगी। तुम जानते ही हो कि फिल्म-लाइन बहुत बड़ी पेचीदा और टेढ़ी-मेढ़ी लाइन है, और इस लाइन में आये अब मुझे पंद्रह साल हो गये हैं। नये-पुराने फिल्मी सितारों की पब्लिसिटी से लेकर खुद अपनी फिल्म बनाने की योजना तक का रास्ता मैं रोज तय करता हूं। इस रास्ते के बीच में कितने पड़ाव हैं, इसका अनुमान तुम नहीं लगा सकोगे। बस यूं समझ लो कि कहीं सीधा-चौड़ा राजपथ है तो कहीं अंधेरी सुरंग है, कहीं समुद्र तो कहीं गंदा नाला।"

"तुम यह लाइन छोड़ क्यों नहीं देते?" मैंने कहा, "क्यों नहीं किसी ऐसी लाइन को चुनते हो जो जिंदगी में बेहतर सुरक्षा दे सके।"

वह मेरी तरफ देखकर बहुत फीके ढंग से मुसकराया। उस मुसकराहट में आज मुझे पहली बार अपना एक पुराना दोस्त झांकता-सा दिखायी दिया।

"अब मेरे लिए दुनिया में और सब कुछ खत्म हो गया है," वह बहुत धीरे-धीरे और डूबी हुई-सी आवाज में बोला, "अब तो बस जीना यहां, मरना यहां।"

"क्या तुम्हें इस लाइन में अपना भविष्य दिखायी देता है?"

"भविष्य ...?" वह फिर मुसकराया, "फिल्म लाइन में लाखों लोग सिर्फ भविष्य के सहारे ही जीते हैं, एक ऐसे भविष्य के

आपके बच्चे को बढ़ने के लिए तिगुनी शक्ति चाहिए !

कुरकुरे, स्वादिष्ट प्रोपॅक बिस्किट आपका बच्चा हर समय पसन्द करेगा !

साधारण बिस्किटों से तीन गुने प्रोटीन, दस गुने विटामिन और कई गुने कैलशियम और आयरन से भरपूर

अपने बच्चे को प्रोपॅक बिस्किट दूध के साथ या भोजन की तरह खाने दीजिए। कुछ स्कूल भी ले जाने दीजिए। आपको देखकर प्रसन्नता होगी कि वह कितनी तेज़ी से बढ़ता है और पढ़ाई-लिखाई और खेलकूद दोनों में सबसे आगे रहता है।

हल्के आसानी से हज़म हो जाने वाले प्रोपॅक बिस्किट स्फूर्तिदायक प्रोटीन, विटामिन, कैलशियम और आयरन से भरपूर है

सहारे जो कहां है, कितनी दूर है, किसी को पता नहीं; पर दिखायी सबको देता है, आकाश में चमकनेवाले तारे की तरह।"

मैंने ऊपर आकाश की तरफ देखा। एक तारा ठीक हमारे सिर के ऊपर ही चमक रहा था।

मैंने कहा, "पिछले पांच साल में मैंने तुम्हें कितने पत्र लिखे, कितने लोगों के हाथ तुम्हें संदेश भिजवाये, पर तुमने एक का भी जवाब नहीं दिया। तुम जो कुछ कर रहे हो करो, पर इसका मतलब यह तो नहीं कि तुम मित्रों और सगे-संबंधियों को भी भुला दो!"

"मित्र... सगे... संबंधी... ये सब किसके लिए होते हैं? उसने मुझे घूरकर देखा, "उसके लिए जो दुनिया में किसी भी तरह जी रहा हो। पर मैं उस तरह कहां जी रहा हूं। मैं तो सिर्फ जीने की उम्मीद में जी रहा हूं। जीना शुरू कर दूं तो सभी संबंध अच्छे लगने लगें। यही देखो! तुम आज पांच साल बाद मिले हो। तुम्हारी आंखों में बार-बार यही प्रश्न उभर रहा है कि मैं कुछ भी तो नहीं कर रहा हूं। इसीलिए मैं उन आंखों से बहुत घबराता हूं, जिनमें यह प्रश्न उभरता है, और यह प्रश्न तुम्हारे जैसे किसी दोस्त या सगे-संबंधी की आंखों में ही तो उभरता है।"

वह मेरी तरफ अपनी कुछ अजीब-सी जलती-बुझती आंखों से देखने लगा। बोला—"देखो, तुम मेरे बचपन के दोस्त हो पर मेरे और तुम्हारे बीच की दूरी बहुत बढ़ गयी है। तुम जिंदगी के उस रास्ते पर हो जो सीधा जाता है। तुम्हारी जिंदगी का धुरा है निश्चितता, पर मेरी जिंदगी उन रास्तों पर दौड़ रही है जो हर सौ कदम के बाद बंद दिखायी देते हैं। मेरी आज की जिंदगी में यदि कुछ निश्चितता है तो यह उसकी नितांत अनिश्चितता ही है। मेरा-तुम्हारा समान धरातल बने इसके लिए जरूरी है कि या तो मैं तुम्हारे धरातल पर आ जाऊं या तुम मेरे धरातल पर आ जाओ।"

हम दोनों ठहाका मारकर हंस दिये।

फिर धीरे-धीरे हम उसके घर की ओर बढ़ने लगे। चलते-चलते उसने बताया कि वह एक फिल्म बनाने जा रहा है, पर उसकी बात ने न मेरे मन में कोई रुचि पैदा की, न ही उसकी बात में मुझे कोई दम मालूम हुआ।

रास्ते में जब उसने मुझे यह बताया कि वह एक फिल्म बनाने जा रहा है तब उस पर मुझे तरस आने लगा। यह बेचारा इसी तरह के खयाली पुलावों में जीता रहेगा। फिर मुझे लगा, मुझे यहां से जल्दी ही लौटना चाहिए। बंबई वापस पहुंचने में ही कम-से-कम दो घंटे लग जाएंगे।

खाना तैयार था। हम दोनों दरी बिछा-कर जमीन पर ही बैठ गये। दो कटोरियों में गाढ़ी रसेदार सब्जियां और प्लेट में पराठे आ गये। खाना बहुत लजीज था। मुझे भूख भी काफी लगी थी। मैंने पांच पराठे जरूर खाये होंगे। पेट भर गया था,

पर अतृप्ति फिर भी महसूस हो रही थी।

खाना खाकर उसने जोर की डकार ली और सामने की खुली आलमारी से एक फाइल निकाल कर मेरे पास बैठ गया।

"यह देखो, मेरी फिल्म के मुहूरत की कुछ तसवीरें!"

मैं तसवीर देखने लगा।

एक तसवीर में वह बीच में खड़ा था। उसके साथ एक मंत्री महोदय खड़े थे। आसपास तीन-चार लोग और थे।

"क्या नाम है तुम्हारी फिल्म का ?" मैंने पूछा।

"'ये भी इंसान हैं'," वह बोला, "मैं नाजायज बच्चों की समस्या को लेकर फिल्म बना रहा हूं।"

"कहानी किसकी है ?"

"मेरी ... मैंने ही संवाद और सीनेरियो लिखे हैं।"

"डायरेक्ट कौन कर रहा है ?"

"मैं खुद ही डायरेक्ट करूंगा।"

मेरे होठों-होठों में ही उभरा, 'कमाल है!'

उसने एक प्रेस कटिंग मेरे सामने रख दी। किसी फिल्मी पत्रिका में उस फिल्म के मुहूरत की खबर के साथ वही मंत्री-जी के साथवाला चित्र छपा हुआ था। उसमें छपा था कि सुप्रसिद्ध फिल्म-पत्रकार श्री एन. डी. शर्मा इस फिल्म का निर्देशन करेंगे और फिल्म के निर्माता हैं नरेश भाई।

मैंने पूछा, 'यह नरेश भाई कौन है?"

"यह भी मैं ही हूं।"

मैं हंसा, "यह भी खूब रही! नरेश फिल्म के निर्माता हैं और एन. डी. शर्मा फिल्म के निर्देशक हैं। नरेश दत्त कहानी लेखक हैं और नरेश शर्मा संवाद लेखक। म्यूजिक भी तुम्हीं दे रहे हो क्या ?"

"नहीं," वह बोला, "म्यूजिक के लिए मैं रामलाल-श्यामलाल को साइन कर चुका हूं। यह नयी जोड़ी है पर इस फिल्म के बाद एकदम चमक उठेगी। कास्ट भी एकदम नयी है। नये चहरों को लेकर ही मैं यह फिल्म बनाऊंगा। फिल्म में ज्यादा काम तो दस साल तक के बच्चों का ही है।"

"पैसों का क्या इंतजाम किया है?"

"इसी जुगाड़ में हूं।"

मैंने कहा, "शायद यहीं से फिल्म लाइन का राजमार्ग खत्म होकर अंधेरी सुरंग शुरू होती है।"

"हां," वह बोला, "देखो, शायद कभी इस सुरंग से निकलकर मार्ग पर आ जाऊं।"

मैंने कहा, "आखिर कुछ तो सोचा ही होगा।"

वह बोला, "शायद कोई फाइनेंसर कुछ रुपया लगाने को तैयार हो जाए। दो तीन रील बनाकर सरकार से कर्ज लेने की कोशिश करूंगा। आखिर यह देश की एक ज्वलंत समस्या है।"

वह मुझे स्टेशन तक छोड़ने आया।

दूसरे दिन वह वहां आया, जहां मैं ठहरा हुआ था। हमलोग साथ-साथ बाहर निकले। मैंने सोचा था, आज वह

सारा दिन मेरे साथ रहेगा। मैं पांच साल पुरानी कुछ यादों को ताजा करना चाहता था। किंग्स सर्किल चौराहे पर हम दोनों ने कितनी बार भेल-पूड़ी खायी थी। सोचा था, उसके साथ कोई फिल्म भी देखूंगा। पर दादर पहुंचने पर उसने मुझसे कहा, "तुम जोशी से मिल लो। मैं एक-डेढ़ घंटे बाद तुमसे यहीं मिलूंगा।"

मैंने कहा, "किस चक्कर से जा रहे हो?"

उसने कहा, "रोटी का चक्कर है! माहीम से एक लड़की को लेकर बांदरा में एक प्रोड्यूसर के पास जाना है। दोनों के बीच अगर कोई बात पट गयी तो थोड़ा अपना काम भी बन जाएगा। उसी लड़की की कुछ तसवीरें रास्ते में एक फिल्मी पत्रिका के दफ्तर में देनी हैं।"

मैंने कहा, "इस काम में तो तुम्हें काफी वक्त लगेगा!"

"नहीं मैं जल्दी आ जाऊंगा," वह बोला, "और जोशी भी तुम्हें जल्दी कहां छोड़नेवाला है।"

उस दिन वह तीन-साढ़े तीन घंटे बाद वापस आया। उसे देखते ही जोशी बोला, "कहिए नरेश साहब, मेरी बच्ची को रोल कब दिला रहे हैं?"

"बेबी की तसवीरें तीन-चार प्रोड्यूसरों के पास पहुंचा चुका हूं। जल्दी ही कोई बात बन जाएगी," फिर उसने अपना चश्मा उतारकर साफ किया और बोला, "और जोशी साहब जो फिल्म मैं खुद

बनाने जा रहा हूं वह तो है ही बच्चों की फिल्म। उसमें आपकी बच्ची के लिए मैंने एक खास रोल रखा है।"

एकाएक मैंने देखा, उसकी आंखों में एक चमक उभर आयी है। वह चमक एक बड़ी अनजानी-सी चमक थी जिसे उससे पहले मैंने उसकी आंखों में नहीं देखा था।

वह बोला—"किसी दिन आकर मैं इस फिल्म के बारे में आपसे विस्तार में बातचीत करूंगा।" कहकर वह उसके पास जा बैठा और धीरे-धीरे बोला, "बेबी की तसवीरों के कुछ और प्रिंट्स निकलवाने हैं।"

मैंने देखा, जोशी ने अपने पर्स से निकालकर दस-दस के तीन चार नोट उसके हाथ में दे दिये हैं।

—एच १०८ शिवाजी पार्क, नयी दिल्ली

आयुर्वेद और कैंसर का इलाज

● आयुर्वेदाचार्य पं. खुशीलाल शर्मा

हमारे देश में रोगों के उपचार के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति ही अधिक उपयोगी है। यूनानी इलाज रेगिस्तानी लोगों के लिए लाभकारी हो सकता है। ऐलोपेथी, पश्चिमी देशों के ठंडे मुल्कों की उपचार-पद्धति है, इसलिए वह उसी प्रकार के वातावरण के लिए हितकारी सिद्ध होगी। यही हाल हिमालय की जड़ी-बूटियों का है। वे तिब्बत, कश्मीर-जैसे ठंडे प्रदेशों में ही अधिक लाभ पहुंचा सकती हैं। आयुर्वेद का जन्म भारत की जलवायु में हुआ है तथा इसका विस्तार यहीं की बीमारियों को ही देखकर किया गया है, इसलिए वही इस देश के लिए अत्यंत लाभकारी है। उदाहरण के लिए, जीर्ण बुखार के लिए धुधई नामक जड़ी-बूटी मैदानी इलाकों के लोगों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध हुई है जबकि हिमालय की महंगी जड़ी-बूटियां भी उनके काम नहीं आयीं। इसका कारण जलवायु ही है।

ऐलोपैथी की औषधियां कीटाणुओं द्वारा तैयार की जाती हैं। उनसे कुछ समय के लिए आराम तो मिल जाता है, पर बाद में यही कीटाणु अन्य बीमारियों को जन्म देते हैं। आयुर्वेद में यह बात नहीं है। उसमें प्रयुक्त जड़ी-बूटियां तो प्रकृति का वरदान हैं। यह अवश्य है कि वे ज्यादा देर से लाभ करती हैं परंतु यह भी सच है कि वे ऐलोपेथी-सा विष नहीं फैलातीं। मैंने स्वयं ऐसी कई बीमारियों के उपचार किये हैं।

संग्रहणी का सरल उपचार

एक बार एक महाशय मेरे पास आये। वे कई मास से संग्रहणी से पीड़ित थे। मध्यप्रदेश के करीबन सभी डाक्टरों का इलाज करा चुके थे। मैंने उन्हें केवल गाय के दूध का दही पीने की सलाह दी तथा दही के साथ एक चावल भर फौलाद की भस्म खाने को कहा। साथ ही व्यायाम करने की भी सलाह दी। फौलाद की भस्म से भूख अधिक लगती है। इस भस्म का सेवन करने के बाद उन महाशय को इतनी भूख सताने लगी कि दिन भर में वे आठ सेर दही पीने लगे। करीब एक माह पश्चात उनकी बीमारी बिलकुल ठीक हो गयी। आजकल तो मुझे यह इलाज भी बताने में लज्जा आती है क्योंकि अब

इतना दही हर आदमी नहीं खरीद सकता।

राजयक्ष्मा की अचूक औषधि

दूसरा उदाहरण राजयक्ष्मा का दूं। एक भद्र महिला राजयक्ष्मा से पीड़ित थीं। उनकी हालत काफी संगीन थी। जब वे मेरे पास आयीं तब मैंने उन्हें सभी ऐलोपेथी औषधियां बंद करने की सलाह दी। मैंने उन्हें एक मटका भर पानी छलनी से ढांककर छत पर धूप में रखने तथा बाद में इसी जल से स्नान करने की सलाह दी। उन्हें एक दूसरा उपचार भी बतलाया। इस उपचार के अनुसार नीम पर होनेवाली गुरुवेल को चार अंगुल काटकर बारह कली आंवले के साथ आधा पाव पानी में फुलायें; जब वे फूल जाएं तो उन्हें मसल-कर पी लें। ऐसा सुबह-शाम करें। उन महिला ने मेरे बताये दोनों इलाज किये। फलस्वरूप वे शीघ्र ही ठीक हो गयीं।

अच्छी पाचन-शक्ति के लिए

इसी तरह पाचन-शक्ति को ठीक करने के लिए भी आयुर्वेद में अनेक उपचार हैं। एक बार मेरे पास कानपुर से एक सज्जन आये। उनकी पाचन-शक्ति जवाब दे चुकी थी। मैंने उनकी परीक्षा की और फिर रोग का निदान कर उपचार बताया। मैंने उन्हें लोहे की कढ़ाई में हर्रें भूनकर सुबह-शाम छह हर्र खाने को कहा। एक माह के भीतर ही वे पूर्ण स्वस्थ हो गये।

इसी तरह मैंने एक हकीम साहब का इलाज किया था। वे सूजाक से पीड़ित थे। मैंने उन्हें बैंगन को एक छटांक तेल में अन्य मसालों के साथ तलने की सलाह दी और कहा कि इसमें वे मिर्च इतनी डालें कि आंखों में पानी आ जाए। उन्होंने यह इलाज १५-२० दिनों तक किया। फिर एक दिन उन्हें खुलकर पेशाब आया तथा उनके रोग का निवारण हो गया। इस बीमारी के लिए मैंने उन्हें एक पुड़िया भी दी थी किंतु उसका नुस्खा बनाना हर किसी के लिए संभव नहीं है।

कैंसर का इलाज

कैंसर की बीमारी हमारे यहां वैदिक-काल से चली आ रही है। कभी इसका नाम जहरीला फोड़ा था, कभी कुछ और। रामायणकाल में भी इसका उल्लेख है। रामायण से पता चलता है कि राजा दशरथ की हथेली में जहरीला फोड़ा (कैंसर) हो गया था। उसे रानी कैकेयी ने अमृतोपचार द्वारा अच्छा किया था। अतः कैंसर के लिए जब उस समय इलाज था तब अब क्यों नहीं हो सकता है? पर पुराने आयुर्वेदिक ग्रंथ अब लुप्त हो चुके हैं। यदि शोध - कार्य किया जाए तो कैंसर का उपचार अवश्य निकलेगा।

लेखक एक प्रसिद्ध चिकित्सक एवं कांग्रेस अध्यक्ष डॉ. शंकरदयाल शर्मा के पिता हैं

सूर्य-किरणों द्वारा तपेदिक की चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा का एक अंग है। स्नान करते समय शरीर पर काली मिट्टी लगाना, शरीर के भीतर की गरमी शांत करने के लिए हरी दूब का सेवन, प्रभात वायु-सेवन आदि जितने प्रयोग हैं, वे सब प्राकृतिक चिकित्सा के अंतर्गत ही हैं। पहले आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा अलग-अलग नहीं थीं परंतु बाद में दोनों पद्धतियां अलग-अलग हो गयीं।

कुछ उपयोगी नुस्खे

स्नान से पूर्व काली मिट्टी का लेप करने से शरीर स्वस्थ रहता है। शरीर के विकार दूर करने के लिए यह नुस्खा भी उपयुक्त है। १०० ग्राम शक्कर लें तथा उसमें उतनी ही साफ की हुई काली मिर्च मिला दें। दोनों को मिलाकर पीस लें। फिर १०० ग्राम शुद्ध घी लें तथा उसमें इस पाउडर को लाल होने तक गरम करें। बाद में ठंडा कर लें तथा इस पाउडर को ५० ग्राम प्रातः तथा ५० ग्राम शाम को खायें। इससे शरीर के विकार दूर होते हैं। मुहांसे तथा कील दूर करने के लिए १२ नीबुओं का रस निचोड़ें और नीबू का यह रस तब तक गरम करें जब तक कि वह आधा न रह जाए। फिर इसे आधा पाव तिल्ली के तेल में मिला लें। ठंडा कर चेहरे पर लगाने से लाभ होगा।

गोपाल नीरज, अजमेर : 'प्रेज़ ऑव फॉल्ली' (मूर्खता की प्रशंसा) नामक पुस्तक और उसके लेखक के विषय में सुना जाता है कि यह पुस्तक ईसाई धर्म के विरुद्ध है और इसका लेखक स्वयं ईसाई धर्माचार्य था। क्या यह सत्य है? पुस्तक और लेखक का परिचय देने की कृपा करें।

पंद्रहवीं शताब्दी में यूरोप के अनेक देशों में धर्म-सुधार आंदोलन हुए थे। कारण यह था कि मानव-सभ्यता के विकास के साथ ही ईसाई धर्म और उसके धर्माचार्यों की त्रुटियां एकदम उधड़कर लोगों के सामने आ गयीं। मार्टिन लूथर और जान कैल्विन आदि ने चर्च और पोपों के विरुद्ध विद्रोह किया था और धार्मिक बुराइयों को दूर करने की कोशिश की थी। 'प्रेज़ ऑव फॉल्ली' हालैंड के धर्मशास्त्री इरैस्मस द्वारा लिखी गयी थी। इरैस्मस प्रोटेस्टेंट धर्म का प्रचारक था। वह मार्टिन लूथर की तरह विद्रोही तो नहीं था, लेकिन ईसाई धर्म और पादरियों की दुर्दशा देखकर उसे बड़ा दुख हुआ करता था और वह ईसाई धर्म की बहुत निंदा किया करता था। पादरियों के जीवन में आयी हुई बुराइयों का मजाक उड़ाने के लिए उसने यह पुस्तक लिखी थी। यद्यपि यह पुस्तक विशुद्ध हास्य की पुस्तक थी, लेकिन इसमें निहित व्यंग्य ने प्राचीन कैथोलिक धर्म और पोप की मान-मर्यादा को इतनी हानि पहुंचायी, जितनी लूथर के आंदोलन और विद्रोह ने भी नहीं पहुंचायी थी। इरैस्मस

का जन्म सन १४६७ में और मृत्यु १५३६ में हुई। धर्म-प्रचारक होने के कारण उसने अपना जीवन विभिन्न देशों में घूमते हुए बिताया। अधिकतर वह इटली, जरमनी, फ्रांस और इंग्लैंड में रहा। वह पादरियों के सांसारिक जीवन, विलासिता, वैभव-लिप्सा और सत्ता-लोलुपता का घोर विरोधी था और शांतिपूर्ण उपायों से धर्म में सुधार करना चाहता था। उसका कहना था कि धर्म तभी ठीक रह सकता है जब उसमें सिद्धांत थोड़े हों और आडंबर बिल्कुल न हों। इरैस्मस से कई साहित्यकारों ने यह प्रेरणा ली कि क्रोध की अपेक्षा हास्य अधिक मारक और प्रभावकारी हो सकता है।

वेद प्रकाश वर्मा, मथुरा : वृहस्पति, जो हमारे सौर-मंडल का सबसे बड़ा ग्रह है, पृथ्वी से किन-किन बातों में भिन्न है? क्या वहां जीवन है?

कहां वृहस्पति, कहां बेचारी पृथ्वी! वृहस्पति का व्यास लगभग ८८,७०० मील है, जो पृथ्वी के व्यास से ११गना अधिक

है। (पृथ्वी का व्यास भूमध्य रेखा पर केवल ७,९२७ मील है।) वृहस्पति का द्रव्यमान भी पृथ्वी के द्रव्यमान से १३०० गुना अधिक है। पृथ्वी केवल ३६५ दिन में सूर्य का चक्कर लगाती है, जबकि वृहस्पति को सूर्य का चक्कर लगाने में ११ वर्ष और ८६ दिन लगते हैं। बेचारी पृथ्वी के पास ले-देकर केवल एक चंद्रमा है, लेकिन वृहस्पति के पास पूरे एक दर्जन चंद्रमा हैं। लेकिन पृथ्वी कुछ बातों में वृहस्पति से बढ़कर है। उदाहरण के लिए पृथ्वी का घनत्व इतने बड़े वृहस्पति से चार गुना ज्यादा है। पृथ्वी के दिन-रात चौबीस घंटों के होते हैं (एकदम सही हिसाब लगायें तो २५.५६ घंटों के) लेकिन वृहस्पति के दिन-रात केवल ९.५ मिनट के होते हैं। जी हां, आश्चर्य मत कीजिए। वृहस्पति अपनी धुरी पर ९.५ मिनट में एक बार पूरा घूम जाता है, इसलिए इसके दिन और रात कुल ९.५ मिनट के ही होते हैं। इस प्रकार वृहस्पति की अपनी धुरी पर घूमने की गति पृथ्वी से लगभग १००० गुना अधिक है। लेकिन वृहस्पति की इस जल्दबाजी का नुकसान भी उसे उठाना पड़ता है। सौर मंडल के अन्य सभी ग्रहों के दिन और रात के तापमानों में अंतर
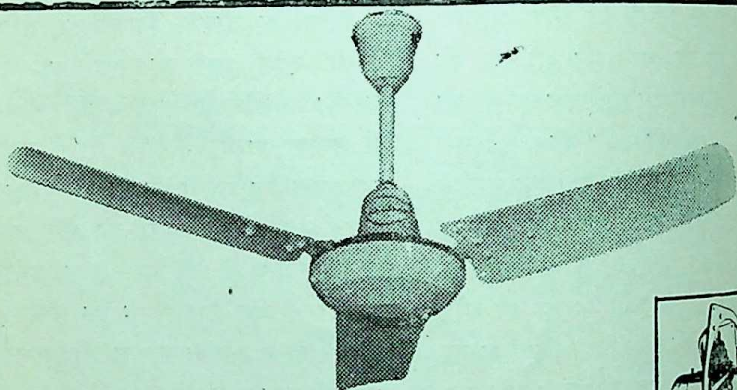
होता है, लेकिन वृहस्पति के दिन और रात समान तापमान वाले होते हैं। यह तापमान ऋण १३३ डिग्री सेंटीग्रेड है। यानी वहां भयानक ठंड पड़ती है और हमेशा ठंड ही पड़ती रहती है। पृथ्वी और वृहस्पति में एक भिन्नता यह भी है कि दोनों के चुंबकीय क्षेत्र विपरीत दिशा में काम करते हैं। मतलब यह कि पृथ्वी पर कुतुबनुमा की जो सुई हमेशा उत्तर की तरफ रहती है, वृहस्पति पर हमेशा दक्षिण की तरफ रहेगी। वृहस्पति पर जीवन है या नहीं, अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

मालती मधुसूदन झोपे, पूना : हिंदी और मराठी के लिए अलग-अलग टाइपराइटर बनाये गये हैं, या एक ही प्रकार के टाइपराइटर दोनों के लिए प्रयुक्त होते हैं?

सन १९६२ में भारत सरकार द्वारा नियुक्त हिंदी टाइपराइटर समिति ने हिंदी-टाइपराइटर का एक मानक कुंजीपटल बनाया था, लेकिन उन्हीं दिनों महाराष्ट्र सरकार ने मराठी का कुंजीपटल तैयार कराया। एक ही लिपि, अर्थात देवनागरी के लिए दो भिन्न कुंजीपटल स्वीकार करना उचित न होता, इसलिए १९६३ में भारत सरकार और महाराष्ट्र सरकार के प्रतिनिधियों की एक बैठक दिल्ली में हुई और उसमें विचार-विमर्श के बाद देवनागरी कुंजीपटल को अंतिम मानक रूप इस प्रकार दिया गया कि हिंदी और मराठी के लिए अलग-अलग टाइपराइटर बनाने की जरूरत न पड़े। १९६४ में भारत सरकार ने उक्त कुंजीपटल को अखबारों में प्रकाशित कराया और विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त सुझावों को एक विशेषज्ञ समिति के विचारार्थ प्रस्तुत किया। समिति से प्राप्त सुझावों के आधार पर कुंजीपटल में आवश्यक संशोधन किये। हिंदी मराठी दोनों के लिए (यानी एक ही लिपि देवनागरी का) मानक कुंजीपटल सामने आया। लेकिन यह घोषणा १९६९ में की गयी—मतलब यह कि विशेषज्ञ समिति को उस पर विचार करने में पूरे पांच वर्ष लगे!

ममता सब्बरवाल, बदायूं : ऐवोगेड्रो-नियम क्या है?

इतालवी वैज्ञानिक अमादेओ ऐवोगेड्रो ने सबसे पहले विज्ञान-जगत के सामने यह विचार प्रस्तुत किया था कि किन्हीं भी दो गैसों के समान परिमाणों में उनके अणुओं की संख्या भी समान ही होती है, यदि उनका दबाव और तापमान भी समान हो। ऐवोगेड्रो के नाम पर यह रसायनशास्त्र का नियम ऐवोगेड्रो-नियम कहलाता है।

एक प्रश्न चलते-चलते और...

कुमारी क. ख. ग. : जो लड़का किसी लड़की की तरफ नजर उठाकर नहीं देखता उसे आप क्या कहेंगे?

किस लड़के को? उसे, जो आपकी तरफ नजर उठाकर नहीं देखता या उसे, जो आपकी तरफ नजर उठाकर भी नहीं देखता?

—बिंदु भास्कर

प्रतिक्रिया

तुम उगाते हो कैनवासी भीत पर
एक सूरज, एक चांद, एक आदमी, एक मछली
आदमी जो भीड़ भी है, और
अंधेरे की चट्टान पर चमकता एक कतरा आंसू भी
कि जिसे भीड़ की हर डूबती आवाज को, अन्याय और शोषण के
खिलाफ, यूकिलिप्टस की फुनगियों तक चढ़ा देने की सजा में

टांग दिया जाता है सूली पर, झोंक दी जाती हैं आंखों में
कांच की जहरीली किरचें, किरचें, ढेर किरचें
और, सीने, हाथ और पावों में खुभी हुई
जंगली कीलें, जिससे बहते हुए लहू के सैलाब में
तड़पती है अनास्था, असंतोष और अभावों की मछली
सुनो, चितेरे! उछाल देते हो तुम, दर्दभरी हर आवाज को
किंतु, कलयुग है न, फुंफकारता ही रह जाता है
न्याय दंड का सर्प

झुलस जाता है तुम्हारा अंसुआया चेहरा, सूरज की मुखर लपटों में
किंतु कैसी विडंबना है, कि रह नहीं सकते तुम चंद्रमा के बिना
जिसकी आभा भीख है सूरज की
क्योंकि तुम जानते हो प्रकृति और मानव में गहरा संबंध है
इसलिए सौंप देते हो
उस अनंत गुहावासी के चरणों में
एक आदमी, एक स्व
और उगाते हो तांडव की हर थिरकन पर—एक सूरज, एक चांद
एक आदमी, एक मछली

—मीना सिंह—
१४६ सेक्टर १२, रामाकृष्णपुरम, नयी दिल्ली-११००२२

ब्रजभाषा के कीर्ति-स्तंभ

• श्रीपतिलाल दुबे

स्वर्गीय पंडित नाथूराम शंकर शर्मा एक ऐसे रससिद्ध महाकवि थे, जिनकी काव्य-रचना पर हिंदी-संसार सहज ही गर्व कर सकता है। उनका जन्म आज से एक सौ चौदह वर्ष पूर्व अलीगढ़ जिले के अंतर्गत हरदुआगंज नामक कस्बे में हुआ था। आरंभ में उन्होंने उर्दू में शेर कहने शुरू किये थे, किंतु कानपुर में नौकरी करते हुए जब वे श्री प्रतापनारायण मिश्र के निकट संपर्क में आये तो हिंदी की ओर उन्मुख हुए और ब्रज भाषा में कविता करने लगे। वह समस्यापूर्ति का जमाना था। उस समय प्रकाशित होनेवाले मासिक पत्रों के माध्यम से समस्या-पूर्ति के लिए कवियों का आह्वान किया जाता था। कोई एक समस्या दे दी जाती थी और कवियों से अपनी-अपनी पूर्तियां भेजने को कहा जाता था। राजा लक्ष्मणसिंह अथवा कोई अन्य काव्य-मर्मज्ञ निर्णायक होता था। तत्कालीन प्रायः सभी बड़े-बड़े कवि समस्या-पूर्तियां करते थे। शंकर ने भी समस्या-पूर्तियां करते हुए काव्य-क्षेत्र में प्रवेश किया और अपनी प्रबल प्रतिभा के सहारे वे शीघ्र ही समस्या-पूर्ति करनेवाले कवियों में अग्रणी ही नहीं, सर्वश्रेष्ठ भी समझे जाने लगे। उस समय के कवि-समाज और विद्वतमंडली ने उन्हें 'कविराज', 'भारत प्रज्ञेन्दु', 'साहित्य-सुधाकर', 'साहित्य सरस्वती', 'कवि-सम्राट', 'महाकवि', 'कविता-कामिनी-कांत' आदि लगभग दो दर्जन से अधिक उपाधियों से सादर सम्मानित किया। 'भारत प्रज्ञेन्दु' की उपाधि तो स्वयं राजा लक्ष्मणसिंहजी ने दी थी।

उनकी ब्रजभाषा की कविताएं स्फुट रचनाएं हैं, जो समस्या-पूर्तियों हेतु घनाक्षरी, कवित्त-सवैये आदि छंदों में लिखी गयीं। ब्रजभाषा में लिखे हुए
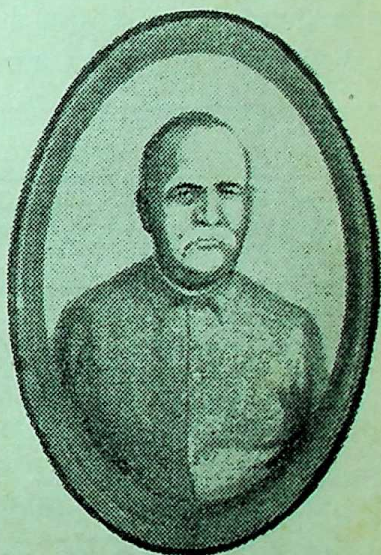
पं. नाथूराम शंकर शर्मा

उनके कुछ पद भी मिलते हैं। वे समस्या-पूर्ति करने में बड़े सिद्धहस्त थे। कुछ ही मिनटों में अच्छी से अच्छी काव्यमयी पूर्ति कर लेते थे, जो भाव, कल्पना, लालित्य और पद-सौष्ठव में अनूठी होती थी। उन्होंने ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों में उत्कृष्ट पूर्तियां कीं। उनकी ब्रजभाषा में की गयी कुछ समस्या-पूर्तियां इस प्रकार हैं। पहली समस्या है, **'हांसी-सी करति जाति'**:

मंगल करन हारे कोयल चरन चारु
मंगल से मान मही गोद में धरत जात
पंकज की पांखुरी से आंगुरी अंगूठन की
जाया पंच वाण जी की भंवरी भरत जात
शंकर निरख नख नग से नखत नभ
मंडल सों छूट-छूट पायन परत जात
चांदनी में चांदनी के फूलन की चांदनी पै
हौले-हौले हंसन की हांसी-सी करत जात

यों तो यह पूर्ण कवित्त ही मधुर-भाव और मधुर कल्पना से परिपूर्ण है लेकिन अंतिम दो पंक्तियों में तो जैसे उन्होंने कमाल ही कर दिया और उनका पद-लालित्य देखते ही बनता है।

काव्य में कल्पना की उड़ान और अतिशयोक्ति का भी विशिष्ट आनंद है। शंकर की कल्पना की उड़ान कहां तक पहुंचती थी, उदाहरणस्वरूप, 'आह कढ़ जाएगी' समस्या-पूर्ति प्रस्तुत है:

शंकर नदी-नद नदीसन के नीरन की
भाप बन अम्बर तें ऊंची चढ़ जाएगी
दोनों ध्रुव छोरन लों पल में पिघलकर
घूम घूम धरनी धुरी-सी बढ़ जाएगी
झारेंगे अंगारे ये तरन तारे तारापति
जारेंगे खमण्डल में आगें मढ़ जाएगी
काहू बिधि, बिधि की बनावट बचेगी नाहि
जो पै वा बियोगिन की आह कढ़ जाएगी
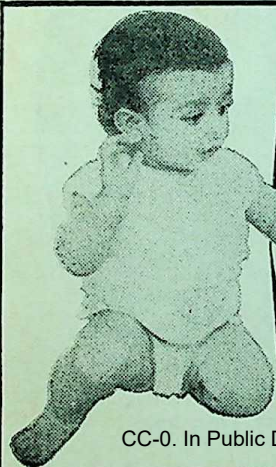
एक बार आगरा की नागरी प्रचारिणी सभा में शरद पूर्णिमा की रात को एक विराट कवि-सम्मेलन का आयोजन किया गया था, जिसके लिए **'चांदनी शरद की'** समस्या रखी गयी थी। आचार्य पंडित पद्मसिंह शर्मा उन्हें बुलाने के लिए खासतौर से हरदुआगंज गये, लेकिन प्रवास-भीरु होने के कारण वे आगरा चलने को तैयार नहीं हुये। जब आचार्य शर्मा ने उनसे कहा, "कविजी, आप आगरा नहीं चल सकते तो न सही, कवि सम्मेलन के लिए प्रसाद-स्वरूप कुछ पंक्तियां ही दे दीजिए।" उन्होंने कुछ क्षणों में ही **'चांदनी शरद की'** समस्या की पूर्ति करके दे दी। वह पूर्ति इस प्रकार थी :

देखिये, इमारतें, मजार दुनिया के सारे
रोजे ने, कहो तो शान किसकी न रद की
हीरा, पुखराज, मोतियों की दर दूर कर
शंकर के शैल की भी सूरत जरद की
शौकत दिखा दी यमुना के तीर शाहजहां
आगरे ने आबरु हरम की गरद की
धन्य मुमताज बेगमों की सरताज
तेरे नूर की नुमायश है चांदनी शरद की

शंकर देश-भक्ति के भव्य भावों के पोषक भी थे। उन्होंने देशप्रेम और देशोद्धार की भावना से परिपूर्ण अनेक कविताएं लिखी हैं। समाज-सुधार विषयक उनकी कविताओं से तो बहुत से लोगों ने प्रेरणा ली है।

शंकर छंद, रस और अलंकारों के पूर्ण ज्ञाता ही नहीं कविता में इनका अभिनव प्रयोग करनेवाले उच्च-कोटि के कवि थे। उन्होंने हिंदी कविता को कई नये छंद प्रदान किये।
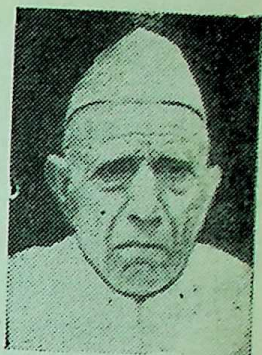
लेखक

उनकी एक बड़ी विशेषता यह थी वे मात्रिक और मुक्तक छंदों में वर्णों की समान संख्या रखते थे। अपनी कविताओं में उन्होंने इस नियम का कठोरता से निर्वाह किया है। छंदशास्त्र के शंकर-जैसे ज्ञाता बहुत कम हुए हैं, यह बात काव्यशास्त्र के अनेक आचार्यों ने स्वीकार की है।

बात सन १९२८ की है। उन दिनों मैं ३० वर्ष का था और कविता-प्रेमी होने के कारण ब्रजभाषा के ज्ञात-अज्ञात अनेक कवियों के पद, छंद, कवित्त, सवैये मैंने याद कर रखे थे। स्वर्गीय आचार्य पंडित पद्मसिंह शर्मा को भी मैंने सस्वर अनेक कवित्त और सवैये सुनाये। आचार्य पद्मसिंह शंकरजी के एक तरह से भक्त थे। उन्होंने मुझसे कहा, "तुम शंकरजी की कविताएं याद करो, वे बहुत अच्छी हैं।" उनके कहने से मैंने शंकरजी की कविताएं पढ़ीं तो उनमें मुझे विशेष आनंद मिला फिर तो मैंने उनकी बीसियों कविताएं याद कर

डालीं, और उन्हें कविता-प्रेमियों के बीच बड़े उत्साह से सुनाने लगा।

सन् १९३२ में इलाहाबाद में द्विवेदी-मेला हुआ। उन दिनों मैं इलाहाबाद से प्रकाशित होनेवाले मासिक पत्र 'विद्यार्थी' और 'खिलौना' में काम करता था। द्विवेदी मेले में कवि दरबार का भी आयोजन किया गया था। इस दरबार में मैंने उनकी और स्नेहीजी की लिखी कविताएं इतने मनोयोग से सुनायीं कि श्रोता झूम उठे थे। कवि दरबार में द्विवेदीयुग के कवियों की कविताएं सुनानेवालों में मैं प्रथम रहा था और मुझे एक स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ था। कविताएं शंकरजी की थीं, मैं तो बस सस्वर उनका पाठ करने वाला था।

सन् १९३२ में जब वे असाध्य रोग से बीमार पड़ गये तो उनके देहावसान से कोई एक सप्ताह पूर्व में उनकी चरण-रज लेने हरदुआगंज पहुंच गया। उनके सुपुत्र श्री हरिशंकर भी पिताजी की सेवा में वहां मौजूद थे। वे रोग से निर्बल हुए चारपाई पर आंखें बंद किये पड़े थे। भाई हरिशंकर ने मेरा परिचय कराते हुए पिता से कहा, "बाबू, ये दुबेजी आयें हैं। उन्हें आपकी बहुत-सी कविताएं याद हैं।" उनकी आंखें खुलीं। मुझे अपने पास बैठे देख क्षीण आवाज में वे मुझसे बोले, "अच्छा, मेरी कौन-कौन कविताएं आपको याद हैं?" मेरे मुंह से निकल गया, "महाराज, आप जो कहें सो सुनाऊं!"

मैंने जोश में यह कह तो दिया लेकिन मुझे यह संकोच हो रहा था कि उनको पसंद की कोई ऐसी कविता न निकल आये जो मुझे याद न हो। लेकिन मेरी लाज रह गयी। उन्होंने दो-तीन कविताएं बारी-बारी से मुझे सुनाने का आदेश दिया और सौभाग्य से वे सभी मुझे याद थीं। मैंने स्वर के साथ कविताओं को उनके रचयिता को सुनाया। मुझे याद है कि उस समय जो कविताएं मैंने उन्हें सुनायी थीं उनमें एक कवित्त था—**'बाहर बांधि गिरिस गये हरि को मुख देख न नंद गली को।'** एक दूसरी कविता भी थी, जो ७३ वर्ष की आयु में अभी भी मुझे याद है—

भरिबो है समुद्र को शम्बुक में,
छिति को छिगुनी पर धारिबो है
बांधिबो है मृणाल सों मत्त करी,
जूही फूल सों शैल बिदारिबो है
गनिबो है सितारन को कवि शंकर
रेणु सों तेल निकालिबो है
कविता समुझाइबो मूढ़न को,
सविता गहि भूमि पै डारिबो है

मेरे मुख से अपनी कविताएं सुनकर महाकवि शंकर भाव-विह्वल हो गये और उनकी आंखों से आंसू ढुलक आये। मैंने विनीत प्रार्थना कर अपनी डायरी में नोट की हुई उनकी एक कविता के नीचे उनके हस्ताक्षर करा लिये। वे अब भी मेरे पास सुरक्षित हैं।

—११२, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा-२

ताज में दफन नहीं हैं मुमताजमहल

• विमला मेहता

ताजमहल, आगरा और मुमताज-महल, ये तीनों शब्द एक-दूसरे के पर्याय बन चुके हैं। खूबसूरत ताज के गर्भ में सुंदरी मुमताज सोयी हुई है, परंतु बहुत कम को यह मालूम है कि मुमताज की आगरा में न तो मृत्यु हुई थी और न ही उसे आगरा में दफनाया गया था। आगरा से सैकड़ों किलोमीटर दूर मध्यप्रदेश के छोटे-से, परंतु ऐतिहासिक एवं राजनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण शहर बुरहानपुर में उसने अंतिम सांस ली। बुरहानपुर में ही मुमताज को सुपुर्दे खाक किया गया था।

मुगल काल में दक्षिण की विजय तथा उत्तर की सुरक्षा की दृष्टि से बुरहानपुर नगर का प्रशासनिक महत्त्व बढ़ गया था।

शाहजहां ने अपने यौवन के अनेक वर्ष बुरहानपुर में बिताये और अंत में अपनी प्रेयसी को भी यहीं खोया।

मुमताज को दवा नहीं मिल सकी

सन १६३१ में दक्षिण भारत में खानजहां लोदी ने विद्रोह का झंडा उठाया था। शाहजहां बुरहानपुर आया। मुमताज साथ में थी। उस दिन मंगलवार था, मुमताज को प्रसव-पीड़ा आरंभ हुई। पूरे चौबीस घंटे तक वह मौत से जूझती रही। मुमताज की हालत बिगड़ती गयी।

सबसे अंधेरी रात!

हिजरी सन १०४०, जीकाद १७, बुधवार जून, १६३१ की वह काली रात थी। शाहजहां अपने कई ईरानी हकीमों तथा वैद्यों के साथ बैठा उस टिमटिमाती लौ कीकंपकपी देख रहा था। बुधवार की

ढलती रात को मुमताज ने एक सुंदर बच्ची को जन्म दिया। बच्ची उसी समय मर गयी। थोड़ी देर बाद मुमताज ने भी प्राण त्याग दिये। कहा जाता है कि कड़ा परदा होने के कारण कोई भी हकीम या वैद्य मुमताज की चिकित्सा नहीं कर पाया, नहीं तो शायद वह बच जाती। बुरहानपुर की यह सबसे अंधेरी रात थी।

गुरुवार की शाम को आहूखाना के पाइनबाग में मुमताज को दफनाया गया। यह इमारत आज भी अपने मूल रूप में विद्यमान है।

यह बाग शाही किले के सामने ताप्ती नदी के दूसरे किनारे पर है। शाहजादा दानियाल की शिकारगाह थी इसमें। अहाते में एक हौज, एक महल और बारादरी शाहजहां की बनवायी हुई हैं।

कहां दफनाया गया!

यह भी एक दुखद संयोग है कि इसी बाग में मुमताज को छह महीने तक दफनाये रखा गया और इसी बाग में औरंगजेब दक्षिण की लड़ाई पर जाते वक्त हीराबाई, उर्फ जैनाबादी बेगम के चंचल रूप-सौंदर्य का शिकार हुआ था।

'अमले सालाह', 'बादशाहनामा', 'मआसिरूल उमरा' और प्रख्यात इतिहासकारों के अनुसार मुमताज की लाश को फिर खोदा गया और छह महीने उसी बाग में रखने के बाद आगरा लाया गया।

शव पर शपथ

कहा जाता है कि मुमताज की मृत्यु के बाद बादशाह का मन हरम में नहीं लग सका। कुछ ही दिनों में उसके बाल सफेद हो गये। उसने मलमल के सफेद कपड़े पहनना शुरू कर दिया। मुमताज के शव पर हाथ रखकर उसने शपथ खायी कि तेरी यादगार में ऐसी इमारत बनवाऊंगा जिसका मुकाबला न हो सके।

आगरा तब भारत की राजधानी थी। शाहजहां अपनी ही देखरेख में इमारत बनवाना चाहता था। राजधानी से बरसों दूर रहना भी संभव न था, अतः शाहजहां ने आगरा में इमारत बनवाने का निश्चय किया।

परंपरा रही है कि मुगल बादशाहों की कोई भी इमारत तब तक संपूर्ण नहीं कही जा सकती, जब तक उसमें बाग-बगीचे, नहरे न हों और पानी न उछलता हो। इसलिए इमारत को यमुना-किनारे बनवाना तय किया गया। तब यमुना का प्रवाह बहुत गतिशील था।

हवेली पर ताजमहल

यमुना के किनारे बड़े-बडे रईसों की हवेलियां बनी हुई थीं। जब उन्हें बादशाह की मर्जी मालूम हुई तब सभी ने अपनी-अपनी हवेलियां तुड़वाकर बादशाह को जमीन नजर करने की होड़-सी लगा दी।

शाहजहां को केवल जयपुर-आमेर वालों की हवेली, जो राजा जयसिंह की हवेली कहलाती थी, पसंद आयी। हवेली तुड़वा दी गयी और वहीं ताजमहल बना।

जयसिंह की हवेली और बगीचा

शानदार थे, अतः बाद में जयपुरवालों ने कहना शुरू कर दिया कि उनकी हवेली को ही ताजमहल बनाया गया। यह अतार्किक तो है ही बल्कि असंगत भी है।

स्थान चुन कर बादशाह ने ईरान, तुर्की, फ्रांस, इटली आदि से कई शिल्पकारों को बुलाया। वेनिस का प्रसिद्ध सुनार तथा जौहरी जैरोनिमो वैरोनिओ भी था। शीराज से उस्ताद ईसा अफंदी भी आया था। उसने सुझाव देखे-भाले,

जुलूस पर इतना खर्च हुआ कि क्लियोपेट्रा के उस ऐतिहासिक जुलूस की याद दिलाता था, जब क्लियोपेट्रा अपने देश से पुत्र-सहित जूलियस सीजर (उसका प्रेमी तथा उसके पुत्र का पिता) के पास आयी थी।

ताजमहल का निर्माण अठारह वर्ष तक चलता रहा। शाहजहां की इच्छा थी कि मेरे बाद काले पत्थर की ऐसी ही खूबसूरत इमारत यमुना के दूसरे किनारे पर बनायी जाए, और दोनों को एक पुल
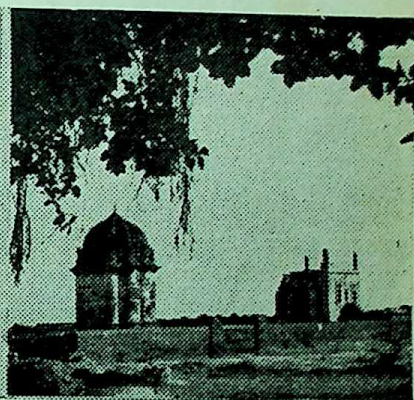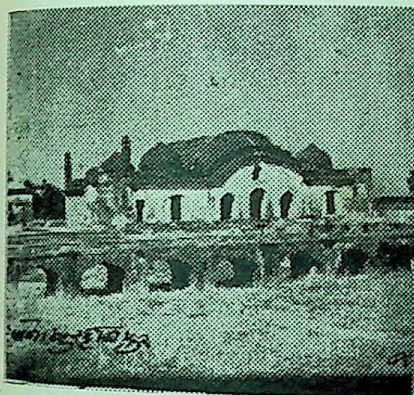
बुरहानपुर में शाही किले के सामने ताप्ती नदी के किनारे पर स्थित आहूखाने के पाइन बाग में स्थित मुमताजमहल को पहली बार दफनाया गया

फिर उसका प्रारूप स्वयं तैयार किया।

अंत में, पूरी रूप-रेखा तैयार हो गयी। नमूने के अनुसार कब्र की जगह चुनकर जगह ठीक की गयी। बुरहानपुर से मुजताज की लाश कब्र से निकाली गयी, और उसे विशाल जुलूस के साथ आगरा लाया गया, और दफनाया गया।

इतिहासकारों की टिप्पणी है कि

से जोड़ दिया जाए। लेकिन औरंगजेब कंजूस था। उसने नयी इमारत बनवाने की बजाय इसी ताजमहल में मुमताज की कब्र के पास ही शाहजहां को भी दफना दिया। इस प्रकार उसने दो प्रेमियों को अनायास ही पास-पास सुला दिया!

—२ तालकटोरा लेन,
नयी दिल्ली-११०००१.

विश्व कप फुटबाल जहां खिलाड़ी बेचे और खरीदे जाते हैं

● योगराज थानी

ओलंपिक खेलों के बाद दुनिया की सबसे ज्यादा दिलचस्पी विश्व कप (फुटबाल) प्रतियोगिताओं में होती है। ओलंपिक खेलों की तरह विश्व कप प्रतियोगिता का आयोजन भी हर चार साल बाद किया जाता है। अंतर केवल इतना है कि ओलंपिक खेलों में केवल शौकिया खिलाड़ी भाग ले सकते हैं जबकि विश्व कप में कोई भी खिलाड़ी (शौकिया या पेशावर) भाग ले सकता है, लेकिन एक बार विश्व कप में भाग लेने के बाद उस पर पेशावर खिलाड़ी की मोहर लग जाती है, और फिर वह ओलंपिक-जैसी किसी भी गैर-पेशावर प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकता।

विश्व कप प्रतियोगिता में केवल

लाखों की लागत से बना स्टेडियम जहां दसवीं विश्व कप प्रतियोगिता होगी
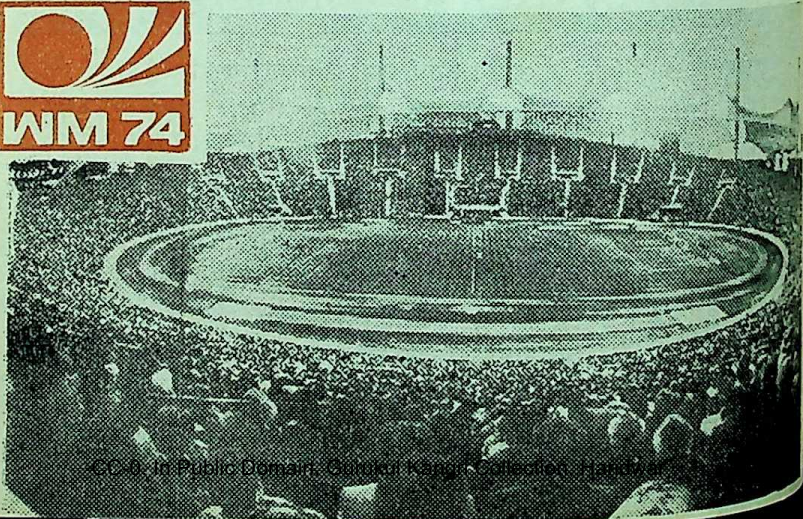
पेशावर खिलाड़ियों का ही बोलबाला रहता है। फुटबाल की दुनिया में जो अग्रणी देश हैं, (जैसे ब्राजील, चिली, स्वीडन, उरुगुए, इटली, स्पेन आदि) उनमें फुटबाल के खेल में केवल पेशावर खिलाड़ियों की ही प्रतिष्ठा है। दुनिया के किसी भी चोटी के खिलाड़ी को खरीदने के लिए वे मुंहमांगी रकम देते हैं।

संसार में केवल ब्राजील ऐसा देश है जिसे तीन बार विश्व कप जीतने का गौरव प्राप्त हुआ। इसलिए ब्राजील ने विश्व कप (जिसे जूले रीमे कप कहा जाता है) पर सदा के लिए अपना अधिकार जमा लिया। सबसे प्रसिद्ध फुटबाल खिलाड़ी, पेले भी ब्राजील का ही है।

कहते हैं कि एक बार इटली के एक क्लब ने ब्राजील सरकार के सामने यह सुझाव रखा था कि वे केवल एक साल के लिए पेले को उन्हें दे दें और उसके बदले वे उन्हें २१ लाख रुपये देंगे। अल्जीरिया के एक क्लब ने पेट्रोल और कोयले से भरा हुआ पूरा जहाज देने को कहा। पेले को खरीदने के लिए एक बार नहीं बल्कि कई बार बोलियां लगीं लेकिन ब्राजील सरकार ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि पेले ब्राजील का देवता है और देवता किसी भी कीमत पर नहीं बेचे जा सकते।

दसवें विश्व कप की तैयारियां

इस वर्ष १३ जून से ७ जुलाई तक पश्चिम जरमनी में दसवीं विश्व कप प्रतियोगिता के अंतिम मुकाबलों का आयोजन होनेवाला है। अंतिम मुकाबलों में १६ टीमें पहुंची हैं जिन्हें चार ग्रुपों में बांट दिया गया है। विश्व कप के अंतिम मुकाबलों में पहुंचना ही अपने आप में बहुत बड़ी बात समझी जाती है। अंतिम मुकाबलों से पहले क्षेत्रीय मुकाबलों का आयोजन होता है जिसमें दुनिया के लगभग ९० देशों की टीमें भाग लेती है। उन्हीं में से १६ टीमों का चुनाव अंतिम मुकाबलों के लिए किया जाता है।

पश्चिम जरमनी और पूर्व जरमनी दोनों को पहले ग्रुप में रखा गया है। इसके अलावा इस ग्रुप में आस्ट्रेलिया और चिली की टीमों को रखा गया है। ब्राजील की टीम को ग्रुप दो में रखा गया है। इसी ग्रुप में स्कॉटलैंड, स्पेन और जाइरे की टीमें भी

विश्व-प्रसिद्ध खिलाड़ी पेले

हैं। ग्रुप–३ में उरुगुए, बलगारिया, हालैंड और स्वीडन को रखा गया है। ग्रुप–४ में इटली, अर्जेण्टीना, पोलैंड और हाइटी हैं।

अंतिम मुकावलों में पहुंची १६ टीमों के मुकावलों के लिए पश्चिमी जरमनी में अलग-अलग स्थानों पर ९ स्टेडियम तैयार किये गये हैं। कुल ३८ मैच होंगे।

विश्व कप का इतिहास

यों ओलंपिक खेलों में भी फुटवाल के खेल को शामिल किया जाता है लेकिन ओलंपिक विजेता फुटवाल की टीम और विश्व कप विजेता फुटवाल की टीम के स्तर में जमीन-आसमान का अंतर होता है। १९२० में एंटवर्प में हुए ओलंपिक खेलों में वेल्जियम, १९२४ में पेरिस में हुए ओलंपिक खेलों में उरुगुए और १९२८ में एम्स्टर्डम में हुए ओलंपिक खेलों में भी उरुगुए की टीम को फुटवाल के खेल में ओलंपिक विजेता बनने का गौरव प्राप्त हुआ था। इसी बीच कुछ देशों में पेशावर फुटवाल का प्रचलन बढ़ने लगा। और तो और इंग्लैंड में भी कई पेशेवर खिलाड़ी किसी क्लव की ओर से खेलने के लिए पैसे मांगने लगे। इसी बीच फ्रांस के एक फुटवाल प्रेमी जूले रिमे के मन में पेशावर खिलाड़ियों की एक अलग प्रतियोगिता आयोजित करने का विचार आया। कई देशों ने वड़ा उत्साह दिखाया। १९२९ में अंतर्राष्ट्रीय फुटवाल संघ की बैठक में तय किया गया कि इसे खुली प्रतियोगिता का रूप दिया जाना चाहिए और इसमें पेशेवर और शौकिया दोनों प्रकार के खिलाड़ियों को भाग लेने की अनुमति मिलनी चाहिए। फिर यह प्रश्न उठा कि पहली विश्व कप प्रतियोगिता का आयोजन किस देश में किया जाना चाहिए। उरुगुए में उन दिनों फुटवाल का खेल वहुत लोकप्रिय था, इसलिए १९३० में पहली विश्व कप-प्रतियोगिता का आयोजन उरुगुए में किया गया।

विश्व कप के पुराने विश्वविजेता

सन	जहां मैच खेला गया	विजेता	रनर-अप
१९३०	उरुगुए	उरुगुए	अर्जेण्टीना
१९३४	इटली	इटली	चेकोस्लोवाकिया
१९३८	फ्रांस	इटली	हंगरी
१९५०	ब्राजील	उरुगुए	ब्राजील
१९५४	स्विट्जरलैंड	जरमनी	हंगरी
१९५८	स्वीडन	ब्राजील	स्वीडन
१९६२	चिली	ब्राजील	चेकोस्लोवाकिया
१९६६	इंग्लैंड	इंग्लैंड	पश्चिम जरमनी
१९७०	मैक्सिको	ब्राजील	इटली

शिकार-कथा

साहेवाल का मगरमच्छ

● खानबहादुर शमशेरखां

पाकिस्तान में साहेवाल एक गांव है। उसके पास ही शाहमद नामक एक नहर बहती है।

कुछ वर्षों पहले की बात है। अक्तूबर माह की एक सुबह पांच-छह बच्चे कपड़े उतारकर नहर में कूद गये। दस मिनट ही बीते थे कि बच्चों की चीख-पुकार से वातावरण कांपने लगा। इस शोर को सुनकर लोग नहर के पास दौड़े। नहर के पास पहुंचते ही उनके होश-हवास उड़ गये। नहर में तैरने के लिए कूदनेवाले बच्चों में से दो बच्चों की टांगें एक भयानक मगरमच्छ के मुंह में थीं। बच्चों की चीखों से जमीन-आसमान कांप रहे थे। उनके खून से नहर का पानी सुर्ख हो रहा था।

शीघ्र ही यह खबर गांव में फैल गयी। आनन-फानन गांव के लोगों की एक भीड़ पुल के पास एकत्र हो गयी। उनमें से अधिकांश के पास कुल्हाड़ियां और लाठियां थीं।

दोनों बच्चे अभी तक मगरमच्छ के मुंह से निकलने के लिए तड़प रहे थे। एकाएक एक बच्चा मगरमच्छ के मुंह से अपने पैर छुड़ाने में सफल हो गया और किनारे पर पहुंचने की चेष्टा करने लगा। मगरमच्छ ने जब शिकार हाथ से जाते हुए देखा तब उसने बिजली की गति से मुड़कर अपनी पूंछ बच्चे की कमर पर मारी, फलतः बच्चा किनारे पर आ पड़ा। अब मगरमच्छ दूसरे बच्चे को मुंह में लेकर किनारे तक आया तो लोगों ने उस पर ईंटों, पत्थरों, और लाठियों की वर्षा कर दी। दूसरा बच्चा अभी तक मगर के मुंह से निकलने का प्रयत्न कर रहा था। इसी बीच मगरमच्छ ने बच्चे पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए थोड़ा-सा मुंह खोला। तभी बच्चा उसके मुंह से निकल आया। अब लोगों ने मगरमच्छ पर लाठियों और पत्थरों की वर्षा तेज कर दी जिससे वह पानी में डुबकी लगा गायब हो गया।

तब तक गांव का जमींदार भी अपनी बंदूक लेकर वहां पहुंच गया था। नहर के दोनों ओर दो-तीन मील की दूरी तक

देखा गया, पर कुछ पता नहीं चल सका कि मगरमच्छ कहां गायब हो गया।

लोग इस दुर्घटना को भुला न सके थे कि एक अन्य दुर्घटना हो गयी।

सड़क की मरम्मत करनेवाला मजदूरों का इंचार्ज एक मेट नहर के किनारे शाम की नमाज पढ़ा करता था। उस दिन भी वह नहर के किनारे एक साफ जगह देखकर हाथ-मुंह धोकर नमाज के लिए खड़ा हो गया। वह सिर झुकाने के लिए झुका ही था कि उसने अनुभव किया जैसे लोहे की दो कीलें और बहुत-से कांटे उसकी एड़ी में उतरते जा रहे हैं। अगले क्षण उसे जोर का झटका लगा और उसने महसूस किया कि कोई शक्ति उसे पीछे घसीट रही है। उसने मुड़कर देखा तो उसके होश-हवास उड़ गये। एक भयानक मगरमच्छ उसे एड़ी से पकड़ पानी की ओर घसीट रहा था।

मेट काफी हृष्ट-पुष्ट था। उसने सहायता के लिए शोर मचाया और लपक-कर पास ही स्थित शीशम के तने को मज-बूती से पकड़ लिया। मेट की चीख सुनकर दो बेलदार कस्सियां लेकर दौड़ पड़े। उन्हें देखकर मगरमच्छ पूरी शक्ति से मेट को खींचने लगा। बेलदारों को देख-कर मेट का भी उत्साह बढ़ गया। वह जोर लगाकर अपना पांव छुड़ाने लगा। अंत में उसकी एड़ी मगरमच्छ के मुंह में रह गयी और वह मुक्त हो गया। मगरमच्छ एक बार फिर नहर में ओझल हो गया।

यह खबर आस-पास गांवों में जंगल की आग की तरह फैल गयी। लोग आतं-कित हो उठे। उसी दिन उस जगह से [illegible] मील की दूरी पर एक दुर्घटना हुई। एक चरवाहा अपने पशु गांव की ओर ला रहा था। एक बछड़ा नहर के किनारे के साथ-साथ जा रहा था। एकाएक नहर में हलचल हुई। मगरमच्छ निकला और बछड़े को टांग से पकड़कर नहर में [illegible]

गया। चरवाहे ने भागकर गांव के लोगों को यह दुर्घटना सुनायी। गांव के लोग लाठियां लेकर घटनास्थल पर पहुंचे, पर उस समय तक मगरमच्छ बछड़े का कुछ भाग खाकर और कुछ किनारे के साथ पानी में ही फेंककर गायब हो गया था।

कुछ दिनों बाद एक जमींदार की बहुत अच्छी नस्ल की गाय मगरमच्छ का शिकार हो गयी। जमींदार यह समाचार सुनकर गुस्से से पागल हो गया और उसी समय बंदूक लेकर उसकी खोज में निकल पड़ा। एक स्थान पर मगरमच्छ किनारे पर धूप में लेटा हुआ नजर आया। जमींदार ने जोश में दूरी की परवाह किये बिना फायर कर दिया। मगरमच्छ भागकर नहर में गायब हो गया। उसका विचार था कि गोली मगरमच्छ के किसी-न-किसी भाग में अवश्य लगी है और अब वह जख्मी होकर तड़प-तड़पकर ही मर जाएगा। मुरगाबियों और तीतर का शिकार करने-वाला जमींदार मगरमच्छ की खाल की मजबूती का अनुमान न लगा सका था।

इस फायर का यह लाभ अवश्य हुआ कि कुछ दिन के लिए खूनी मगरमच्छ की गतिविधियां समाप्त हो गयीं। लोग जमींदार की बातों पर विश्वास करने लगे थे कि चार दिन बाद सहसा मगरमच्छ प्रकट हुआ और नहर पार करते हुए एक पालतू कुत्ते को हड़प कर गया। समाचार फैलते ही लोगों में भय और घबराहट की एक लहर दौड़ गयी। शाहमद नहर और उसके आसपास के गांववाले बेहद घबरा गये थे। कई स्थानों पर मगरमच्छ को पकड़ने के लिए जाल भी लगाये गये। एक बार वह जाल में फंसा भी पर कुछ ही सेकंड में जाल की रस्सी तोड़कर निकल गया।

मगरमच्छ के आतंक की खबर उस इलाके के एस. डी. ओ. सैयद फैयाज हुसैन शाह तक पहुंची। शाह बहावलपुर के
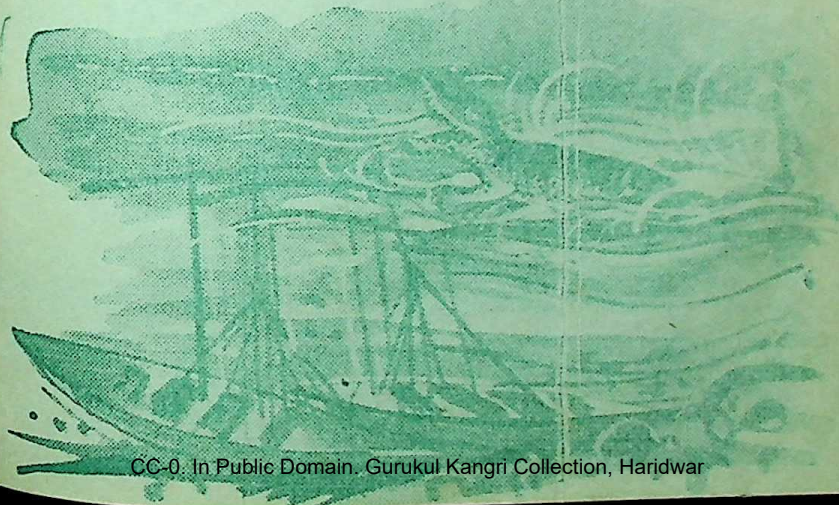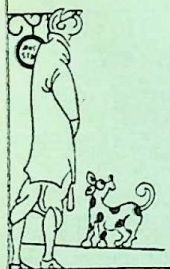
प्रसिद्ध शिकारी थे। कुछ जरूरी कामों से छुट्टी पाकर शाह साहब राइफल और कारतूस लेकर शाहमद नहर के इलाके में पहुंच गये।

लोगों के वहम और भय को दूर करने के लिए उन्होंने कहा कि आकार की दृष्टि से मगरमच्छ खासा अधेड़ प्रतीत होता है, इसलिए आयु के अनुपात से उसकी खाल और मांस निश्चय ही बहुत सख्त होगा। गरदन और दिमाग, दो ऐसे स्थान हैं जहां गोली पूरी तरह प्रभाव डाल सकती है। हो सकता है, दूर से फायर करने में निशाना लेने में गलती हो गयी हो और इस प्रकार वह हर बार बच निकलने में सफल हो जाता हो।

शाहमद नहर देपालपुर नहर की शाखा है। शाह साहब का विचार था कि मगरमच्छ वास्तव में सतलज नदी में से देपालपुर नहर में प्रविष्ट हुआ होगा पर इतने विशाल आकार का मगरमच्छ नहर के शटर में से किस प्रकार दाखिल हुआ होगा, यह समझ में नहीं आता था। संभव था, सतलज में से मगरमच्छ ने खुश्की के रास्ते नहर में प्रवेश किया हो। तीसरी सूरत नजर नहीं आती।

अगले दिन अपने अरदली और इलाके के मेट को लेकर शाह साहब उन सभी जगहों का मुआयना करने के लिए निकले जहां मगरमच्छ हमले कर चुका था। वे नहर में पानी कम करने का आदेश दे चुके थे। मगरमच्छ अधिकतर हमले पुलों के पास करता था। कारण पुल के नीचे छिपने के लिए उपयुक्त स्थान थे।

दोपहर का खाना खाने के बाद शाह साहब ने राइफल उठायी और अरदली को साथ लेकर मगरमच्छ के इलाके में घूमने-फिरने लगे। संभव था कि मगरमच्छ इस इलाके से निकल गया हो, पर उसके लिए शाह साहब ने यह प्रबंध किया था कि जैसे ही कोई उसे किसी स्थान पर देखे, तुरंत नहरी तार द्वारा सूचित कर दिया जाए, पर सूचना देने की नौबत ही नहीं आयी। एक स्थान पर पानी जहां जरा कम था, मगरमच्छ लेटा हुआ नजर आ गया। अरदली को पीछे हटने का इशारा कर शाह साहब धीरे-धीरे आगे बढ़े। उपयुक्त दूरी से निशाना लेकर उन्होंने छह गोलियां चला दीं। उनमें से चार उसके दिमाग में और दो गरदन में लगीं। मगरमच्छ की शक्ति नष्ट हो चुकी थी, पर वह जीवित था और तड़प रहा था। गोलियों की आवाज सुनकर लोग लाठियां और कुल्हाड़ियां लेकर दौड़ पड़े और पागलों की तरह उसकी सख्त खाल पर चोट करने लगे। पहली बार उन्हें बदला लेने का अवसर मिला था। इतनी सख्त पिटाई के बावजूद मगरमच्छ के प्राण तीन घंटे बाद निकले। मगरमच्छ की आयु का अनुमान उसकी पूंछ पर पड़े हुए निशानों से लगाया जाता है। इस प्रकार देखने पर उस भयानक मगरमच्छ की आयु बीस वर्ष निकली। आठ मन और चौदह फुट का वह था। ●

फिल्म-आंदोलन और फिल्म-निर्माण

● उमाशंकर

कुछ नया कर गुजरने का हौसला रखनेवाले अच्छे निर्माताओं के लिए फिल्म-उद्योग सिर्फ एक बंद गली है, जिसमें दो-चार कदम आगे चलकर या तो पीछे लौट आना होता है या उस बंद गली के आखिरी मकान में बंद होकर दम तोड़ देना होता है। और ऐसे वातावरण में किसी अच्छी फिल्म को बनाने का अनुभव, आग की लपटों से खेलने का अनुभव है। फिल्म 'आंदोलन' के निर्माता के रूप में मुझे भी कुछ ऐसे ही खट्टे और कड़वे अनुभवों से गुजरना पड़ा। फिल्म-निर्माण की सारी कठिनाइयां निर्माता के सामने होती हैं, उसे ही सारी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। निर्माता ही निर्देशक को नियुक्त करता है, निर्देशक उसके मन की इच्छाओं के अनुसार कार्य करता है। किसी भी जमे हुए निर्माता की पूरी यूनिट उसका हर आदेश मानती है, लेकिन अकसर नये निर्माता को ऐसी सुविधा सहज ही नहीं मिल पाती।

फिल्म-उद्योग के अधिकतर कलाकार अपने को कलाकार न मानकर पेशावर मानते हैं और धन की मात्रा घटाकर या बढ़ाकर उनसे जैसा चाहे काम कराया जा सकता है। उनके सामने पैसा ही एकमात्र मापदंड होता है, कोई कलात्मक स्तर नहीं।

अभिनेत्रियों का भी एकमात्र लक्ष्य पैसा कमाना होता है। हो सकता है, इसी लिए उनके साथ रोज-रोज नये-नये स्कैंडल उछलते हैं। जीनत अमान में यद्यपि अभिनय की कोई प्रतिभा नहीं, लेकिन पीठ पर देवानंद का हाथ होने से आज वह स्टार बन गयी है। राजकपूर, दिलीप कुमार, मीनाकुमारी, नरगिस और वहीदा रहमान—जैसे कम ही कलाकार होते हैं जो अपने मन के अनुसार अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर पाते हैं।

कितनी बड़ी विडंबना है कि पहले अधिकतर अभिनेत्रियां वेश्या-परिवारों से आती थीं, लेकिन फिल्म में नग्न प्रदर्शन कतई नहीं करती थीं, जबकि आज अधिकतर अभिनेत्रियां संभ्रांत परिवारों से आती हैं और सस्ती लोकप्रियता पाने के लिए नग्न प्रदर्शन को उतावली रहती हैं।

फिल्म-उद्योग का माहौल निहायत गंदा है, तभी तो प्रेमचंद, भगवतीचरण वर्मा–जैसे अच्छे लोग वहां गये और लौट आये। कुछ को छोड़कर शेष गैर पढ़े-लिखे लोग हैं। जो पढ़े हैं, उन्हें भी साहित्यिक कहानी में कोई रुचि नहीं। वे लोग अंगरेजी के घटिया उपन्यासों को ही रूपांतरित कर फिल्माने में लगे रहते हैं।

हिमांशु राय, व्हीं. शांताराम , के. आसिफ, महबूब अपनी फिल्मों के माध्यम से भारतीय संस्कृति, समाज और साहित्य को प्रस्तुत करते थे, अपनी कला के माध्यम से दर्शक के मन को छूने की क्षमता रखते थे, उनकी फिल्में उच्चकोटि की होती थीं; अब अधिकतर निर्माता धन कमाने के चक्कर में रहते हैं। लगता है कि 'हंटर-वाली' का युग फिर लौट आया है।

भारतीय सभ्यता, संस्कृति और समाज को महत्त्व न देने से ही युवा पीढ़ी का चरित्र और देश का सब-कुछ बिगड़ रहा है। युवा पीढ़ी को जब कैबरे के अतिरिक्त और किसी चीज का ज्ञान ही नहीं होगा, तब कैसे वे स्वयं अच्छे बनेंगे और कैसे अपने बच्चों, आनेवाली पीढ़ी को सुधारेंगे ? और फिल्मों में तो कैबरे का चित्रण भी अवास्तविक होता है। कौन-सी ऐसी जगह या क्लब है इस देश में, जहां सौ-सौ लड़कियां एक साथ कैबरे करती हों? धन बटोरने के लिए इस प्रकार के प्रदर्शन से युवा पीढ़ी के कच्चे मन की भावुकता का लाभ उठाकर उन्हें बिगाड़ा जा रहा है, जब कि उन्हें वाल्मीकि, कालिदास और ऋषि-मुनियों की विचार-धारा से भी परिचित कराया जाना चाहिए।

हमारी तथाकथित 'हिंदी' फिल्में हमारी राष्ट्रभाषा भी बिगाड़ रही हैं। उनके कारण शायद ऐसी स्थिति आ जाए, जब लोग 'धर्मेन्द्र' को 'धरमिन्दर'

'आंदोलन' में गांव का जुलूस

लेखक

बोलेंगे, 'मुहूर्त' को 'महूरत' और 'गुप्त-ज्ञान' को 'गुप्त ग्यान' लिखा जाया करेगा। पहले यह आशा बनी थी कि हिंदी फिल्मों के माध्यम से हिंदी का प्रचार होगा, हिंदी विकसित होगी और अधिक से अधिक लोग उसे समझने लगेंगे। . . . लेकिन अब तो इन फिल्मों के माध्यम से भाषा की सबसे बड़ी हानि हो रही है।

वितरकों का (कु)चक्रव्यूह

अब आवश्यक हो गया है कि फिल्म-उद्योग में अच्छे लोग प्रवेश करें और उसमें व्याप्त गंदगी के खिलाफ आंदोलन करें। इस जहरीले वातावरण में पूना इंस्टीट्यूट से कलाकार आते हैं और बेरोजगार होकर रह जाते हैं। असली समस्या वितरकों की ओर से है। डिस्ट्रीब्यूटरों की वर्तमान व्यवस्था को तोड़ना जरूरी है, क्योंकि निर्माता उन्हीं की इच्छाओं के अनुरूप फिल्में बनाते हैं और वे अपनी फिल्मों में अपने चमचों या बड़े अभिनेताओं और अभिनेत्रियों को लेकर पैसा कमाने की कोशिश करते हैं। इस प्रकार नये कलाकारों का उपयोग नहीं हो पाता, उनकी प्रतिभा कुंठित हो जाती है।

निर्माताओं को डिस्ट्रीब्यूटरों के चंगुल से बाहर आकर अच्छी फिल्में बनानी चाहिए। सरकार को चाहिए कि वे प्रेक्षागृह बनवाये जिनमें अच्छी फिल्में दिखायी जा सकें। ऐसी फिल्मों को देखने के लिए जनता अवश्य जाएगी। साथ ही सरकार को फिल्म बनानेवाले में फिल्म बनाने की योग्यता की जांच की भी व्यवस्था करना चाहिए। ऐसी कसौटी पर परखे बिना निर्माता को फिल्म बनाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। इस तरह सेंसर का कार्य सराहनीय है, लेकिन इसमें और अधिक सख्ती होनी चाहिए।

बड़े निर्माताओं को तो वितरक आसानी से धन दे देते हैं, लेकिन अच्छी फिल्मों के निर्माताओं को कोई विशेष आर्थिक लाभ नहीं होता, कभी-कभी हानि ही हो जाती है।

'सीता और गीता, 'जुगनू', 'जोशीला', 'हीरा-पन्ना', 'जंजीर'-जैसी घटिया फिल्मों के लिए निर्माता को एक-एक प्रदर्शन-केंद्र में वितरक पंद्रह-पंद्रह लाख रुपये दे देते हैं और हमें पांच लाख रुपये भी देने में हिचकते हैं, घबराते हैं। इसी सबके चलते

फिल्म-उद्योग का वातावरण दूषित हो रहा है। क्या हमेशा यही होता रहेगा कि अच्छी फिल्में बनने के बाद बिना प्रदर्शित हुए डब्बों में बंद हो जाया करें ? ऐसी स्थिति में अच्छी फिल्में बनाने का साहस कौन करेगा ?

आजकल शांताराम फिल्में बनाते ही नहीं, राजकपूर 'बॉबी'–जैसी फिल्में बनाने लगे हैं, देवानंद 'हीरा-पन्ना', 'जोशीला,' 'बनारसी बाबू'–जैसी फिल्मों में उलझ-कर रह गये हैं। गुलजार–जैसे लोग अच्छी फिल्में इसलिए बना लेते हैं कि उनके साथ धनी और संपन्न निर्माता हैं।

मेरी फिल्म 'आंदोलन' के बारे में अनेक वितरकों ने मुझसे कहा कि आपने इस प्रकार की अलग ढंग की फिल्म क्यों बनायी ? सन'४२ का आंदोलन भारतीय जीवन में महत्त्वपूर्ण घटना है। उस समय की कुरबानियों से युवा पीढ़ी को परिचित कराना और युवकों को देशहित के लिए प्रेरित करना, साथ ही शहीदों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि, ही फिल्म'आंदोलन'का उद्देश्य है।

लीक से हटकर मेरी फिल्म 'आंदोलन' में रामप्रसाद बिस्मिल की गजल–'हम भी आराम उठा सकते थे घर पे रह-कर, हमको भी मां-बाप ने पाला था दुःख सह-सहकर' और मीरा का भजन—'पिया को मिलन कैसे होय री मैं जानूं नाहीं', वर्मा मलिक का एक राष्ट्रीय गीत तथा जां निसार अख्तर का लोकगीत–'पांच रुपइया दे दे बलम' साथ ही प्रभात-फेरी में गायी जानेवाली बापू की प्रार्थना–'उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहां तू सोवत है' और श्री पार्षद की रचना–'विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झंडा ऊंचा रहे हमारा,' डॉ. इकबाल की गजल–'सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' और पं. वंशीधर शुक्ल का गीत—'मोरे चरखे का टूटे न तार, चरखवा चालू रहे' प्रस्तुत किये गये हैं।
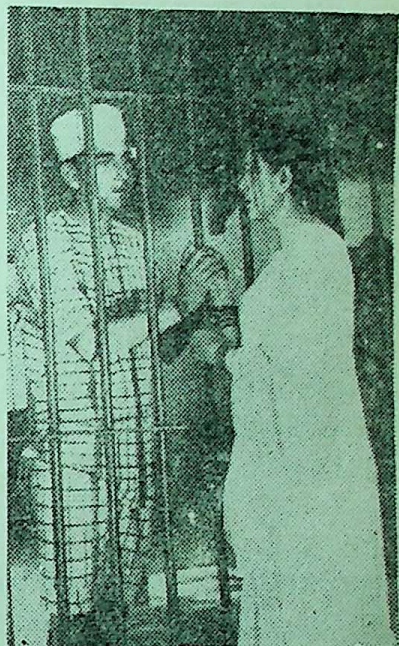
राकेश पांडे और नीतू सिंह 'आंदोलन' में

अब मैं अपने नये उपन्यास 'सूर्यरथ' पर, जो कोणार्क मंदिर बनानेवाले शिल्पियों के जीवन पर लिखा गया है, अगली फिल्म बना रहा हूं। फिल्मों के लिए साहित्यिक उपन्यासों को चुनना ही श्रेयस्कर है। ●

स्वप्न का संसार

डूबने के पूर्व चंदा कह गया यों
सूर्य मेरे स्वप्न का संसार लेना
रात भर शशि रूप की फसलें उगाए
खेत में है चांदनी घूंघट उठाए
यामिनी ने बांध बांधा रूप का, पर
चंद्रमुख वह घन-पटल में डूब जाए
रूप-प्यासे दृग हमारे कह गये यों
रूप का अवतार तुम हर बार लेना
प्यार की रसमय सदा से है कहानी
किंतु हैं गलहार की कांटे निशानी
प्यार का क्षण एक, पर सुधि जन्मभर की
नव मिलन के साथ बिछुड़न है पुरानी
बीतने के पूर्व मधुऋतु कह गयी यों
मैं चली, ऐ फूल मेरा प्यार लेना
घिर रहे फिर घन सघन काले गगन में
है बड़ा उत्पात फिर पागल पवन में
इस तरह काजल बरसता है गगन से
दृष्टि है असहाय-सी कितनी नयन में
है उठा तूफान, नौका कह गयी यों
है लहर ऊंची जरा पतवार लेना
दूर है अंबर, धरा है पास मेरे
हास कब मेरा, सदा उच्छ्वास मेरे
देखना है राग थमता, या थमे तू
और तू बिजली गिरा आकाश मेरे
राग जो उर से उठा वह कह गया यों
प्यार का उद्गार हूं, झंकार लेना

—डॉ. चन्द्रप्रकाश वर्मा

देवता सोता ही रहा

देवता सोता ही रहा
हर सांझ हमने जलाये दीये
दीप
आकांक्षाओं के
आशाओं के
भूली, अनभूली
अभिलाषाओं के
सपनों के
बेगाने, अपनों के
यादों के
हृदय की धरोहर
अवसादों के
पर देवता सोता ही रहा

हर सांझ हमने जलाये दीये
दीये
प्रीत के
दुनिया की रीत के
कभी बचपन और
कभी अतीत के
यौवन, उमंगें
प्रणय-गीत के
पर देवता सोता ही रहा
हर सांझ हमने जलाये दीये

—डॉ. कौशल्या गुप्त

गुलाम

राकेश वत्स

उसने आधी सीढ़ियां चढ़कर आटे से भरे कनस्तर को कंधे से उतार-कर अगली सीढ़ी पर रख दिया और कांपती अंगुलियों को जीने की दीवार में गड़ाकर हांफने लगा। थोड़ी देर सुस्ता लेने के बाद धागे से जोड़ी पीतल की कमानी-वाली ऐनक का फोकस ठीक किया और, फिर से कंधे पर लादने के लिए कनस्तर सीढ़ी की नुक्कड़ के बाहर खींचा। फिर जैसे हिम्मत हारकर, ताजे गरम आटे पर हथेली रखकर सोच में डूब गया।

अचानक उसे अपना स्कूल याद हो आया, जिसमें रिटायर होने से पहले की पूरी जवानी उसने बड़े आराम और सम्मान से गुजारी थी। उसे दूर से देखते ही चप-रासी भागा चला आता था। बार-बार मना करने पर भी उसके हाथ की छड़ी और किताबें लेकर फूलदार लताओं से घिरे उसके आफिस में पहुंचा देता था।

उसे दूसरी मंजिल की सीढ़ियों पर किसी के उतरते पैरों को आहट सुनायी दी। वह चौंक गया। बूढ़े शरीर की सारी शक्ति भुजाओं में समेटकर कनस्तर को एक झटके के साथ कंधे पर रखकर जवान आदमी की तरह सीढ़ियां फांदने लगा।

अंतिम सीढ़ी के तुरंत बाद ही उसे जमादारिन आती दिखायी दी। उसका वहम टूटा और वहम टूटने के साथ ही उसका जोश भी जैसे टूट गया। जमादारिन की जगह उसने अपने दामाद राजेश्वर को समझा था। वह किसी के भी सामने बूढा साबित नहीं होना चाहता था, राजेश्वर के सामने तो कतई नहीं। जब कभी मौका मिला था, उसने राजेश्वर को अपनी जवानी के सच्चे किस्से बढ़ा-चढ़ाकर सुनाये थे। सुनाया था कि राजेश्वर की उम्र में वह एक हजार बैठकें और एक हजार दंड हर रोज निकाला करता था। अब किसी के भी सामने शक्तिहीन साबित होना, उसे भरे बाजार में नंगा हो जाने जैसा लगता था।

जमादारिन सीढ़ियां उतर गयी तो वह दीवार के साथ पीठ सटाकर कांपने लगा। उसका मन हुआ कि वह एक बार फिर कनस्तर को उतारकर सुस्ता ले, पर सहसा उसे ऊपर के कमरे से सीमा की सात-आठ महीने की बच्ची की आवाज सुनायी दे गयी। उसकी पसीने से तर बड़ी-बड़ी मूछों के नीचे एक हल्की-सी मुसकान फैल गयी। उसे सीमा का बचपन याद हो आया। सीमा की मां, सीमा को लगभग ऐसी ही उम्र में छोड़कर चल बसी थी। मां का पूरा उत्तरदायित्व उसी को निभाना पड़ा था।

जब आधी से ज्यादा सीढ़ियां चढ़ जाने के बाद भी उसे कोई आता दिखायी न दिया तब उसने एक बार फिर अपनी शक्ति और अपने जोश को अर्जित किया। तेजी के साथ बची सीढ़ियां फांदकर वह सीधा रसोईघर में जा पहुंचा। बच्ची अब भी जोर-जोर से चीख रही थी। सीमा बाथरूम में उसे नहला रही थी।

बाथरूम से उसे सीमा की आवाज सुनायी दी, "पिताजी, जरा तौलिया पकड़ाना जल्दी से।" वह बैठा ही बैठा तौलिये के होने की जगह का अनुमान करने लगा। अगले पल तौलिया हाथ में लिये सीमा रसोईघर में चली आयी। वह उसे देखते ही खड़ा हो गया। सीमा ने हलकी-सी मुसकान होठों पर बिखेरकर पूछा, "बहुत देर कर दी आपने?"

वह कुछ कहना ही चाह रहा था कि सीमा पीठ मोड़कर बाथरूम में चली गयी। सवाल करके भी उत्तर न पाने की सीमा की आदत थी, पर इस बार सीमा का उत्तर बिना पाये मुसकराकर चला जाना उसे अच्छा नहीं लगा। उसे बरबस पारो की याद आ गयी।

उस दिन सीमा भी, बबली की तरह ही नहाने के वक्त बदन साफ करवाती बेमतलब चीख रही थी। पारो ने चीखती सीमा को उठाकर छाती से लगा लिया था। बिना मां की बच्ची थोड़ा शिकायत करने के अंदाज में रोकर चुप हो गयी थी। फिर अचानक देखते ही वह पारो की गोद से उसकी गोद में आने के लिए मचलने लगी थी। "अरे तू तो बड़ी स्वार्थी निकली ... बस इतनी ही यारी थी!" कहकर पारो ने सीमा को उसकी भुजाओं में रख दिया था। उस वक्त 'यारी' शब्द ने एक क्षण के लिए उसका ध्यान खींचा था। सीमा को पारो से लेते वक्त वह पारो के वैधव्य की सीमा में गदराये स्पर्श से सहसा पुलकित

आत्म-कथ्य

मेरी कहानियां अपने अनुभवों और अहसासों को जीवंत और दीर्घजीवी बनाने की अंतः प्रेरणा में किये गये चिंतन के परिणाम की कहानियां हैं। इनके माध्यम से मैं अपने आपको अपने सामने खोलने और खोलकर समझने की कोशिश करता हूं।

रचनाधर्मिता के माध्यम से मिली समझ मुझे ओढ़ायी गयी नैतिकता से मुक्त होकर निजी नैतिकता में जीने की शक्ति और साहस प्रदान करती है।

मुझे लिखने की प्रेरणा कब और कहां से मिली? भाषा और सोच की तरह लिखना भी मुझे अनायास ही आया है। दूर तक फैले खानदानी इतिहास के आरंभ के बारे में सुनता हूं कि वत्सराज उदयन वीणा की आवाज से अलमस्त हाथियों को बांध लेते थे। पर मेरी लड़ाई आवाज के छलावे से हाथियों की भोली शक्ति को मुक्त करने की लड़ाई है।

जन्म : १३ अक्तूबर, सन १९४१
संप्रति : सरस्वती कालेज, अंबाला छावनी (हरियाणा) के स्नातकोत्तर विभाग से संबद्ध। 'मंच' का संपादन।

हो उठा था।

पारो के चले जाने के बाद वह पूरा दिन और पूरी रात एक अजीब किस्म की उदासी और सोच में डूबा रहा था। अंत में सीमा का खयाल और लोक-लाज का भय जीता। वह पारो को घर न ला पाया।

"जरा तेल की शीशी देना जल्दी से।" सीमा की आवाज ने फिर उसे अपने अतीत से काट दिया। वह कुरसी की बाहों पर पंजे गड़ाकर उठा और सिंगार-दान पर पड़ी ढेर सारी चीजों में तेल की शीशी ढूंढ़ने लगा।

"पिताजी, आप भी बस..." सीमा ने छाया की तरह प्रगट होकर बिलकुल स्पष्ट रूप से पड़ी तेल की शीशी उठा ली, पर शीशी में तेल नहीं था। उसने सीमा के होठों पर फिर मुसकान फैलती देखी, "इसका तेल कहां गया?"

"तेल!... तेल तो इसमें था।"

"कितनी बार कहा है कि अगर चीज को बेरहमी से ही इस्तेमाल करना हो तो उसे लाकर रखने की भी फिक्र करनी चाहिए।"

वह जैसे फर्श के साथ चिपककर रह गया। उसका दिल हुआ कि बोले, 'मैं तेल पी तो नहीं गया?' पर बोलने की जगह फिर उसका हाथ ऐनक पर चला गया।

सुबह तेल उसने घुटनों पर मला था। घुटनों में काफी दर्द होने लगा था। दो मंजिल की सीढ़ियां चढ़ते-उतरते घुटनों में अकसर दर्द होने लगता था। कहता वह इसलिए नहीं था कि कहीं सब की नजरों में गिर न जाए। वह किसी भी कीमत पर फालतू, बेकार और अजनबी नहीं होना चाहता था।

उसने सुना, राजेश्वर आफिस से आकर सीमा से कह रहा था, "देखो सीमा, तुम्हें कितनी बार समझाया है कि नौकर रख लो। तुम्हारे स्कूल जाने के बाद बच्ची भी संभली रहेगी और तुम्हें
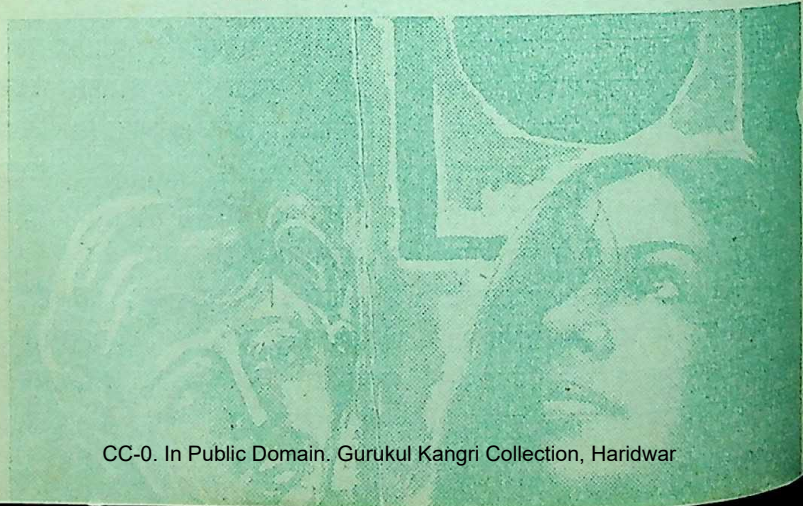
सफाई और रसोई वगैरह से भी फुरसत मिल जाएगी।"

"मुझे क्या कहते हो? पिताजी से क्यों नहीं कहते, जिन्हें हर बार नौकर भगाने में पता नहीं क्या आनंद आता है?"

"और . . . वृद्ध बाबा . . ."

सहसा राजेश्वर वाक्य पूरा किये बगैर ही चुप हो गया। वह समझ गया कि सीमा ने इशारे से उसे उसका अंदर होना समझा दिया है। थोड़ी शांति के बाद राजेश्वर बिना किसी कारण के उसकी तारीफ करने में मग्न हो गया। वह कोई किताब या अखबार पाने के लिए नजरें घुमाने लगा ताकि राजेश्वर आये तो उसे लगे कि उसने कुछ भी नहीं सुना।

"लीजिए, अब नुक्कड़वाली दूकान से तेल ले आइए भागकर।" सीमा ने एक रुपये का नोट रख दिया और उस पर सरसरी नजर डाल बाहर निकल गयी।

सीढ़ियों पर उतरने और चढ़ने का यह उसका चौदहवां फेरा था। अब तक उसका पूरा शरीर पूरी तरह से टूट चुका था। लेकिन बाजार बंद होने में अभी दो घंटे शेष थे। वह कुछ घड़ियां बाहर किसी के पास बैठकर गुजार भी तो नहीं सकता था। सीमा का एक और रूप था, भेड़िये-वाला रूप। वह सीमा के उस रूप से बहुत डरता था। कुछ महीने पहले एक पुराने साथी के साथ बातचीत में उलझ जाने के कारण थोड़ी देर हो गयी थी। उस वक्त भी सीमा का ठीक वही भेड़ियेवाला रूप प्रगट हो गया था—

"चुपके से किधर निकल गये थे?"

"कहीं भी तो नहीं।"

"जैसे मैं कुछ जानती ही नहीं।"

पारो उसके अच्छे दिनों की साथी थी। उसके सहारे वह अपने अतीत को वर्तमान बनाने का सुख पाता था। किसी उलटे-पुलटे अर्थ में उसके निचुड़े हुए तन-मन को पारो के साथ जोड़ा जाना उसे
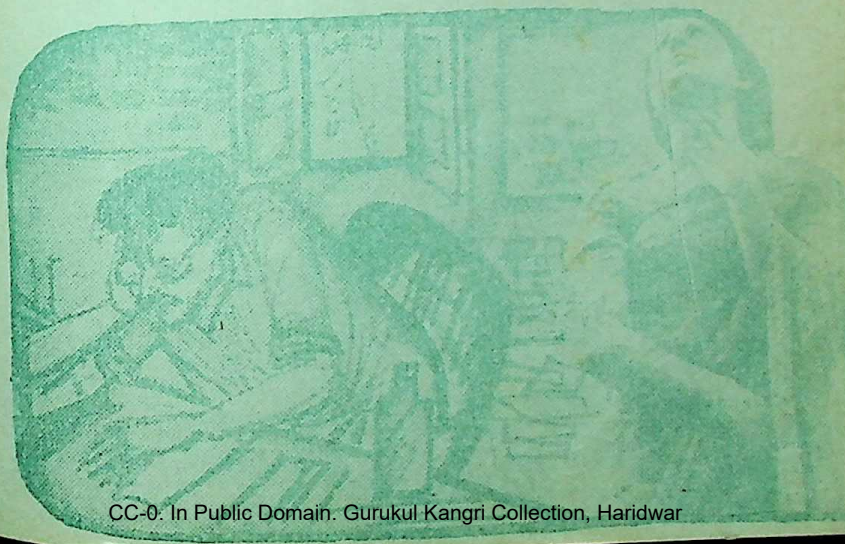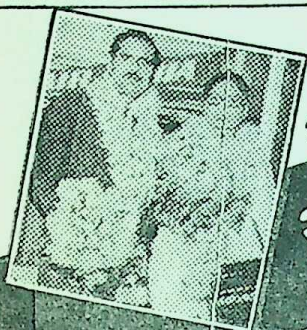
बर्दाश्त नहीं हुआ था। पर उसने यही कहा था, "तुम गलत समझ रही हो।"

"मैं गलत समझ रही हूं? वह जो मां की सोने की जंजीर थी उसके बारे में भी गलत समझ रही हूं?" सीमा गमक उठी थी।

"वो तो मुझे उसके पैसे देने थे। तुम्हारी एम. ए. की फीस भरते वक्त उससे जो लिये थे।"

"आप किसकी बात कर रहे हैं?"

"तुम किस के बारे में कह रही हो?"

"मैं तो उस सर्राफ रामदास की बात कर रही हूं।"

"तो मैं क्या किसी और के बारे में सोच रहा हूं?" वह तुरंत ही चालाक बनकर संभल गया था।

उस रात अपने झूठे और चालाकीवाले संवाद का सांप उसकी नस-नस को काट-काटकर जहर घोलता रहा था। एक पल के लिए उसके दिमाग में यह विचार भी आया कि वह सब के, विशेषकर सीमा के व्यवहार को सहज क्यों नहीं ले लिया करता? इस सवाल के आगे वह अपने आपको निहत्था महसूस करने लगा। सीढ़ियां उतरकर वह बाजार में खो गया।

शीशी में तेल भरवाकर वह चौराहे पर आकर रुक गया। उसने ललचायी नजरों से जो सड़क घूम-फिरकर पारो के घर की तरफ जाती थी, उसके साथ-साथ देखा। पारो इस वक्त क्या कर रही होगी? उसके दिमाग में पारो के घर और गली का नक्शा घूम गया। सोमदेव के कपड़े धो रही होगी? उसके आफिस की फाइलों को झाड़-पोंछकर करीने से रख रही होगी? कमर के तेज दर्द में भी धुएंवाले चूल्हे के सामने बैठी खाना बना रही होगी? बरबस उसके कदम पारो के घर की ओर जानेवाली कच्ची सड़क की ओर मुड़ गये। सहसा उसकी आंखों के सामने पारो के बैंक में नौकरी करते जवान बेटे की हिप्पियों-जैसी शक्ल घूम गयी। हो सकता है, आज सोमदेव ओवरटाइम न लगा रहा हो? . . . उसने अपनी खुरदरी अंगुलियों से तेल की शीशी के चिकने कांच को टटोला। घर को जाने-वाली पक्की सड़क पर नजर दौड़ायी।

वह घर पहुंचा तो बबली बन संवर-कर आंगन के फर्श पर बैठी खेल रही थी। आंखों में गाढ़ा काजल, माथे पर काली बिंदिया, गरदन पर इधर-उधर भूरी, घुंघराली लटों के भूरे फूल। रेशम-जैसी चिकनी टांगें और बाहें, पके हुए बासमती चावलों जैसे दो नन्हे-नन्हे दांत। उसने तेल की शीशी बाथरूम में रखकर बबली को उठाकर बाहों में भर लिया। बबली ने एक किलकारी मारकर उसकी मूछों को पकड़ने के लिए हाथ आगे बढ़ाया। उसने मूछे आगे करके स्वयं ही बबली के हाथ में पकड़ा दीं। वह अपने आपको धोखा देने लगा—इस हालत में भी आज इस घर में वह क्या सीमा के लिए है? राजेश्वर के लिए है? अपने आपके लिए है? . . . नहीं, नहीं, मात्र इस बबली के लिए। ●

सेनापति सर फिलिप सिडनी जुटफेन के युद्ध-स्थल में स्वयं बड़ी बहादुरी से लड़ रहे थे। एक गोली उनकी जांघ में लगी और हड्डी के दो टुकड़े कर पार निकल गयी। रक्त की धार वह निकली। चतुर घोड़ा उन्हें शिविर की ओर लेकर दौड़ा किंतु शिविर तक पहुंचते-पहुंचते वे बेहोश होकर गिर पड़े।

मूर्छा टूटने पर उन्होंने संकेत से पानी मांगा। एक सैनिक काफी दूर से पानी लेकर आया। उन्होंने जल-पात्र मुंह से लगाया कि कान में एक घायल सैनिक की आवाज पड़ी—'पानी-पानी।'

उन्होंने तत्काल वह जल उस सैनिक को पिलाने के लिए कहा। सैनिकों ने आग्रह किया कि पहले आप जल पी लें क्योंकि आपका महत्त्व अधिक है।

फिलिप सिडनी ने कहा, "मेरी मृत्यु बहुत निकट है। इस जल से मेरी प्यास अवश्य बुझ जाएगी किंतु प्राण नहीं बचेंगे। मेरा बड़प्पन इसी में है कि जिस सैनिक की भी जान बचे, उसे बचाऊं ताकि वह देश के काम आ सके।" और सेनापति ने सैनिक के प्राण बचा लिये—अपने प्राणों का होम करके।

प्रधानमंत्री चाणक्य की विद्वता, कूटनीतिज्ञता एवं अन्य गुणों से प्रभावित हो यूनान का एक राजदूत उनसे भेंट करने आया। उस समय गंगा-तट पर एक वलिष्ठ व्यक्ति नहा रहा था। स्नान करके उसने पानी का एक घड़ा अपने कंधे पर रखा और चल दिया। राजदूत ने पूछा, "इस देश के प्रधानमंत्री चाणक्य का घर कहां है?" उस व्यक्ति ने घास-फूस की एक कुटिया की ओर इशारा कर दिया। राजदूत को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े राष्ट्र का प्रधानमंत्री एक कुटिया में रहा करता है!

राजदूत ने भी गंगा में स्नान किया और कुटिया में पहुंचकर देखा कि कुटिया में थोड़े-से बरतन रखे हैं। पास में एक खाट और मोटे-मोटे ग्रंथों का छोटा-सा संग्रह था।

राजदूत ने पूछा, "प्रधानमंत्री चाणक्य से भेंट कहां हो सकेगी?"

"स्वागत है आपका, मुझे ही चाणक्य

कहते हैं।" विनम्रतापूर्ण उत्तर मिला।

राजदूत तो स्तब्ध रह गया! वह एक आसन पर बैठ गया और उनसे चर्चा करता रहा। अपने देश लौटकर उसने बताया कि जिस देश का प्रधानमंत्री चाणक्य की तरह देशवासियों का हित-चिंतन करनेवाला, धन के सदुपयोग का ध्यान रखनेवाला एवं विद्वान हो, उसे कोई देश परास्त नहीं कर सकता।

—नारायणप्रसाद शर्मा

जार के मुख्य मंत्री काउंट विट्टी ने एक दिन अपने सचिव से कहा कि ऐसे सब लेखकों की सूची बनाओ जिन्होंने अखबारों में मेरे विरुद्ध लिखा है। सूची तैयार हो गयी। तब विट्टी ने कहा कि अब उन लेखकों के नाम चुनो जिन्होंने मेरी सबसे कठोर आलोचना की है। यह नयी सूची जब बन गयी तब सचिव ने पूछा कि इन्हें क्या सजा दी जायेगी?

"सजा! कैसी सजा? अब मैं इनमें से अपने सबसे कठोर आलोचक को अपने समाचारपत्र का संपादक बनाऊंगा। मेरा अनुभव है कि सबसे कठोर आलोचक ही सबसे सच्चा हितैषी होता है," काउंट ने जवाब दिया।

मूर्तिकार दोनातेल्यो (फ्लोरेंसवासी) की कलाकृतियों की प्रायः आलोचना हुआ करती थी। एक बार उसे कुछ मूर्तियां बनाने के लिए पीसा बुलाया गया। वहां जाकर उसने कुछ मूर्तियां बनायीं। हर कोई उसकी प्रशंसा के पुल बांधने लगा। उसे पीसा में और भी मूर्तियां बनाने का काम मिला, लेकिन उसने अस्वीकार कर दिया।

एक साथी ने कारण पूछा तो उसने कहा, "मुझे डर है कि प्रशंसा सुन-सुनकर मैं कहीं इतना आत्मसंतुष्ट न हो जाऊं कि मेरी कला ही अवरुद्ध हो जाए। फ्लोरेंस में अपने आलोचकों की कृपा से मैं कभी आत्मसंतुष्ट नहीं हो पाता और अपनी कला में उत्तरोत्तर सुधार करता रहता हूं।"

—हनुमानप्रसाद बोहरा

मुहम्मद साहब के बाद हजरत अबू बक्र सिद्दीक को खलीफा बनाया गया। सेवा की भावना उनमें इतनी थी कि किसी के घर का सौदा ला देते, किसी का पानी भर देते और महल्लेवालों की बकरियां तक दुह देते थे। जब वे खलीफा हो गये तो महल्ले की एक लड़की ने दुःख

से कहा, "अबू बक्र तो खलीफा हो गये, अब हमारी बकरियां कौन दुहेगा ?"

हजरत ने जब यह सुना तब फरमाया, "सच कहता हूं, मैं अब भी बकरियां दुह दिया करूंगा। खलीफत का भार मुझे सेवा करने से नहीं रोक सकेगा।"

गांधीजी तब बड़ौदा-जेल में थे। सुपरिंटेंडेंट मेजर मार्टिन ने गांधीजी के लिए कुछ आवश्यक वस्तुओं का प्रबंध करवाना आरंभ किया। गांधीजी ने सुपरिंटेंडेंट से पूछा, "ये सारी वस्तुएं किसके लिए आ रही हैं ?" सुपरिंटेंडेंट ने उत्तर दिया, "आपके लिए। मैंने सरकार को लिखा था कि इतने महान पुरुष पर तीन सौ रुपये महीने व्यय होने चाहिए।"

गांधीजी ने कहा, "आपको बहुत-बहुत धन्यवाद, किंतु मेरा मासिक व्यय पैंतीस रुपये से अधिक नहीं होगा। यदि मैं स्वस्थ होता तो खाना भी 'सी क्लास' का ही खाता।" गांधीजी के आग्रह पर वे सारी वस्तुएं वापस कर दी गयीं और उनके स्थान पर वही तसला और कटोरा आ गया। **--फरीदा नसरीन**

क्रांतिकारी राजगुरु के सब साथी एक दिन इधर-उधर गये हुए थे, तब उन्होंने लोहे की एक संडासी आग में तपाकर लाल कर ली, और उसे अपनी नंगी छाती से चिपका लिया। जहां-जहां संडासी खाल से छुई, वहां-वहां की खाल जल गयी और फफोले पड़ गये; किंतु उन्होंने उफ तक न की। संडासी ठंडी पड़ गयी तो उन्होंने उसे फिर आग में तपाकर छाती पर लगा लिया। इस तरह उन्होंने तीन बार किया। बड़े-बड़े घाव हो गये।

वे चौथी बार ऐसा करने जा रहे थे कि उनका एक साथी आ पहुंचा। उसने संडासी छीन ली और कहा, "यह क्या पागलपन है! अपने हाथों ही अपना मांस जला रहे हो ?"

"परीक्षा कर रहा था कि इसी प्रकार पुलिस के सताने पर मैं विचलित तो नहीं होऊंगा।" राजगुरु ने हंसकर उत्तर दिया।

उन्नीस वर्षीय सरदार करतारसिंह भारतीय क्रांतिकारी-आकाश के उज्ज्वल नक्षत्र थे। देशव्यापी विप्लव योजना का षड्यंत्र रचने के अभियोग में जब उन पर मुकदमा चलाया गया तब उन्होंने उसे अत्यंत साहस और गौरव के साथ स्वीकार करते हुए कहा, "मैं जानता हूं कि मेरे विरुद्ध जो अभियोग है उनके लिए दो ही दंड हैं—काला पानी या मृत्यु-दंड। मृत्यु-दंड चाहूंगा, जिससे नया शरीर पाकर फिर फांसी पर लटकाया जाऊं; और यह सिलसिला तब तक जारी रहे जब तक मेरा देश आजाद न हो जाए। अगर अगले जन्म में ईश्वर ने मुझे स्त्री बनाया तो मैं अपनी कोख से बागी बेटे को जन्म दूंगा!"

करतारसिंह का फांसीघर में लाकर पांच किलो वजन बढ़ गया था।

—कमला

इराक में कुर्दों का विद्रोह

• त्रिलोक दीप

इराकी क्रांतिकारी परिषद के अध्यक्ष और देश के राष्ट्रपति जनरल अहमद हसन अल-बकर ने ११ मार्च, १९७४ को कुर्दों को स्वायत्तता प्रदान करने की घोषणा की, लेकिन कुर्दों ने स्वायत्तता के सरकारी प्रारूप को अस्वीकार कर दिया। कुर्द नेता ७५ वर्षीय मुल्ला मुस्तफा बरजानी के अनुसार यह स्वायत्तता चार वर्ष पहले के समझौते के अनुरूप नहीं। प्रस्तावित प्रारूप में इराक के उत्तर के तीन जिलों—अरबील, डोक और सुलेमानिया—को कुर्दिस्तान बनाया गया है, लेकिन कुर्द किर्कुक को भी कुर्दिस्तान में शामिल करने की मांग कर रहे हैं। उनका तर्क है कि किर्कुक में भी कुर्दों की बहुसंख्या है। दूसरे, किर्कुक में तेल के काफी भंडार हैं।

कुर्दों ने तेल के राजस्व का ७५ प्रतिशत कुर्दिस्तान की प्रगति और विकास के लिए चाहा है। केंद्रीय नेता इस मांग को अलगाव की प्रवृत्ति मानते हैं। उपराष्ट्रपति हुसेन ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि 'कुर्दिस्तान इराक के भीतर एक राज्य है। उसे भीतरी

जनरल अहमद हसन अल-बकर : दौरे पर

मामलों में पूर्ण स्वाधीनता है लेकिन विदेशी मामलों, प्रतिरक्षा और वित्तीय मामलों पर केंद्र सरकार की नीतियां ही प्रभावी होंगी।' बहरहाल, अभी तक दोनों ही पक्ष अपनी-अपनी जिद पर अड़े हुए हैं। हुसेन ने कुर्दों को १५ दिन के भीतर स्वायत्तता के प्रारूप पर सहमत होने का समय दिया था। लेकिन उत्तर में कुर्दों ने अपने हथियारों को भांजना शुरू कर दिया है। स्त्रियों और बच्चों को सुरक्षित स्थानों तक पहुंचा दिया है। खंदकें खोदनी शुरू कर दी हैं, और चार वर्ष पूर्व जो सैनिक संख्या घटाकर उन्होंने २०,००० से ६,००० कर दी थी उसे पुन: बढ़ाने में जुट गये। एक बार फिर कुर्दों ने हथियार उठा लिये हैं।

पिछले दो दशकों से कुर्द स्वायत्तता के लिए लड़ रहे थे। ११ मार्च, १९७० को उपराष्ट्रपति हुसेन एवं कुर्द नेताओं में एक समझौता हुआ। समझौते के अनुसार चार साल में कुर्दों को स्वायत्तता मिलनी थी। कुर्दों के अनुसार स्वायत्तता की घोषणा ठीक चार वर्ष बीतने पर की गयी, सरकार को चाहिए था कि घोषणा करने से पहले उनके पक्ष को भी समझ लेती।

कुर्द इराक की अल्पमत जाति हैं। उनकी अपनी भाषा, संस्कृति और रीति-रिवाज हैं। इराक की उत्तर की पहाड़ियों में वे रहते हैं। पढ़े-लिखे और पराक्रमी ये लोग पांच देशों में फैले हुए हैं। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद ऑटोमन साम्राज्य के विभक्त होने से इन लोगों की खानाबदोशों की-सी स्थिति हो गयी। इराक में कुर्दों की संख्या १२,००,००० कूती जाती है। इसके अलावा तुर्की में ५०,००,०००, ईरान में ४०,००,०००, सीरिया तथा सोवियत आर्मेनिया में छह-छह लाख कुर्द रहते हैं। इन देशों की सीमाओं पर रहने से कुर्दों का आपस में संपर्क भी रहता है और संघर्ष भी हो जाया करता है। ईरान और इराक में संघर्ष के समाचार प्राय: मिलते ही रहते हैं। कुर्दों की समस्या के अतिरिक्त ईरान और इराक में बुनियादी मतभेद भी हैं। विशेषकर फारस की खाड़ी से ब्रितानी सैनिकों की वापसी से ईरान और इराक में मतभेदों की गहरी खाई खुद गयी है। ईरान अन्य छोटे-छोटे शेख राज्यों पर अपना दबदबा जतलाना चाहता है तो इराक अपना। कहा जाता है कि इराक के असंतुष्ट कुर्दों को ईरान के शाह की शह है।

हाल ही में एक कुर्दी कवि ने कहा था—'कुर्द दरवेश की तरह हैं। वे लोग उसको अपना मार्ग-दर्शक और हितैषी मानने को तैयार हैं जो उन्हें जन्नत की ओर ले जाए।' उनके लिए जन्नत 'कुर्दिस्तान' है। कुर्दों की धरती ने ही फिरदौसी और सालादीन-जैसे विश्वविख्यात व्यक्तित्व उत्पन्न किये। पहाड़ियों की गोद में बसे कुर्दों से तब जन्नत का वायदा किया गया, जब प्रथम विश्वयुद्ध के बाद सेवेयर्स संधि हुई थी। लेकिन उस आश्वासन को पूरा नहीं किया गया। लुसाने संधि के अंतर्गत

भी उनकी इच्छा पूरी न हुई। ऑटोमन साम्राज्य की विच्छिन्नता से उनके सारे सपने बिखर गये, फलस्वरूप कुर्द छह देशों में फेंक दिये गये। इराक पर ब्रिटेन का १९३२ तक अधिकार रहा, हालांकि ब्रितानी भी उत्तर में कुर्दिस्तान सरकार को गैरसरकारी तौर पर माना करते थे लेकिन यही था' कहकर सब्र कर लिया लेकिन इराक के कुर्दों की सरकार से सीधी टक्कर शुरू हो गयी। कुर्द राष्ट्रवाद की लहर बंगलादेश राष्ट्रवाद से कम उग्र नहीं रही। वह १९६० से १९७० तक चली। देश में गृहयुद्ध की स्थिति रही। ११ मार्च, १९७० को जब केंद्रीय सरकार ने स्वायत्तता का
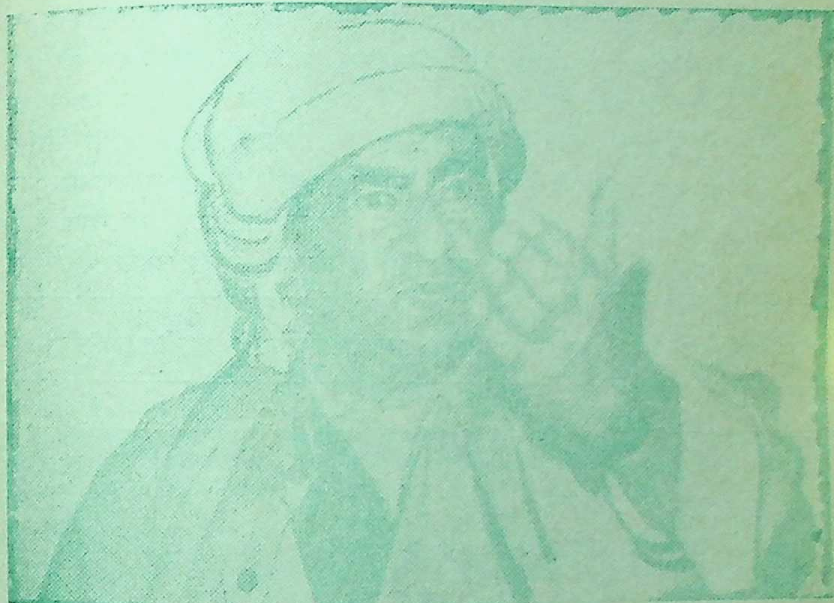
कुर्द नेता ७५ वर्षीय मुल्ला मुस्तफा बरजानी

जब १९३० में इराक को पूर्ण स्वाधीनता देने का समझौता हुआ तब कुर्दिस्तान का कहीं उल्लेख न था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान रूस की सहायता से 'कुर्दिस्तान का महावाद गणराज्य' स्थापित हुआ, लेकिन एक वर्ष बाद उसका भी विघटन हो गया।

अन्य देशों में तो कुर्दों ने 'तकदीर में

आश्वासन दिया तब कहीं कुर्द छापामार पहाड़ियों की ओर से निकले। उसके बाद कुर्दिस्तान लोकतांत्रिक पार्टी के सदस्य केंद्रीय मंत्रिमंडल में शामिल किये गये। मिली-जुली सरकार में कुर्दों के प्रतिनिधित्व से उन्हें आशा बंधी कि उनके अधिकार को मान्यता दे दी गयी।

लेकिन, स्वायत्तता के सवाल पर चार कुर्दों और चार इराकियों की जो समिति बनायी गयी थी, उसमें शीघ्र ही दरारें पड़ने लगीं । इराकी प्रतिनिधिमंडल की मान्यता थी कि कुर्द वास्तव में पूर्ण स्वाधीनता चाहते हैं, अर्थात इराक से अलग होना चाहते हैं। कुर्द नेता बरजानी ने भी कहा कि उन्हें रूस और अमरीका, दोनों देशों से वार्त्ता और व्यापार की छूट होनी चाहिए । इराक सरकार को यह शर्त स्वीकार नहीं थी। उसका तर्क है कि विदेशी और प्रतिरक्षा-मामलों में इराक सरकार के अधिकारों को चुनौती नहीं दी जा सकती। दूसरी मांग किर्कुक को कुर्दिस्तान में मिलाये जाने की है । कुर्द चाहते हैं कि कुर्दों की वास्तविक संख्या और बहुमतवाले प्रश्नों को जानने के लिए पुनः मत-गणना होनी चाहिए । उनका दावा है कि किर्कुक में कुर्दों की संख्या इराकियों से अधिक है। कुर्द चाहते हैं कि केंद्रीय सरकार में उनके प्रतिनिधि को वरिष्ठ उपराष्ट्रपति का पद मिलना चाहिए । कई उपराष्ट्रपतियों में एक कुर्द उपराष्ट्रपति उन्हें स्वीकार नहीं। वे यह भी चाहते हैं कि कुर्दिस्तान में केंद्र-सरकार का दखल कम-से-कम हो।

१९५७ की जनगणना के अनुसार कुर्दों की संख्या ६,५०,००० थी, लेकिन मुल्ला बरजानी को वह जनगणना अमान्य है । सरकार ने स्पष्ट कर दिया है कि न तो किर्कुक, न ही उसके भंडारों का तेल और राजस्व ही कुर्दिस्तान को जाएगा। उसकी राजधानी अरबील होगी। सर-

कारी प्रारूप के अनुसार कुर्द अपनी विधान सभा का चुनाव करेंगे। इराक के राष्ट्रपति योग्यता के अनुसार, निर्वाचित सदस्यों में से कार्यकारी परिषद का एक सभापति नियुक्त करेंगे। राष्ट्रपति को उस सभापति को पदच्युत करने का अधिकार है। वह कार्यकारी परिषद को भी भंग कर सकते हैं। एक विशेष न्यायपालिका होगी जो विधानसभा द्वारा पारित कानूनों की वैधानिकता की व्याख्या करेगी। कुर्दिस्तान की राजभाषा कुर्दी होगी लेकिन अरबी को भी कुर्दी-जैसा ही स्थान प्राप्त होगा। हालांकि कुछ मध्यमार्गी सरकार के इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के पक्ष में हैं लेकिन मुल्ला बरजानी नहीं।

१९२४ में संवैधानिक राजतंत्र शुरू हुआ। सितंबर, १९३३ में अमीर फैसल की मृत्यु के बाद उसका बेटा गाजी इब्न फैसल उत्तराधिकारी हुआ। ४ अप्रैल, १९३९ को एक दुर्घटना में उसकी भी मृत्यु हो गयी। उसका पुत्र शाह फैसल द्वितीय अब गद्दी पर बैठा। १४ जुलाई, १९५८ को ब्रिगेडियर जनरल अब्दुल करीम कासिम के सैनिकों ने उसकी हत्या कर दी और इराक को 'अरब राष्ट्रों का अंग' कहकर घोषणा की गयी। जनरल कासिम प्रधानमंत्री बन गये। इस प्रकार इराक से संवैधानिक राजतंत्र का अंत हो गया। लेकिन कासिम को ८ फरवरी, १९६३ को सत्ता-च्युत कर दिया गया। ब्रिगेडियर आरिफ रज्जाक प्रधानमंत्री बने। संयुक्त अरब गणराज्य के साथ उसके काल में इराक के संबंध दृढ़ हो गये। २१ सितंबर, १९६५ को छात्रों की क्रांति के कारण आरिफ देश छोड़ गये। इस बीच कुर्दों की छापामार गतिविधियां भी तेज हो गयी थीं। २१ सितंबर, १९६५ को डॉ. अब्दुल रहमान अलबजाज नये प्रधानमंत्री बने। २९ जून, १९६६ को उन्होंने कुर्दों के साथ एक पंचवर्षीय समझौते पर हस्ताक्षर किये। कुर्दों को स्थानीय स्वायतता प्रदान की गयी। ६ अगस्त को अलबजाज के त्यागपत्र के बाद ताजी तालिब उनके स्थान पर सत्तारूढ़ हुए। १० मई, १९६७ को जनरल अब्दुल रहमान आरिफ ने राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री-पद की शपथ ग्रहण की। ७ जून, १९६७ को इराक ने अमरीका से इसलिए राजनायिक संबंध विच्छेद कर लिये क्योंकि उसने छह दिवसीय इसराइल अरब-युद्ध में इसराइल को सहायता दी थी। १७ जुलाई, १९६८ को राष्ट्रपति आरिफ के विरुद्ध क्रांति हुई। इस बार नेतृत्व जनरल अहमद हसन अल बकर ने किया। वे अंतर्राष्ट्रीय बाथ सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य थे। आज भी इराक में जनरल अलबकर की सरकार है। इस सरकार ने ही १९७० में कुर्दों को स्वायत्तता देने के बारे में समझौता किया था। स्वायत्तता-प्रारूप में जो दरारें पड़ी हैं, उन्हें यदि समय पर नहीं पाटा गया तो संभव है, एक बार फिर इराक गृह-युद्ध की चपेट में आ जाए।

—'दिनमान', टाइम्स ऑव इंडिया, बहादुरशाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली

• कुमार प्रशांत

चे ग्वेवारा ! एक ऐसा नाम जिसके चारों ओर लिपटा रहस्यावरण आज भी समाप्त नहीं हुआ। चे, क्यूबा की क्रांति का सिपहसालार, कास्त्रो का दाहिना हाथ, जितना निष्णात योद्धा उतना ही गहरा साम्यवादी चिंतक और उससे ऊपर लाखों का 'हीरो'। अचानक वह गायब हो गया। सारी दुनिया हैरान थी, चे कहां गया? ३ अक्तूबर, १९६५ को एक समारोह में कास्त्रो ने निम्न पत्र पढ़ा जो उसे अप्रैल में ही मिल गया था। कास्त्रो ने कहा, 'चे की सुरक्षा के लिए मैंने इसे इतने दिन दबा रखा और अब भी मैं नहीं बताऊंगा कि वह कहां है?'

१९६७ में संसार ने सुना, बोलिविया के जंगल में लड़ता हुआ चे मारा गया।

क्यूबा छोड़ने से पहले कास्त्रो और अपने माता-पिता के नाम लिखे चे के पत्र हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं :

फिडेल, इस क्षण मुझे बहुत सारी बातें याद आ रही हैं। जब मैं तुमसे मारिया एंटोनिया के घर मिला था, तुमने मुझे अपने साथ आने का आमंत्रण दिया और इसकी तैयारी के दौरान कितना तनाव था।

एक दिन किसी ने पूछ लिया था कि यदि हममें से कोई मरा तो कौन परवाह करेगा, और इस तथ्य ने उस क्षण हमें झकझोर दिया था। बाद में हम चेते कि क्रांति में जीवन और मृत्यु तो लगी ही रहती है। (यदि वह सच्ची है) सफलता की मंजिल तक पहुंचते-पहुंचते बहुत सारे साथी होम हो जाएंगे।

आज, सब कुछ सामान्य हो गया है, क्योंकि हम ज्यादा प्रौढ़ हो गये हैं; किंतु एक तथ्य अपनी जगह बना है। मैं महसूस करता हूं कि क्यूबा की सीमा के भीतर क्रांति-कार्य में मैंने अपना दायित्व पूर्ण किया है और अब मैं तुम्हें, दूसरे साथियों को, तुम्हारी जनता को जो मेरी भी है, खुदा हाफिज कह सकता हूं।

मैंने पार्टी की राष्ट्रीय समिति के मंत्री के पद से, मेजर के अलंकरण से और

क्यूबा की नागरिकता से स्वंय को कानूनतः अलग कर लिया है। यदि बंधन हैं तो दूसरी तरह के—ऐसे बंधन जो शब्दों से तोड़े नहीं जा सकते।

अपने पूर्व जीवन का लेखाजोखा करता हूं तो विश्वासपूर्वक कह सकता हूं कि क्रांति - विजय को दृढ़ करने के लिए मैंने पूर्ण समर्पण और ईमानदारी से काम किया है। मेरी बड़ी कमी यदि कुछ रही तो इतनी की सिइर्रा माइस्ट्रा में पहली बार तुमसे मिलने पर मैं तुम पर पूर्ण भरोसा न कर सका, और एक नेता और क्रांतिकारी के रूप में तुम्हारे गुण तत्क्षण परख न सका।

बड़े शानदार दिन मैंने बिताये हैं और क्यूबा की संकट-घड़ी में तुम्हारे साथ जनता के लिए कुछ करने का गर्व है।

अब संसार के दूसरे राष्ट्र मुझे अपने नम्र प्रयास के लिए आवाज दे रहे हैं। मैं कुछ ऐसा कर सकता हूं जो क्यूबा के नेता के रूप में तुम्हें नागवार गुजरे। इसलिए अब समय आ गया है, जब हमें अलग हो जाना चाहिए।

मैं बताना चाहता हूं कि प्रसन्नता और दुःख की मिलीजुली भावना से मैं यह कह रहा हूं। मैं यहां एक निर्माता के रूप में तुम पर अपना गहरा विश्वास छोड़े जा रहा हूं, और बहुत कुछ ऐसा जिसे मैं दिल से प्यार करता था। मैं उस जनता को छोड़ रहा हूं जिसने मुझे पुत्र के रूप में अपनाया। यह सब मुझे गहरे कुरेदता है। मैं संग्राम के नये मोर्चे पर इस विश्वास के साथ जा रहा हूं कि मेरी जनता में क्रांतिकारी भावना है। साम्राज्यवाद के विरुद्ध जहां कहीं भी संघर्ष हो, वहां मैं सभी दायित्वों में सबसे पवित्र दायित्व को पूरा करने जा रहा हूं—यह विश्वास ही गहरे घाव भर देता है।
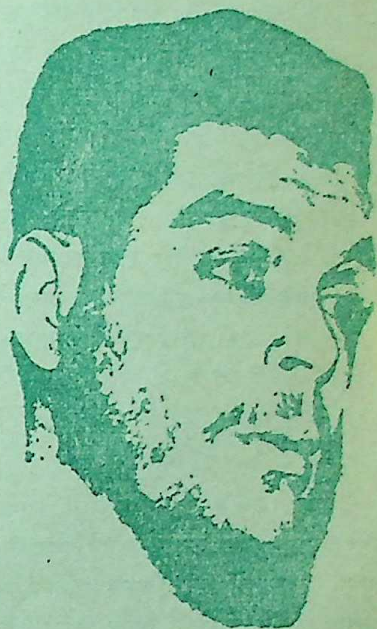
क्यूबा की क्रांति का नेता चे ग्वेवारा

मैं एक बार फिर कहना चाहता हूं कि मैं क्यूबा को सभी प्रकार के दायित्वों से मुक्त करता हूं, सिवाय इसके कि मेरा उद्गम यहीं से हुआ। यदि मेरा अंतिम क्षण किसी आकाश के तले आया तो मेरी स्मृति में यह जनता और विशेषतः तुम होगे। तुम्हारी सीखों और उदाहरणों का कृतज्ञ हूं

और अपने अंतिम क्षण में भी इनके प्रति ईमानदार रहने का यत्न करूंगा।

अपनी क्रांति की विदेशनीति से मैं हमेशा संबद्ध रहा हूं और आगे भी रहूंगा, मैं क्यूबा के क्रांतिकारी का दायित्व निभाऊंगा और वैसा ही व्यवहार करूंगा। मुझे जरा भी खेद नहीं कि अपने बीवी-बच्चों के लिए मैं कुछ भी छोड़े नहीं जा रहा हूं। मैं प्रसन्न हूं कि ऐसा है। जो कुछ कहना चाहता हूं, वह शब्दों में व्यक्त नहीं हो पाएगा और मुझे मुहावरों की हंसी उड़ाने में कोई तुक नहीं दिखायी देता।

कभी भी जीत की ओर बढ़ते हुए
मेरा राष्ट्र या मौत !
मैं अपने समस्त क्रांतिकारी उछाह से
तुम्हें गले लगाता हूं

—चे

●

मेरे वृद्ध,

एक बार फिर अपने पांव में मैं एक चुभन-सी महसूस कर रहा हूं। एक बार फिर मैं सड़कों पर निकल आया हूं। करीब दस साल पहले, आज के ही दिन मैंने एक विदाई- पत्र तुम लोगों को भेजा था। जहां तक मुझे याद है, उस पत्र में मैंने एक अच्छा सिपाही और एक अच्छा डॉक्टर न बन सकने पर पछतावा प्रकट किया था। अब डॉक्टरी पेशे का कोई आकर्षण मेरे मन में नहीं बचा है। हां, सिपाही मैं उतना बुरा सिद्ध नहीं हुआ। निष्कर्षतः मुझमें कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं हुआ है, सिवा इसके कि मैं और ज्यादा जागरूक हो गया हूं। मार्क्स में मेरी जड़ें और गहरी हो गयी हैं और लक्ष्य स्पष्ट हुआ है। उन लोगों के लिए, जो अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं, मैं सशस्त्र संघर्ष एकमात्र रास्ता मानता हूं और मेरा यह विश्वास दृढ़तर होता जा रहा है। बहुत सारे लोग मुझे रोमांचप्रिय (एडवेंचरर) कहते हैं और मैं वह हूं भी —थोड़ा-सा अंतर यह है कि मैं उन लोगों में से एक हूं जो अपने सत्य को प्रमाणित करने के लिए जिंदगी खतरे में डालते हैं।

संभव है, यह मेरा अंतिम अभियान हो। संभावनाओं की तार्किक परिणति यही बताती है, किंतु मैं इसे सोचता भी नहीं। यदि ऐसा हुआ तो मैं तुम लोगों को अपना आखिरी आलिंगन भेजता हूं। मैंने तुम लोगों को सीमातीत प्यार किया है, लेकिन मुझे आज भी मालूम नहीं कि यह अपनत्व प्रकट कैसे करना चाहिए। अपनी मान्यताओं में सीमा से परे दुर्दम रहा हूं और संभव है कई बार तुम लोग मुझे समझ न सके हो। खैर, मैं आज जो कह रहा हूं उसे ही समझने का प्रयत्न करो।

अब, जो दृढ़ इच्छाशक्ति मैंने पायी है वह कांपते पावों और डूबते दिलों को संभालेगी। मैं तो यही करूंगा।

बीसवीं शताब्दी के भाग्य की लड़ाई के इस छोटे योद्धा को कभी-कभी याद कर लेना।

—अर्नेस्टो

—कालीकोठी क्वार्टर्स, मुजफ्फरपुर, बिहार

अमरीका की चित्रित पांडुलिपियां

अमरीका के पूर्व-इस्पहानी जनों में पुस्तकों का अस्तित्व, उनकी सामग्री और उनके प्रकार भेद का विषय इतना व्यापक है कि नाहुआतल, मय और कुवे-चुआ इन तीनों प्रमुख संस्कृतियों का पृथक रूप में अध्ययन किया जाना चाहिए।

मैक्सिकी, मय और पेरूवासी आदि-वासियों (इंडियंस) ने अपनी संस्कृति और आचार के प्रसारण की विभिन्न विधियों की खोज और उनका विकास किया। उनमें से कुछ का मूर्त सौंदर्य और गूढ़ कौशल हमें आज भी हैरत में डाल देता है। इन सबमें हमें मनुष्य और विश्व के गूढ़ अर्थ को लेखन के मूल रूपों

• माईगुएल ऐंजिल आस्तूरियस

के माध्यम से सुरक्षित और प्रसारित करने की एक मूलभूत बल्कि बलवती लालसा का पता चलता है। अफरीकी दुनिया में सामा-जिक और ऐतिहासिक परंपराएं मौखिक संप्रेषण की एक अटूट कड़ी के द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी पहुंचायी जाती रहीं।

लेकिन इसके उलटे, कोलंबस-पूर्व की दुनिया में लेखन और उसके रक्षण ने ऐसा महत्त्व प्राप्त किया जिसकी तुलना केवल मिस्रवासियों और यहूदियों से की जा सकती है। यही दुनिया की कुंजी है। एक ऐसी कुंजी, जो उसकी छुपी हुई संरचना

'मेंडोजा पांडुलिपि' से लिया गया एक विवरण। ऐजटेक सम्राट मावतेजुमा को उसकी प्रजा द्वारा श्रद्धा में समर्पित विभिन्न वस्तुओं की सूची-- इसमें वस्तुओं के विवरण के साथ-साथ वस्तुओं के रूप को दर्शाया गया है यथा, पक्षी, ढालें, कपड़े आदि
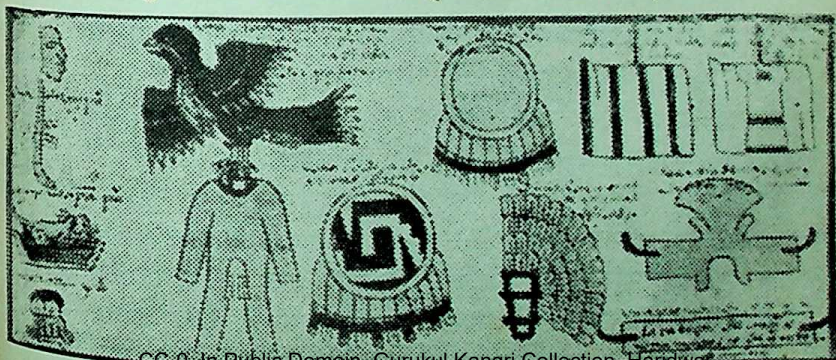
को खोल सकती है।

लिखित चिह्न, लेखन सामग्रियों और इस लेखन कर्म में रत लोगों के विषय में आम जनता यह समझने लगी कि इनका संबंध दैवी शक्तियों से है। लेखन, रचनात्मकता और रूपात्मकता दोनों दृष्टियों से जादुई प्रवृत्ति था। वह विश्व की सृष्टि की अवधाराओं से जुड़ा हुआ था।

हम जानते हैं कि लेखन, उसके रक्षण और उसके भाष्य, अभिजात्यों के एक विशेष वर्ग की जिम्मेदारी थी जिसका काम धर्मगुरुओं जैसा था। कभी-कभी तो वे धर्मगुरु होते ही थे जो आदिवासी देवी-देवताओं के मूल आदर्श से संबंधित अवस्थाओं से; अविच्छिन्न रूप से जुड़े भाषा, सामग्री, रंग और कथ्य का इस्तेमाल करते थे।

माकटेजुमा की 'श्रद्धांजलि की सूची' (लिस्ट ऑव ट्रिब्यूट) जिसमें सामग्रियों का एक तरह का जीवंत वर्गीकरण है; हमारे आधुनिक विचारों से सर्वथा भिन्न है, लेकिन वह आदिवासियों की धार्मिक प्राथमिकताओं से पूरी तरह संबद्ध है।

ऐमटलवार्क से बने हुए कागज को मध्य अमरीका के जल पक्षी के पंखों और हरितमणि के टुकड़ों-जैसे ऊंचे स्तर का माना गया है। धार्मिक अनुष्ठान और प्राचीन पांडुलिपियां तैयार करने, दोनों में उसका व्यापक उपयोग किया जाता था। धार्मिक अनुष्ठानों के वक्त की पादरियों की वेशभूषा और आभूषणों के
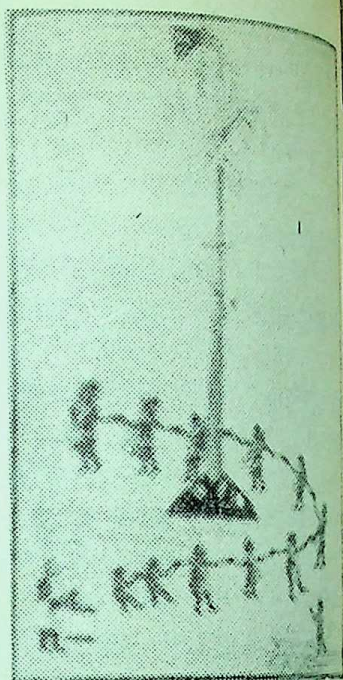
चित्रयुक्त पांडुलिपि का एक पृष्ठ: एक त्योहार के अवसर पर कागजी कपड़ों से सजाये एक ऊंचे काष्ठ-स्तंभ (मेपोल) के चारों ओर नाचते बच्चे

रंगीन डिजाइन बनायी जाती थी या ह्यूल नामक एक पवित्र सामग्री से छींटा मारा जाता था।

देवताओं की प्रतिमाओं को कागज के बने मुकुट, पंखे, तख्तियों और वस्त्रों से सजाया जाता था। कुछ समारोहों में धर्मगुरु कागज के सूट पहनते थे जिन्हें टिलमाल कहा जाता था। इस सामग्री से बने खोखों में जिसे या तो ओसिलट (चीते की शक्ल का एक जानवर) की

खाल के रंग में रंगकर या समुद्री घोंघे से सजाया गया होता या धूप-लोबान आदि ले जाते थे। जिन कैदियों की बलि चढ़ाई जाने वाली होती थी, उन्हें टिलमाल के वस्त्र और कागज के दूसरे गहने पहनाये जाते थे। जो औरतें हुईटजिलोपोचली के सम्मान में आयोजित समारोहों में भाग लेती थीं, वे भी अच्छी काली धारियों से रंगे कागज के परिधान पहनती थीं।

कोलंबस-पूर्व के लोगों में लेखन के कई तरीकों (भावचित्रीय, पंचांगिकल, चित्रलिपीय, संख्या-सूचक और ध्वन्यात्मक) का प्रचलन था और उनसे मृगचर्म, पाषाण, आमल कागज की पट्टियों पर लिखते थे। उनकी दृष्टि में इन दस्तावेजों को लिखने और संजोने का यह तथ्य ही इतना अधिक महत्त्वपूर्ण था कि वे उसके रक्षण और खो जाने को विश्व के बने रहने या उसके विनष्ट हो जाने से जोड़ते थे।

प्राचीनतम नाहुआत्ल में सूर्यजनों की उत्पत्ति से लेकर 'आदि मनुष्यों द्वारा एक प्राचीन कहानी' का जिक्र आता है। उसमें मिथकपूर्ण तमोनचान (जहां पर ऐजटेक के पूर्वज रहते थे) बसनेवाले प्राचीन लोगों के आगमन की बात की गयी है। उनके साथ कुछ बुद्धिमान जन भी रहते थे, जिन्हें स्थानीय भाषा में 'वस्तुओं के ज्ञाता' और 'प्राचीन पांडुलिपियों के स्वामी' के रूप में संबोधित किया गया है। विशेषण अपने आप में ध्यान देने योग्य हैं लेकिन बाद में आनेवाली कथा तो कहीं अधिक दिलचस्प है। वे बुद्धिमान जन गल्फकोस्ट से आये थे। एक दिन उन्होंने अपने ईश्वर को यह कहते सुना कि वे अपनी प्राचीन परंपराओं और मृगचर्म पर लाल और काली रोशनाई से लिखने वाली कला को साथ लेकर चल दें।

आदिवासी कथा उन आदि नाहुआओं की उस घोर असहायता का चित्रण करती है जिसमें वे छोड़ दिये गये थे। हतप्रभ कर देनेवाली असहायता की इस स्थिति की तुलना इस्पहानी विजय के प्रभाव से करना सरल है। आदिवासी (इंडियन) मूलपाठ से पता चलता है कि

एक चित्रयुक्त पांडुलिपि का अन्य पृष्ठ। नाम कोडेक्स बोरबानिकस
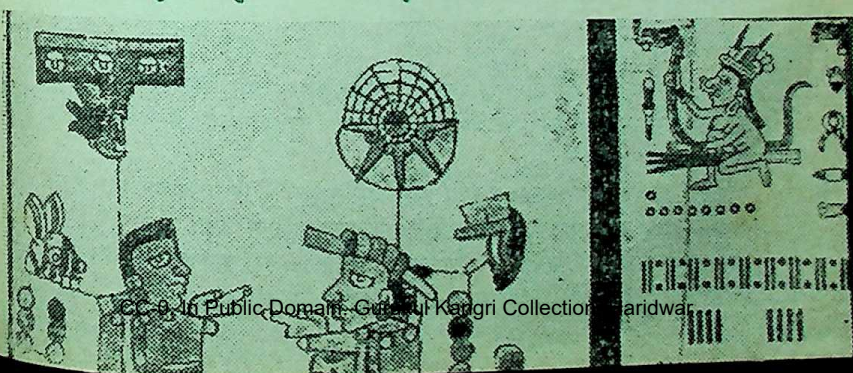
किस प्रकार प्राचीन ऐजटेक अपने आपको
प्रश्नों से जुझाते रहे।
क्या सूरज चमकेगा ?
क्या उषा आएगी ?
क्योंकि वे दूर चले गये हैं
क्योंकि लेते गये हैं दूर
वे काली और लाल रोशनाइयां
वे पांडुलिपियां
कैसे बनी रहेगी धरती,
कैसे जीवित रहेगा शहर ?
कौन करेगा हम पर शासन
कौन दिखाएगा हमें राह ?
कैसा होगा राज ?
जहां से किसी को शुरू करना होगा ?
कौन सी होगी रोशनी ?
और कौन-सी होगी टार्च ?

यहां पर हम स्पष्टत: परंपरा और लेखन के एक ऐसे दृष्टिकोण से टकराते हैं जो सत्तामूलक विचार से जुड़ा और व्यावहारिक स्तर पर आत्मसात है।

वास्तव में, यह निश्चित करने के लिए कि विश्व का अस्तित्व बना रहेगा और प्रसारण के उपकरणों के खो जाने से उनके जीवन का अंत और विश्व का विनाश नहीं होगा, नाहुआ लोग अतीत को सुरक्षित रखने के स्वरूप और प्राचीन ज्ञान को पुन: खोजने इकट्ठा होते हैं।

उनकी चिंता स्वरूप और अं... को सुरक्षित रखने के विभिन्न तरीकों को लेकर नहीं है, क्योंकि वे अनगिनत हैं। उनकी चिंता सुरक्षित रखने की क्रिया से है ताकि उसका स्मरण संघर्षों और ... से भरी दुनिया को प्रकाशित कर सके—

तब उन्होंने ईजाद किया भाग्य विचार
घटनाओं का क्रम, वर्षों की गणना
सपनों की पुस्तक
उन्होंने लिखा घटनाओं का क्रम
और उनकी दिशा
वह समय जो बीता
तोलतिका के
तेपानिका के
मेक्सिका के शासन के अंतर्गत
चिचिका का समस्त शासन काल

बाद में त्लैकेलेल नाम के मंत्री ने (जिसने कि ऐजटेकों पर उनके सर्वाधिक वैभव के दिनों में व्यावहारिक अर्थों में राज किया) दूसरे लोगों का जिक्र करने वाले सारे दस्तावेजों को जला दिया। प्राचीन पांडुलिपियों में ऐसा परिवर्तन कर दिया ताकि ईश्वर द्वारा चुने हुए उनके लोगों की मान्यता स्थापित हो जाए। •

सामने प्रकाशित रंगीन चित्र

ऊपर : चार शती पूर्व की एक पुस्तक, जो कला-अलबम और ऐतिहासिक उपन्यास का संयोग है। यह चित्र उसी पुस्तक का एक पृष्ठ है, जिसमें एक ऐजटेकी देव चित्रित है।
बायें : ऐजटेकों का सृष्टिदेव, कृषि का आविष्कर्ता और अध्ययन का संरक्षक—'पंखयुक्त सर्प', जो मेक्सिकी देवकुल का एक बड़ा देवता है।
दायें : एक पक्षी का भक्षण करता हुआ नागफनी पर आसीन गरुड़। यह चित्र ... के आख्यान का स्मरण कराती है।

स्वीडन : पर्यटन का विस्मय-लोक

डॉ॰ इन्दुभूषण सिन्हा

दार्शनिक हीगल ने अमरीका को 'कल का देश' (द लैंड ऑव टुमारो) कहा था, किंतु आज यदि आनेवाले 'कल का देश' देखना हो तो ध्यान फौरन स्कैंडीनेविया के देशों, विशेषकर स्वीडन की ओर चला जाता है।

स्वीडन की याद आते ही उस अति-विकसित समाज का चित्र दिमाग में घूम जाता है, जहां भविष्य अभी ही 'वर्तमा[illegible] कर दिया गया है। यदि आर्थिक समृ[illegible] उच्चतम जीवन स्तर, प्रगतिशील सा[illegible]जिक संस्थाएं, जन-कल्याण, मानवतावा[illegible] और यौन-स्वतंत्रता स्वीडन को 'समय [illegible] आगे का देश' बनाते हैं, तो वहां के पर्यट[illegible] आकर्षण केंद्र, प्राकृतिक सौंदर्य, सुं[illegible] स्त्रियां, मध्यरात्रि का सूर्य, और उत्त[illegible]

भोजन, इस देश को पर्यटकों के लिए एक विस्मयलोक बनाते हैं। सौंदर्य यहां अपनी चरम परिणति में है, चाहे वह नारडिंगा प्रदेश का भूदृश्य हो या स्केन प्रांत में १२वीं सदी का बोसजो कानवेंट, या देश के किसी भी भाग की रूपसियां।

ऊंघते हुए द्वीपों, चमकती हुई झीलों, बरफीली चोटियों, घने वनों, समुद्र-तटों, के इस देश का चित्ताकर्षक व्यक्तित्व है।

राजधानी स्टाकहोम, जो एक हजार वर्ष पूर्व वाईकिंग समुद्री लुटेरों का 'लांचिग पैड' थी, आमतौर पर पर्यटकों का भी 'लांचिग पैड' है। यह लगभग द्वीपों पर ही बसा हुआ है। इन द्वीपों की कुल संख्या १४ है और वे ४० से अधिक पुलों द्वारा जुड़े हुए हैं। पश्चिम में ७० मील लंबी मलार झील और पूरब में प्रवेश द्वार पर ही द्वीप-समूह लिये हुए बाल्टिक सागर है। इसलिए इस मनोहर नगर को 'उत्तर का वेनिस' और 'जल पर स्थित नगर' भी कहते हैं।

स्टाकहोम में पहुंचते ही एक वास्तुकार होने के नाते मेरी दृष्टि स्काइलाइन (गगनरेखा) की ओर जाती है और टाउनहाल के टावर, जिसमें तीन सुनहले क्राउन लगे हैं, पर रुक जाती है। टाउनहाल एक भव्य इमारत है, जो मुझे नगर की प्रशंसा में एक वास्तुगीत-सा लगती है। मुझे बतलाया जाता है कि इसकी सजावट में सारे स्वीडन के कलाकारों तथा शिल्प-कारों ने योगदान दिया है। हर वर्ष दिसंबर में इसमें नोबल पुरस्कार का भोज होता है और साथ ही एक बहुत ही मनोरंजक कार्यक्रम 'लुसिया डे' भी होता है, जिसमें सबसे सुंदर लड़की को लुसिया (प्रकाश की रानी) चुना जाता है। वह एक ताज, जिस पर मोमबत्तियां जलती रहती हैं,
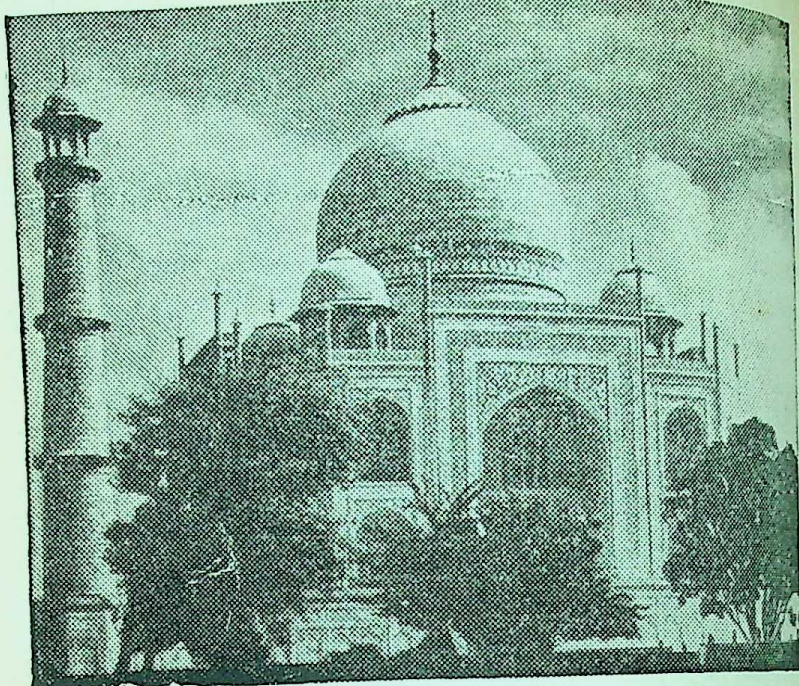
पर्यटन नगरी स्वीडन का एक दृश्य

शाहजहाँ के प्रेम की अमर यादगार...

ताजमहल के सौन्दर्य को नष्ट किया जा रहा है

ताजमहल की ही नहीं, देश के सभी स्मारकों की यही करुण कहानी है — पत्थर इत्यादि से खरोंचे भद्दे निशान इनके सौन्दर्य को नष्ट कर रहे हैं।

कलाकार की छेनी ने वर्षों की साधना के बाद निर्विकार पत्थर को रूप दिया, शिल्पकार ने अपनी आत्मा को इनके कण-कण में उड़ेला, अपनी जवानी तथा बुढ़ापा इन पर न्योछावर किया। तब कहीं जाकर मुमताज़ महल का मज़ार ताजमहल कहलाया।

लेकिन आज उसी महान कला को नष्ट किया जा रहा है। सौन्दर्य के दुश्मन सुन्दर से सुन्दर स्मारकों पर अपने नाम की नक्काशी किये बिना नहीं रहते, बाग-बगीचों को उजाड़ते हैं और नदी व समुद्र तटों को कूड़े-करकट के

यही सुन्दर स्मारक, महकते बाग-बगीचे और सुनहले नदी-[illegible] तट हमारी राष्ट्रीय धरोहर का महत्वपूर्ण अंग है। इनके आकर्षण से खिंच कर पर्यटक हमारे देश की यात्रा करते हैं, हमारे लिये विदेशी मुद्रा लाते हैं और अनेक भारतवासियों के लिये रोजगार का साधन हैं। अपनी महान कला को अत्याचार और संहार से बचाइये। युवा पीढ़ी में इनके प्रति गौरव की भावना जागृत कीजिये।

अपनी विरासत को नष्ट होने से बचाइये — आपके देखते देखते कहीं यह लुप्त न हो जाए

पहने हुए आती है और साहित्य के लिए नोबल पुरस्कार विजेता द्वारा उसका राज्याभिषेक करवाया जाता है। -

स्टाकहोम एक अत्याधुनिक नगर है किंतु यहां पुराने समय की चीजें भी देखने को मिलती हैं। सात सौ वर्ष पुराने इस नगर में अब भी मध्ययुगीन स्ट्रीट-प्लान सुरक्षित है, जिसमें पत्थर की वीथियां और मुड़ी हुई चक्करदार गलियां, जिनके दोनों किनारों पर १५ वीं और १६ वीं सदी के मकान हैं, अपने मौलिक रूप में हैं। नगर का सबसे पुराना गिरजा स्टोरकीकन और विशाल राजमहल, जिसमें स्वीडन के युवा नरेश रहते हैं, पुराने नगर के मुख्य आकर्षण हैं। यहां पर ही संसार का सबसे पुराना ओपेन-एअर म्यूजियम-स्कैनसेन है, जिसमें टिंबर की प्राचीन इमारतों और ग्रामीण संस्कृति की वस्तुओं–जैसे लैपवासियों के हैट आदि का दुर्लभ संग्रह है। स्वीडिश गाइड, जो एक आकर्षक युवती है, बतलाती है कि यह राष्ट्रीय उत्सवों का केंद्र भी है। राजमहल के आंगन में पर्यटकों के मनोरंजन का एक शो चल रहा है— रक्षक का बदलना, जो डेनमार्क में भी देखने को मिला। रक्षकों की पोशाक और परेड शानदार हैं।

नार्वे तथा स्वीडन में जलपोत बनाने की परंपरा बहुत पुरानी है। इसका कारण इनकी भौगोलिक स्थिति है। ये प्रायदीप ती[illegible] और समुद्र से घिरे हैं। समुद्रतट मध्य भाग से बहुत निकट है। कहीं भी बाहर जाने के लिए समुद्री मार्ग से जाना पड़ता है। आज के युग में तो विमानों से भी जाया जा सकता है। वाइकिंग लोग नाविक विद्या में बहुत निपुण थे। आज भी संसार की सबसे बड़ी व्यापारिक नौशक्ति इन्हीं देशों के पास है। जलपोत निर्माण में, संसार में, इनका नंबर दूसरा है। यहां ही मैंने 'वासा' नामक युद्धपोत देखा। यह युद्धपोत सन १६२८ में डूब गया था और ३३३ वर्ष तक स्टाकहोम बंदरगाह के तल में खोया रहा। लगभग १० वर्ष पूर्व इसका पता चला। तब इसे निकाला गया। इसे देखने के लिए भी पर्यटकों की भीड़ लगी हुई है।

स्टाकहोम एक सुनियोजित शहर

स्टाकहोम एक अत्यंत स्वच्छ, सुंदर और सुनियोजित नगर है। वहां आधुनिक भवननिर्माण काफी हुआ हैं। नगर की सुंदरता और स्वच्छता मन मोह लेती है। पर्यटक के आकर्षण के स्थल हैं, होटरन्सिटी शापिंग सेंटर, स्टाकहोम टैरेस, मालारेन झील के किनारे के प्लेटफार्म या वाल्डीमरसुडे उद्यान, जो एक समय राजकुमार युजीन का घर था।

स्टाकहोम से मैं गाटलैंड द्वीप पर स्थित विसबी नामक एक दर्शनीय स्थल देखने गया। यह मध्ययुग का नगर है जहां गुलाब के फूल और मध्ययुगीन भग्नावशेष अभी भी दिखायी पड़ते हैं। विसबी से मैं बस और नाव द्वारा यात्रा करके

संसार का सबसे पुराना कोर्ट थियेटर—ड्रोटिंगहोम कोर्ट थियेटर—जो अब भी प्रयोग किया जाता है, देखता हूं। यह स्वीडन का एक गौरवपूर्ण स्थल है।

ग्रीष्म ऋतु त्योहारों का मौसम

यद्यपि स्वीडन उत्तरी ध्रुव के निकट है, किंतु गल्फस्ट्रीम की उष्णधारा के कारण यहां की जलवायु थोड़ी गरम और अच्छी है। ग्रीष्म ऋतु स्वीडन में 'सुखद गरम-आलिंगन' की भांति आती है और जून के अंत में पूरे यौवन में होती है, जब पर्यटन मौसम चरमसीमा पर होता है। वातावरण में हर्ष और उल्लास भरा रहता है। लोग बड़े प्रसन्न और उत्साह-पूर्ण दिखलायी पड़ते हैं। प्रमुख त्योहार, जैसे मिडसमर फेस्टीवल (मध्य ग्रीष्म), आदि अनेक उत्सव मनाये जाते हैं।

स्टाकहोम में रात के मनोरंजन के वे सभी साधन उपलब्ध हैं जो यूरोप के अन्य बड़े नगरों में हैं, जैसे नाइट क्लब, स्ट्रिप क्लब, जाज क्लब, फॉकसांग क्लब, उच्चकोटि के होटल और रेस्तरां। रॉयल ऑपेरा और रॉयल ड्रामेटिक थियेटर यहां के सांस्कृतिक जीवन में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं।

स्वीडन अलौकिक सौंदर्य और ऐश्वर्य का देश है। प्रकृति ने यहां सौंदर्य बिखेर दिया है। संसार की सबसे सुंदर स्त्रियां यहां पायी जाती हैं। यहां की वेलफेयर अर्थव्यवस्था व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक उसकी देखभाल करती है। गरीबी का नामोनिशान नहीं है। कानून ने स्त्रियों को अधिकार दे रखा है कि वे विवाहोपरांत भी विवाह से पहले का नाम लिख सकती हैं। स्टेटस (सामाजिक स्थिति या पद) अब विवाह का आधार नहीं है। सभी चीजें कान्ट्रैक्ट (अनुबंध) पर आधारित होती हैं। स्टेटस द्वारा लगाये जानेवाले प्रतिबंध तथा निर्भरता सामाजिक जीवन से खत्म कर दिये गये हैं एवं अनुबंध के लिए अवसर प्रदान किया जाता है। इस प्रकार स्वीडन तथा अन्य स्केन्डीनेवियन देश संसार के अन्य देशों, जिनमें अमरीका भी है, से बहुत पहले स्टेटस से कान्ट्रेक्ट की ओर बढ़े। विवाह-विच्छेद और यौन स्वतंत्रता इसका प्रतिनिधित्व करते हैं और इसी पर आधारित हैं। अनिवार्य यौन शिक्षा सन् १९५६ में लागू की गयी। यौन स्वतंत्रता काफी हद तक गर्भनिरोधकों पर आधारित है। विवाह के पहले यौन-संबंध तथा संतान-उत्पत्ति और दो-तीन बार विवाह-विच्छेद सामान्य बात है। स्वीडन में व्यक्ति, न कि समाज, यह निर्णय लेता है कि यौन संबंध कब उचित और अनुमतियोग्य है। अंगरेजी स्वीडन की एक प्रकार से दूसरी भाषा है। इसे वहां बहुत लोग जानते हैं।

—द्वारा ए. के सिन्हा, २ डी २/१ हैवी इलेक्ट्रिकल्स, रानीपुर, हरद्वार

शिक्षा नयी दिशा की ओर

लेखक मेरठ विश्वविद्यालय के उपकुलपति हैं। आस्ट्रेलिया-भ्रमण के दौरान उन्होंने वहां की शिक्षा-नीतियों का गहरा अध्ययन किया था। यहां उन्होंने भारत तथा आस्ट्रेलिया की शिक्षा-नीतियों का तुलनात्मक अध्ययन और कुछ क्रांतिकारी सुझाव प्रस्तुत किये हैं

● डॉ. जगतनारायण कपूर

आस्ट्रेलियाई समाज की उच्च शिक्षा के प्रति जन्मजात आस्था रही है। उच्च शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य इस समाज में मानवीयता को विकसित करना है। यही विकसित मानवीयता देश को उन्नति की ओर अग्रसर करती है। विश्वविद्यालय के छात्र तथा प्राध्यापक को यहां सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। सरकार महत्त्व-पूर्ण विषयों पर निर्णय लेते समय प्रोफेसर की राय लेती है, यहां तक कि अर्थ-व्यवस्था, समाज तथा विज्ञान की जटिल समस्याओं का समाधान विश्वविद्यालय का प्रोफेसर ही करता है। सरकार तथा विश्वविद्यालय के समुचित सहयोग से सर्वसाधारण की समस्याओं का उचित समाधान किया जाता है। बहुत बड़ी धनराशि जो विश्व-विद्यालय को दी जाती है उसका उद्देश्य सरकार तथा जनता को निकट लाना होता है। यहां कोई भी राजनीतिक दल विश्व-विद्यालय पर अनुचित प्रभाव नहीं डालता। इसके विपरीत भारत की स्थिति देखिए। विश्वविद्यालय के प्रोफेसर का सम्मान तो दूर, उसे हेय दृष्टि से देखा जाता है। यहां राजनीति और शिक्षा में किसी प्रकार की ईमानदारी नहीं है। सभी राजनीतिक दल आज स्वार्थ के लिए प्राध्यापकों तथा विद्यार्थियों का मनमाने ढंग से प्रयोग करते हैं। सरकार बुद्धिजीवियों की अपेक्षा राजनीतिक नेता

लेखक

का सम्मान करती है।

आस्ट्रेलिया में पंद्रह विश्वविद्यालय हैं। आगामी तीन वर्षों में तीन और विश्वविद्यालय खुलने की संभावना है। एक विश्वविद्यालय में पंद्रह सौ से लेकर अठारह हजार छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं। बहुत-से विश्वविद्यालयों में पांच हजार से लेकर दस हजार तक विद्यार्थी भी हैं। एक विश्वविद्यालय का वार्षिक बजट पांच करोड़ रुपये से लेकर तीस करोड़ रुपये तक है। कुछ विश्वविद्यालयों का बजट दस से बारह करोड़ रुपये तक का भी है। इसके अतिरिक्त पुस्तकों की संख्या भी आश्चर्यजनक है। केवल एक पुस्तकालय में एक लाख से लेकर दस लाख तक पुस्तकें हैं। एक विद्यार्थी पर बीस हजार रुपये वार्षिक खर्च होते हैं। प्रत्येक विश्वविद्यालय पर समान रूप से व्यय होता है। शोध-छात्र पर और भी ज्यादा व्यय किया जाता है क्योंकि उसे राष्ट्र की अमूल्य पूंजी समझा जाता है।

एक शोधार्थी पर लगभग पचहत्तर हजार रुपये प्रतिवर्ष व्यय किया जाता है। आस्ट्रेलियाई राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में केवल शोधार्थी हैं इसलिए इसका बजट बहुत अधिक है। भारत में विश्वविद्यालयी छात्र पर केवल छह सौ रुपये प्रतिवर्ष व्यय किया जाता है। इसके अतिरिक्त यहां पुस्तकें भी सीमित हैं। पत्र-पत्रिकाओं की संख्या प्रायः नहीं के बराबर है। यहां के विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक [illegible] है ([illegible]

दो - तीन लाख) लेकिन उस पर अधि[illegible] ध्यान केंद्रित नहीं किया जाता। आई. आई. टी., मेडिकल तथा एग्रीकल्चर [illegible] छात्र पर भारत में पांच हजार से लेकर पंद्रह हजार तक प्रतिवर्ष व्यय किया जाता है। यह राशि आस्ट्रेलिया के विद्यार्थी पर व्यय की जानेवाली राशि के अनुपात में बहुत ही कम है। यही कारण है कि भारत का विद्यार्थी कुंठित हो गया है।

शिक्षा के प्रति नि[illegible]

आस्ट्रेलिया के विद्यार्थी में उच्च[illegible] शिक्षा के प्रति निष्ठा है। छात्र अपने शोध-प्रबंध में राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान करता है। भारत में केवल शोध-प्रबंधों के प्रकाशन पर बल दिया जाता है पर आस्ट्रेलिया में उपयोगी शोधग्रंथों के प्रकाशन की समुचित व्यवस्था की जाती है।

आस्ट्रेलिया में विश्वविद्यालय [illegible] कालेज की संचालन-व्यवस्था में तात्त्वि[illegible] अंतर है। यहां कालेज विश्वविद्यालय [illegible] संबद्ध नहीं है; बल्कि प्रत्येक कालेज स्व[illegible] इकाई के रूप में है। प्रवेश, परीक्षा, [illegible]लन—सब में प्रत्येक कालेज का अ[illegible] ही प्रारूप है। हर कालेज में अपने नि[illegible]नुसार विद्यार्थी का प्रवेश तथा प[illegible] होती है, तथा उसे प्रमाणपत्र दिया [illegible] है। प्रत्येक कालेज का प्राध्यापक [illegible] के दृष्टिकोण के अनुसार उस विषय [illegible] क्षेत्र-विशेष का विशेषज्ञ होता है। [illegible] व्यापार, उद्योग तथा जीवन बीमा [illegible] महत्त्वपूर्ण विषयों पर भाषण देते हैं

यह प्रत्येक प्राध्यापक की निजी विशेषता होती है। शिक्षा में उपयोगितावादी दृष्टिकोण की प्रधानता है। शिक्षा हर छात्र के लिए उपयोगी है। यहां शिक्षा केवल नौकरी दिलाने के उद्देश्य के लिए नहीं है। नौकरी और शिक्षा दो अलग चीजें हैं। उच्च स्तर पर शिक्षा प्राप्त करनेवाले हर छात्र को रोजगार मिल जाता है। इसके अतिरिक्त उन लोगों के लिए शाम को शिक्षा का प्रबंध किया जाता है जो दिन भर दफ्तर में काम करते हैं। कई प्रकार के पार्ट टाइम कोर्स में शुल्क देकर हर क्षेत्र का व्यक्ति अपनी योग्यता को बढ़ा सकता है। सप्ताह में दो बार आकर ये लोग अपने कार्यक्षेत्र को विस्तार देते हैं। 'सांध्य विश्वविद्यालय' के प्राध्यापकों में चालीस प्रतिशत ऐसे होते हैं जिन्हें कम-से-कम पांच वर्ष का प्राध्यापन - अनुभव होता है। व्यापार-उद्योग, अर्थशास्त्र, बैंकिंग तथा जीवन-बीमा आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण भाषण होते हैं। इस प्रकार यहां लगभग पांच हजार विद्यार्थी पूर्ण समय तक तथा पांच से सात हजार विद्यार्थी आंशिक समय तक शिक्षा प्राप्त करते हैं। भारत में प्रत्येक कालेज विश्वविद्यालय से संबद्ध रहता है। हर कॉलिज विश्वविद्यालयों के नियमों का ही पालन करता है।

शिक्षा की व्यवस्था है

उच्चस्तरीय शिक्षा को व्यापक रूप देने के लिए विश्वविद्यालय में प्रौढ़शिक्षा की भी व्यवस्था है। सभी प्रकार का प्रौढ़ वर्ग सांध्यकालीन विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करता है। इन संस्थानों में विदेशी-भाषा, खाना-पकाना, राजनीति, सामाजिक ज्ञान तथा धर्म पर दस से लेकर पचास तक भाषण करवाये जाते हैं। इस प्रकार की भाषण-माला के अतिरिक्त दस, पंद्रह लोगों के समूह को पत्राचार द्वारा भी शिक्षा दी जाती है। अतः हर प्रकार का प्रौढ़ व्यक्ति अपने आपको युवक समझता है। भारत के केवल दो-तीन विश्वविद्यालयों में ही प्रौढ़शिक्षा का आयोजन है। यहां का प्रौढ़ अपने आप को युवा वर्ग से अलग समझता है।

आस्ट्रेलिया के विद्यार्थी-वर्ग में किसी प्रकार का आक्रोश, अनास्था, घुटन तथा संत्रास की भावना नहीं है क्योंकि उसका भविष्य निश्चित तथा उज्ज्वल है। परीक्षा प्राध्यापक के अतिरिक्त विद्यार्थी वर्ग

बस जलाओ या हवाईजहाज, मंत्रीजी के जूं नहीं रेंगेगी—क्योंकि उनके सिर पर बाल ही नहीं हैं

का भी उचित सम्मान किया जाता है। एकेडेमिक काउंसिल, एक्जीक्यूटिव काउंसिल में उनका प्रतिनिधित्व होता है। परीक्षाओं के प्रति विद्यार्थियों में सम्मान कभी कम नहीं हुआ क्योंकि प्राध्यापक जो कुछ भी पढ़ाता है उसे प्रश्नपत्र में दे देता है। उत्तर पुस्तिका जांचने के बाद विद्यार्थी को लौटा दी जाती है। परीक्षा-प्रणाली में हेर फेर का प्रश्न ही नहीं उठता। प्राध्यापक वर्ग को भी आकर्षक वेतन मिलता है। बीस प्रतिशत ज्यादा धनी या इतने ही प्रतिशत निर्धन व्यक्ति को छोड़कर ८० प्रतिशत प्रत्येक परिवार में दो कारें हैं। यहां की बड़ी पीढ़ी युवा पीढ़ी को समझने का प्रयत्न करती है। भारत में छात्र-असंतोष का एकमात्र कारण यही है कि शिक्षक तथा छात्र-वर्ग दोनों एक दूसरे से कोसों दूर हैं।

आस्ट्रेलियाई विश्वविद्यालय - आयोग सभी विश्वविद्यालयों के स्तर को समान रूप से स्थिर करता है। केवल शोध-संस्थान को ही विशेष धनराशि दी जाती है। भारतीय विश्वविद्यालयों में इस प्रकार की समानता नहीं है।

आस्ट्रेलिया की उच्चस्तरीय शिक्षा-प्रणाली को देखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि भारत में भी इसी प्रकार की शिक्षा-प्रणाली होनी चाहिए। शैक्षणिक योग्यता को विस्तार देने के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार हैं—

विश्वविद्यालय अथवा कालेज के प्रत्येक प्राध्यापक के पास निजी कक्ष होने चाहिए, जहां वह गंभीर अध्ययन कर सके। इसी तरह के एक लाख कक्षों को बनाने के लिए लगभग पचास करोड़ रुपये की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त पुस्तकों की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। मूल वेतन का कम-से-कम १० प्रतिशत एक प्राध्यापक को पुस्तकों के लिए मिलना चाहिए। प्राध्यापक को लगभग आठ घंटे अपने कक्ष में रहना चाहिए ताकि अध्ययन के अतिरिक्त हर समय विद्यार्थी के साथ उसका संबंध रह सके। प्रत्येक प्राध्यापक के पास निजी पुस्तकालय होना चाहिए। विश्वविद्यालय के स्तर पर प्रौढ़शिक्षा को व्यापक रूप देना चाहिए। व्यापार, उद्योग, बैंकिंग आदि की समुचित शिक्षा विद्यार्थी को देनी चाहिए। विश्वविद्यालय की हर समिति में विद्यार्थीवर्ग का प्रतिनिधित्व होना चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी का प्रवेश योग्यतानुसार हो। पत्राचार कोर्स को भी रूप देने की आवश्यकता है। इस प्रकार की व्यवस्था में आगामी पांच वर्षों में ५०० करोड़ रुपये की आवश्यकता होगी। निष्कर्षतः उच्चस्तरीय शिक्षा को व्यापक रूप देने के लिए समान रूप से धन के वितरण तथा विद्यार्थियों का समिति में नेतृत्व आवश्यक है। विद्यार्थियों के असंतोष को दूर करने का एकमात्र उपाय यही है कि विद्यार्थी-वर्ग के सामने उच्च शिक्षा का निश्चित उद्देश्य रखा जाए। •

व्यंग्य

मानव-जगत पर शोध

• श्रीकांत चौधरी

ऐसा कहा जाता है कि अरबों वर्ष पूर्व सूर्य से एक अंश पृथक होकर, जैसे एक बड़े दल से एक गुट पृथक होकर स्वतंत्र बन जाता है, पृथ्वी बन गया और लाखों वर्ष पूर्व हमारी जानवर-सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ। संभवतः अमीबा हमारी जाति का पूर्वज था। अब संक्षिप्त में 'मानवर-जगत' (शार्टकट में मानव-जगत) की बनावट, रूप-रंग, एवं सभ्यता-संस्कृति का उल्लेख करना अतिशयोक्ति न होगी।

यह कुछ 'चमचों' की नम्र लचक के अपवाद को छोड़कर मेरुदंडधारी, स्तनपायी, अस्तनपायी जल, थल, नभ में सनसनी फैलानेवाला, दो हाथ, दो कान, दो आंखें देखने में साबुत, पर वस्तुतः कटी नाक तथा अधिकतम बत्तीस दांतवाला, परोपजीवी जानवर है। इसे नर, मादा दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। नर, मादा के मुकाबले बहुत आज्ञाकारी और सहनशील होता है। जब नर आफिसों, कचहरियों से भोजन का जुगाड़कर, घर लौटता है, उस

बाद में देती है, पहले पूरी दैनिक रिपोर्ट मांगती है!

मानवर-समुदाय में अधिकांश मानवर काले, कुछ गोरे और लाल-पीले भी होते हैं। कभी-कभी सफेद और काले रंगवाले आपस में युद्ध कर लाल रंग बहाते हैं। यह बड़ा लोमहर्षक दृश्य होता है और हमारे नगरों में होनेवाले युद्धों से कई

गुना बड़ा, भयावह और वीभत्स होता है। यह हमारे सभ्य जगत के लिए अत्यंत गर्व की बात है कि इस जंगली मानवर-सभ्यता का पूर्वज हमारे यहां के बुद्धिजीवी वर्ग का बंदर तबका है। यही कारण है, जहां हम सभ्यता, सहयोग से एकजुट होकर प्रगति के चरमोत्कर्ष पर हैं, वहां यह सभ्यता के प्रथम सोपान पर भी नहीं पहुंच पाया। टुच्चेपन, जाति, धर्म, राष्ट्रीयता से निकल बंदरावस्था तक पहुंचने में इसे शताब्दियां लग जाएंगी। प्रकांड मानवरशास्त्री डॉ. काग का ऐसा कथन है।

मानवर की मूल प्रवृत्तियां

मानवर अलग-थलग, एक दूसरे को नष्ट करने और अपना शिकार अपने आप ढूंढ़ने की प्रवृत्ति रखता है या दूसरे का शिकार उड़ा लेता है। मानसिक परिपक्वता और समझबूझ की दृष्टि से यह इतना बुद्धिमान है कि कुछ समान आवश्यकताएं न होतीं तो यह स्वयं में एक भाषा, जाति और राष्ट्र होता! यह अपने अधिकारों के प्रति कभी उदासीन नहीं रहता। तटस्थ तो इतना है कि चाहे मानवर-नगर में आग लगे या पड़ोस में, यह अपनी मादा के साथ घर में बैठा सुगम संगीत सुनता रहता है।

वैसे आम मानवर बहुत शांत, कुंठित और सुषुप्तावस्था में रहता है किंतु जब कोई इसके साथ छेड़खानी करता है या यह स्वयं ही किसी बात से असंतुष्ट हो जाता है तो तत्काल ट्रेनों में आग लगा देता है। ऐसे समय मानवरों का शासक-समुदाय लाठी, गोली एवं कर्फ्यू से इन्हें शांत करता है। मानवरों के स्वार्थ और भीरुता के संबंध में हमारे सभ्य समाज में एक संघर्ष-कथा प्रसिद्ध है। इसका उल्लेख आचार्य बगुला ने 'आउट लाइंस ऑव फॉवर्ड मानवर' में किया है।

एक बार मानवरों के खूंख्वार प्राणी गड़रिये ने हमारे प्रगतिशील समाज के पददलित पिछड़े निर्बल वर्ग भेड़ों को घेर लिया और उन्हें रोज जंगल, खेतों में रगेड़ने लगा, किंतु हमारी शक्ति और प्रगति से भयभीत यह रोज चिल्लाता, 'भेड़िया आया! भेड़िया आया!' बस, इसकी आवाज पर इसके सभी भयानक साथी रोज इसकी सहायता को आ जाते। एक दिन हमारे एक क्रांतिकारी युवा भेड़िये ने सचमुच जान हथेली पर रख अपने समाज की कर्णधार भेड़ों को मुक्त कराने का फैसला किया और खूंख्वार गड़रिये पर हमला कर दिया। यह खूब चिल्लाया, परंतु कोई मदद को नहीं आया। अस्तित्व के संघर्ष में योग्यतम की विजय हुई! मानवरों के किसी बुद्धिमान प्राणी डार्विन ने भी इसी सत्य को सूंघ लिया था।

एक नये वर्ग की उत्पत्ति

२०वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में यहां एक वर्ग की और उत्पत्ति हुई जिसे नेता कहते हैं। यह प्राणी मानव-जाति से अपनी सभ्यता, संस्कृति, आचार, विचार, षड्यंत्र नीति आदि की दृष्टि से पूर्णतः पृथक और

स्वतंत्र है तथापि पूर्णतः मानवरों पर ही आश्रित है। स्वतंत्र होते हुए भी इसका उद्गम मानवर-जाति से माना गया है। इसके संबंध में पूर्ण विवरण दुर्लभ है क्योंकि यह हमारे समाज के प्रगतिवादी सदस्य गिरगिट की तरह रंग बदलता है। मौका देख शत्रु और मित्र पर वार करता है, अतः हमारी सभ्यता के महत्त्वपूर्ण सदस्य शेर और सियार के निकट पड़ता है।

नेतावर्ग के बारे में यह उल्लेख करना

आवश्यक है कि यह प्राणी अपनी मांद से पांच वर्ष में एक बार अवश्य निकलता है। उस समय यह बहुत सभ्य शांत और सौम्य दिखायी देता है और घर-घर जाकर छोटे-बड़े मानवरों से वोट नामक भोजन की मांग बड़ी नम्रता से करता है। औसत मानवर इससे भयभीत रहता है क्योंकि दंगे, प्रदर्शन, आगजनी, लाठी, गोली चार्ज आदि इसी के वशीभूत होते हैं। इस संबंध में डा. ऑव मानवरी हिस्ट्री श्री सियार का तो यहां तक कहना है, "मानवर अपनी बर्बरता की प्रेरणा से ऐसी शक्ति प्राप्त कर चुके हैं कि जब चाहें अपनी समूची जाति को रसातल में मिला सकते हैं।"

मानवर-वर्ग की संतान चाहे नर हो या मादा, अपने माता-पिता से अधिक बलवान, बुद्धिमान और क्रोधी होती है। जब यह अपनी छात्रावस्था को पहुंचती है तो अपने मां-बाप और शिक्षक पर गुर्राती ही नहीं, वरन हमला तक बोल देती है। सिनेमा, ट्रांजिस्टर और एल. एस. डी. नामक बूटी से अपना मनोरंजन करती है और कभी-कभी अग्नियुक्त पंजों और ध्वंसात्मक पैरों से ट्रेन, बस, कालेजों, आफिसों के फर्नीचर भी जला देती है।

जानवर-जगत से घनिष्ठ संबंध

अपने ग्रंथ 'हमारे अंतर्राष्ट्रीय संबंध' में मानवरों से हमारे जानवर-जगत के घनिष्ठ संबंधों का उल्लेख करते हुए दार्शनिक विचारक डॉ. जिराफ ने मानवरों की विभिन्न उपयोगिताओं पर प्रकाश डाला है। आज चिड़ियाघरों में हमारे यहां के बुद्धिजीवी वैज्ञानिक, विविध मानवरों का गहन अध्ययन कर रहे हैं। मानवर अपने जंगलीपन और अंधविश्वास के कारण हमें देवता समझकर पूजा करता है। गाय, नागिन, बैल, बारहसिंहा, गजराज, हंस, मोर, नीलकंठ, उल्लू आदि ने मानवरों को अपना भक्त बना लिया है और उनके धर्मग्रंथों में इन्हें बहुत आदर और भक्ति

प्राप्त है। उनके मानवरों के राजनीतिक, सामाजिक जीवन का काफी प्रयोग करता है। नरसिंह, वराह, मत्स्यावतार, गाय आदि तो साक्षात अवतार ही माने गये हैं। बैल ने तो मानवर-जगत की एक बड़ी राजनीतिक पार्टी को वर्षों तक अपने मोह से जकड़कर एक नया मोड़ दे दिया है। श्री बैल के बूढ़े हो जाने पर अब उनके स्थान पर एक बछड़े को लिया गया है। संरक्षक के रूप में उसकी मां 'गाय' भी साथ में चिपका दी गयी है। गजराज, वनराज, गैंडा, हिरन, भालू आदि तो मानवरों की बदौलत ही मानवर-जगत का सरकस देख पाते हैं।

प्राचीन-अर्वाचीन कवि लेखकों पर हिरनियों, मोर, कोयल, पपीहा, तोता, मैना आदि ने जबर्दस्त प्रभाव डाला है। कबूतरों ने उनके लव-लेटर्स तक उड़ा दिये और तोता-मैना ने कई प्रेमियों के कच्चे चिट्ठे खोल दिये। कुछ पागल संप्रदाय के मानवर कोयल, पपीहा, हिरनी आदि को अपनी प्रेयसी या प्रियतम भी समझ लेते हैं। डॉ. डॉग अल्सेशियन का कथन है कि हमारे संपर्क से मानवर निरंतर प्रगतिशील होते जा रहे हैं।

हमारे यहां के बुद्धिजीवी बंदर, सांप, मेंढक आदि इनकी प्रयोगशालाओं का प्रयोग कर पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। इधर चांद पर जाने के लिए हमारे कुत्ते-कुत्तियों और बंदरों ने इनके अंतरिक्षयानों का प्रयोग किया था।

हमारा समाजसेवी वर्ग गधा तो इनके पहनने के सुंदर कपड़ों को भी लेकर घूमता रहता है। इससे मानवरों पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा है कि इनमें से भी कुछ गधे हो गये हैं। कई गायक तो गधे के स्वर की हू-ब-हू नकल उतार लेते हैं। 'करेंट हिस्ट्री ऑव मानवर्स अफेयर्स' में प्रसिद्ध आलोचक डॉ. गिद्ध ने लिखा है कि 'गधों उल्लुओं, कौओं, सांपों, मोर, बैल, भालू, बत्तख आदि प्रगतिवादियों ने मानवरों का शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय मार्गदर्शन किया है। मानवरों की हमारे सभ्य और प्रगतिशील समाज पर इतनी श्रद्धा और आस्था है कि वे अपनी भाषा और साहित्य में हमारे संदर्भों का जमकर प्रयोग करते हैं।'

डॉ. चिंपांजी, जिन्होंने कई फिल्मों में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है और साथ ही डॉ. हार्स ऐंड डॉग, जिनकी प्रत्येक फिल्म में मानवरों को भी लिया गया है, ने अपने शोधग्रंथ 'थ्योरी ऐंड प्रेक्टिस ऑव मानवर-नेचर' में लिखा है कि ये अपने आपसी व्यवहार में 'अबे गधे', 'उल्लू', 'सुअर', 'उल्लू का पट्ठा', 'चमगादड़ की औलाद', 'रंगा सियार', 'तगड़ा मुरगा' 'बगुला भगत', 'साम्राज्यवादी भेड़िये', 'विस्तारवादी अजगर', 'काला अक्षर भैंस बराबर', 'आस्तीन के सांप', 'गिरगिट', 'लंगूर' आदि का प्रयोग, साथियों के स्वभाव, चरित्र अथवा रंगरूप और बुद्धि को मूर्त-रूप देने के लिए करते हैं।

—नया बाजार नं. १, दमोह (म. प्र.)

अखिल भारतीय स्तर पर कुछ ऐसे प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं जिनके संबंध में उपयोगी जानकारी आवश्यक है। मार्च अंक में आपने केंद्रीय हिंदी संस्थान के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत है नेशनल बुक ट्रस्ट के बारे में जानकारीपूर्ण लेख।

● बलदेव वंशी

नेशनल बुक ट्रस्ट, पुस्तक - प्रकाशन के क्षेत्र का नामी प्रतिष्ठान माना जाने लगा है। इसका कारण जहां इसके द्वारा प्रकाशित एक हजार पुस्तकें हैं, वहां एक लंबे अरसे तक यहां चलनेवाली तालाबंदी भी है तथा विभिन्न समाचारपत्रों एवं साहित्यकारों द्वारा समय-समय पर की गयी ट्रस्ट की आलोचनाएं भी हैं। ट्रस्ट के भीतर कर्मचारियों के आक्रोश और बाहर बढ़ते आलोचना के दौर के कारण ही डा. वी. वी. केसकर ने (जो दस वर्ष तक अध्यक्ष रहे) अवकाश प्राप्त किया और १२ जनवरी, १९७३ से डा. एस. गोपाल (डा. राधाकृष्ण

विश्व-पुस्तक मेला (१९७२) पर प्रदर्शित
डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटक सूर्यमुख का एक दृश्य

के सुपुत्र) इस संस्था के अध्यक्ष हैं। कहा जाता है कि इन्हीं कारणों से संस्था के भूतपूर्व निदेशक श्री करतार सिंह दुग्गल भी अपने पद से हटे हैं। अब वर्तमान निदेशक हैं श्री सैम्युएल इजराइल। मार्च-अप्रैल १९७२ में ट्रस्ट ने विश्व - पुस्तक मेले का आयोजन किया था। तभी से भीतर बाहर के आरोपों - नाराजगियों का सिलसिला अधिक तीव्र रूप में सामने आया। इस मेले में स्वदेश और विदेश के अनेक लेखक सम्मिलित हुए थे। यह बात दूसरी है कि कई भारतीय लेखकों ने लेखकों को निमंत्रित करने में भेद-भाव के लिए ट्रस्ट को दोषी ठहराया।

नेशनल बुक ट्रस्ट की स्थापना १९५७ में भारत सरकार के शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा एक स्वायत्त-संस्था के रूप में की गयी थी। इसका उद्देश्य है, देश में ऐसा वातावरण तैयार किया जाए, जिससे पुस्तकों के प्रति जनता की रुचि जागृत हो सके। पुस्तक-प्रदर्शनियां तथा पुस्तक-मेलों का आयोजन लेखन, अनुवाद, प्रकाशन तथा विवरण से संबंधित समस्याओं पर परिचर्चाओं का आयोजन आदि गतिविधियां ट्रस्ट के कार्यों का अंग हैं। इन कार्यों की पूर्ति के लिए पुस्तकें प्रकाशित करना, विभिन्न प्रकाशन - योजनाओं के अंतर्गत प्रोत्साहन देना और कम कीमत की पुस्तकें जनता तक पहुंचाने के प्रयत्न करना ट्रस्ट की परिधि में आते हैं।

पुस्तक पढ़ने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन

पुस्तकों के प्रति जन-रुचि जागृत करने की दिशा में ट्रस्ट प्रतिवर्ष राष्ट्रीय पुरस्कार मेला तथा प्रादेशिक पुस्तक-प्रदर्शनी में प्रकाशन के विभिन्न विषयों पर चर्चा एवं लेखकों-अनुवादकों की संगोष्ठी करता है। पुस्तक-

बायें : डॉ. एस. गोपाल : अध्यक्ष, नेशनल बुक ट्रस्ट, दाये : नेशनल बुक ट्रस्ट के निदेशक श्री सैमुअल इजराइल, महाराष्ट्र के राज्यपाल श्री अली यावर जंग के साथ
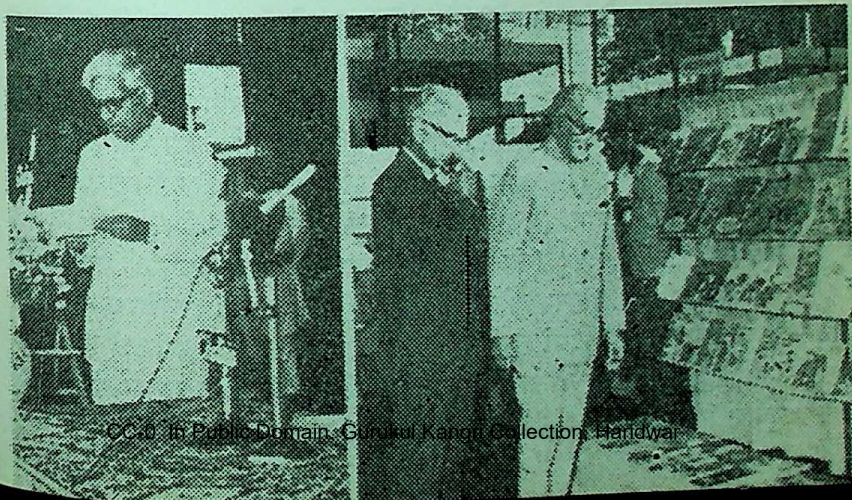
मेले में प्रकाशकों को निजी स्टाल लगाने के लिए आमंत्रित किया जाता है। ये मेले राज्यों के प्रमुख नगरों में लगाये जाते हैं।

प्रकाशन

भारत देश और लोग, राष्ट्रीय जीवन - चरित माला, लोकोपयोगी विज्ञान-माला, विश्व के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ, भारतीय लोक-संस्कृति, नेहरू बाल-पुस्तकालय, आदान-प्रदान, जाकिर हुसैन स्मृति-बाल-पुस्तक-माला (उर्दू में) आदि।

प्रोत्साहन-गतिविधियां

(क) 'विश्वविद्यालय स्तर के सस्ते प्रकाशन' उपलब्ध कराने-हेतु शिक्षा तथा समाज-कल्याण मंत्रालय के लिए ट्रस्ट ने कम मूल्य पर मानक ग्रंथ प्रकाशित करने का कार्य उठाया है। इस योजना में पाठ्य-पुस्तकें, संदर्भ-ग्रंथ छापे जाते हैं। (ख) लेखक-शिविर लगाकर अंतर्प्रादेशिक सद्भाव की वृद्धि की जाती है। इन शिविरों में प्रख्यात लेखकों को ट्रस्ट की ओर से आमंत्रित किया जाता है। (ग) 'अंतर्राष्ट्रीय पुस्तक मेलों-प्रदर्शनियों' में भारत का प्रतिनिधित्व ट्रस्ट करता आ रहा है। ट्रस्ट अब तक फ्रैंकफुर्त (पश्चिमी जरमनी) मारीशस, मनीला (फिलिपीन), काठमांडू (नेपाल), तेहरान (ईरान), काबुल (अफगानिस्तान) ढाका (बंगला-देश) आदि में आयोजित पुस्तक-मेलों में भाग ले चुका है। (घ) इसके अतिरिक्त पाठकों की पठन प्रवृति का सर्वेक्षण तथा अनुवादकों को प्रोत्साहन देने का कार्य भी ट्रस्ट संपन्न करता रहता है।

अनुदान-कार्यक्रम

'विश्वविद्यालय स्तर की पुस्तकों का अनुदान द्वारा अंगरेजी में प्रकाशन' तथा 'भारत में अमरीकी पाठ्य पुस्तक कार्यक्रम' के अधीन लाखों रुपये के अनुदान देकर पुस्तकें प्रकाशित की जातीं हैं, जो विज्ञान, तकनीकी, चिकित्सा की पुस्तकों के संक्षिप्तीकरण के रूप में सामने आएंगी।

प्रकाशन-दोहराव और सड़ती हुई पुस्तकें

उपर्युक्त जानकारी प्राप्त कर लेने के पश्चात हमारे मन में कुछ जिज्ञासाएं पैदा हुईं, अतः नेशनल बुक ट्रस्ट के निदेशक श्री सैमुअल इजराइल से भेंट कर हमने प्रश्न किया :

ट्रस्ट की अभी तक की उपलब्धियों से आप कहां तक संतुष्ट हैं?

"ट्रस्ट ने अपने क्षेत्र में पर्याप्त सफलता पायी है। अभी तक के कार्यों से हम निराश नहीं हैं किंतु पूर्णतः संतुष्ट भी नहीं। हमारी पुस्तक प्रदर्शनियां सफल रही हैं। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भारतीय पुस्तकों की बिक्री बढ़ी है, नाम हुआ है। हम एक हजार पुस्तकें छाप चुके हैं, जिनमें से कई पुस्तकें तो बची ही नहीं। उन्हें दोबारा छापने की सोच रहे हैं।"

ट्रस्ट देश में प्रकाशन की सबसे बड़ी सरकारी संस्था है। इसके सामने भी पुस्तकों के बिकने की कठिनाई है। देश और विदेश में बिक्री के साधन भी आपके ही पास अधिक हैं, तब भी ढेरों पुस्तकें

विश्व-पुस्तक-मेला (१९७२) पर आयोजित पुस्तक बाजार

आपके गोदामों में पड़ी सड़ती रहती हैं, ऐसा क्यों ?

"ट्रस्ट के पास अभी तक अपना कोई पूर्णतः स्वतंत्र बिक्री-संगठन नहीं है। इसलिए उतनी बिक्री नहीं हो पाती जितनी होनी चाहिए। अब हम बिक्री और विस्तार के लिए एक अलग विभाग संगठित कर रहे हैं।"

पता चला है कि जो पुस्तकें बिकी हैं वे राज्यों में सरकारी स्तर पर ही बिक पायीं हैं और शेष गोदामों में भरी पड़ी हैं। अपने देश तथा विदेश के अनेक प्रकाशकों से आपको अब तक हजारों पुस्तकें प्राप्त हो चुकी होंगी, आप उन पुस्तकों का प्रदर्शनी के उपरांत क्या करते हैं ?

"हम उन पुस्तकों का अगली क्षेत्रीय प्रदर्शनियों में भी उपयोग करते हैं। जो पुस्तकें प्रदर्शन-योग्य नहीं रहतीं, उनके सदुपयोग के बारे में हम विचार कर रहे हैं, जैसे—सार्वजनिक पुस्तकालयों को अनुदान देकर," निदेशक ने बताया।

किंतु पता चला है कि प्रकाशकों से मुफ्त प्राप्त ढेरों पुस्तकें गोदामों में पड़ी सड़ रही हैं, और कुछ पुस्तकों का मनमाना उपयोग हो रहा है। यह भी देखा गया है कि भारत सरकार के प्रकाशन - विभाग, साहित्य अकादमी, सांस्कृतिक संबंध - परिषद तथा नेशनल बुक ट्रस्ट के प्रकाशनों में दोहराव है, विशेषकर 'भारत-देश और लोग' तथा 'राष्ट्रीय जीवन-चरितमाला' आदि पुस्तकमालाएं तीन-तीन जगह से छप रही हैं। क्या इस दोहराव से जनता के धन का अपव्यय नहीं हो रहा है ?

"कुछ दोहराव तो हैं किंतु हमारी और प्रकाशन-विभाग की पुस्तकमाला एक-जैसी नहीं है। प्रकाशन-विभाग की मासिक-माला एक विशिष्ट प्रौढ़ शिक्षित

वर्ग के लिए है, जबकि हमारी पुस्तक-माला आमलोगों के पढ़ने के लिए सहायक पुस्तकें हैं। दूसरा, वे अलग-अलग लेखकों द्वारा लिखी होती हैं; फिर भी हम कोशिश कर रहे हैं कि दोहराव न हो। इस संबंध में मीटिंग होती हैं।"

नयी योजनाएं एवं कार्यक्रम

(क) ट्रस्ट विभिन्न राज्यों में, विशेषकर दक्षिण भारत में, अपनी शाखाएं खोलने जा रहा है ताकि क्षेत्रीय न्यासों की स्थापना द्वारा राज्यों में विस्तृत रूप में उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

(ख) 'श्रेष्ठ पुस्तक माला'—योजना के अंतर्गत लेखकों की दस सर्वश्रेष्ठ हिंदी पुस्तकें चुनी जाएंगी, जिनका विषय कुछ भी हो सकता है। हिंदीतर भाषाओं की छह पुस्तकें हिंदी में प्रकाशित की जाएंगी।

(ग) १९७५ के आरंभ में एक अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी लगाने की भी योजना है तथा दिल्ली में अपना भवन बनाने की भी।

ट्रस्ट ने नये बजट में अनुदान राशि भी बढ़ायी है।

१९७३–७४ में कुल राशि ४१ लाख रुपये थी। १९७४–७५ वर्ष के लिए १ करोड़ ३३ लाख रुपये की अपेक्षाएं हैं।

ट्रस्ट के अध्यक्ष डा. एस. गोपाल से भेंट कर हमने पूछा :

क्या कारण है कि पूरा लेखक-वर्ग ही एन. बी. टी. से असंतुष्ट है?

उन्होंने बताया कि यह हमारे ध्यान में है। हम इस ओर प्रयत्नशील हैं कि वर्तमान लेखकों की पुस्तकें अधिकाधिक छापें। हमने 'बोर्ड ऑव ट्रस्टीज' के नये सदस्यों में अधिक लेखकों को लिया है। नये लेखकों को भी ले रहे हैं।

नये लेखकों के नाम पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि उनके नाम मुझे याद नहीं। 'बोर्ड ऑव ट्रस्टीज' के जिन कुछ सदस्यों के नाम उन्होंने बताये, वे हैं सर्वश्री अमृत राय, के. एन. राज, प्रभाकर माचवे, ए. डब्ल्यु. खुसरो आदि। अंत में मैंने पूछा :

जिन कारणों से एन. बी. टी. में तालाबंदी हुई, धन के अपव्यय, अनियमितता और पक्षपात के जो आरोप अखबारों में छपे, उनके संबंध में कुछ बताएंगे?

"पूर्वस्थिति के बारे में कुछ नहीं कहना चाहता, वैसे ट्रस्ट के १५ वर्षों के कार्य की समीक्षा करने के लिए डा. नीहार रंजन राय की अध्यक्षता में समिति कार्य कर रही है," उन्होंने बताया।

'कूरियर' (पत्रिका) 'यूनेस्को' द्वारा हिंदी और तमिल-सहित विश्व की १५ भाषाओं में प्रकाशित की जाती है। इसके हिंदी-संस्करण का प्रकाशन ट्रस्ट के आधीन है। अगस्त, १९७३ से मार्च, १९७४ तक के अंक (अब तक) प्रकाशित नहीं हुए हैं। इस देरी का कारण अध्यक्ष महोदय ने प्रेस-संबंधी देरी और कठिनाइयां बतायीं, जबकि हमारी दृष्टि में ट्रस्ट में व्याप्त ढुलमुल व्यवस्था का ही यह परिणाम है।

—सी–१/१७३, लाजपतनगर,
नयी दिल्ली-११००२४

एक सत्य

शादी
प्रेम की समाधि

बे असर

क्या करेगा जहर
उससे तो कड़वा है
अपना हर सहर

—सुभाषचन्द्र 'सत्य'

सिद्धांत

समय का
विश्वास कर
कौन प्रतीक्षा करे
जाने वह
कब आये
कब लौट जाये
बिना खबर करे

—ओमप्रकाश गुप्ता

सपना

सपने, पहले नींद में आते थे
और अब
नींद, सिर्फ सपनों में आती है

—कामना शर्मा

सत्य

भूखे फकीर ने
तड़पकर कहा
सत्य की परिभाषा
बहुत छोटी है
केवल एक शब्द
'रोटी' है

—[illegible]

भाषा

लाल किले के नीचे
दबे काल-पात्र में
इतिहास अंगरेजी में
वर्णित है
लगता है आज भी
विश्वास है, व्यवस्था के
कर्णधारों को
कि हजार साल बाद भी
लाल किले के पहरेदार की भाषा
अंगरेजी होगी

—कृष्ण शुक्ल

समाजवाद

समाजवाद
समानांतर पटरियों से
कहां कम है ?
साथ-साथ चलते
दो छोर मिलते
कब हैं ?

—नरेन्द्र भारद्वाज

कहानी

• आरिगपूडि

जब श्री राव चार पांच लोगों के साथ क्लब में आये, तो उनके दोस्त छुपे-छुपे मुसकरा दिये। और वे क्लब में इस तरह चले गये, जैसे वह उनकी अपनी निजी संपत्ति हो, और उनके हुक्म पर ही वहां सब कुछ होता हो।

शायद ही कोई ऐसा दिन हो जब कि उनके कोई अतिथि न आते हों। अतिथि भी बड़े-बड़े ओहदेवाले, जाने-माने लोग, विदेशी भी। श्री राव भी इस तरह उनका आतिथ्य करते थे, जैसे आतिथ्य करने-कराने के लिए ही वे जीते हों।

क्लब भी बड़े ऊंचे दर्जे का है। पहले यह कभी अंगरेजों का एक्सक्लूसिव क्लब था। आजकल हिंदुस्तानी सदस्य तो हैं पर सभी ऊंचे वर्ग के, धनी रईस।

ढलती जवानी में भी श्री राव में एक तरह की कशिश थी, फिर व्यवहार इतना मीठा कि जो एक बार दोस्त बनते, जिंदगी भर उनके दोस्त बने रहते।

पैसों के बारे में भी बड़े उदार थे। जब कभी किसी को पैसा देते, तो इस तरह देते, जैसे हाथ का मैल उतार रहे हों। दूसरों को देकर वे शायद स्वयं ऐसा अनुभव करते, जैसे स्वयं पा रहे हों। नितांत भद्र पुरुष। बड़े मितभाषी थे।

श्री राव ने पिछले दिनों अपनी लड़की की शादी बड़ी धूमधाम से की। दो एक दिन में एक डेढ़ लाख रुपया पानी हो गया, तब उनके हितैषी मित्रों ने उन्हें 'पागल' कहकर सहानुभूति व्यक्त की।

उस दिन शाम क्लब में जो उनकी पार्टी शुरू हुई तो करीब नौ बजे तक चलती रही। क्लब करीब-करीब खाली हो गया
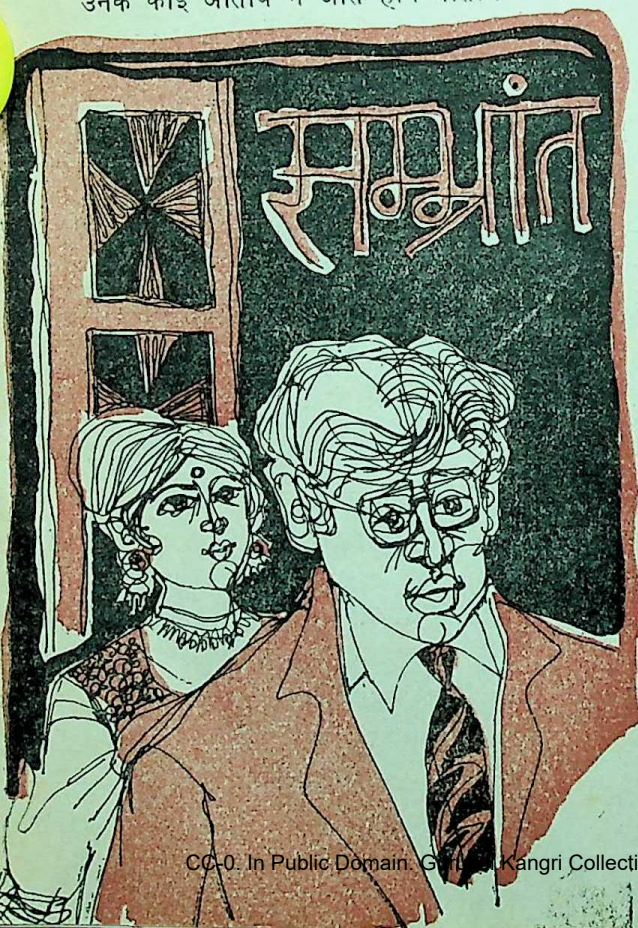
था। अगर श्री [illegible] न कहतीं, तो वे शायद उन आगंतुकों के साथ सारी रात ही वहां बिता देते।

"आपके पास कार है न?" राव साहब ने अपने अतिथियों से पूछा।

"हम टैक्सी में चले जाएंगे।" उन्होंने कहा।

"नहीं, नहीं, आप हमारी कार ले जाइए। कार बाहर ही है।"

"मगर . . . आप . . . ?"

"आप फिक्र न कीजिए।" यह कहते हुए वे क्लब के पोर्टिको से चले आये। उन्हें देख ड्राइवर कार ले आया।

जब अतिथि कार पर सवार हो गये, तो उन्होंने कहा, "कार आपके यहां रहेगी। सवेरे आपको यह क्लब ले आएगा, आपका ब्रेकफास्ट यहीं रहेगा। नमस्कार।" श्री राव ने यह सब इस प्रकार कहा था कि अतिथि उनकी शिष्टता और आभिजात्य विनय से अभिभूत हो मूक बैठे रहे।

श्री राव अपनी पत्नी के साथ क्लब के हाल में वापस चले गये, और क्लब के बैरा से कहा, "टैक्सी के लिए फोन करो।"

"कुछ तय हुआ कि नहीं?" उनकी पत्नी ने उत्सुकता प्रकट की।

"अभी तो परिचय ही हुआ है, पहले दिन ही कैसे काम की बात की जाए?" श्री राव ने बड़ी गंभीरता से कहा और पत्रिकाओं के पन्ने उलटने लगे।

सब रईस एक से नहीं होते, यद्यपि वे एक दूसरे की होड़ में एक-सा होना चाहते हैं। [illegible] रईस हैं या नहीं, यह कहना मुश्किल है, पर उनके पुराने रईसी ठाठ बदस्तूर जारी थे।

लेखक

वे कभी अपने इलाके के हैसियतमंद रईस थे। पुश्तैनी जमींदारी थी। लाखों रुपया उनके हाथ से गुजरा था, पर उन्होंने कभी यह न सोचा कि रुपया कैसे कमाया जाए। उनके यहां पैसे की नदी बहती थी, और जब जरूरत हुई उसमें लोटा डाला और भर लिया। जब अपना पैसा नहीं रहा, तब कर्ज का पैसा आया, पर वह खर्चा उसी तरह जाता था, जैसे वह भी पुश्तैनी बपौती हो। यह श्री राव की विशेषता थी, जो शायद और रईसों में नहीं होती।

वे इतने गंभीर थे, इतने संयत कि उनकी पत्नी भी प्रायः चुप रहतीं। वे भी उन्हें न बदल सकी थीं। बदलने की कोशिश ही छोड़ दी थी। वर्षों की गृहस्थी के कारण, दोनों की प्रकृति भी कदाचित एक-सी हो गयी थी।

कभी श्री राव के यहां चार, चार कारें होती थीं। उनके अतिथि हमेशा उनकी कारों में भेजे जाते थे, यह एक पारिवारिक परंपरा थी, जो आज भी जारी थी। यद्यपि उनके पास कर्ज से लदी

एक ही कार रह गयी थी और जमींदारी पिघल चुकी थी, उसके साथ बाप दादाओं की जमी-जमाई मिल्कियत भी। और कर्ज का पहाड़ तैयार हो गया था।

अगले दिन जब वे सवेरे मुसकराते, मुसकराते क्लब में आये तब उनके अतिथि उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके मित्र भी उनको देख मुसकरा उठे।

"मुझे कुछ देर हो गयी!" श्री राव ने मुसकराते हुए कहा। उनकी मुसकराहट में कुछ ऐसा आकर्षण था कि तनी भौं भी एकाएक ढीली पड़ जाती थीं।

"नहीं कोई खास देरी नहीं हुई है," अतिथियों ने भी मंद हास के साथ कहा।

श्री राव की एक खूबी थी। वे होने को बड़े मितभाषी थे, पर दूसरों से कुछ ऐसे दूर-दूर के प्रश्न करते जिनमें कोई निजी बात न होती थी, इसलिए खूब बातचीत चलती; और चलती जाती। और वे बड़ी दिलचस्पी के साथ सुनते। अगर सुनना ही अच्छी बातचीत करनेवाले की कसौटी हो, तो वे कुशल 'कान्वर्सेशनलिस्ट' थे।

बातें बहुत हुईं, कभी वियतनाम के बारे में, तो कभी अमरीका के बारे में, तो कभी चीन के बारे में, तो कभी योग पर तो कभी राजनीति पर। लेकिन जिस बात के लिए वे मिल रहे थे, उस पर श्री राव ने कुछ न कहा। कैसे कोई निजी बात छेड़े? श्री राव की स्वाभाविक शिष्टता में अपने बारे में बात करना अशिष्टता थी।

वहीं ब्रेकफास्ट हुआ, फिर वे अपनी गाड़ी में अपने अतिथियों को मद्रास की रौनक दिखाने चले गये। शिष्टता का कुछ भी तकाजा हो, पर जिस तरह उनकी घनिष्ठता बढ़ रही थी उससे कहना मुश्किल था कि यह योजनाबद्ध था या आकस्मिक। कहनेवालों का कहना था कि यह सब श्री राव के स्वभाव के अनुसार था।

जब वे घूम-फिरकर क्लब में भोजन के लिए आये, तो वहां उपस्थित क्लब के सदस्यों की नजर उनकी ओर मुड़ी, और प्रायः सभी मुंह फेरकर मुसकराये जैसे वे किसी की मूर्खता पर जी खोलकर हंस भी न पाते हों।

बड़े शानदार भोजन का इंतजाम श्री राव ने किया था। उसी तरह का जिस तरह वे पिछले दस पंद्रह वर्षों से करते आ रहे थे। मानो इन पंद्रह बीस वर्षों में कुछ हुआ ही न हो।

श्री राव खूब पार्टियां देते थे। रोज क्लब आते थे और बड़े ऐश से खर्चते थे; पर क्लब के सभी सदस्य जानते थे कि क्लब के बिल चुकाने के लिए हर बार कोई-न-कोई पुश्तैनी मिल्कियत बेची जा रही थी। और यह सिलसिला अनेक सालों से चल रहा था कि क्लब में अपनी हैसियत बनाये रखने के लिए वे घरबार की छोटी-मोटी चीजें भी बेच रहे थे। पर मजाल है कि उन्होंने इसके बारे में कभी कुछ सोचा हो कि जब हालत इतनी गयी गुजरी है तो क्लब जाना ही बंद कर दें। जो आदत चलती आयी है, वह बदस्तूर चलती रहनी चाहिए—यह

उनका विश्वास बन चुका था।

उन अतिथियों का क्लब आना, वहां खाना-पीना, बाकायदा सात आठ दिन तक चलता रहा। इतने समय में तो बड़ी-बड़ी अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का परिष्कार हो सकता था, किंतु जब आखिर उनका निश्चय लोगों को मालूम हुआ तो श्री राव के सभी मित्र मन-ही-मन हंसे कि इस निर्णय के लिए अधिक से अधिक दो घंटे लगते, क्योंकि बातचीत तो चिट्ठी-पत्री तथा दलालों द्वारा बहुत दिनों से चल रही थी।

इन अतिथियों में एक सज्जन वे भी थे जिनके पुत्र के साथ श्री राव अपनी पुत्री का विवाह कर रहे थे। उनके ये नये संबंधी उनकी तरह जमींदार न थे। वे ठेकेदार थे, दबंग दुनियादार आदमी।

श्री राव ने जब अपनी पहली लड़की की शादी की थी, तो एक डेढ़ लाख का दहेज दिया था, साठ पैंसठ हजार का खर्च शादी पर हुआ था। फिर भी उनको यह गिला रहा कि वे अपनी लड़की की शादी उस धूमधाम से न कर पाये थे जिस धूमधाम से उनके पिता ने उनकी की थी। जो पैसा खर्च हुआ था, वह सब कर्ज का था,

और भारी सूद पर शहर के साहूकारों से लिया गया था। इस बढ़ते कर्ज को चुकाने के लिए जो कुछ मिल्कियत, जेवर, जवाहरात थे, वे सब बेच दिये गये थे, फिर भी कर्ज शेष रह गया था।

अब केवल उनके पास अपना रिहायशी मकान रह गया था, जो शायद डेढ़ लाख का था। उस पर भी काफी कर्ज लिया जा चुका था। एक कार थी जिसकी किश्तों का पूरा निबटारा न हुआ था, फिर महंगाई के जमाने में बढ़ता बड़े कुटुंब का खर्च; पर वे बिल्कुल निश्चिंत से थे!

अब सुनने में आया कि वे अपनी दूसरी लड़की की शादी में भी उसी तरह खर्च करना चाहते थे, और उतना ही दहेज भी देना चाहते थे जितना कि पहली लड़की को दिया था, हालांकि पिछले पांच सालों में उनकी माली हालत बहुत अधिक बिगड़ गयी थी ।

जिनके यहां वे अपनी लड़की दे रहे थे, वे दहेज की बात तक न कर रहे थे । वे उनके खानदान से संबंध स्थापित करना ही अपना अहोभाग्य समझ रहे थे । और एक राव साहब थे कि दलील दे रहे थे —'यह भी क्या न्याय है कि बड़ी लड़की को डेढ़ लाख दो, और छोटी को उससे आधा भी नहीं! मेरे लिए दोनों समान हैं।'

जहां तक न्याय का संबंध है, यह बात बिलकुल ठीक है । दुनिया में पांचों अंगुलियां भले ही समान न हों, रुपये, पैसे के मामले में हर संतान पिता की नजर में समान है। पर देने के लिए पैसा हो तब न ?

दो की शादी से निबट भी गये, तो घर में दो और क्वांरी लड़कियां थीं । एक लड़का था, उन सब के लिए कहां से कैसे पैसा आएगा ? क्लब के मित्रों को भले ही इसकी चिंता हो, पर श्री राव को न थी।

यह डेढ़ लाख रुपये लाते कहां से ? मकान बेचकर ? फिर रहेंगे कहां, गली गली में फिरेंगे ? आमदनी का क्या रास्ता है ? कुछ भी नहीं । कल का गुजारा कैसे होगा ? पर राव-जैसे व्यक्तियों ने कल के बारे में कब सोचा है, वे तो वर्तमान में ही भूत के तौर-तरीकों के साथ रहते हैं।

कुछ भी हो वे डेढ़ लाख रुपये दहेज देने के लिए राजी थे । आजकल डेढ़ लाख रुपये की कीमत ही क्या है ? इससे भला कम कैसे दिया जाए, श्री राव सोच रहे थे । अतिथियों के आने से पहले यह तय हो गया था, अब यह बात पक्की हो गयी थी ।

कहनेवाले कह सकते हैं कि वे भोंदू थे, मूर्ख थे, नादान थे, बुडबुक थे, लेकिन उन्हें गर्व-सा था कि वे प्रतिकूल परि-स्थितियों में भी, 'न्याय' का पालन कर रहे थे, अपने बच्चों के साथ अन्याय नहीं कर रहे थे । अतिथियों से विदा लेकर, जब वे क्लब के हॉल में आये, तो श्री राव मुसकरा रहे थे । शायद वे यह कहते से लगते थे कि तुम मुझे कुछ भी समझो मैंने वही किया जो करना चाहिए था। क्लब के सदस्य, जो क्लब के बैरों से सारी बातें पहले ही जान चुके थे, नीचे मुंह किये हुये थे, उनसे नजरें नहीं मिलाना चाहते थे। जैसे मन ही मन कह रहे हों, 'हद होती है न्याय की भी, और हठ की भी, प्रतिष्ठा की और पागलपन की भी।'

—१३८ शेनोय नगर, मद्रास-३०

शांति की केवल इच्छा, या उसकी प्रशस्ति पर्याप्त नहीं है । शांति–जैसी महंगी चीज हमसे प्रबल पुरुषार्थ की अपेक्षा रखती है। शांति की स्थापना तो शांति के साथ मेल खानेवाले शक्ति-सामर्थ्य से ही हो सकती है।

—जरनल के. एस. तिमय्या

परमाणु-शक्ति
हवा की परतों पर तैरता हुआ एक खतरा

● श्यामसुन्दर पुरोहित

परमाणु-शक्ति वैसे तो मानवता के लिए एक वरदान है, लेकिन यदि इससे विनाशक काम लिया जाए तो इसकी भयंकरता हमें तड़पा देगी। यदि सात हाइड्रोजन बम इस पृथ्वी पर विभिन्न स्थानों पर एकसाथ गिरा दिये जाएं तो यह पृथ्वी नष्ट हो जाएगी।

परमाणु-शक्ति के वर्तमान विनाशकारी रूप को देखकर आइंस्टीन ने कहा था—"मानव परमाणु-शक्ति के योग्य नहीं है।" कारण यह था कि परमाणु-शक्ति के दुरुपयोग ही ज्यादा हुए हैं। परमाणु-शक्ति के शांति-दूत के रूप में प्रयोग इस प्रकार किये जा सकते हैं— ताप और विद्युत के रूप में तथा रेडियो-आइसोटोप के रूप में।

ताप और विद्युत के रूप में

परमाणु-शक्ति से बड़ी-बड़ी मशीनें, कल-कारखाने, यंत्र आदि चलाये जाते हैं। बैटरी में परमाणु-शक्ति द्वारा संचित शक्ति की राशि उपयोगी कार्यों के लिए व्यय की जाती है। विद्युत के रूप में परमाणु-शक्ति डाइनेमो तथा मोटर चलाने के काम आती है।

रेडियो-आइसोटोप के रूप में

कार्बन, आयोडिन, कोबाल्ट आदि को परमाणु-भट्टी में रखकर अन्य रेडियोधर्मी पदार्थों की मदद से रेडियो-सक्रिय बनाया जाता है। ऐसे सभी तत्त्व रेडियो-आइसोटोप कहलाते हैं। इनका उपयोग चिकित्सा तथा कृषि के क्षेत्र में अधिक किया जाता है। विभिन्न प्रकार के उद्योगों को आइसोटोप द्वारा ये लाभ होते हैं—इंजन की घिसाई को मालूम करने के लिए इनका उपयोग किया जाता है, टायरों की घिसाई को ज्ञात करने में इसका उपयोग किया जाता है, रेडियो-सल्फर से कागज, रबर, प्लास्टिक आदि की मोटाई मालूम की जा सकती है, विमान तक में बिजली के जटिल यंत्रों में टूटे हुए जोड़ों को इसकी मदद से मालूम किया जाता है, कारखानों में बंडल बांधने में यदि कोई गलती रह जाए तो वह इनसे ज्ञात की जाती है, पानी के नलों में दरारें मालूम करने के लिए भी इनका उपयोग किया जाता है, पेट्रोल का प्रवाह नापने के लिए इनका उपयोग किया जाता है, मशीनों में खराब पुर्जों को मालूम करने तथा हीरे-जवाहरातों को

चोरी से बचाने के लिए भी इनका उपयोग किया जाता है।

मोटरों और कारों में परमाणु-शक्ति, ईंधन की जगह काम में ली जाती है। रेल के इंजन एवं वायुयान को चलाने के लिए ईंधन की जगह परमाणु-शक्ति का प्रयोग होता है। कुछ पनडुब्बियां परमाणु-शक्ति की मदद से ही चलायी जाती हैं। रेगिस्तान भी इसके द्वारा हरा-भरा किया जा सकता है।

भारत में परमाणु-शक्ति उत्पन्न करने के लिए १९५७ में 'ट्रांबे' नामक स्थान पर परमाणु-भट्टी, 'अप्सरा' बनायी गयी। यह भट्टी ३,००० किलोवाट शक्ति प्रतिदिन उत्पन्न करती है। इस भट्टी में 'यू-२३५' का प्रयोग होता है। दूसरी परमाणु-भट्टी 'कनाडा-इंडिया-एटॉमिक-रिएक्टर' के नाम से मशहूर है जो ४,००० किलोवाट शक्ति उत्पन्न करती है। इसका उपयोग रेडियो-आइसोटोप के रूप में किया जाता है। ट्रांबे में 'जरलीना' नामक एक तीसरी परमाणु-भट्टी है जो १०० किलोवाट शक्ति उत्पन्न करती है। इसमें ईंधन की जगह यूरेनियम एवं मॉडरेटर की जगह भारी पानी प्रयोग में लिया जाता है। यह भट्टी केवल भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित की गयी है। तारापुर में ४,००० किलोवाट की क्षमतावाली एक भट्टी स्थापित की गयी है।

परमाणु-शक्ति के दुरुपयोग

अधिकांशतया परमाणु-शक्ति का दुरुपयोग ही किया जा रहा है। 'नाभिकीय-विखंडन', जो विघटनात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए किये गये, उनके परिणामों को देखकर ही दुरुपयोग का पता लग जाता है।

नाभिकीय विखंडनों से वायु दूषित होती है। १ मार्च, १९५४ को सुबह छह बजकर बारह मिनट पर प्रशांत महासागर में एक उष्मा-नाभिकीय विखंडन किया गया जिसके परिणामस्वरूप एक द्वीप छोटे-छोटे टुकड़े बनकर उड़ गया। पहले यह सोचा जाता था कि नाभिकीय विखंडन से मुक्त रेडियोधर्मी-कण केवल विस्फोट-वाले क्षेत्र का समीपस्थ क्षेत्र ही प्रभावित करते हैं। कुछ लोग इस रेडियोधर्मी वर्षा के प्रभाव में आये भी

एक मैं हूं। संविधान में बोलने की स्वतंत्रता होते हुए भी आज तक पत्नी के आगे बोलने के अधिकार से वंचित हूं।

थे। इनमें से कुछ मार्शल द्वीप के निवासी, कुछ विकिनी के पास के द्वीपों के निवासी, कुछ अमरीकी मौसम-प्रेक्षक तथा कुछ मछेरे थे। ये मछेरे जापानी ट्रेलर 'ट्रेकी-ड्रेगन' पर रहते थे।

यह विस्फोट सुनकर जापानी मछेरे भय से पीले पड़ गये। उन्हें ऐसा लगा, जैसे कहीं दूसरा सूर्य उदय हुआ हो। घटना-स्थल से कोई सत्तर मील दूर यह ध्वनि गड़गड़ाहट करती बिजली की तरह विस्फोट के लगभग छह मिनट बाद सुनी गयी। लगभग दो घंटे पश्चात एक सूक्ष्म, श्वेत बर्फ सदृश्य राख ट्रेलर पर गिरने लगी। पहले इसने आंखों को हानि पहुंचायी। इसके पश्चात चमड़ी पर खाज चलने लगी और फिर जलन शुरू हो गयी।

धूल का यह गिराव मुख्यतया विस्फोट के कारण उड़ी हुई, जमीन, पानी, धूल, वाष्पित भाग (स्वयं बम के) तथा वातावरण की गैसों के बने यौगिकों का बना हुआ था। वायु द्वारा उत्पन्न यह वर्षा, सिगार के आकार की तरह, विस्फोट के स्थान के आसपास भयानक रूप से गिरी। एक मध्यम आकार का साधारण 'एच-बम', १,००,००० वर्गमील क्षेत्र (जो न्यूयार्क राज्य का दोगुना क्षेत्र है) तक इसकी सांद्रता प्रभाव डाल सकती है। वायु-विस्फोट (इसमें विस्फोटक गेंद पृथ्वी तक नहीं पहुंचती) के कारण हुई पदार्थों की वर्षा अपेक्षाकृत कम खतरनाक होती है। लंबे समय तक ऐसे विस्फोट करने से रेडियो-सक्रियता घातक परिणाम उत्पन्न कर सकती है।

सबसे पहले 'एच-बम' वायुमंडल में ऑक्सीजन, नाइट्रोजन एवं अधिक जल-वाष्प से युक्त नाइट्रिक-अम्ल का निर्माण करता है। इस अम्ल के कारण आंखें, चमड़ी जलने लगती हैं। मतली आने लगती है। साथ ही 'एच-बम' का विस्फोट प्रभावित क्षेत्र में खड़ी वनस्पति को पूर्णतया नष्ट कर देता है। इसके पश्चात वियुक्त हुए न्यूट्रानों के कारण वायुमंडलीय नाइट्रोजन शीघ्रता से एक रेडियो-सक्रिय (आइसोटोप) समस्थानिक, कार्बन–१४ में परिणत हो जाता है, जो हजारों वर्षों तक नुकसान करती रहती है। पौधों द्वारा अवशोषित होकर कार्बन–१४ जानवरों तथा मनुष्य के ऊतकों में पहुंच जाता है। अंत में ट्रीगर के यूरेनियम जैकेट तथा पृथ्वी में पाये जानेवाले द्रव्य या समुद्री-द्रव्य, यदि विस्फोट निम्नस्तर पर किया गया हो, मिलकर लगभग १०० रेडियो-सक्रिय तत्त्व उत्पन्न करते हैं। ये रेडियो-सक्रियता बम की भयानक विनाशक शक्ति से भी अधिक खतरनाक होती है।

रेडियो-सक्रियता कुछ अस्थायी तत्त्वों का एक विशेष गुण है, जो ऊर्जा को उसी तरह विकिरित करती है जिस तरह एक कोयले का ढेर राख में बदलते समय उष्मा को विकिरित करता है। यह ऊर्जा-विकिरण ही हानिकर होता है। रेडियो-सक्रिय विकिरणों को हम देख, सुन, चख या सूंघ

कर महसूस नहीं कर सकते। इसका प्रभाव भविष्य में कुछ सप्ताहों या वर्षों बाद किसी जैविक प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है।

अमरीका, रूस तथा ब्रिटेन द्वारा विस्फोटित लगभग १०० ग्राम नाभिकीय-विखंडों से लगभग एक टन रेडियो-सक्रिय पदार्थ वायु-मंडल में इधर-उधर फैलाया गया। यह मात्रा हालांकि कम लगती है, पर यह सबसे जहरीली औद्योगिक गैस, क्लोरीन की समान मात्रा से भी अत्यधिक खतरनाक होती है। स्ट्रेटोस्फियर में इससे (सन १९५९ तक के आंकड़ों के अनुसार) लगभग १३ वर्ष पूर्व तक, इन सुपरबम-परीक्षणों के कारण कम-से-कम ४० पौंड रेडियो-सक्रिय स्ट्रांशियम मौजूद था और यह स्ट्रांशियम (स्ट्रांशियम–९०) ही विखंडन से उत्पन्न रेडियो-सक्रिय पदार्थों में शायद सबसे खतरनाक है। रासायनिक रूप से यह स्ट्रांशियम पौधों द्वारा कैल्शियम के स्थान पर ले जाया जाता है और इस प्रकार जब जीव-जंतु तथा मनुष्य इन पौधों का भक्षण करते हैं तब ये जंतुओं और मनुष्य की अस्थियों में प्रवेश पा जाते हैं। अब एच-बमों का विस्फोट न हो, तो भी जैसे-जैसे स्ट्रांशियम स्ट्रेटोस्फियर में नीचे की तरफ आता जाएगा, हमारी अस्थियां अधिकाधिक स्ट्रांशियम संग्रहित करने लगेंगी। क्लाइडआर ने १९५८ में कहा था कि १९७० तक प्रत्येक मनुष्य की अस्थियों में स्ट्रांशियम की मात्रा वर्तमान से १५ या २० गुनी हो जाएगी।

यदि सारा वायुमंडलीय स्ट्रांशियम पृथ्वी के गर्भ तक पहुंच गया तो यह सभी को कैंसर एवं ल्यूकेमिया से होनेवाली धीमी मौत से भी खतरनाक ढंग से मार देगा। आनुवंशिकी-वेत्ताओं का विश्वास है कि इससे उत्परिवर्तन में एक असामयिक वृद्धि होगी (उत्परिवर्तन, कोश-वृद्धि तथा प्रजनन के दौरान हुए परिवर्तन को कहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पूर्वजों की एक लगभग नकल तैयार होती है)। अत्यधिक उत्परिवर्तन धीमे होते हैं जो मानव को रोग से बचने तथा जीवन-काल को कम होने से बचाने में सक्षम होते हैं। इनके कारण भविष्य में दो सिर तथा भयानक रूप से विकृत शरीर एवं दिमागवाली संतति उत्पन्न हो सकती है।

वर्तमान तक जितने भी परमाणविक विस्फोट किये गये हैं, सभी रेडियो-सक्रियता को बढ़ाते हैं। सन १९५६ में विज्ञान की राष्ट्रीय अकादमी की कई कमेटियों ने बताया कि सन २००० तक ये प्रभावित पौधे, इतनी क्रिप्टन–८५ गैस निकाल देंगे कि यह मात्रा ही उत्तरी गोलार्द्ध के मध्य अक्षांश को पूर्ण रूप से रेडियो-सक्रिय कर देगी। आयोडीन–१३१-जैसी भारी गैसों ने इस रेडियो-सक्रियता को और अधिक बढ़ा दिया है। अनुमान है कि सन २००० तक यदि विखंडनों की दर इसी तरह बढ़ती रही तो स्ट्रांशियम-

९० का प्रभाव सारी धरती पर फैल जाएगा।

कुछ जानवरों, पौधों तथा मानव-शरीर के कुछ भागों की, विशिष्ट रेडियो-सक्रिय तत्त्वों को असाधारण रूप से सांद्रित करने की क्षमता ही, वर्तमान में पृथ्वी के चारों ओर, आंखों में कापर, गुर्दों में रूथेनियम, यकृत में सिलवर व तिल्ली में पोलीनियम को सांद्रित करती है। चाय के पौधे, रेडियो-मैंगनीज को काफी मात्रा में एकत्र करते हैं। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि रासायनिक दूषण की तुलना में रेडियो-सक्रियता काफी खतरनाक सिद्ध होगी। लगभग अर्द्ध शताब्दी पूर्व जब परमाणु-विघटन का ज्ञान हुआ तभी प्राकृतिक रेडियो-सक्रियता, क्ष-किरणों एवं कॉस्मिक किरणों का अध्ययन प्रारंभ हुआ। अब तक जितना भी ज्ञान प्राप्त किया जा सका है, उसके अनुसार वैज्ञानिक यह हल निकाल चुके हैं कि अत्यल्प विकिरण-खतरा उठाकर परमाणु-ऊर्जा का पूर्ण उपयोग भी संभव है।

१९७२ में संयुक्त राष्ट्रसंघ के तत्त्वावधान में एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी हुई जिसका ध्येय वायु-दूषण रोकना था। इसके समर्थन में लगभग सभी सदस्य राष्ट्रों ने संधि पर हस्ताक्षर किये जो वास्तविक प्रगति की ओर एक कदम है, पर लगभग सभी राष्ट्रों के विरोध के बावजूद कुछ देशों द्वारा परमाणु-परीक्षण की घटना अत्यंत दुःखद है।

वचन-वीथी

किसी बुराई को सहना ही सबसे बड़ी बुराई है। —बॉयरन

सहिष्णुता गुणों की आधार-शिला है। —बैकन

व्यक्ति का अंतःकरण वह देवालय है जहां परमात्मा न्यायाधीश के रूप में प्रवेश करता है। —होम्ज

क्रोध करना दूसरों की बुराइयों को ओढ़ना है। —पोप

त्यागमय जीवन उच्चतम कला है जिससे वास्तविक आनंद मिलता है। —महात्मा गांधी

शिक्षण से ही मनुष्य का हृदय बदला जा सकता है। शिक्षण-पद्धति ही खराब हो जाए तो मनुष्य-जाति का सर्वनाश हो जाएगा। —डॉ. जाकिर हुसैन

हृदय के विकास के बिना—उसमें मार्दव और आर्द्रता लाये बिना—मनुष्य में मनुष्यता नहीं आ सकती।

प्रेम ही प्रेम का अंतिम सार्थक्य नहीं है। मांगल्य ही प्रेम का परम लक्ष्य है। —रवीन्द्रनाथ ठाकुर

"जीवन में घुटन, संत्रास और संघर्ष से ही लेखन की ओर प्रेरित। साहित्यिक एवं सम-सामयिक चिंतन के परिवेश को जीवन की प्रतिबद्धता के अनुरूप लिपिबद्ध करना ही मेरा लक्ष्य है। डेढ़ दर्जन से अधिक पत्रिकाएं संपादित — महाविद्यालयी पत्रिका 'आक्रोश'—१९६९ को अ. भा. स्तर पर प्रथम पुरस्कार। जन्म : २४ जून, १९५०। शिक्षा—इंदौर विश्व-विद्यालय से वाणिज्य एवं विधि-स्नातक। संप्रति दैनिक 'नई दुनिया' इंदौर के संपादकीय विभाग से संवद्ध।"

हम सब
सब के सब
नामालूम-सी परिस्थिति के
मध्य बैठे
'मील के पत्थरों की तरह'
अकेले हैं
सारी औपचारिकताएं
मौतों के बाद...
हमारे बासी चेहरों पर
उबले हुए आलुओं की तरह
बेसाख्ता वारदातें उगी हैं
कमरे के हर कोने को
सूंघ चुके हैं हम
पिलाने होंगे अब हमें
विटामिन 'ए' टू 'डी'
और बस, इस तरह फिर...
इन प्रवंचनाओं के प्रसव से
पीड़ित एक 'अकविता'
बेमौत मारी गयी है—बेचारी

—रमेश बंम 'निर्मल'

पिछले अंक में आपने प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुंदरम् से अंगुलियों तथा पर्वतों के बारे में जानकारी प्राप्त की । अब यहां प्रस्तुत है जीवन-रेखा का परिचय
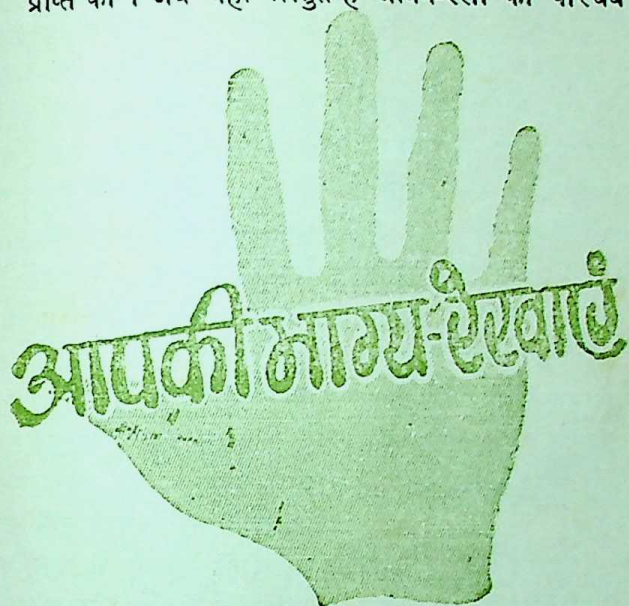
महत्वपूर्ण जीवन रेखा

● पी. टी. सुंदरम्

हथेली पर पायी जानेवाली रेखाओं को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है—मुख्य और गौण । महत्त्वपूर्ण तथा मुख्य रेखाएं इस प्रकार हैं : जीवन रेखा, **मस्तिष्क रेखा, हृदय रेखा,** भाग्य रेखा और **स्वास्थ्य रेखा।**

गौण रेखाओं में **प्रणय रेखाओं,** प्रभाविक रेखाओं, चिंताओं **संबंधी रेखाओं** और **मणिबंध की रेखाओं** का समावेश है। ऐसा कहा जाता है कि जीवन, मस्तिष्क, भाग्य एवं प्रसन्नता विषयक रेखाएं बदलती रहती हैं। जीवन के प्रारंभिक वर्षों में पालकों एवं परिस्थितियों के प्रभावों के फलस्वरूप इन रेखाओं में परिवर्तन होता रहता है।

जीवन रेखा : यह रेखा गुरु पर्वत

के नीचे से निकलकर शुक्र पर्वत को घेरती है। यह रेखा लंबी और गहरी होनी चाहिए। उसमें न तो द्वीप हों और न क्रास। वह टूटी भी नहीं हो। ऐसी रेखा दीर्घायु और भरपूर स्वास्थ्य का परिचय देती है। (चित्र–१, १–१) एक साफ सुथरी तथा अच्छे घुमाववाली रेखा का जैविक दृष्टि से भी महत्त्व है। उससे व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक विवेचन भी किया जा सकता है। ऐसी रेखा भरपूर जीवन-शक्ति तथा मानवता के प्रति प्रेम का द्योतक होती है। यदि ऐसी रेखा अंगूठे की दूसरी पोर या तर्जनी के मूल से निकलती है तो वह व्यक्ति के सौभाग्यशाली, धनी तथा ऊंचे पद पर होने की सूचना देती है (चित्र १, २–२)।

जंजीरयुक्त रेखा (चित्र १, आ) प्रारंभिक वर्षों में जीवन-शक्ति के अभाव, स्नायुविक दुर्बलता तथा बुरे स्वास्थ्य की सूचक होती है। यदि जीवन रेखा अंत में दो रेखाओं में बंट जाए तथा ऐसी दोनों रेखाओं के मध्य काफी अंतर (चित्र २, ई–ई) हो तो उससे व्यक्ति के मृत्यु-स्थान के संबंध में पता चलता है। ऐसी रेखाओं-वाले व्यक्ति की मृत्यु या तो किसी दूसरे देश में या फिर जन्मभूमि से दूर किसी अन्य स्थान में होती है। यदि जीवन रेखा अंत में द्वि-शाखी (चित्र १, अ–अ) हो जाए तो वह विभिन्न दिशाओं में शक्ति के अपव्यय की सूचना देती है। आम तौर पर छोटी जीवन रेखा शीघ्र मृत्यु की सूचक मानी जाती है, पर कई मामलों में ऐसा होना जरूरी नहीं होता। ऐसी रेखावाले व्यक्तियों की बनावट दुर्बल होती है, पर यदि वे खान-पान में पर्याप्त सावधानी बरतें तो कभी-कभी जीवन रेखा बढ़ भी जाती है। जीवन रेखा का टूटा होना बीमारी के कारण होनेवाले खतरे की चेतावनी देता है। जीवन रेखा पर चतुर्भुज होना एक अच्छा चिह्न है। यह खतरों से रक्षा करता है। लाल और गहरी रेखा अशांत स्वभाव तथा पतली रेखा शारीरिक दुर्बलता की द्योतक होती है। गुलाबी रंग की चौड़ी रेखा अच्छी होती है।

जीवन रेखा तथा मस्तिष्क रेखा के बीच मध्यम अंतर उपलब्धियों, महत्वाकांक्षाओं और उनकी पूर्ति का पता देता है। दोनों रेखाओं के मध्य अधिक अंतर व्यक्ति के निर्भीक और जल्दबाज होने का सूचक होता है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति संवेगशील भी होते हैं।

जब जीवन रेखा मस्तिष्क रेखा से बिलकुल जुड़ी होती है तो ऐसी रेखावाला व्यक्ति न केवल स्वयं के बारे में बल्कि स्वयं से संबंधित-असंबंधित प्रत्येक वस्तु के बारे में अत्यधिक सम्वेदनशील होता है। बुद्धि एवं तर्क उसकी जिंदगी के मार्ग-दर्शक के रूप में कार्य करते हैं। वह हर मामले में बहुत अधिक सतर्कता बरतने वाला भी होता है। जीवन, मस्तिष्क तथा हृदय रेखाओं का प्रारंभ में मिलना अच्छा चिह्न नहीं है। स्वभाव-दोष के कारण

चित्र-१ चित्र-२ चित्र ३
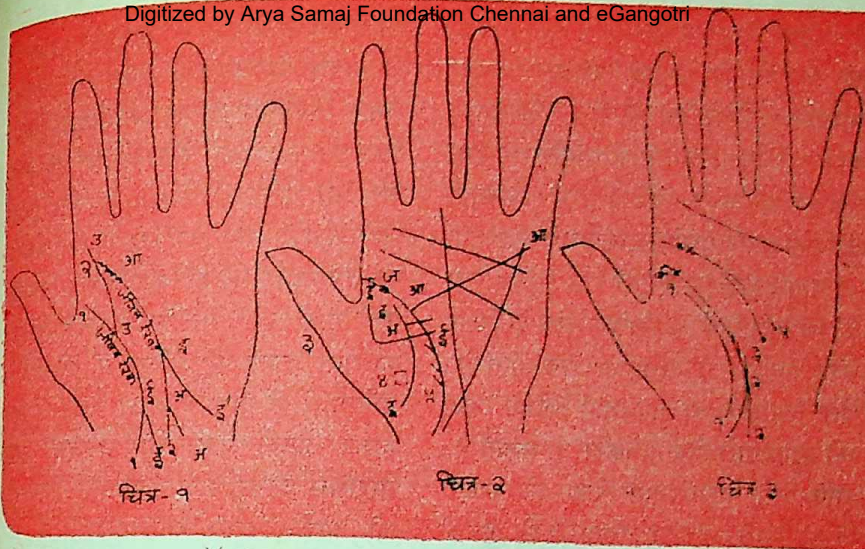
ऐसा व्यक्ति विना समझे-बूझे खतरों में पड़ जाता है। इससे यह भी पता चलता है कि व्यक्ति में निजी खतरों के बारे में ही नहीं, वरन दूसरे के साथ उसके व्यवहार के कारण उत्पन्न होनेवाले खतरों के बारे में भी समझ का अभाव है। यदि जीवन रेखा मध्य में विभाजित हो जाए और उससे एक रेखा निकलकर चंद्र पर्वत की ओर बढ़े तो ऐसी रेखाओंवाला व्यक्ति स्वभाव से बेचैन तथा सतत् परिवर्तनों के इच्छुक होते हैं। जीवन रेखा से नीचे फूटनेवाली बारीक-बारीक रेखाएं दुर्बलता की सूचक होती हैं, पर यदि ऐसी रेखाएं ऊपर की ओर उठती हैं तो उनसे शक्ति, सफलता तथा उपलब्धियों का पता चलता है। जीवन रेखा से गुरु पर्वत की ओर उठनेवाली रेखा (चित्र १, उ-उ) पदवृद्धि तथा सफल महत्त्वाकांक्षाओं की सूचक होती है। यदि जीवन रेखा से एक रेखा निकलकर भाग्य रेखा के समानांतर होती शनिपर्वत की ओर बढ़ती है तो उससे अच्छे स्वास्थ्य और आनंदपूर्ण जीवन का ज्ञान होता है। यदि वह सूर्य पर्वत की ओर पहुंचती है तो उससे हाथ की श्रेणी के अनुसार सफलता का पता चलता है। यदि ऐसी रेखा बुध पर्वत तक पहुंचे तो व्यापार एवं विज्ञान के क्षेत्र में सफलता मिलती है।

जीवन रेखा के प्रारंभ में द्वीप व्यक्ति के जन्म में किसी रहस्य की ओर संकेत करता है (चित्र २, १)। जीवन रेखा पर अन्य स्थानों पर द्वीप की स्थिति उस अवस्था-विशेष में अस्वस्थता की सूचक है।

जीवन रेखा को काटनेवाली समानांतर रेखाएं (चित्र २, अ) घरेलू जीवन में संबंधियों के हस्तक्षेप की द्योतक होती

हैं। जीवन रेखा के साथ-साथ भाग्य रेखा को काटनेवाली रेखाएं व्यापार अथवा सांसारिक हितों का विरोध करनेवाले व्यक्तियों का पता देती हैं। मस्तिष्क रेखा तक पहुंचनेवाली ऐसी रेखाएं व्यक्तियों के विचारों पर प्रभाव डालनेवाले व्यक्तियों का पता देती है। यदि ऐसी रेखाएं हृदय रेखा को भी काटती हैं तो उनसे व्यक्ति के निकट स्नेह संबंध में हस्तक्षेप का ज्ञान होता है। ऐसे हस्तक्षेप का कालज्ञान जीवन रेखा को काटनेवाले बिंदु से किया जा सकता है। यदि ऐसी रेखाएं सूर्य रेखा को काटती हैं तो उससे यह पता चलता है कि कुचक्री व्यक्तियों के हस्तक्षेप के कारण ऐसे व्यक्ति का जीवन बरबाद हो जाएगा। ऐसे व्यक्तियों के कारण उसे बदनाम होना तथा लज्जाजनक स्थितियों का सामना करना पड़ेगा। जिस स्थान पर सूर्य रेखा कटेगी, उसे देखकर ऐसी घटनाओं के समय का ज्ञान किया जा सकता है। यदि ऐसी रेखा जीवन, मस्तिष्क तथा हृदय को काटकर विवाह रेखा को छूती है तो उससे तलाक या संबंध विच्छेद का पता लगता है (**चित्र २, आ-आ**)। महिलाओं के हाथ में मंगल पर्वत से शुरू होकर जीवन रेखा को छूनेवाली रेखा प्रारंभिक जीवन में ऐसे प्रतिकूल स्नेह की, जो आगे चलकर कठिनाइयां और परेशानियां पैदा करता है, सूचना देती है।

यदि किसी महिला के हाथ में जीवन रेखा के समानांतर एक बारीक रेखा होती है तो उससे पता चलता है कि उस महिला के जीवन में आनेवाला व्यक्ति अत्यधिक सज्जन है और उस पर महिला का काफी प्रभाव होगा। यदि कहीं से भी शुरू होनेवाली रेखा जीवन रेखा के समानांतर चलकर शुक्र पर्वत की ओर मुड़ती है तो जिस व्यक्ति के साथ उस महिला का संबंध होगा, वह धीरे-धीरे उससे सहानुभूति खो बैठेगा।

जीवन रेखा केवल विषम और साधारण अवधि की सूचना देती है।

टूटी जीवन रेखा की भांति कुछ स्थानों पर टूटी हुई मस्तिष्क रेखा से भी मृत्यु की सूचना मिल सकती है। मृत्यु का बीमारी से भी गहरा संबंध है, व्यक्ति के स्वास्थ्य पर भी ध्यान देना चाहिए। यदि जीवन रेखा टूटी हुई हो और उसके साथ ही टूटे हुए स्थान से एक नयी रेखा निकलकर जीवन रेखा के समानांतर चल रही हो तो उसे दोहरी जीवन रेखा समझना चाहिए। यहां इस बात का ध्यान रखिए कि क्या यह रेखा जीवन रेखा के टूटे हुए स्थान से निकल रही है **(चित्र ३, १—१)**।

यदि जीवन रेखा कलाई के पास द्वि-शाखी हो और एक रेखा नीचे गहरी गयी हो तो उससे यात्रा-संभावनाओं का पता चलता है **(चित्र ३, २—२)**।

गुरु के पर्वत से निकलनेवाली रेखा व्यक्ति की महत्त्वाकांक्षाओं के पूरा होने की द्योतक होती है। मस्तिष्क रेखा से पृथक जीवन रेखा बेचैनी और निर्णय में जल्दबाजी की सूचना देती है।

काले बिंदु के साथ अचानक रुक जानेवाली रेखा दुर्घटनाजन्य मृत्यु की द्योतक मानी गयी है **(चित्र ३, ३)**। टूटी हुई जीवन रेखा पर गहरा काला बिंदु हत्या की आशंका जतलाता है **(चित्र ३, ४)**। जीवन रेखा से ऊपर उठनेवाली रेखाएं महत्त्वाकांक्षाओं की सूचक हैं।

जीवन रेखा पर अन्य चिह्न

जीवन रेखा की शुरूआत पर बिंदु के साथ क्रास प्रारंभिक जीवन में दुर्घटना का सूचक माना गया है **(चित्र ३, क)**। किसी महिला की जीवन रेखा के प्रारंभ में दोनों क्रासों की स्थिति उसके विषय-सुख में प्रवृत्त होने का परिचय देती है **(चित्र ३, १)**। यह सत्य है कि चतुर्भुज सभी संकटों से रक्षा करता है, पर जीवन रेखा के बाहर, मंगल क्षेत्र से उसे यानी जीवन रेखा को स्पर्श करनेवाला चतुर्भुज विरक्त या संन्यासी जीवन की सूचना देता है। कुछ मामलों में उससे कारावास का पता चलता है **(चित्र २, ४)**।

यदि रेखा बारीक रेखाओं द्वारा कटी हुई हो, मस्तिष्क रेखा के अंत पर द्वीप हो तथा बुध पर्वत बहुत उठा हुआ हो तो ऐसा व्यक्ति बहुत बुद्धिमान होने के बावजूद जन्म से गूंगा और बहरा होता है **(चित्र २, ज)**।

(क्रमशः)

चित्रमयी गीता प्रवेशिका——श्रीमद्भागवद्गीता का कलात्मक और नव-चिंतनयुक्त दिग्दर्शन है। गीता शताब्दियों से विश्व-मानव को अपने शाश्वत प्रकाश द्वारा शांति और मुक्ति का मार्ग बतलाती आ रही है तथा ज्ञान, कर्म और प्रेम के दिव्य संदेश द्वारा निराशा पर विजय भी दिलाती रही है। श्री मंगल का युवा आग्रह और अन्वेषण भी गीता के ही पास आता है

गीता पर एक नयी कलात्मक दृष्टि

और सभी भाष्यकारों की भांति अपने लिए भी एक संदेश पाता है——प्रेम का संदेश। ग्रंथकार का प्रेम-दर्शन समता के तल पर झूमता हुआ चलता है, जिसकी परिणति होती है गीता के——'सर्व धर्मान् परित्यज्य:' में। **चित्रमयी गीता प्रवेशिका** इसीलिए अद्वितीय नहीं होती कि उसके द्वारा भारतीय प्रकाशन के इतिहास में एक चमत्कृत अध्याय जुड़ा है या अपनी कोटि की एक अकेली पुस्तक है, जिसमें विभव-विलास की अपूर्व छटा है, या भारतीय भाषाओं में इस प्रकार का प्रकाशन बहुत कम देखा गया है, बल्कि उसकी अद्वितीयता इसमें सिद्ध होती है कि अध्यात्म की नीरस-धारा को कला की सरसता से अभिसिक्त कर किस प्रकार गीता की शिक्षाओं की परीक्षा आज की समस्याओं के बीच की गयी है। चित्रकार श्री उमाशंकर ने गीता की भाव-प्रणवता को ग्रंथकार की आंखों से देखने और रंग-रेखाओं द्वारा भास्वर करने में अद्भुत शिल्प का परिचय दिया है। गीता पर कुछ भी लिखते हुए ग्रंथकार ने आज के विषादापन्न मानव-समाज एवं विश्व की समस्याओं को दृष्टि में रखा है और टूटते हुए आयामों की संघठनात्मक सत्ता का परिदर्शन इन्हीं शिक्षाओं में किया है।

आलोच्य पुस्तक की विशेषता है इसकी भाषा और शैली। ग्रंथकार ने गीता की गूढ़ता को कहीं दम साधने नहीं दिया है; बल्कि शब्दों के छंदमय प्रयोग द्वारा मर्म को अभिव्यक्त किया है, जो सहज और रससिद्ध है। पूरी पुस्तक आत्मिक भाव-कुलता से भरी हुई है तथा गीता की काव्यात्मक समृद्धि के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार **चित्रमयी गीता प्रवेशिका** गीता के भाष्यों में अपना विशिष्ट स्थान बनाती है।

आलोच्य पुस्तक महात्मा गांधी द्वारा

निर्वाचित ४२ श्लोकों पर आधारित पांच खंडों में विभाजित है। महात्मा गांधी गीता को माता कहा करते थे और इस कथन का निर्वाह प्रत्येक स्थान पर हुआ है। पृष्ठभूमि में गीता की अंतरंग परीक्षा अध्यायों के माध्यम से की गयी है। प्रारंभ और अंत में श्लोकों को नृत्य प्रदान करने के लिए नृत्य-मुद्राएं दी गयी हैं। इनकी गान-धर्मिता को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए संगीत खंड में राग-ताल-युक्त स्वर-लिपियां दी गयी हैं। प्रवेशिका खंड में श्लोक, अन्वय, भावार्थ, समीक्षा, चित्र और चित्र-परिचय के ग्रंथन द्वारा मुद्रण चमत्कारपूर्ण हो गया है।

श्री उमाशंकर द्वारा चित्रित प्रत्येक चित्र अपने आप में इतने पूर्ण हो उठा है कि इस नवयुवक चित्रकार से नयी आशाएं जगती हैं। विश्व-रूप के भिन्न-भिन्न चित्रों में शिल्प-साधना और कल्पना दर्शनीय हो उठी है।

——काशीनाथ मिश्र

चित्रमयी गीता प्रवेशिका

ग्रंथकार : मंगल, चित्रकार : उमा-शंकर, प्रकाशक : ऋतम्भरा—पी.-७०, सी.आई टी. रोड, कलकत्ता—५४, पृष्ठ संख्या : २३२, चित्र संख्या : १०० से ऊपर, मूल्य : १५०) भारत में, २५०) विदेश में

दीपशिखा रेवतीसरन शर्मा का द्विअंकीय नाटक है। [illegible]

पश्चात आज भी धर्म हमारी बुनियादी कमजोरी बना हुआ है। सैद्धांतिक रूप से उदार हृदय कहलानेवाले, सभ्यता और संस्कृति का दावा भरनेवाले व्याव-हारिक जीवन में किस तरह घिसे-सिक्के की तरह बाजार में धर्म की कीमत लगा रहे हैं, इसे नाटककार ने बड़ी-ही खूबी से दर्शाया है। हिंदू-मुसलिम संघर्ष का घिसा-पिटा विषय होते हुए भी आधुनिक पीढ़ी की बदलती मान्यताएं और बुजुर्गों की हठधर्मिता ने इसे काफी समसामयिक बना दिया है। आज की शिक्षा जीवन को मानवीय धरातल पर स्वीकार करती है। इसे लेखक ने दीपशिखा और इकबाल नामक पात्रों के द्वारा प्रदर्शित किया है। रंगमंचीय तकनीक की दृष्टि से इसमें कुछ प्रयोग किये गये हैं। एक ही मंच पर तिकोने सेट से तीन दृश्यों का काम लिया गया है। भारत-सरकार द्वारा पुरस्कृत तथा विभिन्न स्थानों पर सफल मंचन इसकी नाटकीय सफलता का सूचक है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के नवीन-तम एकांकी-संग्रह **मेरे श्रेष्ठ एकांकी** में सात एकांकी संग्रहीत हैं। ये लेखक के विभिन्न लेखन-सोपानों की ओर संकेत करते हैं। पहले दो एकांकी अनमेल विवाह और प्रेम की समस्या को लेकर चलते हैं। 'वरुण वृक्ष का देवता' ऐतिहासिक एकांकी है जबकि 'बादल आ गये' भावात्मक एकांकी है। 'मम्मी ठकुराइन' आधुनि-कता के झूठे आवरणों का भंडाफोड़ करता

है। 'काफी हाउस में इंतजार' पुराना एकांकी है जो अन्य संग्रह में प्रकाशित हो चुका है। लेखक के पूर्ववर्ती संग्रह 'दूसरा दरवाजा' में एकांकी क्षेत्र की जिस नयी चेतना का उन्मेष था वह इस संग्रह में दिखायी नहीं देता। तकनीकी दृष्टि से भी यह संग्रह उसके समक्ष नहीं ठहरता, किंतु फिर भी विषय के प्रति लेखक की नाटकीय एप्रोच और रंगमंचीय संभावनाएं पाठकों की जिज्ञासा बराबर बनाये रखती हैं, इसमें संदेह नहीं है।

दीपशिखा

लेखक : रेवतीसरन शर्मा, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली, पृष्ठ : ९१, मूल्य चार रुपये

मेरे श्रेष्ठ एकांकी

लेखक : डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, प्रकाशक : उपरोक्त, पृष्ठ : १२२, मूल्य : चार रुपये

दो उपन्यास

रामकुमार भ्रमर का उपन्यास मुर्दे समाज पर एक तीखा व्यंग्य है। परंपरा से हम कुछ रिश्तों को केवल रिश्तों के लिए जीते आ रहे हैं। उनका भ्रम धीरे-धीरे टूटता हुआ मनुष्य को खोखला किये दे रहा है। प्रस्तुत उपन्यास ऐसी-ही एक घटना पर आधारित है, जो एक नारी की घुटन और विवशता के प्रति सम्वेदना जाग्रत करती है। कुंती व्यवस्था में पिसती एक नारी है, जो पति को अपना संरक्षक

मानती है। उसके आश्रय में वह अपना प्रत्येक क्षण सुरक्षित समझती है, किंतु उसके जीवन का एक क्षण बाकी सब क्षणों को लील जाता है। जीवन-मोह की कमजोरी से ग्रस्त उसका पति हर रात उसे एक गुंडे की ताकत पर भेंट चढ़ाता रहता है। पति की यह कमजोरी उसके सुप्त विद्रोह को उकसाती है और एक क्षण ऐसा आता है जब वह सभी विसंगतियों को लांघती हुई गुंडे की हत्या कर देती है। कुंती आरंभ से अंत तक उपन्यास पर छायी रहती है और पाठकों की सम्वेदना जाग्रत करने में पूरी तरह सफल होती है। कथानक सशक्त है और प्रस्तुति रोचक।

दूसरा उपन्यास **सूर्यरथ** उमाशंकर का ऐतिहासिक उपन्यास है। लेखक ने 'कोणार्क' मंदिर के कुशल और प्रख्यात शिल्पी कुंतल और उसकी प्रेमिका की सरस प्रेमकथा को उपन्यास का आधार बनाया है। इस प्रेमकथा के साथ-साथ लेखक ने तत्कालीन राजनीतिक और सामाजिक परिवेश को भी उभारा है। प्रेमकथा की सरसता ऐतिहासिक रुक्षता का निरंतर परिहार करती चलती है और पाठक को अपने में उलझाये रखती है। कुल मिलाकर उपन्यास रोचक है।

मुरदे
लेखक : रामकुमार भ्रमर, प्रकाशक : पराग प्रकाशन, ३/११४, कर्ण स्ट्रीट, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली—३२, पृष्ठ : १५०, मूल्य : आठ रुपये

सूर्यरथ
लेखक : उमाशंकर, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली—६, पृष्ठ : २६६, मूल्य : बारह रुपये

एक जीवन-चरित

कमला नेहरू यद्यपि जवाहरलाल नेहरू के व्यक्तित्त्व-विकास में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, तथापि उनके विषय में ठोस प्रामाणिक सामग्री का अभाव खटकता है। प्रस्तुत पुस्तक **कमला नेहरू : एक आत्मीय जीवन-चरित** काफी सीमा तक इस अभाव की पूर्ति करती है। लेखिका ने कमला नेहरू को एक पत्नी के अतिरिक्त स्वतंत्रता संग्राम की सक्रिय आंदोलनकारी तथा नारी मुक्ति की समर्थिका के रूप में भी प्रस्तुत किया है। अंत में श्रीमती इंदिरा गांधी से लिया गया अनौपचारिक इंटरव्यू भी दिया गया है।

—डॉ. शशि शर्मा

कमला नेहरू : एक आत्मीय जीवन-चरित
लेखिका : प्रमिला कल्हण, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि. अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६, पृष्ठ : १३६, मूल्य : बारह रुपये

●

यदि हम बाहर से सत्य को सह न सके तो अंदर से हमें मिथ्या को सहना ही होगा। घिसे-पिटे रास्ते से मत चल, नया रास्ता बना।
—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

मुझे बंबई की एक कंपनी में काम मिला। बी. ई. (मैकेनिकल) होते ही मैं 'ट्रेनी इंजीनियर' रख लिया गया, अतः खुश था। काफी मशीनें देखने और उन पर काम करने का अवसर मिल रहा था। करीब दसवें दिन हम में से तीन इंजीनियरों को चार-पांच रोज के लिए 'प्लानिंग डिवीजन' में बुलाया गया। 'प्लानिंग' में 'रायटिंग वर्क' ही होता था।

चार-पांच दिन बाद मुझे छोड़कर अन्य दो को फिर से 'मशीन-शॉप' में भेज दिया गया। मुझे आठ दिन और रुकने के लिए कहा गया। कभी-कभी कंपनी के काम से बाहर भी जाना पड़ता। मैं बड़ी फुर्ती से वह काम कर आता।

करीब पंद्रह दिन बाद अपने नये 'बॉस' से मैंने फिर से स्वयं को 'मशीन शॉप' में भेज देने की याचना की। तब मुझे बताया गया कि मैं साल भर की ट्रेनिंग के लिए 'प्लानिंग' में ही रख लिया गया हूं। मेरी समझ में कुछ नहीं आया। तभी एक कर्मचारी ने मुझसे कहा, "तुम्हें 'प्लानिंग' का काम नहीं करना था, तो इतनी ईमानदारी से काम क्यों किया?"

—गोविन्द कासट, अमरावती

बी. ए., एम. ए. और पत्रकारिता का डिप्लोमा भी युवकों के साथ ही लिया, लेकिन फिर भी झिझक ने पीछा नहीं छोड़ा। नौकरी की ख्वाहिश जाहिर की तो जिसने सुना उसने कहा, 'तुम नौकरी के योग्य नहीं हो, क्योंकि तुम सुंदर नहीं, वेल-ड्रेस्ड नहीं, और स्मार्ट भी नहीं!" मन को धक्का लगा—क्या सच ही मैं दुनिया में कुछ नहीं कर पाऊंगी? पढ़ने के बाद दो वर्ष सड़क नापने में गुजारे। फिर अस्थायी काम भी मिला, लेकिन 'डेली वेजर' का। काम भी ऐसे कार्यालय में मिला जो 'ग्लैमरस प्लेस' के नाम से प्रसिद्ध है, यानी 'आकाशवाणी'। ऐसे रंगीन स्थान में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति ने मुझसे कहा, "तुम ऐसे रंगीन स्थान पर इस सफेद और सादी वेशभूषा में किस तरह टिकी हुई हो?" उत्तर न देने के बावजूद मन में प्रश्न की चुभन को महसूस किया। इस यातना में जीते हुए महीने गुजरते जा रहे हैं और घबराकर यही मुंह से निकलता है—

अब तो जान पे, इस कदर बन आई है
घर की जिंदगी गर कुआं है तो
दफ्तर की खाई है

—प्रभा भारद्वाज वंचिता, नयी दिल्ली

कंपनी का नियम है कि क्वार्टर में अनुमति लेकर अपने खर्च से बरामदा या अतिरिक्त कमरा बनवाया जा सकता है। अतः बाहर पक्का बरामदा बनवा लिया।

बरामदा बनने की देर थी कि टाउनशिप-विभाग से मुझे सूचना मिली कि बिना अनुमति के ऐसा करके मैंने अनुचित किया है। मैंने 'अनुमति पत्र' का नंबर एवं दिनांक का हवाला लिख भेजा।

कुछ दिन शांति रही, फिर एक 'चार्जशीट' आ गयी—४८ घंटे के भीतर अपने घोर अनुचित आचरण का स्पष्टीकरण दें।

चार्जशीट पाने का वास्तविक अधिकारी चार्जशीट भेजने वाला था। खेद इस बात का हुआ कि अनुमति देने और चार्जशीट भेजने वाले महानुभाव एक ही कमरे में बैठते, ऊंघते या सोते थे !

—सत्यस्वरूप दत्त, बिस्तुपुर, जमशेदपुर

नयी नियुक्ति हुई थी अतः दफ्तर की जिंदगी से एकदम अनभिज्ञ था। बॉस थे मि. मुखर्जी। पहले ही दिन काफी चिड़चिड़े लगे। जरा-सी भी गलती होती, और लगते फटकारने। एक दिन, मुझे भी गुस्सा आ **गया** और मैं बोल उठा, "आहिस्ता बोलिए! मैं दिल का मरीज हूं। अगर ढेर हो गया तो जिम्मेदार आप होंगे।"

मि. मुखर्जी के चेहरे के भाव एकदम बदल गये। उन्होंने स्नेहसिक्त दृष्टि से मेरी ओर देखा, बोले, "बेटा, एडमिनिस्ट्रेशन दो तरह से ही संभव है—एक फटकार से, दूसरे कलम की मार से। कलम की मार तुम लोगों की जिंदगी खराब कर सकती है। फटकारता इसलिए हूं कि तुम लोग सीखो और सुधरो!"

—जहीर कुरेशी, लश्कर (ग्वालियर)

जीवन-बीमा-निगम में नौकरी लगी तो एक साथ गृहस्थी और क्लर्क की जिंदगी जीने का मौका मिला। काम से ऊबकर जब कभी सामने देखती तो एक सज्जन कभी किसी पत्रिका में और कभी अखबार में उलझे दीखते। दूसरे शहरों से जो व्यक्ति परामर्श को आते उन्हें वे सात दिन बाद आने की सलाह देते। उनके जाने पर उनकी अर्जियों का पुलिंदा वे चपरासी की सहायता से पुरानी फाइलों के बीच ऐसा छिपा देते जिसे ढूंढ़ निकालना किसी के बस की बात न होती थी। व्यवस्थापकों और सरकार के विरुद्ध उनकी आवाज सबसे बुलंद होती। यह बीमारी प्रत्येक कर्मचारी को लगी तो देश का क्या होगा?

—मंजु त्रेहन, चंडीगढ़

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों। वे १५० शब्दों से अधिक बड़े नहीं होने चाहिए।

—संपादक

कालेज के कम्पाउंड से

मैं आयुर्विज्ञान महाविद्यालय का छात्र हूं। फरवरी में मेरी क्लीनिकल पोस्टिंग पीडियाट्रिक्स (शिशु-रोग-विभाग) में थी। जूनियर डाक्टरों की हड़ताल प्रारंभ होते ही अत्यधिक गंभीर मरीजों को छोड़कर शेष की छुट्टी कर दी गयी। प्रोफेसर (डॉ. के. के. कौल) ही हमारी अधिकांश कक्षाएं लेते थे। १९ फरवरी को प्रोफेसर ने डिमांस्ट्रेशन के लिए हमें वार्ड में जाने को कहा। पूरी यूनिट के हम आठ लड़के वार्ड में पहुंचे तो वहां क्रंदन के स्वर सुनायी पड़ रहे थे। नर्स इंचार्ज ने बताया कि सबेरे से तीन बच्चे दम तोड़ चुके थे। बेड नं. १५ में एक प्यारी-सी बच्ची 'नेफ्रोटिक सिन्ड्रोम' से पीड़ित थी। वह काफी स्वस्थ दिखायी पड़ रही थी। प्रोफेसर पढ़ाना प्रारभ करने ही वाले थे कि वह सीना पीट-पीटकर रोने लगी। प्रोफेसर ने बताया कि एकदम से उसे 'पल्मोनरी इन्फार्क्सन' हो गया था। उन्होंने सीनियर डाक्टरों को बलाया। एक बार तो लगा कि वह ठीक हो गयी है। बेहोशी से भी वह मुक्त हो चुकी थी। उसे अविलंब आक्सीजन देने की व्यवस्था की गयी। उसकी दादी उसे 'राम-राम' कहने को कह रही थी। उसने शून्य आंखों से दादी को देखा और दो बार 'राम-राम' कहकर चिरनिद्रा में सो गयी। भावावेश में प्रोफेसर इतना ही कह पाये—'दिस इज द रिजल्ट ऑव डॉक्टर्स स्ट्राइक'!

—अंशुमान मिश्र
आयुर्विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर

छात्र-संघ के चुनाव में मेरा मित्र भी खड़ा हुआ था। वोट मांगने के लिए वह काफी दौड़-धूप कर रहा था। रसायन-प्रयोगशाला के ऊपर जानेवाली सीढ़ियों के निकट से वह जब गुजर रहा था तब वहीं एक कुरसी पड़ी थी। परिणाम की चिंता किये बिना उसने कुरसी में ठोकर मार दी। लुढ़कती हुई कुरसी ऊपर आ रहे एक प्रोफेसर के पैर पर जा गिरी। मैंने कहा, "सर, कहिए तो मैं उस लड़के को बुला लाऊं?"

सर ने मना करते हुए कहा कि उसने कोई जानकर ठोकर थोड़े मारी है।

—राममोहन श्रीवास्तव, शासकीय स्नातक महाविद्यालय, दतिया (म. प्र.)

विद्यालय में 'अंतर्विश्वविद्यालय-वाद-विवाद-प्रतियोगिता' थी। एक छात्रा ने बोलना प्रारंभ किया ही था कि बिजली फेल हो गयी, अतः छात्रा की आवाज पीछे तक न जा सकी! हम कुछ छात्राएं दूर आकर बातें करने लगीं।

एकाएक चीफ-प्रॉक्टर को आते देख हम सबने भागने का प्रयत्न किया, लेकिन उन्होंने आवाज दे दी। मुझे सब के सामने जलील किया जाएगा, यही सोच मैं बुरी तरह कांप रही थी। लेकिन यह क्या! वे बोलीं, "लो, यह स्टिक! पंडाल में जाकर सबको चुप कराओ!"

—आराध्या शर्मा
रघुनाथ गर्ल्स डिग्री कालेज, मेरठ

डी. एस. कॉलेज, कटिहार के तृतीय वर्ष वाणिज्य (प्रतिष्ठा) का छात्र हूं। सत्र का एक वर्ष गुजरने को था पर हम लोगों का पाठ्यक्रम बाजार में नहीं आया था। वाणिज्य-विभाग में केवल एक प्रति विश्वविद्यालय से आयी थी। उसकी प्रतिलिपि करने के विचार से मैंने एक वरिष्ठ व्याख्याता सुशील बाबू से प्रति मांगी। उन्होंने कहा कि वह अशोक बाबू (विभाग में दूसरे व्याख्याता) के पास है। अशोक बाबू ने बताया कि वे उसे घर छोड़ आये हैं। दो दिन बाद उन्होंने फिर टाल दिया। यह सिलसिला डेढ़ महीने तक चलता रहा। फिर एकाएक एक दिन कहा, "सर, यह दो दिन का चक्कर क्यों नहीं छोड़ देते हैं?" इस पर वे गुस्से में कहने लगे कि तुम्हें पाठ्यक्रम देने का मेरा विचार नहीं है। इस दो दिन के चक्कर को भी नहीं समझ पाते!

—किशोरकुमार पोतदार, डी. एस. कालेज, कटिहार, (बिहार)

वनस्पति विज्ञान (बी. एस-सी. पूर्वार्द्ध) की कक्षा थी। एक दिन लेक्चर के बाद व्याख्याता ने एक आसान प्रश्न पूछा। आगे बैठी छात्राओं ने विचार-विमर्श शुरू कर दिया। व्याख्याता महोदय को इस पर अचानक जोर का गुस्सा आ गया। उन्होंने एक छात्रा के चपत लगा दी। फिर उन्होंने उसी छात्रा को समझाते हुए खड़ा किया। अत्यंत क्षुब्ध छात्रा ने धीरे से उलटा-सीधा जवाब दिया, पर वे उत्तर पर एकाएक उछल-से पड़े। उस छात्रा की काफी देर तक उन्होंने तारीफ की। छात्रा अपनी अकल्पनीय प्रशंसा सुनकर सारा क्षोभ भूल गयी।

—मुकेशकुमार, जी. एफ. कालेज, शाहजहांपुर

बायें से: किशोरकुमार, अंशुमान मिश्र, राममोहन श्रीवास्तव, मुकेशकुमार, आराध्या

● राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह

संस्कृत के प्राचीन (और शायद अर्वाचीन भी) कवियों में महाकवि कालिदास ही ऐसे कवि हैं जिन्होंने अपनी कृतियों में देश के विभिन्न पक्षियों का उल्लेख किया है। इसमें संदेह नहीं कि वह उचित अर्थ में एक कुशल, अनुभवी, 'बर्ड-वाचर' (पक्षी-निरीक्षक) थे।

पर कालिदास-चर्चित पक्षियों में कई ऐसे पक्षियों के नाम आते हैं जो विवाद के कारण बने रहे हैं, अर्थात वर्तमान पक्षियों में उन्हें हम कौन-से पक्षी कहें। ऐसा ही एक पक्षी है—'कंक'। महाकवि ने 'रघुवंश' में इस प्रकार इसका उल्लेख किया है—

वामेतरस्तस्य करः प्रहर्तुर्नखप्रभाभूषित-
कंक पत्रे।
सक्तांगुलिः सायकपुंख एव चित्रार्पिता-
रम्भ इवाबतस्थे।।

श्लोक में 'नखप्रभाभूषितकंकपत्र' का जिक्र आया है। कंकपत्र उस वाण को कहते हैं जिसमें कंक के पर लगे हुए हों। ऐसे तो बहुतेरे पक्षी हैं जिनके परों को शर में लगाने की परिपाटी थी, जैसा कि 'शार्ङ्गधर' नामक प्राचीन ग्रंथ में लिखा है—

काकहंसशशादीनां मत्स्यादक्रौंचकेकिनाम्
गृध्राणां कुरराणांच पक्षा एते सुशोभनाः
एकैकस्य शरस्यैब चतुःपक्षानि योजयेत्।

पर, यह गौरव कंक को ही प्राप्त है कि उसके नाम पर एक वाण-विशेष नामावली की सृष्टि हुई तथा महाकवि ने उसके परों को नखप्रभापूर्ण कहकर उसे प्रशंसित किया।

मैकडानेल और कीथ ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'वैदिक इंडेक्स् ऑव नेम्स एंड सबजेक्ट्स' में लिखा है—'**कंक एक पक्षी है जिसे आमतौर पर एक प्रकार का बगुला मानते हैं पर साथ ही कई स्थान पर इसकी इस प्रकार से चर्चा की गयी है जिससे इसके शिकारी पक्षी होने का भान होता है।**' पर बावजूद इसके कि वह मत्स्यभक्षी है, वह शिकारी पक्षियों (गृद्ध, चील, बाज आदि) की सूची में नहीं रखा जा सकता है।

कालिदास ने इसकी रूप-रेखा और

रंग का कहीं उल्लेख नहीं किया है पर 'अमरकोश' के टीकाकारों ने इसके संबंध में तरह-तरह के विचार प्रकट किये हैं। 'अमरकोश' में उल्लेख है—'**कंक ऐसा पक्षी है जिसके पृष्ठ का रंग लौह के समान है—लौहपृष्ठस्तु कंक : स्यात्।** त्रिकांडशेष ने उसे दीर्घपाद बताया है—**दीर्घपादस्तु कंकः।** सुश्रुत के प्रसिद्ध टीकाकार मल्लन ने और भी दो लक्षण जोड़े हैं—**कंकः दीर्घचक्षुर्महाप्रमाणः,** अर्थात कंक की आंखें दीर्घ होती हैं तथा वह महाकाय है। साथ ही, '**वाणपत्रार्हपक्षक**' लिखकर ग्रंथकार ने इसके परों के वाण में लगाये जाने की भी चर्चा की है और दीर्घपाद तथा लौहवर्ण होने का भी उल्लेख किया है।

तात्पर्य यह कि इसके उपर्युक्त रंग के संबंध में सभी टीकाकार एकमत हैं, और इसी आधार पर विदेशी टीकाकार गास्टभ अपार्ट ने कंक को गृद्ध मान लिया है, पर केवल लौहपृष्ठ होने के नाते गृद्ध को कंक मान लेना तर्कसंगत नहीं।

ब्लानफोर्ड आदि कई पक्षी-विशेषज्ञों ने दीर्घपाद, दीर्घ ग्रीवा एवं दीर्घ चंचु होने के नाते सारस और हाड़गिला पक्षियों को कंक प्रमाणित करने की चेष्टा की है, पर भिन्न रंग होने के कारण जमीन आसमान का अंतर है, अतः ये भी कंक होने के दावेदार नहीं माने जा सकते हैं।

वास्तव में, सभी दृष्टियों से विचार करने पर 'बगुला' ही वह पक्षी प्रतीत होता है जिसमें कंक के समस्त लक्षण पाये जाते हैं। 'अमरकोश' में जहां बगुले का जिक्र आया है वहां लिखा भी है—'वकः कंकः', और यह एक महत्त्वपूर्ण उक्ति है।

हमारे देश में मुख्यतः इन जातियों के बगुले पाये जाते हैं—**आंजन** (४० इंच लंबा, रंग जामुनी, सिर, नेत्र और चोटी के पास एक काली पट्टी, गरमियों में पीठ के रंग में ललाई), **निशावक** (पीठ
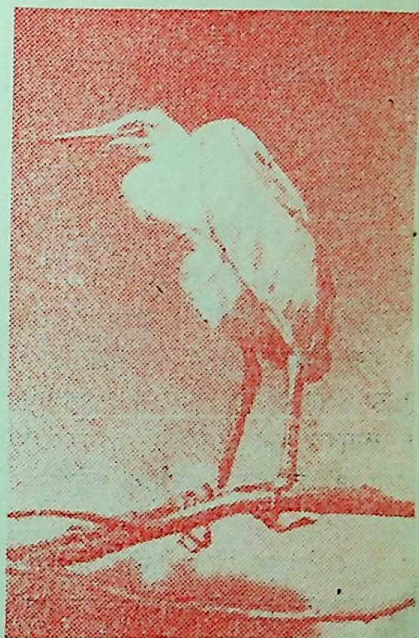
पर कालापन, चोटी सफेद), **काला बगुला** (नीलापन लिये हुए स्लेटी रंग)। वस्तुतः ये तीनों ही कमोबेश स्लेटी रंग के होते हैं। इन्हें कहीं-कहीं ग्रामीण भाषा में कंक भी कहते हैं जो कंक शब्द का अपभ्रंश हो सकता है। इनके पर देखने में काफी सुंदर होते हैं। बंगाल में आंजन

बगले को 'लाल-कांक' के नाम से पुकारते हैं। इसके वक्ष-स्थल के पर अपनी लंबाई और काली लकीरों के कारण सुंदरता के लिए विशेष प्रसिद्ध हैं। स्पष्ट है कि कालिदास का कंक इन्हीं बगुलों में से कोई है। रंग, परों का सौंदर्य, लंबी ग्रीवा, लंबे पांव, लंबी चोंच—ये सभी इनमें प्राप्य हैं। संभव है कि इन तीनों ही बगुलों के लिए महाकवि ने कंक शब्द का व्यापक रूप से व्यवहार किया हो।

ये तीन रंगीन बगुले हैं। इनके अलावा जो बगुलों की तीन और उपजातियां हैं वे दूध-जैसे करछिया, सुरखिया (जिसे गाय-बगुला भी कहते हैं) आदि सफेद बगुलों की हैं। इनके पर भी उतने ही सुंदर होते हैं जितने स्लेटी बगुलों के। बगुलों के पर हमेशा से अपनी सुंदरता के लिए मशहूर रहे हैं। प्राचीनकाल में पूर्वीय देशों में इन्हें साफे और पगड़ियों में लगाकर लोग सिर पर धारण किया करते थे, विशेषकर करछिया जाति के बगुलों के सिर के तुर्रे के दो लंबे, लटकते हुए पर (जो अंडा देने के दिनों में निकलते हैं), इस काम के लिए सर्वश्रेष्ठ माने जाते थे। मणियों से सुसज्जित इनकी कलगी बादशाहों के लिए एक मूल्यवान उपहार की वस्तु मानी जाती थी। मिस्र के सुलतान ने नील-नदी के युद्ध के बाद ऐसी ही एक पगड़ी नेल्सन को भेंट की। यूरोप की शौकीन महिलाएं बड़े गर्व के साथ बगुलों के इन परों को धारण करने लगीं। इन परों का मुख्यत: मिस्र से निर्यात होता था, पर एक वक्त ऐसा भी आया जब मिस्र में करछिया बगुलों का वंश लोप होने पर आ गया। कारण यह था कि उनके सिर के तुर्रों के पर, प्रजनन-ऋतु में ही उगते थे और उन्हें बगुले को मारकर ही प्राप्त किया जा सकता था। अंत में मिस्र की सरकार को विवश होकर इनके निर्यात पर कड़ा प्रतिबंध लगाना पड़ा। संभव है कि किसी समय वाणों की साज-सज्जा के लिए भी करछिया के ये पर अधिक उपयुक्त माने जाते रहे हों।

बगुले हमारे देश में हमेशा से व्यंग्योक्तियों के शिकार होते आये हैं ('बगुला-भगत-जैसा' मुहावरा इसका प्रमाण है), पर वास्तव में यह ऐसा पक्षी है जो काफी सुंदर है। नील-नभ में उड़ती हुई बगुलों की पंक्ति में कितना सौंदर्य भरा है! तभी तो कालिदास ने मेघ से कहा था—**सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाका:** और महाकवि रवींद्रनाथ ने उड़ते हुए इन बगुलों के डैनों में संगीत का अनुभव किया, लिखा—

आकाश पथे बलाका धाय
कोन से अकारणे वेगे
पुब हाओयोते ढेऊ खेले जाय
डानार गाने तुफान लेगे

अर्थात, व्योम-मार्ग में बगुलों की पंक्ति किस अकारण वेग से दौड़ती जा रही है जिसके डैनों के संगीत का तूफान पुरवैया हवा में लहर पैदा कर रहा है?

—२ बी, महारानीबाग, नयी दिल्ली
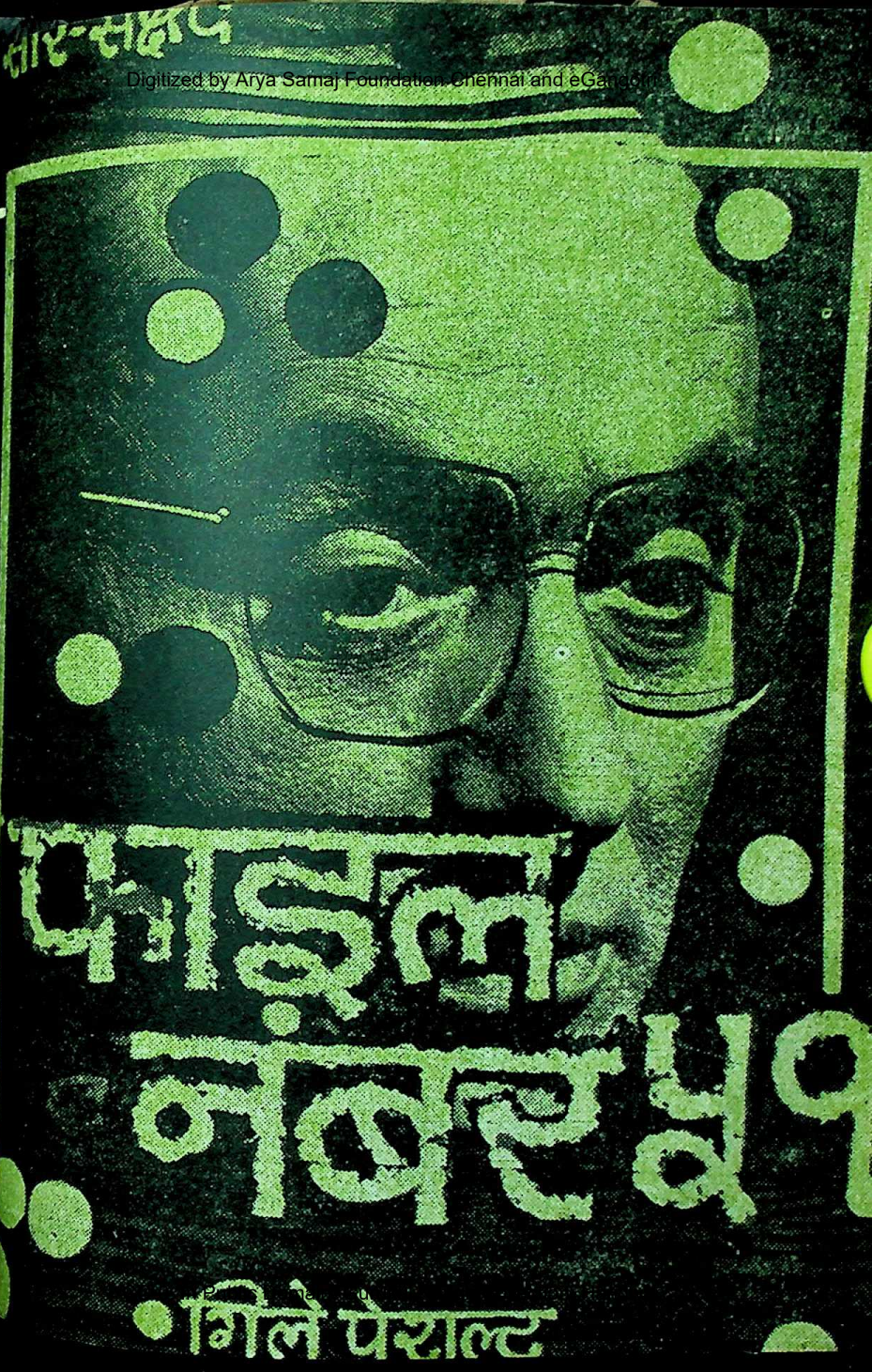
फ्रांस के आधुनिक लेखकों में सर्वाधिक चर्चित, गिले पेरॉल्ट का नवीनतम उपन्यास 'डोसिये ५१' एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो अनचाहे पुलिस की निगरानी में आ जाता है, और वैसे ही उससे मुक्ति भी पा लेता है। विधा और कथ्य की दृष्टि से अनुपम इस उपन्यास के रूपांतरकार हैं-- डॉ. राजेन्द्रपाल सिंह

विवरण : अत्यंत गोपनीय
विषय : डोमनीक ओफाल, जिसे केस नं. ५१ की संज्ञा दी जाएगी।

जानकारी के लिए: नं. ५१ एक फ्रांसीसी राजदूत है। अभी हाल में ही उसकी पदोन्नति हुई। वह कुछ बुझा-बुझा रहता है। फौज में नौकरी भी कर चुका है। उसे संसार के कष्ट और पीड़ाओं का ज्ञान है। उसकी पत्नी, जिसे नं. ५२ कहा जाएगा, किसी अन्य से प्रेम करती है। इस प्रेमी के साथ प्रेमालाप का और कुछ अन्य परिस्थितियों के चित्र तैयार करो। लक्ष्य-प्राप्ति के लिए प्रत्येक हथकंडा उचित है।

सूचना के संभावित स्रोत-परिवार, संबंधी, फौजी मित्र आदि
उद्देश्य : नं. ५१ का विभाग द्वारा इस्तेमाल और इस काम में उसकी कमजोरियों का भरपूर प्रयोग।
दिनांक : ११. ९. १९६७ वर्गीकरण : त
शुक्र से मंगल
पत्र-संदर्भ-संख्या : १९७४ द

नया फ्रांसीसी राजदूत आने को है। नाम : डोमनीक ओफाल। इससे पहले वह मुख्य, अवर सचिव, तकनीकी सहायता विभाग में था। वह अपना कार्यभार १६. १०. १९६७ को संभालेगा। सूचना का स्रोत : ८२७४
दिनांक : १२. ९. १९६७ वर्गीकरण:
मंगल से शुक्र । विषय : ५१ त स
पत्र-संदर्भ-संख्या : १९७५

१. डोमनीक ओफाल के विषय में सारी जानकारी एकत्र करो। २. सारे नौकरों की लिस्ट भेजो जो उसके यहां काम करेंगे। ३. ओफाल जो अपने नौकर लाएगा उनकी भी जानकारी एकत्र करो। ४. क्या उसका परिवार उसके साथ आ रहा है? ५. क्या ओफाल अपने सरकारी भवन में ही रहेगा? ६. भविष्य के लिए ओफाल को नं. ५१ कहा जाए।
दिनांक : १२. ९. ६७ वर्गीकरण :
मंगल से क्लिमो
संदर्भ : १९७
पी ए

डोमनीक ओफाल की फाइल खोलें
दिनांक : १२. ९. १९६७ वर्गीकरण:
त स
क्लिमो से मंगल
संदर्भ: १९७

आज्ञानुसार डोमनीक ओफाल की फाइल प्रस्तुत है। संलग्न हैं ७ परिशिष्ट।

डोमनीक ओफाल

(१) परिवार : जन्म : ३१.३.'३१, पेरिस।
पिता : लूसियान, जन्म : १५. ८. १८९०, स्थान : बूरडो, पेशा : डाक्टर, मृत्यु : १३. २. १९६१
मां : मोनीक द सवी, जन्म : १२. १२. १९०५, काम : गृहकार्य
ओफाल की विवाह-तिथि : १२. ११. १९५८

पत्नी : लिलियन, जन्म : १५. ९. १९३८
पिता : किसान, मां : गृहिणी
ओफाल के बच्चे : स्टीफान : जन्म ३०. ८. १९५९ (स्पेन), एलोडी : जन्म १. १०. १९६४ (मोरक्को)
शिक्षा : प्राइमरी . . पेरिस
सेकेंडरी . . पेरिस
अन्य योग्यताएं : बेकालारिये (कला और दर्शन), जन-सेवा-विभाग से डिप्लोमा
फौजी सेवाकाल : २७. १२. १९५० से १६. २. १९५८
अंतिम पद : लेफ्टिनेंट
पदक : मिलिटरी काम तथा अन्य पदक
चोट : नहीं
अन्य कार्यकाल : सचिव, विदेश-विभाग, ग्रेड २ की भरती से अब ग्रेड ७
परिशिष्ट १—७

ओफाल के विषय में वर्णित सभी बातों की पुष्टि के लिए संग्रहित सामग्री

दिनांक : २. १०. १९६७ वर्गीकरण : शुक्र से मंगल त स
विषय : ५१ संदर्भ : १९८६

आपकी पत्र संख्या . . . के उत्तर में—१. ५१ के विषय में जानकारी देखिए (संलग्न . . .) २. पुराना पूरा स्टाफ काम करेगा, एक नौकरानी सेवा-

निवृत हो रही है। ३. ५१ के साथ आने वाला स्टाफ नियुक्त नहीं किया गया है। ४. ५१ का परिवार बाद में आएगा। ५. यह पता नहीं लग सका है कि ५१ अपनी सरकारी कोठी में ही रहेगा या नहीं। स्रोत : ८२७४

दिनांक : २. १०. १९६७ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र
संदर्भ : १९८७

आदेश समझने में भूल हुई है। आदेश दोहराया जा रहा है: "डोमनीक ओफाल के विषय में सारी जानकारी एकत्र करो!"

दिनांक : ३. १०. १९६७ वर्गीकरण :
शुक्र से मंगल त स
संदर्भ : १९८८

कृपया अपना आदेश . . . देखें १. भूल हमारी नहीं है। आपने दूसरी बार 'सारी' के नीचे रेखा खींच ली है। २. आपने ५१ के नाम का प्रयोग किया है यह कोड नं. नाम के साथ प्रयुक्त करना संहिता. . . का उल्लंघन है तथा दंडनीय है। ३. सूर्य ने आदेश दे रखा है कि फ्रांसीसी मामलों में राजनीतिक कारणवश अत्यधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है। संभव है ५१ को फ्रांसीसी खुफिया का संरक्षण प्राप्त हो। संभव है कि यदि हम अधिक खोजबीन करें तो हमारी सारी कार्यवाही की जानकारी फ्रांसीसी खुफिया-विभाग को हो जाए। ४. इसलिए मंगल के आदेश का पालन स्वयं सूर्य के आदेश मिलने पर ही हो सकेगा।

दिनांक : ४. १०. १९६७ वर्गीकरण :
सूर्य से मंगल त स
संदर्भ : ५३७६

शुक्र, मंगल की आज्ञा का पालन करें। प्रतिलिपि : शुक्र के लिए।

दिनांक : ५.१०.१९६७ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : १९९०
विषय : ५१

१. ५१ अपना कार्यभार १६ को संभालेगा। एक खुफिया जाल लगाया जाए। २. इस नगर का नाम अब डेल्फी होगा। ५१ के विभाग का नाम पार्थीन होगा। ३. पत्नी को पूरी तरह नजर में रखो और उसकी हर गतिविधि के चित्र और रिकार्ड तैयार करो। ४. पत्नी को ५२; लड़के का ५३ और लड़की को ५४ कहा जाए। ५. अवकाश ग्रहण करनेवाली स्त्री की जगह कौन ले रहा है?

दिनांक : १०.११.१९६७ वर्गीकरण : त स
शुक्र से मंगल संदर्भ : १९९२
विषय : ५१

५१ का घर पांच कमरों का है। किराया ९००। एक नौकरानी है: मेरी। कार : २ वर्ष पुराना पिजो ४०४ है। उनका अपना मकान नहीं है। कपड़े सिले-सिलाये खरीदे जाते हैं।

५१ और ५२ एक बार सप्ताह में भोज देते हैं, और वर्ष में एक बार बहुत बड़ा भोज। गरमियां प्रायः बाहर बिताते हैं या ५२ के मां-बाप के साथ।

५१ का वेतन पहले ५,००० से ऊपर था। इस वक्त उसे क्या मिल रहा है, ज्ञात नहीं है। इसके पहले के आदमी को १२,००० के ऊपर वेतन मिलता था। स्रोत : नौकरानी मेरी द्वारा ८,९५६ से ८,२७४

संलग्न : टेप सुनिए

संलग्न : ५१ का ५२ के लिए पत्र

संलग्न : ५२ की टोह का परिणाम

संलग्न : ५१ का ५३ के लिए पत्र और ५१ के बटुए में रखी जानेवाली सामग्री की लिस्ट।

दिनांक : १०.११.१९६७ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : २,००६
विषय : ५२ और ५२ अ

संलग्न तसवीर देखो।

औरत ५२ है। और ५२ अ उसका प्रेमी। पूरी तरह उनके प्रेमालाप टेप करो। ५२ को निगरानी में रखो। यह काम केवल एक आदमी करे। इस काम को सर्वोच्च प्राथमिकता दो। संलग्न : ५२ और ५२ अ की तसवीरें

दिनांक : २२.११.१९६७ वर्गीकरण : त स
शुक्र से मंगल संदर्भ : २०१३
विषय : ५२ और ५२ अ

टेप की लिखी प्रतिलिपि

५२ अ : तुमने अपनी टांगों के नीचे इससे बढ़िया चीज कभी नहीं अनुभव की होगी।

५२ : क्या उमर है?

५२ अ : चार वर्ष . . .

५२ : तुम्हारे बिना घुड़सवारी बुरी लगेगी..

५२ अ : या और कुछ

५२ : चुप...पशु

(हंसी)

५२ अ : कब जाओगी? (कई मिनट तक मौन)

५२ : जल्दी मचा रहे हैं।

५२ अ : उसे गये कितने दिन हो गये?

५२ : लगभग एक माह।

५२ अ : इधर आओ... और कपड़े... (काफी देर मौन, फिर फोन करने की आवाज)

५२ : ऐसे समय में भी फोन... (हंसी)

५२ अ : इसमें हंसने की क्या बात है? मुझे सारा काम तैयार चाहिए... सिगरेट दो न।

५२ : एक समय में एक काम...

५२ अ : (काफी देर के बाद) फिर कब?

टिप्पणी : टेप ठीक नहीं था। और टेप करना भी काफी मुश्किल काम था। फिर भी प्रयत्न किया गया। कुछ तसवीरें भी संलग्न हैं।

दिनांक १८.१२.१९६७ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : २०२५
विषय : ५२ और ५२ अ

टेप जरूरी नहीं था। तसवीरें अच्छी हैं। बहुत ! धन्यवाद कार्यकर्ता तक पहुंचाया जाए।

दिनांक : ३.१.१९६८ वर्गीकरण : त स
शुक्र से अ संदर्भ : २०३६
विषय : ५१

५१ के विषय में सारी संलग्न सामग्री

पढ़ें! चित्र देखें।

५१ के चरित्र के विषय में हमारे पास ऐसा कुछ नहीं है जिससे उसकी कमजोरी का हम लाभ उठा सकें। इसलिए हमने अपना ध्यान ५२ की ओर दिया है।

हमारा विचार है कि ५१ की केवल एक रुचि है– अपना काम। उसका प्रेम

फिर भी ५१ को अपनी नौकरी छोड़नी होगी। इसलिए ५१ के सहयोगियों को ५२ और ५२ अ के विषय में यदि बता देने की धमकी दी जाए तो भी ५१ को अपने काम के लिए मजबूर करना आसान होगा।

कृपया हमारे विश्लेषण पर टिप्पणी दें।
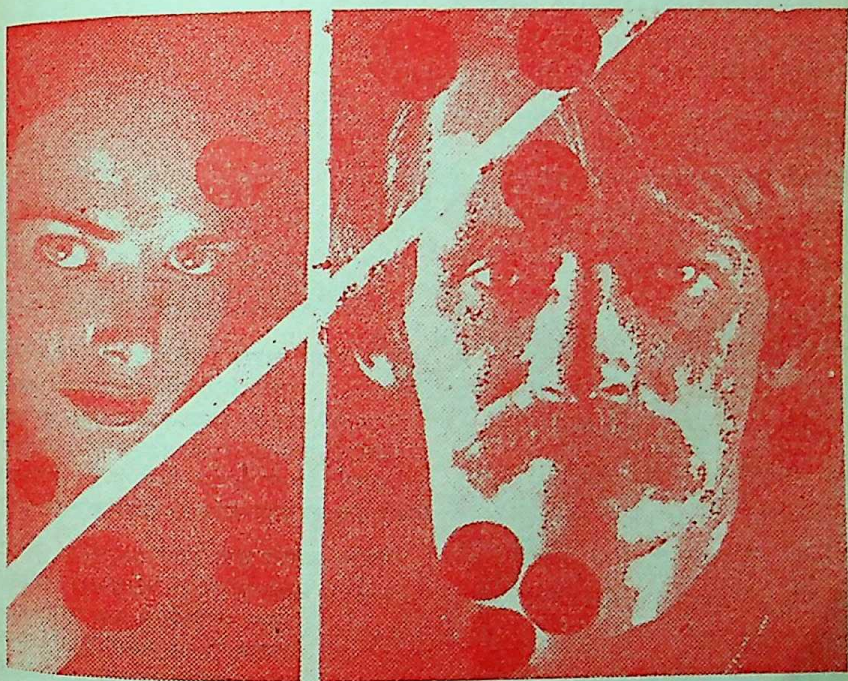
बच्चों में है। उसका काम सामान्य से कम है। इसलिए ५१ का तरक्की करना स्वाभाविक है। किंतु यदि हम ५२ और ५२अ के संबंध उजागर कर दें तो उसकी नौकरी छूट जाएगी। चाहे फ्रांसीसी सरकार वैसे उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही न भी करे

दिनांक : १२.२.१९६८ वर्गीकरण : त स
अ से सूर्य संदर्भ : २०४९
विषय : शुक्र

हमने सारी फाइल पढ़ी। हम शुक्र के विरुद्ध रपट भेज रहे हैं। बेकार की [illegible] के कारण हमारा समय बरबाद

जवानी के साथ-साथ दर्द और तकलीफ़ की परेशानी भी आती है

तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन आपके आड़े समय काम आती है

आप अपने कॉलेज का कोई भी उत्सव छोड़ना नहीं चाहतीं। परन्तु आज जबकि कॉलेज में एक शानदार फ़िल्म-शो होने वाला है, आप कमर के दर्द, बेचैनी और बेआरामी के कारण मुरझाई हुई-सी हैं। तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन ऐसे ही नाज़ुक अवसरों पर काम आती है।

एनासिन बहुत गुणकारी है, क्योंकि यह केवल दर्द से आराम नहीं दिलाती बल्कि दर्द के साथ होने वाली उदासीनता को भी दूर करती है। एनासिन आपको जल्दी आराम और चैन दिलाती है और आपके चेहरे पर फिर वही मुस्कान आ जाती है।
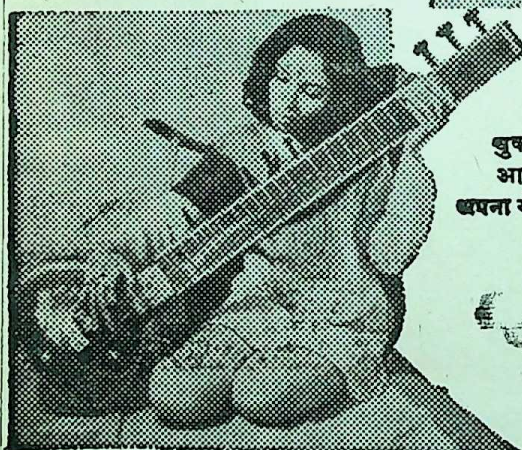
अपने नाज़ुक दिनों में दर्द की बेचैनी और बेआरामी से पड़े रहना पुराने ज़माने की बात है। आज ज़माना बहुत आगे आ चुका है। तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन आपको जल्दी आराम दिलाती है। और आप अपना रोज़ का काम-काज आराम से कर सकती हैं।

लड़की होना भी कभी-कभी एक मुसीबत मालूम होती है। परन्तु आप ऐसे आड़े समय एनासिन से काम लेकर अपनी उलझन दूर कर सकती हैं, और जीवन का पूरा आनन्द ले सकती हैं। ज़रूरत के समय के लिए अपने पर्स में हमेशा एनासिन रखिए—यह बहुत बड़ी सुविधा है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

दर्द-निवारक दवा

[Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.
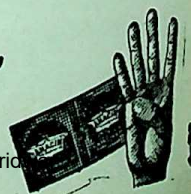
किया गया। ध्यान रखने की बात है कि इस समय हम लोग कितने व्यस्त रहते हैं। अतः व्यर्थ की बकवास तकलीफदेह होती है। शुक्र के कारण हमारे विभाग की कार्य-विधि में काफी गड़बड़ होती है !

दिनांक : १५.२.१९६८ वर्गीकरण : त स
सूर्य से मंगल संदर्भ : २१५१
विषय : ५१

५१ के संबंध में एक नया अभियान चलाया जाए। नामः मरी पत्तियां। इसके अंतर्गत उसके संबंधियों के बारे में तथा अन्य सामग्री जुटाओ। देखा जाए कि ५१ को अपने कार्य में लाने के लिए हमारे पास अधिक से अधिक मसाला हो।

दिनांक १५.२.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : २१५२
विषय : मरी पत्तियां

'मरी पत्तियां' अभियान चलाया जाए। इसमें सभी प्रकार की सावधानी बरती जाए। जितने एजेंटों की आवश्यकता हो, उनका उपयोग किया जाए। एजेंट विश्वस्त हों।

दिनांक : १६.२.१९६८ वर्गीकरण : त स
शुक्र से ह. के लिए संदर्भ : २१५३
विषय : मरी पत्तियां

उपर्युक्त आदेश पढ़ो और कार्य प्रारंभ करो।

दिनांक २.५.१९६८ वर्गीकरण : त स
ह. से शुक्र संदर्भ : २१५४
विषय : मरी पत्तियां

इस अभियान के दौरान हमें अनेक कागजात, सूचनाएं आदि मिली हैं। सबका विश्लेषण किया गया। यथानुसार उसमें सारी सामग्री संलग्न है।

विशेष रूप से ५१ की मां का पत्र देखें तथा ५१ द्वारा लिखे गये पत्र भी देखें। और यह भी देखें कि ५१ किसी समय काफी उद्दंड था और उसे फौज में सजा मिल चुकी है।

पेरिस, ईस्टर, १९६२

मां का पत्र :
मेरे प्रिय बच्चे,

कुछ ऐसा हुआ कि मुझे यह पत्र लिखना पड़ रहा है। वैसे इच्छा तो नहीं थी। काफी समय बीत गया, जब तुम मेरे पास बिस्तर में घुस आते थे। हम कितनी देर तक बात करते रहते थे। वे बातें जिनका कोई अर्थ नहीं था किंतु हम लोगों का मन लगा रहता था।

आजकल अखबार रोज मेरे प्रमुख मित्रों की संख्या कम होने की सूचना देते रहते हैं, परंतु एक दिन तो सभी को जाना है।

मैं चाहती हूं कि तुम्हें आज अपने मन में छिपाये एक सत्य से परिचित करा दूं। तुम्हारे पिता वह नहीं थे, जिनका नाम तुमसे जुड़ा है। वरन वह थे, जिन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध में राष्ट्र की सेवा करते-करते अपनी जान दे दी। यह सही है कि मेरे पति को तुम्हारे पिता से मेरे संबंध का ज्ञान था, और इसीलिए वह तुम्हारे प्रति कटु भी थे; किंतु मेरा प्यार इस कारण कम

नहीं हुआ। जब भी समय मिलता, हम (मैं और तुम्हारे पिता) मिलते। वहीं क्षण मेरे लिए स्वर्ग थे। मेरे ११ वर्ष के प्रेम का प्रतिफल तुम हो।

मैं नहीं चाहती थी कि तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट दूं। चाहती थी कि चुपचाप बिना कुछ बताये चली जाऊं... पर ऐसा नहीं हो सका।

मेरे प्रिय बेटे, मैं जो कष्ट तुम्हें दे रही हूं उसके लिए क्षमा करना...

अलविदा

तुम्हारी मां

५१ की प्रेयसी का पत्र

तुमने अपना विवाह करके हम सबको अजीब हालत में डाल दिया है। इस झटके से निकलना आसान नहीं है। तुम्हारी अन्य दो प्रेमिकाओं का क्या हुआ? मां को बहुत दुःख हुआ है। सहस्रों चुंबन, **बेलेरो**

दिनांक : १३.५.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : २११३
विषय : मरी पत्तियां

आदेश दिया जाता है कि ५१ की प्रेयसी जिसका विवरण नीचे दिया है और जिसे ५१ अ कहा जाएगा, का पूरा पता लगाओ।

नाम : सारा। लिंग : स्त्री, उम्र : २४ या २५ (जन्म-तिथि पता नहीं) जाति : यहूदी, राष्ट्रीयता : फ्रांसीसी, बाल : काले, शिक्षा : विश्वविद्यालय, स्थान : पेरिस, राजनीति : ट्राट्स्कीवादी

दिनांक : १७.६.१९६८ वर्गीकरण : त स
शुक्र से मंगल संदर्भ : २११३
विषय : मरी पत्तियां

अभियान १० बजे रात को चालू किया गया। कार्यकर्ता : सुकरात। कई पते खोजने के बाद, इस पते पर वह मिली।

प्रेमालाप के पश्चात उसके पासपोर्ट आदि से जानकारी प्राप्त की गयी।

जन्म : १५.७.१९३४, अल्जीरिया। पिता : डेविड और मां गोल्डा लिवरस्टाइन। व्यवसाय : सब्जी उगाना। १९४५ में विशी सरकार द्वारा यहूदियों को मरवाने की जानकारी ने उसे यहूदी होने का अहसास दिया, इसलिए वह फ्रांस से इजराइल चली गयी। १९५४ में पेरिस लौटी और और साल भर बाद फ्रांसीसी कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्य बन गयी।

५१ से वह १९५८ में मिली। ५१ अ को विश्वास है कि ५१ की वही एकमात्र प्रेयसी है। उसके कहने पर ५१ ने कहानी भी लिखी (प्रतिलिपि संलग्न है)। ५१ के परिवार ने जोर डालकर उनका संबंध तुड़वा दिया, किंतु उसके लिए ५१ अ का प्रेम कम नहीं हुआ है। भविष्य में थोड़े दिन सुकरात को उससे प्रेम करने की आज्ञा प्रदान की गयी है ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसका भरपूर प्रयोग किया जा सके।

संलग्न : कहानी की एक प्रति

दिनांक : ६.६.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : २१२०
विषय : मरी पत्तियां

सारा एबोल को ५१ अ की संज्ञा प्रदान

की गयी ।

८८४८ से कहो कि ५१ अ से वह संबंध बनाये रखे । धीरे-धीरे उससे फुसलाकर वह ५१ के विषय में और भी जानकारी प्राप्त करे । अच्छा हो यदि ५१ अ अपने आप यह बताये कि ५१ किसी प्रकार की राज्यक्रांति करवाना चाहता था, या है ।

इस अभियान को राजकीय अभियान कहा जाएगा ।

इस सामग्री के प्रमुख पात्र हैं, ५१ स्वयं, ५१ अ—उसकी प्रेमिका, ५२ : ५१ की पत्नी, ५२ अ : ५२ का प्रेमी, ५३ : ५१ और ५२ का पुत्र, ५४ : ५१ और ५२ की पुत्री, ५५ : उनका नौकर, ५६ : ५१ का सचिव ।

हम इस फाइल की सामग्री पहले भी भेज चुके हैं, किंतु वह अलग-अलग हिस्सों में थी ।

दिनांक : २६.६.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से अ... संदर्भ : २१२६
विषय : ५१

संलग्न सामग्री ५१ पर है । इसमें लगभग सभी प्रकार की सामग्री है—टेप, पत्र, फोटो, आदि । इनकी कुल संख्या २० है ।

५१ का अपने बच्चों से बहुत प्रेम है, विशेषज्ञ ५३ (पुत्र से) ५२ के विषय में उसकी भावनाएं अधिक गहरी नहीं हैं । ५१ अब भी ५१ अ की तसवीर बटुए में रखे फिरता है । ५१ अ पिछली बार जब ५१ से मिली थी तो ५१ ने उसके विछोह
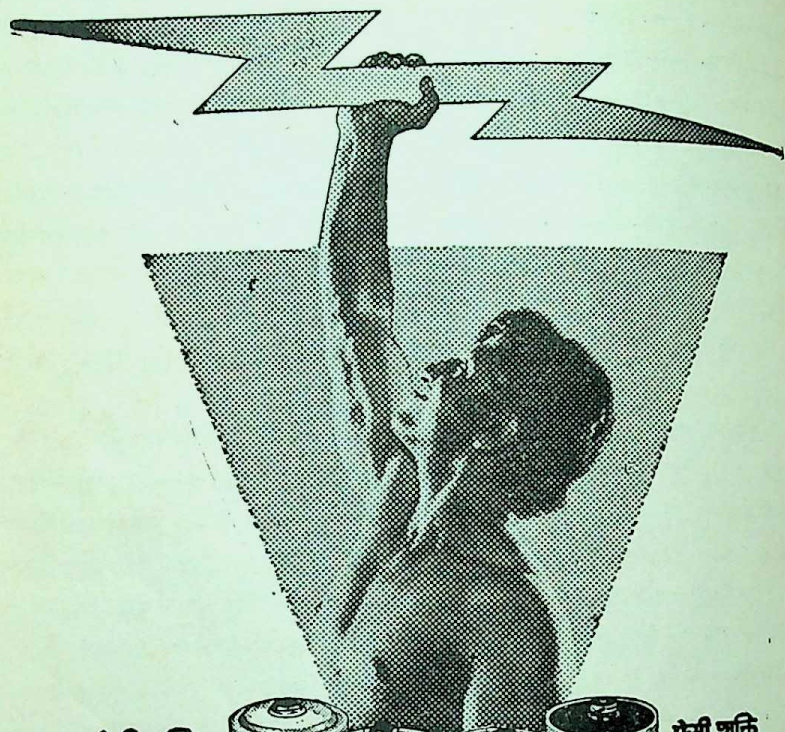
पर खेद प्रकट किया था।

हम चाहते हैं कि ५१ औ ५१ अ के संबंध को पुनः शुरू कराया जाए। इससे हमारे उदेश्य की सफलता में विशेष सहायता मिलेगी।

दिनांक : २८.६.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र को संदर्भ : २१२७
विषय : राजकीय अभियान

५१ अ १०.६.१९६८ से अभी तक पेरिस नहीं लौटी है।

फ्रांसीसी पुलिस ने उसके घर की तलाशी ली। बहुत खतरा है।

राजकीय अभियान समाप्त किया जाए।

दिनांक : ५.७.१९६८ वर्गीकरण : त स
शुक्र से मंगल संदर्भ : २१३०
विषय : मरी पत्तियां

लिंडवर्ग द्वारा भेजी गयी सामग्री के आधार पर जीन पोलीनन का पता लग गया है। वह किसी समय ५१ की साथी थी और क्रांति में उसका साथ देनेवाली थी। कृपया पत्र पढ़ें—

वर्गीकरण : त स
संदर्भ : २१३१
पेरिस : २९ जून '१९६८

पूज्य पिताजी,

बहुत वर्षों बाद मुझे आपके द्वारा पता चला कि डोमनीक ओफाल काफी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो चुका है। वह काफी ऊंचे सरकारी ओहदे पर है।

पर हमें तो उसके २० वर्ष पूर्व की एक घटना भुलाये नहीं भूलती। हम सब एक ही कक्षा में थे और उस समय हममें से प्रत्येक को लगता था कि वह एक कमजोर सा लड़का है, और जिस निबंध पर उसे सबसे अधिक प्रशंसा मिली थी, वह भी एक विचित्र प्रकार का विषय था। उसने लिखा था कि किस प्रकार उसने एक निराश छात्र में आस्था उत्पन्न की थी। उस समय तो हम सभी आश्चर्यचकित रह गये किंतु बाद में हमें लगा कि उसने एक प्रकार से गप मारी है। वह किसी में आस्था जगाने के योग्य तो प्रतीत नहीं होता था।

यह प्रसन्नता की बात है कि ओफाल जीवन में सफल व्यक्ति बन गया है। बीवी है, बच्चे हैं, पद है और सम्मान है, किंतु उससे आगे कुछ नहीं है। वैसे जिस ओफाल को मैंने जाना, वह १५ वर्ष का था अब वह ४० के आसपास होगा। आपने पूछा था कि मैं उसके बारे में क्या जानती हूं सो लिख दिया। जीन पोलीनोन

दिनांक : ९.७.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से अ संदर्भ : २१३२
विषय : ५१

हमने आपको २१२६ संदर्भ संख्या से ५१ के विषय में फाइल भेजी थी। हमें अब प्रतीत होता है कि हम ५१अ को किसी प्रकार भी अपने उद्देश्य पूर्ति के लिए प्रयोग में नहीं ला सकते। आप अपनी मौखिक राय हम तक पहुंचा दें।

दिनांक : १५-७-१९६८ वर्गीकरण : त स
अ—से मंगल संदर्भ : २१३४

भव्यता का स्पर्श !
रंगो का समूह !!
मिनटों का काम !!!
हलो सुषमा ! चलो थोडा घुम आएं।
एक सेकंड। मैं ज़रा यह काशीदाकारी पूरी करलुँ।
मंजू, मुझे दूसरों से भिन्न और आधुनिक दिखाई देने का सिर्फ यही एक रास्ता दिखाई देता है।
नहीं, नहीं ! इसका अर्थ है कि एक घंटा और लगेगा। तुम कबतक अपनी आंखें थकाओगी ?
मेरी मैक्सी तो देखो ! कैमल क्राइलिन रंगों से इसे पेंट करने में मुझे सिर्फ २ घंटे लगे।
वाह! कितना आसान है।
क्राइलिन कॉरेसपॉन्डन्स स्कूल
कैमलिन प्राइवेट लिमिटेड
आर्ट मेटीरियल डिविज़न
जे. बी. नगर, बम्बई-४०००५९
Vision HN. 731

विषय : ५१

संलग्न रिपोर्ट पढ़ें। हम पहले भी इस विषय पर काफी विस्तार से खोज पड़ताल कर चुके हैं। अब नये तथ्यों को ध्यान में रखकर पुनः तैयार की रपट आपकी सेवा में भेजी जा रही है।

संलग्न : रिपोर्ट ५१ के विषय में।

रिपोर्ट वर्गीकरण : त स

संदर्भ : २१३५

५१ के पिता :

५१ के पिता लूसियन ओफाल जो केवल सुविधा के लिए ही डोमनीक ओफाल का पिता था, उसका अपने पुत्र की सम्वेदनात्मक जिंदगी पर कोई प्रभाव नहीं था। वह एक अजीब कमजोर आदमी था। जब उसे पता भी चल गया कि उसकी पत्नी किसी प्रेमी द्वारा एक पुत्र को जन्म दे चुकी है तब भी उसने कुछ नहीं किया। उसने न किसी प्रकार का रोष प्रकट किया और न कोई विरोध ही दिखाया। वास्तव में यह अंतर्मुखी व्यक्तित्व एक न्यूरोटिक चरित्र है। जो कुछ सामग्री हमारे पास उपलब्ध है, उसके अनुसार यह व्यक्ति उदास, निरुत्साही और असामाजिक प्रतीत होता है। यही कारण है कि उसने अपने पत्नी के प्रेमी को मरने में सहायता, ११ वर्ष प्रेम-संबंध रखने के बाद दी। उसकी जीवन से उदासीनता ही एक कारण है कि उसने ५१ के अवैध होने के तथ्य को भी पचा लिया और कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखायी। ५१ के स्कूल से भागते घर से

अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतोहतः (विदुरनीति)

—धन क्षीण हो जाने पर भी मनुष्य क्षीण नहीं माना जा सकता, पर चरित्रहीन तो सर्वथा नष्ट माना जाता है।

तेंन खट्वां समारूढ़ः परितप्तेंत कर्मणा।
आदावेव न तत् कुर्यादध्रुवजीविते-सति॥ (विदुरनीति)

—जिस काम के करने से अंत में खाट पर बैठकर पछताना पड़े उसे पहले से ही नहीं करना चाहिए क्योंकि जीवन का कोई टिकाना नहीं है।

मार्दवं सर्वभूतानां, अनुसुया क्षमाधृतिः।
आह्मप्याणि बुधाः प्राहुः, मित्राणां च विमानना॥ (महाभारत)

—संपूर्ण प्राणियों के प्रति कोमलता का भाव, गुणों में दोष न देखना, क्षमा, धैर्य, मित्रों का अपमान न करना—ये आयु बढ़ाते हैं। विचारकों का यही मत है।

दक्षः श्रियमधिगच्छति पत्र्याशीकल्यतां सुखमरोगी।
अभ्यासी विद्यान्तं धर्मार्थयशांसि च विनीतः॥ (द्रोणाचार्य)

—चतुर लक्ष्मी, सुंदर और हलका भोजन करनेवाला नीरोगता, रोगहीन सुख, अभ्यासी विद्या के अंत और विनीत मनुष्य धर्म, धन और यश प्राप्त करता है।

भागने आदि पर भी लूसियन की प्रतिक्रिया सामाजिक कारणों से थी, व्यक्तिगत प्रेम के कारणों से नहीं। इसलिए आश्चर्य नहीं करना चाहए कि ५१ भी न्यूरोटिक है। **५१ की मां।**

५१ की मां के पत्र का विश्लेषण यह बताता है कि उसका व्यक्तित्व पिता–केंद्रित है। इसीलिए उसने अपने मृत पिता की प्रतिमूर्ति अपने पति में ढूंढ़ने की कोशिश की। उमर में बड़े पति का ढूंढ़ना ही इसकी पहचान है, फिर वैवाहिक जीवन सुखी न होने पर भी उसने अपने पति, यानी पिता को छोड़ना मंजूर नहीं किया। अपने लड़के में भी उसने उसी प्रकार की छाया का घिराव देखा। कहना न होगा कि मानसिक तनाव, अवैध संबंध का बोझ, पुत्र से सत्य का छिपाव आदि ऐसी बातें है जो काफी महत्त्वपूर्ण ढंग से बताती हैं कि ५१ की मां विभिन्न ध्रुवों में तनी स्त्री है। उसका अंतिम पत्र उसके चरित्र पर काफी प्रकाश डालता है।

५१ के चरित्र को शायद अब समझना काफी आसान है। संक्षेप में, यह व्यक्ति एक बहुमुखी प्रतिभावाला है। किंतु किसी भी मानसिक तनाव की स्थिति से स्वयं को बचाने की इच्छा रखने के कारण कभी भी चक्कर में आ सकता है। उसका अंतर्मन परस्पर-विरोधी भावनाओं से ओत-प्रोत है।

हमारे अपने उद्देश्य से ५१ को उसके अवैध संतान होने की सूचना देना ही काफी होगा। वह एक ऐसी मानसिक तनाव की स्थिति में फंस जाएगा कि हम उसका बड़े आसानी से उपयोग कर लेंगे। होना तो यह चाहिए कि जो ५१ को उसकी अवैधता की सूचना दे, वही उससे हमारे नये काम की दिशा भी बताये। यह सारा काम परोक्षरूप में बड़ी सफाई से होना चाहिए। सीधे-सीधे किसी प्रकार का हमला अनुचित होगा। यह परोक्ष हथियार ही सबसे अधिक सुविधाजनक और उपयुक्त रहेगा। यह हमला ५१ के मनोवैज्ञानिक विश्व की धुरी तक को अव्यवस्थित कर देगा!

दिनांक : १८.१०.१९६८ वर्गीकरण : त स
मंगल से शुक्र संदर्भ : २१५३
विषय : ५१

५१ की अगली पेरिस-यात्रा का पता लगाया जाए। पेरिस पहुंचने पर अ… द्वारा बतायी दिशा में कार्यवाही की जाए।

दिनांक: १९.१०.१९६८ वर्गीकरण : त स
शुक्र से मंगल संदर्भ : २१५४
विषय : ५१

५१ की मृत्यु हो गयी है। वह कल १० बजे सड़क दुर्घटना का शिकार हो गया। पेरिस की खबरों से पता चलता है कि दुर्घटना के सही कारण का पता नहीं चल सका है। उसने ब्रेक भी नहीं लगाये। लगता है कि ५१ अचानक बीमार हो गया था।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

महाशयजी

चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

रजि. नं. डी.-(सी)-

पनामा

CT (P)-709-Hin

मासिक प्रकाशन
कादम्बिनी
शीत के चेहरे

पहले इन्तज़ाम,
फिर इन्तज़ार!

CREST
Permanent
HAIR DYE
BLACK

SUPER
Surf
wash
सुपर सर्फ़ से
एक बार धुल कर
कपड़े जितने सफ़ेद होते हैं
अन्य पाउडरों से नहीं हो पाते !
सुपर सर्फ़
से कपड़े सब से सफ़ेद धुलते हैं

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ८ पर दिये गये उत्तरों से मिलाइए

• विशालाक्ष

१. उद्‌भावना—क. धारणा, ख. कल्पना, ग. विचार, घ. लहर।

२. लेश—क. तत्त्व, ख. नाम, ग. कण, घ. चटनी।

३. बहिरंग—क. रंगविरंगा, ख. बहिष्कार, ग. रूपरेखा, घ. बाहरी।

४. गुर— क. युक्ति, ख. गुरु, ग. गुड़, घ. प्रक्रिया।

आपके शब्द-ज्ञान की परीक्षा

१२ या अधिक सही . . . . . जीनियस
११–९ सही . . . . उत्तम
८–६ सही . . . . साधारण

५. व्युत्पत्ति—शब्द की मूल उत्पत्ति, ख. प्राप्ति, ग. पांडित्य, घ. पैदावार।

६. निदर्शन — क. प्रदर्शनी, ख. छिपाना, ग. दिखाना-बताना, घ. दर्शन।

७. अनुकंपा—क. कंपन, ख. संवेदन, ग. रोमांच, घ. अनुग्रह।

८. ऊहापोह—क. डुबकी लगाना, ख. सोच-विचार, ग. पोहना, घ. मंथन।

९. मूर्धन्य—क. शिरोमणि, ख. चोटी, ग. प्रमुख, घ. बुद्धिमान।

१०. अविच्छिन्न—क. न छीना हुआ, ख. सरल, ग. अखंड, घ. छिन्नभिन्न।

११. प्रतिश्रुति—क. वचनबद्ध, ख. सुना, ग. कीर्तिलब्ध, घ. स्वीकरण।

१२. व्युत्थान—क. उत्थान, ख खड़े होना, ग. विरोध में उमड़ पड़ना, घ. समुद्र का ज्वार।

१३. निवृत्ति—क. निवृत्ति, ख. निष्पत्ति, ग. मृत्यु, घ. आनंद।

प्रत्येक व्यक्ति का निर्माण अच्छाई और बुराई के मिश्रण से होता है, इसलिए उसके व्यक्तित्व को बनाने में दोनों का हाथ होता है।
—मैकलारेन

मित्रता ऐसी चीज है जिसकी उपयोगिता के संबंध में दो मत नहीं हो सकते।
—एलकाट

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. **उद्भावना**—ख. कल्पना, विरचना, उत्प्रेक्षा, आरोप। मेरे सरल कथन में उन्होंने व्यंग्य की **उद्भावना** कर ली।

२. **लेश**—कण, अल्पांश, चिह्न, सूक्ष्मता। उसमें दया का **लेश** नहीं है।

३. **बहिरंग**—घ. बाहरी, बाहरी अंग या स्वरूप। कागज, छपाई, जिल्द आदि—यह तो पुस्तक का **बहिरंग** है उसका अंतरंग भी तो परखो।

४. **गुर**—क. युक्ति, तरकीब, कुंजी, गुरुमंत्र। तुम्हारी सफलता का **गुर** क्या है ?

५. **व्युत्पत्ति**—क. शब्द की मूल उत्पत्ति, मूल उद्गम, विज्ञान आदि का अच्छा ज्ञान, पांडित्य इस कोश में शब्दों की **व्युत्पत्ति** नहीं है। व्युत्पत्ति से जड़ मनुष्य को आनंद नहीं मिलता।

६. **निदर्शन**—ग. दिखाना-बताना; उदाहरण। वाग्मिता का **निदर्शन** हो चुका, अब कुछ कार्य कीजिए।

७. **अनुकंपा**—घ. अनुग्रह, दया, सहानुभूति। उनकी **अनुकंपा** से मैं संकट-मुक्त हुआ।

८. **ऊहापोह**— ख. सोच - विचार, पसोपेश, तर्क - वितर्क। तुरंत निर्णय करो, अब **ऊहापोह** का समय नहीं रहा।

९. **मूर्धन्य**—क. शिरोमणि, मुख्य, श्रेष्ठ। वह देशभक्तों में **मूर्धन्य** था।

१०. **अविच्छिन्न**—ग. अखंड, अविरल, अटूट, लगातार। **अविच्छिन्न** गति, वाग्धारा, इतिहास-सूत्र।

११. **प्रतिश्रुत**—क. वचनबद्ध, प्रतिज्ञात, जिसने बात सुनकर, मानकर, उसके अनुसार कार्य करने की प्रतिज्ञा कर ली हो। मैं **प्रतिश्रुत** हुआ। प्रति, श्रुत, श्रुति।

१२. **व्युत्थान**—ग. विरोध में उमड़ पड़ना, विरोध, अवरोध, मनमाना कार्य, भारी प्रवृत्ति। प्रजा का **व्युत्थान** राजा रोक न सका।

१३. **निवृत्ति**—ख. निष्पत्ति, सिद्धि, कार्य निष्पन्न हो जाने पर उस वृत्ति से मुक्त, जिसमें लगा हुआ था। कार्य की **निवृत्ति** से निवृत्ति पायी।

जनवरी अंक में 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत आपने उर्दू-लेखक-सम्मेलन के असली इरादे की अच्छी तरह पोल खोली है। यह बात आज तक समझ में नहीं आयी कि उत्तर प्रदेश में चुनावों से पूर्व ही यह उर्दू-लेखक-सम्मेलन क्यों आयोजित किया जाता है! अल्पमत का भाषा और धर्म के नाम पर शोषण करना कहां तक उचित है? इससे प्रजातंत्र की जड़ें मजबूत कैसे होंगी? राजनेता तो ऐसे सम्मेलनों में केवल इसलिए आते हैं कि उन्हें अपने प्रचार के लिए एक बना-बनाया प्लेटफार्म मिल जाता है। उनके लिए अदब और भाषा बिलकुल ऐसे ही हैं जैसे दाल और चावल। अल्लाह बचाये ऐसे राजनेताओं से !

—इरशाद अहमद, बरेली

गैरमुस्लिम लेखकों का उर्दू-सम्मेलन ! आखिर ये लोग किसे मूर्ख बनाना चाहते हैं? खाएंगे हिंदी की थाली से और शोर मचाएंगे उर्दू के पक्ष में! आपने अपने स्तंभ में बिलकुल सही बात उठायी है कि मौके-बेमौके हिंदी और उर्दू के नाम से एक भाषा को दो भाषाएं बताने का यह प्रयत्न न तो भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से ठीक है और न ही व्यावहारिक दृष्टि से सही है। उर्दू-सम्मेलन हमेशा राजनीति से चालित होता है, इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि हर सम्मेलन के बाद आयोजक फिर कोई प्रश्न नहीं उठाते। उद्देश्य केवल यह होता है कि चुनावों के नाजुक समय से पहले ही सरकार और राजनीतिज्ञों से कुछ निश्चित आश्वासन प्राप्त कर लिये जाएं ताकि उर्दू के नाम पर उनकी ठेकेदारी बनी रहे। पाकिस्तान के निर्माण का कारण भाषा का वैमनस्य ही तो था। इसके बावजूद पाकिस्तान एक न रह सका और उसके टुकड़े हो गये।

—रोहित जयरथ, नयी दिल्ली

गैरमुस्लिम लेखकों का लखनऊ में जो सम्मेलन हुआ था उसके लिए पैसा कहां से आया? पैसा दिया बंबई की फिल्म इंडस्ट्री में काम करनेवाले मुस्लिम लोगों ने। यही एक तथ्य इस बात को

स्पष्ट कर देता है कि आयोजकों का इरादा अदब की खिदमत नहीं, अपने जाती मामलों की अलमबरदारी ही था।

—राजकमल, मुरादाबाद

उर्दू में लिखनेवाले फिराक गोरखपुरी को हिंदी की संस्था भारतीय ज्ञानपीठ एक लाख का पुरस्कार दे और उनके काव्य को हिंदी में छापकर अधिकाधिक पाठकों तक पहुंचाये, तो इससे क्या यह सिद्ध होता है कि हिंदीवाले उर्दू का गला घोंट

रहे हैं ? जनाब कृश्नचन्दर की लोकप्रियता और समृद्धि क्या केवल उर्दू में लिखने के कारण है ? आपके संपादकीय ने उर्दू-सम्मेलन की वास्तविक राजनीति को स्पष्ट परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है।

--बलवंत पुरी, राउरकेला

जनवरी अंक में विदेशी कहानी और मोगाजी की कहानी बहुत अच्छे स्तर की लगी। 'काल चिंतन' में जो भी लिखा गया है, वह निश्चय ही सराहनीय है।

--कृष्णकुमार रत्तू, संपादक 'मीनार', मैहतपुर, जालंधर

'समय के हस्ताक्षर' ('उर्दू लेखक सम्मेलन : एक विद्रोह' जनवरी अंक) में आपने अवसरवादी राजनीतिक भूमिका अदा करनेवाले कुछ दिग्भ्रमित लेखकों और कतिपय स्वार्थी नेताओं को ठीक ही नहीं बख्शा है। वे लोग राष्ट्र भाषा हिंदी के कारण पूरी तरह अपना उल्लू सिद्ध नहीं कर सके हैं और शौरसेनी प्राकृत से निकली उसी हिंदी की शैली उर्दू को एक नयी भाषा का जामा पहनाना चाहते हैं। नेताओं और साहित्यकारों को चेतावनी देकर आपने बड़े साहस का कार्य किया है।

'काल-चिंतन' में आपने कहा है कि '...शहीद से बेहतर वह व्यक्ति है जो एक विचार की खातिर निंदा सहते हुए जीता है।' प्रश्न खड़ा होता है कि शहीद होनेवाला आदमी भी क्या 'एक विचार' (चाहे वह जाति-प्रेम का हो या देश-प्रेम का) के लिए अपने आपको बलिवेदी पर नहीं चढ़ा देता ? यह जरूरी नहीं है कि हर हुतात्मा को शहीद होने की प्रेरणा दूसरे से मिली हो और उसके गले उतर गयी हो। तात्पर्य यह है कि शहीद होने का मार्ग सौ फी सदी दूसरों का बताया सत्य-पथ नहीं हो सकता। कुछ उसके लिए मानव को उसकी सहजात-वृत्ति भी उकसाती है।

'दूसरा मोर्चा' ने वाकई संगीन मोर्चाबंदी शुरू कर दी है।

--श्याम वशिष्ठ, सुजानगढ़ (चूरू)

जनवरी अंक में 'चालाक' और 'दोस्त और दोस्त' रचनाएं बहुत पसंद आयीं। 'आपकी भाग्य रेखाएं' नये स्तंभ का स्वागत है।

--रामलाल सोलंकी, शिवगंज, सिरोही

दिसंबर अंक में 'लिपटे रहत भुजंग' लेख में छपा दोहा 'संत न छाड़ै, कोटिक मिलै असंत' त्रुटिपूर्ण है। हमारी पाठ्य-पुस्तक के अनुसार शुद्ध पाठ यों है—'संत न छाड़ै संतई, कोटिक मिले असंत'।

—चारू रायजादा
गांधी शिशु मंदिर नर्सरी स्कूल, ज्ञानपुर, वाराणसी

देश की अकादमियों में साहित्य अकादमी, दिल्ली की भूमिका का पर्दाफाश करके 'कादम्बिनी' ने एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। हिंदी के विकास के लिए

दिल्ली में हिंदी समिति है जो केंद्रीय हिंदी निदेशालय के अहिंदी भाषा-भाषियों में लेखकादि पैदा करने के लिए आयेदिन शिविर आयोजित करती है।

हिंदी समिति की ओर से एक भाषण-माला का आयोजन दक्षिण भारत हिंदी प्रचार-सभा में दो साल पहले किया गया था जिसमें भारतीय भाषाओं के आधुनिक साहित्य के विकास पर कई निबंध पढ़े गये थे। एक निबंध साठोत्तरी हिंदी कविता पर साहित्य अकादमी के एक अधिकारी बनाम सदस्य ने पढ़ा था जिन्हें साठोत्तरी हिंदी कविता में यौन के सिवा कुछ भी नहीं मिला था। इस सदस्य ने खुलेआम घोषणा की कि हिंदी में आजकल ऐसी ही कविताएं लिखी जा रही हैं। यह सुनकर पंडाल में बैठे गैर हिंदी भाषाभाषी समझदार लोग भी सुलग उठे थे।

मध्यप्रदेश सरकार का भी एक पाठ्यपुस्तक निगम है। पिछले वर्ष निगम द्वारा प्रकाशित कुछ पाठ्यपुस्तकों को भी पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इनमें मुद्रण-संबंधी गलतियां तो थी हीं, तथ्यात्मक गलतियां भी थीं। एक सहायक वाचन पुस्तक में लेख है 'बाबी फिशर'। इसमें एक वाक्य है—'म्युनिख ओलंपिक के अंतर्गत शतरंज की प्रतियोगिता...'। अधिकारियों को इतना भी ज्ञान नहीं कि ओलंपिक में शतरंज की प्रतियोगिताएं नहीं होतीं!

—लक्ष्मीकांत सरस, मद्रास

क्यों और क्यों नहीं?

अठारहवें लेखक

शैलेश मटियानी

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, डॉ. बच्चन, यशपाल, डॉ. भारती, जैनेन्द्रकुमार, दिनकर, रेणु, महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी एवं डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के संबंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं। अब अठारहवें लेखक हैं: शैलेश मटियानी

इस लेखमाला का उद्देश्य लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं?' स्तंभ के लिए। सम्पादक के पास प्रश्न पहुंचने की अंतिम तिथि है १५ फरवरी, १९७४।

प्रमुख कृतियां: चिट्ठीरसैन, बोरीवली से बोरीबंदर तक, हौलदार, मुख सरोवर के हंस, एक मूठ सरसों, दो दुखों का सुख, भागे हुए लोग, अतीत तथा अन्य कहानियां, सफर पर जाने से पहले, तीसरा सुख, सुहागिन।

कादम्बिनी

वर्ष १४ : अंक ४

फरवरी, १९७४

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कविताएं

सार-संक्षेप

कथा-साहित्य

स्थायी स्तंभ

 मुखपृष्ठ : रवीन्द्र एस. कम्बोज तथा जसवंत राय 'राज'

समय के हस्ताक्षर

'कादम्बिनी' के पाठकों के अनुरोध पर हमने लेखकों के पते लेख के अंत में फिर से प्रकाशित करने शुरू किये हैं। इसके पहले हमारा अनुभव रहा है कि इन पतों का कुछ व्यक्ति दुरुपयोग करते हैं। हमारे कुछ लेखकों ने ऐसी घटनाओं की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

ये घटनाएं दिलचस्प हैं, लेकिन युवा और उभरते हुए लेखकों को भ्रम में डाल सकती हैं। इनसे एक और बात की जानकारी मिलती है कि इस देश में कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो संस्थाएं बनाकर धन एकत्रित करते हैं और उभरते हुए नये लेखकों को अपना 'शिकार' बनाते हैं।

हम नीचे तीन-चार घटनाओं का उल्लेख करना आवश्यक समझते हैं।

(१) ग्वालियर के श्री रामकुमार श्रीवास्तव नाम के एक व्यक्ति ने 'भारतीय लेखिकाएं' नामसे एक सचित्र परिचयात्मक ग्रंथ प्रकाशित करने की योजना बनायी है। इसके लिए उन्होंने साइक्लोसटाइल किये हुए परि-

नये लेखक : सावधान!

पत्र लेखिकाओं के पास भेजे हैं। उसमें लिखा है 'आज हमारे देश में महिलाएं भी पीछे नहीं हैं। आज भी अनेक महिलाएं, छात्राएं, शिक्षिकाएं साहित्य-साधना में संलग्न हैं और अच्छे से अच्छा लिख रही हैं, परन्तु समाज को उनका परिचय बहुत कम प्राप्त हुआ है, अतः हमने 'भारतीय लेखिकाएं' एक सचित्र परिचयात्मक ग्रंथ प्रकाशित करने का निश्चय किया है . . . अतः आप अविलम्ब अपना विस्तृत परिचय चित्र सहित तथा १०) सहयोग राशि, पांच रुपये ब्लाक खर्च, कुल पंद्रह रुपये शीघ्र प्रेषित करें।'

(२) आर्य सेवा संघ, अहमदशाहपुर पदड़ा, पोस्ट अग्रवाल मंडी, जिला मेरठ ने कई पाठकों को 'साहित्य शास्त्री' की उपाधि से सम्मानित करने का निर्णय लिया है। पत्र में लिखा है : 'चूंकि विद्यापीठ के भवन का निर्माण कार्य चल रहा है इस कारण इस वर्ष विद्यापीठ का वार्षिक उत्सव नहीं हो रहा है, जिसमें आपको बुलाकर सम्मान उपाधि प्रदान की जाती। अतः पत्र पाते ही संघ के नवीन पते पर विद्यापीठ के भवन निर्माण सहायतार्थ दान स्वरूप मंत्री जी के नाम ११) मनीआर्डर द्वारा भेजकर अपना सम्मान

उपाधि पत्र मंगा लें।' इस संस्था के व्यवस्थापक के रूप में श्रीमती अंगारा कुमार और जिन्हें दान राशि भेजना है उन मंत्री का नाम डॉ. ओमपाल शास्त्री 'आर्य सचेत' लिखा गया है। इस संस्था के लेटरहेड पर ट्रस्टी मंडल, अध्यक्ष आदि अनेक व्यक्तियों के नाम छपे हैं।

अर्थ यह हुआ कि आप ११) दे दें और 'साहित्य शास्त्री' की उपाधि खरीद लें।

(३) जम्मू-तवी से सम्पादक-प्रकाशक : बलदेव ने एक स्तरीय मासिक पत्रिका (नाम नहीं लिखा) निकालने की योजना बनायी है और पत्र लिखे हैं : 'आशा है, रचनाओं के साथ आपका आर्थिक सहयोग (शुल्क) भी प्राप्त होगा।'

स्पष्ट है कि आप इस पत्रिका को अपनी रचना भेजें और उसे प्रकाशित करने का खर्च भी।

इसी तरह के और भी पत्र 'कादम्बिनी' के पाठकों को भेजे गये हैं। हम आगे उनके संबंध में भी यहां लिखेंगे।

ये सारी संस्थाएं और व्यक्ति नये लेखकों को धोखा देते हैं। ऐसे पत्र केवल नये लेखकों को लिखे जाते हैं। हम उन लेखकों को सतर्क कर देना चाहते हैं कि वे ऐसे भ्रमजाल के शिकार न बनें और इन व्यक्तियों तथा संस्थाओं को बढ़ावा न दें। अच्छा होगा, कुछ संपन्न व्यक्ति ऐसे मामले सरकार और 'न्याय' की दृष्टि में लायें, ताकि ऐसे लोगों को बढ़ावा न मिले।

एक प्रसंग और. . .

आप कवि हैं और आपको कविताएं सुनाने का ही शौक है तो दिल्ली की संस्था 'साहित्य प्रतिष्ठान' करौलबाग, नयी दिल्ली जाकर अपना शौक पूरा कीजिए। जाने के लिए निर्देश हैं कि बस ६०, ५३ ए, ६ डबल डेकर २, ३ बी सुविधा से मिल जाती हैं।

'कादम्बिनी' संपादकीय विभाग के सहयोगी

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक, प्रूफ-रीडर : स्वामी शरण। साजसज्जा और चित्रकार : सुकुमार चटर्जी।

—निस्तब्ध, शांत और एकांत घना जंगल!

—अकेले जाते हुए मुझे एहसास हुआ, जैसे कोई मेरा पीछा कर रहा है। मैंने अपने साथ-साथ चलते हुए दो पैरों की आवाजें सुनीं।

—मैंने लौटकर देखा, मेरे पीछे कोई नहीं था। मैं ठहर गया और फिर चलने लगा। मैंने फिर पीछा करते हुए फिर किसी के पैरों की आवाजें सुनीं।

—मन भयभीत हो उठा। मेरा पीछा कौन कर रहा है? अदृश्य, अलक्षित ये पैर किसके हैं? कोई भूत या वन की प्रेत शक्ति तो नहीं है?

—मैं भूत-प्रेतों पर विश्वास नहीं करता। तो . . . क्या मैं स्वयं अपना पीछा कर रहा हूं?

●●

—हां,हम सब स्वयं अपना पीछा करते हैं।

—हम अपने शत्रु आप हैं।

—हम स्वयं अपने को गुप्त नहीं रख सकते और प्रकट कर संकटों को आमंत्रित करते हैं।

—ऐसा न होता तो एकांत में किया हुआ खून अथवा अपनी निजी बातें प्रकट होकर अपनी ही दुश्मन न बनतीं।

—जब हम कहते हैं कि कलम काली है तो हमारे भीतर काले की सम्वेदना अवश्य रहती है।

—अकेले चलते हुए भी हमारे भीतर बैठा मस्तिष्क हमें अकेले नहीं रहने देता।

—मस्तिष्क के साथ मनुष्य के मन का अविभाज्य संबंध है। मस्तिष्क के नष्ट होने पर चेतन प्रक्रियाओं का भी लोप हो जाता है।

—लेकिन मस्तिष्क के जागृत रहने पर हम अपना पीछा भी तो आप करने लगते हैं।

●●

—चिंतक डुरखाइम का कहना है कि आदमी का मस्तिष्क व्यापारी है।

—सभ्यता की वे वस्तुएं जिन्हें वह मूल्यवान समझता है, सब उसी की उपज हैं। मैं कहता हूं, हम सब एक महाजनी

सभ्यता की उपज हैं और हर क्षण या तो हम व्यापार करते रहते हैं अथवा कोई हमसे व्यापार करता है।

—लेन-देन की होड़ हमारा पीछा नहीं छोड़ती हम एक चक्र में चलते रहते हैं।

—चलती हुई नाव से किनारे के वृक्ष भी चलते हुए नजर आते हैं।

—आदमी का चंचल-चित्त स्वप्नों को रचता है और फिर उसी से भय खाता है।

●●

—मेरे सामने एक अहम सवाल अकसर आ खड़ा होता है——मैं खाता, पीता, रहता, सोता हूं। लड़ता हूं, शांत हो जाता हूं। देखता हूं, फिर भूल जाता हूं। एक नियम में बंधा हूं, लेकिन उसे तोड़ता भी हूं।

—क्या यही सब मैं हूं?

●●

—वास्तव में हर आदमी के पीछे एक आदमी और होता है। अकेला पाकर वह आदमी बातें करने लगता है।

—एकांत की कल्पना करते हुए ही वह उसे आकर दबोच लेता है।

—फिर सामने बैठ जाता है। जो अपने से भिन्न नहीं, वही तो सत्य है। वह घेरे में फंसाकर उत्तर चाहता है।

—हम अहम से पीड़ित होते हैं। उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाते या नहीं देना चाहते।

—हम चाहते हैं, वह हमें खाली छोड़ दे। वह हमसे भाग जाए, परंतु वह नहीं भागता।

——यह दूसरा आदमी ही हमारा व्यक्तित्व है। यही हमें संस्कार देता है।

——वही हमारी संस्कृति है।

——इकबाल ने एक बार कहा था:

खुदी को कर बुलंद इतना
कि हर तहरीर के पहले
खुदा बंदे से खुद पूछे—
बता तेरी रजा क्या है?

——क्या कोई अपने को इतना बुलंद कर सकता है?

——इस तरह अपने दूसरे आदमी को झुठलाने का सामर्थ्य किसी में है?

——आजतक कोई वह सामर्थ्य पैदा नहीं कर सका, इसलिए सब कुछ होते हुए भी, सबके साथ होते हुए भी आदमी अकेला है।

——वही अकेलापन उसका पीछा करता है।

——वही पैरों की दौड़ में होड़ लगाता है और भयभीत करता है।

——जिस दिन हम उसे पहचान लेंगे, वह अकेले जंगल में हमारा पीछा नहीं करेगा।

——वह हमारे साथ हमारी बराबरी से चलता हुआ नजर आएगा और बीच की खाई को उभरने नहीं देगा।

——लेकिन सत्य को हम कितना पहचानते हैं! अंधकार सूर्य में नहीं है, अंधकार ज्ञान में नहीं है; यह जानते हुए भी न हम सूर्य को देख सकते और न मस्तिष्क को पहचान पाते।

——इसलिए हम सब अ-वश, विवश दो चेहरों की जिंदगी जीते हैं; क्योंकि हम सब एक महाजनी सभ्यता की उपज हैं।

आगामी आकर्षण

वसंत अंक

वसंत एवं होली के अवसर पर ललित लेखों और हास्य-व्यंग्य की रोचक सामग्री से संपूर्ण 'कादम्बिनी' का एक और संग्रहणीय विशेषांक

विशिष्ट आकर्षण

- वह उजली फागुनी रात
- तंत्रों में बंधी जिंदगी
- पग-पग पर श्रीरास
- इजरायल का सामूहिक जीवन
  विना समाजवाद की घोषणा किये समाजवाद
- विदूषक के आंसू : सार-संक्षेप के अंतर्गत विश्व-प्रसिद्ध हास्य अभिनेता चार्ल्स चैप्लिन की मर्मस्पर्शी आत्मकथा।
- आपकी भाग्य-रेखाएं : जो अतीत, वर्तमान और भविष्य बताएं
- जानवर—जिन्होंने हथियारों का आविष्कार किया

अन्य रोचक रचनाएं

● मजबूरी के शायर ● मंत्रीजी की पब्लिसिटी ● मैं मकान मालिक बना ● महान शोक के उपलक्ष्य में ● होली का हुड़दंग ● झूठ बोलना भी एक कला है ● विश्व का महान मसखरा

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित कराइए

• रामलखनसिंह

कागज का अकाल
एक वैज्ञानिक विश्लेषण

आजकल जीवनोपयोगी आम वस्तुओं के अभाव के साथ-साथ एक और वस्तु के अभाव की ध्वनि वातावरण में गूंजने लगी है। वह वस्तु है—कागज, विशेष रूप से अखबारी कागज !

अनेक वर्षों से हमें, अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु अखबारी कागज का कच्चा माल विदेशों से मंगाना पड़ रहा है। शिक्षा एवं जीवन-स्तर की वृद्धि के साथ अखबार पढ़नेवालों की संख्या जैसे-जैसे बढ़ती गयी, ठीक उसी अनुपात में अखबारी कागज के आयात की मात्रा भी बढ़ती रही। स्मरण रहे, देश को अखबारी कागज के कच्चे माल का मूल्य सदैव ही नकद विदेशी मुद्रा के रूप में चुकाना पड़ा है, वह भी खुले अंतर्राष्ट्रीय भाव पर; किंतु आज नकद विदेशी मुद्रा के बदले भी अखबारी कागज उपलब्ध नहीं है। अखबारी कागज के अकाल के कारण अनेक छोटे पत्र बंद हो गये हैं और बड़े पत्रों ने अपनी पृष्ठ संख्या घटा दी है।

कुछ अहम् प्रश्न

एक सहज प्रश्न उठता है कि हम अपने साधनों से ही अपनी आवश्यकता की पूर्ति क्यों नहीं कर पा रहे हैं ?

कागज, लकड़ी की लुगदी से बनता है। दूसरे शब्दों में कागज-उद्योग-हेतु कच्चा माल वनों से उपलब्ध होता है, पर जिस देश के सात सौ पचास लाख हेक्टेयर भू-भाग पर हरे-भरे वन हों, वही देश कागज-उद्योग हेतु कच्चे माल की आवश्यक मात्रा सुलभ क्यों नहीं कर पा रहा है ? इस मामले में भी वह दूसरे राष्ट्रों की कृपा पर क्यों निर्भर है ?

हमारे वन अखबारी कागज के लिए आवश्यक कच्चा माल क्यों नहीं उपलब्ध कर पा रहे हैं ?

कागज बनाने हेतु लकड़ी को पीसकर लुगदी बनायी जाती है। उस लुगदी में उपलब्ध रेशों को अलग करने हेतु रासायनिक एवं यांत्रिक विधियों का प्रयोग किया जाता है। अंततः इन्हीं रेशों से कागज, रेयान आदि बनाया जाता है, अर्थात जिन छोटे-छोटे सेलूलोज के रेशों को जोड़कर प्रकृति पेड़रूपी महल खड़ा करती है, उन्हीं रेशों को प्राप्त करना समस्या है।

कुछ पेड़ों से प्राप्त हुए रेशे आकार में छोटे होते हैं और कुछ लंबे। अखबारी कागज के लिए लंबे रेशेवाले वृक्ष ही उपयोगी होते हैं।

स्पष्ट हुआ है, भारतीय वनों में उगनेवाली कुछ प्रजातियों के वृक्ष अखबारी कागज-हेतु सर्वोत्तम कच्चा माल उपलब्ध कर सकते हैं। ये प्रजातियां हैं, फर एवं स्प्रूस नामक वृक्ष (स्थानीय नाम रई, मोरिंडा, तोष आदि)।

फर एवं स्प्रूस के वन हिमालय की चोटी पर (समुद्रतल से आठ हजार फुट की ऊंचाई से लेकर दस, ग्यारह हजार फुट की ऊंचाई तक) उगते हैं।

इतनी ऊंचाई पर उगनेवाले जंगलों से पेड़ काटकर नीचे मैदानों में स्थित कागज-मिलों तक पहुंचाना सरल कार्य नहीं है। उद्योग चलाने के लिए कच्चा माल उपलब्ध होना ही एकमात्र शर्त नहीं होती, उसका निश्चित मूल्य पर उपलब्ध होना भी एक अनिवार्य नियामक तत्त्व होता है। आठ हजार फुट से एक इंच भी नीचे नहीं उतरने की कसम लेकर उगने वाले हिमालय के इन हठीले बेटों के उपयोग में यही शर्त आड़े आती है।

कागज-उद्योग में मिल का आकार भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। किसी भी कारखाने की आर्थिक सफलता के लिए एक न्यूनतम मात्रा में प्रतिदिन उत्पादन होना अनिवार्य है। कागज-मिल के लिए यह न्यूनतम उत्पादन-सीमा दो सौ टन प्रतिदिन आंकी गयी है। वैसे तो अमरीका जैसे व्यापारिक स्तर पर उत्पादन करनेवाले देशों में दो हजार टन दैनिक उत्पादन क्षमतावाले कागजी कारखानों की स्थापना हो रही है। इस दिशा में सबसे बड़ी समस्या मिल-स्थल पर प्रतिदिन कम-से-कम पांच सौ टन कच्चा माल उपलब्ध करने की है। (औसतन ढाई टन लकड़ी के कच्चे माल से एक टन कागज प्राप्त होता है)। यह समस्या भारत–जैसे देशों के कागज उद्योग की जटिलतम समस्या है। यहां पर अधिकांश वन प्राकृतिक दशा में पड़े हैं और उन्हें किसी उद्योग विशेष को कच्चा माल उपलब्ध करने की दृष्टि से अभी तक मानव-निर्मित वनों के रूप में नियोजित नहीं किया जा सका है। प्राकृतिक रूप से उगनेवाले इन वनों में मिश्रित प्रजातियों वाले वृक्ष उग रहे हैं, जो एक साथ अनेक उद्योगों के लिए थोड़ी-थोड़ी मात्रा में कच्चा माल उपलब्ध कर सकते हैं। इसी कारण कागज– जैसे बड़े उद्योग हेतु कच्चा माल उपलब्ध करना संभव नहीं हो पाता। स्वीडन में मैंने देखा कि मिल तक कच्चे माल को पहुंचाने की लागत को घटाने के लिए विशालकाय समुद्री जहाजों पर तैरती हुई कागज-मिलें स्थापित की गयी हैं।

विदेश-वंशीवृक्ष! इन मेहमानों के लिए जंगल साफ किये जा रहे हैं। वह दिन दूर नहीं है जब हर तरह का कागज-संकट इतिहास की बात हो जाएगा

हमारे देश में अधिकांश वन पहाड़ी ढलान पर स्थित हैं इसलिए यह विधि तो लागू नहीं हो सकती किंतु एक अन्य तकनीक की योजना है।

इस तकनीक की सहायता से जंगलों के मध्य लकड़ी से लुगदी बनानेवाले छोटे आकार के 'ट्रांसपोर्टेबुल' कारखाने स्थापित कर, तैयार कच्चे माल (लुगदी) को नीचे सड़कों तक पहुंचाने के लिए पर्वत की ढलान पर लोहे के मोटे-मोटे पाइप विछाकर; कटान, ढुलान और अनावश्यक विलंब को घटाना संभव समझा गया। कुछ देशों में हवाई क्रेनों के सहारे कच्चे माल को कारखानों तक पहुंचाया जाता है। भारत में हिमाचल प्रदेश के वन-विभाग ने यही तरीका अपनाया है।

लकड़ी के लट्ठों को कंधों पर ढोने के अभ्यस्त पर्वतीय लोगों ने जब हवा में झूलते तार के रस्सों से सन-सन करती उतरती हवाईगाड़ियों को देखा तो दांतों-तले अंगुली दबा ली। उस समय यह सोचा गया था कि अब हिमालय की गोद में पल रहे फर-स्प्रूस के जंगलों के व्यापक उपयोग से अखबारी कागज के क्षेत्र में देश आत्म-निर्भर हो जाएगा, किंतु इस प्रयोग से भी कोई फायदा नहीं हुआ। यह सोचा गया था कि वृक्षों की कटाई के बाद उनके स्थान पर नये पौधे अपनेआप उग आएंगे पर हुआ इसके विपरीत। कटे हुए पौधों के स्थान पर जंगली घास और झाड़ियां ही उत्पन्न हुईं। इसके दूरगामी परिणामों की कल्पना से वन-विशेषज्ञों में सनसनी

मनाली के सर्किट हाउस के लान में फर-स्प्रूस के पौध घर में चल रहे प्रयोग

फैल गयी। तत्काल बड़े पैमाने पर चल रहे कटान को रोककर, जांच प्रारंभ की गयी कि अपने बाप-दादों के घर में ही फर-स्प्रूस की नयी पीढ़ी क्यों नहीं पनप पा रही है? शोध से पता चला कि प्रारंभ के कुछ वर्षों में फर-स्प्रूस के पौधे, इस ऊंचाई पर पड़नेवाली बर्फ और सीधी चमकनेवाली तेज धूप को सह पाने में असमर्थ होते हैं और उनकी रक्षा के लिए किसी बड़े-बूढ़े पेड़ की छाया अनिवार्य होती है।

इस द्विधा में, सुगम रास्ते का चुनाव करने के गोरखधंधे में उलझे वन-वैज्ञानिकों ने एक नये रास्ते पर चलने का विचार किया। एकतरफा कटान करके मशीनीकरण को उपयोगी बनाने के साथ ही खाली वन-भूमि पर नर्सरी में उगाये गये पौधों को रोपित करने का निश्चय किया गया।

तत्काल फर-स्प्रूस के मानव-निर्मित वन तैयार करने की योजना बनाकर कार्य प्रारंभ किया गया। इसमें भी एक उलझन सामने आयी। देखा गया कि प्रारंभिक दिनों में ये पौधे अत्यंत धीमी गति से बढ़ते हैं और पूरे तीन-चार वर्ष तक नर्सरी में रहकर ही जंगल में रोपण-हेतु तैयार हो पाते हैं। इस धीमी वृद्धि-दर को बढ़ाने के लिए अनेक प्रयोग किये गये। अनेक प्रयोगों के बाद अंततः वन-अधिकारियों ने बड़े पैमाने पर पौधे उगाने की सस्ती एवं व्यावहारिक तकनीक खोज ही निकाली, किंतु तभी फर-स्प्रूस की लकड़ी का एक स्थानीय उपयोग प्रकाश में आ गया। पर्वतीय क्षेत्र के हजारों एकड़ में लगाये गये सेब के बगीचों की उपज को नीचे मैदानी मंडियों तक पहुंचाने-हेतु बड़े पैमाने पर हलकी, गंधहीन एवं सस्ती लकड़ी की पेटियों की मांग पूरी करने का दायित्व भी वन-अधिकारियों पर ही आया। इसके लिए भी फर-स्प्रूस की लकड़ी ही उपयोगी पायी गयी। फलतः स्थानीय मांग को उपेक्षित कर, दूर मैदानों में स्थित कागज की मिलों-हेतु कच्चा माल भेजना तर्कसंगत लगा।

'भारतीय वन-अनुसंधान-केंद्र' (देहरादून) में पहले उन देशों की सूची बनायी गयी जहां की जलवायु का भारत के संबंधित वन-क्षेत्रों से साम्य है (होमो क्लाइम्स)। फिर उस जलवायु में उग रहे औद्योगिक दृष्टि से उपयोगी एवं तीव्र गति से उगने वाले वृक्षों के बीज मंगाकर उन्हें रोपित कर भारतीय वृक्षों की तुलना में उनकी उपयोगिता आंकी गयी। इन प्रयोगों का परिणाम अत्यंत आशाजनक निकला। अनेक ऐसे विदेशी वृक्षों का पता चला जो भारतीय वन-भूमि में, स्थानीय वृक्षों की तुलना में कहीं अधिक उपयोगी एवं कई गुना अधिक वार्षिक वृद्धि-दर से उगने वाले पाये गये। उदाहरणार्थ, भारत के तराई एवं मैदानी जंगलों में उगनेवाले अधिकांश वृक्ष सत्तर-अस्सी वर्ष से पूर्व काटने-योग्य आकार नहीं ग्रहण कर पाते जबकि शोध से ज्ञात हुआ कि ऐसे क्षेत्रों में अत्यंत सुगमता से उग सकनेवाला आस्ट्रेलियायी वृक्ष

'यूकेलिप्टस' सात-आठ वर्ष में ही काटने-योग्य हो जाता है। दूसरी ओर मेक्सिको में उगनेवाले 'पाइन' प्रजातियों के वृक्ष भारतीय वन-क्षेत्रों में अत्यंत सहजता से उग सकनेवाले पाये गये। इन की अत्यंत उपयोगी प्रजातियां हैं, पाइनस-कैरीबीया, पाइनस-टीडा, पाइनस-पैचुला आदि।

आज मेक्सिको के इन वृक्षों को बड़े पैमाने पर भारतीय भूमि में बसाने की योजना चल रही है। जापान-निवासीवृक्ष ('क्रिप्टोमैरिया जपैनिका') के वन, पश्चिमी बंगाल में दार्जिलिंग की पहाड़ियों पर लहलहा उठे हैं; उत्तर प्रदेश के तराई के दलदली क्षेत्रों में यूकेलिप्टस के जंगल तो किसी भी कागज-मिल को कच्चा माल देने को तैयार खड़े हैं। कर्नाटक एवं तमिलनाडु के वन-वृक्षों में उगाये गये 'यूकेलिप्टस' एवं 'अकेसिया' प्रजाति के वृक्ष (आस्ट्रेलियायी) तो कभी से रेयान, कागज एवं चमड़े के उद्योग को कच्चा माल उपलब्ध कर रहे हैं। कागज के लिए कच्चे माल की उपलब्धि के लिए हमारी विदेशों पर निर्भरता मेक्सिको के 'पाइन' प्रजाति के वृक्ष समाप्त कर सकेंगे। वैसे तो कागज की खपत समृद्धि के साथ बढ़ती जाती है क्योंकि कागज की प्रति व्यक्ति औसत खपत किसी भी राष्ट्र की प्रगति की सूचक होती है। वह दिन शीघ्र ही आएगा जब अखबारी कागज की हमारी आवश्यकता हमारे वनों में उगाये ये विदेशी पौधे पूरी करेंगे।

भारतीय वन-अनुसंधान केन्द्र, देहरादून

—भारतीय वन-सेवा-अधिकारी,
(कोट बंगला) उत्तर काशी (उ.प्र.)

मैं वहां जा रहा हूं जहां कोई मेरा सम्मान न करे, ताकि कुछ आजादी पा सकूं।
—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

कागज का आविष्कार सबसे पहले चीन में हुआ

• त्सुएन-हसुइन-त्सीन
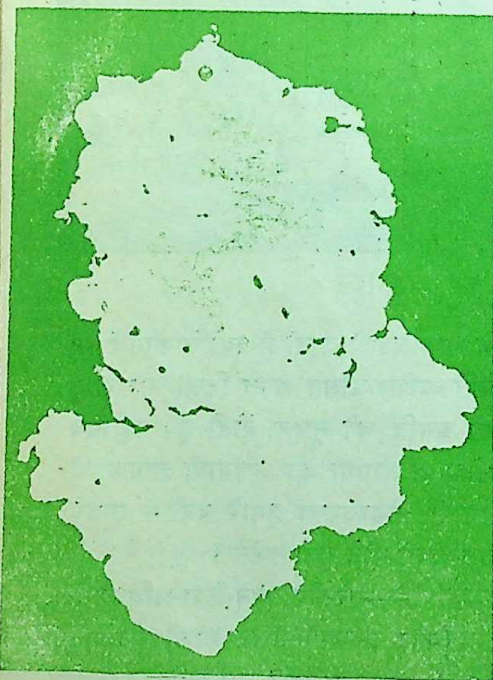
कागज का पहला-पहला नमूना

कागज और मुद्रण चीन के चार बड़े आविष्कारों में से हैं। शेष दो आविष्कार हैं गनपाउडर और कुतुबनुमा।

कागज रेशे से बना हुआ नमदे की एक चादर है जिसे जलनिलंबन द्वारा एक बारीक परदे पर जमाया जाता है। जब पानी निकल जाता है तब रेशों की एक चटाई सूखने के लिए शेष रह जाती है। कागज-निर्माण के विचार की शुरूआत के दो हजार वर्षों की अवधि में उसकी कला में परिवर्तन हुए हैं और औजार पेचीदे हो गये हैं, लेकिन उसके बावजूद मूल सिद्धांत और प्रक्रिया वही है। चीन में कागज के आविष्कार की शुरूआत ईसा से कई शताब्दी पहले चीथड़े को पानी में डालकर जोर से झकझोरने की प्रक्रिया से हुई।

कागज और कपड़े का निकट का संबंध था। ये दोनों ही न केवल शुरू-शुरू में एक ही तरह के कच्चे माल से बने वरन अपने स्वरूप और आकार में दोनों में समान ढंग की चीजें थीं, यहां तक कि उनका इस्तेमाल भी कभी-कभी एक-दूसरे की जगह पर होता था। कपड़ा रेशों के धागों को हाथ से बुनकर तैयार किया जाता था जबकि कागज रासायनिक तरीके से विघटित रेशों को मिलाकर नमदे की चादर में परिवर्तित करके बनाते थे।

कागज के आविष्कार का श्रेय त्साई-लुन को दिया जाता है जो उत्पादन-विभाग के अधिकारी थे। उन्होंने ईसवी १०५ में दरबार को पेड़ की छाल, सन और चीथड़े

से कागज बनाने के तरीके की सूचना दी।

उत्तरी चीन में प्राचीन कागज के टुकड़ों की जो नयी खोज हुई उसे देखने पर लगता है कि वह ईसा के पहले का है। कहा जाता है कि कागज के ये टुकड़े १९५७ में शेंसी प्रदेश की पाचाइओ नाम की जगह में एक मकबरे में पाये गये और उनका समय ईसापूर्व दूसरी शताब्दी तक का ही है। अगर यह सही है तब चीन के कागज निर्माण के प्रारंभ काल को कम से कम त्साई-लुन से दो शताब्दी और पहले ले जाना पड़ेगा। यद्यपि त्साई-लुन की देन यही है कि उन्होंने कुछ ऐसी चीजों की ईजाद की जिनका उपयोग उसके पहले नहीं हुआ था और यह भी कि वे ही उनके रासायनिक इस्तेमाल की विधि सामने लाये।

चीनी कागज-निर्माण में बड़ी मात्रा में कच्चे माल के रूप में जिन चीजों का प्रयोग होता है, उनमें अंदूरनी छाल, सन, पटुवा, तीसी, चीनी, घास, ताड़, कागजी शहतूत, बांस, चावल और गेहूं के डंठल और कपास-जैसे रेशोंवाले बीज हैं। सन और कपास संभवतः इसके लिए सबसे अच्छे हैं, क्योंकि इनसे शुद्ध और लंबे रेशे सबसे अधिक बन जाते हैं। चूंकि इनकी आवश्यकता मूलतः कपड़ा-उद्योग के लिए होती है अतः कागजी शहतूत और बांस का ही प्रयोग कच्चे माल के रूप में चीनी कागज-निर्माण में परंपरा से होता रहा है।

बांस और काष्ठपत्र पर लिखने की प्रथा पूरी तरह, संभवतः, तीसरी शताब्दी में आकर खत्म हो सकी। इस समय के बाद ही उत्कृष्ट कोटि का कागज, कटे-छंटे आकार में लिखने के लिए बनना शुरू हुआ। उसे ऐसी रासायनिक प्रक्रिया से गुजारा गया ताकि उसमें टिकाऊपन

मुद्रण की एक बहुत पुरानी विधि जब लकड़ी के ब्लाकों से छपाई होती थी
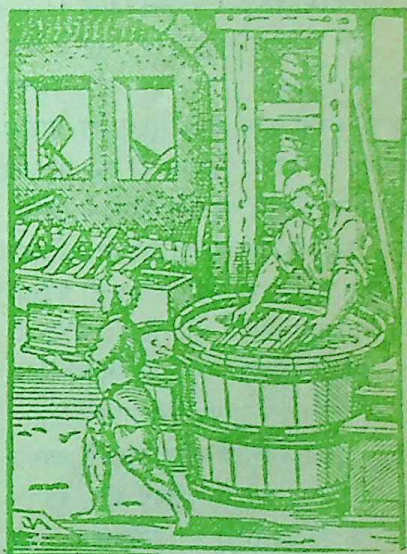
आ सके। कविताएं, टिप्पणियां और पत्र लिखने के कागज को विभिन्न रंगों और डिजाइनों में इस तरह बनाया गया जिससे उसमें बूटाकारी हो सके और उसे सजाया जा सके। कागज को बड़े पैमाने पर दस्तावेजों को तैयार करने, पुस्तक बनाने, चित्रकारी, नक्शाकारी, आमंत्रणपत्र, देवपूजन, चीजों को लपेटने, खिड़कियों को ढांकने, छाते, लालटेन, पतंगे, खिलौने आदि

के लिए हुआ।

फारस ने सबसे पहले १२६४ में कागज का सिक्का चलाया और उसके लिए चीनी नाम 'चाओ' (जिसका अर्थ धन होता है) चुना। कुछ पद्धतियां, जैसे बैंक का कार्य, लेखा और वाउचर से रुपया जमा करने की क्रिया चीनी उदाहरण के परिणामस्वरूप अपनायी गयी।

यह निश्चित नहीं है कि चीन में कब और कहां पहली पुस्तक छपी और उसका पहला मुद्रक कौन था। मुद्रण का प्रारंभ निश्चय ही क्रमिक विकास की एक प्रक्रिया रहा होगा जिसमें बहुत-से लोगों ने, खासकर उन धार्मिक पुजारियों ने, हिस्सा लिया होगा जिनके पवित्र लेखन की प्रतियों की मांग रही होगी। चीन में एक चीज की कई प्रतियां तैयार करने की मुद्रण-विधि के पूर्व की तकनीक का एक लंबा इतिहास रहा। इसमें मृत्तिका और बाद में कागज पर सीलमुहर लगाना, कपड़े और कागज पर एक ही डिजाइन की स्टेंसिल काटकर उसे अलग-अलग बनाना और पत्थरों पर खुदी हुई चीजों की रोशनाई से छाप उतार लेना भी शामिल है। इन सारी प्रक्रियाओं ने ही मुद्रण के लिए काठ के ब्लाकों के प्रयोग की दिशा प्रदान की।

चीन में मुद्रण की शुरूआत का संभावित समय १०० ई. के आसपास का है। १९६५ में कोरिया में चीनी में लिखा एक बौद्ध तावीज मिला था जिसका मुद्रण ७५१ ईसवी के बाद का नहीं हो सकता। उसके पहले भी चीनी में ही लिखा एक तावीज और मिला था जिसका मुद्रण ७७० ईसवी के आसपास जापान में हुआ था। अतः यह मान लेने में कोई संदेह नहीं है कि इस शिल्प की शुरूआत चीन ने की।

नवीं और दसवीं शताब्दी के कुछ नमूने आज भी सुरक्षित हैं। इनमें वे 'पवित्र मणि सूत्र' भी शामिल हैं जो लपेटे हुए कागज की शक्ल में एक पूरी पुस्तक हैं। यह ८६८ ई. में छपा था। ८७७ और ८८२ के कैलेंडर, ८४७ और ९८३ ई. के बीच की बहुत-सी अलग-अलग कागज पर बौद्ध तसवीरें और ९५७ तथा ९७३ ई. में छपे दो बौद्ध देव स्तुति के सूत्र भी इन्हीं में हैं। दसवीं शताब्दी के पहले २५ वर्षों तक कनफ्यूशियस के क्लासिकों का मुद्रण नहीं हुआ था। ग्यारहवीं से लेकर तेरहवीं शताब्दी तक की चीनी छपाई कागज, रोशनाई, नक्शाकारी, चित्रसज्जा, शिल्प आदि की उत्कृष्टता की दृष्टि से विशेष है।

सभी काष्ठ ब्लाकों का निर्माण प्रपाती वृक्षों, नाशपाती, बेर, विष्णुबल्ली और कभी सेब की छालों से होता था क्योंकि ये चिकनी होती थीं। कागज की पतली चादर पर लिखे मूल पाठ को चावल की लेई द्वारा ब्लाक की सतह पर नीचे लगा दिया जाता था। सूख जाने पर कागज की पीठिका को उघेड़ देते थे और ब्लाक में पाठ के अक्षरों की पतली-सी उल्टी आकृति शेष रह जाती थी। फिर काटने

वाला बसूले या रूखानी से अक्षरों के आसपास की ब्लाक की सतह को चिकनी कर देता था। जब ब्लाक तैयार हो जाता था तब उस पर बालों के ब्रुश द्वारा रोशनाई लगा दी जाती थी। उसके बाद कागज का एक टुकड़ा रोशनाई लगे ब्लाक पर रखा जाता था, फिर दूसरी तरफ से धीरे-धीरे उसे ब्रुश से रगड़ा जाता था।

चीनी मुद्रण की कला का और अधिक विकास ग्यारहवीं शताब्दी में हुआ। एक दस्तावेज के अनुसार १०४१-४८ के बीच एक कारीगर पी-शेंग ने मिट्टी के एक कुंडेभर चल-टाइपों का प्रयोग किया था। टाइप को मोम और रेजिन के घोल की सहायता से एक तख्ती पर बिठा दिया गया। फिर एक के बाद एक दूसरी तख्ती से टाइपों के ब्लाक को दबाया गया, तेरहवीं शताब्दी के प्रारंभ में काष्ठ और पंद्रहवीं शताब्दी के अंत तथा सोलहवीं शताब्दी में कांसे का प्रयोग हुआ।

एक से अधिक रंगों में छपाई १३४० ई. में ही शुरू हो गयी थी लेकिन उसका विकास सत्रहवीं शताब्दी के अंतिम चरण में हुआ।

बायें: चीनी में बौद्ध रक्षा-सूत्र: अब तक प्राप्त छपाई के नमूनों में सबसे पुराना (७०४–५१) नीचे: ९७५ ई. में मुद्रित एक चित्रयुक्त स्तुति-सूत्र

संसार का सबसे पुराना मुद्रित दस्तावेज

मुद्रण में काष्ठ ब्लाकों का प्रयोग चीनी पुस्तकों की छपाई के सिलसिले में काफी लंबे अर्से तक होता रहा, जबकि चल टाइपों का प्रयोग यदा-कदा ही होता था। चीनी भाषा की प्रकृति और अनेक शब्दों की अपनी स्वतंत्र विशेषता के कारण ब्लाक-मुद्रण आसान और किफायती था। चल टाइपों का प्रयोग केवल उसी स्थिति में होता था जब भारी-भरकम पुस्तकों की बहुत बड़ी संख्या में छपाई की आवश्यकता होती थी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से लीथोग्राफी, टाइपोग्राफी और मशीन-मुद्रण शुरू हो गया।

भारत में कागज का प्रचलन संभवतः सातवीं शताब्दी तक नहीं था। आई-चिग नाम के एक भिक्षु ने भारत की (६७१–६९४) में यात्रा की थी। उन्होंने चीनी संस्कृत के अपने शब्दकोश में संस्कृत के 'काकील' शब्द की चर्चा की थी क्योंकि भारत में मूलपाठ (धर्मग्रंथ-वेद आदि) शताब्दियों तक जबानी याद करके पीढ़ी दर-पीढ़ी सुरक्षित रखा गया, अतः वहां पर कागज संभवतः बारहवीं शताब्दी के बाद तक बहुत प्रचलित नहीं रहा।

कागज-निर्माण की कला पश्चिम में समरकंद में ५७१ में तब पहुंची जब दो चीनी कागज-निर्माताओं को वहां के लोग बंदी बनाकर ले गये। उन्होंने ही अरबी दुनिया को इस कला का ज्ञान दिया। बगदाद में लगभग चालीस वर्ष बाद कागज बनाने का एक दूसरा कारखाना तब खुला जब चीनी कागज बनाने वाले उस शहर में ले जाए गये। इसके बाद ही कागज का निर्माण दमिश्क, त्रिपोली, यमन, मिस्र और मोरक्को में हुआ। बारहवीं शताब्दी में यूरोप में कागज-निर्माण की शुरुआत के पहले अरबों ने इस विद्या पर लगभग पांच सौ वर्षों तक अपना एकाधिकार बनाये रखा। मूरों (हब्शियों) ने इबेराई प्राय-द्वीप पर जब अधिकार कर लिया तब उसके बाद वे इस कला को स्पेन ले गये और लगभग ११५० ई. में इक्जैतिवा कागज का एक कारखाना खोला। चीथड़े को भिगो-कर गलाने के लिए भी उन्होंने एक मिल खोली। जिस दूसरे रास्ते से यह कला यूरोप पहुंची, वह संभवतः भूमध्यसागर के पार से था।

मशहूर उलमास्ट्रोमर ने १३९० ई. के आसपास न्यूरेमबर्ग में कागज-निर्माण का एक कारखाना खोला था और उसने पानी से चलने वाले मुद्रांकन यंत्रों के अलावा वैसे ही औजारों और प्रक्रियाओं का प्रयोग किया था जैसे चीन में किया जाता था। नीदरलैंड, स्विटजरलैंड और इंगलैंड इस कला से पंद्रहवीं शताब्दी से परिचित हुए। मेक्सिको में यह कला १५८० ई. के पहले और अमरीकी उपनिवेशों में सत्रहवीं शताब्दी के अंतिम दिनों में पहुंची।

पंद्रह सौ वर्षों के लंबे इतिहास के दौर में कागज ने चीन से दुनिया के हर हिस्से की यात्रा की है।

विज्ञान

• डॉ. धनवन्तकिशोर गुप्त

सूर्य पर कोई वस्तु जल नहीं सकती

चाहे यह सुनने में विचित्र लगे, परंतु यह वैज्ञानिक तथ्य है कि सूर्य पर कोई भी वस्तु जलती नहीं। सूर्य स्वयं भी नहीं जल रहा है। इसका यह अर्थ नहीं है कि सूर्य ठंडा है। सूर्य 'गरम' है परंतु 'जल' नहीं रहा है। दैनिक बोलचाल में हम गरम वस्तु तथा जलती हुई वस्तु में कोई भेद नहीं करते। जलती दोपहरी होती है और जलती जवानी भी होती है।

जलने के विषय में व्यावहारिक ज्ञान अत्यंत पुराना है। जब मनुष्य पूर्णतः जंगली अवस्था में था तब भी वह मांस भूनकर खाता था। 'जलने' का वैज्ञानिक अध्ययन लगभग दो सौ वर्ष पुराना है।

प्राचीनकाल में अग्नि को पंच तत्त्वों में से एक माना जाता था तथा जलने की प्रक्रिया के अंतर्गत किसी भौतिक वस्तु की अपने पंच तत्त्वों में विभक्ति मानी जाती थी। उदाहरण के लिए जब लकड़ी जलती थी तो प्राचीन धारणा के अनुसार यह अपने पंच तत्त्वों में विभाजित हो जाती थी। परंतु आधुनिक विज्ञान के अनुसार स्थिति इसके ठीक विपरीत है। जलने की प्रक्रिया में किसी तत्त्व का आक्सीजन के साथ संयोग होता है। जलने की प्रक्रिया का अध्ययन सन १७७४ के लगभग फ्रांसीसी वैज्ञानिक लेवाजिये तथा अंगरेज वैज्ञानिक प्रीस्टले ने किया था। प्रीस्टले ने आक्सीजन गैस का आविष्कार किया था। इस गैस के गुणों का अध्ययन करते समय उसने विभिन्न ज्वलनशील धातुओं जैसे मैग्नेशियम के जलने का अध्ययन किया। उसने पाया कि बिना वायु के कोई वस्तु जल नहीं सकती तथा वायु के आयतन का लगभग पांचवां हिस्सा ही जलने की क्रिया में सहायक होता है। शेष ४/५वां भाग निष्क्रिय होता है। इस प्रयोग के आधार पर उसने यह निष्कर्ष निकाला कि वायु में कम-से-कम दो प्रकार की गैसें विद्यमान हैं। वायु का १/५वां हिस्सा, जो कि जलने में सहायक होता है, आक्सीजन माना गया। शेष ४/५

लेखक

भाग को नाइट्रोजन कहा गया। आजकल ज्ञात है कि वायु में कुछ अन्य निष्क्रिय गैसें भी अत्यल्प मात्रा में विद्यमान हैं।

जलना—एक रासायनिक संयोग

अन्य प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ कि जलने की प्रक्रिया में वायु की आक्सीज़न का ज्वलनशील पदार्थ के साथ रासायनिक संयोग होता है तथा आक्साइड बनता है। हवा-युक्त बंद बरतन में मैग्नीशियम के तार जलाकर यह देखा गया कि जलने के पूर्व बरतन+हवा+मैग्नीशियम का भार ठीक उतना ही था जितना जलने के पश्चात बरतन+शेष निष्क्रिय नाइट्रोजन+मैग्नीशियम आक्साइड का भार था। जलने के पश्चात बंद बरतन में हवा के भार में कमी ठीक उतनी ही पायी गयी जितनी मैग्नीशियम आक्साइड तथा मैग्नीशियम धातु के भारों में अंतर था। अंततः, मैग्नीशियम आक्साइड को रासायनिक प्रक्रिया द्वारा पुनः मैग्नीशियम धातु तथा आक्सीजन में अलग-अलग करके निर्विवाद रूप में सिद्ध किया गया कि जलने की प्रक्रिया में ज्वलनशील पदार्थ का वायु की आक्सीजन के साथ संयोग होता है। जलने की प्रक्रिया सदैव उच्च ताप पर होती है और इसमें लाल से लेकर श्वेत वर्ण तक का प्रकाश भी निकलता है। अब जलने की प्रक्रिया को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं: ऊष्मा एवं प्रकाश की उत्पत्ति सहित आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग को जलना कहते हैं।

हम अपने दैनिक जीवन में जिन वस्तुओं को जला सकते हैं, जैसे कपड़ा, कागज, लकड़ी, खाद्य पदार्थ आदि, वे सभी पदार्थ मुख्य रूप से कारबन तथा हाइड्रोजन के संयोग से बने हैं। निश्चय ही इनमें अन्य तत्त्व भी होते हैं परंतु इन अन्य तत्त्वों की मात्रा नगण्य होती है। जब लकड़ी जलती है तब उसमें का कारबन तत्त्व वायु की आक्सीजन के साथ संयोग करके कारबन-डाई-आक्साइड नामक गैस बनाता है, जो वायु में मिल जाती है। लकड़ी में उपस्थित हाइड्रोजन गैस आक्सीजन के साथ मिलकर पानी बनाती है जो वाष्प के रूप में वायु में मिल जाती है। थोड़ी मात्रा में उपस्थित अन्य तत्त्वों के साथ आक्सीजन के संयोग से आक्साइड बनते हैं जो राख के रूप में पड़े रह जाते हैं। कारबन तथा हाईड्रोजन का आक्सीजन के साथ संयोग होने पर ऊष्मा मुक्त होती है इसलिए जलने की प्रक्रिया में गरमी उत्पन्न होती है। यह गरमी ज्वलनशील पदार्थ के आसपास की वायु को गरम कर देती है जिसमें से प्रकाश निकलने लगता है। इसी प्रकाशमान वायु को हम ज्वाला के रूप में देखते हैं। परंतु हाइड्रोजन अथवा कारबन का आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग उच्चताप

पर ही संभव है। इसीलिए लकड़ी को पहले 'जलाना' पड़ता है, फिर उसमें से इतनी अधिक ऊष्मा निकलने लगती है कि यह स्वयं ही जलने की प्रक्रिया को बनाये रखती है।

मोमबत्ती अथवा दीया जलने का सिद्धांत भी इसी प्रकार है। यहां अंतर यह होता है कि इस स्थिति में बाती स्वयं नहीं जलती। मोम अथवा तेलबाती में अवशोषित होकर रिसता हुआ जलते हुए सिरे की ओर चलता है। यहां यह तेल अथवा मोम वाष्पित आक्सीजन के साथ संयोग करता है। मोम और तेल भी अन्य ज्वलनशील पदार्थों की भांति कारबन और हाइड्रोजन से मिलकर बने होते हैं। अतः यहां भी जलने की प्रक्रिया उपर्युक्त रीति से ही घटित होती है।

आक्सीजन के साथ संयोग की प्रक्रिया निम्न ताप पर प्रकाश की उत्पत्ति के बिना भी संभव है, परंतु तब इसे जलना नहीं कहा जाता है। उदाहरण के लिए गीले लोहे में हवा के संपर्क से मोरचा लग जाता है। यहां भी लोहे का आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग होता है, परंतु इसे लोहे का जलना नहीं कहा जाता। एक दूसरा उदाहरण लीजिए। सभी खाद्य पदार्थ ज्वलनशील होते हैं। आप उन्हें या तो हवन में जला दीजिए जिससे ऊष्मा और प्रकाश की उत्पत्ति होगी। इन्हीं खाद्य पदार्थों को खाने पर शरीर के अंदर निम्न ताप पर प्रकाश की उत्पत्ति के बिना ही खाद्य पदार्थ में स्थित कारबन और हाइड्रोजन का स्वांस के साथ भीतर जाने वाली शुद्ध वायु में स्थित आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग होता है। इससे जो कारबन-डाइ-आक्साइड गैस तथा वाष्प बनती है, वह स्वांस के साथ वाहर आ जाती है। भोजन का आक्सीजन के साथ संयोग होने में जो ऊष्मा उत्पन्न होती है वह शरीर को गरम रखने एवं कार्य करने में काम आती है। इस प्रक्रिया को हम 'पचाना' कहते हैं। घी को हम दीये में 'जला' कर ऊष्मा और प्रकाश प्राप्त करते हैं तथा उसी घी को खाने के पश्चात 'पचा' कर भी ऊष्मा प्राप्त कर सकते हैं। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि पेट में भोजन का आक्सीजन के साथ संयोग प्रत्यक्ष नहीं, बल्कि कई चरणों में होता है।

सूर्य मात्र तापदायक

अब हम समझ सकते हैं कि सूर्य पर कोई वस्तु जलती क्यों नहीं। सूर्य अत्यधिक गरम है, अतः वहां सभी वस्तुएं गरम हो जाएंगी, परंतु वे जल नहीं सकतीं। इसका कारण यह है कि सूर्य का ताप बहुत अधिक है। सूर्य के ऊपरी पृष्ठ का ताप लगभग ६,००० डिग्री है तथा उसके भीतर तो लाखों डिग्री तक ताप का अनुमान किया गया है। इतने अधिक ताप पर रासायनिक पदार्थ अपने अवयव तत्त्वों में विभक्त हो जाते हैं और यहां तक कि प्रत्येक परमाणु भी टूट जाता है। फलस्वरूप वहां आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग संभव नहीं है।

वहां जल वाष्प भी अत्यधिक गरमी के कारण आक्सीजन और हाइड्रोजन में पृथक हो जाएगी। कारबन-डाई-आक्साइड गैस में से भी कारबन अलग और आक्सीजन अलग हो जाएगा। इसीलिए कहा जाता है कि सूर्य पर कोई वस्तु जल नहीं सकती।

जब कोई वस्तु जलती है तब उसके निकट की वायु का आक्सीजन समाप्त हो जाता है। परंतु साथ ही साथ अवशिष्ट वायु (नाइट्रोजन) तथा जलने से उत्पन्न गैसें (कारबन-डाई-आक्साइड तथा जल वाष्प) गरम हो जाते हैं। गरम गैसें अपने चतुर्दिक की वायु से हलकी होने के कारण ऊपर की ओर उठती हैं और उनके स्थान पर आक्सीजनयुक्त शुद्ध वायु आ जाती है। चूंकि गरम गैसें ही ज्वाला के रूप में दिखायी पड़ती हैं अतः ये ज्वालाएं सदैव ऊपर की ओर जाती हैं। आप मोमबत्ती का जलता हुआ सिरा नीचे की ओर कर दें तब भी ज्वाला ऊपर की ओर जाएगी।

दीया जला क्यों, भट्टी जली क्यों ?

अब इस प्रश्न पर विचार करें कि तेज हवा में दीया बुझ क्यों जाता है तथा भट्टी अधिक तीव्र रूप से क्यों जलने लगती है ? तेज हवा के कारण भट्ठी के ऊपर खेल रही ज्वालाएं शीघ्रतापूर्वक हटने लगती हैं और उनके स्थान पर आक्सीजनयुक्त शुद्ध वायु अधिक शीघ्रता से आने लगती है। फलस्वरूप अधिक मात्रा में आक्सीजन मिलने के कारण भट्ठी तेज हो जाती है। सैद्धांतिक रूप में दीया अथवा मोमबत्ती भी तेज हवा में अधिक तीव्र जलना चाहिए। परंतु व्यवहार में यह होता है कि दीये अथवा मोमबत्ती की बाती का गरम भाग इतना कम होता है कि तेज हवा में शुद्ध वायु से संपर्क होने पर वह शीघ्रतापूर्वक इतना ठंडा हो जाता है कि आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग बंद हो जाता है और फलस्वरूप दीया बुझ जाता है। इस प्रश्न को दियासलाई की तीली तथा लकड़ी के मोटे कुंदे के उदाहरण से अधिक स्पष्ट रूप में समझा जा सकता है। लकड़ी के कुंदे में गरम भाग बहुत अधिक होता है। वह तेज हवा से प्राप्त आक्सीजन को इतना अधिक गरम कर लेता है कि आक्सीजन के साथ रासायनिक संयोग होता रहता है अर्थात जलने की प्रक्रिया चालू रहती है। पतली दियासलाई की तीली छोटी होने के कारण हवा को गरम करने के बदले ठंडी हो जाती है और बुझ जाती है।

जलने वाली वस्तु को शुद्ध वायु किस प्रकार प्राप्त होती है, यह ऊपर समझाया गया है। गरम गैसें तथा ज्वालाएं आसपास की वायु से हलकी होने के कारण ऊपर उठती हैं और इस रिक्त स्थान पर आक्सीजनयुक्त शुद्ध वायु आ जाती है।

—बी-६७ रवींद्रपुरी,
वाराणसी-२२१००५

पत्थर की गंध

रात की काली शिलाओं पर
चांदनी के फूल रखने दो
बौर को कुछ और पकने दो
गांव का मेला, जहां छेनी-हथौड़ी
बज रही थी पत्थरों पर
बांह पर उभरे हुए थे मंत्र-जैसे
सांवले कुछ-एक अक्षर
आंख मिलते ही उगा था जो
फिर वही गेंदा गमकने दो
गंध के अक्षर परखने दो
दूर होती जा रही हैं लालटेनें
हम चले आये यहां पर
झाग-सी मुसकान, पांवों के किनारे
फूल-सा महका महावर
पिंडलियों में टीस का टेसू
सुर्ख लपटों-सा दहकने दो
कुछ थकन का स्वाद चखने दो

शाल कोहरे की हटी, अरहर सयानी
खुल गये कंधे सुनहरे
जिस्म सोने-सा पिघल आया, उजाला
छू गया है कहीं गहरे
टहनियों पर, फूल-पत्तों पर
ओस के पंछी चहकने दो
उन्हें सतरंग पखने दो
प्रसव-पीड़ित मोरनी की चीख जैसा
शब्द मन को है परसता
तैर कर आता हुआ जैसे अकेला
माघ का बादल बरसता
भीगते कच्चे मकानों -सा
और सोंधापन महकने दो
देह का जादू लहकने दो

——श्रीराम शुक्ल
कंचना, अमीनाबाद, लखनऊ

अपने ठांव पर

वे तो रात भर नाव खेते रहे
बाकी कुछ
हंसते रहे
गाते रहे
नाव में लेटे रहे
खेनेवालों के हाथ भर आये

फिर भी वे सारी रात खेते रहे
सवेरा हुआ
तब लोगों ने देखा——
नाव अपने ठांव पर ही बंधी थी

——कुमुद नागर
आकाशवाणी, नयी दिल्ली

मुझको सहर का यकीन था

• अर्श मलसियानी

सलाम साहब अभी युवावस्था से निकलकर अधेड़ उमर में ही दाखिल हुए थे कि मृत्यु ने उन्हें आ घेरा। वे उत्तर-प्रदेश में जौनपुर जिले के एक नगर मछली-शहर के रहनेवाले थे। जौनपुर एक जमाने में विद्या और सभ्यता का केंद्र था। यहां मुगलों से पहले शरकी बादशाहों का शासन था और इसे 'भारत का शीराज' कहा जाता था। सलाम ने अपने जीवन के विषय में बड़े विस्तार से एक लेख में इशारे किये हैं, उन्हीं की जबान से उनकी कहानी सुनिए :

"मैं पहली जुलाई, १९२१ को पैदा हुआ। पिता का नाम अबदुल रजाक है। दादा मुहम्मद इस्माईल, धर्मग्रंथों के पढ़ने-वाले और हदीस के इल्म में बड़े निपुण थे। वे कभी-कभी कविता भी करते थे। यों तो इस नगर में मुसलमानों की गिनती अधिक लगती थी परंतु हिंदुओं की संख्या भी कुछ कम न थी। पुराने जमाने की बातें और सबका आपस में मिल बैठना अब तक याद आता है। ईद, बकरीद, मुहर्रम, गाजीमियां के मेले, होली, दिवाली और सावन के मेले बड़ी धूमधाम से मनाये जाते थे। इस विचार से मछलीशहर अब भी संस्कृति का एक संगम है।

"मेरे पिता बड़ शाहाना मिजाज के थे। उनको कबूतरबाजी और पतंगबाजी का बहुत शौक था। वे नावल पढ़ने और रात-रात भर ताश खेलने में व्यस्त रहते थे। मेरा घराना तो मौलवियाने में था, परंतु मेरा अधिक समय सैयदवाड़े और कायस्थाने में व्यतीत होता था। मुहर्रम की मजलिस और रामलीला की शामें मुझे अपने महल्ले से इधर खेंच लाया करती थीं और मैं इस वातावरण में बहुत खुश रहता था।

"शायरी मैंने मिडिल स्कूल में ही शुरू कर दी थी। मिर्जा दाग के विख्यात शिष्य जनाब मतीन मछलीशहरी को मैंने पहले-पहल कुछ गजलें दिखायी थीं परंतु इसके पश्चात मैंने अपनी राह अपने-आप निकालने का यत्न किया। मुझे देशप्रेम से लगाव था, इसलिए अपने नगर के देशभक्त बुर्जुगों से कुछ न कुछ सीखता ही रहता था।

"हकीम युसुफ हसन खां लाहौर से एक मासिक पत्रिका निकालते थे, जिसका नाम था 'नारंगेख्याल'। उनसे और सागर निजामी से मेरा परिचय फरीद जाफरी ने करवाया। स्वतंत्रता आंदोलन पर मेरी कविताएं इधर-उधर मशहूर होने लगी थीं। एक कविता पर स्वर्गवासी आचार्य नरेंद्र-देव जी ने मेरी बड़ी सराहना की थी।

इन्हीं दिनों मुझे अयोध्या पोलीटिकल कान्फ्रेंस में पं. जवाहरलाल नेहरू से और उसके पश्चात रामगढ़ कांग्रेस सेशन में देश के बड़े-बड़े नेताओं से मिलने का अवसर मिला।

"मैं हाईस्कूल में फेल हो गया। उसके बाद सोचने लगा कि अब क्या करूं? परंतु एक लगन थी कि लेखक बनूं, कवि बनूं। इसलिए इधर ही अधिक ध्यान देने लगा। ज्यों-त्यों करके प्राइवेट तौर पर हाईस्कूल तो पास कर लिया पर ऊंची शिक्षा के दरवाजे मुझ पर बंद रहे। मुशायरों में घूमता-फिरता।

"लाहौर से मकतबा-ए-उर्दूवाले चौधरी बरकतअली और चौधरी नजीर अहमद मुझसे मिलने आये। उन्होंने मेरी कविताओं का एक संग्रह 'वुसअतें' के नाम से छापा। डॉ अमरनाथ झा मुझ पर बड़े मेहरवान थे। यह उन्हीं की दयादृष्टि समझिए कि मैं रेडियो में मुलाजिम हो गया। बीच में इतना बता जाऊं कि 'साकी' नाम की मासिक पत्रिका के संपादक शाहिद अहमद देहलवी ने भी मेरे गीतों का एक संग्रह 'पायल' के नाम से छापा था और मुझे उन्होंने इसका पारितोषिक १ हजार रुपया दिया था। यह एक हजार रुपया मैंने अपने जीवनकाल में पहली बार देखा था।

"लखनऊ में रेडियो की मुलाजिमत के जमाने में मैं हजरतगंज अमीनाबाद और कैसरबाग के चक्कर लगाता। न्याज फतेहपुरी और हयातुल्ला अंसारी से मिलता, अली सरदार जाफरी और सिब्ते-हसन से भी भेंट होती। उर्दू के प्रसिद्ध विद्वानों और लेखकों से मिलने का अवसर मिलता। हिंदी में यशपालजी, अमृतलालजी नागर और बाबू भगवतीचरण वर्मा के साथ वार्तालाप रहता।

"किसी क्लब में किसी मित्र ने,

सलाम मछलीशहरी

जो अपने आपको बड़ा प्रगतिशील कहता था, मुझे शराब पिला दी। मैं छुप-छुपकर शराब पीने लगा। यह शौक आदत में बदल गया। इसके पश्चात जब भारत का बटवारा हुआ तो मुझे बड़ा दुःख हुआ। १९५१ में मुझे रेडियो कश्मीर, श्रीनगर भेज दिया गया। रेडियो कश्मीर से तब्दील होकर फिर लखनऊ पहुंचा और फिर लखनऊ से

नयी दिल्ली आ गया। और यहीं का हो रहा।

"मेरी आरंभिक कविता में मछली-शहर के जनजीवन की झलकियां हैं। इनमें आपको पीपल की ठंडी छांव, आमों के बागों में पड़े झूले, हरे-भरे खेत और खेतों में खनकती हुई पायलें, ऊंचे घरों की चार-दीवारियों में मेहंदी लगे हाथ, हरसिंगार के सजाये दुपट्टे, थालियों में फूल लिये हुए कब्रों की तरफ जाते हुए लोग, दुआएं मांगने की आवाजें, रामायण का गायन और अनीस के मरसिए सब-कुछ नजर आता था।"

अपनी संतान के विषय में सलाम ने स्वयं लिखा है :

मेरे आंगन में जो बेले का हसीं पौदा है
इसमें दो फूल हैं और पांच सुहानी कलियां
इक कली जर्द है, बीमार है, अफसुरदा है

सलाम ने केवल ५२ वर्ष की आयु पायी परंतु उन्होंने अपनी उम्र के मुकाबले लिखा बहुत कुछ है, पर यह बड़े शोक की बात है कि उन्होंने जितना कुछ लिखा, वह सबका-सब संग्रह रूप में न छप सका। सलाम हर रंग के शायर थे, गजल भी कहते, गीत भी लिखते और इंकलाब का नारा भी लगाते। उन्होंने पुरानों की आंखें देखी थीं और नयों के साथ बैठकर नयेपन की रोशनी ली थी। उनकी कविता में रूमान भी है और व्यंग्य भी। काजी नजरुल इसलाम की विख्यात नज्म 'विद्रोही' के रूप में उन्होंने भी एक छोटी-सी कविता लिखी, उसका एक अंश यह है:

वह आहेशोलाबाज हूं कि आसमां दहल उठे
वह आग हूं, शरार हूं कि इक जहान जल उठे
बहारेजंग आ गयी
हरेक को जनून है
जबां पे बागियों के सिर्फ
खून खून खून है
अल्म का खातमा हुआ
कि कैदखाना जल गया
हमें अब और फिकर क्या
चलो वतन चलें जरा
सूये चमन चलें जरा
चमन भी नगमाजा है आज
गुलों की यह सदा है आज इन्क्लाब इन्क्लाब
वतन भी कह रहा है आज इन्क्लाब इन्क्लाब

तब सलाम ने कलम संभाली ही थी। उनकी एक कविता 'दुनिया एक अंगड़ाई लेगी' का एक अंश इस तरह है:—

नाजुक और शरमीली सड़कें
जख्मी, कोढ़ी हो जाएंगी
इंसानों से घबराएंगी
यह गुलबूटा बन जाएंगी
हम उन पर चलते ही रहेंगे
फिर एक शोला बन जाएंगी
यह सब कुछ होता ही रहेगा
जरीं कतबे और मीनारें
पाप के साये में हांपेंगे
आग के शोलों से कांपेंगे
फिर कुछ परचम लहराएंगे
फिर कोई तारीख लिखेंगे
अपनी अपनी तरह पढ़ेंगे

उनकी एक और कविता है, 'खामोश रहो ।' यह कविता एक वार्तालाप के रूप में है और इसमें बड़ा ही तीखा व्यंग्य है । इसके तेवर देखिए :—

'लाचार हूं, दुखिया हूं, बाबू
दो रोज से भूखा हूं, बाबू'
'खामोश रहो'
'अंधे की खबर भी लो बाबा
अल्लाह के नाम पर दो बाबा'
'खामोश रहो'
'सरकार, यह भारी बोझा है
इक आना इसका थोड़ा है'
'खामोश रहो'

सलाम भारत की संस्कृति के कवि थे। वे हिंदी से भी काम लेते और फारसी से भी । उनकी उपमाएं सराहनीय हैं। मैंने अपनी एक पुस्तक के लिए उनकी एक कविता 'गजल की धरती' के कुछ अंश मांगे, साथ ही उनके छापने की आज्ञा भी तो उन्होंने पहली अक्तूबर, १९७३ को मुझे यह पत्र लिखा था :

"मैं आज जब दो मास के पश्चात दफ्तर आया तो आपका पत्र मिला। मैं पहली अगस्त से विलिंगडन नर्सिंग होम में था । पीलिया की बीमारी ने वह-वह गुल खिलाये कि क्या अर्ज करूं । उधर चौदह जून को मेरे बड़े लड़के अंजुम सलाम के दायें पांव की हड्डी एक दुर्घटना में टूट गयी। पिछले हफ्ते वह घर आया है परंतु अभी चलने के काबिल नहीं है । हजूर

कभी नहीं जाना

इनको पहचाना
उनको पहचाना
लेकिन अपने को
कभी नहीं जाना
फुरसत मिली नहीं
अपने को देखने की
जिंदगी को आदत पड़ी
सपने को देखने की
जीने की कोशिश-भर
रह गयी जिंदगी
सपने तो सिर्फ बने
जीने का बहाना
अपने से अपने को
छिपायें कहां तक
आग को राख से
दबायें कहां तक
कई बार चाहा
इस राख को कुरेद कर,
अंदर की आग को
बाहर ले आना
अंदर की आग से
जलते रहे हम
ऊपर की बरफ से
गलते रहे हम
किसकी आंखों से
पहचानें अपने को
जब हमारी आंखों ने
हमको न पहचानना

● गोपालकृष्ण कौल

प्रकृति का
सुंदर उपहार–
किये परिधान
मोहक प्रिंट
खटाऊ
वायलसकी
दि खटाऊ मकनजी स्पिनिंग
एण्ड वीविंग कंपनी लिमिटेड
प्रधान कार्यालय:
मिल्स:
KMS-27/PREM ASSOCIATES/HIN

मैंने हमेशा आपसे रोशनी ली है। आपके माननीय पिताजी तो मेरे लिए एक अद्वितीय पथप्रदर्शक हैं। मेरी नज्म 'गजल की धरती' के जितने भी बंद आप लेना चाहें ले लें। इजाजत क्या, यह तो मेरे लिए सौभाग्य है।

आपका
सलाम

अब उस कविता के तीन बंद भी देखिए :

कुमारी पाओं की छागल तो काशम बिंदी
सजी सजायी है अब भी
हिमालय की दुलहन
है एक हाथ में बंगाल चूड़ियों की तरह
तो दूसरे में महाराष्ट्र इक हसीं कंगन
नवीदे फिकर यह आरायशे जमाल भी है
लिबासोरंग में यकजहतीए कमाल भी है
मैं पूछता हूं, मेरे दौर के कलाकारो
कि तुमको और है मरगूब या तराना-दिल
गुलों में शोर, सितारों में शोर
जेहन में शोर
खुदा के वास्ते छेड़ो कोई फसाना-ए-दिल
यह कौन कहता है—हालात साजगार नहीं
फजा जो खुद न बना ले वह हुस्नकार नहीं
गरज यह हिंद जिधर ओर जिस तरह देखें
हसीं लताओं शिगुफता कमल की धरती है
अलग, अलग हैं
मजामीने शेर फिर भी सलाम
हमारा देश मुरस्सा गजल की धरती है

२२ नवम्बर, १९७३ को यह खिलता हुआ कंवल भी मुरझा गया और चाहने वालों को शोक और वेदना का संताप दे गया। इसके अभी मरने के दिन नहीं थे परंतु आदमी का बस कहां !

सलाम मछलीशहरी एक आशावादी शायर थे। इसीलिए वे मौत के इतने करीब होते हुए भी लिख सके :

मुझ को सहर का यकीन हो गया है
कलस बिरला मंदिर के
सहर का धुंधलका
बुलंद और घनेरे दरख्तों के पीछे
कलस बिरला मंदिर के यों लग रहे हैं
कि जैसे कई देवता आसमां से
सफेद अबर पारों पर बैठे हुए आसमां से
जमीं की तरफ आ रहे हों
विलिंग्डन के सैंतीस नंबर के कमरे का
यह सब्ज परदा उठाकर
मैं कुछ देर से सोचता हूं
मेरा आपरेशन तो मंगल को होगा
मगर देवता बरकतें अपनी लेकर
मेरे सात मासूम बच्चों की खातिर
अभी से मेरे ही लिए आ गये हैं
तो फिर ऐ अजल कोश
बुजदिल ख्यालो
महीनों से क्यों मुझको घेरे हुए हो
मेरे परदारीजेहन से अब हटो भी
कि मुझ को सहर का यकीन हो गया है
यकीनन अभी काम करना है मुझको
यकीनन अभी और जिंदा रहूंगा

सलाम मछलीशहरी ने अपनी यह अंतिम कविता अपरेशन के पहले लिखी थी।

—एफ ४/२१ माडल टाउन, दिल्ली-९

कहानी

● शैलेश मटियानी

इस तीसरी मंजिल की खुली छत से शहर काफी दूर-दूर तक दिखायी देता है। सड़कों पर चींटियों की-सी कतारों में रेंगती हुई भीड़ सिर्फ तभी सन्नाटे में बदलती है, जब तेज बारिश हो रही हो। इलाहाबाद-जैसे कसबानुमा शहर में भी

सुबह-शाम सड़कों पर बाढ़ के पानी की तरह इकट्ठा होती हुई भीड़—गिरिजा देवी को एक अजीब-सी दहशत होती है। अपने बड़े बेटे की मृत्यु के बाद शहर की हंगामा मचाती हुई-सी भीड़ को देखना एक गहरे अवसाद में डुबा देता है।

अब सिर्फ एक प्रतीक्षा है कि किसी एक सुबह संगमलालजी या अरुण हाथों में अखबार लिये हुए उनके कमरे तक या इस खुली छत पर आयेंगे। उनके हाथों में अखबार किसी प्रतीक्षा के आखिरी क्षणों की तरह कांप रहा होगा और उनकी अंगुलियां अखबार में छपे किसी छोटे-से फोटो की तरफ बढ़ी हुई होंगी—'नरेश कुमार के हत्यारे सत्यप्रकाश को सेशन से दी गयी फांसी की सजा हाईकोर्ट से भी बहाल!'

कुछ अरसा बाद, फिर कोई सुबह का अखबार उनके सामने फैला दिया जाएगा, जिसमें उनके बेटे के हत्यारे सत्यप्रकाश को फांसी पर चढ़ा दिये जाने की खबर छपी होगी और उनकी इस दारुण प्रतीक्षा का अंत हो जाएगा, जो उनके भीतर लगातार किसी विषैले सांप की तरह फुफकारती रहती है।

भूले-भटके अब भी छत की रेलिंग पर से झुककर नीचे आंगन की ओर देखती हैं, आंगन पूरा-का-पूरा ऊपर उठकर, छत की तरफ आता हुआ-सा लगता है।

छुट्टियों के दिन थे और देवर संगमलाल अपनी पत्नी और बच्चों के साथ कानपुर अपनी ससुराल चले गये थे। अरुण भी उन लोगों के साथ चला गया था। दो दिन पहले विनीता आयी थी। नरेश उस समय अपने कमरे में सोया हुआ था। विनीता ने संक्षेप में यह बतलाया था कि नरेश उसे परेशान करता है, वे उसे समझा दें। लड़की दुःखी है और उसके इस दुःख में नरेश के प्रति घृणा भी शामिल है, गिरिजा देवी की अनुभवी आंखों ने तुरंत अनुमान लगा लिया था। यह भी कि शायद, नरेश इस लड़की के प्रति बहुत आसक्त है और अब तक उसका धैर्य खीझ और विक्षुब्धता में बदल चुका

होगा। कुल मिलाकर स्थिति उनके सामने स्पष्ट हो गयी थी और लड़की की बातों के पीछे जिस तरह की एक शांत दृढ़ निश्चय की झलक उन्हें दिखायी दी थी, यह तय था कि वह किसी दूसरे लड़के से प्रेम करती है।

"अच्छा, मांजी, चलती हूं," कहकर हाथ जोड़ते हुए वह जाने को मुड़ी ही थी कि एकाएक नरेश अपने कमरे में से निकल

यह छोटे भाई अरुण ने भी बताया था। उन्होंने खुद भी अंदाजा लगा लिया था, लेकिन उस रात वह इस तरह से लौटा था जैसे सारे परिवार में से सिर्फ वह अकेला जिंदा बच गया हो। गिरिजा देवी को उसने ऐसे देखा था, जैसे किसी अजनबी औरत को देख रहा हो और फिर कमरा भीतर से बंद कर लिया था।

आया था। शायद वह सभी बातें सुन रहा था। गिरिजा देवी कुछ तय करें कि क्या और कैसे कहना है कि तब तक नरेश विनीता के पीछे-पीछे आंगन से बाहर निकल चका था।

वह शाम का वक्त था। रात को नरेश लौटा तो उसका चेहरा अत्यंत विषादपूर्ण था। लुके-छिपे वह शराब पीने लगा है,

उस शाम वे नीचेवाले बड़े आंगन के बरामदे में बैठी स्वेटर बुन रही थीं। चौके में दाल चढ़ा आयी थीं। तभी उन्हें शोर सुनायी दिया था। कटरावाले रामनिवास साहू का बेटा सत्यप्रकाश नरेश को चेतावनी दे रहा था कि अगर अब भी उसने विनीता का पीछा नहीं छोड़ा तो इसका परिणाम

अच्छा नहीं होगा। उसका चेहरा क्रोध से तमतमाया हुआ था और आवाज भी निरंतर कांप रही थी।

गिरिजा देवी देखती रहीं कि नरेश शांत खड़ा रहा। उसने कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ क्षण फन उठाकर खड़े हुए सांप की तरह वह चुपचाप सुनता रहा और फिर एकाएक उसने अपनी कमर से काफी बड़ा और तेज छुरा निकाल लिया। जब तक भौंचक-सी गिरिजा देवी कुछ सोचें, दोनों को समझाने की कोशिश करें, तब तक नरेश छलांग लगाता हुआ-सा सत्यप्रकाश के ऊपर झपट चुका था। सत्यप्रकाश के मुंह से एक डरावनी-सी चीख निकली थी। छुरा उसकी बायीं ओर की पसलियों को छीलता हुआ, बुशशर्ट फाड़कर, बाहर निकल चुका था। यह सब पल भर में घट गया था।

गिरिजा देवी को अब ठीक-ठीक याद नहीं कि कब सत्यप्रकाश ने धक्का देकर नरेश को गिरा दिया और छुरा अपने काबू में कर लिया। कब दोबारा नरेश उसके ऊपर कूदा और कब सत्यप्रकाश ने छुरा उसकी छाती में घोंप दिया। अत्यंत कातर आवाज में चीखता हुआ नरेश जमीन पर गिर पड़ा और छुरा अलग जा छिटका, तो खून फव्वारे की तरह फूटता चला गया।

यह मकान थोड़ा-सा एकांत में है, लेकिन पड़ोस के सक्सेना साहब ने, शायद शोर सुना था और चले आये थे। बेटे के खून में सनी हुई गिरिजा देवी ने एक बार उस ओर देखा, तो पाया था कि सक्सेना साहब ने सत्यप्रकाश को कसकर पकड़ रखा है और वह डर के मारे थर-थर कांपता हुआ-सा चीख रहा है, 'हमें छोड़ दीजिए। हम नरेश को नहीं मारना चाहते थे। नरेश हमारा कत्ल करना चाहता था। हमें छोड़ दीजिए, साहब! हम सिर्फ अपनी जान बचाना चाहते थे...'

थोड़ी ही देर में कुछ और लोग इकट्ठा हो गये थे।

गिरिजा देवी ने छुरा उठा लिया था और आगे बढ़ी ही थीं कि उसने जोरों का एक झटका मारा था और सक्सेना साहब की पकड़ छुड़ाकर भाग खड़ा हुआ था।

छह महीने बीत चुके हैं, वह हादसा आंखों पर से उतरता नहीं है। खून से सने कपड़े तो उसी दिन उतार दिये थे, लेकिन साफ कपड़े पहने रहने पर भी खून के धब्बों का वहम अब भी बना रहता है।

उसके बचने की कोई गुंजाइश थी नहीं। हत्या की आंखों-देखी साक्षियां मौजूद थीं और सेशन से फांसी की सजा सुना दी गयी थी। गिरिजा देवी को अब भी याद आते हैं वे कठोर क्षण, जब कठघरे में खड़ी बयान दिया करती थीं और सामने दूर खड़े सत्यप्रकाश को देखते हुए उन्हें लगता था, उसे अपने हाथों से कत्ल कर डालें।

जब तक फैसला नहीं सुना दिया गया, रात-दिन इसी बदहवासी में रहती थीं कि 'आजकल की अदालतों का कोई भरोसा नहीं, छोटे भैया! घूस खाकर कहीं उस हरामजादे को छोड़ न दें।...अगर वह

फांसी के फंदे से छूट गया, तो उसी दिन हम जहर खा लेंगे !'

बेटे की हत्या के हादसे और यंत्रणाओं से कांपती हुई-सी अपनी आवाज गिरिजा देवी को बिजलियों के कड़कने-जैसी तीखी और डरावनी लगती रही है। सामने के कठघरे में खड़ा सत्यप्रकाश उनकी डरावनी आवाज के बीच मुरदा होकर लटक गया-सा दिखने लगता है। गिरिजा देवी को एक राहत-सी अनुभव होती रही है।

और अब, जब लगता था कि एक अंतहीन तनाव का वह सिलसिला खत्म हुआ— फिर सब कुछ क्या नये सिरे से होगा ?

सत्यप्रकाश को गिरिजा देवी जानती रही हैं। रामनिवास साहू और नरेश के पिता में अच्छी-खासी दोस्ती थी। जिस साल रामनिवास साहू की मौत कैंसर से हुई, उसके अगले वर्ष ही नरेश के पिता का देहांत बनारसवाली ट्रेन-दुर्घटना में हुआ था। इस शहर में साहू का अकेला परिवार था और सत्यप्रकाश इकलौती औलाद। पढ़ने-लिखने में तेज। स्वभाव में मिलनसार। दिखने में सुंदर और तारुण्य-भरा। नरेश के मुकाबले में सत्यप्रकाश को पसंद करना, शायद, किसी भी लड़की के लिए स्वाभाविक ही हो सकता था। लेकिन एक साधारण-सी दिखती हुई घटना का एकाएक इतनी दारुण दुर्घटना में बदल जाना अब भी बर्दाश्त नहीं हो पाता है।

कभी-कभी निचाट एकांत में जब गिरिजा देवी का मन गहरी करुणा में डूबा रहता है, एक मद्धिम-सी आवाज भीतर-ही-भीतर प्रतिध्वनित होती रहती है कि अगर कहीं नरेश भी अपने पिता की ही तरह दुर्घटना में मर गया होता ? या कि जिंदगी और मौत आदमी के वश में
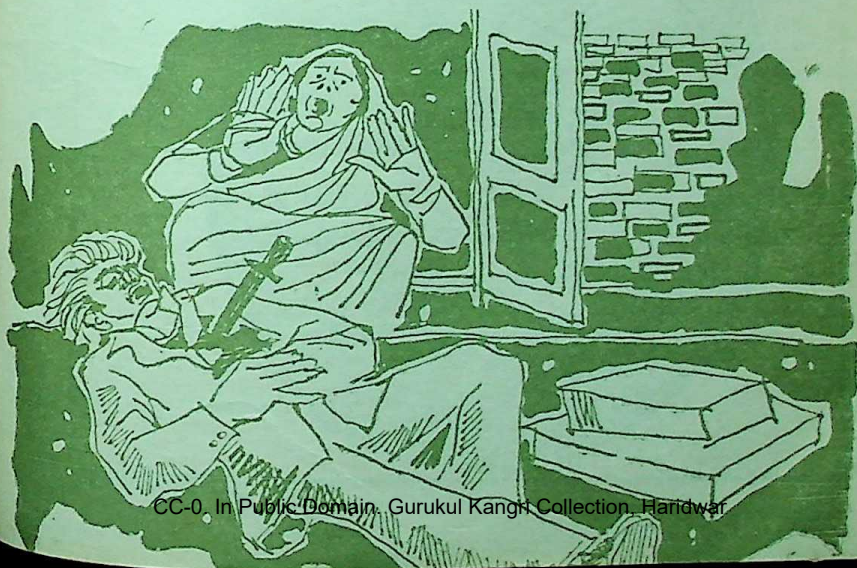
Reaching petroleum products wherever needed

With a nation-wide storage and distribution network, Indianoil maintains an uninterrupted flow of petroleum products to serve the nation.

With more than 200 installations, bulk depots and aviation fuel stations, and over 3000 petrol/diesel stations, Indianoil ensures that products are delivered wherever needed. All modes of transportation are pressed into service—coastal tankers, pipelines, rail tank wagons, tank trucks and tank carts.

Indianoil marketed about 14 million kilolitres of products during 1971-72 thus meeting nearly 55 per cent of petroleum product requirements of the country—serving the nation in its development plans as well as in defence efforts.

INDIANOIL

—a national trust for economic prosperity

INDIAN OIL CORPORATION LIMITED

INDIANOIL
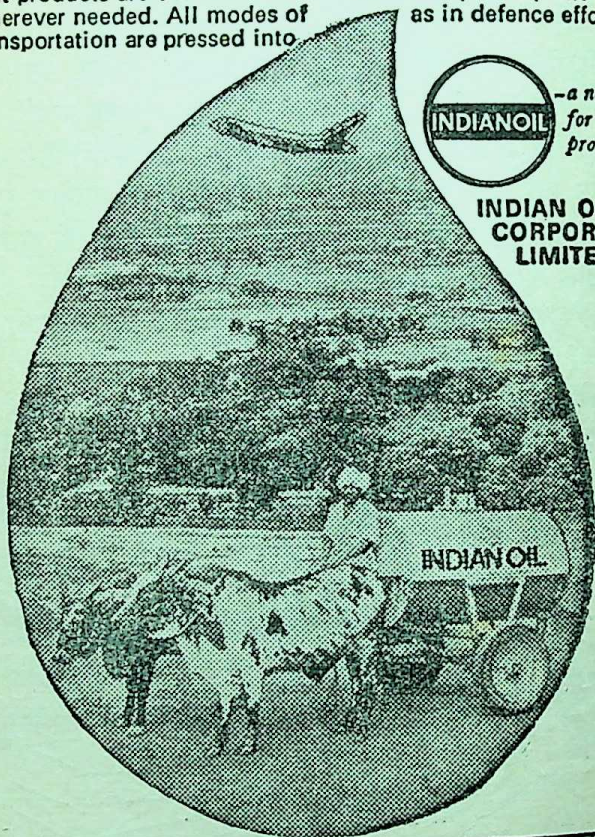
कहां है ? कल कहीं अरुण ही किसी ट्रक के नीचे आकर ... मौत का डर गिरिजा देवी के जैसे खून में घुल गया है । दुश्चिंता और दुःस्वप्नों के बीच घिरा रहना, जैसे अब धीरे-धीरे आदत बनता जा रहा है।

सत्यप्रकाश को फांसी की सजा सुना दिये जाने के बाद एक सन्नाटा-सा अनुभव होने लगा था कि शायद, धीरे-धीरे बदहवासी कम होती चली जाएगी । संगमलाल बता भी चुके थे कि उसकी ओर से अपील नहीं की जा रही है । विधवा और बेसहारा मां खाट से लगी अपनी मौत की प्रतीक्षा कर रही है । लड़के में सिर्फ हताशा के अतिरिक्त और कुछ रह नहीं गया है । लेकिन तभी एकाएक पता चला कि विनीता ने आत्महया कर लेने की धमकी देकर, अपने मां-बाप को बाध्य कर दिया है कि हाईकोर्ट में 'अपील' दाखिल की जाए । और अब एक सुनवाई इसी अगले शुक्रवार को है । हो सकता है, कुछ पेशियां और भी हों । लेकिन उनके पक्ष के एडवोकेट अस्थाना साहब का कहना है कि अगर यह लड़का फांसी के फंदे या आजीवन कारावास से छूट गया, तो वकालत का पेशा छोड़ देंगे ।

गिरिजा देवी अभी छत पर ही थीं कि देवरानी आयी और पूछा, "अलोपी मैया के मंदिर नहीं चलोगी, दीदी ?"

अब याद आ रहा है । आज सोमवार है । शुक्रवार को हाईकोर्ट में पहली सुनवाई होगी ।

गिरजा देवी का मन टाल जाने को हुआ कि जिनकी दीर्घायु की कामना में आदमी मंदिरों की शरण में जाता है, वही एक-एक कर मौत की आंधी में उखड़ गये, तो अब देवी-देवताओं में आस्था कहां रह गयी । बोलीं, "तुम हो आओ . . ."

पिछले कुछ दिनों से धीरे-धीरे गिरिजा देवी अपने भीतर कुछ बदलता हुआ-सा अनुभव कर रही हैं । लावे की तरह उफनता हुआ आक्रोश अब जैसे एक गहरी करुण और असमर्थता में परिवर्तित होता जा रहा है । एक अंतहीन उदासी है, जो सिर्फ महसूस होती है, समझ में नहीं आती ।

सिर्फ 'अच्छा चलो' कहते हुए उन्हें लगा, न-जाने कितनी लंबी बात और न-जाने कितनी दूर से कही है ।

अब कभी-कभार बाहर जाना होता है, तो दूसरी ओर की सीढ़ियों पर से उतरती हैं । जिस आंगन में नरेश की हत्या हुई थी, वह छूट-सा गया है । . . . लेकिन मौत के उस निदारुण दृश्य से मुक्ति कहां है, जिसमें नरेश के कांपते हुए होंठ ऐसे थरथराते रहे थे, जैसे 'मां' कहकर उन्हें पुकारना चाहता हो और फिर एकाएक स्याह पड़ गये थे ।

आखिरी सीढ़ी उतरते हुए, गिरिजा देवी ने धोती की कोर से चुपचाप अपनी आंखों को पोंछ लिया ।

देवरानी रिक्शा ठहरा चुकी थीं कि सड़क पार करती केशो की मां दिखायी दे गयी, "गिरिजा, कैसी हो . . . ?"

शायद, उन्होंने कहा होगा कि 'ठीक हूं ।'

केशो की मां पास आ गयी थी, "तुमने तो सुन ही लिया होगा गिरिजा कि सहुआइन गुजर गयी . . ."

"कौन ?"—गिरिजा देवी को लगा, वे जैसे चीख उठी हैं ।

"अरे, वही रामनिवास साहू की घरवाली—शारदा सहुआइन ! तुम्हारे नरेश के कातिल सत्यप्रकाश की महतारी . . ."

गिरिजा देवी को लगा, केशो की मां का एक-एक शब्द उनके पावों के नीचे तीखे पत्थरों की तरह गड़ रहा है और वे खड़ी नहीं रह पाएंगी । उन्हें खुशी होनी चाहिए थी, नहीं हो पा रही है ।

केशो की मां कह रही थी, देवरानी से, "कोई खास बीमारी नहीं थी, लेकिन दवा तक लेती नहीं थी । हमने भी बहुत कहा कि 'सहुआइन, ऐसे हाथ-पांव छोड़ने से क्या होगा ?' सिर्फ इतना ही बोली कि 'बहना, अब जीने की इच्छा ही नहीं रही !' "

'कभी-कभी विधाता भी कितना क्रूर हो जाता है ?'

अब गिरिजा देवी ठीक-ठीक नहीं बतला सकतीं कि यह वाक्य केशो की मां ने कहा था या उन्होंने खुद अपने ही भीतर से सुना है। उन्हें तो अब सिर्फ इतना याद है कि देवरानी को रिक्शे में बिठाकर वे घर वापस लौट आयी थीं और यह बात कहीं उनके भीतर कील की तरह धंस गयी है कि बेटे को फांसी की सजा मिल चुकी है, इसी दहशत और हताशा में शारदा सहुआइन ने प्राण त्याग दिये होंगे ? लेकिन खुद उनके प्राणों को क्या हो गया है ? न रेल-दुर्घटना में मरे पति के लिए छूटे और न कत्ल हो गये बेटे की लाश के साथ ! बेटे के खून से सने हुए कपड़ों को उतारते हुए भी तो उन्हें यही लगा था कि यह सब खुद के जिंदा रहने की तैयारी में है ?

लेकिन तब, शायद, एक कुटिल तर्क साथ था । बेटे के हत्यारे को फांसी के फंदे पर चढ़ा हुआ देखना है—प्रतिशोध की यह आग आंखों में जलती रहती थी । लेकिन अब, जबकि बेटे के हत्यारे के बचने की कोई गुंजाइश नहीं रह गयी है और एक तरह से उसका वंशनाश हो चुका है, तब ? अब किसके लिए जीवित रहना है, छोटे बेटे अरुण के लिए ? '. . . और अगर कहीं कल किसी दिन उसकी भी मौत अपनी ही आंखों देखनी पड़ी . . . ?'

कचहरी की दीवारों के भीतर का अपना घायल शेरनी का-सा दहाड़ना याद आ रहा है । आंखों में खून चढ़ गया है, उतरता नहीं है। हो सकता है, शारदा सहुआइन की अर्थी बिना बेटे के ही उठ गयी हो ?. . .

देवरानी अलोपी के मंदिर पहुंच गयी होगी । उसकी लड़की भी साथ गयी है । अरुण अपने चाचाजी के साथ गद्दी पर बैठा होगा । घर में फिर एकांत है । बाहर नौकर रामाधीन मसाले कूट रहा है। बैठे-बैठे ही उन्हें किसी बहुत लंबी यात्रा से वापस लौटने की-सी अनुभूति हो रही है । गिरिजा देवी से अपने भीतर का अवसाद

सहा नहीं जा रहा है।

धीमे-धीमे उनके पांव पूजागृह की ओर बढ़ते गये और मूर्तियों के सामने पड़ी हुई बड़ी चौकी पर उनका माथा टिककर रह गया—नितांत शब्दहीन और प्रार्थनारहित।

शुक्रवार की सुबह अरुण ने जगाया, तब उठीं। इससे पहले की पेशियों में मुंह-अंधेरे उठ जाती थीं और बदहवास-सी टहलती रहती थीं। कल रात कुछ गहरी नींद आयी। एक अरसे के बाद। शायद अपने भीतर-ही-भीतर का दौड़ना बहुत हो चुका है।

गिरिजा देवी के तैयार होने तक संगमलाल दो रिक्शे ले आये थे।

रिक्शे पर गिरिजा देवी काफी फैलकर बैठ गयीं, जैसे किसी दूसरे के आ बैठने की आशंका हो। कर्नलगंज से एलफ्रेड पार्क के सामने से गुजरती हुई थार्नहिल रोड पर से हाईकोर्ट की विशाल इमारत के बाहर पहुंच जाने तक उनकी आंखें एकटक किनारे के दरख्तों पर लगी रहीं। कभी-कभी नीले और निस्सीम आकाश की ओर।

आज एक बार फिर दोहराना है। शायद, एकाध बार और। फिर इस क्रूर सिलसिले का अंत हो जाएगा।

उच्च न्यायालय की इमारतें पत्थरों की बनी हुई थीं। आकर्षक, किंतु कठोर पत्थर की ऊंची-ऊंची दीवारों के बीच न्याय पाने के लिए पहुंचना किसी अलौकिक नाटक में शामिल होने-जैसा अनुभव होता है। यह एक अलग ही संसार है, जहां शायद हर आदमी अपने भीतर की दुनिया अपनी आंखों में लिये घूमता होगा।

न-जाने कितने लोग ऐसे होंगे, जिनके भयग्रस्त चेहरे फांसी की सजा सुनते ही अपने भीतर-ही-भीतर पत्थर की तरह बेजान हो जाते होंगे। पत्थर की इन ऊंची-ऊंची दीवारों के भीतर काले लबादों से ढंके हुए लोगों के अलावा हर कोई एक क्रूर नियति का शिकार लगता है।

'गिरिजा देवी मुसम्मात बिहारीलाल कोई है— ऽऽऽऽ. . . . . ?'

अभी पुकार पड़ने का वक्त नहीं हुआ है, फिर भी चारों तरफ की दीवारों पर से एक यही पुकार दरारों के बीच से फूट-फूटकर आती हुई महसूस होती है। आदमी कितनी कठोर और सख्त आवाज रखता है। उसकी आवाजों को ये पत्थर की दीवारें तक बर्दाश्त नहीं कर पाती हैं।

"गिरिजा देवी, मुसम्मात बिहारीलाल कोई . . . "

कठघरे के भीतर खड़े होने-होते तक गिरिजा देवी की आंखों में बेटे की वही खून में लिथड़ी लाश उभर आयी। बड़े संयम से उन्होंने अपनी आंखों को पोंछा। सामने बढ़ा दी गयी रामायण पर हथेली छुवाई। हिचक उन्हें होती नहीं है। झूठ बोलने की जरूरत ही नहीं है। जो-कुछ कहना है सच-सच ही कहना है।

"तो आपको पूरा-पूरा यकीन है कि आपके बेटे नरेश का कातिल यही सामने खड़ा नौजवान सत्यप्रकाश है... और

आपने अपने पूरे होशोहवास में देखा और पहचाना था कि इसी नौजवान ने अपना छुरा आपके बेटे की छाती में घोंपा था ?"

प्रतिवादी के वकील के सवाल छोटे-छोटे बादलों की तरह उनकी आंखों के सामने इकट्ठा हो रहे हैं और गिरिजा देवी को अपनी जीभ कुछ सूखती हुई-सी लग रही है, "शायद . . ."

"क्या कहा, माता जी, शायद ? . . . यानी कि आप इस बात को पूरे विश्वास के साथ नहीं कह सकती हैं . . ."

"नहीं । मैं पूरे विश्वास के साथ कुछ नहीं कह सकती । कह सकती हूं, तो सिर्फ इतना कि मेरे जवान बेटे की मौत हो गयी । कातिल यह सामने खड़ा बदहवास और डरा हुआ लड़का भी हो सकता था । कोई और भी हो सकता है...शाम के धुंधलके में, जज साहब, किसी को ठीक-ठीक पहचानना हो नहीं पाया था . . ."

एक-एक शब्द कहते हुए उनकी आंखें कठघरे में दूसरी ओर खड़े सत्यप्रकाश के चेहरे पर लगी रही थीं । बढ़ी हुई दाढ़ी में उसका विषादपूर्ण चेहरा कितना करुण लग रहा है ? क्या वह लड़की भी कहीं अदालत में आयी हुई होगी ?

न्यायालय के कमरे में एक सन्नाटा-सा छा गया है, जैसे सारे रोशनदान बंद कर दिये गये हों और दीवारें एक-दूसरे से ऐसे सटा दी गयी हों कि कमरे में गिरिजा देवी के अलावा और कोई नहीं रह गया है । अच्छा ही है । जो-कुछ कहना है, वह अपने भीतर के अंधेरे में से ही संभव है । बाहर से तो बाधा ही पहुंचायी जाएगी । संगमलाल, सक्सेना और अस्थाना साहब वगैरह के चौंकते हुए चेहरों की तरफ से आंखें हटाये बिना तो वह सब संभव ही नहीं था, जो उन्होंने कहा ।

कठघरे से बाहर निकली ही थीं कि संगमलाल ने रोकने की कोशिश की, लेकिन गिरिजा देवी बिना एक क्षण झिझके, बाहर निकल गयीं । अदालत की दीवारों के बीच फिर सन्नाटे के टूटने के बाद का शोर भरने लगा था ।

बाहर पहुंचकर वे सड़क के किनारे खड़ी हो गयी थीं कि कोई रिक्शा देख लें, तब तक हांफते हुए-से संगमलाल आ पहुंचे, "भाभीजी, ये क्या सब गड़बड़ कर दी ?"

गिरिजा देवी ने अपनी भरी-भरी आंखों से उनके बदहवास चेहरे की ओर देखा । एक करुण मुसकुराहट उनके होठों पर खिंचकर, खत्म हो गयी । कहने को हुई कि 'छोटे भैया, छुरा तो पहले हमारे नरेश ने ही निकाला था ? हो सकता है, आज फांसी के कठघरे में वह खड़ा होता ?' लेकिन उन्हें लगा, कुछ भी कहने का इस समय कोई अर्थ नहीं होगा ।

धीमी आवाज में इतना ही बोलीं, "छोटे भैया, हम बहुत थक गये हैं । जी बहुत घबराया-सा लगता है । कोई रिक्शा बुला लो, तो हम घर लौट चलें ।"

—सम्पादक 'विकल्प,' २६१ अ,
मोतीलाल नेहरू नगर, इलाहाबाद–२

प्रगतिशीलता और प्रतिबद्धता

पिछले वर्ष प्रगतिशीलता और प्रतिबद्धता को लेकर पहले बांदा में और फिर भरतपुर में हिंदी लेखक-सम्मेलन आयोजित किये गये। दोनों सम्मेलनों से स्पष्ट हुआ कि एक पक्ष मतवादी आग्रहों को लेकर इन आयोजनों में संलग्न है तो दूसरा पक्ष उन सभी रचनाकारों को, जो प्रगतिशील विचार रखते हैं और मानव-सम्वेदना से जुड़े हैं, साथ लेकर चलने में विश्वास रखता है। इसके लिए पार्टी-स्तर पर सोचने वाले पुराने प्रगतिवादी आग्रहों के पक्षधर लोग नये लेखकों को दल का सदस्य होने की शर्त पर बल दे रहे हैं, और लेखकीय स्वतंत्रता को अनदेखा कर प्रगतिवाद की ऐतिहासिक नियति से कुछ भी सीखना नहीं चाहते।

यदि इसी बात को और अधिक स्पष्ट रूप से रखा जाए तो कहा जा सकता है कि लेखकों के दो पक्ष उभरकर सामने आये हैं——एक वे, जो पहले किसी भी लेखक को साम्यवादी दल का सदस्य बनाकर फिर उसे हिंदी का प्रगतिशील लेखक घोषित करना चाहते हैं। दूसरे क्रम में वे लेखक हैं जो यह कहते हैं कि हर नया साहित्य और नयी विचारधारा प्रगतिशीलता के बिना स्थायी तो नहीं रह सकती, पर इसके लिए जरूरी नहीं है कि किसी राजनीतिक दल का बिल्ला लगाया जाए।

पिछले वर्ष के प्रगतिशील सम्मेलनों से अंततः दूसरे पक्ष की ही विजय हुई है। आज की राजनीति कितनी खोखली और निरर्थक हो गयी है, यह सर्वविदित है। किसी भी भाषा के सर्जक साहित्यकार का किसी भी राजनीतिक दल को स्वीकार करना अवांछनीय है, क्योंकि मजे की बात तो यह है कि प्रगतिशील लेखक घोषित करने के लिए कुछ नये उभरते हुए लेखकों को पहले साम्यवादी दल का सदस्य बनाया गया और फिर उन्हें प्रगतिशील घोषित कर 'एरिया इंचार्ज' का पद दिया गया। हम ऐसे साहित्यकारों की 'अकाल मृत्यु' पर अपनी सम्वेदनाएं प्रकट करते हैं।

लघु पत्रिकाएं और प्रगतिशीलता

पिछले दिनों एक साथ पांच-सात नयी लघु पत्रिकाएं हमारी नजर से गुजरी हैं। हिंदी में प्रगतिशीलता आंदोलन को जितनी नजरों से इन छोटी पत्रिकाओं ने देखा है उनसे यह शब्द ही निरर्थक और निर्जीव अधिक हुआ है। छोटी पत्रिकाओं के संपादक पत्रिकाओं को आत्मप्रचार का माध्यम बनाना छोड़कर साहित्य को सही ढंग से देखने का माध्यम यदि बनायें तो वह दोनों के लिए उपयोगी है। अगली बार हम कुछ लघु पत्रिकाओं में प्रकाशित विचारों के नमूने पाठकों के सामने रखेंगे।

डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी

इस वर्ष का अकादमी पुरस्कार डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी को मिला, इसके लिए हम उन्हें बधाई देते हैं। पुरस्कार घोषित होने के पहले की राजनीति का लेखा-जोखा एक स्वतंत्र लेख का विषय है। पिछले दो दशक तक लगातार लेखकों को पुरस्कार देने वाले हिंदी के विद्वान डॉ. द्विवेदी को स्वयं इस वर्ष अनेक 'भस्मासुरों' का सामना करना पड़ा। पता चला है कि इस पूरे प्रकरण में साहित्य अकादमी के अधिकारियों से लेकर उम्मीदवार साहित्यकारों की दौड़-धूप काफी दिलचस्प पक्ष प्रस्तुत करती है। बहरहाल द्विवेदीजी ने इस पूरे कोहरे से बाहर निकलकर अपनी सामर्थ्य का परिचय एक बार फिर दिया है।
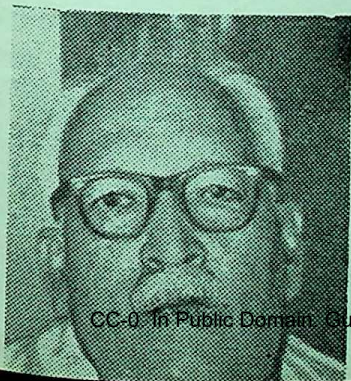
लेखकीय अभिव्यक्ति

दिसंबर में चंडीगढ़ में हुए इतिहास-सम्मेलन ने एक प्रस्ताव में कहा है कि ऐतिहासिक तथ्यों की विभिन्न व्याख्याएं करना लेखकीय स्वतंत्रता के अंतर्गत है।

इस प्रस्ताव का संबंध मराठवाड़ा विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के प्रवक्ता डॉ. पी. वी. रानाडे के शिवाजी विषयक लेख से है।

सम्मेलन का कहना है कि वह लेख में शिवाजी पर लगाये गये आक्षेपों से भले सहमत न हो, पर विश्वविद्यालय ने डॉ. रानाडे को नौकरी से निकालकर जो कार्य किया है वह लेखकीय स्वतंत्रता का हनन है।

इसके पहले पी. एन. ओक और विजय तेंदुलकर पर भी अनेक आक्षेप लगाये जा चुके हैं। यह अधिकार राज्य सरकार का है कि वह लेखक द्वारा प्रकट किये गये तथ्यों का सामना अन्य तर्कों द्वारा करे, न कि उसकी अभिव्यक्ति को कैद करने लग जाए।

• डॉ. दशरथ ओझा

युग-युग से बाल पीढ़ी, युवा पीढ़ी और पुरातन पीढ़ी एकसाथ रहती आ रही हैं। हर युग की हर पीढ़ी में प्रतिभाशाली लेखक साहित्य-सर्जन करते हैं। बाल पीढ़ी युवा लेखकों को अपना पथ-प्रदर्शक मानती है, किंतु युवा पीढ़ी पुरातन पीढ़ी को गयी-बीती समझकर विश्व के युवा साहित्यकारों की ओर आंख गड़ाये देखना चाहती है। विश्व के जिस भू-भाग की युवा पीढ़ी पुरातनता का निर्मोक उधेड़कर नवीनता की खोज में तल्लीन दिखायी देती है,

तीसरा प्रश्न है आस्था और परोक्ष सत्ता में विश्वास का। डॉ. राधाकृष्णन युवा पीढ़ी की मूल प्रवृत्ति का उल्लेख करते हुए लिखते हैं—

"ईश्वर अविश्वसनीय और अनावश्यक है। अगर ईश्वर कुछ है भी, तो एक खतरनाक भ्रम है जो हमें यथार्थों का सामना करने और दायित्वों को निभाने से रोकता है। न तो वह दुःखों से मुक्ति का उपाय है, न ही वह दुःखों की क्षतिपूर्ति करता है। उनसे तो हमें स्वयं ही निबटना चाहिए।"

चौथी मान्यता यह है कि अपने विकास के लिए बौद्धिक विकास आवश्यक है।

रामचरितमानस:

उसी को युवा पीढ़ी अपना आदर्श मानती है। विज्ञान के नित्य नये आविष्कारों से चमत्कृत युवा मस्तिष्क साहित्य में भी चमत्कार पैदा करने को व्याकुल रहता है।

युवा पीढ़ी के प्रगतिशील साहित्यकार की सबसे बड़ी पहचान यह है कि वह यौवन-रस का पूर्ण रूप से उपभोक्ता बनना चाहता है। पुरातन पीढ़ी यौवन के भोग से अतृप्त होकर शांति के लिए कुछ और खोजती है। दूसरा लक्षण यह है कि उसकी पैनी दृष्टि उस दूरागत जीवन-दर्शन की ओर लगी रहती है जो धुंधली दृष्टिवाली पुरानी पीढ़ी को नहीं दिखायी देता।

पुरातन मान्यताएं संशयात्मक हैं, अतः पुरातन के स्थान पर नूतन की स्थापना होनी चाहिए। अरविंद घोष ने भी युवावस्था में 'इन्दु प्रकाश' नामक पत्रिका में गुप्त नाम से 'पुरानों के बजाय नये दीपक' शीर्षक से लेख लिखे थे।

युवा पीढ़ी का पांचवां लक्षण 'ब्रदर कारामाजोव' नामक उपन्यास के नायक पापा कारामाजोव के कथनानुसार यह है कि "जिंदगी की गुत्थी को तुम सुलझा नहीं सकते। इसलिए जिंदगी को स्वीकार करो और जीओ। जब तक दुनिया में एक औंस वोद्का (रूस की शराब) और एक औरत मौजूद है तब तक जिंदगी जीने

युवा पीढ़ी का काव्य

के योग्य है।" जब कामिनी और कादंबरी की मनवांछित प्राप्ति में बाधा पड़ती है और युवक उसमें असफल होने लगता है तब वह मनोविकारों का शिकार होता है।

गोसाईंजी का रामचरितमानस भक्ति-काव्य ही नहीं है, उसमें प्रत्येक परिस्थिति में राजनीतिक और सामाजिक जीवन को परखने की आधुनिक दृष्टि भी है। मानव-जाति ने वैदिक-काल से मुगल-काल तक जीवन की विभिन्न समस्याओं का परीक्षण कर जो सुझाव सामने रखा था उसका निरीक्षण कर तुलसीदासजी ने परिस्थितियों के अनुकूल नया मार्ग निकाला। इन अनेक अनुभवों में तुलसीदासजी का यह विश्वास झलकता है कि नयी पीढ़ी पुरानी पीढ़ी से अधिक समझदार होती है। इसका कारण यह है कि नयी पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी के गुण-अवगुण विवेचन का अवसर सहज ही उपलब्ध होता है। रामचरितमानस में यह सिद्धांत स्थल-स्थल पर प्रतिपादित होता दिखायी पड़ता है। प्रमाण के लिए हिरण्यकशिपु की घटना लीजिए।

तुलसीदासजी प्रारंभ में हिरण्यकशिपु और उसके पुत्र प्रह्लाद की कथा देते हैं। हिरण्यकशिपु इतना अहंकारी था कि सर्व-नियंता को अपने अधीन समझता था। हिरण्याक्ष भी देवताओं का परमशत्रु था। ये दोनों देव-संस्कृति को हिरण्य अर्थात स्वर्ण-बल पर मिटाना चाहते थे। कशिपु का अर्थ है आच्छादन अर्थात स्वर्ण से आच्छादित व्यक्ति, जिसकी बुद्धि को स्वर्ण ने पूर्णतया आच्छादित कर लिया है। कोशकार कहते हैं—'कशिपुर्भोज्य वस्त्रयोः' इसी के आधार पर तुलसीदासजी ने कहा है—'लोभै ओढ़न लोभै डासन।' कशिपु का अर्थ शैया भी है, अर्थात जो स्वर्ण पर ही सोता है वह हिरण्यकशिपु। प्रह्लाद पहले अपने गुरु का विरोध करता है, जो स्वर्ण-संस्कृति के उपासक हिरण्यकशिपु को ही सर्वोच्च घोषित करता है। प्रह्लाद कहता है कि सारे प्राणियों को शक्ति देनेवाली एक परम-शक्ति है जो सबमें व्याप्त है। हिरण्यकशिपु प्रह्लाद को स्वर्ण-स्तंभ में बांधकर अपने अपावन सिद्धांतों को खड्ग की धार पर स्वीकार कराना चाहता है, पर परोक्ष सत्ता सहसा उद्भूत होकर प्रह्लाद की रक्षा करती है। प्रश्न है—वह परोक्ष सत्ता आयी कहां से? खंभे के पीछे से वही जन-शक्ति प्रगट हुई जिसने सिंह का रूप धारण किया। गुप्त जनशक्ति कब, कैसे प्रगट होती है, कौन जानता है! स्वर्ण-संस्कृति के स्थान पर प्रह्लाद की देव-संस्कृति जागी, जिसका प्रतीक राम है। इस प्रकार

प्रह्लाद के माध्यम से युवा पीढ़ी की पुरानी पीढ़ी पर विजय दिखायी गयी है।

दूसरा प्रमाण अयोध्या में मिलता है। राजा दशरथ राक्षसी-शक्ति का दमन करने में असमर्थ हैं। विश्वामित्र जब उन्हें मुनियों की दुर्दशा सुनाते हैं तो वे राक्षसों की प्रबल शक्ति को दबाने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं। चौथेपन तक उनको पुत्र-कामना सता रही है। पुत्रों को पालने में पौढ़ाया। उनकी अभिलाषा पूर्ण हुई, पर राक्षसों के उपद्रव से वे मुनियों की रक्षा न कर सके। चौथेपन में भी युवती कैकेयी की मनुहार में बेसुध राजा को यज्ञ-विध्वंसक राक्षसों से ऋषि-मुनि की रक्षा की सुधि भी नहीं। युवा पीढ़ी ने पिता के अपूर्ण कार्य को पूरा किया। लक्ष्मण युवावस्था में पत्नी को अयोध्या छोड़ राक्षसों के संहार को चल पड़ते हैं। वे आज के नवयुवक की तरह पिता को खरी-खोटी सुनाने में नहीं चूकते। इधर भरत, माता कैकेयी का घोर विरोध करते हैं—

जौं पै कुरुचि रही अति तोही।
जनमत काहे न मारे मोंही॥
पेड़, काटि तैं पालउ सींचा।
मीन जियन, निति बारि उलीचा॥
हंसवंसु, दसरथु जनकु, रामलखन से भाइ।
जननी, तूं जननी भई, बिधि सन कछु न बसाइ॥

ऐसी फटकार वही युवा पीढ़ी दे सकती है जिसमें निष्ठा और जन-कल्याण की भावना होगी।

तीसरा प्रमाण हमें बालि-पुत्र अंगद से मिलता है। बालि अपने अनुज की पत्नी को बलात अपनी प्रेयसी बनाना चाहता है। अंगद और सुग्रीव उसे समझाते हैं, पर वह किसी की नहीं मानता। अंत में राम से मिलकर उसका विध्वंस कराया जाता है। यह भी नयी पीढ़ी का पुरानी पीढ़ी के प्रति विद्रोह है।

चौथा प्रमाण लंका में रावण-पुत्र प्रहस्त के वचनों से मिलता है। विश्व को वशीभूत करके विश्वनियंता को भी तिरस्कृत करने का अभिलाषी रावण मंत्रियों के साथ युद्ध की योजना बनाता है। उसके आतंक से मंत्रिगण भी विरोध करने में असमर्थ हो जाते हैं। तब रावण-पुत्र युवा प्रहस्त विद्रोही बन जाता है। वह हाथ जोड़कर विनम्र भाव से निवेदन करता है। इस पर रावण प्रहस्त पर क्रुद्ध होकर कहता है—

सुत सन कह दसकंठ रिसाई।
असि मति सठ केहि तोहि सिखाई॥

बहुत समझाने पर भी जब रावण नहीं मानता तब कठोर वचनों से भर्त्सना करते हुए प्रहस्त अंदर चला जाता है। यह है युवा पीढ़ी के आक्रोश का प्रमाण।

तुलसीदासजी के शब्दों में—

सुनि पितु गिरा परुष अति घोरा।
चला भवन कहि बचन कठोरा॥
हित मत तोहि न लागत कैसे।
काल बिबस कहुं भेषज जैसे॥

गोस्वामीजी उपर्युक्त उदाहरणों से सिद्ध करना चाहते हैं कि युवा पीढ़ी

नयी रोशनी को पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा दूर से देख लेती है। पुरानी पीढ़ी की धूमिल आंखें क्रमशः अपने ही पास की वस्तुओं को देखने में अभ्यस्त हो जाती हैं। युवावस्था में रचित रामचरितमानस में युवा पीढ़ी की आशा-निराशा, क्षोभ-आक्रोश, पुरातन-नवीन का संघर्ष उसकी एक-एक चौपाई के झरोखे से झांकता दिखायी देता है। किंतु युवा पीढ़ी के इस विरोध और विद्रोह में शालीनता और मृदुता है, उच्छृंखलता तो आस्था थी और न ही पारलौकिकता में उनका विश्वास। आस्था और विश्वास से रहित होकर वे केवल भोगपरायण बन गये थे। परनारी-अपहरण उनकी दृष्टि में कोई जघन्य कार्य नहीं, अपितु शूरता का द्योतक था। मदिरा-सेवन उनका नित्य नियम था। ऐसे राक्षसों में युवा भी हैं। रावण-पुत्र अक्षयकुमार इसी संस्कृति का पोषक है, किंतु अंगद राम द्वारा आने वाले नये प्रकाश को देख रहा है। दोनों युवकों
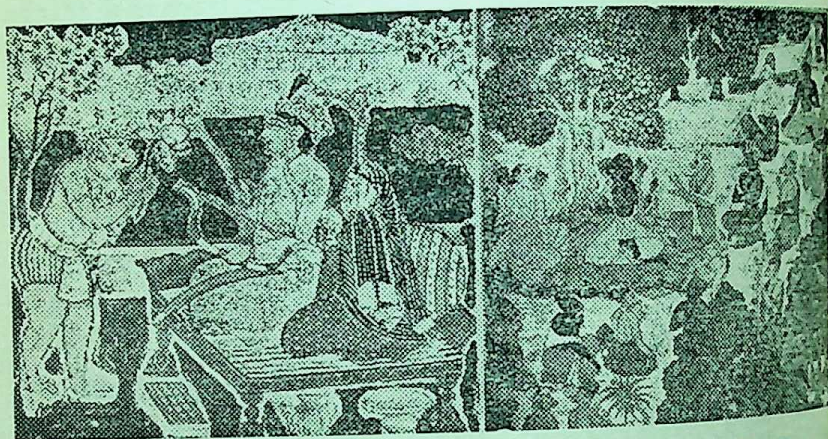
रामचरितमानस की कथा पर आधारित क्रमशः १७ वीं तथा १६ वीं शती के चित्र (भारत-कला-भवन, वाराणसी के सौजन्य से)

और क्रूरता नहीं। युवा पीढ़ी के विद्रोह में भी किसी सीमा तक मर्यादा और संयम है। आक्रोश में मर्यादा का कुछ-कुछ उल्लंघन जहां युवा लक्ष्मण और प्रहस्त में पाया जाता है वहां राम में पूर्ण मर्यादा है।

रही आस्थाओं और विश्वास की बात, सो राक्षसों की किसी भी पराशक्ति में न

का संवाद आधुनिक पीढ़ी के दो विरोधी मतावलंबी युवकों का संवाद प्रतीत होता है।

अंगद का अंतःकरण प्रभु-प्रताप से सशक्त है अतः वह सहज ही निश्शंक होकर लंका में प्रविष्ट होता है, किंतु आस्था और विश्वास के अभाव में अक्षयकुमार को

जीवन का परममोह है, अतः वह शंकालु और भीरु है। अंगद को उस पराशक्ति में इतना विश्वास है कि वह इस कार्य को सिद्ध हुआ मानकर उल्लास के साथ प्रस्थान करते हुए कहता है—

स्वयं सिद्ध सब काज,
नाथ ! मोहिं आदरु दिएउ ।
अस बिचारि जुवराज,
तन पुलकित हरषित हियउ ॥
बंदि चरन, उर धरि प्रभुताई ।
अंगद चलेउ सबहिं सिरु नाई ।

पुर में प्रवेश करते ही अंगद को क्रीड़ारत अक्षयकुमार मिल गया । दोनों में विवाद प्रारंभ हो गया । तुलसीदासजी युवा पीढ़ी के दो विरोधी सिद्धांतों के प्रतिनिधियों की मुठभेड़ का इस प्रकार वर्णन कर रहे हैं—

बातहि बात करष बढ़ि आई ।
जुगल अतुल बल, पुनि तरुनाई ॥
तेहि अंगद—कहुं लात उठाई ।
गहि पद पटकेउ भूमि भवाई ॥

आस्था-विश्वास-रहित युवकों की मनोवृत्ति होती है कि जब प्राणों पर संकट दिखायी देता है तब वे भाग खड़े होते हैं। अक्षयकुमार की मृत्यु से उसके साथियों की भी यही दशा है। नेता की मृत्यु, अनुयायियों की भगदड़ से युवावर्ग में कोलाहल मच जाता है। भविष्य के भय से चिंतित होकर अब युवक जन्मदाता विधाता का स्मरण करते हैं और परस्पर विचार करते हैं कि अब क्या होगा ! तुलसीदासजी लिखते हैं—

अब धौं कहा करिहि करतारा ।
अति सभीत सब करहिं बिचारा ॥
बिनु पूछे मगु देहिं देखाई ।
जेहि बिलोक, सोइ जाइ सुखाई ॥

अब युवा-युवती के प्रेमाकर्षण और टकराव पर भी विचार कर लेना चाहिए क्योंकि आज की युवा पीढ़ी का यह प्रिय विषय है । इस देश के साहित्यकारों ने पुरुष-स्त्री के विविध प्रेम-संबंधों की शताब्दियों से परीक्षा की है। दोनों के यौन-संबंध की कदाचित ही कोई सीढ़ी बची हो जिसको उन्होंने पार न किया हो। आज मुक्त यौन-संबंध की बात को युवा पीढ़ी बहुत बड़ा अनुसंधान समझ रही है। इस संबंध में एक तरुण लेखक का मत है—

"विवाह-जैसी संस्था का खोखला और दिवालिया हो जाना बीसवीं सदी का सबसे बड़ा तमाशा है। कुछ समय पहले इसीलिए ब्रिटेन की संसद ने यह घोषणा की थी कि उन्हें विवाह-जैसी संस्था को तोड़ने में पहल करनी चाहिए। स्वीडन ने मुक्त प्रेम को स्वीकारा है और उससे उद्‌भूत परिणामों को नये समाज के नियमों का अंश माना है। सत्यता के धरातल पर चल रही प्रयोगों की यह प्रक्रिया साहित्य का प्रमुख स्वर बनकर उभरी है। दैहिक संबंधों के साथ सामाजिक संबंधों को जोड़ना शिष्टाचार नहीं माना जा सकता । उसे स्वच्छंद होना चाहिए तथा किसी अन्य शक्ति के हस्तक्षेप से परे होना चाहिए। आज की कहानी ने सेक्स, विवाह और प्रेम—तीनों

को इन्हीं तथ्यों पर स्वीकारा है।" (राजेन्द्र अवस्थी—'सारिका', संपादकीय : "और अंत में")

तुलसीदासजी की दृष्टि से सेक्स, विवाह और प्रेम का उपर्युक्त तथ्य ओझल नहीं था। उन्होंने बालि-पत्नी तारा और सुग्रीव-पत्नी रूपा के माध्यम से इस तथ्य का स्पष्टीकरण कर दिया है। बालि की अनुपस्थिति में सुग्रीव अपनी भाभी तारा का प्रेमी बन जाता है और कंदरा से लौटने पर बालि सुग्रीव को भगाकर उसकी पत्नी का प्रेमी हो जाता है। बालि और सुग्रीव दोनों परदारागामी बनते हैं, पर किष्किंधा में प्रचलित उस काल की प्रथा के अनुसार बालि अनुज-वधू रूपा से प्रेम करने के कारण मारा जाता है किंतु सुग्रीव ज्येष्ठ भ्राता की पत्नी, अर्थात भाभी का प्रेमी होने के कारण क्षम्य माना जाता है।

अनुज-बधू भगिनी सुतनारी ।
सुनु सठ ! कन्या सम ये चारी ।
इर्नाहि कुदृष्टि विलोकइ जोई ।
तांहि बधे कछु पाप न होई ।।

अनुज-बधू से प्रेम पर आपत्ति क्यों ? उत्तर यह है कि सामाजिक बंधन की रस्सी का निर्माण केवल तर्क के सूक्ष्म सूत्रों से नहीं होता, अन्यथा अपने लगाये वृक्ष के फल खाने में दोष क्यों होना चाहिए ? फिर अपनी युवा-पुत्री से वासना-संबंध जोड़ने में क्या दोष ? प्रत्येक समाज को सुचारू रूप से संचलित होने के लिए कुछ-न-कुछ नियम बनाने पड़ते हैं, अन्यथा वर्ण-संकरता और तलाक की विभीषिका स्वच्छंद विचरण करती हुई ताड़का और शूर्पणखा के समान विचारकों और साहित्यकारों को ही निगल जाती है।

मुक्त प्रेम की एक प्रसिद्ध घटना तुलसीदासजी ने अहल्या के रूप में ग्रहण की है। गौतम मुनि के साथ दिन-रात संयम-नियम में वंधी युवती विश्वसुंदरी अहल्या अपने सौंदर्य से इंद्र को मोहित कर लेती है। अहल्या पति-परित्यक्ता बनती है। वह प्रायश्चित की आग में तपते-तपते राख का ढेर बन जाती है। वह भस्म-राशि घनीभूत होकर प्रस्तर की तरह जड़ बन जाती है। भगवान के अतिरिक्त अहल्या को कोई अन्य रक्षक सूझता ही नहीं, अतः वह युग-युग तक भगवान का स्मरण करती है और अंत में पतितपावन भगवान उसकी पवित्रात्मा को पहचान जाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि रामचरित-मानस तुलसीदासजी की युवावस्था की रचना होने के कारण युवा पीढ़ी की समस्त भावनाओं को अभिव्यक्त करने में समर्थ सिद्ध होता है।

—२ रामकिशोर रोड,
सिविल लाइन, दिल्ली

न्यूयार्क के एक जूते की दूकान में एक साइनबोर्ड टंगा है—"जो स्त्रियां दूकान में प्रवेश करने के बाद दस मिनट के अंदर ही जूते पसंद कर लेंगी, उन्हें दस प्रतिशत कमीशन मिलेगा।"

बुद्धि-विलास

१. कुछ डाकुओं ने एक राजा के महल पर हल्ला बोला । साथियों से अगर चूक हो जाती थी, तो तुरंत सरदार उसे गोली मार देता था । महल के सदर फाटक से चलकर सात दरवाजे थे । सरदार ने हुक्म दिया कि सब सात बराबर-बराबर टोलियां बनाकर हर दरवाजे पर खड़े हो जाओ और हवा में बंदूकों की बाढ़ें दागो, जिससे लगे कि बड़ी सेना चढ़ आयी है । डाकुओं ने ऐसा ही किया । महल के भीतरी भाग में आगे चलकर पांच दरवाजे आये । यहां पांच बराबर-बराबर टोलियां बनाकर पांचों दरवाजों पर बंदूकों की बाढ़ें दागी गयीं । अब तीन दरवाज़े पार करने थे । यहां भी बराबर-बराबर टोलियां बनायी गयीं । बताइए, कुल कितने डाकू थे ?

२. दो मित्रों ने तेल के व्यापार का निश्चय किया । दोनों ने आधे-आधे रुपये डाले और आठ मन तेल से लबालब भरा एक पीपा खरीद लिया । साथ ही दो खाली पीपे भी खरीदे—एक तीन मन का, दूसरा पांच मन का । चौथा बर्तन उनके पास नहीं था । इन्हीं तीनों पीपों को साथ लेकर दोनों व्यापार करने निकल पड़े । अभी आधे रास्ते में ही पहुंचे थे कि किसी बात पर दोनों मित्रों में झगड़ा हो गया । तेल बांटने की भी नौबत आ गयी । मगर कोई तराजू नहीं, कोई बांट नहीं, सिर्फ तीन पीपे । बताइए, आधा-आधा तेल बांटें तो कैसे ?

३. पांच भाई नौकरी की तलाश में फलों के एक व्यापारी के पास पहुंचे । व्यापारी ने परीक्षा लेने के लिए सबसे बड़े भाई को १००, उससे छोटे को

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए, और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए । उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे । यदि आप सभी प्रश्नों का सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प ।

—सम्पादक

८०, मझंले को ६०, उससे छोटे को ४० और सबसे छोटे को २० आम देकर कहा, "जाओ, इन्हें बाजार में बेच आओ, मगर शर्त यह है कि तुम सब समान भाव से आम बेचना और बराबर-बराबर पैसे ही लाना।"

क्या आप इन पांचों भाईयों को सलाह दे सकते हैं ?

४. पौधों के इन समूहों में से किसमें क्लोरोफिल नहीं होता है—बैक्टीरिया, एलेजी, फफूंदी, जिम्नोस्पर्म्स, एन्जिओस्पर्म्स?

५. आण्विक भार का आधुनिक मान क्या है—H, O, C^{12}?

६. 'इंटरपोल' क्या है ?

७. 'ट्राकोमा' और 'ग्लाकोमा' किसे कहते है ?

८. एक सायकिल सवार एक दिशा में दो मील चला, बायें मुड़ा और एक मील तय किया, दाहिने मुड़ा और एक मील फिर तय किया। इसके बाद वह फिर दाहिने मुड़ा और पांच मील चला। बताइए, जिस स्थान से वह चला था, वहां से अब कितना दूर है ?

९. अक्तूबर, नवंबर और दिसंबर में ऐसा क्या अंतर है जो अगस्त और जुलाई में कभी नहीं होता ?

१०. इस वर्ष 'डेविस कप' टूर्नामेंट में कौन सा देश विजयी रहा ?—इंगलैंड, अमरीका, आस्ट्रेलिया, जरमनी ?

११. एक व्यक्ति के कितने जन्मदिन होते हैं ?

१२. कुछ महीनों में ३१ दिन होते हैं तो कुछ में ३० दिन; बताइए २८ दिन कितने महीनों में होते हैं ?

१३. तीन सेबों में से दो सेब ले लीजिए, आपके पास कितने रहे ?

१४. ऊपर के चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या आकृति है ?

श्रीजी दफ्तर में आकर सीट पर बैठे ही थे कि एक बातूनी व्यक्ति उनके पास आ बैठा और बातें करने लगा। जब बहुत देर हो गयी तब श्रीजी ने खीझकर उससे पूछा, "यहां से उठने का आप क्या लेंगे ?"

"एक रुपया," उसने तपाक से कहा और चंदे की रसीदबुक आगे कर दी।

अब रूस में अ-पारिवारिक क्रांति हुई

• वीरेन्द्र सक्सेना

सन १९१९ में रूस में यह घोषणा की गयी थी कि 'परिवार की उपयोगिता, उसके सदस्यों और राज्य दोनों के लिए समाप्त हो चुकी है, अतः इस पुरानी परंपरा को निबाहने का अब कोई अर्थ नहीं रह गया है । समानता के आधार पर कोई भी पुरुष किसी भी स्त्री से संबंध रख सकता है ।' इससे पहले १९१७ में तलाक के कानून को बहुत आसान किया जा चुका था । कोई भी विवाहित स्त्री या पुरुष बिना कोई कारण बताये तलाक बहुत आसानी से प्राप्त कर सकता था ।

पारिवारिक विघटन के कार्य में और अधिक तीव्रता लाने के उद्देश्य से पैतृक संपत्ति के अधिकार को समाप्त कर सरकारी अस्पतालों में गर्भपात के लिए भी सुविधाएं दी जाने लगीं और 'अपंजीकृत दांपत्य' भी उतना ही मान्य हो गया जितना 'पंजीकृत विवाह' ।

परिवार समाप्त करने की दिशा में जो अन्य प्रयत्न किये गये, उनमें बच्चों को माता-पिता के विरुद्ध शिक्षा देना तथा पति-पत्नी को अलग-अलग स्थानों पर नौकरियां देना प्रमुख थे । एक अध्यापिका ने जब शिकायत की कि उसे अपने पति से दूर रहने को मजबूर होना पड़ रहा है क्योंकि उसकी नियुक्ति अन्य स्थान पर हुई है, तो 'बोर्ड' ने कहा कि वह चाहे तो नये स्थान पर नया पति चुन सकती है !

उपर्युक्त कानूनों और उपायों के परिणामस्वरूप १९३० तक परिवार काफी बड़ी संख्या में विघटित हो चुके थे और पारिवारिक परंपराएं नष्ट-भ्रष्ट हो गयी थीं । लेकिन तभी विषम स्थितियां सामने आने लगीं ।

तलाक एवं गर्भपात की सुविधाओं का बहुत दुरुपयोग किया गया और इससे जन्म-दर में कमी हो गयी । १९३७ के आंकड़ों के अनुसार (जबकि स्थिति कुछ सुधरना शुरू हो गयी थी) रूस की जनसंख्या पूर्वानुमान की अपेक्षा एक करोड़ तीस लाख कम थी । १९३४

में मास्को में ५७,००० बच्चे उत्पन्न हुए, पर १,५४,००० गर्भपात कराये गये। जनसंख्या में यह कमी बहुत कुछ गर्भपातों की वृद्धि के कारण ही होगी। दूसरे, तलाकों में वृद्धि भी जन्म-दर में कमी ला देती है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि १९३५ में १०० विवाहों के पिछे ३८ तलाक हुए।

अराजकता और नारी का शोषण

परिवारों के वहां छिन्न-भिन्न होजाने का सबसे बुरा प्रभाव माता-पिता और संतान के पारस्परिक संबंधों पर पड़ा। बाल-अपराधों की संख्या में अचानक बढ़ोतरी होने लगी। गाड़ियों में या अन्य स्थानों पर उद्दंड छात्रों के झुंड यात्रियों से उलझते, लड़कियों को छेड़ते या अश्लील गीत गाते देखे जाते और यदि कोई उन्हें टोकने का साहस करता तो वे उसी को अपमानित कर देते।

अंततः 'सेक्स' की स्वतंत्रता के आकर्षक नारे से अधिकांश नारियों को लाभ के बजाय हानि अधिक हुई। बहुत-से 'अवैध' बच्चे भी पैदा हुए, जिनके माता-पिता उन्हें अपनाने को तैयार नहीं थे। स्थिति इतनी बेकाबू होने लगी कि सरकार को इन समस्याओं से निबटने के लिए अनेक उपायों का सहारा लेना पड़ा।

समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओं में अब यह बताने की कोशिश की गयी कि विवाह को पूरी गंभीरता से लेना चाहिए। जनक्रांति से परिवार नष्ट होने की बात सोचना गलत है। परिवार वस्तुतः समाजवादी समाज के सामाजिक संबंधों का ही प्रतिरूप है। तलाक की सुविधा का अर्थ स्वच्छंद सेक्स-संबंध की सुविधा नहीं है। अखबारों में तत्संबंधी अनेक घटनाओं पर टिप्पणियां प्रकाशित की जाने लगीं। 'प्रावदा' में प्रकाशित एक घटना का विवरण उदाहरणार्थ प्रस्तुत है-

इंजीनियर 'क' ने एक लड़की को शादी का वचन दिया और दोस्ती गांठ ली। कुछ समय बाद जब लड़की गर्भवती हो गयी तब उसने इंजीनियर को अपने वचन की याद दिलायी। इंजीनियर का उत्तर था, "तुम मेरे जीवन में सातवीं लड़की हो जिसे इस प्रकार के अनुभव से गुजरना पड़ा है। मेरे पास एक अन्य लड़की का भी पत्र आया हुआ है जो तुम्हारी ही तरह मेरे बच्चे को धारण किये है। बताओ क्या मैं दोनों से विवाह करूंगा?" लड़की जब विवाह पर अड़ी रही तो इंजीनियर ने कहा, 'चाहो तो गर्भपात करा लो और उसके लिए धन मुझसे ले जाओ।"

'प्रावदा' ने घटना पर यों टिप्पणी की- "इस प्रकार के व्यक्ति पर धोखेबाजी का मुकदमा चलाया जाना चाहिए और उसे ऐसी सख्त सजा दी जानी चाहिए जिससे दूसरों को भी शिक्षा मिल सके।"

विवाह पद्धति को आकर्षक बनाया जाने लगा

पंजीकरण-कार्यालय विवाह के महत्त्व पर जोर देने लगे और पंजीकरण-सर्टिफिकेट सुंदर कागज पर कलात्मक ढंग से छापा

जाने लगा। विवाह के अवसर पर परंपरागत-कार्यक्रमों एवं प्रीतिभोजों का भी आयोजन होने लगा। दूकानों पर शादी की अंगूठियां भी फिर से बिकने लगीं और उन्हें 'धार्मिक विश्वास' के साथ पहना-पहनाया जाने लगा।

तलाक की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाये जाने लगे। तलाक लेने के लिए पति-पत्नी दोनों की उपस्थिति अनिवार्य कर दी गयी। प्रत्येक व्यक्ति के परिचय-पत्र पासपोर्ट आदि में उसके तलाकों का भी उल्लेख होने लगा था।

तलाक के समय दी जाने वाली फीस जो पहले मात्र तीन रूबल थी, बढ़ाकर प्रथम तलाक के लिए ५०, दूसरे के लिए १५० तथा तीसरे या बाद के तलाकों के लिए ३०० रूबल कर दी गयी। परिणामस्वरूप एक ही वर्ष के अंदर तलाकों की संख्या पहले की अपेक्षा दोतिहाई घट गयी।

१९४४ में एक और कानून बना, जिसके अनुसार तलाक तभी मिल सकता था जब उसके लिए पर्याप्त और गंभीर कारण हो। छोटी अदालत के बाद प्रायः बड़ी अदालत में भी मुकदमा चलता था और इसमें समय काफी लग जाता था। तलाक की फीस अब २,००० रूबल कर दी गयी थी।

इस कानून के आधार पर ही 'अपंजीकृत दांपत्य' को दी गयी मान्यता समाप्त कर दी गयी और पंजीकृत विवाहों को ही वैध विवाह स्वीकार किया गया। इसी आधार पर वैध संतान और अवैध संतान में भी फिर से भेद शुरू हो गया।

गर्भपात संबंधी कानून में भी सख्ती बरती जाने लगी और १९३५ में ही इसके विरुद्ध जमकर प्रचार कार्य शुरू हुआ। स्तालिन की दुहाई दी गयी कि वे रूस के नारीत्व की सफलता सफल मातृत्व में देखते हैं। बिना उचित कारण के गर्भपात को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया।

माता-पिता और संतान के पारस्परिक संबंधों को सुधारने के भी प्रयत्न किये जाने लगे। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से 'उच्च आदर्शों' का प्रचार किया गया। १९३५ में स्वयं स्तालिन एक उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए अपनी मां से मिलने गांव में गये और इसकी रिपोर्ट पूरे विवरण के साथ अखबारों में छपी।

१९४५ में संपत्ति के उत्तराधिकार-कानून में भी परिवर्तन किया गया तथा व्यक्ति को यह स्वतंत्रता प्रदान की गयी कि वह संपत्ति का काफी भाग अपनी इच्छा से अपने परिवार के सदस्यों में वितरित कर सकता है। इस कानून का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा और रूस के निवासी पुनः परिवार के महत्त्व को समझने लगे।

——डब्ल्यू जेड-४३३/४६१, शिवनगर,
नयी दिल्ली-११००१८

हंसिकाएं

राजू सबसे बेवकूफ लड़का माना जाता था और महल्लेवाले उसे हमेशा बनाने में लगे रहते थे। उनका सबसे बड़ा मनोरंजन इसमें होता कि वे राजू को एक पैसे का सिक्का और एक पांच पैसे का सिक्का दिखाते और कहते कि इनमें से कोई एक ले लो। राजू हमेशा एक पैसे का सिक्का ही लेता। एक बार एक बाहर का व्यक्ति भी यह तमाशा देख रहा था। उसने राजू से पूछा, "अरे लड़के, तुम पांच पैसे का सिक्का क्यों नहीं लेते हो? क्या तुम एक और पांच का फर्क भी नहीं समझते?"

"फर्क तो समझता हूं, लेकिन मैं पांच पैसे का सिक्का उठाने लगूं तो लोग कुछ दिनों बाद मुझे एक पैसे का सिक्का देना भी बंद कर देंगे," राजू ने जवाब दिया।

★

एक अधेड़ स्त्री एक सौंदर्य-विशेषज्ञ के पास पहुंची और बोली, "मेरा चेहरा सुंदर बना दीजिए, और हां, इसकी क्या फीस होगी?"

"पांच हजार रुपये!" डॉक्टर ने जवाब दिया।

"यह तो बहुत ज्यादा है। क्या कोई सस्ता उपाय नहीं है?"

"क्यों नहीं है! आप घूंघट काढ़ना शुरू कर दीजिए।"

★

कार तेज चलाने के अभियोग में दो जजों का चालान हुआ। दोनों को एक ही दिन अदालत में हाजिर होना था। जब दोनों अदालत में पहुंचे तो संयोग से वहां मजिस्ट्रेट साहब नहीं आये थे। दोनों ने आपस में सलाह की कि इंसाफ से मुंह न मोड़ना चाहिए और बारी-बारी से अपना केस स्वयं निपटा लेना चाहिए। पहले जज ने कुरसी संभाली और दूसरे से पूछा, "तुम्हारा कार तेज चलाने के आरोप में चालान किया गया है। अपनी सफाई में कुछ कहना चाहते हो?"

अभियुक्त जज ने सिर झुकाकर कहा, "हुजूर, मैं कसूरवार हूं। मुझे कुछ नहीं कहना है।"

"अच्छा, मैं तुम्हें पांच रुपये जुर्माना करता हूं।"

इसके बाद दोनों ने जगह बदल ली। पहले जज से जब पूछा गया तो उसने भी अपराध स्वीकार कर लिया। दूसरे जज ने क्षण भर सोचा फिर बोला, "मेरा विचार है कि ऐसे केस अब बहुत होने लगे हैं। सुबह से यह दूसरा मुजरिम पेश किया

गया है । मैं तुम पर पचास रुपये जुर्माना डालता हूं, ताकि दूसरों को शिक्षा मिले ।"

*

एक साइंस कालेज के कुछ छात्रों ने 'नारी' की रासायनिक व्याख्या कुछ इस प्रकार की—

"मानव-जाति की एक सदस्या रूप में परिचित, कभी-कभी ही अपनी प्राकृतिक अवस्था में प्राप्त, चमड़ी रंगों से पुती। तापमान अनिश्चित, कभी गरम, कभी सर्द । अत्यधिक विस्फोटक । मुख्यतः अलंकृता । पुरुष को मार्गच्युत करने की संभवतः सबसे बड़ी शक्ति । एक से अधिक रखना अवैध ।"

★

मैनेजर ने एकाउंट-क्लर्क को बुलाकर घूरते हुए कहा, "देखो, हमारे आफिस में ९८७ व्यक्ति काम करते हैं और इनमें से प्रत्येक को यह मालूम हो चुका है कि परसों तुम्हारे यहां लड़के का जन्म हुआ है । इसलिए मैं तुम्हें आज से विज्ञापन-विभाग में स्थानांतरित करता हूं ।"

★

न्यायाधीश ने पूछा, "इस व्यक्ति पर क्या आरोप है ?"

"यह एक लड़की को भगा ले गया था," सरकारी वकील ने बताया ।

"हुजूर, मैं सिर्फ सायकिल चोर हूं। मैं जल्दी कर गया, वह साइकिल से उतर नहीं पायी थी, तभी..." अभियुक्त ने सफाई दी ।

हंसिकाएं : काव्य में

आदेश

जनता की शिकायतों से
तंग आकर
उन्होंने कुछ व्यक्ति भिजवाये
ताकि अंधेरी गलियों में जाकर
फ्यूज बल्ब टांग आयें

उलाहना

चुटकी भर सिंदूर से (उनकी)
मांग भरकर उन्होंने पूछा यों—
तुम्हारी हरदम नयी मांग आखिर
होती है क्यों ?

फेर

रहिमन चुप ह्वै बैठिए
देखि दिनन को फेर
जब नीके दिन आइहैं
लीजै आंखें फेर

धूप

धुंध की मोटी चादर
धूप की धुनकी
बैठ जुलाहिन
उजियारे बुनती

भेंट

हकलाकर कहते थे बारबार
प्रजातंत्र ने दिये हमें
समानाधिकार
सम्मान-धिक्कार

• सरोजनी प्रीतम

कुहरे में लिपटा शहर

ठंडे रेत से भीगी हवाएं उड़ रहीं चुपचाप
लपेटे शाल कुहरे का दुबककर सो रहा आकाश
समुंदर कर गयी नीला
छुअन पीली हथेली की
जले बेतार बल्बों से सितारे टूटकर झरते
चमकता अंजुली के बीच
पीले फूल का दोना

तुम्हारी ओस से भीगी चमकती सीपियों-सी देह
तरल ही गंध ज्यों पाकर गमक मधुमास आने की
अलस पलकें कि ज्यों सोकर उठा निर्दोष मृगछौना
तुम्हारी आंख की लाली—अधर ज्यों हों गुलाबी
प्रथम चुंबन की लिखाई से;
तुम्हारा वक्ष–ज्यों रस हो गया हो हिम
पिघल महके गुलाबों का
चमकता दांत अधरों बीच
ज्यों क्वांरी सीप का बच्चा छिपा हो लाल फूलों में
छुऊं कैसे तुम्हें ओ मोमिया खरगोश की बच्ची
पिघल जाओ न हाथों में

सहज आवेग की कंपन कि बिंबातीत हो तुम
सड़े युगबोध की चिकनी सतह से दूर हो तुम
हो थकन के बाद के आराम की-सी नींद
जो सहज ही आंख को मद में डुबा दे
व्यस्तताओं के मेरी ओ दूबिया विश्राम
आ तुझे जेबों में भर लूं
आ तुझे मयूरपंख-सा कापी में सहेज लूं
आ तुझे परसूं मैं अपनी आंख का आकाश
उड़ो मेरे हंस—और ऊंचे, और ऊंचे . . .

—नचिकेता

—४६४३, गली पासबान, बल्लीमारान, दिल्ली-११०००६

छाया० प्रेम कपूर

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला] के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी, भगवतीचरण वर्मा एवं हजारीप्रसाद द्विवेदी पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं उपेन्द्रनाथ अश्क

उनका गुजर जाना मेरा रोमांचित होना

उपेन्द्रनाथ 'अश्क'
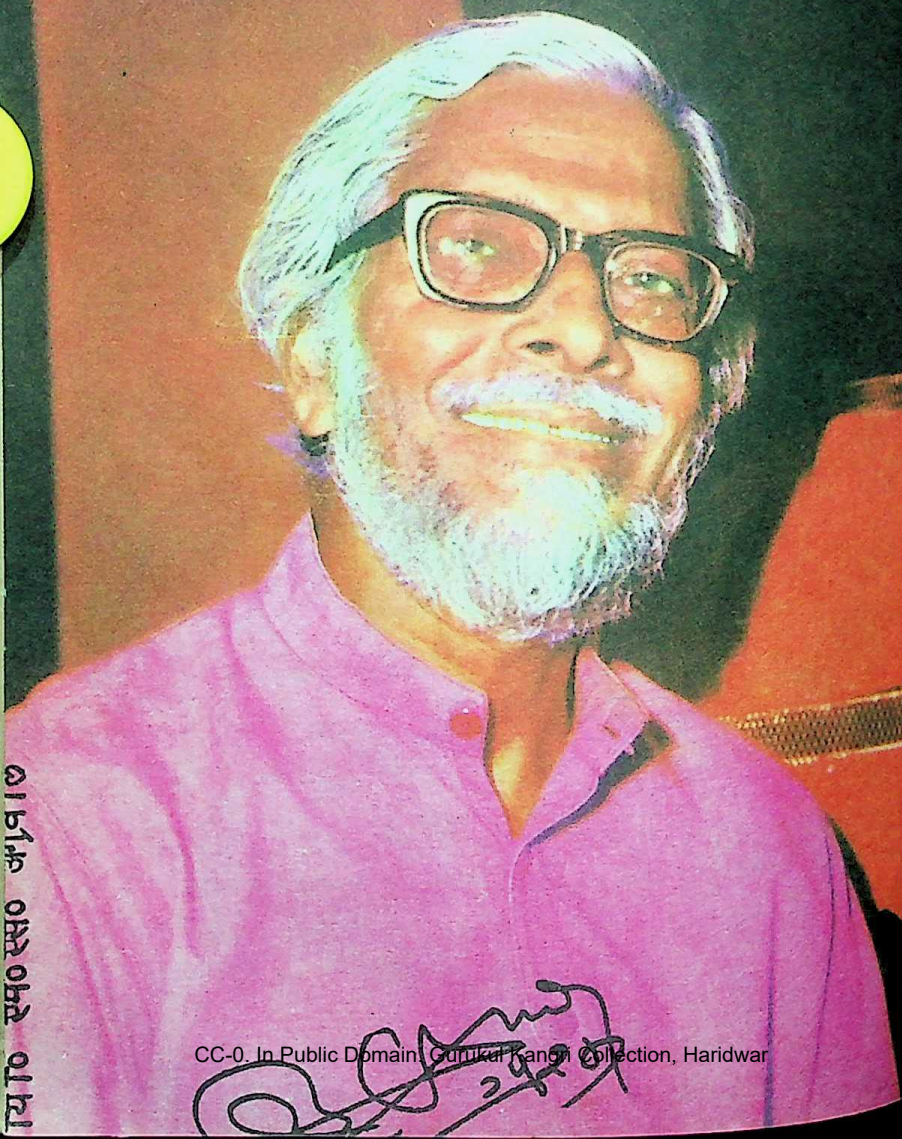
परशुराम तिवारी मन्धना, नागपुर : आपके 'अश्क' नाम रखने का क्या राज है ?

आप किसी अच्छे पुस्तकाल में जाकर मेरे कथा-संग्रह 'काले साहब' में 'कश्मीरी-लाल अश्क' नाम का संस्मरण पढ़िए। मैंने उसमें इस प्रश्न का सविस्तार उत्तर दिया है। वह पुस्तक उपलब्ध न हो तो मेरे उपन्यास 'एक नन्हीं किन्दील' का बीसवां परिच्छेद देखिए। जिन कारणों से उपन्यास का नायक अपना उपनाम बदलकर 'दाग' रख लेता है, लगभग उन्हीं कारणों से मैंने अपना उपनाम 'शनावर' छोड़कर 'अश्क' रख लिया था।

धर्मेन्द्र गुप्त, नयी दिल्ली : मैंने अकसर टी-हाउस और काफी-हाउस में सुना है कि हिंदी साहित्य में बहुपत्नीत्ववाद तथा बहु-प्रेमिकावाद आपसे शुरू हुआ है। आप स्वयं को काफी 'बोल्ड' घोषित करते रहे हैं, अतः इस संदर्भ में आपकी स्वीकारोक्ति क्या है ?

भाई, मैं तो अपने से पूर्ववर्ती साहित्य-कारों के जीवन से परिचित नहीं और नहीं जानता कि मुझसे पहले कितने लोगों ने एकाधिक विवाह किये हैं अथवा एकाधिक प्रेमिकाओं के सहयोग या वियोग का सुख पाया है। यदि आप उपन्यास, नाटक, कहानी अथवा संस्मरण के क्षेत्र में मेरी कोई गुरुआई नहीं मानना चाहते और मुझे इसी क्षेत्र में गुरु होने का श्रेय देना चाहते हैं तो मैं इस गौरव को सधन्यवाद स्वीकार कर लेता हूं। जब साहित्य के बदले लेखक के व्यक्तिगत जीवन में ही साथियों की रुचि हो तो दूसरा कोई चारा भी नहीं। (लेकिन आप अज्ञेयजी से पूछ लीजिए, उनकी गद्दी न छिन रही हो ! वाद-आद चलाने का उन्हें बहुत शौक है,

प्रेम के नाटक भी उन्होंने बहुत किये हैं, वे नाराज न हो जाएं !)

वीरेन्द्रकुमार बरेली : (क) आपकी लेखन-प्रक्रिया क्या है ? (ख) क्या आप नियमित रूप से निश्चित अवधि का कार्य-क्रम बनाकर लिखते हैं ? (ग) क्या आप कथानक-संबंधी नोट लेते हैं, या लिखते समय ही पात्रों और घटनाओं का स्वरूप निर्धारित करते जाते हैं ?

(क) मेरी हर रचना छपने से पूर्व तीन-चार (और कई बार उससे भी ज्यादा) बार, मेरी आंखों के आगे से गुजरती है। दो बार हाथ से लिखता हूं, फिर दो-तीन बार टंकित प्रतियों में संशोधन, परिवर्तन या परिवर्धन करता हूं। (ख) मैं प्रायः सुबह सवा छह बजे उठता हूं। एक-डेढ़ प्याला चाय लेकर नित्य कर्म से निबट, फरवरी से अक्तूबर तक, आध-पौन घंटा कसरत करता हूं (पहले सर्दियों में भी करता था, अब नहीं करता और अपने कमरे के सामने बरामदे में घूमता हूं।) दस बजे के बाद नाश्ता करता हूं। फिर मेज पर बैठ जाता हूं और एक-डेढ़ बजे तक काम करता हूं, दो बजे खाना खाकर एक-डेढ़ घंटा सोता हूं। फिर चाय पीकर पांच बजे पुनः मेज पर बैठ जाता हूं और रात के बारह बजे तक काम करता हूं (इस दौरान कभी रात का खाना खाने से पहले और कभी बाद, समय हो तो एक आध घंटा घूमता हूं।) इधर वर्षों से मेरा काम का यही क्रम है। (रात को—विशेषकर सर्दियों में—मुझे सांस की तकलीफ हो जाती है, तब दो-तीन बजे बिस्तर पर लेटकर खांसने-कांखने के बजाय मैं मेज पर आ बैठता हूं और जब तक तबीयत नहीं संभलती काम करता हूं।) (ग) नहीं, मैं कोई नोट-वोट नहीं लेता। मेरी याददाश्त बहुत तेज है। मेरा अत्यंत क्रियाशील दिमाग अपनी रचनाओं पर निरंतर सोचता रहता है। इसी क्रम में घटनाएं और पात्र रूप धरते रहते हैं।

गोविन्दसिंह नेगी, पिथौरागढ़ : आप किसी जबरदस्त 'फ्रस्ट्रेशन' के शिकार हुए हैं कभी ?

जरूर हुआ हूं। यदि मैं अपना वृहद उपन्यास 'गिरती दीवारें', उसके पांचों भागों में, कमी पूर कर पाया और आप उसे कभी पढ़ पाये तो आप जान लेंगे कि वह 'फ्रस्ट्रेशन' कैसा था; क्योंकि उपन्यास के नायक के माध्यम से मैंने उसी 'फ्रस्ट्रेशन' का सांगोपांग चित्रण किया है। यूं उपन्यास उपन्यास है, मेरी जीवनी नहीं, लेकिन नायक के 'फ्रस्ट्रेशन' में मेरा 'फ्रस्ट्रेशन' भी शामिल है।

राजकमल, रायबरेली : अपने समूचे लेखन को लेकर हिंदी साहित्य की किस भाव-भूमि पर आप अपने को —अपनी नजर में ही—पाते हैं ?

भाव-भूमि से आपका क्या अभिप्राय है, मैं समझ नहीं पाया। हिंदी साहित्य में कितनी भाव-भूमियां हैं और कौन-लेखक किस भाव-भूमि पर खड़ा है, यह

मैं नहीं जानता। मेरे साहित्य के बारे में इसका निर्णय समीक्षक ही दे सकते हैं। अभी तो मैं इलाहाबाद की पुण्य-भूमि में अवस्थित हूं, जहां के गुटबाज साहित्यक पंडे, (जिनमें कुछ की शक्ल गुंडों-की-सी है) हर पांचवें-छठवें साल गुट बनाकर मुझे उखाड़ने के पीछे पड़ जाते हैं, लेकिन चूंकि विरसे में मुझे भी थोड़ी-सी गुंडई और गुंडों से निवटने के तमाम गुर मिले हैं इसलिए वे मेरा कुछ विगाड़ नहीं सकते।

पर आप कलम रोक देते हैं या लिखते ही जाते हैं ?

जरूर ऐसा हुआ है। प्रायः हुआ है। मैं ऐसे में हाथ रोक देता हूं और विधा बदल लेता हूं। दूसरी चीज लिखते हुए पहली रचना के बारे में भी दिमाग सोचता रहता है। जब बाधा दूर हो जाती है (और प्रायः ऐसे में हो जाती है) फिर पहली रचना को हाथ लगा देता हूं और जो मैं कहना चाहता था, उसे कहने में सफल
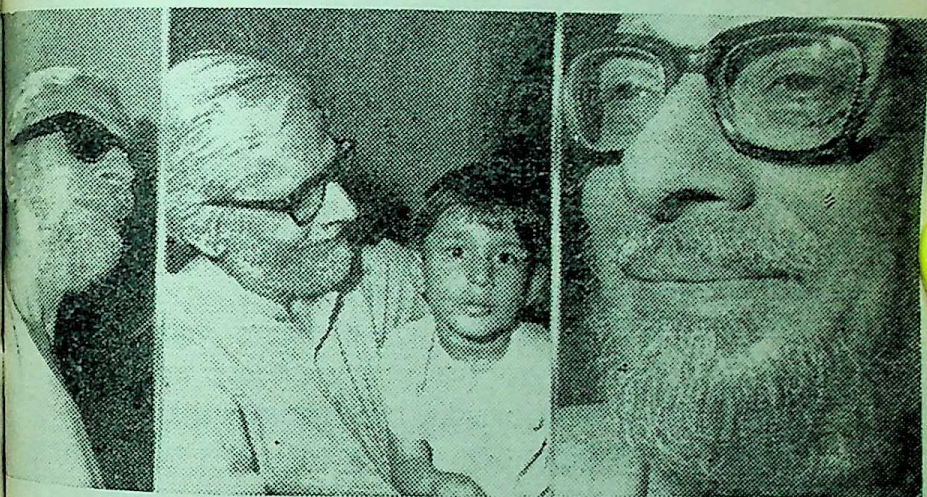
बायें से उपेन्द्रनाथ अश्क : ऊपर नहीं सीधे देखिए, अश्क का बालक-प्रेम, एक हसीन चेहरा

'बोर' होकर उन्होंने मुझे 'इग्नोर' करने का फैसला कर लिया है।—इसी स्थिति में से आप कोई भाव-भूमि खोज निकालिए।

रामनिवास शर्मा, चंदौसी : अपने लेखन में कभी आपको यह महसूस हुआ है कि आप जो कहना चाहते हैं वह 'कन्वे' नहीं हो पा रहा है ? ऐसा महसूस होने

भी हो जाता हूं।

लोकेशकुमार, मौजपुर, दिल्ली । 'बरगद की बेटी' आपकी सशक्त काव्य-कृति है। आपने अपने उपन्यासों या नाटकों में भी इतनी सफलता से जनवादी भावनाओं का चित्रण क्यों नहीं किया ?

मैंने तो किया है, आपने देखा नहीं

होगा, क्योंकि मैं खुद संघर्षरत जनता में हूं और उसी के बारे में लिखता हूं, इसलिए मैं अपने सारे साहित्य को जनवादी समझता हूं। यदि जनवादी साहित्य से आपका मतलब उस साहित्य से हो जिस पर पार्टी की मुहर लगी हो और जो केवल किसान-मजदूर को लेकर लिखा गया हो तो शायद मेरी रचनाएं वैसी न उतरें। तो भी 'बरगद की बेटी'-जैसी बहुत-सी रचनाएं आपको मेरे साहित्य में मिल जाएंगी। सूची दूंगा तो बहुत लंबी हो जाएगी। संक्षेप में—क्या आपने मेरा खंड-काव्य 'चांदनी रात और अजगर', कविता 'बकरोटे की ढलान पर', एकांकी 'देवताओं की छाया में', उपन्यास 'पत्थर-अलपत्थर' और कहानियां 'डाची' तथा 'कांकड़ा का तेली' पढ़ी हैं? मेरे वृहद उपन्यास में भी अनेक ऐसे स्थल मिल जाएंगे जो आपकी ही दी गयी परिभाषा के अनुसार जनवादी हैं। लेकिन यह भी सच है कि पार्टी के लेखकों या आलोचकों को ये कृतियां दिखायी जाएंगी तो वे उनको भी जन-विरोधी घोषित कर देंगे — किसी रचना को जनवादी अथवा जन-विरोधी घोषित करना उनके बायें हाथ का खेल है। डॉ. रामविलास शर्मा बहुत दिनों तक यही करतब दिखाते रहे हैं।

स्वामीशरण, मौजपुर, दिल्ली : आप फिल्मों में थे, फिर अचानक पलायन क्यों कर बैठे?

मैं इस प्रश्न का उत्तर कई जगह दे चुका हूं। अपने इंटरव्यू-संग्रह 'कहानी के इर्दगिर्द' में मैंने विस्तार से इस संदर्भ में बताया है। यहां इतना ही कि फिल्मी जीवन की भ्रष्ट और अपमानजनक स्थिति के बारे में (विशेषकर वहां के लेखकों के संदर्भ में) प्रेमचंद ने बहुत पहले मुझे एक पत्र में आगाह कर दिया था। फिल्मी जीवन में जाने का और जाकर वहां जमने का मेरा कोई इरादा नहीं था। एक व्यक्तिगत समस्या थी, उसे सुलझाने के लिए मैं वहां गया था। मैंने वहां 'डायलाग' गीत, गजलें कहानियां लिखीं और दो फिल्मों में अभिनय भी किया। दायें-बायें रुपया कमाया और जब मेरी वह व्यक्तिगत समस्या सुलझ गयी, मैंने उस जीवन को 'नमस्कार' कह दिया और पलटकर फिर उधर नहीं झांका। फिल्मी जिंदगी आज भी जैसी है, किसी स्वाभिमानी लेखक के लिए उपयुक्त नहीं है। मोटी खाल किये बिना वहां चल पाना लगभग असंभव है और मेरी खाल बहुत पतली है।

विनोदकुमार पांडेय, अंडाल : (१) किस देशी या विदेशी साहित्यकार ने आपकी सम्वेदना को सर्वाधिक स्पर्श किया है? (२) लेखन आप शौकिया करते हैं या सृजन की भावना के वशीभूत होकर?

(१) इस प्रश्न का उत्तर भी मैं अपनी पुस्तक की भूमिकाओं में एकाधिक बार दे चुका हूं। यदि आप मेरे नाटक-संग्रह 'आदि मार्ग', कहानी-संग्रह 'सत्तर श्रेष्ठ कहानियां', 'मेरी प्रिय कहानियां' और मेरे उपन्यास 'गिरती दीवारें' के

दूसरे संस्करण की भूमिका और मेरे इंटरव्यूज का संग्रह 'कहानी के इर्द-गिर्द' पढ़ें तो अपने प्रश्न का उत्तर पा जाएंगे।

(२) सृजन की भावना से वशीभूत हुए बिना, शौकिया, (यानी स्वान्तःसुखाय) लेखन कैसे किया जा सकता है, यह मेरी समझ में नहीं आता। सर्जना की बलवती इच्छा और उसकी पूर्ति सुख देती है और आदमी को यश अथवा धन की चिंता नहीं रहती। महज पैसे के लिए की गयी रचना न तो शौकिया हो सकती है और न सृजन की भावना से वशीभूत। एकाध को छोड़कर मैंने कभी ऐसी रचना नहीं की।

रामविलास, चकलेहाबाद (मुजफ्फरपुर) : आपकी दृष्टि में आज की कहानी अपनी पूर्व-परंपराओं का ही विकसित रूप है या परिवर्तित जीवन-मूल्यों का अवश्यंभावी परिणाम ?

मैंने इस प्रश्न का उत्तर अपनी पुस्तक 'हिंदी कहानी : एक अंतरंग परिचय' तथा 'अन्वेषण की सहयात्रा' के लेखों में सविस्तार दिया है। दो-चार पंक्तियों में पूरी बात नहीं कही जा सकती। 'हिंदी कहानी : एक अंतरंग परिचय' में पृष्ठ १३५ से १४३ तक लेख 'नयी कहानी : एक पर्यवेक्षण' और पृष्ठ २७२ से ३०९ तक लेख— 'सातवां दशक : दशा दिशा' और 'अन्वेषण की सहयात्रा' में इसी नाम के अंतर्गत नये युवा लेखकों के कहानी-संग्रहों पर आप मेरी विस्तृत समीक्षाएं पढ़ेंगे तो अपने
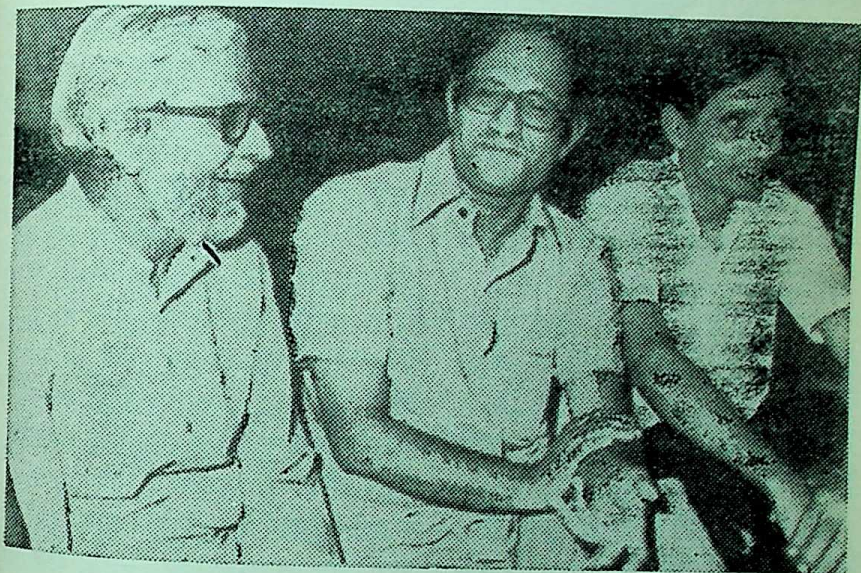
इलाहाबाद में 'कादम्बिनी' संपादक (बीच में) के साथ कहानीकार अश्क और दूधनाथ सिंह

प्रश्न का विस्तृत उत्तर पा जाएंगे ।

शोभा डे, बेकापुर (मुंगेर) : छात्र-जीवन में किस विषय में आप सबसे ज्यादा दिलचस्पी रखते थे ?

सुंदर लड़कों और बाद में सुंदर लड़कियों को दूर से देखने, उनकी खिड़कियों के नीचे से गुजर जाने भर से रोमांचित होने और प्रेम को जाने बिना काल्पनिक इश्क की कहानियां और गजलें लिखने में ! जरा बड़े होने पर हॉकी खेलने और उस लड़की के सपने लेने में जिसकी शक्ल खामोश फिल्मों की प्रसिद्ध नायिका 'सुलोचना' से मिलती थी ।

रमाकांत द्विवेदी, जांजगीर : आज के संदर्भ में नाटक और एकांकी का भविष्य क्या है ?

जो भी 'संगीत नाटक अकादमी' का रैकेटीयर-ग्रुप (सुरेश अवस्थी, नेमिचन्द्र जैन और अलकाजी) तय करेगा !

शेरसिंह कम्बोज, सहारनपुर : 'और मैं दरिया चिर का चला' . . .!

इस चिर के चले दरिया में जब कौशल्या 'सरिता' आ मिली तो आपकी सृजन-प्रक्रिया में क्या मोड़ आया ?

१९४१ के बाद मेरे एकांकियों, नाटकों, कहानियों और उपन्यासों को पढ़कर जान लीजिए—विशेषकर मेरे एकांकियों और नाटकों को ।

साहु मधुप, अशोकनगर : एक समय था जब कि आपके उपन्यास बहुत पसंद किये गये थे, किंतु अब सिवा पाठ्यक्रम की मजबूरी के सामान्य पाठक अब आपके उपन्यास छूना भी नहीं चाहता । ऐसा क्यों ? इस संबंध में पाठक को कोई सलाह देने की जगह आप अपने लेखन में कोई संभावित कमी, अपनी दृष्टि में बताएंगे ?

आपको इस प्रश्न को यूं रखना चाहिए था—'एक समय था जब कि आपके उपन्यास मुझे बहुत पसंद थे, लेकिन अब... आदि आदि !'—क्योंकि मेरे सारे पाठकों को आप कैसे जान सकते हैं और उनकी तरफ से आप कैसे कोई फतवा दे सकते हैं ? वर्तमान समीक्षकों और साथी लेखकों से मेरे झगड़ों और मेरे साहित्य के बारे में उनके उपेक्षापूर्ण वक्तव्यों से तो आप परिचित ही हैं; यदि मेरे पाठकों का भी वही मत होता तो मैं कब का लिखना छोड़ बैठता, क्योंकि बड़े-से-बड़ा लेखक भी शून्य में नहीं लिख सकता । पाठकों का ही बल है कि मैं पिछले ३५ बरसों से एक ही उपन्यास खत्म करने में संलग्न हूं । कभी इलाहाबाद आइए और मेरी फाइलों में मेरे उपन्यासों के बारे में, गवर्नरों से लेकर मामूली दूकानदारों और मजदूरों तक—मेरे विशाल पाठक-वर्ग के उद्गार पढ़िए ! मैंने जब-जब आप-जैसे प्रश्न करनेवाले किसी पाठक से जिरह की है तो यही पाया है कि वह मूर्ख ही नहीं, नितांत अनपढ़ भी है । आप दूर बैठे हैं, यह बात जानने का मेरे पास कोई साधन नहीं, लेकिन आपने मेरा कोई उपन्यास पढ़ा है, इसमें मुझे संदेह है ।

—नीलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद

• कैलाश भारद्वाज

नया ग्रह शनि से तिगुना बड़ा

दसवां ग्रह ! आप आश्चर्य से पूछेंगे—क्या हमारे सौरमंडल में दसवां ग्रह भी है ? जी हां, दसवां ग्रह ! और दस ग्रह ही क्यों; उनकी संख्या और अधिक भी हो सकती है ।

लारेंस लिवरमोर प्रयोगशाला (कैलीफोर्निया) के एक वैज्ञानिक ने दसवें ग्रह की स्थिति का संकेत दिया है, जो शनि से तीन गुना बड़ा है तथा हमारी पृथ्वी से लगभग ६ अरब मील की दूरी पर है।

ऋग्वैदिक काल में हमें केवल दो ही ग्रहों का ज्ञान था—ब्रहस्पति तथा शुक्र। बृहस्पति हमसे लगभग ४८ करोड़ मील की दूरी पर है, किंतु है इतना बड़ा (ज्ञात नव ग्रहों में सबसे बड़ा) कि अनायास ही मनुष्य का ध्यान अपनी ओर खींच लेता है। शुक्र छोटा है, किंतु हमारे बहुत निकट है, लगभग ७ करोड़ मील के फासले पर। वह इतना चमकीला है कि सांध्य-सितारे के रूप में इसे सभी पहचानते हैं।

फिर भी पांच मुख्य ग्रहों—मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि—के विषय में यह मान्यता है कि इनका ज्ञान बहुत प्राचीन काल से पूर्व तथा पश्चिम दोनों को ही रहा है । इन पांच ग्रहों में एक नक्षत्र (सूर्य) और एक उपग्रह (चांद) को जोड़ कर ग्रहों की संख्या सात कर ली गयी थी। वराहमिहिर ने सात ही ग्रह माने हैं।

ग्रहों की संख्या सात से नौ कुछ फलित ज्योतिषियों द्वारा की गयी। किंतु वराहमिहिर ने शेष दो ग्रहों, राहु और केतु, को पात विशेष ही माना है—ग्रह नहीं।

पश्चिम में सन १७८० तक ग्रहों की संख्या केवल छह थी—पांच मुख्य ग्रह और छठा ग्रह हमारी पृथ्वी। सातवें ग्रह यूरेनस की जानकारी १७८१ में मिली जब

सर विलियम हर्शेल ने १,७८,३०,००,००० मील की दूरी पर स्थित उस ग्रह को ढूंढ़ निकाला। यूरेनस हाथ आना था कि आठवें ग्रह की खोज भी शुरू हो गयी। वैज्ञानिकों ने गणना करके निकाला कि यूरेनस का परिक्रमा-पथ उसके यथार्थ परिक्रमा-पथ से भिन्न है। इसी भिन्नता ने आठवें ग्रह नेप्च्यून की तलाश का मार्ग प्रशस्त किया।

नेप्च्यून का पता १८४६ में चला। उसके बाद पचास वर्षों की अवधि में ही यह मालूम पड़ गया कि यूरेनस की गति-संबंधी गड़बड़ी केवल नेप्च्यून के खिंचाव के कारण नहीं है, वरन कोई और शक्ति भी उसे विचलित कर रही है। परिणाम-स्वरूप वैज्ञानिक नवें ग्रह की खोज में जुट गये। १९३० में प्लूटो का पता चला।

यदि वह पदार्थ जिससे प्लूटो का निर्माण हुआ हैं पानी से पचास गुना अधिक घना होता या कम से कम हमारी पृथ्वी से ही नौ-दस गुना अधिक घना होता, तो प्लूटो के बाद अन्य किसी ग्रह के होने का संदेह न होता; किंतु ऐसा न होने से यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्लूटो से कोई अति विशाल दैत्याकार ग्रह छिपा है, जो गुपचुप अपनी माया के खेल दिखा रहा है।

दसवें ग्रह के खोजकर्त्ता जोजफ ब्रैडी ने इस खोज के बारे में एक महत्त्वपूर्ण संकेत दिया है। उनका कथन है कि दसवें ग्रह की स्थिति का आभास हेली के धूमकेतु की गतिविधियों के अध्ययन से प्राप्त हुआ है।

धूमकेतु ग्रहों की ही भांति सूर्य की परिक्रमा करते हैं। अंतर केवल इतना है कि ग्रहों के परिक्रमा-पथ अंडाकार होते हैं और धूमकेतुओं के परिक्रमा-पथ अत्यंत लंबे होते हैं। धूमकेतुओं पर सूर्य का नियंत्रण रहता है, किंतु कुछ प्रमुख धूमकेतु-समूहों पर कतिपय शक्तिशाली ग्रहों का भी प्रभाव रहता है। उदाहरण के लिए, धूमकेतुओं के एक बहुत बड़े समूह का (सूर्य से) अधिकतम दूरीवाला बिंदु बृहस्पति के क्षेत्र में है। इसी प्रकार शनि, यूरेनस और नेप्च्यून के नियंत्रण में धूमकेतुओं के छोटे-छोटे समूहों की स्थिति भली भांति ज्ञात है। इसके अति-रिक्त सोलह धूमकेतुओं के एक समूह का दूरतम बिंदु नेप्च्यून के परिक्रमा-पथ से भी परे, लगभग छह अरब मील की दूरी पर है। हेली का धूमकेतु व्यवस्थित रूप से लौट-लौटकर आनेवाले धूमकेतुओं में सबसे अधिक उज्ज्वल है। यह धूमकेतु, जो मोटे तौर पर ७६ वर्षों की अवधि में लौटकर आता है, ईसा-पूर्व २४० से बराबर अध्ययन का विषय रहा है। ब्रैडी ने दसवें ग्रह की खोज का आधार इसी धूमकेतु को बनाया है।

ग्रहों के बीच की दूरियों में काफी हद तक एक अनुपात विशेष रहता है। इस अनुपात के अनुसार जरमन खगोलज्ञ केप्लर के शब्दों में मंगल और बृहस्पति के बीच विशाल अंतराल में एक ग्रह की स्थिति माननी पड़ती है।

यह सच है कि मंगल और बृहस्पति के बीच कोई ग्रह नहीं है, किंतु उस अंतराल

में लगभग दो हजार ज्ञात लघु ग्रह अवश्य हैं, जो किसी प्राचीन ग्रह के खंड हो सकते हैं। उन खंडों में से सुविधा के लिए 'सियर्स' नामक अत्यंत उज्ज्वल खंड को छांटा जा सकता है।

वैसे पश्चिम की दृष्टि से दसवें ग्रह की प्राप्ति की घोषणा कोई चौंका देनेवाली बात नहीं है—उसकी सत्ता के विषय में भविष्यवाणी पहले ही हो चुकी थी। ब्रैंडी

सौरमंडल के अद्‌भुत ग्रह शनि का एक चित्र

को इस बात का श्रेय है कि उसने दसवें ग्रह को 'पिनप्वाइंट' किया। ब्रैंडी पहला व्यक्ति है जिसने उस ग्रह के परिक्रमा-पथ, अणु-समूह तथा स्थिति की घोषणा की।

दसवां ग्रह सूर्य से लगभग छह अरब मील दूर है। वह हमारी नीहारिका ('आकाशगंगा') के तट पर स्थित है। वह शनि से तीन गुना बड़ा है तथा अपने विशाल परिक्रमा-पथ पर सूर्य का एक चक्कर लगाने में उसे छह सौ वर्ष लगते हैं।

ग्रहों की संख्या में इस वृद्धि के ज्ञान से उपलब्धि क्या हुई? क्या अपने सौर-मंडल को छानते हुए हम कभी इस ग्रह पर उतरने की आशा कर सकते हैं? संभवतः नहीं, क्योंकि दसवां ग्रह बहुत दूर है—इतना दूर कि वहां से सूरज एक दूर-दराज सितारे के रूप में ही नजर आता होगा। सूर्य की रोशनी भी बराए नाम ही वहां पहुंचती होगी तथा उसकी उष्णता का तो एकदम ही अभाव होगा। वहां का तापमान निश्चय ही शून्य अथवा उससे नीचे रहता होगा।

हां, दसवें ग्रह के ज्ञान से मनुष्य के सौरमंडलीय ज्ञान में अवश्य वृद्धि होगी। सौर-मंडल की रचना तथा उसके विकास-क्रम के बारे में नयी जानकारी प्राप्त होगी।

—रानीताल बाग, नाहन (हि. प्र.)

छलांगें मारती एलर्जी और बेखबर दुनिया

● ओंकार ठाकुर

सावधान रहिएगा! एलर्जी आपके दरवाजे पर दस्तक दे रही है। बहुरूपिया एलर्जी किसी भी वस्तु के कंधे पर चढ़कर आपके पास आ सकती है। लाख सावधानियां बरतिए, लेकिन आप किसी-न-किसी चीज से एलर्जी के शिकार होकर रहेंगे!

यह सोचना भी गलत है कि कोई खास चीजें ही एलर्जी पैदा करती हैं। वह किसी भी चीज से हो सकती है—किसी विचार से, किसी दृश्य से या कोई बात सुनकर। ऐसे उदाहरण भी हैं कि यदि किसी व्यक्ति को कोयले के धुएं से एलर्जी है और उसने किसी अखबार में रेल-इंजन का चित्र देख लिया, तो उसे एलर्जी हो गयी।

एलर्जी कोई महामारी या जन्मजात घातक बीमारी नहीं है। इस पर आसानी से काबू पाया जा सकता है। बस, जरा-सी सावधानी बरतिए।

एलर्जी स्वतः कोई बीमारी नहीं है। यह एक शारीरिक प्रक्रिया है। यदि किसी वस्तु की उपस्थिति शरीर सहन नहीं कर पाता, तो वह अपनी नाराजी एलर्जी के माध्यम से व्यक्त करता है। शरीर का संतुलन बिगड़ जाता है और संतुलन बिगड़ जाने के कारण शरीर अनेक तरह की बीमारियों का शिकार हो जाता है। अकसर ये बीमारियां त्वचा या श्वास-संबंधी होती हैं। बुखार, पेट की बीमारियां, चक्कर आना, मानसिक संतुलन बिगड़ जाना आदि रोग भी एलर्जी के कारण हो सकते हैं।

मान लीजिए आपको किसी पदार्थ विशेष से अरुचि है और अनजाने में वह पदार्थ आपके शरीर के भीतर प्रवेश पा गया। उस स्थिति में शरीर के प्रतिरोधक पदार्थ उस पर आक्रमण कर देंगे। खासा महायुद्ध छिड़ जाएगा, जिसके परिणाम-स्वरूप शरीर में एक तरह का विष उत्पन्न होगा। वह विष चोला बदलकर एलर्जी बन जाता है और शरीर से बाहर आ जाता है।

एलर्जी से पीड़ित व्यक्तियों की सही गणना किसी भी देश में असंभव है। फ्रांस की नेशनल हेल्थ इंश्योरेंस का अनुमान है कि उस देश की दस प्रतिशत आबादी एलर्जी का शिकार है। फ्रांस का प्रायः हर व्यक्ति

उस संस्था का सदस्य है । अनुमानतः फ्रांस की ही तरह अन्य विकसित और समृद्ध देशों में भी एलर्जी-पीड़ितों का यही प्रतिशत निकलेगा । एलर्जी और उद्योगों का चोली-दामन का साथ है । विकासशील देशों में एलर्जी-पीड़ितों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ने लगी है ।

हवा में घुसा जहर

आज संसार का कोई ऐसा देश नहीं है जहां वायु-प्रदूषण पर चिंता व्यक्त न की जा रही हो । तमाम छोटे-बड़े नगर वाहनों के नीले जहरीले धुएं से परेशान हैं ।

पेट्रोलियम उत्पादों के जलने से बनने वाला नीला जहरीला धुआं अनेक रोगों का जन्मदाता है । यही धुआं एलर्जी भी पैदा करता है । हजारों व्यक्ति धुएं की एलर्जी से परेशान रहते हैं और विभिन्न बीमारियों से पीड़ित हो जाते हैं । धुएं से प्रायः श्वास-संबंधी बीमारियां पैदा होती हैं । यदि किसी तरह लोगों को साफ हवा मुहैया करायी जा सके तो अधिकांश बीमारियां अपने आप दूर रहेंगी ।

यही हाल दूषित जल का है, जो पेट की बीमारियां फैलाता है । साथ ही चर्म-रोगों के लिए भी उत्तरदायी है ।

और यह गंदगी

शहरों और कस्बों में जहां-तहां गंदगी देखने में आती है । यह गंदगी किसी भी रूप में हो सकती है । चाहे जहां सड़े-गले फल फेंक दिये जाते हैं, कूड़े के ढेर लगा दिये जाते हैं और गंदा पानी जमा होता रहता है । दूषित हवा आसपास फैलकर लोगों को प्रभावित करती है । विभिन्न मिलें, रसायनों के कारखाने, चर्म-उद्योग, रंग के कारखाने, रासायनिक खाद, दवाइयों के प्रतिष्ठान आदि वायुमंडल गंदा करने में भरपूर योग देते हैं ।

प्रसाधन-सामग्री : लुभावना जहर

यह एक रोचक प्रसंग है । कहा जाता है कि
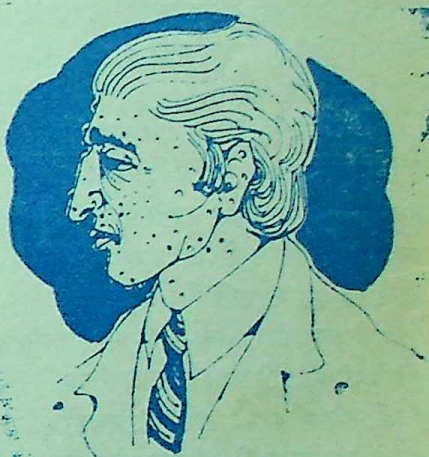
आधुनिक सौंदर्य-प्रतिमान सिर्फ प्रसाधन-सामग्री की बदौलत अपना अस्तित्व कायम रखे हुए है । समाज में प्रसाधन-सामग्री प्रतिष्ठा की चीज है । लेकिन कितने लोग यह जानते हैं कि सारी प्रसाधन-सामग्री (अपवाद भी नहीं है) अनेक रोगों की जन्मदात्री है । लिपस्टिक, स्नो, क्रीम, लोशन, मरहम आदि प्रायः प्रत्येक घर की शोभा बढ़ाते हैं । आकर्षक पैकिंग में मिलने वाली ये तमाम चीजें एक तरह से लुभावने जहर हैं । उदाहरणतया लिपस्टिक को ही

लीजिए। इसके मनमोहक रंग जहर मिले होते हैं। यानी हर रंग किसी-न-किसी महिला को एलर्जी दे जाता है। यही हाल मरहमों का है। माना, मरहमों का उपयोग रोग दूर करने के लिए होता है और यह भी स्वीकार किया कि उन मरहमों में कीटाणुनाशक औषध मिली है, पर इससे होता क्या है? कहा तो यह जाता है कि जितनी अधिक मात्रा में कीटाणुनाशक दवाइयां मिलायी जाती हैं, एलर्जी बढ़ने की संभावना उतनी ही बढ़ जाती है।

अमरीका में तो अब ऐसे मरहमों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है जिनमें कीटाणुनाशक दवाइयां मिली रहती हैं। कारण यह है कि ये मरहम रोग दूर करने के बजाय रोगों का प्रसार करते हैं।

लोशनों और भीनी-भीनी महकवाली क्रीमों की भी यही कहानी है। अनेक महिलाओं को क्रीम की सुगंध से एलर्जी हो जाती है। हमारा देश विकासशील देश है और यहां बीमारियों को भगवान का प्रसाद माना जाता है। इसीलिए एलर्जी से उत्पन्न बीमारियों का सही अंदाज इस देश में नहीं लगता। इस दिशा में खोज भी नहीं की जाती। चलती का नाम गाड़ी मान लिया जाता है।

सफेद बाल : काले बाल

आपके सिर का लोहा जब चांदी होने लगता है तो आप चिंतित हो उठते हैं। ऐसा क्यों? होने दीजिए। आपकी उम्र ज्यादा भी लगती है तो लगने दीजिए। लेकिन आप बालों को काला करने के लिए कोई क्रीम, लोशन या पाउडर का इस्तेमाल मत करिए। बहुत कड़वी लगनेवाली यह बात आपके हित की है। ये सारे तामझाम एलर्जी के चहेते अड्डे हैं। बाल काले अवश्य हो जाते हैं, पर आप किसी रोग के अवश्य शिकार हो जाते हैं। इन लोशनों में तरह-तरह की वस्तुएं मिलायी जाती हैं। इनमें से अधिकांश आपके स्वास्थ्य के लिए निस्संदेह हानिकारक हैं।

रेजिन और क्रोमियम

आजकल विश्व भर में रेजिन का बड़ा हो-हल्ला है। हजारों प्रकार की वस्तुएं रेजिन से बनायी जाती हैं। शायद आप न जानते हों कि बनावटी दांत भी रेजिन से बनाये जाते हैं। विभिन्न विद्युत-उपकरण, मकान की सामग्री, हवाईजहाज के पुरजे, जलपोतों के सैकड़ों हिस्से रेजिन से निर्मित होते हैं। रेजिन का उपयोग अन्य उद्योगों में भी होता है। यह उपयोग बढ़ता ही जा रहा है, लेकिन रेजिन एलर्जी फैलाता है। इसे अभी हाल ही में एलर्जी पैदा करनेवाले पदार्थों में शामिल किया गया है।

क्रोमियम के साथ भी यही दिक्कत है। घरेलू इस्तेमाल की अनेक वस्तुओं में क्रोमियम धातु का उपयोग किया जाता है। इस्पात की चादरों और लोहे में यह रहता है। एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि सीमेंट-कारखाने में काम करनेवाले मजदूर खुजली से परेशान रहते हैं। हाथ की यह खुजली इलाज करने से बंद हो जाती है, पर खत्म

नहीं होती ।

कारण ? वही एलर्जी । किस चीज की एलर्जी ? उत्तर है क्रोमियम की । होता यह है कि सीमेंट पीसने के लिए सिलिंडरों का उपयोग किया जाता है, उनमें क्रोमियम रहता है । क्रोमियम की एलर्जी मजदूरों के लिए प्राणलेवा साबित होती है । हजारों मजदूर इससे त्रस्त रहते हैं । कुछ दिन के लिए यदि मजदूरों को सीमेंट के कारखाने से अलग कर दिया जाए तो खुजली दूर हो जाती है, पर बाद में तो और विकट रूप में फूटती है ।

क्रोमियम की एलर्जी से बचने का एक ही रास्ता है । वह रास्ता है सीमेंट-कारखाने की नौकरी छोड़ देना । पर फिर मजदूर जाएं कहां ? क्रोमियम के कारण अमरीकी भी कम परेशान नहीं हैं । उन्हें जो पानी इस्तेमाल करना पड़ता है, उसमें

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. १०५ डाकू । २. **पहले** तीन मन का पीपा भरा । अब आठ मन के पीपे में पांच मन तेल रहा । तीन मन वाले में से पांच मन वाले में तेल लौटा, फिर आठ मन वाले में से तीन मन वाला भरा, लेकिन पांच मन वाले में तीन मन पहले से भरा है। इसमें दो मन तेल और आएगा । शेष एक मन तीन मन वाले पीपे में बचेगा । अब पांच मन वाले का तेल फिर आठ मन वाले में लौटिए, उसमें सात मन तेल हुआ । तीन मन वाले का एक मन तेल पांच मन वाले में डालिए और तीन मन वाले को आठ मन वाले से फिर भरिए । आठ मन वाले में चार मन बचेगा । अब तीन मन वाले को पांच मन वाले में लौट दीजिए, एक मन तेल उसमें है ही । अब इसमें भी चार मन हो जाएगा । ३. **पहले** सब पैसे के ग्यारह-ग्यारह आम बेचें, इसके बाद प्रति आम एक पैसा । अंत में हरेक को दस-दस पैसे मिलेंगे । ४. **बैक्टीरिया,** फफूंद । ५. C^{12} । ६. **इंटर-नेशनल** क्रिमिनल पुलिस आर्गेनाइजेशन । १९२३ में वियना में इसकी स्थापना हुई । इसका नया मुख्यालय पेरिस में है । इसका मुख्य कार्य अंतर्राष्ट्रीय अपराधियों का रिकार्ड रखना तथा उनकी तलाश में स्थानीय पुलिस की सहायता करना है । द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण १९३८ से १९४६ तक यह संस्था बंद रही । ७. **'ट्राकोमा'** आंख की बाहरी झिल्ली-संबंधी छूत का रोग होता है । ग्लाकोमा का अर्थ है आंख के अंदर तरल पदार्थों के बढ़े दबाव के कारण नजर नष्ट हो जाना । ८. **पांच** मील । ९. **'ब'** अक्षर का अंतर । १०. **आस्ट्रेलिया** ने अमरीका को हराया । ११. **केवल** एक, शेष वर्षगांठ होती हैं । १२. **सबमें,** हरेक में कम-से-कम २८ दिन तो होते ही हैं । १३. **दो,** क्योंकि सवाल यह नहीं है कि आपने कितने सेब छोड़े । १४. **चींटी** का कई गुना बड़ा चित्र ।

क्रोमियम का असर आ जाता है।

श्वास-रोग : निरंतर वृद्धि

एलर्जी का सर्वाधिक बुरा प्रभाव श्वास-नलिका पर पड़ता है। गले की बीमारियां भी एलर्जी के कारण होती हैं। दमा तो खैर एलर्जी की ही देन है। आधुनिक चिकित्सा-विज्ञानियों का कथन है कि आनेवाले दिनों में संसार भर में श्वास-रोग के मरीजों की संख्या आशातीत बढ़ेगी। फ्रांस के एक सर्वेक्षण के अनुसार फ्रांस में श्वास-रोगों के कारण लाखों काम के घंटे बरबाद हो जाते हैं।

विकासशील देशों का हाल तो बदतर है। वहां लाखों व्यक्ति हर साल श्वास-रोगों के कारण मरते हैं।

अब तो यह भी कहा जाने लगा है कि हमारी मानसिक परेशानियां भी एलर्जी बढ़ाती हैं। इस दिशा में मनश्चिकित्सक अनेक तरह के प्रयोग कर रहे हैं।

गुलाब की गंध

गुलाब की गंध ही नहीं, जिन लोगों को गुलाब की एलर्जी होती है, यदि वे इसका चित्र भी देखें तो एलर्जी होगी। कहा तो यह भी जाता है कि गुलाब का खयाल ही एलर्जी को जन्म देता है।

हजारों प्रकार की एलर्जी

किस व्यक्ति को किस चीज की एलर्जी है, यह पता लगाना कठिन है। पहले एलर्जी पैदा करिए, फिर पता लगाइए कि आपको किस चीज की एलर्जी हुई। अभी एक समाचार प्रकाशित हुआ था कि भारत में बने जूतों से अनेक अमरीकियों को एलर्जी हो गयी थी। कारण यह था कि भारत में जिस पौधे से चमड़ा पकाया जाता था उस पौधे से उन लोगों को एलर्जी थी। आप बचकर नहीं रह सकते। सड़क की धूल, कपड़ के कारखाने की रुई, कागज के कारखाने की गंध, आपके जूते, अखबार में लिपटी प्रेस की स्याही की गंध, फूलों की मोहक खुशबू, सामने की नाली की बदबू, डीजल का या पेट्रोल का धुआं—किसी भी चीज की पहुंच आप तक हो सकती है; और आप अनजाने ही किसी चीज की एलर्जी के शिकार हो जाएंगे।

इनसे बचिए

एलर्जी के प्रति सम्वेदनशील व्यक्तियों को भीड़ से बचना चाहिए। उन्हें पालतू जानवरों से दूर रहना चाहिए। जानवरों के बाल एलर्जी के केंद्र होते हैं। इत्र, क्रीम, चिड़ियों के पंख, बारिश, ठंडी हवा, धूप आदि से कोसों दूर रहना चाहिए। मनमानी दवाइयां नहीं खानी चाहिए। पेनिसिलीन या और दवाइयों का इस्तेमाल अकसर नहीं होना चाहिए। एलर्जी खतरनाक रोगों को आप तक पहुंचा देती है।

सौ-सौ मुखौटोंवाली होती है यह एलर्जी। आप चूके कि यह आपसे लिपटी। कसम खा लीजिए कि आप अतिरिक्त सावधानी बरतेंगे, हालांकि यह भी गारंटी नहीं है एलर्जी से बचने की।

—१९१०, राइट टाउन, जबलपुर

• शशिकांत शर्मा

पक्षियों द्वारा प्रतिवर्ष सैकड़ों की संख्या में हजारों मीलों की यात्रा कर एक नियत स्थल पर पहुंचना तथा मौसम बदलते ही पुन: अपने घरों को लौटना एक अबूझ पहेली-सा प्रतीत होता है। ये यायावार पक्षी शीतप्रधान देशों में अंडे देते हैं और उसके बाद आहार के लिए गरम देशों की ओर चले जाते हैं। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध के पक्षी शरद ऋतु के आरंभ में गरम प्रदेशों की ओर उड़ जाते हैं और जब वसंत ऋतु शुरू होती है तो हजारों मील की यात्रा कर पुन: अपने घरों में पहुंच जाते हैं। ऐसा प्राय: हर वर्ष ही होता है। इसीलिए भारत-जैसे गरम प्रदेशों में ये यायावर पक्षी लाखों की संख्या में पहुंचते हैं। हिमालय-स्थित मानसरोवर के अतिरिक्त भरतपुर की झील तथा दिल्ली के चिड़ियाघर में भी बहुत-से रंग-बिरंगे अंतर्राष्ट्रीय पक्षी एकत्र होते हैं।

इन पक्षियों की भांति ही प्रजनन हेतु मादा कछुआ भी समुद्र में हजारों मील की यात्रा करती है। इसका रंग हरा होता है। अन्वेषण से पता चला है कि हरे रंग की इस मादा कछुए का जन्म-स्थल ब्राजील के समुद्र-तटवर्ती प्रदेशों में है, लेकिन अंडे देने के लिए यह दो या तीन वर्ष के पश्चात दक्षिणी अतलांतक में एसेंसन द्वीप तक चौदह सौ मील तक की यात्रा करती है। ऐसी लंबी यात्राएं करने में तो मनुष्य के सामने भी अनेक कठिनाइयां आती हैं, फिर कछुओं

की क्या बिसात ! वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ये कछुए अपनी घ्राण-शक्ति के बल पर सही रास्ते को जान लेते हैं। अपनी घ्राण-शक्ति के सहारे वे सही दिशा ही नहीं, रास्ते में आनेवाले भावी तूफान या खराब मौसम की जानकारी भी पा लेते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व तक हरे कछुओं के बारे में वैज्ञानिकों को कोई विशेष जानकारी नहीं थी, लेकिन अन्वेषण के बाद कई बातों का पता चला है। हरा कछुआ लगभग पांच सौ पौंड का होता है और अधिकतर समुद्र के उष्ण तटवर्ती प्रदेशों में मिलता है। हरे कछुओं में एक और विशेषता पायी जाती है। वे उन समुद्री प्रदेशों को अपना घर बनाते हैं, जहां का समुद्र-जल वर्ष के सबसे ठंडे महीने में भी ६८ डिग्री फारेनहाइट से ऊपर होता है। हवाई द्वीप, फ्रांसीसी फ्रिगेट शोल आदि ऐसे ही कुछ प्रदेश हैं, जहां हरे कछुए बहुत बड़ी संख्या में पाये जाते हैं। पहले हरे कछुए अतलांतक महासागर में बरमूडा के निकट बहुत बड़ी संख्या में पाये जाते थे, पर तटवर्ती प्रदेशों में नयी बस्तियों के विकास के बाद उनकी संख्या तेजी से घटती गयी।

हरे कछुए यों तो समुद्री जीव हैं, परंतु कभी-कभी ये समुद्री किनारों के आसपास खुश्क प्रदेश में झाड़ियों या पेड़ों के झुरमुट के बीच भी पाये जाते हैं। हरे कछुओं की एक और विशेषता है। उनमें से कुछ हरे कछुए तो प्रतिवर्ष यात्रा करते हैं। सारवाक के कछुए तीन वर्ष के पश्चात ऐसी यात्राओं पर जाते हैं। टोर्टगुआरो के एक-

तिहाई कछुए दो वर्षों के बाद यात्रा करते हैं, लेकिन इसी जगह के दो-तिहाई कछुए तीन वर्ष के पश्चात ही प्रजनन हेतु देशांतरगमन करते हैं। वैज्ञानिकों ने ऐसे तीनों प्रकार के कछुओं के बारे में जानकारी एकत्र की है। इससे उन्हें कई बातें ज्ञात हुईं। एक उल्लेखनीय बात यह थी कि ये कछुए अपनी यात्रा का क्रम नहीं बदलते थे। कुछ कछुओं के गले में पट्टी बांधकर यह प्रयोग किया गया कि वे कम से कम कितने समय में घर वापस आते हैं। इस प्रयोग से पता चला कि कोई भी कछुआ एक वर्ष की अवधि से पूर्व अपने जन्मस्थान वापस नहीं पहुंचा।
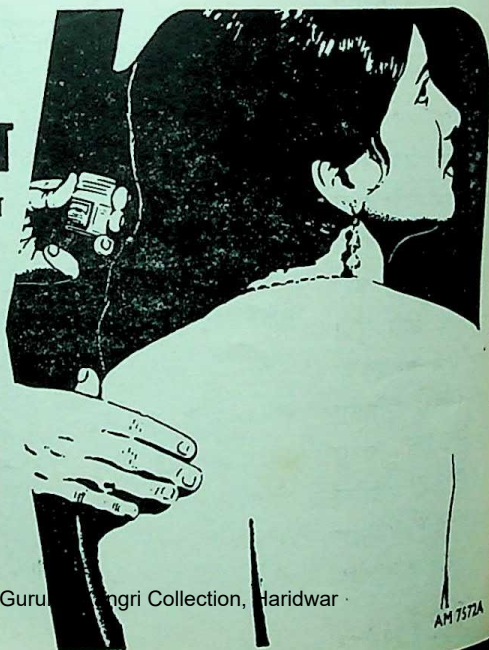
यायावर पक्षियों के बारे में खोज करते हुए वैज्ञानिकों को यह पता चला है कि पक्षी सूर्य के प्रकाश की सहायता से अपना मार्ग निर्धारित करते हैं। डॉ. क्रैमर नामक एक वैज्ञानिक ने इस संबंध में एक दिलचस्प प्रयोग किया। उन्होंने कुछ पक्षियों को एक षट्कोणीय पिंजरे में रखा। इस पिंजरे का पेंदा शीशे का था। यह पिंजरा खुले स्थान पर रखा गया। सूर्य की जरा-सी झलक दिखायी देने पर ये पक्षी तुरंत अपना मुख उस दिशा की ओर कर लेते थे। डाक्टर क्रैमर ने कृत्रिम सूर्य की रचना से भी यह सिद्ध किया कि पक्षी वास्तव में सूर्य से निर्देशित होते हैं। इसी प्रकार हरे कछुए भी समुद्र की सतह पर पड़नेवाले किंचित सूर्य-प्रकाश से निर्दिष्ट मार्ग पहचान लेते हैं।

सूर्य के प्रकाश के संबंध में यायावर जीव-जंतु अत्यंत संवेदनशील होते हैं। वे सूर्य की एक झलक से हजारों मील की गंतव्य यात्रा का अनुमान लगा लेते हैं। यही नहीं, पक्षी तो सूर्य की स्थितियों से अपनी यात्रा के चरण का भी अनुमान लगा लेते हैं। रात के समय ऐसे पक्षी और हरे कछुए तारों से अपनी दिशा का ज्ञान प्राप्त करते हैं। डाक्टर सौर ने इस बात की पुष्टि की है कि पक्षी तथा पानी के जरा भीतर या सतह पर चलनेवाले हरे कछुओं का बादल और अंधड़ के समय भटकने का भय रहता है क्योंकि उस समय तारे दिखायी नहीं देते।

पिछले दिनों हरे कछुओं पर खोज के समय उन्हें एक विशाल टैंक में रखा गया। जब प्रजनन हेतु वे ठीक दिशा की ओर जाने लगे तो उन्हें पेड़ों तथा कृत्रिम इमारतों से भटकाने की कोशिश की गयी, लेकिन सूर्य के किंचित प्रकाश ने उन्हें मार्ग की ठीक दिशा बता दी।

दस वर्ष पूर्व हरे कछुओं के देशांतर-गमन के बारे में निश्चित रूप से मालूम नहीं था, लेकिन टोर्टूगुआरो में पहली बार कछुओं के गले में पट्टी बांधकर उनके देशांतर-गमन के संबंध में सही ज्ञान प्राप्त किया गया। पिछले आठ वर्षों में ३२०५ युवा कछुओं के गलों में पट्टियां बांधी गयीं। इनमें से १२९ कछुए निर्दिष्ट मार्ग पर पहुंचे पाये गए। चूंकि कछुओं के अंडे देने का स्थान पंद्रह सौ मील तक के क्षेत्रफल में होता है, इसलिए उनके बारे में जानकारी प्राप्त

करना अत्यंत कठिन कार्य सिद्ध हुआ है।

अमरीका के जान जेम्स ओड्यूबोन ने सबसे पहले पक्षियों को चिह्नित करने की विधि अपनायी। इस विधि में पक्षियों के पैरों को विशेष रंग से रंग दिया जाता है। कहीं-कहीं परों को भी रंगा जाता है। प्रवजन करनेवाले पक्षियों या कछुओं के पैरों अथवा उनकी गरदन में इनके मूल-स्थान और तिथि की सूचना देनेवाले एल्यूमीनियम या प्लास्टिक के हलके छल्ले बांध दिये जाते हैं। देखा गया है कि शीत-काल में उत्तरी भारत के सरोवरों और झीलों में ही नहीं वरन दक्षिण में मद्रास के निकटवर्ती सरोवरों में भी रूस, चीन, साइबेरिया, तुर्किस्तान और उत्तरी अमरीका से लाखों की संख्या में रंग-बिरंगे पक्षी आते हैं।

हरे कछुओं तथा पक्षियों की लंबी यात्राओं से उनकी प्रखर स्मरण-शक्ति, समय जानने का विलक्षण तरीका ज्ञात होता है। लेकिन समय और मार्ग जानने की शक्ति उनके आंतरिक भाग की स्वत प्रक्रिया है। इसी के साथ पेड़-पौधों की तरह ही पक्षियों और हरे कछुओं के शरीर में भी जैव-घड़ी विद्यमान है। जिस प्रकार दीवार पर लगी घड़ी चौबीसों घंटे लयबद्धता में चलती है, उसी तरह कछुओं और पक्षियों की विभिन्न क्रियाओं में जैव-घड़ी का अस्तित्व होता है। उनकी सारी क्रियाएं प्रकाश की अनियमितता, दवाव एवं तापमान के बावजूद निश्चित लयबद्धता में बंधी होती है। हरे कछुओं के देशांतरगमन के समय उनकी पीठ पर सूक्ष्म ट्रांसमिटर तथा विविध माइक्रो-इलेक्ट्रानिक यंत्रों को फिट कर दिया जाता है और उनमें ट्रांजिस्टर भी लगा दिये जाते हैं। ऐसे माइक्रो-इलेक्ट्रानिक-युक्त हरे कछुओं द्वारा प्रेषित संकेत कृत्रिम उपग्रह द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। कछुओं पर लगे यंत्रों की शक्तिशाली तरंगों के माध्यम से कछुओं की गति-विधियों, दिशा-परिवर्तन तथा उनकी मनःस्थिति का सही मूल्यांकन कम्प्यूटर द्वारा किया जाता है।

— डी १४/१६, माडलटाउन, दिल्ली-९

एक कवि महोदय साहित्यप्रेमी धनीरामजी के घर पहुंचे। काव्य-संग्रह अंदर भिजवाकर वे परिणाम की प्रतीक्षा करने लगे। धनीरामजी ने कुछ पृष्ठ पढ़े और नौकर को हुक्म दिया, "मुनीमजी से कहो, तुरंत पचास रुपये कविजी को दे दें।"

नौकर अभी कुछ कदम बढ़ा ही था कि धनीरामजी ने फिर आवाज दी, "रुको, सौ रुपये देना।" फिर कुछ पृष्ठ और पढ़कर चिल्लाये, "पूरे डेढ़ सौ देना।"

पर आगे के पृष्ठ पढ़कर वे अपना धैर्य खो बैठे। दूसरे नौकर को उन्होंने हुक्म दिया, "इस कवि को धक्के देकर भगा दो! अगर मैं इसकी कविता पढ़ता गया तो कंगाल हो जाऊंगा!"

आधुनिकता

सलीब पर
यीशु की एक मूर्ति
या आत्मचिंतन में लीन
तथागत का एक रेखाचित्र
ड्राइंगरूम में खजुराहो की
नग्न आकृतियां •
और वान गॉग के चित्र
अलमारी में
मार्क्स
गोर्की
एजरा पाउंड
और कामू की पुस्तकें
ताक पर दार्शनिक मुद्रा में
तीन बंदर
बियर का हलका नशा
सशस्त्र क्रांति
और समाजवाद पर तीखी बहस
प्रगतिशील विचारधारा
और आधुनिकता के लिए
यह सब जरूरी है
जैसे दीवार पर युवतियों की
अधनंगी तसवीरें

—जगदीशचंद्र
(५४१, नेताजीनगर, इलाहाबाद-३)

महमूद गजनवी अपनी विशाल सेना लेकर सोमनाथ की ओर आ रहा था। मार्ग में एक छोटी-सी गढ़ी पड़ती थी, जहां ८०-वर्षीय गोगदेव राज्य करता था। गजनवी ने अपना एक दूत उसके पास भेजा और कहलवाया, "हमें अपनी गढ़ी के सामने से आगे बढ़ने का रास्ता दो, हम तुम्हें मालामाल कर देंगे।"

बूढ़ा गोगदेव क्रोध से कांपते हुए बोला, "जाकर कहना अपने सुलतान से

कि हम अपने बेटों का सौदा तो कर सकते हैं, मगर मां का सौदा नहीं करते। कहना, इधर से मार्ग कदापि नहीं मिलेगा।" सुल्तान अब इस गढ़ी से हटकर अपनी सेना ले जाने लगा। गोगदेव को जब यह पता चला तो वह गढ़ी के सैनिकों को लेकर और स्त्रियों को जौहर का आदेश देकर पीछे से सुलतान की सेना पर टूट पड़ा। सुलतान की विशाल सेना के सामने वह ज्यादा देर टिक नहीं सका। उसके सभी योद्धा मारे गये। वह खुद भी वीरगति को प्राप्त हुआ। अंत में केवल उसका बड़ा लड़का सज्जन जीवित बचा। वह ऊंटनी पर सवार होकर वहां से बच निकला और जिस राजा के निमंत्रण पर गजनवी भारत आया था उसके पास जाकर बोला, "महाराज, सुलतान का इरादा ठीक नहीं है। वह सब से पहले आपको ही पराजित करेगा और फिर आगे बढ़ेगा। मैं आपको सावधान करने ही आया था।" इतना कहकर वह उसी दिशा में लौट पड़ा जिधर से सुलतान की सेना आ रही थी। मार्ग में उसे सुलतान के चार सिपाही मिले, जो राजा को सुलतान के पहुंच की सूचना देने आ रहे थे। सज्जन ने उन चारों को मार डाला और उनके हथियार एवं कपड़े लेकर आगे बढ़ गया। सुलतान के पास पहुंचकर उसने कहा, "आप जिस राजा पर विश्वास करके आगे बढ़ रहे हैं वह खुद आपसे लड़ने की तैयारी किये बैठा है। उसने आपके सैनिकों को मार दिया है।" इतना कहकर सज्जन ने मरे हुए सैनिकों के हथियार और कपड़े उसके सामने रख दिये। सुलतान परेशान हो गया।

सज्जन ने कहा, "चिंता मत करिए सुलतान, मैं आपको सोमनाथ का मार्ग

दिखाऊंगा।" सुलतान ने उस पर विश्वास किया और उसके पीछे चल पड़ा। सज्जन सुलतान की सेना को रेगिस्तान में लाकर चक्कर देने लगा। वहां आंधी में सुलतान की सेना तितर-बितर हो गयी। रेगिस्तान के जहरीले सांपों ने वहुत-से सैनिकों को काटकर मौत की नींद सुला दिया। खुद सज्जन भी सांप के काटने से मारा गया।

अंगरेजों की राज्यलिप्सा वढ़ चली थी। वे जहां किसी राजा या जागीरदार को दुर्वल देखते उसे दबोचने का प्रयत्न करते। राजस्थान में भाटना के जागीरदार नाथूसिंह देवड़ा के पास अंगरेजों का एक सेनाधिकारी पहुंचा और बोला, "हमारे सरकार हुजूर ने कर मांगा है।"

सुनकर नाथूसिंह का खून खौल उठा। वह गरज पड़ा, "कौन हो तुम और कौन है तुम्हारी सरकार हुजूर?" सेनाधिकारी बोला, "हिंदुस्तान पर हमारी हकूमत है और सभी राजा-महाराजा हमारे अधीन हैं, तुम हमारी अधीनता स्वीकार करो और हमें कर दो।"

नाथूसिंह ने गरजकर कहा, "क्या तुम्हें और तुम्हारी सरकार हुजूर को मालूम नहीं है कि हम स्वतंत्रता के पुजारी हैं और अपनी धरती को मां समझते हैं। मां की आन पर आंख उठानेवाले की हम जान ले लेते हैं।"

"मगर आप हमारी हुकूमत से टक्कर नहीं ले सकेंगे," अंगरेज सेनाधिकारी ने कहा।

"जाओ और अपनी सरकार हुजूर से कहना कि हम मुंह से नहीं तलवार से वात करते हैं।"

अंगरेज सेनाधिकारी चला तो गया, मगर शीघ्र ही अंगरेजों का भीषण हमला हुआ। नाथूसिंह देवड़ा ने वीरता से सामना किया और मारा गया।

राजस्थानी लोकगीतों में नाथूसिंह देवड़ा का नाम अजर-अमर है।

—ब्रजभूषण

प्राणदंड का हुक्म पाये हुए कैदी के रूप में सुकरात जब कारावास में थे तब उनके परम शिष्य क्रीटो ने उनसे कहा, "देर न कीजिए और चुपचाप जेल से भाग चलिए। बाहर सब प्रबंध हो चुका है। किसी को पता भी नहीं चलेगा। किसी दूसरे देश में चले जाइए। मेरी जीवन भर

की कमाई आपको भेंट है।"

सुकरात ने गंभीरतापूर्वक उत्तर दिया, "मैं ऐसे अनुचित प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकता। जिस देश की मिट्टी में में मैं पैदा हुआ, जहां मेरे माता-पिता रहे, जहां की हवा में सांस ले और जहां का पानी पी मैं पला हूं, उस देश के नियमों के विरुद्ध मैं कुछ नहीं कर सकता।"

ब्रिटेन के प्रख्यात लेखक सर वाल्टर रैले को एक बार किसी घमंडी युवक ने द्वंद्व युद्ध की चुनौती दी। उन दिनों यूरोप में द्वंद्व युद्ध की चुनौती को अस्वीकार करना कायरता समझी जाती थी। सर वाल्टर रैले तलवार चलाने में निपुण थे, फिर भी उन्होंने उस युवक की चुनौती अस्वीकार कर दी। इससे उस असभ्य युवक ने घृणा के साथ सर रैले के मुंह पर थूक दिया।

बिना किसी उत्तेजना के रैले बोले, "जितनी सरलता से अपने मुंह पर पड़े इस थूक को मैं रूमाल निकालकर पोंछ सकता हूं, यदि उतनी ही सरलता से मानव-हत्या का पाप भी पोंछा जा सकता तो कोई कारण नहीं था कि मैं तलवार निकालकर तुम्हारे साथ न जूझ पड़ता।"

सन सत्तावन के विद्रोह के अग्रणियों में बिहार के महाराजा कुंवरसिंह का नाम सदैव बड़े सम्मान के साथ लिया जाएगा। वे जब तक जीवित रहे, अंगरेजों के विरुद्ध विद्रोह का झंडा ऊंचा किये रहे।

एक बार कुंअरसिंह शाहाबाद जाने के लिए नाव द्वारा गंगा पार कर रहे थे कि अंगरेज सेना को इसका पता चल गया और सेनापति लुंगर्ड ने किनारे से गोली चलायी, जो कुंअरसिंह के दाहिने हाथ की कलाई के निकट लगी। उन्होंने चट बायें हाथ से तलवार लेकर एक झटके में दाहिने हाथ को काटकर गंगा माता को समर्पित करते हुए कहा, "जो हाथ फिरंगी की गोली से अपवित्र हो गया हो वह अब किस काम का रहा, अतएव यह तुम्हारी भेंट है।"

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर को तड़क-भड़क और दिखावा तनिक भी पसंद न था। वह सादगी के हिमायती थे। किसी सजे-सजाये, गुड़िया बने बालक की अपेक्षा धरती की गोद में धूलि-धूसरित बालक में वह प्रभु की मूर्ति साकार देखते थे। उन्हें आभूषण और बहुमूल्य वस्त्र भी पसंद नहीं थे।

एक बार की बात है कि उनकी पत्नी ने जन्म-दिवस के अवसर पर उन्हें सोने के बटन भेंट किये। रवीन्द्र ने उनसे कहा, "छि: ! छि: । मैं सोने के बटन लगाऊंगा! मेरा देश किसान का है, मुझे तो साधारण लोहे के बटन दो।"

और गुरुदेव ने साधारण बटन ही स्वीकार किये।

—कमला

• महेश्वर दयाल

सोते-सोते अभी कमर सीधी की होगी कि दादी अम्मां ने नाइन को ड्योढ़ी में आते देखा। वे हाथ में सोंटा लिये, कल्ले में पान दबाये, हांपती-कांपती चली आ रही थीं। हमारे यहां की नाइन अपने काम की और नाम की एक ही थीं। बहुत लच्छेदार बातें करती थीं। जब भी घर में आतीं, किसी का उनके पास से उठने को जी न चाहता। आती भी ऐसे वक्त थीं जब घर में सोफ्ता-सा हो। घंटों बैठी-बैठी दुनिया-जहान की बातें करतीं। कोई अपने बेटा-बेटी को सात तालों में बंद करके रखे तो भी उसका कच्चा चिट्ठा सुना जातीं।

एक दफा की बात है, लड़केवालों को एक लड़की बहुत पसंद थी। नाइन को रिश्ता पक्का करने का काम सुपुर्द हुआ। नाइन ने लड़की की पीठ पर बालों का रुख देखकर कह दिया कि लड़की की पीठ पर सांपन है, रिश्ता ठीक न बैठेगा; पर लड़के-वालों ने ब्याह कर दिया। थोड़े दिन बाद लड़की बीमार पड़ी और लड़का भी कुबड़ा होकर मरा।

नाइन सारी रीत-रस्में पूरी कराती थीं और सब ठिक-टेलों में गाती थीं। हमारी नाइन की आवाज बहुत पाटदार और लोचवाली थी। पुरखों के नाम ले-लेकर ढोलक पर गीत गातीं और शादी-ब्याह में मेहंदी, घोड़ी, बन्ने, सुहाग, बधावे, कंगना, मंढा, बिदायगी और टोने सुनातीं।

हमारे घर की नाइन बैठतीं तो बहुत जगह घेरतीं। लड़कियों ने उनका नाम 'बारहमनी तोप' रख रखा था, लेकिन उनके पीठ पीछे ही बातें बनाती थीं।

एक बार जैसे ही नाइन ने आंगन में पैर रखा, एक लड़की ने दूसरी के कान में कहा, "ए लो, आ गयीं घी का कुप्पा!" दूसरी ने उसके होठों पर अंगुली रखकर डांटा, "चुप रह, नाइन ताई ने सुन लिया

तो तेरा ब्याह किसी नकटे से करा देंगी।" एक दौड़ी-दौड़ी गयी और नाइन ताई के सामने खटिया लाकर डाल दी। लेकिन नाइन जमीन पर बिछी चांदनी पर दादी-अम्मां के सामने पसरकर बैठ गयीं और हंसकर बोलीं, "ए बीबो, अपनी खटिया परे रख! मैं नहीं बैठती तेरी खटमलोंवाली खटिया पर!"

लड़की बोली, "हां नाइन ताई, तुम काहे को बैठोगी हमारी खटिया पर! तुम्हारे सैयां ने तो हरदम तुम्हारे लिए

छपरखट बिछाया ! हमेशा नाइन ताई की नाजबरदारी की ।"

नाइन कुछ कहना चाहती ही थीं कि दादी अम्मां ने लड़कियों को जोर से डांटकर कहा, "खबरदार, बहुत जीभ चलानी अच्छी नहीं । बड़बड़ किये चली जा रही हैं ! इत्ते दिनों बाद तो नाइन बहू आयी हैं, बात ही नहीं करने देतीं ! ज्यादा औंधा-सीधा बकोगी, तो बिरादरी में नाम निकल जाएगा !"

डांट सुनकर सब लड़कियां खामोश एक तरफ बैठ गयीं, और दादी-अम्मां नाइन बहू से बोलीं, "अच्छी नाइन बहू, तुमने भी हद कर दी ! इत्ते दिनों से याद करती थी तुम्हें, पर तुम्हें याद करने से फायदा भी क्या ! तुम्हें तो हिचकी भी नहीं आयी होगी । सच पूछो, मेरा तो कब से तुममें घ्यान लगा हुआ था । अच्छा यह बताओ, आज कैसे रस्ता भूलीं ?"

"ए मांजी, तुम्हारा ही काम करती फिरूं हूं ।"

दादी बोलीं, "हमारा काम ! कौन सा काम ?" नाइन अपना माथा पकड़कर बैठ गयीं और कहने लगीं, "ए लो ! हम तो सबेरे से अपनी टांगें तोड़ रहे हैं और बड़ी बहू को पता भी नहीं ! ऐ मांजी, दीवान साहब के यहां गयी थी । आजकल उनके बड़े दौर-दौरे हैं । चांदी रुल रही है उनके यहां । लड़कियां भी बड़ी होनहार हैं । बहुत सेवा और टहल करती हैं मां-बाप की । एक बिटिया तो चांद-सी है । आंखों में मोती कूट-कूट कर भरे हैं । आंखें ऐसी कटीली हैं कि सुरमा जड़ा हुआ । बातें ऐसी जैसे मोतियों के दाने । आवाज ऐसी सुरीली जैसे शहद का टपका । मैं तो कहती हूं, अपने पोते का ब्याह दीवानजी की बिटिया से रचा दो । शुभ काम में देर क्या !"

दादी अम्मां तिनककर बोलीं, "तुम भी किसके यहां की बातें ले बैठीं नाइन बहू ! नाम बड़े दर्शन छोटे ! अरे अब वहां धरा ही क्या है ? जहां बहू का बैठना वहीं सुसर की खाट ! पहलोंठी की बेटी की शादी में सारा रुपया कंकरी कर दिया । सब बारह-बाट हो गया । अब तो फटेहाल हैं । और बड़ी लड़की तो बेशक नाक, आंख की कुछ अच्छी भी थी, पर छोटी के क्या कहने ! आंख न नाक बन्नो चांद-सी ! और गाना-बजाना वह क्या जाने ! उनके यहां का रत्ती-रत्ती हाल मालूम है । वही बात हुई—दिल्ली से मैं आऊं, खबर कहे मेरा भाई !"

नाइन को जब अपनी दाल गलती नजर न आयी तो झट बात पलटकर बोलीं, "मांजी, आपका तो बीबो का ब्याह करने को जी ही नहीं चाहता ! ऐसा बढ़िया घर छांटा है बीबो के लिए कि आप भी क्या याद करोगी ! छोरा भी सुंदर सूरत मोहनी मूरत है । कुछ बहुत बड़ा भी नहीं, बस यही कोई पंद्रह, सोलह का होगा । आदमी भी उनके यहां गिनती के हैं । कचरधान नहीं । अता-पता बता दूं । अरे वही आपका जाना-पहचाना घर, रियासत-

वाले बख्शीजी का। एक वक्त था, हाथी झूमता था उनके दरवाजे पर। वारे-न्यारे थे, पर अब भी कोई कमी नहीं। बड़े बासन की खुरचन जो ठहरी!"

दादी सोच में पड़ गयीं और फिर सर्द आह भरकर बोलीं, "यह तो सच है कि जहां जिसकी लिखी हो वहां होकर रहे है। जुड़िया संजोग के हाथ है, पर मेरा तो जी उनके यहां ठुकता नहीं। मुझे तो भरा-पूरा घर अच्छा लगता है। ऐसे घर को चाटूं जहां चूही का बच्चा भी न हो! और नाइन बहू, उनके यहां तो एक और बुरी बात भी है, बख्शीजी की दो-दो बहुएं हैं। दोनों की बनती नहीं, सौत चून की भी बुरी! हां, एक और बात बताना तो भूल ही गयी। यों तो बख्शी-जी दिल्लीवाले हैं, पर अब तो रजवाड़ों में चले गये हैं। इत्ता बड़ा कलेजा कहां से लाऊं कि अपनी बीबो को काले कोसों ब्याह दूं!"

यह बात तो नाइन के भी ध्यान से उतर गयी थी। फौरन एक और तजवीज पेश कर दी, "मांजी, ज्यादा कुरेदा-बीनी मत करो, बस मुंशीजी के यहां ठहरा दो। जैसे तुम्हारी बीबो दो मोतियों में एक चुन्नी है, वैसे मुंशीजी का लड़का भी लाखों में एक है और पूंजी कुनबे का घर है। सात माएं सात बाएं। हां अलबत्ता रंग जरा गेहुवां है, सो क्या हुआ? मां का पेट कुम्हारा का आवा, कोई गोरा कोई काला। क्यों मांजी, देखा, ढूंढ़ निकाला न बढ़िया-सा घर! कहो तो आज ही पक्की कर आऊं, कभी फिर फिसल जाओ।"

दादी ने इस बात का तो कोई जवाब न दिया, सीने-पिरोने की खलीती लेकर खड़ी हो गयीं और नाइन से बोलीं, "ए बहू, पान का टुकड़ा खाये बिना न चली जाना। अभी आती हूं।"

दादी-अम्मां के उठकर जाने की देर थी कि सब लड़कियां नाइन के पास आ धमकीं और आते ही रेलगाड़ी-सी छोड़ दी। एक बोली, "अच्छी नाइन ताई, यह बताओ कि तुम्हारा बेड़ा तो मौज में है?

रामजी रखें, अब तो तुम्हारा टिल्लू समर्थ हो गया होगा। और तुम्हारी बहू कैसी है? भई, हम तो कहते हैं कि नाइन ताई की तो आजकल पांचों घी में हैं।"

अपने बहू-बेटे की बात सुनकर नाइन तंजिया लहजे में बोलीं, "अय हां, क्यों नहीं, क्यों नहीं और सर कढ़ाई में जो है! हमारे बेटे और बहू की सारस की-सी जोड़ी जो हुई! अरी बेटी, अपने खसम से तो सब राओ रचाओ करे हैं, पर ऐसे चलित्तर कहीं नहीं देखे। बेटे पर तो टोना-सा कर दिया है। और बेटा कौन-सा अच्छा है! जब से बहू ब्याह कर लाया है, निखट्टू हो गया है, घर में पड़ा-पड़ा ऐंडता रहता है। और उस बहू के लच्छन सुनो। वह मरी-जूं-सी है। काम की, न काज की, ढाई मन अनाज की! अरी बेटियो, क्या बताऊं?"

"नाइन ताई, हमने तो सुना था कि तुम्हारी बहू बड़ा जहेज लेकर आयी थी, और तुम्हारे समधी राजा की पक्की हवेली थी।" हवेली का नाम सुनते ही नाइन का पारा आसमान पर जा पहुंचा, "हवेली... हवेली! बड़ा आया हवेलियोंवाला..." लड़कियां 'हां' में 'हां' मिलाने लगीं। उनमें से एक ने कहा, "ऐ नाइन ताई, कमाल कर दिया तुम्हारी बहू ने तो! बड़ी बेईमंटी निकली वह तो! बजाय तुम्हारा हाथ बटाने के गुलछर्रे उड़ाती है।"

नाइन बोलीं, "अय हां और क्या! बहू का घर में जरा तलवा नहीं टिकता। हबड़-घबड़ आयी फिर बाहर जा धमकी। मेरी तो सूरत से नफरत है उसको। बिस की गांठ यह ही चाहती होगी कि बुढ़िया को जहर खिला दे, पर उसे क्या मालूम कि लाख जहर हथेली पर लिये फिरो, बिन खाये कोई मरता है? अरी बेटी, तकदीर के लिखे को पीट रही हूं। एक तो अपना माल खिलाया, दूजे अपना जोबन गंवाना, तीजे हो बदनाम! सटर-पटर में ही मेरा दिन निकल जाता है। हम तो साग-पात खाकर गुजारा कर लेंगे, लेकिन सोचती हूं, मेरे बाद इन राजा-रानी का क्या होगा। एक को छुपाऊं, एक को निकालूं।"

नाइन चुटकी में से हुलास नकुओं में रखकर और सिर को पीछे झटककर बोलीं, "कहे देती हूं, जो बच्चा अपनी मां को सताएगा तो परमात्मा उसके पेट से नौ महीने मटका बंधवाएगा। जी चाहता है, धरती फट जाए तो मैं उसमें समा जाऊं।" इतना कहना था कि नाइन का जी मलमला-सा होने लगा, आंखों में आंसू डबडबाने लगे, लेकिन ज्यूं ही दादी को पान का टुकड़ा लाते देखा, झट मुंह मोड़कर पल्लू से आंखें पोंछने लगीं।

दादी ने पूछा, "क्या बात है नाइन बहू? जी तो अच्छा है तुम्हारा? क्या बात हो गयी? अय कुछ कह दिया किसी ने क्या?"

नाइन भर्रायी आवाज में बोलीं, "जी नहीं, जी नहीं, कुछ नहीं मांजी! ऐसे ही, यूं ही आंख में कुछ रिडक रहा था।"

—९६, बाबर रोड, नयी दिल्ली-११०००१

विस्तार

• सिद्धेश

आस-पास की ऐतिहासिक जगहों पर बने मंदिरों के भग्नावशेषों से चुनकर लायी गयी पत्थर की मूर्तियां शीशे की अलमारी में करीने से सजायी हुई थीं। बीसों मूर्तियां स्पष्ट नृत्य आकृतियों में बेहतरीन शिल्प के नमूनों को पेश कर रही थीं। लग रहा था, इन्हें चुनकर लाने और सजाकर रखने के पीछे कितनी सुखद स्मृतियां, कल्पनाएं और सार्थक अभिव्यक्तियां उजागर हुई होंगी।

मनीषा दी ने खुद ही आनंद ले-लेकर यह सब दिखाया था और हर बार अपने उच्छ्वास को न रोक सकने के कारण इन मूर्तियों की ऐतिहासिक भूमियों से गुजरते हुए अपने-आपको भी व्यक्त किया था। बेहद पर्सनल होकर, जैसे आज ही, इसी क्षण सब-कुछ अपने अंदर दबे हुए को प्रगट कर देना चाह रही थीं।

हम तीनों उनके लिए अजनबी और अपरिचित थे। मात्र दो-ढाई घंटों के मेहमान हममें से चौथे व्यक्ति—शक्ति दा—उनके पहले से ही परिचित थे, उन्होंने ही हम तीनों का परिचय कराया था। हम सभी कहीं न कहीं कला, साहित्य और संस्कृति से जुड़े हुए थे। यही बात मनीषा दी ने भी व्यक्त की थी, "मैं अंदाज भी नहीं लगा पा रही हूं कि आप लोग इकट्ठे यहां, मेरे यहां हो सकते हैं! सचमुच मैं धन्य हो गयी।"

हम आश्चर्य से उन्हें ताकते रह गये थे। हमें 'धन्यवाद' देने का मौका भी उन्होंने नहीं दिया और हमें घसीटकर ऊपर छत पर ले गयी थीं। वहां से चारों तरफ खुला मैदान, सारा आकाश और चलता-फिरता जीवन देखा जा सकता था। खुली छत पर आते ही मानो सारा दबा और लुका हुआ अंधकार प्रकाशित हो उठा। मनीषा दी छत के एक कोने में आकर खड़ी हो गयी थीं। उनके पति और हममें से शिव भाई तथा शक्ति दा नीचेवाले टेरेस में रह गये थे। वे तीनों किसी विवाद में फस गये थे।

आत्म-कथ्य

सिद्धेश्वरनाथ वर्मा अब असाहित्यिक एवं अपरिचित माहौल के लोगों के बीच ही नाम रह गया है। उम्र पैंतीस वर्ष पारकर छत्तीसवें में आते ही लगता है, बहुमूल्य समय गुजर गया है, अब उसकी शिनाख्त बाकी है! हिंदी विषय से एम. ए. हूं।

पुस्तकें—अब तक चार कहानी-संग्रह (अनाम कथा-संग्रह, मेरी दो लंबी कहानियां और पारो, अर्थहीन वह मैं, अनुपस्थित शहर) एवं एक लघु उपन्यास (केंचुल) प्रकाशित। दो कहानी-संग्रह एवं एक और लघु उपन्यास प्रकाशनार्थ तैयार।

संपादन किया है—'अभिनय', 'परंपरा', 'मासिकी' तथा 'समवेत' त्रैमासिकी। एक बंगला उपन्यास के अनुवाद कार्य में संलग्न हूं। संप्रति चाय व्यवसाय से संबंधित एक फर्म में नौकरी कर रहा हूं।

कथा-साहित्य के माध्यम से आदमी के अंदर-बाहर के सूक्ष्म रेशों को पहचानने की मेरी आंतरिक चेष्टा रही है—चाहे वह दुःखद स्थितियां रही हों या विकृत मनोदशा। मगर मैंने अपने अंदर के अलावा

बाहरी छद्म को भी खुलकर सामने रखने का काम किया है। एक जागरूक कथाकार के लिए इससे बढ़कर चुनौती क्या हो सकती है कि वह अपने भीतरी सौंदर्य और गलीज दोनों को समान रूप से अहमियत दे, साथ ही पीड़ित एवं विकृत समाज के चेहरों को भी बिना राजनीतिक प्रतिबद्धता के, मानवीय स्तर पर देखे-परखे।

कथाकार के लिए अभिव्यक्ति का संकट सबसे बड़ा संकट है, मगर यह संकट मेरे बीच कभी आड़े नहीं आया, बल्कि बड़ी संजीदगी और तीव्रता से मैंने महसूस किया है कि अनुभव तथा अन्तर्द्वंद्व के सांचे में ढली हुई कथा-आकृति स्पष्ट और सहज अभिव्यक्त होती है। इससे जो वैचारिक उपलब्धि होती है वह किसी भी सामाजिक प्रतिबद्धता एवं राजनीतिक चेतना से भी श्रेष्ठ है।

मैं महानगर में रहते हुए यहां की विकृतियों एवं असाधारण विषमताओं से परिचित हूं। यह लंबे जुलूस, राजनीतिक प्रतिवादों-भाषणों (पार्टीबाजी के स्तर पर) का शहर है—मगर इनके बीच से गुजरकर आदमी की स्थिति और भी करुण और पीड़ाजनक है! मुझे रचना की प्रेरणा यहीं से मिलती है। ये ही चेहरे हैं जो मुझे डरावने तरीके से मेरे अंदर के विकृत चेहरे का पर्दाफाश करते हैं। मैं इन पर सोचने-लिखने के लिए स्वयं को नितांत मजबूर पाता हूं।

रिसर्च और पुस्तकों के नोट्स लिखे जा रहे थे। मनीषा दी के दोनों बच्चे छत पर ही खेल रहे थे। उन्हें आसपास दौड़ते-खेलते हुए देखकर मैंने ही पूछा, "आपके ये ही दो बच्चे हैं ?"

वे मुसकरायीं, फिर कहा, "हां, क्या दो ही काफी नहीं हैं ? मैं तो इन्हें ही नहीं संभाल पाती !"

"घर में आपके और कौन-कौन हैं ? आपके पति, ये दो बच्चे और ?"

"मां भी हैं, पिताजी बराबर बाहर ही रहते हैं। घर में नौकर-चाकर की कमी नहीं है। दो-दो आया, दो-तीन नौकर और वो नीचे देख रहे हैं न! ये दो गायें। घर के सदस्यों में यह सब के सब हैं। मगर ...!"

"मगर क्या, आप तो भाग्यशालिनी हैं। इतना बड़ा घर पाया है। इतनी अच्छी सुख-सुविधा और आपके पति भी तो काफी पढ़े-लिखे और खूबसूरत हैं।"

इस पर उस क्षण मनीषा दी लजा पड़ीं, मगर तुरंत उन्होंने अपने को संभाल लिया। हर बार अनौपचारिक होने की दशा में बेहद खुल जाती थीं।

"हां, आप सुनकर आश्चर्य करेंगे कि हम दोनों ने कितना-कितना कष्ट उठाया था। जब हम दोनों ने अपने पैर पर खड़े होने का निश्चय कर लिया था, तब फाकेकशी के दिन भी झेलने पड़े थे। बाद में परिवारवालों ने हमें स्वीकार कर लिया। और अब !

"यह सारा सुख, इतना बड़ा मकान,

सबसे बेहद जुड़ा महसूस नहीं कर पाती। आज आप लोग आ गये, इसलिए इतने दिनों बाद अच्छा लग रहा है। काफी अच्छा लग रहा है। लगता है, फिर पिछले दिनों में मैं लौट गयी हूं।"

सचमुच, देखा था कि मनीषा दी हठात् इतना मुखर हो गयी हैं कि पहले परिचय में कोई भी औरत इतना खुल नहीं सकती। उन्हें लगा होगा कि हम सभी उनके ढेर दिनों के परिचित और मानसिक रूप से संपर्कित रह चुके हैं। तभी इतना सारा कुछ अपने बारे में बताया है।

अभय ने एक दो बार विषयांतर करने की चेष्टा भी की थी, मगर वह धारा-प्रवाह खुलकर बोलना चाहती थीं। बहुत दिनों का, हृदय के किसी कोने में दबा हुआ बांध फूट पड़ना चाहता था। इसीलिए हममें से किसी की परवाह किये बिना ही अपने बारे में सबकुछ सुना देना चाहती थीं। उनकी भंगिमा से लग रहा था कि वे इस वातावरण में निश्चित रूप से शरीक नहीं हैं। वह अतीत में कहीं गोते खा रही हैं।

तभी उनका छोटा लड़का दौड़ता हुआ गिर पड़ा था, जिसकी परवाह उन्होंने नहीं की। जाकर मैंने उठाया था। उठाकर मैंने उसे बहलाना चाहा था, मगर इसके पहले ही वह हाथ छुड़ाकर नीचे की तरफ भाग खड़ा हुआ।

मनीषा दी ने इतना ही भर कहा, "बड़ा दुष्ट है!"

भव्य तीन मंजिला मकान। पोर्टिकों में गाड़ी। काफी चौड़ी-चौड़ी और लंबी सीढ़ियां उनकी साफ-सुथरी जमीन। करीने से सजाये हुए टेबुल, कुरसियां। मुझे लगा कि सुबह से शाम तक इन्हें साफ करने के पीछे निश्चय ही एक बृहत् आयोजन की जरूरत पड़ती होगी। रोज ही आयोजन, इसीलिए इतनी आयाएं, नौकर, माली! नीचे की तरफ झांककर देखा था, तो आंगन एक बड़ा कुआं-सा लग रहा था। मनीषा दी के कमरे से निकलते हुए मुझसे गलती हो गयी थी। मगर यह गलती मुझसे जान-बूझकर नहीं हुई थी। मेरे सिगरेट की राख उनके कमरे की शीशे सी झलकनेवाली जमीन पर गिर पड़ी थी। इस पर उन्होंने लक्ष्य किया था या नहीं कह नहीं सकता।

स्मृतियों में शायद वे इतना भीगी थीं कि हरकत को नजरअंदाज कर गयीं। फिर कहा, "आपके दूसरे मित्र नीचे ही रह गये। देखिए, मैं आपको कहां से कहां ले आयी! आप लोगों के लिए खाना बनवाने की बात भी भूल गयी। अभी आया को कहकर आती हूं।" और वे भागती-सी सीढ़ियां उतर गयीं।

अब हम दोनों अकेले पड़ गये थे। अतः घूम-घूमकर छत से दिखायी पड़नेवाले समूचे प्रदेश को देखा। एक तरफ धुंधली-सी पहाड़ों की शृंखला, खेत, खाली मैदान और सामने एक छोटे पोखरे के आसपास बड़े घने पेड़-पौधे। मकान के

आसपास एक छोटी-सी बस्ती। उसमें रहने वाले लोग, मवेशी। एक लंबा बहता हुआ नाला। उसके पास फुदकते हुए चूजे!

तभी सीढ़ियां चढ़ते हुए सबके सब ऊपर आ गये। पीछे-पीछे मनीषा दी। फिर हम लोग एक किनारे आकर बैठ रहे। वहीं से बातों का सिलसिला दूसरी तरफ मुड़ गया। शक्ति दा और उनके पति अलग थोड़ी दूर पर जाकर बैठ रहे। मैं शिव भाई के साथ ही बैठा। मेरे आने में कुछ देर अवश्य हुई थी, मगर बात पहले से ही चल पड़ी थी। अतः मैं कुछ देर तक तो समझा नहीं, मगर लगा कि यहां भी बातें बड़ी अनौपचारिक ढंग से हो रही हैं। शिव भाई ने अपनी तरफ से प्रश्न किया, "अच्छा यह बताइए कि आप प्रेम और सेक्स के मामले में पूरा दायित्व पुरुषों पर थोप रहा है, औरतें इस मामले में कहां तक शरीक हैं?"

मनीषा दी को जैसे मुंह-मांगा विषय मिल गया था, इसलिए उस पर टूट-सी पड़ी। बोलीं, "औरतें चूंकि कुछ सीमाओं से बंधी हैं, चाहे वे सामाजिक हों या पारिवारिक, इसलिए इस मामले में वे खुलकर सामने नहीं आ सकतीं। केवल पहली बार जो साहस कर लेती हैं बस वही! उसके बाद उनका साहस टूट जाता है। तब वे मात्र उसकी पीड़ा भोगती हैं।"

"तो क्या आप कहना चाहती हैं कि जिस तरह पुरुष औरतों में से किसी को अपने करीब देखना चाहते हैं, उसी तरह औरतें भी अपने पति को छोड़कर दूसरों के साथ भी सहवास करना चाहती हैं?"

"निश्चित। मगर उनका यह साहस खुलकर सामने नहीं आ पाता है। इसीलिए वह टूट-टूटकर बिखरती चली जाती हैं।"

शिव भाई शरारती मुसकान मुस-करा रहे थे । उन्हें मनीषा दी को छेड़ना अच्छा लग रहा था । उन्होंने स्वयं जन्म भर, जबकि वह चालीस पार कर गये हैं, कहीं भी बंधाव की स्थिति नहीं आने दी । यही कारण था कि वह अब तक अकेले रह गये । विदेश भी घूम आये । वहां वर्षों रहकर भी देखा । अब अपने भारत देश में आकर गांव-शहरों में घूम-घूमकर इनकी संस्कृतियां, परंपराओं से जुड़ने की कोशिश में भाग-दौड़ रहे हैं । कभी यहां, कभी वहां । एक जगह टिकने की नौबत नहीं आ रही है ।

"यह स्वाभाविक भी है । लेकिन क्या यह इस देश में संभव है ?"

"हां है, इसका विस्तार कर लेने से से ही है । इसके पीछे सहना भी होगा । अच्छा, बताइए कि आप शादी-शुदा हैं ?"

"मैं इसका उत्तर नहीं दूंगा ।" शिव भाई ने मुसकराकर जवाब दिया । पर स्वयं मानो कहीं से उखड़ गये ।

मनीषा दी को लगा कि वह छत से से नीचे धंस गयीं । उनके पति अभी भी शक्ति दा को लेकर व्यस्त थे । उनका बच्चा कहीं आसपास ही खेल रहा था ।

हम लोगों के बीच से थोड़ी देर के लिए मनीषा दी एकदम से गायब हो गयीं । उनकी अनुपस्थिति में शिव भाई और शक्ति दा ने अपने-अपने इंटरव्यू पूरे किये । मैं उनके बीच दर्शक मात्र था । आसपास के वातावरण, गमलों में लगे हुए पौधों, मनीषा दी के बच्चों के साथ मेरा तब तक संपर्क बना रहा ।

मैंने पूछा, "बेटे, तुम्हारा नाम क्या है?"

"अंतू ।" फिर वह भाग निकला । मगर उससे छोटा चौड़ी सीढ़ियों पर बैठा अभी भी खेल रहा था । मैं उसके पास जाकर बैठ गया ।

थोड़ी देर बाद देखा कि पास से गुजरते मनीषा दी ने मेरी तरफ ताका और मुसकराते हुए कहा है, "चलिए आप लोग, खाना तैयार है ।"

खाना मनीषा दी ने ही परोसा । उन्होंने हम सभी को फिर पूछ-पूछकर खाना खिलाया । शिव भाई ने बहुत कम खाया । उस घर के लिए यह अंतिम आयोजन था, फिर हम कल चले जाएंगे । मनीषा दी फिर अपने इस लंबे-चौड़े मकान में मानों अकेली रह जाएंगी ।

शिव भाई उठ गये थे । बाथरूम से निकलते हुए मनीषा दी ने पूछा था, "आपने जवाब नहीं दिया ?"

लेकिन मैं तेजी से उनके बीच से गुजर गया था और बाथरूम में जाकर मैंने कल से पानी की धार जानबूझकर तेज कर दी थी । इस तेज धार की आवाज में पता नहीं चला कि शिव भाई ने मनीषा दी के प्रश्नों का जवाब दिया था या नहीं और शिव भाई के उस जवाब से मनीषा दी को कोई संतोष मिला होगा या नहीं कह नहीं सकता ।

—१६ ए श्यामानंद रोड, कलकत्ता-२५

कहानी

सौ गज की दौड़

• कृश्न चंदर

जादव और बिहारी अभी सिंडीकेट बैंक के पास पहुंचे न थे। वे अभी गोल्डन चिट फंड और संजगीरी ड्रिंक हाउस के बीचवाले रास्ते में थे कि उन्होंने सड़क पर एक नौजवान भिखारिन की लाश देखी, जिसकी छाती से एक नन्हा चिपटा हुआ था।

जादव बोला, "मर चुकी है।"

बिहारी बोला, "नहीं मरी, वरना बच्चा दूध कैसे पी सकता था!"

जादव बोला, "संभव है चंद मिनट पहले मरी हो! दूध और खून को जमने में समय लगता है।"

बिहारी बोला, "लगाते हो शर्त?"

जादव कुछ कहने ही वाला था कि भिखारिन का हाथ जरा-सा हिल गया और दायें हाथ की मुट्ठी थोड़ी-सी खुल गयी, फिर पलकें झपक गयीं।

"बेचारी अंतिम सांसों पर है," बिहारी बोला।

जादव ने कहा, "कभी रूप-रंग की अच्छी रही होगी, अब तो ढांचा भर है।"

"भूख से।"

"या बीमारी से।"

"मगर बच्चे को देखो, कैसा बेखबर दूध पी रहा है, जैसे तना टूटने के बाद भी डाली के पत्ते हरे रहते हैं!" जादव बोला।

बिहारी ने जादव से कहा, "कविता मत करो, अगर कुछ सहायता कर सकते हो

तो इस गरीब की कुछ सहायता कर दो। शायद बच जाए।"

जादव ने जेब से दस रुपये का नोट निकालकर नौजवान लड़की की अधखुली मुट्ठी में रख दिया।

अब खुली मुट्ठी की अंगुलियों में हौले-हौले हलचल-सी पैदा हुई। वे अंगुलियां जैसे कागज के उस टुकड़े को स्पर्श द्वारा पहचानने की कोशिश करने लगीं, फिर आप-ही-आप उस लड़की की आंखें अधखुली-सी हो गयीं, निगाहें जैसे उस दस रुपये के नोट को टटोल रही हों। और जब उन निगाहों को विश्वास हो गया, तब उसके सूखे होठों पर एक मुसकान आयी। दस रुपये के नोट का अर्थ है—दूध, अपने लिए और बच्चे के लिए, दूध का अर्थ है शक्ति, शक्ति का अर्थ है जीवन ... नौजवान लड़की के थके-हारे ढांचे में सिर से पांव तक एक कंपन-सा पैदा हुआ।

उसने आंखें खोलकर देखा ..सामने लगभग सौ गज की दूरी पर बनारसी मिठाईवाले की दूकान थी ... यहां दूध मिलता है, और मिठाई भी, हलवा-पूरी भी, और दाल-भाजी भी, नमकीन समोसे और कचौरी, दालमोठ, गुलाबजामुन... उसके मुंह में पानी भरने लगा।

आंखें खोलकर उसने दूरी नापी। जहां वह लेटी थी, वहां से बनारसी मिठाई की दूकान तक सौ गज की दूरी होगी। क्या वह वहां तक पहुंच सकती है? क्या उसके शरीर में इतनी शक्ति मौजूद है?

लड़की ने हाथ की सहायता से खिसकने की कोशिश की, फिर अपनी बांहों का सारा जोर लगाकर उठने की चेष्टा की। वह जरा-सी उठी थी कि फिर गिर गयी।

बच्चा जरा-सा कुलमुलाया, फिर दूध पीने में व्यस्त हो गया।

'हे भगवान, इस सूखे ढांचे में दूध कहां से उतरता है?'—बिहारी ने सोचा।

कुछ देर वह लड़की हांफती रही। उसका मुंह खुल गया था और सांस जोर-जोर से चलने लगी थी। फिर धीरे-धीरे उसके दोनों हाथों की मुट्ठियां तन गयीं, फिर उसका मुंह भी बंद हो गया, फिर उसने धीरे-धीरे सड़क पर लेटे-लेटे घिसटना शुरू किया।

चंद इंच, चंद फुट, चंद पग।

"वह बनारसी की दूकान की तरफ जा रही है," बिहारी बोला।

"मगर क्या वहां तक पहुंच सकेगी?" जादव ने पूछा।

"क्यों नहीं, ज्यादा-से-ज्यादा सौ गज दूरी होगी," बिहारी ने उत्तर दिया।

"लगाते हो शर्त?" जादव ने बिहारी को उकसाया।

"हो जाए," बिहारी गरदन को एक ओर हिलाकर बोला।

"बीस-बीस रुपये?" यादव ने पूछा।

"नहीं पचास रुपये," बिहारी बोला।

"चलो पचास रुपये सही," जादव ने

'हां' कर दी ।

"और जो जीत जाए, वह बनारसी मिठाईवाले के यहां खाना भी खिलायें और मलाईवाली लस्सी का गिलास भी ।"

"मंजूर है," जादव ने 'हां' कर दी ।

मगर लड़की को कुछ मालूम नहीं था कि उसके लिए क्या शर्त लग चुकी है । उसने शायद मौत से शर्त लगायी थी और पूर्ण दृढ़ता के साथ घिसटती चली जा रही थी । इंच-इंच घिसटते-घिसटते थक जाती तो रुक जाती, फिर एक लंबे समय तक बेसुध पड़ी रहती । ऐसा लगता जैसे मर चुकी हो ।

चंद गज घिसटने के बाद उसे जब बिहारी ने दस मिनट तक अर्धनिद्रा में देखा, तब उसे एक विचार आया । उसने जेब से पांच रुपये का नोट निकालकर लड़की की मुट्ठी में थमा दिया ।

लड़की बेसुध पड़ी रही । उसकी सांस भी बहुत धीमी थी और दिल की धड़कन भी अत्यंत कमजोर हो चली थी ।

"बस, अब मरने को है," जादव बोला ।

बिहारी चुप रहा ।

एकाएक बच्चा चिल्लाने लगा ।

बच्चे की आवाज शायद उस लड़की के कानों के किसी कोने में पहुंची होगी । उसने आंखें खोलीं [illegible] की ओर देखा, मुट्ठी में पांच रुपये के एक और नोट को देखा—पंद्रह रुपये ! पंद्रह रुपये से तो वह पंद्रह दिन बिता सकती है, मौत को जुल दे सकती है । शायद वह ठीक हो जाएगी । आखिर उसे रोग क्या है ? भूख ... केवल भूख ... और भूख का इलाज दूध है । लड़की ने आशाभरी नजरों से बनारसी मिठाईवाले की दूकान की ओर देखा
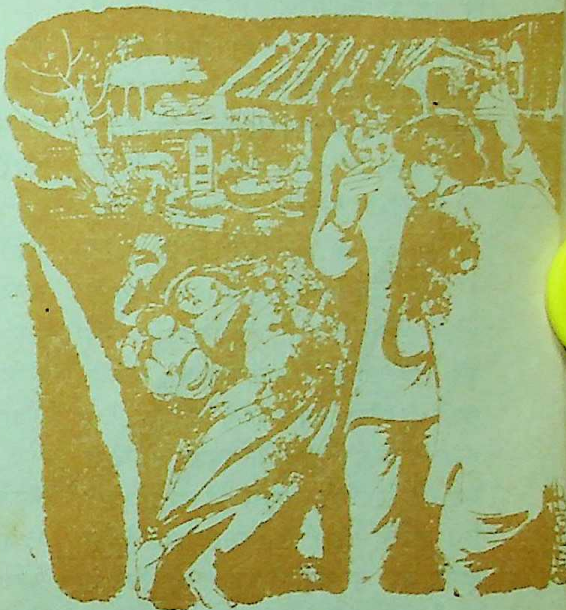
और फिर धीरे-धीरे घिसटने लगी ।

"शाबाश," बिहारी चिल्लाया ।

जादव बोला, "देखो, यह ठीक नहीं है ! इस तरह तुम उसे पांच-पांच रुपये का इंजेक्शन देते रहोगे, तो संभव है वह मिठाईवाले की दूकान तक पहुंच जाए ।"

बिहारी बोला, "अच्छा, अब मैं उसे

और नोट नहीं दूंगा।"

जादव बोला, "उसे अपनी शक्ति के सहारे घिसटने दो।"

घिसटते-घिसटते अब वह सिंडीकेट के नाके तक आ गयी। उसका सिर नाके के एक टेलीफोन-पोल से टकराया, मगर यह चोट लगने से उसे कुछ अधिक ही होश आ गया। अब वह आंखें खोले देख रही थी कि यहां से उसे सड़क क्रॉस करके बायें से दायीं तरफ की सड़क पर जाना होगा। उसने फिर उठने की कोशिश की। इस बार वह आधी उठ गयी, फिर एकदम गिर गयी।

"खत्म!" जादव बोला।

"नहीं," बिहारी ने झुककर देखा, "गरदन की रगें कांप रही हैं, देखो!"

वह फिर घिसटने लगी। एक हाथ से रास्ता टटोल रही थी, दूसरे हाथ से बच्चे को थामे हुए थी। आंखें बंद थीं, अंगिया खुली थी और जगह-जगह से फटी हुई थी। घुंघराले बाल मिट्टी में लिथड़कर लोथड़े-से बन गये थे, जैसी साधुओं की जटाएं होती हैं। लड़की की रंगत किसी समय गेहुंआ होगी, अब वह कहीं से गेहुंआ थी, कहीं से काली और कहीं से सांवली। जगह-जगह मैल की बट्टियां और गंदगी की परतें सूखकर शरीर का भाग हो चुकी थीं। कभी उसकी आंखें सुंदर होंगी, अब वहां गहरी गढ़ेदार झिल्लियां मौजूद थीं।

लड़की ने लुढ़कते-घिसटते सड़क पार कर ली। अपने शरीर का रुख और अपनी दिशा बदलते, बायें से दायें जाते हुए उसे बहुत कष्ट हुआ। एक बार तो बच्चा उसके हाथ से गिरकर बिलबिलाने लगा।

बिहारी ने पूछा, "बच्चा उसे वापस दे दूं?"

जादव ने सिर हिलाकर कहा, "नहीं, हम किसी तरह की मदद नहीं कर सकते; वर्ना शर्त लगाने का क्या फायदा?" बिहारी चुप हो गया।

लड़की का हाथ, जो बच्चे के निकट था, सड़क पर सुन्न-सा पड़ा था। फिर बिहारी ने देखा—वह हाथ धीरे-धीरे कांपने लगा, फिर वह हाथ धीरे-धीरे इधर-उधर खिसकने लगा, जैसे बच्चे को ढूंढ़ रहा हो। हौले-हौले वह हाथ खिसकता-खिसकता बच्चे तक पहुंच गया। शायद बच्चा भी मां का हाथ पहचानता था। जब वह हाथ बच्चे के शरीर पर हौले-हौले फेरा जा रहा था, तब बिलबिलाता हुआ बच्चा धीरे-धीरे चुप हो गया।

फिर उस हाथ ने बहुत कोशिश की कि बच्चे को घसीटकर मां के सीने तक ले आये, मगर वह हाथ सफल न हो सका। कुछ देर वह लड़की अपने बच्चे के पास बेसुध पड़ी रही, फिर जोर लगाकर उसने एक करवट ली, और करवट लेकर बच्चे के बिलकुल करीब हो गयी। बच्चे के हाथ उसके सीने तक गये, उसने मां की छाती ढूंढ़ ली। जब बच्चा दूध पीने लगा, तब मां धीरे-धीरे सीधी होती गयी। बच्चा फिर उसके सीने से लगा था। अब वह फिर बनारसी मिठाईवाले की दूकान की तरफ

घिसट सकती थी । अपने शरीर का सारा जोर लगाकर वह अपने लक्ष्य की ओर घिसटने लगी —चंद इंच, चंद फुट, चंद पग . . . अब रास्ता सीधा था। पहले ईगल शूज मार्ट, फिर एक जामुन का पेड़, फिर फेमस ड्रग स्टोर, फिर शंभू पानवाले की दूकान, फिर बनारसी मिठाईवाले की दूकान ।

उसका पूरा शरीर कांप रहा था । सारा चेहरा पसीने में डूब गया था । सांस की धौंकनी तेज-तेज चल रही थी । वह एक हाथ से बच्चे को थामे दूसरे हाथ से रास्ता टटोलती हुई घिसट रही थी । घिसटते-घिसटते वह ईगल शूज मार्ट पार कर गयी, और जामुन के पेड़ के पास जा पहुंची, हाथ टटोलकर उसने जामुन के पेड़ का तना टटोला । उसके चेहरे पर विजय की एक मुसकान प्रकट हुई, जैसे बरसात के मलगिजे समुद्र में कहीं से भूरे बादलों के फट जाने से चांद दिखायी दे जाए । जामुन के पेड़ तक आ जाने का मतलब है कि आधे से ज्यादा रास्ता पार हो गया ।

बिहारी ने जादव से कहा, “बस समझ लो कि तुम बाजी हार गये। अरे इन गरीबों में बड़ा दम होता है ! भूखे रहने की इनकी आदत होती है । अब जब कि हाथ में रुपये भी हैं. . . ”

बिहारी इतना कहकर चुप हो गया और जीत से भरी हुई नजरों से जादव की ओर देखने लगा ।

लड़की जामुन के पेड़ की छांव में पड़ी थी । वह देर तक बेसुध पड़ी रही । जगह-जगह से उसका शरीर छिल गया था मगर उसे इसकी चिंता नहीं थी । लेटे-लेटे वह अपनी सारी चेतना और अपनी पूरी शक्ति इकट्ठी करके आगे बढ़ने के लिए बेचैन हो रही थी ।

अब फिर उसने धीरे-धीरे घिसटना शुरू किया । दायीं तरफ जादव और बायीं तरफ बिहारी उसे ध्यान से देखते हुए चल रहे थे ।

मगर अब वे मोड़ काटकर बाजार के उस भाग में आ गये थे जहां अच्छी भीड़ थी । लड़की को इस तरह घिसटते देखकर एक आदमी बोला, “यह क्या हो रहा है ?”

“शर्त लगी है ।”

“किस बात की शर्त ?”

“क्या यह लड़की बनारसी मिठाई-वाले की दूकान तक पहुंच सकेगी ?”

“कितने की शर्त है ?”

“पचास रुपये की ।”

“ए रहमत !” वह आदमी एक तरफ को देखकर जोर से चिल्लाया, “अरे, रहमत जल्दी आओ !”

एक आदमी दौड़ा-दौड़ा उसके पास आया, बोला, “क्या बात है करीम खां ?”

रहमत ने बात समझायी, “देख इन लोगों ने पचास रुपये की शर्त लगायी है, तू बेट (शर्त) लगाता है ?”

“हां, हो जाए बेट !”

“कितने की ?”

“दस-दस रुपये की ।”

करीम ने रहमत के हाथ-पर-हाथ मारा, फिर लड़की की तरफ देखकर बोला, "ए छोकरी, अगर तू बनारसी की दूकान तक पहुंच गयी, तो तुझको पांच रुपये और दूंगा ।"

रहमत ने कहा, "नहीं पहुंच सकती । देखता नहीं आखिरी दमों पर है ?"

धीरे-धीरे बहुत-से लोग जमा होने लगे—खुसर-फुसर बातें, भांति-भांति के मशविरे । एक आदमी ने झल्लाकर कहा, "यह क्या बेहयाई है ! अरे यह छोकरी मां है मां ! इस बच्चे को नहीं देखते हो ? इन दोनों को उठाकर बनारसी की दूकान तक पहुंचा दो ।"

वह आदमी आगे बढ़ा, "कोई नहीं उठाता, तो मैं उठाकर ले जाता हूं ।"

एकसाथ बहुत-सी आवाजें आयीं—"खबरदार, जो लड़की को हाथ लगाया ! शर्त लग चुकी है !"

वह आदमी पीछे हट गया, भीड़ में बहुत-से लोग एक-दूसरे-से शर्त लगा रहे थे—पांच रुपये, सात रुपये, दो रुपये, आठ आने, एक चवन्नी ।

घिसटते-घिसटते वह लड़की फेमस ड्रग स्टोर तक आ पहुंची थी, मगर इस फेमस ड्रग स्टोर में भी उसके लिए कोई दवा मौजूद न थी, उसे इसी तरह आगे घिसटना होगा । अब कोई सत्तर-अस्सी आदमी होंगे, जो उसके पीछे-पीछे चल रहे थे ।

फेमस ड्रग स्टोर की दूकान पार करके वह एकाएक रुक गयी । देर तक बेसुध पड़ी रही । लगता था जैसे उसकी सांस भी रुक गयी है, दिल भी बंद है, गरदन भी एक ओर को लुढ़क गयी थी ।

"मर गयी शायद !" भीड़ सांस रोके उसके पीछे खड़ी थी ।

एक आदमी ने अपने छाते की नोक से उसकी पसली को दबाया । लड़की का शरीर धीरे-से हिला ।

"जीवित है ! जीवित है !" बिहारी जोर से चीखा । बिहारी के चीखते ही दूसरे वे लोग भी खुशी महसूस करने लगे, जिन्होंने लड़की के जीवित बनारसी मिठाईवाले की दूकान तक पहुंच जाने की शर्त लगायी थी ।

लड़की ने धीरे-से आंखें खोलीं । उन धुंधली-धुंधली झिल्लीनुमा आंखों में रोशनी की एक चमक पैदा हुई । लगा, जैसे आखरी दौड़ लगाने के लिए वह अपनी बुझती हुई जिंदगी की सारी ताकत इकट्ठा कर रही है । उसके जबड़े भिंच गये, गरदन सख्त हो गयी । सारे शरीर में सख्ती और शक्ति की लहर- सी आयी और घिसटना शुरू कर दिया, धीरे-धीरे ।

"तुझे बनारसी के यहां दूध पिलायेंगे मुफ्त में । शाबाश, लगा दे जोर कसके" —भीड़ से आवाजें आ रही थीं । अब भीड़ कोई दो सौ के लगभग होगी, और लगता था, जैसे लड़की के साथ-साथ वह भी घिसट रही है ।

लड़की घिसटते-घिसटते शंभू पान-वाले की दूकान भी पार कर गयी। भीड़ में से एक जोर का ठहाका गूंज उठा, मगर लड़की के कानों में उसकी आवाज ऐसे सुनायी दी, जैसे बादलों की गड़गड़ाहट सुनायी दे। उसका सारा शरीर पसीने में भीगा हुआ था। उसके ऊपर और नीचे के दांत जोर से इस तरह भिंच गये थे कि शायद अब कभी अलग न होंगे, जगह-जगह शरीर से खून बह रहा था।

अब लड़का दूध पीकर उसकी छाती पर सो गया था।

बस पंद्रह गज की दूरी रह गयी।

वह सात गज के फासले पर लेटरबॉक्स की तरफ जाने लगी, जो फुटपाथ में गड़ा था। अब उसकी आंखें बंद थीं और वह अटकल से घिसट रही थी। कोशिश करने के बावजूद उसकी आंखें नहीं खुलती थीं। धीरे-धीरे घिसटते हुई वह लेटरबॉक्स से टकरायी और चंद मिनट बेसुध पड़ी रही। पहले उसके हाथ कांपे और फिर उसका सारा शरीर कांपा। उसकी भिंची हुई बत्तीसी खुल गयी। जोर लगाकर आंखें खोलीं, जरा-सी। अधखुली आंखों के धुंधलके में उसने देखा कि कोई लाल-सी चीज है। कांपते हाथों से उसने उसे टटोला और वह गोल डब्बे के आसपास सरकने लगी। समझ की पकड़ ढीली पड़ रही थी। उसकी समझ में नहीं आता था कि वह कैसे इस गोल दायरे से छुटकारा पाये। धीरे-धीरे सरकते हुए उसने गोल डब्बे को हाथ लगाते हुए उसके चारों ओर दो-तीन चक्कर लगा डाले। उसका दिमाग धीरे-धीरे काम करने से इनकार करने लगा। सीधे घिसटने के बजाय अब वह उस लोहे के डब्बे के चारों ओर चक्कर लगा रही थी।

उस लड़की को बस इतना महसूस हो रहा था कि कोई गोल-गोल लोहे की चीज है जो उसे चारों तरफ से घेरे हुए है। जिधर वह जाती है, उधर वह उसके सामने आ जाती है और उसे बनारसी की दूकान तक नहीं पहुंचने देती। धीरे-धीरे अंतिम बार उसने लोहे के डब्बे के चारों ओर चक्कर काटा, मगर वह लोहे का घेरा उसके चारों ओर था।

एकाएक उसके साहस ने जवाब दे दिया। उसने सारा जोर लगाकर फिर घिसटना चाहा। मगर अब उसके शरीर के हर भाग ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया। फिर अचानक उसका शरीर ढीला पड़ गया। उसकी गरदन एक ओर को लुढ़क गयी। आंखों की पुतलियां घूमकर ऊपर चढ़ गयीं, फिर अंतिम सांस भी निकल गयी।

धीरे-धीरे भीड़ ने छंटना शुरू कर दिया। तब बिहारी ने सिर हिलाकर जोर से कहा, "धतेरे की, कमबख्त ने हरवा दिया!"

• वियोगी हरि

पंडित रामनरेश त्रिपाठी के साथ मेरा घनिष्ठ मैत्री संबंध था, यद्यपि वे मुझसे उम्र में लगभग तीन-चार बरस बड़े थे। कोईरीपुर (जिला सुलतानपुर) गांव के रहनेवाले, स्कूली शिक्षा केवल मिडिल तक, किंतु अपने ढंग के एक ऊंचे कवि व लेखक और समीक्षक हमारे त्रिपाठी जी थे। 'मिलन', 'पथिक' और 'स्वप्न' इन रचनाओं ने उनकी ख्याति सारे हिंदी-जगत् में फैला दी थी। विचारों में काफी हद तक मौलिकता और भाषा में जान। उनके द्वारा संकलित 'कविता-कौमुदी' तो आज भी याद की जाती है, वह पुरानी नहीं हुई है। उनकी लिखी बालोपयोगी कहानियां भी अनूठी हैं। थोड़ी-सी पूंजी को लेकर उन्होंने लेखन तथा प्रकाशन के क्षेत्र में काफी यश-अर्जन किया था। महाकवि नाथूराम 'शंकर' की यह पंक्ति त्रिपाठीजी द्वारा अर्जित यश की ओर इंगित करती है, यद्यपि इसमें थोड़ी-सी व्यंजना भी है :

पंडित रामनरेश त्रिपाठी
लूटा सुयश मार कृति-लाठी

यह हुआ थोड़ा-सा साहित्यिक परिचय। किंतु मेरे ये दो-तीन संस्मरण त्रिपाठीजी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हैं। 'हिंदी-मंदिर' नाम की प्रकाशन-संस्था उन्होंने इलाहाबाद में, जांसटनगंज में खोली थी। उसके पहले 'साहित्य-भवन' का उन्होंने प्रमुख रूप में संचालन किया था। हिंदी-मंदिर में मैं प्रायः दूसरे-तीसरे दिन जाकर बैठ जाता था और त्रिपाठीजी के साथ बातें किया करता था। अपनी जीवन-कहानी वे बड़े रोचक ढंग से सुनाया करते थे। अत्यल्प साधनों के सहारे एक मेधावी तथा परिश्रमी व्यक्ति कितनी कुछ प्रगति कर सकता है, यह उनके जीवन के प्रसंगों को सुनकर और प्रत्यक्ष भी देखकर स्पष्ट हो जाता है। एक रससिद्ध कवि होते हुए प्रकाशन-संस्था का एक-एक पाई का हिसाब रखने में भी वे सिद्धहस्त थे। उन्हीं के गांव के दो कार्यकर्ता हिंदी-मंदिर में काम करते थे। एक का नाम था रामबरन और दूसरे का रामसमुझ। त्रिपाठीजी उनको क्रमशः 'रामशकल' और 'राम-अकल' कहा करते थे! मेरे स्नेह-भाजन

भवानीप्रसाद गुप्त भी उन्हीं के गांव के थे और वे भी हिंदी-मंदिर में काम करते थे। कार्यकर्ताओं से त्रिपाठीजी कसकर काम लेते थे। इसकी वे प्रायः शिकायत करते थे।

एक दिन बंगला की 'शुकदेव' नामक एक सुंदर रचना पढ़कर वे फड़क उठे। मैं पास में बैठा था। बोले, "इस छोटी-सी पुस्तक को आप पढ़ डालिए।" बंगला भाषा का मेरा ज्ञान सीमित था, फिर भी प्रयत्न करके मैंने उसे पढ़ा और वह बड़ी रोचक लगी। तीन-चार दिन बाद त्रिपाठीजी ने कहा, "इसका स्वतंत्र भावानुवाद आप हिंदी पद्यों में कर डालें, तो बड़ा अच्छा होगा।" मैंने उसका अनुवाद त्रिपाठीजी की सलाह से किया और उसका प्रकाशन नवस्थापित 'साहित्योदय' संस्था से हुआ। अपवादरूप में यही मेरी छोटी-सी रचना खड़ी बोली में है। वह आज अप्राप्य है। मेरे उस पद्यानुवाद के पीछे त्रिपाठीजी की प्रेरणा थी।

यों तो जब कभी मैं इलाहाबाद जाता, त्रिपाठीजी से बिना मिले नहीं रहता था। एक बार दिल्ली में मेरे साथ हरिजन-निवास में वे दो दिन आकर ठहरे थे। साहित्य-संबंधी कुछ भी बात न करके हरिजन-कार्य के प्रति उन्होंने बड़ी दिलचस्पी दिखायी थी और कहा था कि 'अब तो अपने गांव में रहकर मैं भी यही काम करूंगा। क्या रखा है लिखने-लिखाने और पुस्तक-प्रकाशन के धंधे में!' घरेलू झंझटों से उन दिनों वे कुछ खिन्न थे। हमारे विद्यार्थियों ने जब आग्रह किया कि 'पथिक' काव्य के विषय में वे कुछ कहें, तो संध्या की प्रार्थना के पश्चात उन्होंने बड़ी सरल भाषा में 'पथिक' और 'मिलन' में के कुछ पद्य सुनाये और बताया कि देश-भक्ति-पूर्ण इन खंड-काव्यों को उन्होंने किन घटनाओं से प्रेरित होकर लिखा था। गांधीजी के प्रति अपनी श्रद्धा-भावना भी उसी प्रसंग में उन्होंने व्यक्त की थी, ऐसा कुछ याद आ रहा है। धीरे-धीरे त्रिपाठीजी
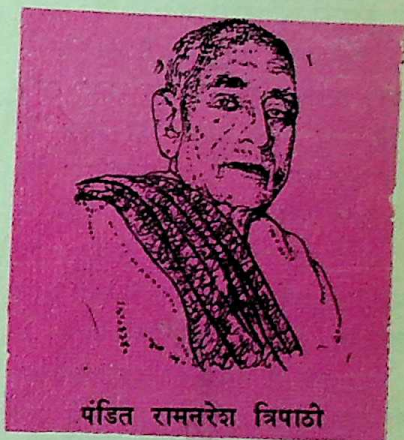
पंडित रामनरेश त्रिपाठी

का स्वास्थ्य गिरने लगा। एक बार पुरानी दिल्ली के स्टेशन पर केवल दस मिनट, जब कहीं वे जा रहे थे, मैं उनसे मिला था। यही हमारी अंतिम भेंट थी।

पंडित द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी

कोई दस वर्ष हुए होंगे, जब मेरे एक बुजुर्ग मित्र ने घरेलू चर्चा के दौरान कहा था कि, 'क्या बात है भाई, जो अभी हाल की बातें तो मैं भूल जाता हूं, पर साठ-

सत्तर साल पुरानी बातें याद आ जाती हैं, और याद रहती हैं?' मुझे तब इस पर विश्वास नहीं हुआ था, पर उनका कहना सही था। मैं अब स्वयं वैसा अनुभव कर रहा हूं। मैं भी हाल की पिछली कई बातों और नामों को मुश्किल से याद कर पाता हूं, जबकि बहुत पुरानी गयी-गुजरी बातें अपने-आप याद आ जाती हैं। तब के वे स्थान, वे नाम और वे घटनाएं ज्यों-की-त्यों याद हैं, याद करने में मस्तिष्क को कुरेदना नहीं पड़ता है।

पहले-पहल १९१८ में मैं अपने जन्म-स्थान छतरपुर से इलाहाबाद आया था। तभी मेरी प्रथम रचना 'प्रेम-पथिक' के प्रकाशक, आरा के श्री देवेन्द्रकुमार जैन के द्वारा श्रद्धेय पुरुषोत्तमदास टंडन से मैं मिला था। उनकी प्रेरणा से एक साल बाद हिंदी-साहित्य-सम्मेलन में काम करने लगा था। तब की, और फिर १९२० से १९२५ तक के समय की इलाहाबाद की ही बहुत सारी बातें अनायास जब याद आ जाती हैं, तब मन को सहज ही सुख मिलता है और शांति भी। इसी प्रकार हरिजन-कार्य के सिलसिले में देश के अनेक भागों में पैंतीस साल पहले की गयी यात्राओं की याद जितनी ताजा रहती है, वैसी इधर हाल के कुछ वर्षों की यादें नहीं।

हां, तो इलाहाबाद के वे सदा हरे रहनेवाले दिन मेरे स्मरण-पटल पर बहुत कुछ वैसे ही अंकित बने हुए हैं। वहां श्रद्धेय टंडनजी का तथा अनेक बुजुर्गों और मित्रों का जो सहयोग व स्नेह उन दिनों मिला था, वैसा फिर शायद ही कभी वहां मिला। सम्मेलन का अहियापुरवाला वह जर्जरित कार्यालय-भवन, फिर जांस-टनगंज में स्थित कार्यालय एवं उसके साथ हिंदी-विद्यापीठ और उसके बाद के सम्मेलन के वे कच्चे कमरे आंखों के सामने आज भी वैसे ही झूल उठते हैं। वहां कुछ वृक्षों को मैं पानी भी दिया करता था। सम्मेलन के नये सुंदर विशाल भवन तो बहुत पीछे खड़े हुए। उन कच्चे छोटे-छोटे कमरों में सम्मेलन के सारे विभागों का कार्य तब सुचारू रूप से होता था। वहीं बैठकर मैंने लघु कलेवरवाली 'सम्मेलन-पत्रिका' का एक या डेढ़ वर्ष संपादन किया था, और 'विनयपत्रिका' की टीका भी वहीं लिखी थी।

श्री चन्द्रशेखर शास्त्री, श्री जगन्नाथ-प्रसाद शुक्ल, श्री रामजीलाल शर्मा, प्रो. ब्रजराज, प्रो. गोपालस्वरूप भार्गव, प्रो. सालिगराम भार्गव, अध्यापक रामरत्न, श्री रामनरेश त्रिपाठी आदि मित्रों के स्मरण-चित्र सहज ही उभर आते हैं। पर एक चित्र बहुत ही स्पष्ट आंखों में समाया हुआ है और वह है पं. द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी का। चेहरे पर ब्राह्म तेज और दृढ़ता, ललाट पर ऊर्ध्वपुंड्र तिलक, शुभ्र धोती, बंद गले का लंबा कोट, सिर पर टोपी और हाथ में छड़ी। वे दिन साफ याद आ रहे हैं जब चतुर्वेदीजी हमारे सम्मेलन के प्रबंध-मंत्री थे।

दारागंज से नित्य नियमित तीन बजे इक्के पर सम्मेलन पहुंचते थे। चाहे घोर वर्षा हो, चाहे बैसाख-जेठ की चिलचिलाती धूप हो और लू चल रही हो, नियत समय पर उनके पहुंचने में कभी नागा नहीं होता था। अफसरी रौब था उनका। बैठते ही मेज पर रखे एक-एक कागज को ध्यान से देखते और उस पर आवश्यक टिप्पणी लिखते थे। एक भी पत्र बिना उत्तर दिये मेज पर नहीं छोड़ते थे। ऑफिस में व्यर्थ की बात नहीं होती थी और न अनावश्यक तौर पर किसी को वे वहां बैठने देते थे। ऑफिस का ठीक वैसा ही संचालन हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री ठक्कर बापा के द्वारा मैंने देखा।

मुझे कभी-कभी चतुर्वेदीजी के सामने जाते हुए डर-सा लगता था। एक बार सकुचाते और डरते हुए मैं प्रबंध-विभाग के कमरे में पंद्रह दिन की छुट्टी लेने के लिए पहुंचा। ठीक-ठीक याद नहीं आ रहा, उन दिनों पच्चीस या तीस रुपये मासिक पारिश्रमिक मैं लेता था। एक जरूरी काम से छतरपुर जाना था। छुट्टी नहीं दी। निराशा हुई। जब इक्के पर बैठकर वे दारागंज जाने लगे, तब मैंने फिर नम्रतापूर्वक छुट्टी की प्रार्थना की। 'कल देखूंगा' कहकर वे चले गये। दूसरे दिन छुट्टी की दरख्वास्त मंजूर हो गयी। पेशगी २२ रुपये भी मिल गये। कमरे में बुलाकर स्नेहपूर्वक चतुर्वेदीजी बोले, "ठीक समय पर आप वापस आ जाना। मैंने कल कड़क स्वर में छुट्टी देने से इनकार कर दिया था, उसका कोई विचार न करना।" मैं जानता था उनके स्वभाव को और उनके काम करने के तरीके को। सफाई पर उनका काफी ध्यान रहता था। इस पर भी कि हरेक चीज अपनी जगह पर ठीक तरह से रखी है या नहीं। अगर कोई चीज बेतरतीब रखी हुई देखते तो चपरासी को डांटते थे। दफ्तर की मर्यादा, प्रामाणिकता और अनुशासन पर वे सदैव ध्यान रखते थे। यह हुई सम्मेलन के दफ्तर की बात।

दारागंज भी कभी-कभी चतुर्वेदीजी के निवास-स्थान पर मैं जाया करता था। नियमित संध्या-वंदन एवं पूजन करके नियत समय पर वे बैठक में आकर बैठ जाते थे। कोई-न-कोई साहित्यिक मित्र आ जाते थे। उनके साथ दिल खोलकर खूब बातें होती थीं। रामानुजीय वैष्णव संप्रदाय के साथ उनका घनिष्ठ संबंध था, और मैं उस संप्रदाय के बारे में कुछ जानना व सीखना चाहता था। वह उनसे मिल जाता था प्रश्नोत्तर के रूप में। श्रीयामुनाचार्य के चरित का विशेष परिचय चतुर्वेदीजी से मुझे प्राप्त हुआ था। शायद उन्हीं दिनों 'सरस्वती' पत्रिका में उस विषय पर एक लेख भी पढ़ा था। 'प्रबुद्ध यामुन' नाटक मैंने उसी आधार को लेकर लिखा था। उन दिनों उनके साथ वैष्णव संप्रदायों एवं भक्ति-मार्ग पर जो चर्चा होती थी वह वास्तव में चिरस्मरणीय है। रामा-

नुजीय संप्रदाय के तो वे प्रकांड पंडित थे ही, अन्य वैष्णव साहित्य का भी उनका अच्छा अध्ययन था।

हिंदी-साहित्य पर भी उनका गहरा अनुराग था। चर्चा के दौरान प्रसंगानुकूल ब्रजभाषा के अनूठे पद्य और संस्कृत साहित्य की सूक्तियां सुनाकर वे मित्र-मंडली को बिमुग्ध कर देते थे। शब्द-रत्नों के भी वे ऊंचे पारखी थे। अनेक शब्दों के पर्याय तर्कपूर्वक रखते और उनको सिद्ध करते थे। जो भी लिखते उसमें उनका पारदर्शी विवेक और बौद्धिक संतुलन देखते ही बनता था। उनकी स्पष्टवादिता बोलने और लिखने दोनों में साफ दीखती थी। चाटुकारी चूंकि उनको प्रिय नहीं थी, इसलिए खरी भाषा का ही प्रयोग वे करते थे। कहीं भी बनावटीपन लेखन में, कथन में या बर्ताब में मैंने देखा हो ऐसा याद नहीं आ रहा। ऑफिस का काम चलाने में जहां अनुशासनप्रियता के कारण उनमें कठोरता देखने में आती थी, वहां मित्रों तथा साहित्यकारों के बीच में उनकी सरसता और विनोदप्रियता भी मैंने कई बार देखी थी।

श्रद्धेय चतुर्वेदीजी जिस पीढ़ी के थे और जिस समय के थे, वह पीढ़ी और समय प्रायः समाप्त हो गया है। समय के साथ-साथ नये व्यक्तियों और नयी परिस्थितियों ने तेजी से कई दिशाओं में अनेक कदम बढ़ाये हैं, किंतु लक्ष्य के प्रति अस्पष्टता और संशय देखने में आ रहा है। संभव है, उस पीढ़ी और उस समय के प्रति मोह होने के कारण ऐसा लग रहा हो, पर है यह तथ्य। भीड़ काफी है, और शोर बहुत है, किंतु यथेष्ट अनुशासन नहीं। ज्ञान बहुत विस्तृत हो गया है, किंतु गहराई में जैसे कमी आ गयी है। इस मत के विपरीत भी कहा जा सकता है। फिर भी उस गये-बीते युग के प्रति हृदय की भावना को, भले ही उसे मोह कहा जाए, कैसे भुलाया जा सकता है?

श्रद्धेय द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी का वैचारिक और भावात्मक तथा कर्तृत्व का जो रूप आज से पचास वर्ष पहले मैंने देखा था, और जिसे अंतर में संजोकर रखा है वह सदैव के लिए स्मरणीय और वंदनीय है।

—एफ १३/२ माडल टाउन, दिल्ली-९

दो व्यक्तियों ने एकसाथ एक टैक्सी को आवाज दी। टैक्सी रुकने पर दोनों में कुछ बातचीत हुई। एक व्यक्ति टैक्सी में बैठकर चला गया और दूसरा फुटपाथ पर खड़ी अपनी पत्नी के पास लौट आया। पत्नी ने नाराजगी से पूछा, "तुमने उस आदमी को क्यों बैठने दिया?"

"उसका जाना अधिक आवश्यक था, उसे कुश्ती का मुकाबला देखने जल्दी पहुंचना था!" पति ने समझाया।

सज्जनसिंह चौधरी, बुलंदशहर : क्या उर्वरकों के दीर्घकालीन उपयोग से भूमि के जैविक तत्त्वों का ह्रास होता है ?

जी नहीं। भूमि के जैव पदार्थ की मात्रा फसल की उपज, भूमि की संरचना, भूमि से जल का निकास और जलवायु (विशेषतः तापमान) पर निर्भर करती है। जैव तत्त्व की उत्पत्ति, विघटन, संघटन और भूमि में उसकी मात्रा आदि के विषय में अनेक अनुसंधान किये गये हैं। उनसे पता चलता है कि भूमि के भीतर कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थ परस्पर बदलते रहते हैं। खादों में दिया गया नाइट्रोजन, पोटाश, फास्फोरस, गंधक आदि तत्त्व अपने यौगिकों में बदलते रहते हैं तथा उर्वरकों में दिये गये तत्त्व बैक्टीरिया, फफूंदी और हरे पौधों में आत्मसात होकर कार्बनिक पदार्थ बनाते हैं। ह्यूमस की मात्रा पौधों की उपज, उनके अवशिष्ट भाग, बैक्टीरिया आदि सभी पर निर्भर है। भूमि में हवा और पानी का संचरण तथा तापमान इन प्रक्रियाओं की गति का नियमन किया करते हैं। इस प्रकार भूमि में जैव पदार्थ की मात्रा खाद देने की मात्रा पर ही निर्भर नहीं होती। अतः यह भ्रम ही है कि उर्वरकों के दीर्घकालीन उपयोग से भूमि के जैविक तत्त्वों का ह्रास होता है।

रजनीकांत द्विवेदी, मऊरानीपुर : मामांग उत्सव क्या होता है ?

मामांग केरल में तिरुनावाया क्षेत्र के पास की विशाल भूमि में मनाया जानेवाला एक उत्सव था। कहा जाता है कि संस्कृत के 'महामघ' का भ्रंश होकर मामांग बना है। इसमें केरल के राजाओं का तिलक, महत्सम्मेलन, व्यवसाय-प्रदर्शन, कला, संगीत आदि का प्रदर्शन होता था। प्राचीन काल में यह उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। अब तो राजा ही नहीं रहे, इसलिए यह उत्सव भी बंद हो गया।

पृथ्वीराज देवड़ा, जयपुर : मोनेलीन क्या है ?

पश्चिम अफ्रीका के जंगलों में लाल फलोंवाली एक बूटी खोजी गयी है, जिसका नाम है—डायोस्कोरियो फिलम कम्यूनिसाइ। इस बूटी से कम कैलोरीवाला एक मीठा प्रोटीन निकाला गया है, जो संसार का सबसे मीठा पदार्थ सिद्ध हुआ है। इसी को मोनेलीन कहते हैं। यह चीनी से तीन हजार गुना मीठा होता है।

शशि मोंगा, अंबाला छावनी : मेरी एक सहेली के घर में महात्मा गांधी का एक ऐसा चित्र लगा है कि उसे आप किसी

भी कोण से देखें, आपको लगेगा कि गांधी-जी आपकी ही तरफ देख रहे हैं।

क्या यह सचमुच कोई चमत्कार है?

जी हां, चमत्कार तो है, लेकिन कोई दैवी चमत्कार नहीं, बल्कि एक सामान्य दृष्टिभ्रम का चमत्कार। यदि किसी चित्र में किसी व्यक्ति का पोर्टेट बनाते समय उसकी आंखों की पुतली को आंखों के ठीक बीचोंबीच बना दिया जाए तो किसी भी कोण से देखनेवाले को ऐसा लगेगा मानो पोर्टेटवाला व्यक्ति उसे ही देख रहा है। आजकल विज्ञापनों में चित्रकला के इस चमत्कार का काफी उपयोग किया जाता है, जिससे आंखें ही नहीं चित्र में बने व्यक्ति की उठी हुई अंगुली भी देखने-वाले की ओर उठी रहती है। इस तरह की अंगुली भी चित्र में एकदम सीधी, सामने की ओर इशारा करती हुई बनायी जाती है।

ज्योत्सना देसाई, अहमदाबाद : कभी-कभी फिल्मों में दिखाते हैं कि कोई व्यक्ति अदृश्य हो जाता है। वह सबको देख सकता है, परंतु उसे कोई नहीं देख सकता। क्या यह संभव है?

जी नहीं, यह केवल कल्पना है। कारण यह है कि अदृश्य हो जाने का अर्थ होगा उस व्यक्ति के पूरे शरीर का पार-दर्शी हो जाना। पहले तो यह बात संभव ही नहीं, और एक क्षण को यदि हम मान भी लें कि मनुष्य का शरीर पारदर्शी हो सकता है, तो हमें यह मानना पड़ेगा कि वह पारदर्शी व्यक्ति यदि किसी को दिखायी नहीं देता तो स्वयं भी किसी को नहीं देख सकता। ऐसा व्यक्ति निश्चित रूप से अंधा होगा, क्योंकि उसकी आंखें पारदर्शी हो जाने पर प्रकाश का अपवर्तन नहीं कर सकतीं। आंखों की कार्यप्रणाली यह है कि उनका 'रेटीना' सामने की चीजों के बिंब-निर्माण के लिए प्रकाश का अप-वर्तक होना चाहिए। लेकिन पारदर्शी आंखों का अपवर्तन-इंडेक्स हवा के समान शून्य होगा, अतः ऐसी आंखें कुछ भी नहीं देख सकेंगी।

सुरेश पांडेय, मुजफ्फरनगर : क्या विद्युत के कुचालक अधातुक तत्त्वों को सुचालक धातुओं में बदला जा सकता है? यदि हां, तो कोई उदाहरण दें और यह भी बताएं कि क्या इस प्रक्रिया में उन तत्त्वों में कोई मौलिक परिवर्तन हो जाएगा?

जी हां, अधातुक तत्त्वों को धातुओं में (या लगभग धातुओं में) बदला जा सकता है। उदाहरण के लिए हम फास्फो-रस को ले सकते हैं। सामान्यतः सफेद या लाल फास्फोरस अधातुक और कुचा-लक होता है, लेकिन भूगर्भ में अत्यधिक दबाव के कारण काला फास्फोरस इतना भारी और सघन हो जाता है कि वह अनेक धातुओं के समान सुचालक बन जाता है। भौतिकी में इस प्रक्रिया को दबावजन्य धात्वीकरण कहते हैं। इस प्रक्रिया में धात्वीकृत अधातुक तत्त्वों में कोई मौलिक परिवर्तन नहीं होता, बस अत्यधिक दबाव के कारण उनका क्रिस्ट-

लीय ढांचा पुनर्व्यवस्थित हो जाता है। यह उसी प्रकार होता है जैसे ग्रेफाइट कार्बन में कुछ भी जोड़े-घटाये बिना अत्यधिक दवाव के द्वारा उसके क्रिस्टलीय ढांचे को पुनर्व्यवस्थित कर दिया जाए तो वह हीरा बन जाएगा।

अनुपमा जैन, नयी दिल्ली : वर्षा ऋतु में तापमान प्रायः ग्रीष्म ऋतु के तापमान की अपेक्षा कम रहता है, फिर भी देखा गया है कि बरसात के दिनों में गरमी असह्य हो जाती है। इसका क्या कारण है?

अधिक ताप को सहन करने में शरीर पर आनेवाला पसीना हमारी बहुत सहायता करता है। पसीना वास्तव में हमारे शरीर की तापरोधी प्रक्रिया की ही अभिव्यक्ति है। गरमी के दिनों में गरम हवा की जो परत हमें घेरे रहती है उसकी गरमी को हमारा पसीना काफी हद तक सोख लेता है। लेकिन शरीर से भरपूर पसीना निकलने के लिए यह आवश्यक है कि चारों ओर की हवा एकदम सूखी हो। बरसात के दिनों में हवा में नमी होने के कारण पसीना अच्छी तरह नहीं निकल पाता और हमें उमस तथा गरमी महसूस होने लगती है।

ओमप्रकाश कालिया, यमुनानगर : वैवस्वत मनु कौन थे?

पुराणों के अनुसार ब्रह्मा के एक दिन को कल्प कहते हैं। इस एक दिन को चौदह भागों में बांटा गया है और एक-एक विभाग को मन्वंतर कहते हैं। प्रत्येक मन्वंतर का अधिपति एक मनु माना जाता है। इस प्रकार चौदह मनु बताये जाते हैं—स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, श्राद्धदेव, सार्वणि, दक्ष सार्वणि, ब्रह्म सार्वणि धर्म सार्वणि, रुद्र सार्वणि, देव सार्वणि, इंद्र सार्वणि। इनमें से श्राद्धदेव मनु को ही वैवस्वत मनु कहते हैं। ये सातवें मनु सातवें मन्वंतर के (जो आजकल चल रहा माना जाता है) अधिपति कहे जाते हैं।

पुराणों के अनुसार ये विवस्वान और विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा के पुत्र थे। इनके भाई यम और बहन यमी तथा श्रद्धा पत्नी मानी जाती है, जिससे इक्ष्वाकु, नभग, धृष्ट, शर्याति, नरिष्यंत, नाभाग, दिष्ट, करूष, पृषध्र और वसुमान नामक इनके दस पुत्र हुए बताये जाते हैं। **—बिंदु भास्कर**

● योगेशचन्द्र शर्मा

हथियारों की होड़ ने जनता के पेट पर लात मारी है। नित नये और अधिकाधिक मारक शस्त्र बनाने की उत्सुकता ने विश्व की जनता को सुख-सुविधा के अधिक साधन पा सकने से वंचित कर दिया है। संयुक्तराष्ट्र महासभा ने शस्त्रास्त्रों की होड़ का अध्ययन करने के लिए जो विशेषज्ञ-समिति गठित की थी, उसकी रिपोर्ट के अनुसार १९६१ से १९७१ के बीच संसार का सैनिक व्यय ५०० खरब डालर से बढ़कर २,००० खरब डालर (१५,००० खरब रुपये) वार्षिक हो गया है। यह व्यय विश्व की कुल राष्ट्रीय आय का साढ़े छह प्रतिशत है। १५,००० खरब रुपये की इस राशि को यदि विश्व की समस्त जनसंख्या में वितरित किया जाए तो प्रति व्यक्ति लगभग चार लाख रुपये से भी अधिक आयेंगे।

आणविक प्रहार के लिए सोवियत संघ में २,००० तथा अमरीका में ४,६०० केंद्र सदैव तैयार रहते हैं। अमरीका में इन केंद्रों की संख्या १९७५ तक बढ़ाकर ११,००० करने की योजना है। परमाणु बम का ही नहीं, बल्कि अन्य अनेक ऐसे घातक शस्त्रों का आविष्कार भी किया गया है, जो इस सुंदर धरती को कुछ ही घंटों में वीरान कर सकते हैं। 'बोट्यूलिस' नामक जैविक तत्त्व को अगर विश्व के समुद्रों और नदियों में मिला दिया जाए तो प्राणी जगत छह घंटे में नष्ट हो सकता है। अनुमान है कि १९८० तक आज के अणुशक्तिविहीन राष्ट्रों में इतना प्लूटोनियम प्राप्त होने लगेगा कि वे प्रति सप्ताह १०० अणुबम बना सकने में सक्षम होंगे।

विश्व के लगभग १४२ राष्ट्रों में तीस राष्ट्रों की प्रति व्यक्ति आय ४०० रुपये के लगभग या उससे भी कम है। दूसरी ओर आज का विश्व शस्त्रों पर प्रति व्यक्ति, प्रतिवर्ष चार लाख रुपये नष्ट कर देता है। वियतनाम के अनावश्यक युद्ध में अमरीका को अपने शत्रु का प्रत्येक सिर प्राप्त करने के लिए लगभग तेरह लाख रुपये व्यय करने पड़ते थे।

शस्त्रों की प्रतियोगिता के संदर्भ में अकसर एक मनोरंजक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है। यूरोप के एक शस्त्र-विक्रेता ने एक पनडुब्बी यूनान को बेच दी। इसके बाद वह टर्की की सरकार के पास पहुंचा और उसे पनडुब्बी के कारण यूनान की बढ़ी हुई शक्ति का भय दिखलाया।

टर्की ने दो पनडुब्बियां खरीद लीं। इस प्रकार सरलता से मौत के इन सौदागरों का व्यापार चलता रहता है। यदि हम केवल भारतीय उपमहाद्वीप को देखें तो पता चलेगा कि पिछले पच्चीस वर्षों में भारत और पाकिस्तान ने लगभग ग्यारह अरब रुपये के शस्त्र खरीदे हैं। स्पष्ट ही इनमें पाकिस्तान के द्वारा खरीदे गये शस्त्र कहीं अधिक हैं। शस्त्र-विक्रेता राष्ट्रों ने जब

सुरक्षा पर व्यय कर देता है।

पिछले कुछ वर्षों में यह होड़ विकासशील देशों में अधिक बढ़ी है। शस्त्रों के खरीदार देशों में एशिया के देश सबसे आगे हैं। इनमें अधिकांश देशों की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय १०० डॉलर से भी कम है।

इन युद्धों में टकरानेवाले शस्त्र अधिकांशतः बड़ी शक्तियों द्वारा दिये गये थे।
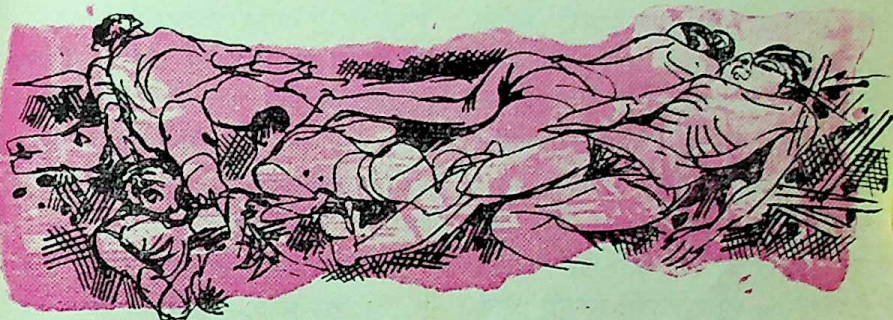
पाकिस्तान को शस्त्र दिये तब भारत को भी अपने लिए शस्त्रों का प्रबंध करने की आवश्यकता हुई। इससे योजनाओं में भी कुछ कटौती करनी पड़ी। सैनिक-संतुलन के नाम पर बड़े राष्ट्र वास्तव में सैनिक होड़ को ही प्रोत्साहन देते हैं। 'सैनिक-संतुलन' शब्द तो केवल कूटनीतिक शिष्टता का शब्द है। इस होड़ में यद्यपि भारत का सुरक्षा-व्यय अधिक नहीं है, वह मुश्किल से अपने बजट का एक चौथाई भाग ही सुरक्षा पर व्यय करता है। अब १९७३-७४ के बजट में तो इस व्यय में, पिछले वर्ष की तुलना में भी कमी है। मगर पाकिस्तान अपनी आमदनी का आधे से अधिक भाग

अरब-इजराइल-संघर्ष में शस्त्रों की दौड़ तो काफी समय से है और अब भी वह समान गति से चल रही है। १९६७ में केवल कुछ माह की अवधि में ही अकेले संयुक्त अरब गणराज्य को सोवियत संघ ने १,७०० करोड़ रुपये के मूल्य के हथियार बेचे। इजराइल की आवश्यकता अमरीका पूरी करता रहा है। फ्रांस और इंगलैंड से भी वह शस्त्र खरीदता है। इराक की सोवियत संघ से मैत्री-संधि हो जाने के बाद ईरान ने अनावश्यक रूप से अपनी सैनिक-शक्ति बढ़ा ली है। पिछले दस वर्षों में उसका सैनिक-व्यय दस गुना बढ़ गया है। १९५५ में उसका सैनिक-

व्यय केवल दस करोड़ रुपये का था। १९६२-६३ में यह व्यय बढ़कर १९.५ करोड़ हो गया और आज १९७३-७४ में यह व्यय २०० करोड़ पर जा पहुंचा है। स्पष्ट ही ऐसी स्थिति में अफगानिस्तान और भारत-जैसे पड़ोसी देशों के लिए खतरा महसूस करना और उसके अनुरूप अपनी सैनिक तैयारी करना स्वाभाविक है। खतरा तो पाकिस्तान के लिए भी कम नहीं है, मगर अपनी भारत-विरोधी भावनाओं के कारण वह अभी इस खतरे को महसूस नहीं कर रहा है।

शस्त्रों की इस होड़ को प्रोत्साहित करने का प्रमुख दायित्व उन देशों पर है जो शस्त्रों के व्यापार में लगे हैं। इनमें मुख्य रूप से अमरीका और सोवियत संघ हैं। इंगलैंड, फ्रांस, इटली, कनाडा, चीन, बेल्जियम, स्वीडन, पश्चिमी जरमनी, चेकोस्लोवाकिया तथा इजराइल का नाम भी इस व्यापार के साथ जुड़ा है। पिछले कुछ समय से भारत ने भी शस्त्रों का निर्यात प्रारंभ किया है, मगर निर्यात में केवल मित्रदेशों को कुछ विशेष प्रकार के अस्त्र-शस्त्र ही भेजे जाते हैं। मुख्य उद्देश्य न तो लाभ कमाना है और न शस्त्रों की होड़ को प्रोत्साहन देना। विश्व का लगभग दो-तिहाई शस्त्र-व्यापार अमरीका और सोवियत संघ के हाथों में है। बीस प्रतिशत पर इंगलैंड और फ्रांस का नियंत्रण है। शेष अन्य छोटे व्यापारियों में बंटा हुआ है। अभी तक इस व्यापार में अमरीका सर्वोपरि था। १९७० में अमरीका ने तीसरी दुनिया के देशों को ८,००० लाख डालर के हथियार बेचे थे। इस समय तक अमरीका विश्व के विभिन्न राष्ट्रों को २२ लाख राइफल, १४ लाख छोटी बंदूकें, ८३,००० मशीनगन, ३१,००० मोर्टार्स, २५,००० फील्डगन, ९३,००० लड़ाकू यान, २,५०० समुद्री लड़ाकू जहाज और नौकाएं, २०,००० टैंक, ४,५०,००० ट्रक तथा ३१,००० प्रक्षेपास्त्र दे चुका था। १९७० के बाद से अमरीका इस व्यापार में कुछ पिछड़ने लगा और रूस आगे बढ़ने लगा। १९६७ में रूस ने सर्वाधिक अस्त्र-शस्त्रों का निर्यात किया। आज वह २९ देशों को शस्त्रास्त्र दे रहा है।

ये देश शस्त्रों का निर्यात क्यों करते हैं? कारण अनेक हैं। पहला कारण तो व्यावसायिक भावना ही है। शस्त्रों के व्यापार में अच्छा लाभ हो जाता है। इंगलैंड और फ्रांस तो मुख्यतः इसी मनोवृत्ति से शस्त्रों का निर्यात करते हैं। इस व्यापारिक भावना के परिप्रेक्ष्य में ही वर्तमान में शस्त्रों की बढ़ती होड़ को देखा जा सकता है। दूसरे, इस प्रकार से शस्त्रों की सहायता देकर वे दूसरे देशों को अपने खेमे में मिलाने की कोशिश करते हैं। कम-से-कम वे उन्हें अपने ऊपर निर्भर तो बना ही लेते हैं क्योंकि उन शस्त्रों की मरम्मत के लिए तथा फालतू पुर्जों के लिए उन्हें विक्रेता-राष्ट्रों पर ही निर्भर करना पड़ता है। तीसरे, विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में

शस्त्र-संतुलन बनाये रखकर और उन्हें समय-समय पर आपस में लड़ाते हुए वे अपने प्रभुत्व को कायम रख सकते हैं। चौथे, कोई देश अगर अधिक शक्तिशाली होकर बड़े राष्ट्रों के लिए चुनौती बनने लगे तो उसके पड़ोसी राज्यों को अस्त्र-शस्त्र देकर और उन्हें शक्तिशाली बनाकर वे उसकी प्रगति को रोक सकते हैं। पांचवें, शस्त्रों का किसी देश को विक्रय करके वे उसकी आंतरिक राजनीति में भी हस्तक्षेप कर सकते हैं। शस्त्रों को बेचते समय विक्रेता देश अकसर विभिन्न प्रकार की शर्तें लगा देते हैं और इस प्रकार इस सहायता के दबाव में मनचाहा काम करवा लेते हैं। अमरीका ने दक्षिण कोरिया को इस शर्त पर शस्त्र दिये थे कि वह दक्षिण वियतनाम में अपनी सेना भेजेगा।

शस्त्रों के व्यापार और उसकी बढ़ती होड़ के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि शस्त्र-विक्रेता राष्ट्र नवीनतम और सर्वाधिक घातक शस्त्र अपने खरीदारों को नहीं बेचते। ऐसे हथियार तो वे स्वयं अपने नियंत्रण में रखते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय सामरिक अध्ययन संस्थान ने अपनी १९७३-७४ की रिपोर्ट में स्पष्ट कहा है कि अनेक वार्ताओं और समझौतों के बावजूद विश्व की बड़ी शक्तियों में सैनिक-क्षेत्र में प्रतिद्वंद्विता और संघर्ष की स्थिति में तनिक भी कमी नहीं हुई है। कुछ समय पूर्व अमरीका और सोवियत संघ में प्रक्षेपास्त्रों के कार्यक्रम पर अस्थायी रूप से प्रतिबंध लगाने के लिए समझौता हुआ था। इससे आशा व्यक्त की जाने लगी थी कि इन दोनों देशों के सुरक्षा-व्यय में कुछ कमी आयेगी। मगर यह दुराशा ही सिद्ध हुई। दोनों ही देश एक-दूसरे से अधिक घातक शस्त्र बनाने की योजना में संलग्न हैं। अमरीका के पास इस समय 'डी-३' किस्म के ३५० अंतर्महाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्र हैं, जो एक साथ तीन अणुबम ले जा सकते हैं। सन १९७५ तक अमरीका की योजना इन प्रक्षेपास्त्रों की संख्या को बढ़ाकर ५५० कर देने की है। इसके उत्तर में सोवियत संघ 'एस. एस. १६', 'एस. एस. १७', 'एस. एस. १८', तथा 'एस. एस. १९' किस्म के अंतर्महाद्वीपीय प्रक्षे-

पास्त्र बनाने में व्यस्त है, जो एक साथ कई अणुवम ले जा सकने में समर्थ हैं।

बड़े देशों की शस्त्र-होड़ में चीन अपेक्षाकृत नया है, मगर उसकी प्रगति की रफ्तार अन्य देशों की तुलना में कहीं अधिक तेज रही है। उसने अपने परमाणु-शस्त्रों का परीक्षण १९६४ में प्रारंभ किया था और अब तक वह पंद्रह आणविक परीक्षण कर चुका है। अनुमान है कि अब तक उसके पास बीस किलो टन शक्ति के १२० बम इकट्ठे हो गये हैं। प्रक्षेपास्त्र का प्रथम परीक्षण उसने १९७० के अंत में किया था और अब तक वह लगभग १५ से ३० तक प्रक्षेपास्त्रों का निर्माण कर चुका है। १९७५ तक उसकी योजना ८० से १०० तक प्रक्षेपास्त्र तैयार करने की है। विशेष बात यह है कि अब वह दूर तक मार करनेवाले अंतर्महाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्र तैयार करने में व्यस्त है। यह प्रक्षेपास्त्र ११,०४० किलोमीटर तक प्रहार कर सकेगा। एक समाचार के अनुसार चीन द्वारा बनाया जानेवाला यह प्रक्षेपास्त्र, सोवियत संघ के सबसे बड़े प्रक्षेपास्त्र से भी अधिक बड़ा होगा। संभवतः बहुत जल्दी ही वह उसका परीक्षण करने वाला है।

पिछले वर्ष १९७२-७३ में चीन के खाद्य तथा औद्योगिक उत्पादन में भयंकर गिरावट आयी थी। इस वर्ष भी उसमें सुधार होने के कोई आसार नजर नहीं आ रहे। इससे चीन में आम आदमी की जिंदगी बड़ी कष्टकर बनती जा रही है। लोगों के भूखे या अधभूखे रहने के समाचार भी मिले हैं। हजारों लोग चीन से पलायन करके हांगकांग पहुंचने लगे हैं। इन तथ्यों के बावजूद चीन ने अपने सुरक्षा-बजट में कोई कमी नहीं की है। चीन में सुरक्षा पर व्यय भारत से अठगुना अधिक है।

संयुक्त राष्ट्र ने १९७० से अगले दस वर्षों को निशस्त्रीकरण दशक घोषित किया है। पर्याप्त समय व्यतीत हो जाने के उपरांत भी अभी तक इस दिशा में कोई उल्लेखनीय प्रगति नजर नहीं आती। विश्व में शस्त्रों की होड़ के आंकड़े देखकर तो यह लगता है, जैसे हम निशस्त्रीकरण की विपरीत दिशा में जा रहे हों। ऊपरी तौर पर प्रायः सभी देश शस्त्रों पर सीमा लगाने का समर्थन करते हैं, मगर अंदर-ही-अंदर अपनी शक्ति को और अपने शस्त्र-भंडार को बढ़ाते भी रहते हैं। निशस्त्रीकरण-समिति में बड़े राष्ट्र केवल अपने स्वार्थों में लगे रहते हैं। वास्तव में निशस्त्रीकरण के लिए बड़े राष्ट्रों का विशेष उत्तरदायित्व है। अगर वे अपने शस्त्र भंडार को और अधिक बढ़ाने का मोह छोड़ दें तथा दूसरे देशों को शस्त्र देने पर पूर्ण नियंत्रण लगा दें तो कोई कारण नहीं है कि हम समस्या का समाधान न पा सकें।

—प्राध्यापक, राजनीति शास्त्र, राजकीय कालेज, दौसा (राज.)

प्रवेश

"कविता सिर्फ अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, और कुछ भी है। सार्थक अभिव्यक्ति देने के लिए कई बार वेदनाओं की अथाह कालिंदी में उतरा हूं—इस उद्देश्य से कि खोयी हुई गेंद शायद हाथ लग जाए। अभी तो हर बार अपूर्णता और खालीपन कालिया नाग की तरह सिर पर उठाये लौटा हूं। गेंद की तलाश जारी है। तलाश के नये अभियानों में आस्था भी है, लेकिन उस सीमा तक, जहां वे मेरी अपनी सीमाओं का अतिक्रमण नहीं करते।"

गूंज रही हैं अब भी नेपथ्य में
कुछ आवाजें
जो किसी नाटक का अभ्यास करते वक्त
रह गयी हैं जाने-अनजाने

शिलालेखों-सा गड़ा हुआ है
आज भी वह समय
जब हमने पीपल के पीले पत्तों पर लिखी
प्रेम-पांडुलिपियां पढ़ी थीं

एक जोरदार धमाके के बाद
सब हो गया था अस्त-व्यस्त
सजे हुए वायदे, हो गये थे—
बियाबान जंगल
और हम बीनते रहे थे
लकड़ियों-जैसे, इधर-उधर बिखरे
अपने अरमान

कुहरे में तैरती हुई
सुबह की सफेद बतख
हर रात धारण कर लेती है
उल्लुओं की शक्ल
डरने लगते हैं—
त्वचा के सैकड़ों झरोखों से झांकते दर्शकगण
सपनों में आती है एक प्रेतनी

अब भी गूंज रहा है नेपथ्य में
उस प्रेतनी का जोरदार अट्टहास
जिसका वजन एक तमाचे से कम नहीं

—मधुसूदन आनंद
एकाउंट्स विभाग,
टाइम्स ऑव इंडिया, नयी दिल्ली-१

शिकार-कथा

• कुंवर विक्रमसिंह

झील से उभरती आत्माएं

भारतीय विद्रोह से बाद की बात है। आगरा कालेज के एक प्रोफेसर से मेरी दोस्ती हुई। उनके भरतपुर के राजकुमार से बहुत अच्छे संबंध थे। भरतपुर के जंगलों में उनके लिए कोई मनाही नहीं थी। राजघरानों के लिए सीमित क्षेत्रों में भी वे जा सकते थे। शिकार का नशा या तो मैं लेकर पैदा हुआ था या घुट्टी में पिला दिया गया था। प्रोफेसर साहब उन दिनों कानून पढ़ने में व्यस्त थे। उन्होंने मेरा परिचय भरतपुर के राजकुमार से करवा दिया था। बड़े दिन की छुट्टियां आयीं और मैंने शिकार-यात्रा की बात की तो वे टाल गये। मैंने अधिक जोर नहीं दिया, पर एक दिन सरकारी जीप में भरतपुर के लिए रवाना हो गया। जिमी से उन दिनों मेरी मुलाकात नहीं थी।
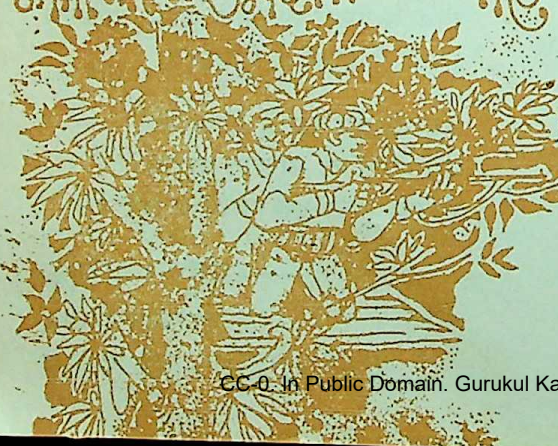
भरतपुर दरबार में मेरी क्या आवभगत हुई इस बात का कोई महत्त्व नहीं। खातिरदारियां तो तब होती ही थीं। राजकुमार ने शाही शिकारियों में से एक को मेरे हवाले कर दिया। मैंने बहुत पहले से एक कहानी सुन रखी थी—भरतपुर के जंगलों में एक झील है। उसके बीच में कोई तथाकथित खजाना छिपा है और वहां एक द्वीप-सा बन गया है। एक बहुत पुराना बरगद का पेड़ है। आसपास घनी झाड़ियां हैं और वहीं एक काला तेंदुआ रहता है जो खजाने की रक्षा करता है, आदि।

राजकुमार ने जब मुझसे पूछा कि 'किस तरफ जाने का इरादा है', तब मैंने मुसकराकर कहा था, "सुना है आपके यहां कोई खजाना छिपा है, जंगलों के बीच किसी झील के द्वीप में !"

"आप शिकार के लिए आये हैं या . . ." आगे की बात उन्होंने पूरी नहीं की, कंधे भर उचकाये। मैंने चूंकि कोई जवाब नहीं दिया इसलिए थोड़ी देर बाद खुद ही बोले, "जैसी आपकी मर्जी।"

दूसरी शाम, सूरज निकलने से पहले ही मैं भयभीत शिकारी को साथ लिये झील के किनारे पहुंच गया। मेरा इरादा तो बीच के उस द्वीप पर जाने का था लेकिन शिकारी किसी तरह भी तैयार नहीं हुआ। मैंने भी सोचा, एक दिन यहीं सही।

शिकारी ने झील के किनारे बेर के एक पेड़ पर मचान बनाया और सूरज छिपते-छिपते हम मचान पर थे। शिकारी भय से कांप रहा था। बात सिर्फ जंगल और शिकार की होती तो उसके लिए आम बात थी, यहां तो शाही खजाने की बात थी जिसकी रखवाली महारानी और उनका पालतू तेंदुआ सदियों से करते आ रहे हैं! अंधविश्वासों की बात मैं नहीं मानता, लेकिन अपने शिकारी जीवन में कहीं-कहीं लोगों में व्याप्त भय से मेरी भी आत्मा कांपी है। चमत्कार मानने पर मैं भी विवश हुआ हूं, लेकिन वहां ऐसी कोई बात नहीं थी।

रात ठंडी थी। चांदनी में झील का पानी चांदी-जैसा लग रहा था। समय खिसकने लगा पर कहीं कुछ भी नहीं हुआ। मुझे बताया गया था कि महारानी की आत्मा दिखायी पड़ेगी और महाराजा एक उल्लू के वेश में आयेंगे। उनका चहेता तेंदुआ तो आता ही।

आधी रात जरूर बीत गयी होगी। गहरी नीरवता को तोड़ते हुए शिकारी फुसफुसाया—"देखिए, देखिए! वह रहा!" उसने एक हाथ से मेरी बांह थाम ली थी और दूसरे हाथ की अंगुली से झील के द्वीप की ओर इशारा कर रहा था।

अंधेरे में भी झील में उठने वाली छोटी-छोटी लहरें किनारे से टकराती हुई दिखायी पड़ रही थीं। द्वीप के एक कोने से काला धब्बा उभरता मालूम पड़ा, और धीरे-धीरे सामने की ओर आता गया। मेरी धमनियों में बर्फ पिघलने लगी। वह पूरी तरह दिखायी पड़ रहा था—मोटा-ताजा-काला तेंदुआ! उसकी असाधारण रूप से चमकती हरी आंखें उस पेड़ की ओर टकटकी लगाये थीं जिस पर हमारा मचान था। झाड़ियों से निकलकर वह झील के उस किनारे तक आया जिस किनारे हमारा मचान था। पानी की लहरें उसके पैरों से जरूर छुई होंगी। जिंदगी और मौत के बीच लगभग साठ कदम का फासला था। मैंने बंदूक साधी।

"नहीं, नहीं, साहब! क्या करते हैं!" शिकारी ने बंदूक की नली नीचे कर दी। उसके मुंह से हलकी-सी एक चीख भी निकली थी। तेंदुए की आंखों में और तेजी आयी। तब वह सहसा घूम गया। उसकी पीठ हमारी ओर और मुंह द्वीप की ओर था। कुछ देर वह खड़ा रहा फिर धीरे-धीरे वहीं बैठ गया। पहले वह बिलकुल काला लगा था, अब उसका कालापन कम मालूम पड़ा। नीरवता फिर छाने लगी।

जिस पेड़ पर हम थे उसी पर फड़फड़ाहट हुई, फिर एक उल्लू का 'हू-हू' तेज होकर नीरवता भंग कर गया। मैंने सिर उठाया।

सामने की शाखा पर एक सफेद उल्लू बैठा था। यह मानने में मुझे आपत्ति नहीं कि रोएं मेरे भी खड़े हो गये थे। किसी तरह हिम्मत बांधकर मैं बैठा रहा। शिकारी सिर घुटनों में छिपा चुका था।

धीरे-धीरे, सहज रूप से शांतिपूर्वक उल्लू शाख से उड़ा और झील पार कर गया। तेंदुए के ऊपर वह थोड़ी देर मंडराता रहा फिर आगे बढ़ गया।

शिकारी ने सिर उठाकर उड़ते हुए उल्लू की ओर देखा फिर कांपते हुए फुसफुसाया, "आप मेरी बात नहीं मानते न साहब...देखिए, वे भरतपुर के पुराने महाराज हैं! महारानी को लेने गये हैं... देखते रहिए, सफेद कपड़ों में लिपटी महारानी अब आने ही वाली हैं..." वह और भी कुछ कह रहा था, पर मेरी आंखें उल्लू के साथ ही घूम रही थीं।

निश्चित रूप से कहानी सुनते-सुनते मेरे दिमाग में एक 'हैल्युसिनेशन'-सा बन गया होगा। उल्लू-'हू हू' फिर करने लगा था। मैंने देखा कि झाड़ियों के अंधेरे से एक पतली-लंबी आकृति आगे बढ़ती आ रही है। आंखें मलकर देखने का मन हुआ लेकिन शरीर जैसे जड़ हो गया था। चाहकर भी अपना हाथ मैं हिला न सका।

आकृति धीरे-धीरे तेंदुए के पास आयी। उल्लू उसके सिर पर मंडराता रहा फिर जैसे कंधे पर बैठ गया। तेंदुआ उठा और धीरे-धीरे आकृति के पैर सूंघने या चाटने लगा। अंधेरे में स्पष्ट नहीं हो पाया।

"अब खैर नहीं है साहब! भगवान ही हमें बचा सकता है।" शिकारी का लड़खड़ाता स्वर सुनायी पड़ा, फिर वह एक ओर लुढ़क गया।

मुझे लगा 'महारानी' हमारे मचान की ओर देख रही हैं—चार, चमकती हुई आंखें जिनमें से दो तो तेंदुए की थीं। ये आंखें मेरी स्मृति में आज भी कभी-कभी चमक उठती हैं। मैं सम्मोहन की स्थिति में पहुंच गया था। मेरी आंखें उन दो चमकती हुई आंखों से बंध-सी गयीं। मुश्किल से आधा मिनट बीता होगा लेकिन लगा जैसे युग बीत गया हो। तब आंखों की गिरफ्त कुछ कम हुई। मैंने देखा कि सफेद आकृति घूमकर खड़ी हो गयी है। उसका हाथ तेंदुए के सिर पर था। कंधे पर सफेद उल्लू तब भी बैठा था।

यह स्थिति कुछ समय तक बनी रही। तब उल्लू फड़फड़ाया, उसकी 'हू-हू' फिर सुनायी पड़ी, और वह उड़ने लगा। उसके साथ आकृति भी हिलती नजर आयी। तेंदुआ भी उन्हीं के साथ चलने लगा। पानी के दूसरे सिरे तक तीनों इसी तरह गये, फिर आकृति धीरे-धीरे अंधेरी झाड़ियों में गुम होने लगी। उल्लू भी उसके कंधे से उड़ गया था या शायद मेरा सम्मोहन खत्म हो गया था। अचानक शरीर में चेतना का एहसास हुआ।

मैं अंधविश्वासी नहीं हूं, अतः भूत-प्रेत पर विश्वास करने का प्रश्न नहीं उठता।

आत्माओं का अस्तित्व अगर है तो कम-से-अपने जोखिम भरे जीवन में मैंने उनका साक्षात्कार कभी नहीं किया। उस दिन की स्थिति को मैं 'हैल्युसिनेशन' से अधिक कुछ नहीं मानता। राजा-रानी और उनके छिपे हुए खजाने की कहानी मैं कई बार सुन चुका था। मेरी निगाह कहानी के उस पात्र पर थी जिसे मैं अपने शिकार से अधिक कुछ नहीं मानता था। लोगों की दृष्टि में वह काला तेंदुआ था—तथा-कथित उस राजा-रानी का चहेता, रख-वाला तेंदुआ, या और भी बहुत कुछ।

उस दिन जब अपने शरीर में मुझे चेतना का एहसास हुआ, मेरी तंद्रा टूट चुकी थी। मेरे सामने लगभग साठ कदम के फासले पर दो असाधारण रूप से चम-कती, हरी आंखें थीं। मेरी बंदूक, उस दिशा में तन चुकी थी। हाथ लिबलिबी पर तैनात थे। कोई दूसरा सम्मोहन आकर मुझे जकड़ ले या मैं किसी और 'हैल्युसिनेशन' में पड़ूं इससे पहले मैंने बटन दबाया।

आवाज जंगल में गूंजी जरूर होगी, मुझे ध्यान नहीं। असाधारण रूप से चमकती हुई हरी आंखें कुछ आगे-पीछे गयीं फिर सब शांत हो गया।

दूसरे दिन जांच पार्टी साथ लेकर मैं झील-स्थित उस द्वीप पर गया। बालू पर आदमी के पैरों के निशान पाये गये। इन निशानों से मेरा कोई खास मतलब नहीं था। पुलिस को इसकी खोज-बीन के लिए छोड़कर मैं अपने शिकार तक पहुंचा।

जो जानवर मेरे सामने मरा पड़ा था वह था तो तेंदुआ, लेकिन उसका रंग काला नहीं था।

मेरा उद्देश्य पूरा हो चुका था। भरतपुर और रुकने की कोई तुक नहीं थी। खजाने को खोदकर निकालने का काम राजकुमार पर सौंपकर मैं आगरा लौट आया। इस घटना के तीन दिन बाद लाल हिरनों के शिकार के लिए न्यूजीलैंड जाने की एक योजना में मुझे शामिल होना पड़ा।

कई साल बाद जब मैंने उस खजाने का जिक्र अपने प्रोफेसर मित्र से किया तब पता चला कि वह कुछ आदिवासियों का चक्कर था जिसने एक मनगढ़ंत कहानी को पूरे राज्य के लिए बरसों अंधविश्वास बनाये रखा था। ●

मरीज डॉक्टर को उसके क्लीनिक में अपनी बीमारी के विषय में बता रहा था। जैसे ही मरीज अपनी बात शुरू करता टेलीफोन की घंटी बजने लगती और डॉक्टर 'क्षमा कीजिए' कहकर टेलीफोन सुनने लगता। जब यह प्रक्रिया तीन-चार बार दोहरायी जा चुकी, तब मरीज उठ खड़ा हुआ। डॉक्टर ने चकित होकर कहा, "अरे, आप तो गंभीर रूप से बीमार हैं, कहां चल दिये ?"

"नजदीक के टेलीफोन-बूथ पर! हम दोनों के लिए यही अधिक सुविधाजनक रहेगा," मरीज ने झल्लाकर जवाब दिया।

• रजजन त्रिवेदी

संकट-कालीन स्थिति में किसी भी देश के मानस का पतन सबसे बड़ी पराजय हुआ करती है। ऐसे समय जननायक मानस को नैतिक बल के सहारे ऊंचा उठाये रखते हैं और देश अपनी आंतरिक पराजय का मुंह देखने से बच जाया करता है। कठिनाइयों को विश्वास और धैर्य के बल पर समाप्त किया जा सकता है।

सन १९४०–'४५ के बीच द्वितीय विश्वयुद्ध के समय ब्रिटेन के अद्भुत पुरुष चर्चिल ने अपने देश में संकट को सही अर्थों में पहचाना था। संकट की घड़ियों में उन्होंने कभी किसी बात की खोखले भाषणों में वकालत नहीं की, वरन सही और न्यायपूर्ण उचित व्यवस्था को ही स्वीकारा। उन्होंने किसी भी कठिन क्षण में मानस को गिरने नहीं दिया। तर्जनी और मध्यमा से 'वी' का विजयी संकेत देकर चर्चिल ने जनमानस को गिरने से बचा लिया था। युद्ध की भयानकता के बीच भी वे मित्रराष्ट्रों के जननायकों से संबंध बनाये हुए थे। साथ ही उन्होंने अपने देश की आंतरिक स्थिति पर कड़ी निगाह रखी थी। वे किसी भी अनुचित बात को इस संकटपूर्ण घड़ी में भी स्वीकार करने में असमर्थ थे। एक ओर जहां उनके पत्रों में विद्वत्ता, कूटनीतिज्ञता और लोकतंत्र की महत्ता पर जोर मिलता है, वहीं अपनी जनता के लिए सुख-सुविधा जुटाने की चिंता की झलक भी मिलती है। चर्चिल हर क्षण अपने देश की जनता के प्रेम को और उसके भविष्य को भूल नहीं सके थे।

संकटपूर्ण स्थितियों में भाषणों और भेंटों की बात वे कभी स्वीकार नहीं कर सके। वे सही स्थिति को पहचानने में, सही निर्देश को उचित समय पर देने में निपुण थे। उचित नेतृत्व ही देश को ऐसे समय में बचाता है और उसे समृद्ध करता है। अपने पत्रों में उन्होंने भाषण और भेंटों का विरोध किया था और स्थिति की गंभीरता को पहचानना चाहा था। एक उच्चाधिकारी को लिखे गये पत्र में उन्होंने कहा था, "बड़े अधिकारियों को भाषण करने के संबंध में एक विज्ञप्ति निकाली गयी थी। उसका पुनरुज्जीवन कीजिए। लगता है, आजकल भाषण-भेंटों की बीमारी बहुत बढ़ गयी है।"

एक ओर युद्ध और दूसरी ओर आंतरिक दुरावस्था के बीच उलझा हुआ ब्रिटेन तब बड़ी ही कठिन स्थिति के बीच से गुजर रहा था। अधिकारी कभी-कभी अनुचित रवैया अपनाकर गलत व्यवहार करने लगते थे, ... लोगों को छोड़

निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया करते, उन्हें सताया करते। चर्चिल किसी भी व्यक्ति को व्यर्थ में तकलीफ देने के पक्षपाती नहीं थे। उन्होंने तत्कालीन गृह-सचिव को एक पत्र लिखा :

'प्रिय गृह-सचिव, आपने जिन महत्त्व-पूर्ण लोगों को पकड़ रखा है, उनकी सूची मुझे भेजो।' इसी के बाद २३-१२-'४० को उन्होंने एक पत्र और लिखा :

"प्रिय गृह-सचिव, युद्धजन्य परिस्थि-तियों के कारण जिन राजबंदियों को पकड़ा गया उन पर कानून-भंग के कोई आरोप नहीं हैं। व्यक्ति-स्वतंत्रता के संबंध में जो ब्रिटिश धारणा है, क्या यह उसके विपरीत नहीं है? पंडित नेहरू को कष्ट-दायक जगह से निकालना चाहिए। यदि दुनिया सचमुच सुसंस्कृत होती तो ऐसे व्यक्ति को जेल के बजाय किसी किले में रखा जाता।

आपका,

विंस्टन एस. चर्चिल"

कठिनाई के क्षणों में भी चर्चिल अपने विवेक को कभी नहीं भूल सके। धीरज के साथ विवेकपूर्ण निर्णय उनकी राजनीतिक गंभीरता का परिचायक था।

जरमनी के सैकड़ों विमान इंगलैंड पर धुआंधार बमवर्षा किये जा रहे थे, लेकिन चर्चिल का यह प्रयत्न रहा कि जनता का दैनंदिन-जीवन ठीक चलता रहे। १९-११-'४० को उन्होंने एक अधिकारी को निर्देश देते हुए एक पत्र लिखा था :

"प्रिय पोस्टमास्टर जनरल, शिकायतें हैं कि हवाई हमले के दौरान पोस्ट का काम बराबर नहीं होता। इस संबंध में अपनी क्या योजना है, सूचित करें—

आपका,

विंस्टन एस. चर्चिल"

रोजमर्रा की हर स्थिति पर चर्चिल की पैनी निगाह थी। चाहे वह डाक-व्यवस्था

लौहपुरुष चर्चिल

हो या कोई और छोटी जन-सुविधा।

युद्ध के समय जनता सही न्याय से वंचित न हो जाए, इसके प्रति भी चर्चिल पूरी तरह से जागरूक थे। २३-११-'४० को उन्होंने गृह-सचिव को पत्र लिखा :

"प्रिय गृह-सचिव, हवाई हमले के समय लोगों की घबराहट का लाभ उठा-कर लूटपाट करनेवालों को कड़ा दंड देना

आवश्यक है, पर इसमें भी अनुपात हो। कीमती वस्त्र की चोरी करने पर ३ या ६ मास की कैद तथा व्हिस्की की चोरी पर ५ वर्षों की कैद क्या बहुत ज्यादा नहीं है? लूटपाट करनेवालों को दंड जरूरी है, पर उसमें सुधार आवश्यक है।

आपका,
विंस्टन एस. चर्चिल"

यही नहीं, उन्होंने उचित और न्यायपूर्ण निर्णय के लिए १९-४-'४१ को फिर एक पत्र लिखा: "दो सैनिकों से यह कहने पर कि हिटलर चर्चिल की अपेक्षा अच्छे शासक हैं, मिस अल्सी ओटिन को दी गयी ५ वर्षों की कैद मुझे बहुत ज्यादा प्रतीत होती है। अनुचित, अत्यधिक दंड से उसका उद्देश्य ही मारा जाता है।"

अधिकारियों के छोटे-से-छोटे काम से सरकार पर पड़नेवाले प्रभाव की भी चर्चिल को चिंता रहती थी। २७-५-'४४ को एक घटना के संदर्भ में उन्होंने लिखा: "छोटे अधिकारियों के अनुचित कामों से सरकार जितनी बदनाम होती है उतनी किसी और बात से नहीं होती।"

जनता को करों से परेशान करना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। वे जनता को व्यर्थ में कर-भार से लादना नहीं चाहते थे। १०-३-'४२ को उन्होंने लार्ड चारवेल को लिखा:

"प्रिय लार्ड चारवेल, मनोरंजन पर जबरदस्ती कर लगाने के मैं खिलाफ हूं। मुझे यह आदेश पसंद नहीं कि दुखी रहो!"

आपका,
विंस्टन एस. चर्चिल"

वे जन-जीवन को अधिक से अधिक सहूलियतों के बीच देखना चाहते थे।

अधिकारियों के दौरों की फिजूलखर्ची से जनता के श्रम और पैसों का सही मूल्यांकन नहीं हो पाता। चर्चिल धन और मेहनत का अपव्यय स्वीकार नहीं कर पाते थे। १९-१०-'४१ को काबुल स्थित ब्रिटिश प्रतिनिधि को उन्होंने एक पत्र में लिखा: "तुम्हारे कार्य का अभिनंदन, पर ११ सितंबर से १७ अक्तूबर के बीच तारों में तुमने ६६३९ शब्द इस्तेमाल किये। इतने विस्तृत तारों पर कितना श्रम व पैसा खर्च होता है इसका शायद तुम्हें अनुमान नहीं है!" यही नहीं, वे बार-बार बनायी जानेवाली समितियों की निरर्थकता से भी परिचित थे। उनसे काम कम और खर्च ही अधिक हुआ करता था। २५-५-'४० को उन्होंने उड्डयन-विभाग के प्रमुख को स्पष्ट लिखा: "जिनकी बैठकों में मंत्रियों को बार-बार उपस्थित होना पड़ता है और जिनसे कुछ काम नहीं निकलता, ऐसी बहुत-सी समितियां बढ़ गयी हैं। उनकी संख्या में कमी की जानी चाहिए।"

ऐसे न जाने कितने पत्र हैं जो देश के मनोबल को संकटपूर्ण घड़ियों में उठाने की प्रेरणा देते हैं। नेताओं और प्रशासकों के लिए वे मार्गदर्शक की तरह सामने आते हैं।

—सीताबर्डी, नागपुर

मिनी कहानियां

नोबुल पुरस्कार विजेता एम. आई. सोल्झिनित्सिन प्रख्यात सोवियत साहित्यकार हैं। व्यक्ति-स्वातंत्र्य संबंधी अपने निर्भीक विचारों के लिए उन्हें कट्टरपंथियों की आलोचना का शिकार होना पड़ा है। यहां उनकी दो लघु-कथाएं प्रकाशित हैं

एल्म का लट्ठा

हम जलाऊ लकड़ी चीर रहे थे। जब हमने एक एल्म का लट्ठा उठाया तो अनायास ही खुशी से चीख निकल गयी। पूरा वर्ष बीत चुका था। हम नीचे से तने उठाते, घसीटते और ट्रैक्टरों के पीछे बांधते। इन्हें हम चिराई के स्थान तक लाते, उन्हें गाड़ियों पर चढ़ाते। परंतु यह शहतीर अभी तक नहीं चढ़ाया गया था। उसके ऊपर हरी कोंपल फूट निकली थी, एक पूर्ण एल्म वृक्ष बनने की प्रतिज्ञा करते हुए।

हमने इस लट्ठे को चिराई के घान पर रखा और यह स्वचालित रूप से आरे की ओर अग्रसर होने लगा, किंतु हमने इसे अपने आरे से चिरते नहीं देखा। कैसे देखते? इस लट्ठे ने जीवन को वैसे ही बुदबुदाया जैसे कभी हमने। वास्तव में इसमें जीने का उत्साह हमसे भी कहीं अधिक था।

स्वतंत्रता

हमारे पिछवाड़े के आंगन में एक लड़के ने एक कुत्ता पाला है। उसका नाम है—शारिक। उसे वह सदा पट्टा डालकर रखता है। जब वह कुत्ता पिल्ला था, तभी से गेंद उठाना उसका प्रिय खेल था।

एक दिन मैं उसके लिए मुरगियों की हड्डियां ले गया, जो अभी तक गरम तथा महक से भरपूर थीं। उस लड़के ने शारिक

का पट्टा खोल दिया ताकि वह आंगन का चक्कर लगा सके। आंगन की बर्फ गहरी और नरम थी। शारिक एक हिरन की भांति आंगन में चक्कर लगाने लगा। वह दौड़ता हुआ मेरे पास भी आया। उसने क्षण भर के लिए हड्डियों को सूंघा और फिर गहरी बर्फ में चला गया।

"मुझे तुम्हारी हड्डियां नहीं चाहिए, मुझे मेरी स्वतंत्रता लौटा दो!" उसने कहा।

मूल रूसी से अनुवादिका : रूपा जैन,

—गली खजांची, चा. चौक, दिल्ली-६

सोमनाथ का मंदिर

• सतीश जायसवाल

हिंद महासागर के इस किनारे पर प्रशस्ति अंकित है—**'आसमुद्रांत दक्षिण-ध्रुवपर्यंत अबाधित ज्योतिर्मार्गः'**

(इस ज्योति-पथ के सामने से, ठेठ दक्षिण-ध्रुव तक समुद्र का अबाधित साम्राज्य है।)

इसे पढ़कर क्या ऐसा नहीं लगता कि उन दिनों के दुर्दांत समुद्र-पथिकों ने इस सागर के दोनों ओर-छोर नाप लिये हों और भावी नाविकों के लिए किनारे पर ज्योति-स्तंभ निर्मित कर दिया कि उनके पथ प्रशस्त हों !

जब वास्को-डि-गामा उत्तम-आशा अंतरीप (केप ऑव गुड होप) का चक्कर-काटता हुआ कालीकट के बंदरगाह पर उतरा था तब प्रभासपत्तन भारत के दक्षिण-पश्चिम समुद्र-तट पर एक महत्त्व-पूर्ण बंदरगाह था और गुजराती कुशल सौदागर थे। यहां से अरब देशों के साथ तिजारत होती थी। हिंद महासागर की इस पट्टी पर गुजरात और मिस्र की संयुक्त जल-शक्ति का नियंत्रण था। वेरावल में विशाल जल-पोतों का निर्माण होता था। मार्कोपोलो ने भी सोमनाथ का जिक्र किया था।

पश्चिम रेलवे के एक छोर पर बसी इस छोटी-सी बस्ती वेरावल से कोई चार मील की दूरी पर है छोटा सा गांव प्रभास पाटण। वेरावल-पाटण संयुक्त परिषद की बस-परिवहन यात्रियों को इन बस्तियों के बीच से ले जाकर खड़ा कर देती है भारतीय भूमि के एक धुर अंत पर, सोमनाथ मंदिर के सामने।

इस सागर-तट पर खड़े मनुष्य को आध्यात्मिकता तथा सौंदर्य-बोध की अनायास प्रतीति होती है। सागर और धरती इन दो महान सत्ताओं का एकीकरण अनुपम औदार्य की सृष्टि करता है। सोमनाथ-स्वयंभू आश्वासन देकर बुलाते हैं। मंदिर का उच्च शिखर और तरल नीलाभ पर लहराता केसरिया ध्वज—आदमी देर तक सीढ़ियों पर खड़ा इस रंग-संयोजन को देखता रह जाता है। पृष्ठभूमि में सागर समग्रता का वातावरण उत्पन्न करता है।

सोमनाथ मंदिर में दिन में तीन बार आरती होती है— सुबह, दोपहर और शाम। बड़ी भीड़ होती है। अगरु की सुगंध और हवन के धुएं के बीच घंटे, घड़ियाल की ध्वनि मन को किसी अपार्थिवता का भान कराती है।

भक्ति-पूजा की दरें

गर्भगृह के स्तंभों पर गुजराती और देवनागरी में आरती - अर्चना - अभि-

चेक के लिए निर्धारित दरें लिखी हैं—सवा रुपये से लेकर सात हजार पांच सौ इक्यावन रुपये तक । जिसकी जितनी सामर्थ्य, उसकी भक्ति-पूजा की सीमा भी उसी के अनुरूप निर्धारित कर दी गयी है । शायद इसी आधार पर मनुष्य पर ईश्वर की अनुकंपा हो ।

यहां आनेवालों में देशी धर्मप्राण, सैलानी और कुछ मुझ-जैसे मामूली घुमक्कड़ जो जहां जाते हैं वहां की निशानी छाया-चित्रों में सुरक्षित कर लाते हैं ।

मंदिर का प्रबंध सोमनाथ-ट्रस्ट द्वारा होता है । यहां मंदिर में चित्र लेना मना है । मालूम नहीं क्यों ?

जिस दिन मैं सोमनाथ पहुंचा, होली का दिन था । गुजरात की होली उत्तर प्रदेश, बिहार तथा राजस्थान की तरह उग्र या आक्रामक नहीं होती । स्वेच्छा का खेल है । अजनबी आजाद घूम सकते हैं । होली सोमनाथ मंदिर का कोई विशेष पर्व नहीं, फिर भी भीड़ कुछ अधिक थी । मंदिर के सामने खुले प्रांगण में रिवाल्वर लटकाये कुछ पुलिस-अधिकारी भी गश्त करते नजर आये । हो सकता है समुद्र-तट से छोटी-मोटी तस्करी होती हो, या शायद मंदिर के देवता और उनकी संपत्ति की रक्षा के लिए ही ! सोमनाथ के भगवान तो एक बार लुट चुके हैं ना !

गजनवी का सोलहवां आक्रमण

महमूद गजनवी ने भारत पर सत्रह बार आक्रमण किया । उसका सोलहवां आक्रमण सबसे प्रसिद्ध है, जो सन १०२३ में सोमनाथ मंदिर पर हुआ था । मंदिर में इकट्ठी अतुल संपदा उसे यहां लायी थी । महाराज भीमदेव ने राजपूतों को एकत्र कर उससे टक्कर ली थी, लेकिन वे हार गये । महमूद ने मंदिर को जी भर-कर लूटा, मूर्तियों को तोड़ा और मंदिर को ध्वस्त किया ।

इतिहास का यह अध्याय बचपन से मेरे लिए विचित्र अनुभूतियों का प्रसंग रहा है । यह कैसे हुआ कि महमूद की सेना मंदिर के दरवाजे पर प्रहार कर रही थी और भीतर भीत भक्त सहायता के लिए घड़ियाल और उच्च प्रार्थना - स्वरों में भगवान को बुला रहे थे ?

सोमनाथ का वर्तमान मंदिर उस ऐतिहासिक मंदिर की अनुकृति मात्र है—पूरी तौर पर नव-निर्मित । प्राचीन मंदिर को तो महमूद ने ध्वस्त कर दिया था । हमारे इतिहासबोध को स्पंदित करने के लिए बस इतना शेष है कि ठीक उसी नींव पर इसका निर्माण हुआ है । मंदिर के आंगन में प्रवेश के लिए विशाल दिग्विजय-द्वार बना हुआ है । सामने सरदार पटेल की अष्ट-धातु से निर्मित प्रतिमा खड़ी निरंतर सागर-दर्शन करती रहती है । उस महान राजनेता की यह दार्शनिक मुद्रा उसके प्रति मन में सम्मान-भाव सघन करती है । भारत की खंडित एकता को सूत्रबद्ध करने वाला यह लौहपुरुष ही सोमनाथ-मंदिर के पुनर्निर्माण का विश्वकर्मा बना ।

भालका तीर्थ तथा देहोत्सर्ग

पाटन और वेरावल के बीच पड़ता है भालका तीर्थ। यहां मृग के भ्रम में व्याध ने भगवान श्रीकृष्ण के ऊपर तीर चला दिया था, जिससे अंततः भगवान की मृत्यु हुई।

भगवान श्रीकृष्ण की यह लीला भी विचित्र है। मथुरा छोड़कर द्वारिका में दम लिया, फिर द्वारिका छोड़कर अंत समय में यहां पाटन कैसे पहुंच गये?

भालका मंदिर में छाया-चित्रांकन निषिद्ध है। सोमनाथ की तरह यहां भी मंदिर में चित्र जरूर बिकते हैं। यहां, मंदिर के बीच में एक पतले पेड़ को घेर लिया गया है। तना मंदिर के आंगन में है और शाखा-पत्तियां ऊपर छत में निकली हुई हैं। पुजारियों का कहना है कि प्रभु इसी वृक्ष की डाल पर बैठे थे तभी उनके चरण-कमल में व्याध का तीर बिंधा था। श्रीकृष्ण का काल १४०० ई. पू. के आसपास का बताया जाता है। इस हिसाब से वृक्ष को ३–३॥ हजार वर्ष पुराना होना चाहिए किंतु इस बात का आभास प्रतीत नहीं होता।

मंदिर के प्रांगण में एक कुंड भी है। इसमें थोड़ा पानी भी रहता है। पुजारी बताते हैं इस कुंड में प्रभु के चरण पखारे गये थे। और भी अनेक किंवदंतियां हैं। लेकिन कोई प्रामाणिकता के समीप नहीं पहुंच पाती।

यहां एक अच्छाई जरूर है। प्रयाग-वाराणसी की तरह न तो पंडों का जाल है और न दान-दक्षिणा का जंजाल। सब कुछ स्वेच्छा की बात है।

कुछ ही दूर पर 'देहोत्सर्ग' है, जहां श्रीकृष्ण का अंतिम संस्कार संपन्न किया गया था। पूरी धर्म-गाथा का यह समापन-अंश बहुत प्रभावित करता है। क्या यह विश्व के उस इतिहास के लिए जिसमें व्यक्ति को ईश्वर बनाकर व्यक्ति से विलग कर दिया गया, रोमांचक नहीं कि ईश्वर की मनुष्य में वापसी नियत की गयी? ईश्वर को अपने ही बीच पाकर मनुष्य रोमांचित होगा —पार्थिव, नश्वर!

—द्वारा हिंद प्रकाशन, बिलासपुर (म.प्र.)

चू प्रदेश (चीन) के राजकुमार का धनुष खो गया। सैनिकों ने कहा, "अगर आज्ञा दें तो हम धनुष को पाताल तक से ढूंढ़ लायें।"

राजकुमार ने कहा, "कोई जरूरत नहीं है। मेरा धनुष होगा तो किसी देशवासी के पास ही! देश की चीज देशवासी के पास ही रहे तो कोई हानि नहीं है।"

महात्मा कन्फ्यूशियस को जब इस घटना का पता चला तब उन्होंने कहा, "राजकुमार की दृष्टि उदार नहीं है, नहीं तो वह यह कहता कि आदमी की चीज आदमी के ही पास रहे तो कोई हानि नहीं है।"

शासनकाल में स्वयं काफी समय तक हजारा के सूबेदार के रूप में यहां रहे और उन्होंने मान-सेहरा से एक मील पश्चिम की ओर बोरी पहाड़ी के नीचे तीन प्रसिद्ध शिलालेख स्थापित किये। मरदान जिले में शाहबाज गढ़ी नामक स्थान पर अशोक ने एक स्तूप बनवाया था। शाहबाज गढ़ी का प्राचीन नाम वर्षापुरा था। होती मरदान के गाइड्स मेस में अब भी मौर्य राजाओं और विशेषत: अशोक के शासनकाल की अनेक स्मृतियां सुरक्षित हैं। पश्चिमी पाकिस्तान में पश्चिमी हिमालय के भीतर स्वात और पंचकोडा नदी के बीच ४,५०० वर्गमील पर्वतीय भूमि है, जिसे सवास्तु या स्वात के नाम से पुकारा जाता है। यहां २,००० वर्ष पहले बौद्ध धर्म अपनी चरमसीमा पर था।

काबुल से १५० मील दूर बौद्ध नगरी बामियान तथा जलालाबाद के हड्डा में जो खुदाई हुई उससे यह भली-भांति सिद्ध हो जाता है कि यहां जनजीवन में आर्य-संस्कृति का रंग पर्याप्त निखरा।

पश्तो भाषा का विस्तार और प्रभाव

पश्तो भाषा का विस्तार एवं प्रभाव-क्षेत्र एक ओर तो ड्यूरंड लाइन, खैबर दर्रे के दोनों ओर अफगानिस्तान से दीर, चंतराल, स्वात बाजोडर, बुनेर, तीराह, अंभ, फलड और पंजाब के कुछ इलाके तक जा मिलता है और दूसरी ओर बहुत दूर तक अपना आंचल फैलाये सिंध की सीमाओं के साथ फारस की खाड़ी तक बिलोचिस्तान

है। यहां के लोग दैनिक कार्यकलापों में इसी भाषा को प्रयुक्त करते हैं। काबुल, कंधार, हरात, मजार, शरीफ, काश्गर, फारा, गुमानाज और बदकशा के प्रांत अफगानिस्तान के अंतर्गत हैं। यहां की अधिकांश जनता पश्तो भाषा-भाषी है।
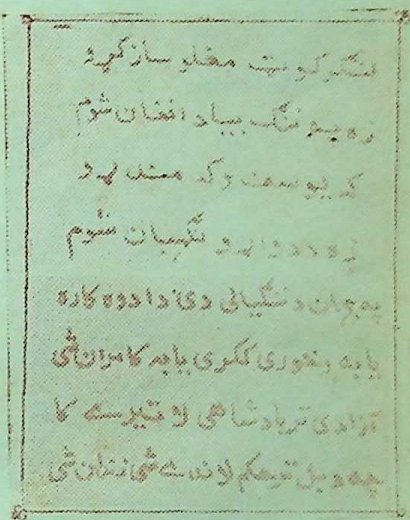
पश्तो साहित्यकार खुशहाल खां खट्टक के काव्य की कुछ पंक्तियां

वह आर्य वंशज कहलाने में गर्व का अनुभव करती है और नवचेतना के इस युग में भी भारतीय संस्कृति के प्रति सम्मान व्यक्त करती है। अफगान सरकार ने वहां एयर-वेज और काबुल के सबसे बड़े होटल का नामकरण 'आर्याना एयरवेज' और 'आर्याना होटल' रखा है। १९४८ से काबुल विश्व- ... साहित्य के विद्या-

थियों के लिए संस्कृत की शिक्षा अनिवार्य घोषित की है। इसके अतिरिक्त आधुनिक पठानिस्तान के पेशावर, मरदान, डेरा इस्माइल खां, बन्नू, कोहाट, पाराचनार, टल, हंग, डेरा गाजी खां, वजीरिस्तान हजारा और बिलोचिस्तान जिलों के निवासियों की मातृभाषा भी पश्तो ही है। पंजाब में कैमलपुर जिले के अंतर्गत छच्छ, हजरो, गुरगश्ती, मलूह, मखड़ी, नरड़ा आदि तहसीलों और नगरों में भी पश्तो का प्रयोग होता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि सवा दो करोड़ से भी अधिक जनसंख्या पश्तो भाषा-भाषी है और पठानों की मुख्य जातियां यूसूफ जई, मेहमंद, खटक, स्वाती,आफरीदी, मसऊदी, बंगश ओरकजई, शिरानी, मिटानी, वजीरी, मखत खेल, गिलजई, बिलोची, अमाजई, कक्कड़, शिनवारी मर्द, स्त्रियां तथा बालक दैनिक जीवन में पश्तो भाषा का ही प्रयोग करते हैं।

पश्तो एक कर्कश परंतु शक्तिशाली भाषा है। यह आर्यभाषा-परिवार से संबंधित है। यह अरबी, फारसी की भांति दायें से बायें लिखी जाती है।

पश्तो और संस्कृत में समानता

यद्यपि इस भाषा का साहित्य काफी समृद्ध है और साहित्य के विभिन्न अंगों की इसमें पर्याप्त सामग्री है तथापि अनेक कारणों से इसके वैज्ञानिक विश्लेषण पर काली चादर तनी रही है। आधुनिक अनुसंधान और विभिन्न भाषाओं के तुल-नात्मक अध्ययन के पश्चात अब यह बात निर्विवाद कही जा सकती है कि पश्तो भाषा की बनावट, क्रियाओं और शैली पर जहां ज्वंद अवस्ता या प्राचीन फारसी पहलवी ने अपना प्रभाव छोड़ा है वहां अनेक विशेषताओं और मूलभूत स्वभाव की दृष्टि से वैदिक संस्कृत और पश्तो भाषा एक-दूसरे से बहुत समानता रखती हैं। इनके आरंभिक केंद्र ही एक नहीं, अपितु इनके शब्द-भंडार, उपमाओं के उद्गम और व्याकरण-संबंधी नियम-विधान भी मिलते-जुलते हैं। संस्कृत छंदों की परंपरा और वाक्यरचना आदि में भी आश्चर्यजनक साम्य है। १९वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कुछ विदेशी भाषा-विदों ने पश्तो भाषा एवं साहित्य का भाषा-शास्त्रीय तथा व्याकरणात्मक अध्ययन किया है। उनके गवेषणा-कार्य से भी यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पश्तो का इंडो-एशियन भाषा-परिवार से घनिष्ठ संबंध है और यह संस्कृत, प्राकृत और ज्वंद अवस्ता के मिश्रण से बनी है। मेजर रावटी ने 'पश्तो ग्रामर' नामक पुस्तक में स्पष्टतया उल्लेख किया है कि पश्तो संस्कृत और प्राचीन फारसी के अत्यंत समीप है। फ्रांसीसी व्याकरणाचार्य डॉ. विलियम हेनरी का विचार है कि पश्तो एक ओर संस्कृत और दूसरी ओर ज्वंद परिवार की भाषा है। वस्तुतः अवस्ता, संस्कृत और पश्तो तीनों आर्य-भाषा के विभाजन से पूर्व एक थीं।

इसकी व्युत्पत्ति पश्चिमी भाषाओं से नहीं हुई। इसके स्रोत इंडोएशियन भाषा-परिवार से फूटे हैं। भाषाशास्त्री डॉ. जी.ए. ग्रियर्सन ने उपर्युक्त तथ्य से अपनी सहमति प्रकट की है।

पश्चिमी अन्वेषकों के अधिकारपूर्ण तथ्यों, प्रमाणों, ऐतिहासिक शिलालेखों एवं प्राचीन अवशेषों से पश्तो और संस्कृत के पारस्परिक संबंधों में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रहती। इन अनुसंधानों के अतिरिक्त वेद, अवस्ता, हेरोडोटस के भूगोल तथा स्काई लाक्से के यात्रा-संस्मरण से भी यही सिद्ध होता है कि पठान जाति पूर्व-ऐतिहासिक काल में भी आर्य वंश की उप-जाति थी और पश्तो भाषा के जन्म और विकास में संस्कृत भाषा के सक्रिय योगदान का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ऋग्वेद में बहुधा पख्त कबीले का उल्लेख मिलता है। अवस्ता में बख्द शब्द का प्रयोग आर्यों के निवासस्थान के लिए किया गया है। भाषा-मर्मज्ञों के मतानुसार ऋग्वेद का पख्त और अवस्ता का बख्द एक ही जाति और स्थान के पर्यायवाची हैं और यही पख्त शब्द कालांतर में बख्द, बखत, पखतून, पश्त और पश्तून के परिवर्तित रूप में उच्चारित किया जाने लगा। ४८४ वर्ष ईसा-पूर्व प्रसिद्ध इतिहासकार हेरोडोटस ने भी अपने भूगोल में पख्तून का उल्लेख पख्तोलीस और पख्तूनखा (पठानों के निवासस्थान) का वर्णन पख्तीका के नाम से किया है। भारतवर्ष में पश्तो भाषा संबंधी आधार-ग्रंथों के अभाव के कारण यह संभव नहीं कि इस संबंध में विस्तृत लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जा सके, फिर भी पश्तो भाषा के प्रचलित शब्द-भंडार में से कुछ शब्द नीचे दिये जा रहे हैं, जिनके तुलनात्मक अध्ययन से पश्तो तथा संस्कृत के समान उद्गमों का अनुमान हो सकता है—

संस्कृत	पश्तो	अवस्ता	फारसी
श्वसुर	सुखुर	होसोर	खुसुर
श्वेत	स्पीन	सपिता	सफेद
नव	नवी	नवा	नौ
गिरि	गिर	गिरी	कोह
वन	वना	वन	दरख्त
आप	ओबा	आपा	आब
जमाका	जमका	जेम	जमीन
जिव्हा	जंबा	—	जबान
अंगार	अंगार	—	अंगार
एकम	पौ	एवा	यक
द्वि	व्दाह	वछवा	दो
त्रि	द्रे	थ्री	सेह
चतुर्थ	स्लोर	चतोर	चहार
पंच	पिजां	पंचा	पंज
षष्ठ	शिपंग	शोष	शश
सप्त	ओ	हस्प	हफ्त
अष्ट	अग	हस्त	हश्त
नव	नह	नव	नह
दश	लस	दसः	दह

—२८, थियेटर कम्यूनिकेशन बिल्डिंग, कनाट सर्कस, नयी दिल्ली-१

महंगाई

सूखी गृहस्थी की टहनी पर
पीपल-सा लहरा रहा
महंगाई का परजीवी झाड़
जैसे
'दुबले को दो आषाढ़'

—निर्मल दुबे

कुआंरा पति

आज की रात वो बहुत खुश थे
साठ साल कुआंरे रहने के बाद
आज 'पति' जो बने थे
हालांकि 'कवि-सम्मेलन' के
सभा–पति ही बने थे

—लक्ष्मीशंकर वाजपेयी

बंदी

खेत गया चकबंदी में
मर्द गया नसबंदी में
धन गया हदबंदी में
देश गया युद्धबंदी में

—संकठाप्रसाद शुक्ल

दाता राम

एम. एल. ए. नहिं चाकरी
मंत्री करहिं न काम
भारतीय गणतंत्र में
सबके दाता राम

—[illegible]

मुक्ति

आइए
बीमा कराइए
मरने से पहले
मरने के बाद की
चिताओं से
मुक्ति पाइए

—नरेन्द्र भारद्वाज

सार्थक यौवन

पचहत्तरवीं वर्षगांठ पर
वे जवान हुए
और चुनाव जीत गये
उनके बचपन के चौहत्तर वर्ष
व्यर्थ ही बीत गये

—वाल्मीक ऋषीश्वर

इसी से

उनके विचार उच्च हैं
वे ऊंची बातें ही कहते हैं
शायद, इसी से
ऊंचा सुनाते भी रहते हैं

—सूर्यकुमार पांडेय

● डॉ. प्रभात त्यागी

महाराजा रणजीतसिंह का शासन पंजाब का स्वर्णकाल था। तलवार और बुद्धि के बल पर स्थापित उनके साम्राज्य में सुख-समृद्धि का बोलबाला था। मार्च, १८३७ में अपने १६ वर्षीय पौत्र नौनिहालसिंह का विवाह उन्होंने जिस शान-शौकत से रचाया, वह उनके वैभव का परिचायक होने के साथ कई दृष्टियों से अनोखा था। यद्यपि उन्होंने कुंअर नौनिहालसिंह का विवाह अपने ही एक जागीरदार सरदार शामसिंह अटारीवाला की पुत्री से निश्चित किया तथापि विवाह के धूम-धड़ाके को देखकर विदेशी अतिथियों की आंखें फटी रह गयीं।

विवाह में लगभग ५ लाख अतिथियों को निमंत्रित किया गया। इनमें भारत के गवर्नर-जनरल के प्रतिनिधि के रूप में भारत के सेनापति सर हेनरी फेन और आगरा के गवर्नर सर चार्ल्स मेटकॉफ, अपनी पत्नियों सहित आये थे। इनके अतिरिक्त अतिथियों की अभ्यर्थना के लिए दूल्हे के चाचा शेरसिंह, सतलज के पार हरिके स्थान पर हजारों नौकरों-सहित उपस्थित थे। अपनी पगड़ी में हीरे-जवाहरात लगाये तथा गले में कीमती माणिक, मुक्ता आदि के हार पहने वे अतिथियों की ईर्ष्या का कारण बने हुए थे। शेरसिंह सब मेहमानों को अमृतसर तक ले गये। वहां से दो मील पूर्व दूल्हे के पिता खड़गसिंह और भी अधिक मूल्यवान वस्त्र धारण किये हुए खड़े थे। उनकी ओर से प्रत्येक अतिथि को ५ हजार रुपयों की थैली भेंट की गयी। अंगरेज सेनापति ने अपनी ओर से २५ तोपों की सलामी दी। लाहौर के रामबाग की, जहां अतिथियों को ठहराया गया, शान अनूठी थी। बहुमूल्य शालों से फर्श सजे हुए थे। अतिथियों के शयन के लिए चांदी के पायों के पलंग थे। गद्दे-कालीनों की तो कोई गिनती ही नहीं थी। प्रधानमंत्री ध्यानसिंह एवं उनके पुत्र हीरासिंह अतिथियों की देखभाल के लिए स्वयं उपस्थित थे। हीरासिंह तो हाथ-पैरों में भी सोने के आभूषण पहने थे। अतिथियों तथा जागीरदारों की ओर से दूल्हे को ५० लाख रुपये की भेंट दी गयी। सर हेनरी फेन ने ११ हजार रुपये, प्रधानमंत्री ध्यानसिंह ने १ लाख २५ हजार रुपये तथा अन्य जागीरदारों ने ५१ हजार रुपये प्रत्येक के हिसाब से भेंट किये।

बारात के अटारी की ओर चलने से पूर्व नौनिहालसिंह हाथी पर बैठकर दरबार साहब का आशीर्वाद लेने गया। उसकी पगड़ी पर सोने के तार में बंधे बहुमूल्य जवाहरात लटक रहे थे। महत्त्वपूर्ण मेह-

मानों को भी हाथियों पर बैठाया गया। उनके पीछे घोड़ों, रथों व ऊंचे-ऊंचे बैलों-वाले तांगों में भी लोग थे। पैदल चलनेवालों की तो गिनती ही नहीं थी। अमृतसर से अटारी तक की ४ मील की सड़क के दोनों ओर दर्शकों की खचाखच भीड़ थी। बारात के आगे-आगे एक सजे तख्त पर नर्तक-नर्तकियों का दल कला-प्रदर्शन करते हुए चल रहा था। प्रत्येक मेहमान को २–२ हजार रुपयों अर्थात छोटे सिक्कों की थैलियां दी गयी थीं। इन सिक्कों को फेंक-फेंक-कर गरीबों को बांटना था। स्वयं रणजीतसिंह एवं उनके नजदीकी रिश्ते-दारों के हाथों में इसी कार्य के लिए स्वर्णमुद्राएं थीं।

अगवानी और विवाह

सरदार शामसिंह द्वारा बारात की अगवानी के लिए जनवासे से हवेली तक बेशकीमती कालीन बिछा दिये गये थे। बारात के पहुंचने पर तोपों व पटाखों की आवाजों से आसमान गूंज उठा। रणजीत-सिंह का १०० स्वर्णमुद्राओं व ५ घोड़ों, राजकुमार खड़गसिंह का ५१ स्वर्ण मुहरों व १ घोड़े तथा परिवार के अन्य सदस्यों का १ घोड़े व ११ मुहरों से स्वागत किया गया। महल की छत पर सोने-चांदी के तारों से बने चंदोवे में दूल्हा-दुल्हन को लाकर बैठाया गया। उनके आसपास रणजीतसिंह, हेनरी फेन व अन्य व्यक्ति बैठे। रणजीतसिंह ने अपनी बांह पर संसार-प्रसिद्ध कोहनूर हीरा धारण कर रखा था।

रात को १ बजे फेरे हुए। रात भर संगीत व नाचगान के साथ बधाइयों का तांता लगा रहा। उधर प्रातःकाल तक आतिश-बाजी और पटाखों का प्रदर्शन होता रहा।

दूसरे दिन रणजीतसिंह की ओर से विवाहोपलक्ष्य पर भिखारियों व गरीबों को

दान-दक्षिणा देने का कार्य प्रारंभ हुआ। कहा जाता है कि दान-दक्षिणा लेनेवाले ५ वर्गमील क्षेत्र में फैले हुए थे। दान-दक्षिणा का कार्यक्रम फौज के नियंत्रण में संपन्न हुआ। इस कार्य के लिए कुल ८० दरवाजे अस्थायी रूप से बनाये गये थे, जिनमें से प्रत्येक व्यक्ति दान-दक्षिणा लेने के लिए आ-जा सकता था। प्रत्येक व्यक्ति को दान-दक्षिणा में ५ रुपये की कीमत की एक-एक बटकी दी गयी। एक बार उसे प्राप्त कर लेने पर कोई व्यक्ति दोबारा न जा सके इसका विशेष प्रबंध किया गया था। इस प्रकार दान-दक्षिणा में कुल १० लाख रुपये खर्च हुए।

चींटियों के परिवार को दान

एक व्यक्ति दान-दक्षिणा प्राप्त करने के लिए सिर पर मटका लेकर आया। वह बोला, महाराज, "मेरे परिवारवालों को तो कुछ भी नहीं मिला।" रणजीतसिंह ने पूछा, "कहां हैं तुम्हारे परिवार-वाले?" उसने सिर पर से मटका उतार-कर उसका मुंह खोलकर दिखा दिया। मटके में चींटियां ही चींटियां रेंग रही थीं। रणजीतसिंह उस व्यक्ति की बुद्धिमानी पर चमत्कृत होते हुए बोले, "अपने परि-वारवालों की संख्या गिनकर उतनी ही बटकी ले लो अथवा मटके में जितनी आयें उतनी बटकी प्राप्त कर लो।" वह खुश होकर मटका भरकर बटकी ले गया।

मेहमानों के मनोरंजन के लिए प्रसिद्ध पहलवानों की कुश्ती व भालों-तलवारों की लड़ाइयां दिखायी गयीं। परंतु आकर्षण की मुख्य वस्तु थी हाथियों की लड़ाई, जिसे विदेशियों ने बहुत अधिक पसंद किया। दोपहर में दहेज दिखायी की रस्म पूरी हुई। दहेज में ११ हाथी, १०० घोड़े, १००१ गायें, १००१ भैंसें व १००१ ऊंट तो थे ही, प्रत्येक की पीठ पर दहेज का कुछ न कुछ सामान भी लदा हुआ था। इस प्रकार सोने-चांदी के कई सौ बरतन, कई जोड़े शाल, लिहाफ, बिछौने व कीमती आभूषण थे, जिनकी कुल लागत का अंदाज लगाना कठिन था। रणजीतसिंह को अलग से १ लाख रुपये की भेंट दी गयी।

होलिकोत्सव की धूम

दो दिन बाद जब बारात वापस आयी तो लाहौर को दुल्हन की तरह सजाया-संवारा गया था। चकाचौंध करती रोशनी, दीपकों के बंदनवार, आतिशबाजी व गाजे-बाजे के शोर के बीच प्रसिद्ध शालीमार बाग में रंगबिरंगी झरनों की रोशनी के साथ विशाल दावत का आयोजन किया गया। दूसरे दिन दोपहर को महलों में विदेशी अतिथियों ने हीरे-जवाहरातों की रोशनी देखी। प्रसिद्ध कोहनूर हीरे के साथ अगणित तलवारों, कड़ों, चूड़ियों व गले के हारों को देखकर अतिथिगण स्तंभित रह गये। रणजीतसिंह की १८ पत्नियों में से सबसे बड़ी माई नाकिन, खड़गसिंह की मां व नौनिहालसिंह की दादी ने अंगरेज महिलाओं की स्वयं अभ्यर्थना की। चार-पांच दिन बाद होली आ रही थी, अतः

ज्ञान-गंगा

सत्येन ब्रह्मचर्येण व्यायामेनाथ विद्यया।
बलवन्तं प्रतिष्ठाहं आत्मनं सततं कुरु॥

(आप्त वाक्य)

सत्य, ब्रह्मचर्य, व्यायाम और विद्या के द्वारा अपने को बलवान और प्रतिष्ठित बनाओ।

न हि प्रतिज्ञां कुर्वन्ति वितथां सत्यवादिनः।
लक्षणं हि महत्त्वस्य प्रतिज्ञा परिपालनम्॥

(वा. रामायण)

—सच्चे आदमी झूठी प्रतिज्ञा नहीं करते प्रतिज्ञा को पूरा करना ही बड़प्पन या महत्त्व का लक्षण है।

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा, वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम्।
ना सौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति न तत्सत्यं यच्छलेनानुविद्धम्॥ (वा. रामायण)

—जिसमें वृद्ध नहीं हैं वह सभा नहीं है, जो धर्म का प्रतिपादन नहीं करते वे बूढ़े नहीं हैं। जिस बात में सचाई नहीं है वह धर्म नहीं और जिसमें छल मिला हुआ है वह सत्य नहीं है।

कल्पयति येनवृत्तिर्येन च लोके प्रशस्यते सद्भिः।
स गुणस्तेन गुणिना रक्ष्यः संवर्धनीयश्च॥

(नीतिरत्नमाला)

—मनुष्य जिस गुण से आजीविका पाता है और जिस गुण के कारण इस दुनिया में सज्जन उस की बड़ाई करते हैं, गुणवान को अपने उस गुण की रक्षा करना और बड़े यत्नों से उसे बढ़ाते रहना चाहिए।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

किसी भी अतिथि को जाने नहीं दिया गया और बड़ी धूमधाम से होलिकोत्सव मनाया गया। रणजीतसिंह ने विदेशी अतिथियों-सहित होली खेली। प्रत्येक अतिथि को एक-एक बाल्टी भरकर गुलाल तथा हरी, पीली, लाल व केसरिया रंग की भरी हुई गेंदें दी गयीं। विवाह के १५ दिन पश्चात बड़ी मुश्किल से अतिथियों ने वापस जाने की अनुमति प्राप्त की। इस विवाह के उपलक्ष्य में 'कन्कब-ए-इकबाल-ए-पंजाब' नामक शौर्य व वीरता का एक पुरस्कार प्रारंभ किया गया।

यद्यपि नौनिहालसिंह का विवाह बड़ी धूमधाम से हुआ तथापि यह विवाह सभी के लिए बड़ा अभागा सिद्ध हुआ। रणजीतसिंह के वैभव, कोहनूर व फौजी सलामी देखकर अंगरेज सेनापति का मन ललचा गया। विवाह के एकदम बाद से रणजीतसिंह व अंगरेजों की दोस्ती में दरार पड़ गयी। दिलीपसिंह के गद्दी पर आते-आते तो पंजाब के सिक्ख शासन को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला दिया गया। यही नहीं, विवाह के केवल २ वर्षों के पश्चात डोगरा प्रधानमंत्री ध्यानसिंह के षड्यंत्र से खड़गसिंह एवं ३ वर्ष के पश्चात स्वयं नौनिहालसिंह की हत्या कर दी गयी। नौनिहालसिंह की नव विवाहिता को ध्यानसिंह ने चादर डालकर अपने पुत्र हीरासिंह के साथ ब्याहना चाहा, पर स्वयं दुल्हन की दृढ़ता के कारण ऐसा संभव न हो सका।

—राजकीय महाविद्यालय कोटपूतली (राज.)

व्यंग्य

नाश्ता

● सआदत हसन मंटो

"मेरी समझ में नहीं आता कि आज तुम अकारण नाराज क्यों हो ?"

"मेरे साथ कोई बात न किजिए, मैं भरी बैठी हूं। भगवान की सौगंध आपने तंग किया तो मैं शोर मचाना शुरू कर दूंगी।"

"परंतु किस बात पर ?"

"जैसे कोई बात ही नहीं हुई !"

"भई मुझे भी तो पता चले !"

"आपको किस बात का पता चलेगा ? मैं तो कहती हूं, भगवान करे, मुझे मौत आ जाए !"

"इतनी जल्दी क्यों ?"

"जितनी जल्दी आ जाए, उतना ही अच्छा है। मैं तो चाहती हूं, आपसे मुझे हमेशा के लिए छुटकारा मिल जाए।"

"तुम तलाक ले सकती हो !"

"बकवास न कीजिए, मैं शरीफ औरत हूं। तलाक के बारे में सोच भी नहीं सकती।"

"मरने के बारे में सोच सकती हो !"

"हर शरीफ औरत केवल सोचती नहीं, बल्कि सोचे हुए पर अमल भी करती है।"

"तो आप क्यों नहीं करतीं ?"

"आप चाहते हैं मैं आत्महत्या कर लूं ?"

"यदि आपकी इच्छा है तो मुझे क्या आपत्ति हो सकती है !"

"तो चलिए मेरे साथ छत पर—मैं वहां से छलांग लगा दूंगी।"

"चलिए !"

●●

"अब आप सोच क्या रही हैं ? **कूद** जाइए, तिमंजला मकान है, नीचे **पक्की** सड़क है। आपकी हार्दिक इच्छा **अवश्य** पूरी हो जाएगी।"

"मेरे जेवरों का क्या होगा ?"

"मैं आपकी माता के हवाले कर दूंगा।"

"मुझे कैसे विश्वास हो सकता है ?"

"कम से कम आपकी नजरों में मेरी इतनी शराफत तो बाकी रहनी चाहिए कि मैं जो कुछ कहूंगा, उसे पूरा करूंगा।"

"जैसे आप हमेशा अपनी बात के पक्के रहे हैं !"

"कोई ऐसा उदाहरण दो, जब मैं अपनी बात से फिरा हूं।"

"अभी दस दिन हुए आपने कहा था कि मेरे लिए पियर्स साबुन लेकर आएंगे। आज तक लाये हैं ?"

"तुम अच्छी तरह जानती हो कि यह साबुन बाजार में नहीं मिल रहा है। मैं कहां से लाता ?"

"मुझे क्या मालूम ? आपको अपने लिए बाजार से गायब सिगरेट कहीं न कहीं मिल ही जाती है। वास्तव में आपको मेरी रत्ती भर भी परवाह नहीं। विवाह के एक-दो वर्ष आपने संकोचवश मेरे साथ कुछ अच्छा सलूक किया। उसके बाद मुझे बिलकुल उपेक्षित कर दिया। मैं अवश्य आत्महत्या कर लूंगी।"

"बड़े शौक से। मैं आपकी किसी इच्छा के विरुद्ध नहीं जाना चाहता।"

"आप मुझे धक्का दीजिए।"

"मेरा विचार है, मैं स्वयं ही कूद जाऊं। मैं अकारण धक्का देने का कष्ट नहीं करना चाहता।"

"नहीं, नहीं, मरना तो मैं चाहती हूं।"

"तो आपके बाद यहां जीवित कौन रहना चाहता है !"

"सच ! क्या [illegible] रहे हैं ?"

"तुम्हारी जान की कसम !"

"जैसे आपको मेरी जान बहुत प्यारी है !"

"इसका प्रमाण ले लो। चलो, मेरा हाथ पकड़ो। हम दोनों इस तिमंजिले से कूदते हैं। तुम्हें तो खैर क्या विश्वास होगा, परंतु लोगों को इतना तो ज्ञात हो जाएगा कि दोनों पति-पत्नी एक-दूसरे को इतना चाहते थे कि उन्होंने अपने मरने का भी एक ही समय निश्चित किया।"

"मरना तो मैं चाहती हूं।"

"परंतु प्रश्न यह है कि मैं क्यों साथ न मरूं ?"

"मरें आपके दुश्मन !"

"दुश्मन तुम्हारा मैं हूं। देखो, ऐसा करो, पहले मैं नीचे कूदता हूं। परंतु तुम वचन दो कि बाद में तुम भी छलांग लगाओगी।"

"नहीं, पहले मैं गिरती हूं।"

"चलो, ऐसा ही सही।"

"मैं जेवर मां के घर न भेज दूं ?"

"जब मैंने स्वयं तुम्हारे साथ मर जाने का वचन दिया है और तुम भी मर रही हो तब जेवरों का खयाल बिलकुल बेकार मालूम होता है।"

मेरा जड़ाऊ नेकलेस, हीरे के बुंदे, मीनाकारी की हुई चूड़ियां—मैं नहीं चाहती कि ये सब बेकार जाएं। मैं अपनी भांजी को दे देना चाहती हूं।"

"यह [illegible] है ?"

"क्यों नहीं। इन जेवरों से मुझे बहुत प्यार है। इसी तरह भांजी भी प्यारी है। मैं नहीं चाहती कि आपके संबंधी इन्हें अधिकार में ले लें।"

"मेरे संबंधियों को डालो चूल्हे में। चलो नीचे चलते हैं। तुम अपने सब गहने किसी संदूकची में बंद करके अपनी बहन के घर भेज दो। इसके बाद हम दोनों आत्महत्या कर लेंगे।"

"मेरा विचार है, आप ठीक कहते हैं।"

"ठीक तो मैं हमेशा ही कहता हूं, परंतु तुम गलत समझती रही हो।"

"मसलन ?"

"आज की नाराजगी का कारण मुझे अभी तक नहीं मालूम हुआ। आपने मेरे ऊपर कोई इलजाम लगाया होता।"

"मैं इस संबंध में कोई प्रश्न नहीं करना चाहती। नीचे चलिए ताकि मैं अपने जेवर भांजी को भेज सकूं। इसके बाद जो निर्णय हुआ है, वही होगा। मुझसे अब अधिक बातें न कीजिए। मेरा दिमाग खौल रहा है।"

●●

"यह अंगूठी भी साथ रख दीजिए।"

"क्यों ?"

"जब मर जाना है, फिर इसे रखने का क्या लाभ ?"

"मैं इसे स्वयं पहनूंगी।"

"लाइए, मैं पहना दूं ?"

"नहीं, आप कौन होते हैं ?"

"बहुत अच्छा, आप स्वयं पहन लीजिए, परंतु इसे नहलानेवाला ही उतारेगा।"

"उसको तो मैं हाथ भी न लगाने दूंगी ?"

"मेरा अभिप्राय नहलानेवाली स्त्रियों से था। मरने के बाद उनके हाथ आपके मृत शरीर पर अवश्य ही सिर से पांव तक फिरेंगे।"

"नरक में जाएं ये स्त्रियां !"

"आप कहां जाएंगी ?"

"जन्नत में—मैं हूर बन जाऊंगी।"

"हूर बन गयीं तो मेरे से किसी अच्छे पुरुष को सौंप दी जाएंगी।"

"मैं भाड़ में झोंकूंगी ऐसे अच्छे पुरुष

को। मैं एक ही से भर पायी हूं।"

"आखिर आपको मुझसे क्या शिकायत है?"

"मुझे आपसे शिकायत क्या नहीं है! परमात्मा आप-जैसा पुरुष किसी शरीफ लड़की को न दे। दो दिन से, हराम है जो मैंने एक कौर भी खाया हो। पर आपको क्या परवाह है! आप तो अपनी विलासिता में डूबे हैं।"

"मुझे कुछ मालूम भी तो हो।"

"आपको सब मालूम है। मैं क्या बताऊं? जरा नौकर को बुलवा दीजिए।"

"शाकिर!"

"नहीं, ठहरिए, मैं अपना गुलूबंद निकाल लूं।"

"क्यों?"

"यह मेरी मां का है।"

"तो इसका आप क्या करेंगी?"

"पहन रही हूं— देखते नहीं आप?"

"यह मृत्यु का शृंगार हो रहा है?"

"जाने आप क्या कह रहे हैं! मेरी आंखों से आंसू बह रहे हैं और आप मेरा मजाक कर रहे हैं! भगवान करे, मैं यहां बैठी-बैठी मर जाऊं और आप सारी उमर बेचैन रहें। आपका कोई मनोरथ पूरा न हो और वह ..."

"कहो, कहो।"

"मैं क्या कहूं, भगवान आपसे कहेगा। मैं मर जाऊंगी तो आपके लिए स्थायी रूप से एक भयानक स्वप्न बन जाऊंगी और आपके लिए जीवन अभिशाप हो जाएगा।"

"जैसे अब नहीं है!"

"आपको शर्म आनी चाहिए। मेरे जीवन का रोग बने हुए हैं और मुझसे ही कहते हैं कि शर्म आनी चाहिए। यह मेरे अब्बा की गलती है जो उन्होंने आप-ऐसे गलत आदमी से मुझे ब्याह दिया। मालूम नहीं, उन्होंने आपमें क्या गुण देखा?"

"मुझे स्वयं इस बात का आश्चर्य है!"

"क्या आप गलत आदमी नहीं हैं?"

"मुझे मालूम नहीं, ठीक आदमी कैसा होता है!"

"जैसे मेरा भाई।"

"ओह! मैं अब आपका भाई तो नहीं बन सकता।"

"शरीफ आदमी आप भला कैसे बन सकते हैं! और शरीफों से आपको सरोकार भी क्या है!"

"यह मेरा अपमान है।"

"चलिए ऊपर।"

"आपने अंगूठी और गुलूबंद पहन लिये हैं?"

"हां, पहन लिये हैं—आपका इससे क्या मतलब?"

"मतलब तो कुछ भी नहीं, परंतु मैंने इसलिए पूछ लिया कि शायद आप भूल गयी हों।"

"नहीं भूली।"

"तो चलिए ऊपर।"

"जरा ठहरिए।"

"क्यों?"

"मुझे ऐसा लग रहा है, मैं कोई चीज भूल गयी हूं।"

"क्या ?"

"याद नहीं आ रहा।"

"देर हो रही है, मुझे एक काम से जाना था।"

"कितने बजे ?"

"साढ़े सात बजे।"

"अभी तो पौने सात बजे हैं।"

"इसीलिए तो कह रहा हूं कि जल्दी कीजिए। ऐसा न हो कि समय हो जाए और मैं आपके साथ कूदने का विचार त्याग दूं।"

"तो चलिए—परंतु ठहरिए—मैं यह चूड़ियां भी ले लूं।"

"ले लीजिए—पर मेरी समझ में नहीं आता। आप तो सारे आभूषण अपनी भांजी को देना चाहती थीं।"

"सारे क्यों दूं ? बस जितने बाकी हैं, काफी हैं।"

"आप मालिक हैं।"

"चलिए।"

"चलिए।"

●●

"सीढ़ियां चढ़ते-चढ़ते आप थक गयीं।"

"मैं तो नहीं थकी—आप जरूर हांफने लगे हैं।"

"तुम्हें मालूम नहीं कि मुझे सांस फूलने का रोग है। मैंने सुबह गोलियां ही नहीं खायीं।"

"मैं सो रही थी।"

"तुम हमेशा सोयी रहती हो।"

"यह ताना ओछा है। मैं सवेरे अपने दो बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करती हूं। उन्हें नाश्ता कराती हूं और फिर थोड़ी देर के लिए लेट जाती हूं। आप फिर भी सोये रहते हैं।"

"खाक—मैं करवटें ले रहा होता हूं।"

"परंतु बोलते क्यों नहीं—जब आपका बड़ा लड़का बात-बात पर जिद कर रहा होता है ?"

"मुझे उससे प्यार है। मैं उसे झिड़क नहीं सकता।"

"मुझे तो आप हर समय झिड़कते-घुड़कते रहते हैं !"

"मेरा विचार है, अब हमें यहां से कूद जाना चाहिए। यह टंटा खत्म हो जाए।"

"आप बार-बार अपने ओंठों पर जीभ क्यों फेर रहे हैं ?"

"तुम्हें इससे क्या ?"

"केवल पूछ लिया है—तौबा आपसे बात करना भी पाप है !"

"तुम नहीं जानती हो। पाप से एक विशेष प्रकार का आनंद प्राप्त होता है जो पुण्य से नहीं होता।"

"मैंने पूछा था कि आप बार-बार अपने ओंठों पर जीभ क्यों फेर रहे हैं?"

"मैंने अभी तक नाश्ता नहीं किया !"

"यह कमबख्त करीम ! करीम, कहां है करीम—नीच हमेशा भूल जाता है—"करीऽऽम . . . करीऽऽम . . . करीऽऽम . . ."

—अनु. राजेन्द्र वोहरा

कई बार

कई बार ऐसा हुआ है
मैं कमरे की दीवारों में उनके अपराध ढूंढ़ती रही
जज बन गयी हूं खुद और वकालत भी की है
खुद के खिलाफ उनके लिए

मगर डर बना रहता है
अभी-अभी
पलाश-जंगल में उनकी प्रेत-छाया मंडराने लगेगी
और सारे फूल जलकर राख हो जाएंगे
मेरे फूल—मेरे पलाश

मैं तब मुद्दई बनकर जले हुए फूलों की
साक्षी में आकाश की तरफ ताकती खड़ी रहूंगी—शायद

छोटी-छोटी खुशियों के क्षण
मुझे अपनी हलकी बांहों में उठा नहीं पाएंगे
पत्थर तोड़ता मजदूर बेसुरा फाग गाएगा
और आकाश अपनी ठंडी आवाज में
मुझे चीखेगा—
पलाश-जंगल से या अमुक मुद्दालय से
आपका रिश्ता कैसा है—क्या हैं सबूत गुनाहों के
और क्या है मकसद आपके इंटरेस्ट का

धूल-भरा आकाश दिखायी देगा दूर तक
मैं तब क्या करूंगी
कमरे की दीवारों में, तालाब के तट
टूटे पत्थरों के ढेर पर या जले हुए
वृक्षों के ठूंठ में
उनके अपराध ढूंढूंगी
फिर कोर्ट चालू होगा, उम्र की वकालत होगी
फूलों का इंटरव्यू, मौसम के बयान होंगे
आरोपित संबंधों का रिहर्सल चलेगा
और जज बनकर मैं अपने खिलाफ हो जाऊंगी

—पद्माशा

• विश्वमोहन तिवारी

शंकराचार्य और गणित के चमत्कार

पुरी के शंकराचार्य जगद्गुरु स्वामी श्री भारती कृष्णतीर्थजी महाराज (१८८४-१९६०) की पुस्तक 'वैदिक गणित' के चमत्कारिक सूत्रों पर आधारित लेख

आपके सिंडिकेट ने, जिसमें कुल १९ व्यक्ति हैं, दस शंख (अर्थात १० शक्ति १८ या १ ट्रिलियन) रुपयों की लाटरी जीती। यदि सबको बराबर-बराबर रुपये बांटे जाएं तो आपको कितने रुपये मिलेंगे? इसे मालूम करने के लिए १ लिखने के बाद १८ शून्य लिखेंगे, फिर इस संख्या को १९ से भाग देंगे। उत्तर निकालने के लिए आपको १७ बार भाग देना पड़ेगा।

और यदि आपसे कहा जाए कि १० शक्ति २८ रुपयों को २९ व्यक्तियों में बराबर-बराबर बांट दें, तो हो सकता है कि आप कह दें कि भाई जिनको यह मिलना है वे ही बांट लें, हमें आपसे पूरी सहानुभूति है; क्योंकि इस गणना में आपको २९ का भाग २७ बार देना पड़ेगा।

अब मैं आपको एक ऐसा सूत्र बताता हूं जिसकी सहायता से आप यह सारी गणना, बिना १९ या २९ का पहाड़ा जाने, मन-ही-मन कर सकते हैं और एक जादूगर की भांति उत्तर के एक-के-बाद दूसरे अंक खटाखट बोल सकते हैं।

इस गणना में मुख्य बात १/१९ और १/२९ का दशमलव के रूप में मान निकालना है, बाकी तो दशमलव बिंदु के खिसकाने की बात है। सामान्य रूप में इसे आवर्त्ती दशमलव निकालने की प्रक्रिया कहेंगे। आवर्त्ती दशमलव मालूम करने के बाद कुल राशि कितनी भी अधिक क्यों न हो, बंटवारे का पूरा-पूरा मान निकालना आसान हो जाता है।

तो लीजिए, सूत्र आजमाकर देखिए। सूत्र है—**'एकाधिकेन पूर्वेण'**, अर्थात 'अंतिम के पहलेवाले अंक से एक अधिक द्वारा'। जैसे १/१९ में अंतिम अंक ९ के पहलेवाले अंक १ से एक अधिक अर्थात २ द्वारा। २ द्वारा क्या?—गुणा या भाग (जोड़-घटाना

तो हो नहीं सकता)। निस्संदेह २ से गुणा या भाग कर, दोनों ही विधियों से, १/१९ का मान निकाल सकते हैं। यहां हम केवल भागवाली विधि का वर्णन करेंगे। इस भाग देने की नयी प्रक्रिया में ही सारी विशेषता तथा सरलता निहित है।

चूंकि 'हर' के १९ में दो अंक हैं और हम सारी प्रक्रिया १ ही अंक (२) से कर रहे हैं, इसलिए 'अंश' का १ इस प्रक्रिया विशेष के लिए ०.१ हो जाता है। ०.१ में २ का भाग देने से भजनफल शून्य मिलता है तथा अवशेष १। यह सारी प्रक्रिया नीचे लिखे तरीके से लिखी जाती है—

१/१९ =०.० ५ २ ६ ३
 १ ० १ ० ०

भजनफल शून्य दशमलव बिंदु के बाद लिख दिया जाता है। अवशेष १ को भजनफल शून्य का उपसर्ग बनाकर जो संख्या प्राप्त होती है वह नया भाज्य है। अर्थात, अब १० में २ का भाग दिया जाएगा। सुविधा के लिए अवशेष १ को बायीं निचली तरफ लिखा जाता है।

नये भाज्य अर्थात १० में २ का भाग देने से भजनफल ५ मिलता है तथा अवशेष शून्य। भजनफल ५ को शून्य के दाहिनी तरफ तथा अवशेष शून्य को ५ के बायीं निचली तरफ लिख देते हैं।

फिर से प्राप्त नये भाज्य ५ में २ का भाग देने से भजनफल २ तथा अवशेष १ मिलता है। यथास्थान लिखने के बाद नया भाज्य १२ मिला। १२ में फिर २ से भाग देने से भजनफल ६ तथा अवशेष ० मिलता है। यथास्थान लिखने के बाद नये भाज्य ६ में २ का भाग देने से भजनफल ३ तथा अवशेष ० रहता है। उन्हें फिर यथास्थान लिख दिया जाता है। यही सारी प्रक्रिया है और इसके द्वारा आप मनचाहे दशमलव स्थान तक मान निकाल सकते हैं। नीचे हम १/१९ का, इसी प्रक्रिया द्वारा निकाला हुआ (जोकि प्रचलित विधि द्वारा निकाले मान के बराबर ही है) आवर्त्ती दशमलव मान लिख रहे हैं—

१/१९=०.० ५ २ ६ ३ १ ५ ७
 १ ० १ ० ० १ १ १
 ८ ९ ४ ७ ३ ६ ८ ४ २ १
 १ ० १ ० १ १ ० ० ० ०

अब आप स्वयं १/२९ का आवर्त्ती दशमलव मान इस प्रक्रिया द्वारा निकालकर नीचे लिखे मान से मिलाइए—

१/२९=०.० ३ ४ ४ ८ २ ७ ५
 १ १ १ २ ० २ १ २
 ८ ६ २ ० ६ ८
 १ ० ० २ २ २
 ९ ६ ५ ५ १ ७ २ ४ १ ३
 १ १ १ ० २ ० १ ० १ २
 ७ ९ ३ १
 २ ० ० ०

इस तुल्य दशमलव को इस विशेष प्रकार से लिखा गया है कि ऊपर और नीचे के अंकों का जोड़ ९ होता है। इससे आप चाहें तो अपनी प्रक्रिया का काम

आधा कर सकते हैं और जांच भी सकते हैं कि उत्तर सही है अथवा नहीं।

तेजी से काम करनेवाला यह सूत्र केवल उन साधारण भिन्नों पर काम करता है जिनके 'हर' का अंतिम अंक ९ होता है, जैसे १।२९, १।७९, १।१३९ (इसमें एकाधिक पूर्व का मान १४ होगा) आदि। तब अन्य भिन्नों का मान कैसे निकालें ?

१, ३ और ७ अंतिम अंकवाले साधारण भिन्नों, जैसे १।११, १।१३, १।१७ आदि को हम आसानी से क्रमशः ९।९९, ३।३९ तथा ७।११९ बना सकते हैं। उदाहरणार्थ १।१७=७।११९, और ११९ का एकाधिक पूर्व=१२। अब हम ०.७ में १२ का भाग उसी विशेष प्रक्रिया द्वारा देंगे और तुल्य आवर्त्ती दशमलव का मान लिख सकेंगे, यथा—

१।१७=०.० ५ ८ ८ २ ३ ५ २
          ९ ४ १ १ ७ ६ ४ ७

अब जो साधारण भिन्न बचते हैं उनके 'हरों' में गुणनखंड या तो २ का होगा या/और ५ का। ऐसे भिन्न जिनके 'हरों' में केवल २ या/और ५ के ही गुणनखंड में रहते हैं, वे हमें साधारण या अनावर्त्ती दशमलव की संख्या देते हैं, और जिन 'हरों' में २ या ५, ३ या ७ आदि से मिले रहते हैं, वे अनावर्त्ती और आवर्त्ती मिली दशमलव संख्या देते हैं।

गुणा करने के लिए **'ऊर्ध्वतिर्यग्भ्याम'** सूत्र की सहायता से लंबी-लंबी संख्याओं का गुणनफल मन-ही-मन कर सीधे एक पंक्ति में लिख सकते हैं। सूत्र का अर्थ है 'खड़े रूप से और तिरछे से'। एक सरल उदाहरण लें। मान लें कि ३४×५७ का मान निकालना है—

(१) सर्वप्रथम दाहिने छोर के अंकों का (खड़े रूप से) गुणा कर, ७×४=२८ गुणनफल का इकाई अंक उत्तर के इकाई अंक के स्थान पर लिख दें तथा दहाई अंक २ को (हाथ-की-आई) ८ के बायीं निचली ओर लिख लें।

```
      ३४
      ५७
 ----------
 १५ | १ | ८
    | ४ | २
 =१९३८
```

(२) ३ और ७ का तथा ४ और ५ का (तिरछे से) गुणा कर दोनों के गुणनफल का जोड़ ४१ बीच में लिख दें।

(३) बायें छोर के अंकों का गुणा ३×५ कर गुणनफल १५ को बायीं ओर लिखें।

(४) इकाई का अंक ८ हुआ। दहाई के अंक के लिए बीच की संख्या १ में हाथ-की-आई २ को जोड़कर ३ लिख दें। सैकड़े के अंक के लिए सैकड़े के अंक ५ में दहाई से प्राप्त हाथ-की-आई ४ जोड़कर ९ लिखें तथा हजार के अंक के लिए हजार के स्थानवाला अंक १ ही लिखें (क्योंकि अब की बार हाथ-की-आई नहीं है)।

अब तीन अंकवाली संख्याओं के गुणा का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

(१) इकाई के लिए दाहिने छोर के अंकों ७×१ का गुणनफल ७ लिखें। हाथ-की-आई

```
        ६ २ १
        ५ ४ ७
 -------------
  ३ ३ ९ ६ ८ ७
  ३ ५ १ ०
```

अंकों की महत्ता

अंक का प्रारंभ १ से होता है और ९ तक आकर ० के नजदीक लय प्राप्त करता है। आर्य वाङ्मय में अंकों की वैज्ञानिकता और गणितीय योग, वियोग, गुणन और भाजन के नियमों को निर्धारित करते हुए कहा गया है कि पूर्ण अंक में पूर्ण का योग करने पर परिणाम पूर्ण ही निकलता है, और पूर्ण अंक में पूर्ण का अंतर भी पूर्ण होता है। पूर्ण अंक का पूर्ण से भाजन और गुणन भी पूर्ण फल देता है।

पूर्ण अंकों में ० का महत्त्व १ से भी ज्यादा माना गया है, क्योंकि सभी अंकों का विलय ० में ही होता है। इसी कारण ० अंक को अंक-शास्त्र में लयस्थिति माना गया है। इसके अतिरिक्त १ से ९ तक के अंकों का पृथक-पृथक महत्त्व इस प्रकार बताया गया है—एक ब्रह्म, द्विधा प्रकृति, तीन गुण, चार सोपान, पांच तत्त्व, छह रिपु, सप्त भूमिकाएं, अष्ट सिद्धियां, और नौ निधियां।

अंक १६ की भी विशिष्ट मान्यताएं हैं। चंद्र की पूर्णता षोडश रश्मियों से मानी गयी है। श्रीकृष्ण को १६ कलाओं का पूर्ण अवतार माना गया है।

शून्य भी सुविधा के लिए बायीं निचली ओर लिख सकते हैं।

(२) दाहिने दो अंकों का तिरछा गुणन ७×२ तथा ४×१ कर उनके गुणनफल को जोड़ने से प्राप्त १८ का ८ दहाई अंक के लिए लिखें, क्योंकि हाथ-की-आई शून्य है, और १८ के १ (हाथ-की-आई) को फिर ८ के बायीं निचली ओर लिखें।

(३) अब तीनों अंकों को लेकर, ६×७ तथा ५×१ (तिरछे से) तथा ४×२ (खड़े रूप से) के गुणनफलों को जोड़कर प्राप्त संख्या ५५ में पहले से रखी हाथ-की-आई १ को जोड़ने से प्राप्त संख्या ५६ के ६ को सैकड़े के स्थान पर लिखें तथा ५ को हजार के स्थान के लिए हाथ-की-आई के रूप में बायीं निचली ओर लिख लें।

(४) बायें छोर के दो अंकों का तिरछा गुणन अर्थात ६×४ तथा ५×२ कर प्राप्त गुणनफलों को जोड़ने से प्राप्त ३४ में हाथ-की-आई ५ को जोड़ने से ३९ मिलता है। ३९ का ९ हजार के स्थानवाला अंक हो गया तथा ३ को दस हजार के स्थान के लिए हाथ-की-आई के रूप में बायीं निचली ओर लिख लें।

(५) बायें छोर के पहले अंकों ६ तथा ५ का सीधा गुणा कर गुणनफल ३० में हाथ-की-आई ३ को जोड़ने से प्राप्त संख्या ३३ में दस हजार तथा लाख के स्थानवाले अंक मिल जाते हैं।

—३३१ धौलाकुआं, नयी दिल्ली-१

कोढ़
एक समाजवादी रोग

● मधूलिका त्यागी

अहिंसक, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, शांतिप्रिय, दलबदलू, टेढ़ा चलनेवाला—ये किसी नेता की तारीफ नहीं की जा रही है, एक अत्यंत भयंकर बीमारी की मीमांसा की जा रही है। बीमारी है कोढ़।

आप मानें या न मानें, यह बीमारी इतनी भयानक है भी नहीं जितना इसका आतंक फैला हुआ है।

यह अहिंसक है, क्योंकि यह अपने शिकार की मौत का कारण कभी नहीं बनती। यह बात दूसरी है कि रोगी को जीते-जी मरे से बदतर बनाकर रखती है! मरता तभी है जब कोई दूसरी बीमारी साथ लग जाती है या भूख, गरमी, सरदी उसे तड़पाने के लिए आ जाती है।

बहुत-सी उलटी-सीधी धारणाएं बनी हुई हैं इस रोग के प्रति, कोई बेमेल खानपान को दोष देता है तो कोई प्रारब्ध को घसीट लाता है। किन्हीं विशेष जातियों, स्थानिक वातावरण और उनके रिवाजों को दोष दिया जाता है। गरीबी को भी इसकी धरोहर समझा जाता है, परंतु वास्तविकता तो कुछ और ही है।

इस रोग का मूल कारण है अदना-सा एक रोगाणु (बैक्टीरिया)। ये रोगाणु समाजवादी कहे जा सकते हैं, क्योंकि अमीरों, गरीबों और मध्यवर्गवालों में से किसी पर भी कृपा करने में ये भेदभाव नहीं करते। इस दृष्टि से धर्मनिरपेक्षता के तो पूरे गुण हैं ही इन रोगाणुओं में।

यह रोगाणु बेकार के शोर-शराबे में विश्वास नहीं रखता। जब आना होता है तो बड़ी शांति के साथ किसी भी शरीर में चला जाता है और फिर उसी शांति के साथ दस-पंद्रह वर्षों तक अपनी जड़ें जमाता रहता है। जजमान को न कभी खुजलाहट महसूस होती, न कोई दर्द वगैरा। फलतः वह बेचारा कभी यह भी महसूस नहीं कर पाता कि उसे डॉक्टर की शरण जाना चाहिए। इस गफलत का वह रोगाणु पूरा-पूरा फायदा उठाता है। फिर अगर वह

गांधीजी कुष्ठ-रोगी डॉ. परचुरे की सेवा में

रोगी डॉक्टर के पास जाए भी तो कोई फायदा नहीं होता। इसलिए यह बताना जरूरी है कि आदमी को पहले ही से कैसे मालूम हो कि वह इस बीमारी का शिकार बनता जा रहा है, ताकि समय रहते अपना इलाज शुरू करा सके।

चोर-दरवाजे से प्रवेश

यद्यपि ये रोगाणु किसी के भी मेहमान बन सकते हैं तथापि इनकी भी सीमाएं हैं। यों तो मानव शरीर में मुंह, नाक, कान, आंख-जैसे बड़े-बड़े दरवाजे भी बने हुए हैं, मगर चोर कभी भी दरवाजों से प्रवेश नहीं करता। अगर इत्तफाक से कभी बड़े दरवाजों से कोढ़ का यह रोगाणु प्रवेश कर भी जाए तो कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मानव शरीर में प्रवेश करने का इसको एक ही रास्ता मिलता है और वह है विना रास्तेवाली त्वचा।

यह रोगाणु मानव-त्वचा तक पहुंच कैसे जाता है? कोढ़ छूत की बीमारी है। रोगी के संपर्क में आनेवाले व्यक्ति की त्वचा पर छलांग लगाते इसे जरा भी देर नहीं लगती। राजनीतिक क्षेत्र में दल-बदलू की जो अवस्था है, वही इसकी है।

यदि संसार भर के कोढ़ियों को इकट्ठा करके बहुत दूर किसी द्वीप में भेज दिया जाए तो इस रोगाणु से बचा जा सकता है। परंतु यह संभव कहां है! घर से निकलकर न जाने कितने जाने-अनजाने व्यक्तियों के संपर्क में आप आते हैं! आजकल कोढ़ियों की संख्या इस हद तक बढ़ गयी है कि प्रतिदिन न जाने कितने रोगाणुओं से आपका सामना हो जाता होगा! 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' के अनुमान के अनुसार अकेले भारत में ही बीस लाख कोढ़ी हैं।

चौंकिए मत! हरेक कोढ़ संक्रामक नहीं होता। कुछ तो इस प्रकार के होते हैं कि लंबे समय तक उनके संपर्क में आने पर या रोगी के हाथ का बना खाना खाकर भी संक्रमण नहीं होता और कुछ इतने अधिक संक्रामक होते हैं कि एक बार के क्षणिक संपर्क से ही निरोगी की त्वचा पर अधिकार जमा लेते हैं और फिर अंदर प्रवेश कर जाते हैं।

रोगाणु के आक्रमण की सीमाएं

शरीर के अंदर पहुंचकर भी ऐसा नहीं है कि इन्हें पूरी आजादी मिल गयी। समूचे शरीर में बस दो जगह की कोशिकाएं हैं जहां इनका वास हो सकता है—त्वचा कोशिकाएं और नाड़ी-कोशिकाएं।

त्वचा-कोशिकाओं में वास हो जाता है तो शरीर पर हलके रंग के धब्बे पड़ जाते हैं या त्वचा चितकबरी हो जाती है। नाड़ी-कोशिकाओं में वास होने से अंग विकृत हो जाते हैं।

त्वचा पर आक्रमण होने के बाद जो दाग पड़ते हैं वे शुरू में इतने स्पष्ट नहीं दीखते कि उन पर किसी प्रकार का शक किया जा सके। दूसरी बात यह कि शरीर पर दीखनेवाला हरेक दाग कोढ़ का ही

नहीं होता। कोढ़ के दाग की अचूक पहचान यह है कि त्वचा का दागवाला भाग सुन्न रहता है।

अगर आपके शरीर पर इस प्रकार का कोई सुन्न-सा दाग है तो आप तुरंत दौड़ जाइए और डॉक्टर को उसके खिलाफ लड़वा दीजिए। वह कोढ़ की शुरुआत है। डॉक्टरों की दवाएं और छोटे-छोटे हथियार उसे समूल नष्ट कर सकते हैं। ये दाग मनुष्य के सिर, हथेली और पैर के तलवों को छोड़कर शरीर के किसी भी भाग पर हो सकते हैं।

इन दागों का कोई निश्चित आकार-प्रकार नहीं होता। दाग कई वर्ग-इंच बड़ा भी हो सकता है और सुई की नोक के बराबर भी। उनकी संख्या भी एक से लेकर अनेक तक हो सकती है। इन दागों का रंग भी अलग-अलग हो सकता है। किसी में यह दाग त्वचा के रंग की अपेक्षा पीलापन लिये होता है तो किसी में इसका रंग हलका गुलाबी होता है। कभी-कभी यह दाग कुछ उभरा हुआ-सा भी रहता है। कुछ दाग ऐसे होते हैं जिन पर किसी प्रकार की अनुभूति तो होती ही नहीं, साथ ही त्वचा के उतने ही भाग पर रोम भी नहीं होते, न वहां पर पसीना ही आता है।

त्वचा के दाग पहचान लेने भर से ही रोग की पेचीदगी हल नहीं हो जाती। बिना दाग-धब्बों वाला कोढ़ भी होता है। उस हालत में चेहरे का रंग बदल जाता है—कुछ लाल-लाल-सा, जिस पर हमेशा तेल-सा चुपड़ा रहता है। त्वचा कुछ मोटी हो जाती है। कान भी कुछ मोटे-से हो जाते हैं। आंखों, भवों के बाल झड़ने लगते हैं।

सावधान रहिए, इस प्रकार का कोढ़ अत्यंत संक्रामक होता है।

नाड़ी-कोशिकाओं पर जब आक्रमण होता है तो हाथ-पैर की अंगुलियां विकृत हो विभिन्न दिशाओं में मुड़ जाती हैं। विकृत होने से पहले अंगुलियों के अग्रभाग तथा जोड़ों में स्थायी रूप से दर्द रहने लगता है। उस दर्द को ही 'अलार्म' समझना चाहिए।

कोढ़ का उपचार

कोढ़ के रोगाणु के ये बीसों तरह के उत्पात आज पहचान में आ गये हैं। अब तक असाध्य समझा जानेवाला यह रोग भयंकर उपचार की सीमा में आ गया है। इस रोग की सबसे प्रभावशाली और सीधी-सच्ची दवा एकदम भारतीय है। नाम है डी. डी. एस.। इस दवा के नियमित सेवन से रोग से बिलकुल छुटकारा पाया जा सकता है। यह दवा कोढ़ चिकित्सालयों में निशुल्क मिलती है।

दिन में बस एक बार इस गोली को निगलना होता है। दवा इतनी अचूक है कि दस-बारह महीने तक इसका नियमित सेवन रोगी को निरोग कर देता है। जिन रोगियों का रोग अधिक भीषण और संक्रामक अवस्था में पहुंच गया है उन्हें आजीवन इस दवा का सेवन करना पड़ता है ताकि रोगाणु दोबारा हमला न कर दे। यह रोग अब असाध्य नहीं रहा।

—द्वारा महेंद्र सरल,
[illegible], बांद्रा (पूर्व), बंबई–५१

इनके काम क्या हैं ? (१५)

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

भारत के स्वतंत्र होने पर विदेशों से अपने संबंधों की पुनर्स्थापना, पारस्परिक नैकट्य-भावना तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ाने की आवश्यकता ने इस परिषद को अस्तित्व में लाने की प्रेरणा दी।

स्वतंत्रता-उपरांत जीवंत और स्वस्थ समसामयिक संबंधों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में जानने और स्थापित करने के उद्देश्य से परिषद ने अप्रैल, १९५० में जन्म लिया। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री नेहरूजी ने उसका उद्घाटन किया था। परिषद के वर्तमान सचिव इनाम रहमान गत १८ वर्षों से इसके कार्यों को चला रहे हैं।

परिषद स्वायत्त संस्था है। संविधान के अनुसार ६१ सदस्यों की परिषद, १६ सदस्यों की प्रशासिका-समिति, अर्थ-समिति तथा अन्य कोई स्थायी-समिति जिसे अध्यक्ष या परिषद स्थापित करे, इसके कार्यों को संचालित करती हैं।

६१ सदस्यीय परिषद में २० सदस्य विश्वविद्यालयों के, २० सदस्य वैज्ञानिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक संस्थाओं के तथा शेष में लोकसभा, राज्यसभा के सदस्य, सरकारी प्रतिनिधि, भारत की तीनों अकादमियों के एक-एक प्रतिनिधि शामिल

परिषद द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित आजाद स्मरण-भाषणमाला बुद्धिजीवियों के आकर्षण का एक प्रमुख केंद्र होती है। प्रथम चित्र में ब्रिटेन के लार्ड आर. ए. बटलर भाषण करते हुए दिखायी दे रहे हैं। दूसरा चित्र सन १९६२ में आयोजित भाषणमाला के श्रोताओं का है।

हैं। प्रधान कार्यालय आजाद भवन, दिल्ली में है। परिषद के कार्यों के विस्तार को उसके तीन वर्षों के बजट-आंकड़ों से जाना जा सकता है—

१९७२–१९७३ : सरकारी अनुदान—३२,८३,००० रु., अन्य स्रोतों से—१०,६२,००० रु., कुल ४३,४५,००० रु.

१९७३–१९७४ : सरकारी अनुदान—४३,८९,००० रु. (नेहरू पुरस्कार सहित) अन्य स्रोतों से—१६,६३,००० रु., कुल ६०,५२,००० रु.

१९७४–१९७५ : सरकारी अनुदान—५७,५८,००० रु., (नेहरू पुरस्कार सहित) अन्य स्रोतों से—२१,१७,००० रु. कुल ७८,७५,००० रु.

परिषद ने अपने आरंभिक कार्यों को निकट पड़ोसी देशों तक ही सीमित रखा था, किंतु आज कुछ ही देश बचे होंगे जिनके साथ सांस्कृतिक संबंध स्थापित न हो पाये हों। परिषद विदेशों से अनेक माध्यमों से अपने संपर्क बढ़ा रही है। विद्वानों, लेखकों, कलाकारों, प्रदर्शनियों, अनुसंधान-सहायता-वृत्तियों, यात्रा-भत्तों, चर्चा-गोष्ठियों, छात्रों के तथा प्रकाशनों

• बलदेव वंशी

के आदान-प्रदान से वह अपने उद्देश्यों को व्यापकता दे रही है। साथ ही परिषद हर साल अबुलकलाम आजाद की स्मृति में 'आजाद स्मरण भाषणमाला' तथा 'नेहरू पुरस्कार' के वितरण की व्यवस्था करती है। अभी तक इस भाषणमाला के अंतर्गत अनेक विश्वप्रसिद्ध विद्वान भाषण दे चुके हैं, जिनमें नेहरू, अर्नाल्ड टायनबी, एटली, सी. वी. रमन आदि शामिल हैं।

छात्र-कल्याण सेवाएं

भारत में अध्ययनरत विदेशी छात्रों के कल्याण-हेतु दी जा रही सेवाएं विशेष उल्लेख्य हैं। सरकार ने इन छात्रों को विशेष सुविधाएं एवं छात्रवृत्तियां देने के लिए आर्थिक अनुदान का प्रावधान रखा है ताकि वे भारत के विश्वविद्यालयों और अकादमियों में शिक्षा पा सकें और अपने साथ भारत की स्मृतियां ले जाएं। उनमें से अनेक अपना अध्ययन समाप्त करने के बाद अपने देश में उच्च पदों पर आसीन हो सांस्कृतिक संबंध-स्थापना में पर्याप्त सहायक सिद्ध हो सकते हैं। इन छात्रों के

भारत में अध्ययनरत विदेशी छात्रों के मध्य प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी एवं भारतीय तथा विदेशी छात्रों के मिले-जुले कार्यक्रम में गीत गाते केनियाई एवं भारतीय छात्र-छात्राएं
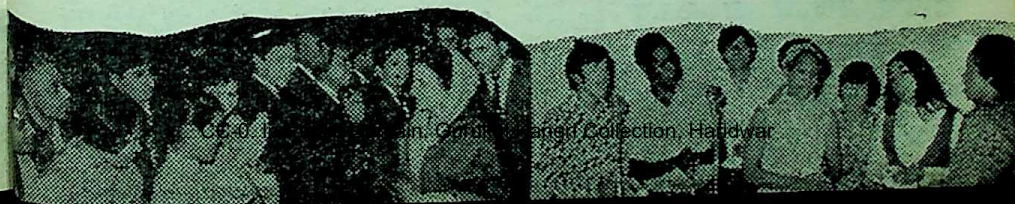
भारत आने पर, परिषद के अधिकारियों द्वारा उनका स्वागत किया जाता है। उन्हें पहले तीन महीनों की वृत्ति-राशि दी जाती है और भारत में उनके ठहरने का प्रबंध भी किया जाता है।

भारत से विदा होते समय उनकी विदाई का समुचित प्रबंध नहीं है। लेकिन हमें ज्ञात हुआ है कि सिफारिश रखने-वाले छात्रों को विदाई भी दी जाती है। विदेशी छात्रों के भारत में आने पर विभिन्न नगरों में पाठ्य-क्रम चलाये जाते हैं ताकि उन्हें भारत के संबंध में आवश्यक मूल बातों की जानकारी हो जाए और उनका भारत-आवास सुविधाप्रद एवं लाभ-दायक बन सके।

ग्रीष्म-शिविर, शैक्षणिक यात्राएं

विदेशी छात्रों के लिए देश के विभिन्न भागों में खासकर कश्मीर आदि स्थानों पर, वर्ष में ३–४ बार ग्रीष्मकालीन शिविर लगाये जाते हैं, जिससे वे देश के विभिन्न भागों और वहां के लोगों के जीवन से निकट-परिचय पा सकें तथा विकास-कार्यों को जान सकें। १९७२–७३ में ४० देशों के १७३ छात्रों ने ऐसे शिविरों में भाग लिया। छात्र-प्रतिनिधि-मंडलों के स्वागत में भी परिषद को दायित्व-निर्वाह करना होता है।

भारतीय भाषाओं की कक्षाएं

परिषद विदेशी छात्रों के लिए हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाएं सिखाने का प्रबंध भी करती है। खेलों और निबंध प्रतियो-गिताओं का भी आयोजन किया जाता है। सामाजिक-सम्मिलन कार्यक्रम, ऋण, रेलवे रियायतें तथा गणतंत्र-दिवस पर परेड देखने आदि की विशेष सुविधाएं भी प्रदान की जाती हैं।

प्रकाशन, अनुवाद और पत्रिकाएं

परिषद ने सुदूर देशों में पहुंचाने के लिए पुस्तकों, पत्रिकाओं और प्रपत्रों का प्रका-शन भी किया है। विश्व और भारत के संबंधों पर कला-संस्कृति संबंधी बीसियों पुस्तकें प्रकाशित की जा चुकी हैं।

भारतीय पुस्तकों का विदेशी भाषाओं में अनुवाद कराना, उन्हें छपवाकर उन देशों में वितरित करने और बेचने का कार्य भी परिषद ने अपने हाथों में लिया है। फ्रेंच, स्पेनिश, स्वाहिली और इंडो-नेशियाई भाषाओं में कुछ पुस्तकें प्रका-शित की गयी हैं, किंतु उद्देश्यों को देखते हुए ये प्रकाशन नगण्य-से हैं।

'इंडो-एशियन कल्चर,' (अंगरेजी त्रैमासिक) 'कल्चरल न्यूज फ्राम इंडिया' (अंगरेजी द्विमासिक), 'थाकाफातुल- हिंद' (अरबी त्रैमासिक) तथा 'न्यूज लेटर' ये चार पत्रिकाएं परिषद प्रकाशित करती रही है। अब दो अन्य पत्रिकाएं स्पेनिश तथा फ्रेंच में भी प्रकाशित की जाती हैं। इन प्रकाशनों पर १९७२–७३ में १,७९,-००० रु., १९७३–७४ में १,८५,००० रु. तथा १९७४–७५ के लिए २,०१,००० रु. का बजट है।

इसके बावजूद परिषद के प्रकाशन-

कार्यों में राष्ट्रभाषा हिंदी की, जो राष्ट्रीय सांस्कृतिक गौरव का चिह्न है, पूर्ण उपेक्षा हो रही है। विदेशों में हिंदी पढ़ाने के प्रयत्न बहुत कम हैं। जहां अन्य विदेशी भाषाओं में पत्रिकाएं प्रकाशित करने में उत्साह दिखाया गया है वहां राष्ट्रभाषा की उपेक्षा चिंता का विषय है।

पुस्तकालय एवं भेंट-प्रदायी यूनिट

परिषद के पुस्तकालय में, जो आजाद भवन में स्थित है, इस समय ३०,००० से अधिक पुस्तकें हैं और विश्व भर से चार सौ से ऊपर पत्रिकाएं आती हैं। दो विशेष पुस्तक-संग्रह किये गये हैं—आजाद–संग्रह और नेहरू-संग्रह। इनके संबंध में सभी पुस्तकों का संग्रह किया जा रहा है। पुस्तकों और पत्रिकाओं का आदान-प्रदान पुस्तकालय द्वारा किया जाता है। पुस्तकालय के कुछ विभागों —इतिहास, दर्शन और संस्कृति को विशेषकर समृद्ध किया जा रहा है।

विदेशों में भारतीय अध्ययन-केंद्र

इस योजना के अंतर्गत विदेशों में भारतीय विद्वानों को नियुक्त किया जाता है, जो विदेशों में भारतीय विषयों का अध्यापन-कार्य करते हैं। अफगानिस्तान, इंडोनेशिया, लेबनान, सिनेगाल, मेक्सिको आदि में चुने हुए विद्वान भेजे जा चुके हैं। रूस तथा ब्राजील में ऐसे केंद्र खुलने वाले हैं। फिजी, गुयाना तथा अमरीका में सांस्कृतिक केंद्र स्थापित किये जा चुके हैं। अब फ्रांस, सुरीनाम, ईरान तथा थाईलैंड में ये केंद्र स्थापित किये जाने हैं।

श्री इनाम रहमान

विदेशों में भारतीय भाषाओं के अध्ययन की सुविधाएं प्रदान करने के लिए विद्वान प्राध्यापकों को भेजा जाता है। अभी तक ईरान, आस्ट्रेलिया, त्रिनीदाद, रूमानिया, सिंगापुर, पोलैंड, लाओस, थाईलैंड, गुयाना में प्रबंध हुआ है।

परिषद के सचिव श्री इनाम रहमान से भेंट कर हमने पूछा, **"अपनी सीमाओं में परिषद ने पर्याप्त कार्य किये हैं, फिर भी जितने व्यापक स्तर पर सांस्कृतिक संबंधों के क्षेत्र में प्रयत्न होने चाहिए, नहीं हुए। इसका क्या कारण है?"**

उन्होंने बताया, "हमारे संबंध दक्षिण-पूर्व एशिया और मध्य एशिया के साथ तो पहले से बहुत पुराने और अच्छे थे, किंतु जब से अंगरेजी प्रभुत्व स्थापित हुआ, हम एक-दूसरे से अलग पड़ गये। आजादी मिलने पर उन पुराने संबंधों को फिर से स्थापित करने के कार्य को प्राथमिकता दी गयी। अब तो दक्षिण अमरीका, अफ्रीका तथा यूरोप तक हमारे संबंध व्याप्त हैं।"

दूसरा प्रश्न था—**"अधिकारी विद्वानों का कहना है कि परिषद के केंद्र और कार्य**

वचन-वीथी

मेरी जिह्वा के अग्रभाग में माधुर्य रहे, मूल में भी माधुर्य रहे। हे माधुर्य! तू मेरे कर्म और मन में भी सदैव बना रह!
—अथर्ववेद

मानव का दानव होना उसकी हार है, मानव का महामानव होना उसका चमत्कार है और मनुष्य का मानव होना उसकी जीत है।
—डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

केवल अपने लिए मांगनेवाला भिखारी कहा जा सकता है, परंतु सबके लिए मांगनेवाला देनेवाले का स्वामी होगा।
—महादेवी वर्मा

सुख प्राप्त करने के लिए दुःख प्राप्त करना चाहिए—यह बात सत्य है, किंतु इसीलिए यह स्वतःसिद्ध नहीं हो जाता कि जिस तरह से हो बहुत-सा दुःख भोग लेने से ही सुख हमारे कंधों पर आ बैठेगा।
—शरतचन्द्र

छोटी-छोटी बातों से परेशान हो उठना आदमी की अपरिपक्वता का द्योतक है। —[illegible]

विदेशों में दूतावासों से संबद्ध न होकर स्वतंत्र रहें तभी अधिक लाभ हो सकता है, इस संबंध में आपका क्या मत है?"

"देश की दीर्घकालीन नीति को यदि सांस्कृतिक संबंध पूरा नहीं करते तो फिर उनका कुछ अर्थ नहीं। अल्पकालीन नीति में यह उपयोगी हो सकता है। फिजी में हमारा सांस्कृतिक केंद्र दूतावास से अलग है। गुयाना में हमारा भवन तो अलग है, किंतु वह अभी हाई कमीशन के अधीन ही कार्य कर रहा है। अन्य जगहों पर भी हम इस ओर प्रयत्नशील हैं। भारतीय अध्ययन-केंद्र तो दूतावासों से पृथक हैं।" सचिव श्री इनाम रहमान का कहना था।

हमने पूछा, **"इस बात से आप कहां तक सहमत हैं कि भारत सरकार द्वारा भेजे गये दूतावासों से संबद्ध जो सांस्कृतिक प्रतिनिधि (कल्चरल अटैची) हैं, वे समुचित प्रभाव और दक्षता नहीं दिखा पाते?"**

सचिव महोदय ने कहा, "यह सही है। वे शैक्षणिक सहायक हैं। उन्हें सांस्कृतिक संबंधों का प्रशिक्षण नहीं है। जहां परिषद के सांस्कृतिक केंद्र हैं वहां भारत सरकार ने हमारे सांस्कृतिक प्रतिनिधियों को प्रथम सचिव (सांस्कृतिक) का दर्जा दे दिया है। अभी हमने इस दिशा में भारतीय विदेश-सेवाओं के अधिकारियों के प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम आरंभ किये हैं। पहला दल प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका है।"

—सी–१/१७३, लाजपतनगर, नयी दिल्ली–२४

● पी. टी. सुन्दरम्

आपकी भाग्य-रेखाएं

हाथों की बनावट और आदमी की पहचान

पिछले अंक में आपने विख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुंदरम् से हाथों और रेखाओं के संबंध में मूलभूत जानकारी प्राप्त की। इस अंक में पढ़िए—हाथों की बनावट और आदमी की पहचान

प्राचीनकाल से ही हस्तरेखा-विज्ञान संतों, योगियों और रहस्यवादियों की विद्या रहा है। इस विज्ञान की जड़ें प्रागैतिहासिक एवं ऐतिहासिक काल तथा आर्य-सभ्यता में भी पायी जाती हैं। कहा जाता है कि इस पवित्र विज्ञान का अपना अलग साहित्य था। जैसे-जैसे हिंदू धर्म का प्रचार हुआ, इस विज्ञान का भी प्रसार होता गया। इस विज्ञान के विषय में एक यह भी भ्रांत धारणा बनी रही कि यह मात्र अनुमान एवं विचार-पठन (थॉट-रीडिंग) पर आधारित है, किंतु जैसे-जैसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर इस विद्या का विकास होता गया, वैसे-वैसे यह धारणा भी दूर होती गयी। प्रत्येक दिशा से इस बात के प्रमाण मिलते गये कि यह प्राचीन अध्ययन भ्रम नहीं, एक वास्तविकता है।

अब यह असंदिग्ध रूप से प्रमाणित हो गया है कि हमें ठोस जैविकीय आधारवाले इस विज्ञान का महत्त्व स्वीकारना ही पड़ेगा। पाश्चात्य विद्वानों ने इस विषय को बड़ा महत्त्व दिया है। वहां इस विज्ञान के अनेक व्याख्याता हैं। उनके हस्तरेखा-विज्ञान संबंधी ग्रंथ सच्चे और श्रेष्ठ अध्ययन के अधिकृत प्रमाण हैं।

वाणी की भांति ही हमारे हाथ, उनकी गदेलियां और अंगुलियां भी अपनी स्थिति की अभिव्यक्ति करती हैं। हमारे हाथ भी बोलते हैं, हमें चेतावनी देते हैं, सचेत करते हैं, चर्चा करते हैं, साथ ही प्रसन्नता और शोक भी जतलाते हैं। उनमें जीवन की घटनाओं का कालक्रम भी अंकित होता है। किसी भी व्यक्ति के हाथों के गहन अध्ययन से इस विज्ञान की महत्ता और शक्ति का पता लग जाएगा। सुविधा के लिए हम हाथों के अध्ययन को दो खंडों में विभाजित कर सकते हैं। इनमें से एक है—हाथों और अंगुलियों का आकार, उनकी बनावट, और दूसरा है—हथेलियों पर अंकित रेखाएं तथा अन्य चिह्न। इनमें से पहला यानी हाथों और अंगुलियों का आकार और उनकी बनावट चरित्र तथा मनोवृत्तियों का सूचक होता है तो दूसरा खंड (अर्थात हथेलियों पर अंकित रेखाएं

और अन्य चिह्न) भूत, भविष्य और वर्तमान की घटनाओं से संबंधित होता है।

हम सबसे पहले विभिन्न प्रकार के हाथों का अध्ययन करेंगे। हमारा दायां हाथ 'स्वामी' अथवा प्रधानकर्त्ता हाथ होता है। जैविकीय अर्थ में हम उसे पैतृक भी कह सकते हैं। वैसे दोनों हाथों का अध्ययन करना और उनके चिह्नों को मिलाना महत्त्वपूर्ण है, फिर भी इस बात पर बहुत अधिक जोर नहीं दिया जाना चाहिए। आइए, अब हम हाथों के मुख्य मुद्दों की चर्चा करें :

१. प्रारंभिक हाथ

किसी भी हाथ का अध्ययन करते समय हमें अंगुलियों और नाखूनों पर भी ध्यान देना चाहिए। यह हाथ खुरदरा, कठोर और मोटा दिखायी देता है। इसकी अंगुलियां और नाखून छोटे होते हैं। हथेली भी ठीक इसी प्रकार की ही होती है। अंगुलियों की तुलना में लंबी हथेली व्यक्ति की पाशविक वृत्ति की परिचायक है। अंगुलियां जितनी छोटी होंगी, वे उतना ही बुद्धि का अभाव दर्शाएंगी। ऐसे हाथों में बहुत कम रेखाएं दिखायी देती हैं। ऐसे हाथवाले व्यक्ति स्वभाव से निर्मम और कामुक होते हैं। उनमें सौंदर्यप्रियता का भी अभाव होता है। यदि ऐसे हाथ में अंगूठा छोटा और उसका ऊपरी भाग चौकोर तथा भारी हो तो व्यक्ति हिंसक और कामुक तो होते हैं, पर साहसी नहीं। उनमें कोई निजी महत्त्वाकांक्षा नहीं होती, पर वे खान-पान और ऐशो-आराम के शौकीन होते हैं। यदि वे कभी हत्या करते हैं तो केवल क्रोधावेश और विध्वंसात्मक भावना के वशीभूत होकर। ऐसे व्यक्ति न तो सौंदर्यप्रिय होते हैं और न रंग, स्वरूप, आकार
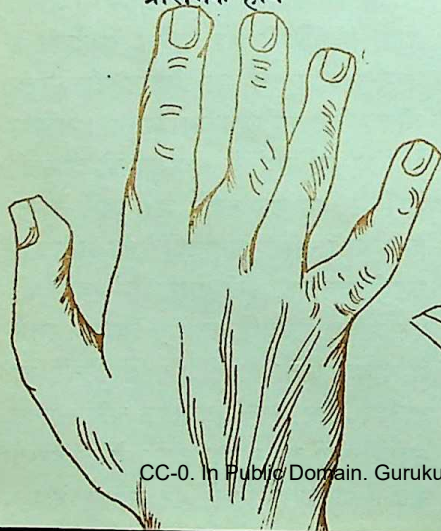
प्रारंभिक हाथ **चौकोर या उपयोगी हाथ**

चपटा या सक्रिय हाथ

गाँठयुक्त या दार्शनिक हाथ

के प्रति उनमें प्रेम होता है।

२. चौकोर अथवा उपयोगी हाथ
चौकोर हाथ को उपयोगी हाथ भी कहा जाता है। यह जीवन के विविध क्षेत्रों में पाया जाता है। यह कलाई और अंगुलियों की जड़ों के पास चौकोर होता है। इसके नाखून भी चौकोर ही होते हैं। चौकोर हाथवाले व्यक्ति रीतिरिवाजों और आदतों की ओर ज्यादा झुके होते हैं। वे समय के पाबंद, व्यवस्था-प्रिय, अनुशासित और सत्ताधिकारियों का आदर करनेवाले होते हैं। वे स्वयं साफ-सुथरे, चुस्त-दुरुस्त तो रहते ही हैं,अपने घर को भी साफ-सुथरा और चुस्त-दुरुस्त रखते हैं। वे विरोध में दृढ़, कार्य में पद्धति-प्रिय और भावावेगों के बजाय तर्क तथा युद्ध के बजाय शांति को पसंद करते हैं। कला और साहित्य-प्रियता उनके चरित्र की विशेषता होती है। वे भौतिकवादी, कट्टर तथा मर्यादित रूप से धार्मिक भी होते हैं। वे दिखावे और आडंबर के बजाय तत्त्व को पसंद करते हैं। यद्यपि उनमें कोई मौलिकता नहीं होती तथापि अपने चारित्रिक तेज और इच्छा-शक्ति के बल पर अपने कार्य में तेजस्वी प्रतिस्पर्धियों की तुलना में भी श्रेष्ठ सिद्ध होते हैं। वे व्यावहारिक बातों को पसंद करते हैं। कृषि व वाणिज्य को प्रोत्साहन देते हैं। वे घरेलू कार्यों और घरेलू वातावरण को चाहते हैं। वे अपनी बातों के धनी, व्यापार में ईमानदार तथा प्रगाढ़ मैत्री करनेवाले होते हैं। उनमें सबसे बड़ा दोष यह है कि वे तर्क पर अधिक विश्वास रखते हैं और जो बात उनकी समझ में नहीं आती, उस पर विश्वास नहीं करते हैं।
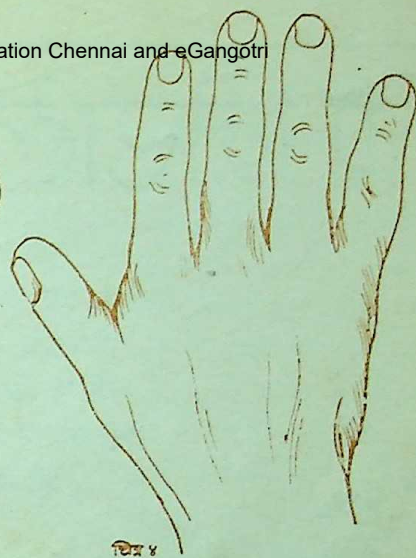
छोटी, चौकोर अंगुलियोंवाले हाथ
ऐसे हाथवाले व्यक्ति विशुद्ध अर्थों में
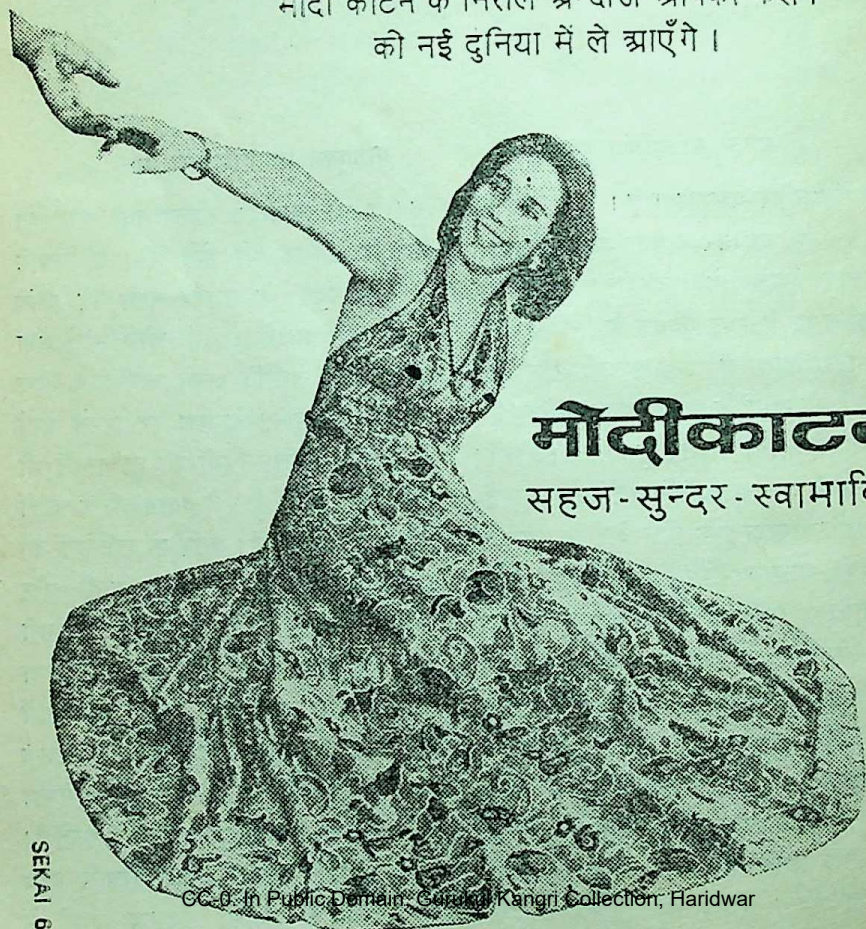
भौतिकवादी होते हैं। वे केवल अपनी ही सुनी गयी अथवा देखी हुई बातों पर भरोसा करते हैं। कुछ दुराग्रही और संकीर्ण विचारोंवाले होते हैं। वे कठोर परिश्रम द्वारा ही धनोपार्जन करते हैं, पर वे कंजूस वृत्ति के नहीं होते। वे काम की ही बात करनेवाले और अधिक व्यावहारिक समझे जाते हैं।

चौकोर, लंबी अंगुलियोंवाले हाथ

ये हाथ अधिक विकसित मनोवृत्ति के परिचायक हैं। ऐसे हाथोंवाले व्यक्ति बड़ी सावधानी से पूर्णतः तर्कसम्मत निष्कर्षों पर पहुंचते हैं, पर ये कभी भी पूर्वाग्रहों से प्रभावित नहीं होते।

गठीली अंगुलियोंवाले हाथ

इन हाथों में अंगुलियां अकसर लंबी होती हैं। ये निर्माण-कार्य से स्नेह करते हैं और वास्तुकार और गणितज्ञ, गणक (हिसाब लगानेवाले) बन सकते हैं। और यदि इन हाथों में अच्छी रेखाएं हों तो ये प्रत्येक वस्तु को सही-सही बना सकते हैं।

चपटी अंगुलियोंवाले हाथ

ऐसे हाथवाले व्यक्ति व्यावहारिक तौर पर अन्वेषक होते हैं। वे उपयोगी वस्तुएं बना सकते हैं, जैसे—घरेलू उपयोग की चीजें, यंत्र, उपकरण, अच्छे इंजन। यंत्र-रचना (मेकेनिज्म) के प्रति उनका प्रेम कई उपयोगी वस्तुओं की रचना कर सकता है।

नुकीली अंगुलियोंवाले हाथ

ऐसे हाथ अकसर देखने में आते हैं। ऐसे हाथवाले व्यक्ति संगीतज्ञ अथवा संगीत-कार होते हैं, क्योंकि ऐसी अंगुलियां उन्हें अंतःप्रेरक और स्फूर्तिजनक कौशल का स्वामी बनाती हैं। नुकीले अथवा कलात्मक हाथोंवाले कुछ व्यक्ति स्वभाव से कलाप्रिय एवं कलात्मक वस्तुओं की सराहना करनेवाले तो होते हैं पर उनमें अपनी कल्पनाओं या धारणाओं को शानदार ढंग से साकार करने की शक्ति नहीं होती। चौकोर ढंग के हाथवाले व्यक्ति समस्त मानवजाति के अधिकाधिक लाभ के लिए अपनी शक्ति का उपयोग करते हैं।

सम्वेदनशील अंगुलियोंवाले हाथ

ऐसे हाथ बहुत कम देखने में आते हैं। ऐसे हाथों में हथेलियां चौकोर तथा अंगुलियां और नाखून लंबे होते हैं। वे किसी भी काम को अच्छी तरह शुरू कर सकते हैं उसे अच्छी तरह पूरा भी कर सकते हैं, पर वे 'लहरी' अथवा 'मूडी' होते हैं।

मिश्रित अंगुलियोंवाले हाथ

ऐसे हाथों में हर अंगुली हर ढंग और आकार की होती है। ऐसे हाथों का अंगूठा बीचवाले जोड़ तक पीछे मुड़ जाता है। पहली और चौथी अंगुलियां नुकीली, दूसरी चौकोर और तीसरी चपटी होती हैं। ये उस व्यक्ति में विचारों की, प्रेरणा की, विज्ञान की और तर्क की सर्वतोमुखी प्रतिभा की सूचक होती हैं। ऐसा व्यक्ति हर विषय पर आसानी से बहस कर लेगा, पर उद्देश्य के प्रति निरंतर लगाव के अभाव के कारण वह शायद ही कभी ऊंचा उठ सकेगा।

३. चपटा हाथ

ऐसे हाथ की प्रत्येक अंगुलियों की नोक चपटी होती है और हथेली भी कलाई के पास असामान्य रूप से चौड़ी होती है। इनसे व्यक्ति के बेचैन एवं उत्तेजित स्वभाव का पता चलता है, पर ऐसे हाथवाले व्यक्तियों में अपने उद्देश्य के प्रति जबरदस्त उत्साह और कर्मठता होती है। कोमल और ढीले-ढाले हाथ व्यक्ति के चिड़चिड़े स्वभाव का पता देते हैं। ऐसे व्यक्ति किसी भी बात पर लंबी अवधि तक नहीं टिके रहते। तीव्र प्रेम, सक्रियता, जीवन-शक्ति और उत्साह के अपने गुणों के कारण अधिकांश व्यक्ति नौचालक (नेवीगेटर), अन्वेषक, खोजी, महान इंजीनियर और मिकेनिक बनते हैं। इन गुणों के स्वामी अपना रास्ता स्वयं बनाते हैं। ऐसी विशेषतावाले गायक, चिकित्सक, अभिनेता, उपदेशक पिछली परंपराओं को तोड़ते हैं और अपनी स्वतंत्र भावना के कारण विचारों में अन्य लोगों के प्रति नाराजगी दिखलाते हैं। ऐसे व्यक्ति विचारों के मामले में अग्रदूत कहे जा सकते हैं। आविष्कार की प्रतिभा-वाले व्यक्ति की कलाई में यदि कोई कोणीय उभार हो तो वह वैमानिक मशीनों का आविष्कार करेगा। यदि वह वनस्पति-शास्त्र-विशेषज्ञ है तो नये फूलों की खोज करेगा। यदि ऐसा व्यक्ति पुजारी है तो नये धार्मिक सिद्धांतों के कारण देवतुल्य समझा जाएगा।

४. दार्शनिक हाथ

ऐसे हाथ सामान्यतः लंबे और कोणीय होते हैं। उनके नाखून लंबे तथा अंगुलियां पुष्ट और विकसित जोड़ोंवाली होती हैं। ऐसे व्यक्ति सफल धनोपार्जक नहीं होते। वे जीवन का अध्ययन करते हैं और दूसरों की तुलना में प्रमुख रहना चाहते हैं। वे महत्त्वाकांक्षी भी होते हैं। स्वयं को मान्यता दिलवाने के लिए वे किसी भी तरह की कठिनाई झेलने और बाधाओं का सामना करने के लिए तत्पर रहते हैं। उन्हें रहस्य से प्यार होता है। वे हमेशा नयी बातों का उपदेश देते हैं, असाधारण चित्र खींचते हैं और यदि वे कवि हैं तो काल्पनिक उपमाओं-रूपकों की उपेक्षा कर वे अभिव्यक्ति की नयी शैली रचते हैं। हमारे देश में ऐसे हाथवाले व्यक्ति (ब्राह्मण, योगी) बहुत बड़ी संख्या में हैं। वे हमेशा शांत और सौम्य होते हैं। वे बहुत कम बोलते हैं तथा दूसरों से अलग रहने में गर्व का अनुभव करते हैं। चूंकि वे सही अवसरों की प्रतीक्षा करते हैं, अतः ऐसे अवसर भी उनके लिए पूरी तरह उपयोगी सिद्ध होते हैं। यदि ऐसा हाथ अतिरेकी रूप से विकसित हैं तो व्यक्ति उन्मत्त और रहस्यमय होता है। अंगुलियों के विकसित जोड़ दार्शनिक व्यक्ति की एक विशेषता होते हैं। अंगुलियों के अगले पोर कोणीय अथवा चौकोर होने के कारण वे अपनी प्रेरणाओं को उन्नत कर अपने धार्मिक विचारों और रहस्यवाद के अनुकूल बना लेते हैं। इनके अलावा तीन प्रकार के हाथ और होते हैं। उनके संबंध में अगले अंक में।

इंडिया हाउस

लंदन की तीन शताब्दियों को झांकता-निहारता, स्वीकारता-नकारता 'इंडिया हाउस' अपने शिल्प की भव्यता और आकार की विशालता में बेजोड़ है । ४० लाख रु. की लागत से निर्मित इंडिया हाउस के रख-रखाव में २५ लाख रु. वार्षिक खर्च किये जाते हैं । यह भारत समुद्र पार स्थित सभी उच्चायोगों पर खर्च की जाने वाली रकम का १/५वां हिस्सा है ।

१६२१ से लेकर अब तक के ब्रिटिश इतिहास में इसकी चर्चा किसी-न-किसी रूप में हमेशा रही है; कभी ईस्ट इंडिया कंपनी के मुख्य कार्यालय के रूप में और कभी सर अतुल चटर्जी के सुझाव से बने स्थायी आकर्षक भवन के रूप में ।

ईस्ट इंडिया कंपनी का मुख्य कार्यालय —यानी इंडिया हाउस लगभग दो शताब्दियों तक क्रॉसबाई हॉल में रहा । कालांतर में १८५७ की क्रांति के बाद ब्रिटिश सरकार ने इसकी देखरेख अपने हाथों में ले ली । वह सोचने के लिए मजबूर हो गयी कि प्रवासी भारतीयों के प्रति सहानुभूति-पूर्ण दृष्टिकोण अपनाये बिना भारत पर राज्य करना असंभव है । अतः १९१९ में इंडियन रिफार्म ऐक्ट पास किया गया, जिसके अनुसार प्रवासी भारतीयों की सुख-सुविधा की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा । 'वेलफेयर ऑव इंडियन सीमेन' की भी स्थापना की गयी । इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय विद्यार्थियों की शिक्षा तथा जीवन-स्तर सुधारना था । १९२० में सर विलियम मेयर प्रथम भारतीय उच्चायुक्त नियुक्त किये गये । इन्होंने भारतीयों से अच्छे संबंध बनाये । १९२२ तक भारतीय उच्चायोग के भवन अस्थायी ही रहे । ग्रॉस वेनर गार्डन के कई भवनों में एक के बाद एक इसके कार्यालय बदलते रहे । १९२५ में सर अतुल बनर्जी ने स्थायी रूप से भवन-निर्माण का सुझाव रखा, फलतः ब्रिटिश तथा भारतीय सरकार के सम्मिलित प्रयत्नों से एल्डविच में १२,४०० वर्गफुट भूमिखंड में विशाल, भव्य भवन का निर्माण किया गया । उस समय के सस्ते जमाने में भी यह इमारत बनाने में ४० लाख रुपये खर्च हुए । इसकी
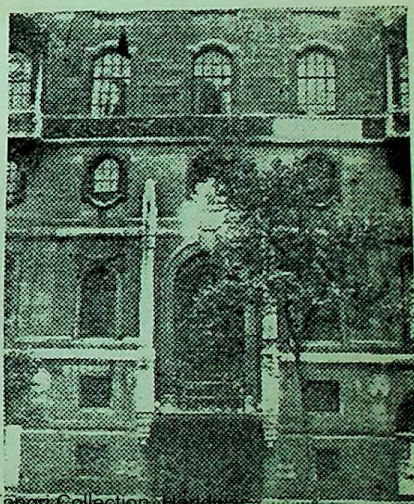
डिजाइन के रचनाकार सर हेनरी बेकर थे। ८ जुलाई, १९३० को जार्ज चतुर्थ द्वारा इसका विधिवत उद्घाटन हुआ।

इंडिया हाउस काले, मजबूत स्वीडिश पत्थर से बना है। प्रवेशद्वार जेलनुमा है। इमारत में भारतीय और बर्मी ढंग का लकड़ी का काम मन मोह लेता है। श्री आर. उकिल तथा एस. चौधरी के रंगीन भित्तिचित्र ब्रिटिशकालीन भारतीय प्रांतों का प्रतिनिधित्व करते हैं। सेंट जार्ज, किला, जहाज, शेर, मछली एवं धनुष, बाण क्रमशः मद्रास, बंबई, बंगाल, संयुक्त प्रांत का प्रतिनिधित्व करते हैं। भित्ति चित्र कला लाल पत्थर की दीवारें, स्तंभ, संगमरमर के कठघरे आदि भारत की याद दिलाते हैं।

इंडिया हाउस में भारतीय उच्चायोग के विशिष्ट अधिकारी नहीं रहते हैं। इंडिया हाउस की तरह उनके भवन भी बार-बार बदलते रहे। स्वतंत्रता पूर्व, उच्चायुक्त उत्तरी लंदन स्थित 'सन हाउस' में रहा करते थे। स्वतंत्रता के बाद श्री वी. के. कृष्णमेनन प्रथम भारतीय उच्चायुक्त हुए। खान-पान, वेशभूषा में सलीकेदार, संयमी होने पर भी श्री मेनन ने 'आलीशान' भारत के 'आलीशान' विशिष्ट प्रतिनिधियों के निवास स्थान को भी आलीशान रखने की सलाह दी। भारत सरकार की सहमति के बाद उन्होंने केंसिगटन पैलेस गार्डन में एक विशाल भवन खरीदा, जो लंदन के आधुनिक इलाकों में से एक है। श्री बी. जी. खेर के बाद के सभी उच्चायुक्तों का निवास यही रहा।

यातायात की असुविधाओं और शोर-गुल ने केंसिगटन पैलेस और इंडिया हाउस की दूरी और भी बढ़ा दी। एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचने में एक घंटा लग जाता था। अतः तय किया गया कि उच्चा-युक्त और उप-उच्चायुक्त को इंडिया हाउस के आसपास रहना चाहिए ताकि उन तक 'पहुंच' आसान हो सके। अतः हाल ही में मे-फेयर पार्क स्ट्रीट में १ लाख १५ हजार रु. वार्षिक किराये पर एक भवन लिया गया है। अब इसमें ही उच्चायोग के उच्च पदाधिकारी रहते हैं।

विशिष्ट अधिकारियों के 'विशिष्ट' सुविधाजनक भवनों में काम करने वाले भारतीय असुविधाजनक स्थिति में हैं। १,७०० भारतीयों में प्रायः सभी अस्थायी रूप से काम करते हैं। भारत के विदेश मंत्रालय ने इनकी संख्या में कटौती करने का निश्चय किया है। १९७५ के अंत तक इनकी संख्या ३७५ रह जाएगी।

इन सब विशिष्ट-अविशिष्ट गति-विधियों का मौन साक्षी है, लंदन स्थित इंडिया हाउस।

(महाराजा फीचर्स, बंबई)

जिसने तुम्हें चोट पहुंचायी है वह तुमसे सबल है या निर्बल? यदि निर्बल है तो उसे क्षमा कर दो, यदि सबल है तो अपने को कष्ट न दो।
—सेनेका

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत तथा १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिएं। —संपादक

प्रशासन को सुव्यवस्थित रूप देने और लालफीताशाही को दूर करने के लिए मैंने एक योजना सोची। योजना में कोई कमी तो नहीं है, यह जानने के लिए मैंने एक ड्राफ्ट अपने अधीनस्थों को भेज दिया। कल्पना कीजिए, छह लाइन के मेरे ड्राफ्ट का उत्तर आया छह पृष्ठों में! उन पृष्ठों को पूरा पढ़कर यही पता चला कि 'यह योजना संविधान के विरुद्ध जाती है!' बेसिर-पैर का यह लंबा उत्तर सिंगल स्पेस में छह फुलस्केप पृष्ठों पर टाइप किया हुआ था! मैंने इस आपत्ति को अस्वीकार कर दिया और आदेश दिया कि योजना को क्रियान्वित किया जाए।

न जाने कितने दफ्तरों में इस तरह की उपयोगी योजनाएं ठप करने का प्रयास किया जाता होगा!

—निरंजन कपूर, आई. ए. एस.

हाल में ही जबलपुर की जी. सी. एफ. आर्डनेंस फैक्ट्री में मेरी भरती हुई है। सोचा था कि अच्छी जगह मिलेगी, मगर काम मिला 'कोल ट्रिमर' (कोयले तोड़ने) का। वैसे मैंने गणित लेकर मैट्रिक पास किया है और अच्छा टाइपिस्ट भी हूं, लेकिन फैक्ट्री में मेरा काम कुलियों से भी बदतर है। मगर बेरोजगारी को देखकर सोचता हूं कि चलो यही ठीक!

अधिकतर यहां अशिक्षित लोग हैं। सुबह आठ बजे से शाम के सात बजे तक ड्यूटी रहती है।

सोचता हूं कि कहीं इससे अच्छी जगह भी मिलेगी या जिंदगी भर कोयले ही तोड़ने पड़ेंगे! **—प्रदीपकुमार शर्मा, जबलपुर**

मैंने सोचा था कि कोई भी नौकरी मिल जाए, क्योंकि नौकरी ही करना है; और अब नौकरी मिली तो ऐसी कि कुछ कहते नहीं बनता!

पूरा निशाचर, क्योंकि एक ऐसे दफ्तर में मैं कार्य करता हूं जो रात में ही खुलता है। यह है डाक-विभाग का एक अंग (मेल-ऑफिस)—छंटाई-कार्यालय।

दफ्तर सायं छह बजे खुलता है और सुबह सात बजे तक खुला रहकर बंद होता है। यदि संयोगवश कोई गाड़ी लेट हो गयी अथवा पत्रों की संख्या ज्यादा हो तो काम समाप्त होने पर ही छुट्टी मिलती है।

बच्चे समझते हैं—पापाजी दफ्तर गये

हैं, सबेरे आयेंगे तो चाय साथ पी जाएगी। पर पापाजी लौटते हैं तब जब बच्चे स्कूल जाने की तैयारी में होते हैं। पत्नी पूछना चाहकर भी नहीं पूछती कि देर क्यों हो गयी, क्योंकि चेहरे पर होती है रात भर की थकान और आंखों में होती है नींद।

संतोष केवल इस बात का है कि मैं भी एक सरकारी (केंद्रीय) कर्मचारी हूं।

—कृष्णानंद गुप्त, पीलीभीत

एक ही तरह का ड्राफ्टिंग, 'सेट लैंग्वेज', आंखों की अपनी भाषा तथा फाइलों के फीतों में ही बंधकर रह गया है आज का 'बाबू व्यक्तित्व लार्ड मैकाले'। कलम का सिपाही बनना चाहता था, पर आज कीं शिक्षा तो बाबूगीरी भी करने की क्षमता नहीं देती। नया-नया बाबू दफ्तर से जब लौटता है तो साथ लाता है अपने अफसर की झिड़क का बोझ या व्याकरण की किताब। या तो दर्पण पर उतरता है यह बोझ या परिवार के सदस्यों पर।

उस दिन दफ्तर से आया। आते ही पूज्य माताजी का आदेश मिला कि बड़े भाई को पहुंचा आओ। मन मसोसकर मुंह, हाथ धोये और चल दिया। क्या जिंदगी है! दफ्तर तन-मन को इतना थका देता है कि घर का कोई काम करना भी बुरा लगता है। **—श्रीकांत कुलश्रेष्ठ, कोटा**

पहली बार दफ्तर पहुंची डरते-डरते। रजिस्टर में हस्ताक्षर भी कर दिये। अब वे पुराने हस्ताक्षर रेल की पटरियों से सरके हुए डब्बों की तरह लगते हैं। पूरे दफ्तर में केवल दो लेडी क्लर्क थीं। अपनी तीन भारी-भरकम डिग्रियों का भार लादे मैं भी जा पहुंची। अगर पहले दिन का पूरा हवाला दूं तो आपको अपना शीर्षक 'दफ्तर की जिंदगी' के बजाय 'दफ्तर का पहला दिन' रखना पड़े।

अब दो माह होने को आये हैं, काफी घुलमिल गयी हूं, पर दफ्तर का काम अब भी बस का रोग नहीं है। काम सब कर देती हूं, पर बड़े बाबू के मार्गदर्शन के बिना नहीं। कभी कोई अध्यापिका आकर अपना बाजा बजाने लगती है। कभी-कभी वे पति-सहित तशरीफ लाती हैं। नजारा तो तब काबिलेतारीफ होता है जब उनका कृष्ण-कन्हैया घुटुरुन चलता हुआ साड़ी का आंचल खींचता है और पंचम स्वर में राग अलापता है। उद्धव की भांति बड़े बाबू सबको समझाने का प्रयत्न करते हैं, समस्याओं का निदान भी करते हैं, पर वे मुझे सब नंददास की चतुर गोपिकाएं लगती हैं।

मैं इस माहौल से घिरी हुई अनुभव बटोर रही हूं। सोचती हूं कि दफ्तर में किताबी ज्ञान की गठरी की कतई आवश्यकता नहीं। यहां व्यावहारिक होना जरूरी है। विद्यापति के मार्मिक गीत, बिहारी की वाग्विदग्धता, घनानंद की घनीभूत पीड़ा, मालूम नहीं दफ्तर में कहां गायब हो जाती है! **—विद्या भारती, चित्तौड़गढ़**

समकालीन हिंदी कथाकारों ने आज के मनुष्य की पीड़ा को ही चित्रित नहीं किया है, बल्कि इस पीड़ा के मूल कारणों का भी विश्लेषण किया है और इस प्रक्रिया में परंपरागत नैतिक-मानदंडों को भी नकारा है, आज के युग में उनकी सार्थकता को चुनौती दी है। राजेन्द्र अवस्थी द्वारा संपादित **श्रेष्ठ प्रेम कहानियां** में संकलित

श्रेष्ठ प्रेम कहानियां : एक उपलब्धि

● डॉ. ऋतुशेखर

अधिकांश रचनाओं में यह चुनौती और कथ्य की निर्भय अभिव्यक्ति भली भांति चित्रित हुई है। दूसरे महायुद्ध के बाद पुराने नैतिक मूल्य एकाएक ढह गये और उनके स्थान पर देश-काल और परिस्थितियों के अनुसार नये मानदंडों की रचना हुई, विशेषकर स्त्री-पुरुष के यौन-संबंधों के प्रश्न पर एक नयी दृष्टि से विचार किया गया। हिंदी कहानी में भी इन संबंधों को परिवर्तित संदर्भों में देखा गया और अनेक कहानीकारों ने तो बहन और सौतेली मां के प्रेम को भी वासना से अलग नहीं रहने दिया और यह धारणा झुठला दी कि प्रेम और वासना दो अलग चीजें हैं।

प्रस्तुत संग्रह में अज्ञेय से लेकर रज्जन त्रिवेदी-जैसे उदीयमान कथाकारों तक की 'श्रेष्ठ प्रेम कहानियां' संकलित हैं। इनमें जहां कृष्णा सोबती और निर्गुण की कहानियां अपने मर्मस्पर्शी कथानक द्वारा पाठक को व्यथित करती हैं, वहां राजेन्द्र अवस्थी, गंगाप्रसाद विमल, गिरिराज किशोर, शानी की कहानियां परंपरागत विश्वासों को तोड़कर आज के मुक्त और निष्कपट स्त्री-पुरुष-संबंधों को अभिव्यक्ति देती हैं।

राजेन्द्र अवस्थी ने संकलन की 'हिंदी कहानी में प्रेम तत्त्व' शीर्षक अपनी सारगर्भित भूमिका में वैदिक युग से आधुनिक युग तक प्रेम के बदलते प्रतिमानों की व्याख्या करते हुए प्रेम को एक सहज और नैसर्गिक गुण माना है, जिसके विचित्र प्रतिमानों को एक सीमा के भीतर लाना कठिन है। वे प्रेम के लिए किसी आवरण को ढोंग मानते हैं। इन प्रेम कहानियों का संकलन करते हुए उन्होंने प्रेम के सभी कोणों को पाठकों के सामने लाने का सफल प्रयास किया है। संक्षेप में यह कथा-संकलन वर्ष की एक मूल्यवान उपलब्धि है। प्रकाशक की सूझबूझ और परिश्रम

ने संकलन की साज-सज्जा और प्रस्तुतीकरण को उच्चकोटि का बनाकर एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया है।

कन्हैयालाल 'नंदन' द्वारा संपादित **श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएं** में १९ प्रतिष्ठित हिंदी कहानीकारों की व्यंग्य रचनाएं संकलित हैं। बहुधा हास्य को व्यंग्य का पर्याय समझ लिया जाता है जबकि व्यंग्य हास्य से बहुत आगे की चीज होती है। हिंदी में व्यंग्य की परंपरा काफी पुरानी है। पुराने व्यंग्यकारों ने सामाजिक कुरीतियों और विदेशी शासकों की शोषणपूर्ण नीतियों पर कठोर प्रहार किया था। आज के व्यंग्यकार की दृष्टि जरा और पैनी हो गयी है। संपादक के अनुसार 'आज का हिंदी व्यंग्य साहित्य भारतीय भाषाओं में ही नहीं, विदेशी समृद्ध भाषाओं की तुलना में भी अपना श्रेष्ठ स्थान रखता है।' प्रस्तुत संग्रह के लिए कथाओं का चुनाव करते हुए उन्होंने पाठक के लिए वैविध्यपूर्ण विषय और शैली से युक्त श्रेष्ठ व्यंग्य कथा-साहित्य उपलब्ध कराया है।

श्रेष्ठ प्रेम कहानियां
संपादक : राजेन्द्र अवस्थी, प्रकाशक : पराग प्रकाशन, ३/११४ कर्णगली, विश्वास-नगर, शाहदरा-दिल्ली, पृष्ठ : ३००, मूल्य : पच्चीस रुपये

श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएं
संपादक : कन्हैयालाल 'नंदन', प्रकाशक : उपर्युक्त, पृष्ठ : २००, मूल्य : दस रुपये

ये गलियां ये रास्ते 'निर्गुण' का नया उपन्यास है, जिसमें उन्होंने किशोर वय-बुद्धि की छात्राओं के जीवन से खिलवाड़ करनेवाले लेखकों-प्राध्यापकों की कामुक वृत्ति का पर्दाफाश किया है। 'निर्गुण' की कहानियों की भांति यह उपन्यास भी हृदय को द्रवीभूत करनेवाला है।

ये गलियां ये रास्ते
लेखक : द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण,' प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरीगेट, दिल्ली, पृष्ठ : ९९, मूल्य : चार रुपये

नाट्य-निबंध

अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा नाटकों पर स्वतंत्र निबंध कम लिखे गये हैं। डॉ. दशरथ ओझा की पुस्तक **हिंदी नाट्य निबंध** उस अभाव को काफी हद तक पूरा करती है। नाट्य संबंधी विविध शोधात्मक एवं गंभीर निबंधों का यह संकलन नाटक के छात्र एवं पाठक को एक व्यापक दृष्टि प्रदान करता है। लेखक ने इसमें पाश्चात्य नाट्य-विचारों का समावेश करते हुए भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक स्वतंत्र दृष्टि प्रदान की है। 'धूर्त समागम', 'पहला राजा' आदि मौलिक नाटकों पर विचारात्मक निबंध जहां पर्याप्त उपयोगी हैं वहीं 'हिंदी नाटकों में बुद्ध'-जैसे निबंध नाटकों में बुद्ध के क्रमिक विकास को दर्शाते हैं। इस पुस्तक में जहां नाटक के परंपरागत शास्त्रीय पक्षों को उभारा गया है, वहां

आधुनिक नाटक के विभिन्न प्रश्नों तथा समस्याओं पर भी दृष्टिपात किया गया है।

—डॉ. शशि शर्मा

साहित्य एवं शोध-प्रबंध

हिंदी साहित्य के आदिकाल एवं उसकी विविध प्रमुख प्रवृत्तियों के संबंध में परस्पर-विरोधी राये हैं। डॉ. वासुदेवसिंह की पुस्तक **हिंदी साहित्य का उद्भवकाल** इन विषय से संबंधित प्रश्नों पर कुछ मौलिक निष्कर्ष रखती है। डॉ. सिंह के अनुसार हिंदी साहित्य का उद्भव आठवीं शती से ही हो जाता है तथा इस शती से चौदहवीं-पंद्रहवीं शती तक जहां आध्यात्मिक तथा रहस्यवादी काव्य की रचना हुई, वहीं प्रशस्तिमूलक, ओज-प्रधान तथा शृंगार-रस-प्रधान साहित्य भी सृजा गया।

स्वातंत्र्योत्तर काव्य की मुख्यतः तीन प्रवृत्तियां रही हैं। ये हैं—वर्तमान से असंतोष, अनास्था, निराशा, मोहभंग और कुंठा की अभिव्यक्ति, सामाजिक यथार्थ को ग्रहण करने की प्रवृत्ति के अतिरिक्त विडंबनाओं, विसंगतियों पर व्यंग्य द्वारा प्रहार करने और स्थितियों की करुणा को उभारने की प्रवृत्ति। अपने शोध-प्रबंध **स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य** में डॉ. शेरजंग गर्ग ने प्रतिपादित किया है कि कुंठा की अभिव्यक्ति और सामाजिक यथार्थ को ग्रहण करने की प्रवृत्ति की तुलना में व्यंग्यवाली प्रवृत्ति में निश्चय ही अनंत संभावनाएं हैं। यह स्वागत योग्य शोध-प्रबंध एक बिलकुल अनछुए विषय को छूता है।

डा. कन्हैयासिंह का शोध-प्रबंध **हिंदी सूफी काव्य में हिंदू संस्कृति का चित्रण और निरूपण** अपने विषय का अच्छा प्रतिपादन करता है। कुतबन, जायसी, मंझन-जैसे मुसलमान सूफी कवियों ने प्रेमाख्यानक काव्यों द्वारा हिंदू-संस्कृति के विविध अगों के माध्यम से अपना आध्यात्मिक संदेश दिया था। लेखक ने मुख्यतः १४वीं से १६वीं शती तक के सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों के आधार पर प्रतिपाद्य विषय का अच्छा विवेचन किया है।

हिंदी नाट्य निबंध
लेखक : डॉ. दशरथ ओझा, प्रकाशकः नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृष्ठ : ३३८, मूल्य : बीस रुपये

हिंदी साहित्य का उद्भवकाल
लेखक : डॉ. वासुदेवसिंह, प्रकाशक : हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, पृष्ठ : २६४, मूल्य : दस रुपये

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य
लेखक : डॉ. शेरजंग गर्ग, प्रकाशक : साहित्य भारती, के ७१, कृष्णनगर, दिल्ली, पृष्ठ : ४३२, मूल्य : चालीस रुपये

हिंदी सूफी काव्य में हिंदी संस्कृति का निरूपण और चित्रण

लेखक : डॉ. कन्हैयालाल सिंह, प्रकाशक : भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, पृष्ठ : ४५०, मूल्य : पच्चीस रुपये

कुछ अन्य पुस्तकें

स्वर्गीय पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी हिंदी गद्य के आधार-स्तंभ थे। **साहित्य-जगत के विनोबा—बख्शीजी** पुस्तक उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का अच्छा परिचय कराती है। अनेक प्रेरक संस्मरणों से पूर्ण यह पुस्तक पाठक को हिंदी-जगत के अतीत में भी ले जाती है।

चालुक्यकालीन शिलाखंडों पर अंकित प्रशस्तियों पर आधारित नाटक **पुलकेशिन** तत्कालीन जीवन का अच्छा चित्र प्रस्तुत करता है।

तंत्र-मंत्र एवं हिप्नोटिज्म-जैसी रहस्यमय विद्याओं के दुरुपयोग का चित्रण करनेवाला उपन्यास **बादल-छाया** अत्यंत रोमांचक है तथा पाठक का पर्याप्त मनोरंजन करता है।

भारतीय स्वाधीनता एवं स्वाधीनता के बाद देश की प्रगति में नारी-समाज का भी उल्लेखनीय योगदान रहा है। **भारत की अग्रणी महिलाएं** पुस्तक सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, कला तथा अन्य क्षेत्रों में पहल करनेवाली महिलाओं के व्यक्तित्व और कृतित्व का अच्छा परिचय कराती है।

हिंदी संदर्भ एक उपयोगी ग्रंथ है। इसमें सन १९७० में हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होनेवाली सामग्री, संपादकीय टिप्पणियों, पत्रादि की विषयानुसार सूची दी गयी है। **—डॉ. सीमा मिश्र**

उत्तरप्रदेश देश के प्रमुख राज्यों में से एक है, फिर भी वह कुछ अन्य प्रदेशों की तुलना में काफी पिछड़ा हुआ है। **परिक्रमा : उत्तर प्रदेश** पुस्तक राज्य के पिछड़े जिलों की विकास - समस्या का अच्छा लेखा-जोखा प्रस्तुत करती है।

साहित्य-जगत के विनोबा: बख्शीजी, लेखक: नर्मदाप्रसाद खरे, प्रकाशक:लोकचेतना प्रकाशन,जबलपुर, पृष्ठ : १३२, मूल्य : पांच रुपये

पुलकेशिन (ऐतिहासिक नाटक)
नाटककार : डॉ. चक्रवर्ती, प्रकाशक : साहित्य भवन, (प्रा.) लि. इलाहाबाद, पृष्ठ : ९५, मूल्य : तीन रुपये

बादल-छाया
लेखक : सारंग बारोट, अनुवादक : गोपालदास नागर, प्रकाशक : भारतीय साहित्य प्रकाशन, २६/१६ ए, चौखम्बा, वाराणसी, पृष्ठ : १८०, मूल्य : आठ रुपये

भारत की अग्रणी महिलाएं
लेखिका : आशारानी व्होरा, प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ : २१२, मूल्य : सात रुपये

हिंदी संदर्भ
संपादक : उमेशचंद्र टंडन, प्रकाशक : राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय, जयपुर, पृष्ठ : ४२४, मूल्य : उल्लेख नहीं

परिक्रमा : उत्तरप्रदेश
लेखक : ज्ञानस्वरूप भटनागर
प्रकाशक : परिक्रमा प्रकाशन, स्वराज भवन, १४/६१ सिविल लाइंस, कानपुर-१, पृष्ठ : २१७, मूल्य : बीस रुपये

कालेज के कम्पाउंड से

मैं बी. ए. (द्वितीय वर्ष) अंगरेजी आनर्स की छात्रा थी। पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित 'प्रेमचंद कहानी-पुरस्कार' में मैं अपनी कहानी भेजना चाहती थी। हिंदी-विभाग की अध्यक्षा श्रीमती भंडारी से मुझे इस सिलसिले में मिलना था।

एक दिन मैंने स्टॉफ-रूम में उनसे बात की। वे कापियां जांच रही थीं। व्यस्त होने के कारण वे शीघ्रता से बोलीं, "फिर कभी इस बारे में बात करना।" लेकिन कहानी भेजने की अंतिम तिथि निकट थी, इसलिए मैं बोली, "फिर मैडम मैं कब आपसे बात करूं?" वे क्रोधित हो उठीं और सभी व्याख्याताओं के सामने मुझे डांटते हुए बोलीं, "आप अभी बाहर चली जाइए।" इस घटना के बाद उनके बारे में मेरे विचार अच्छे नहीं रहे।

मेरी एक कहानी एक प्रसिद्ध पत्रिका में प्रकाशित हुई तो वे बहुत प्रसन्न हुईं। उन्होंने मुझे और अच्छी कहानियां लिखने की प्रेरणा दी। अब वे अवकाश प्राप्त कर चुकी हैं, पर जब भी मिलती हैं, उत्साह से भर देती हैं। उनके व्यवहार से मुझे अपनी पूर्व मनःस्थिति पर कभी-कभी पश्चात्ताप होता है।

—शकुन्त बहमनी, रोहतक

नवंबर, १९७२ में के. जी. के. कालेज में शाम को कानून की कक्षा चल रही थी। हमारी कक्षा के करीब साठ छात्रों में पांच छात्राएं थीं। रोज तो वे प्रोफेसर साहब के दाहिने हाथ की ओर बैठती थीं, पर उस दिन सब देर से आयीं और हमारे पीछेवाली सीटों पर बैठ गयीं। उन्होंने धीरे-धीरे फुसफुसाना और फिर खुलकर बातें करना शुरू कर दिया। अध्यापक महोदय नये थे, अतः उन्होंने टोकना शायद उचित न समझा। जब सहन नहीं हुआ तब मैं अध्यापक महोदय से बोला, "सर, पीछे 'बहनों का कार्यक्रम' चल रहा है!" एक जोरदार ठहाका गूंज गया और छात्राएं चुप हो गयीं।

कुछ देर बाद अध्यापक महोदय ने एक विवादास्पद बात कही, तो मैं अपने दो मित्रों से इस बात पर उलझने लगा कि अध्यापक महोदय गलत बता रहे हैं।

एकाएक छात्राओं का स्वर उभरा, "सर, आगे 'ग्रामीण भाइयों का कार्यक्रम' चल रहा है!"

—अजेयकुमार गोयल,
के. जी. के डिग्री कालेज, मुरादाबाद

अर्द्धवार्षिक परीक्षाओं में हमारे कमरे में बड़े शांत और सरल स्वभाव के अध्यापक की ड्यूटी थी। एक परीक्षार्थी

ऊपर से नीचे : अजयकुमार, दिलीपसिंह, शकुन्त बहमनी, मनिला वर्मा

—उत्तीर्ण होने के लिए अशोभनीय साधनों का प्रयोग करने की चेष्टा की तो वे दूसरे कोने से ही बोले, "बच्चे, तुम उठो !" परीक्षार्थी खड़ा हो गया, तो वे वहीं से पुनः बोले, "देखो तुमने अभी तीन पाप साथ ही कर दिये हैं। पहला, सरस्वती मंदिर में चोरी; दूसरा, विद्या-भंडार (पुस्तक) का अनादर (फाड़ना) और तीसरा, सीधे-सादे व्यक्ति की सरलता का नाजायज फायदा ! यदि तुम पुस्तक न फाड़कर पूरी उटा लाते तो यह तुम्हारे हित में था, क्योंकि एक पाप से तो बच जाते।" परीक्षार्थी ने क्षमा मांगी और सभी पर्चे उनके हवाले कर दिये।

—दिलीपसिंह, ओखलकांडा, नैनीताल

गत वर्ष दिल्ली विश्वविद्यालय के खालसा कालेज से स्नातक की परीक्षा में उत्तीर्ण हुई हूं। तृतीय वर्ष में जब थी तब हिंदी की कक्षा में ब्लैकबोर्ड पर रोज नया 'शेर' पढ़ने को मिलता। हमारे दिमाग में भी चंद 'शेर' घूम रहे थे। अगले दिन कक्षा में हम सबसे पहले पहुंचे। मेरी सहेली ने लिखना आरंभ ही किया था कि इतने में एक लड़का तीर की तरह घुस आया और हम दोनों की चोरी पकड़ी गयी। घबराहट में मेरा रंग सफेद पड़ गया। मेरी सखी कहती रही—'मनिला, अपने को संभालने की कोशिश कर।'

जब लड़कों ने हम दोनों को बहुत परेशान कर लिया तब स्वयं हम दोनों की तरफ से उन लोगों ने सर से क्षमा-याचना कर ली।

—मनिला वर्मा, दिल्ली

यह स्तंभ युवा-वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

—संपादक

सार-संक्षेप

बस्ती का शैतान

बर्ट्रेंड रसेल

बर्ट्रेंड रसेल एक ख्यातनामा वैज्ञानिक और दार्शनिक ही नहीं, वरन एक सिद्धहस्त उपन्यासकार भी थे। अस्सी वर्ष की अवस्था में उन्होंने उपन्यास एवं कहानियां लिखना शुरू किया था। सन १९५३ में उन्हें साहित्य का नोबल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ था। 'सैटर्न इन सबर्ब' उनका एक प्रसिद्ध उपन्यास है। प्रस्तुत है इसी श्रेष्ठ कृति का सार-संक्षेप। रूपांतरकार हैं — डा. राजेन्द्रपाल सिंह

मैं मार्टलेक में रहता हूं और वहीं से गाड़ी पकड़कर काम पर जाता हूं। एक दिन लौटते समय मैंने देखा कि पड़ोस में तांबे की एक तख्ती पर लिखा है :

'यहां पर लोमहर्षक काम सिखाये जाते हैं। कृपया डॉ. मर्डोक मल्लाको से मिलें'—चूंकि यह तख्ती काफी आश्चर्य-भरी थी इसलिए मैंने डॉ. मल्लाको को इस विषय में जानकारी के लिए पत्र लिखा। उनका उत्तर इस प्रकार था :

महोदय,

मेरी तांबे की तख्ती पढ़ने के बाद आप में जागृत जिज्ञासा कोई विशेष बात नहीं है। वैसे आपने देखा होगा कि आजकल नगर की उबा देनेवाली जिंदगी को कुछ लोग काफी बुरा-भला कहते हैं और इस ऊब से बचने या यों कहिए, उसको दूर करने के लिए कई लोग कुछ साहसिक काम करने के लिए भी तैयार हो सकते हैं। संभव है, कुछ खतरे या जोखिम के काम भी करने में उन्हें किसी प्रकार की अरुचि न हो। इसीलिए मैंने यह कुछ नये प्रकार का धंधा खोला है। मुझे आशा है कि मैं अपने मरीजों को रोमांच दिलाने में सफलता प्राप्त करूंगा। विशेष सूचना के लिए कृपया मिलें। मेरी फीस दो सौ रुपये प्रति घंटा है।

भवदीय

. . . . .

यह पत्र पढ़कर मुझे लगा कि डॉ. मल्लाको एक नये प्रकार का समाजसेवी है। इच्छा हुई कि कुछ खर्च कर उसके दर्शन भी कर ही लूं, किंतु इसके पूर्व कि मैं कोई निर्णय करता मैंने सोमवार की शाम को अपने पड़ोसी एबरक्रोम्बी को डॉ. मल्लाको के यहां से निकलते हुए देखा। वह काफी दुखित और भयभीत नजर आ रहा था। मैंने लपककर उससे कारण पूछने की चेष्टा की, पर वह टाल गया। लगा, जैसे वह मुझे कुछ भी बताने को तैयार नहीं था। इसलिए मैंने और अधिक छेड़छाड़ नहीं की।

दूसरे दिन मैंने अपने एक और पड़ोसी को इसी अवस्था में निकलते हुए देखा। पूछने पर उसने भी कुछ बताने से इनकार कर दिया। तीसरे दिन भी ऐसी ही घटना घटी। मैं कुछ परेशान-सा हो गया। मेरी यह परेशानी तब और भी बढ़ गयी, जब मुझे अपने एक पड़ोसी गौसलिंग से पता चला कि वह विचित्र डॉक्टर के पास जाने

वाले मेरे चारों पड़ोसी बीमार पड़े हैं। वैसे गौसलिंग को डॉ. मल्लाको के बारे में कुछ पता न था।

आखिर एक दिन मैंने डॉक्टर से मुलाकात कर ही ली। मैंने उससे पूछा कि यह सब क्या हो रहा है? उसका उत्तर बड़ा उपयुक्त था। डॉक्टर होने के नाते वह अपने मरीजों के विषय में बात करने के लिए तैयार नहीं था। उसने बड़े रूखेपन से कहा कि मैं भविष्य में उससे कोई बात न करूं।

अकस्मात मुझे बाहर जाना पड़ा। गया तो स्वास्थ्य लाभ के लिए था किंतु मुझे न तो सूर्य से और न समुद्र से भी किसी प्रकार की कोई तसल्ली मिली। बार-बार लगता रहा कि मुझे कोई लौट आने के लिए कह रहा है। इसलिए मैं जल्दी ही वहां से लौट आया।

अब तक मैं डॉ. मल्लाको के बारे में भी भूलने-सा लगा था लेकिन अचानक एक दिन गौसलिंग ने मुझे बताया कि एबरक्रोम्बी को पुलिस ने पकड़ लिया है।

मैं आश्चर्यचकित रह गया। एबरक्रोम्बी को 'सर' का खिताब मिलने वाला था और शायद वह एक दिन संसद-सदस्य भी बन जाता। वैसे भी वह काफी होशियार आदमी था। बैंकिंग के मामले में उसे बेजोड़ समझा जाता था। फिर यह सब कैसे हुआ? उसका पूरा परिवार निष्कलंक था। हे ईश्वर . . . यह क्या?

मैं जेल में उससे मिलने गया। उसका

हाल-चाल पूछा। वह एकदम पीला पड़ चुका था। मेरे बहुत खोद-खोदकर पूछने पर उसने बताया, "अब मेरी भलाई के लिए पूछने का समय तो गया। मुझे अफसोस तो पत्नी और बच्चों के लिए है। उनका क्या होगा? मैंने डॉ. मल्लाको की बात सुनकर बड़ा बुरा किया।"

इतना कहकर वह एक बार फिर गम में डूब गया। बाद में उसने बताया कि वह डॉक्टर मल्लाको के पास तो केवल जिज्ञासा-वश गया था। वह पता लगाना चाहता था कि डॉक्टर किस प्रकार की लोम-हर्षक घटनाओं का जाल सिखाता है। पहले तो उसे लगा कि ये सब मूर्खता है। इधर-उधर की बात करने के बाद डॉ. मल्लाको ने उससे कहा, "महाशय, व्यर्थ की शब्दावली का इंद्रजाल क्यों बुनते हैं? प्रत्येक व्यक्ति अपने को बचाना चाहता है, कोई-न-कोई तरीका निकाल ही लेता है बचने के लिए। वैसे मैं आपके जैसे ही अपने एक मित्र की बात बतलाना चाहता हूं।

मेरा वह मित्र आपकी भांति ही बैंक का मैनेजर था। उसने भी सट्टा किया और वह भी बर्बाद हो गया। वह काफी परेशान हो गया किंतु उसने सोचा कि उसके पक्ष में एक काफी अच्छी बात है। उसके विषय में जन साधारण की अच्छी राय थी। लोग उसे ईमानदार और कुशल व्यक्ति समझते थे। उसके अधीन एक व्यक्ति काम करता था। वह काफी बदनाम भी था। उसे सूझा कि वह [illegible] कामयाबी में बदल सकता है। उसने योजना बनायी कि वह बैंक से कुछ रुपये निकालकर उस बदनाम कर्मचारी के घर में जाकर छिपा दे। टेलीफोन पर ही घुड़दौड़ पर बाजी भी लगायी जाए। ऐसा हिसाब जमाया जाए कि घोड़ा हार जाए। घुड़दौड़ में हारने पर उसके कर्ज देनेवाले पैसे मांगने आएंगे। वह मना करेगा। तलाशी ली जाएगी और उसके घर से बैंक के रुपये निकलेंगे। फिर क्या—मैनेजर अपने द्वारा निकाला गया तमाम रुपया उस नवयुवक के जिम्मे डाल देगा। फलस्वरूप वह जेल चला जाएगा और वह, अर्थात बैंक मैनेजर एक बार फिर अपनी जमी हुई साख के आधार पर सट्टा खेल पाएगा।

हुआ भी यहीं। उस युवक के जेल जाने के बाद बैंक मैनेजर ने फिर सट्टा खेला और धनी हो गया। आज वह लार्ड हो चुका है और सुखी जीवन व्यतीत कर रहा है।

यह कहानी सुनने के बाद एबरक्रोम्बी का दिमाग चकरा गया। उसकी स्वयं की हालत काफी खराब थी। सट्टे में वह रुपये हार चुका था। खोयी साख जमाने के लिए उसे भी रुपये चाहिए थे। बहुत सोचने के बाद वह भी डॉ. मल्लाको की बनायी कहानी के नायक की भांति कार्य-वाही कर बैठा। परंतु उसका दांव खाली गया। षड्यंत्र का शिकार घुड्दौड़ में नहीं हारा, उसकी पोल खुल गयी। युवक एक संसद-सदस्य का भतीजा था। फलस्वरूप [illegible] योजना चौपट हो

गयी। यह भी भेद शीघ्र ही खुल गया कि एवरक्रोम्बी ही उस लड़के को फंसाने का कार्य कर रहा था। इस प्रकार 'सर' का सम्मान मिलने या धनोपार्जन की बात दूर रही, उसे जेल जाना पड़ा।

एवरक्रोम्बी ने कहा, "डॉ. मल्लाको को प्रारंभ से ही इस भयानक अंत का ज्ञान होगा किंतु उसने अपनी कहानी सुनाकर कोई कानून नहीं तोड़ा है। मेरी इच्छा यह जरूर है कि जितना कष्ट मैं आज मल्लाको के कारण झेल रहा हूं यदि उसका दशांश भी उसे दे पाता या अन्य कोई उसे पहुंचा पाता तो विश्वास रखो इस जेल में भी मुझे काफी आराम मिलता।"

मैं निराश-हताश एवरक्रोम्बी को छोड़कर घर लौट आया।

●●●

एवरक्रोम्बी की बात सुनकर मुझे रोमांच हो आया था। साथ ही उस डॉक्टर के प्रति भी मेरा आकर्षण बढ़ गया था। मैं उस भयंकर व्यक्ति को भुला नहीं पाता था। अपने वैज्ञानिक काम में इधर मुझे काफी व्यस्त रहना पड़ा था। इसलिए मुझे अपने एक और पड़ोसी ब्यूशेम्प के साथ घटी दुर्भाग्यपूर्ण घटना से पहले इस व्यस्तता को दूर करने का कोई उपाय ही नहीं दीखा।

३५ वर्षीय सुंदर ब्यूशेम्प का काम बाइबिल बेचना था। वास्तव में वह एक बाइबिल सोसाइटी का सचिव भी था। वह सदैव बाइबिल के उद्धरण देता रहता था। पुराने, किंतु अच्छे कपड़ों में वह कर्म-मूर्ति था। शराब उसके ओठों के पास तक कभी नहीं पहुंचने पायी थी। अन्य दुर्व्यसनों की कल्पना भी उसके लिए काफी कठिन थी। निस्संदेह वह एक आदर्श सदाचारी व्यक्ति था।

पर जबसे मैंने उसे डॉ. मल्लाको के निवास से निकलते देखा था, उससे पूर्व ही उसमें थोड़े-थोड़े परिवर्तन आने शुरू हो गये थे। उसका पुराना सूट बदल गया
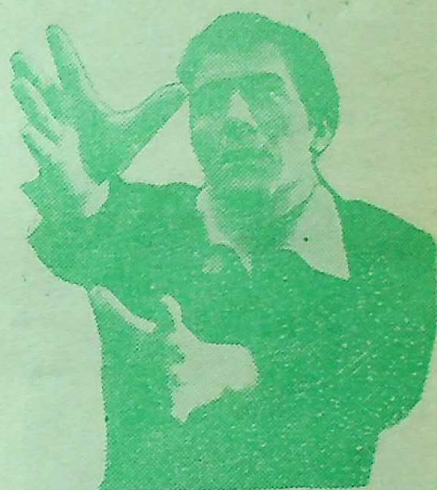
था। टाई नयी और कीमती हो गयी थी। उसने बाइबिल के उद्धरण देना भी बंद कर दिया था। एक बार तो लोगों ने उसे कोट में लाल फूल लगाये स्टेशन की ओर जाने वाली सड़क पर दौड़ते हुए भी देखा था। इस घटना ने लगभग सभी को भौंचक्का कर दिया? किंतु सर्वाधिक आश्चर्य तो तब हुआ, जब वह एक सुंदर-सी कार में, एक अनन्य सुंदरी स्त्री को साथ लिये घूमता

दिखलायी पड़ा । यह घटना चर्चा का विषय हो गयी ।

इस घटना के बाद मेरे संभ्रांत मित्र गौसलिंग मेरे घर आये और बोले, "क्या

आपको पता है कि ब्यूशेम्प पर उस लड़की का क्या प्रभाव पड़ा है ?"

"नहीं," मैंने उत्तर दिया ।

उन्होंने बताया कि उस नवयुवती का नाम योलांडो मौलिनो है । उसका पति बर्मा के जंगल में बड़े ही दर्दनाक तरीके से मर गया था । वह एक धनी व्यक्ति की इकलौती संतान था फलतः उसकी मृत्यु के बाद उसकी समस्त संपत्ति उसकी पत्नी को मिल गयी है । प्रकट है कि वैधव्य इस स्त्री को महसूस नहीं हुआ और शीघ्र ही वह अन्य पुरुषों के प्रति आकर्षण वाली मूल प्रवृत्ति का शिकार हो गयी । वह एक ओर करोड़पतियों से मिलती है तो दूसरी ओर भारतीय फकीरों से भी भेंट करती है । उसकी पसंद भी अनोखी है । ऐसी स्त्री का ब्यूशेम्प-जैसे धार्मिक व्यक्ति से मिलना उचित नहीं है । पता नहीं, अब ब्यूशेम्प का अंत कैसा होगा । वैसे उस स्त्री के लिए यह सब कोई अर्थ नहीं रखता ।

मुझे लगा कि अब ब्यूशेम्प की खैर नहीं । उसके बुरे दिन आसपास ही मंडरा रहे हैं । एबरक्रोम्बी की कहानी के बाद ब्यूशेम्प का डॉ. मल्लाको के यहां से निकलना काफी खतरनाक लगा था । ब्यूशेम्प से मेरा मिलना संभव नहीं हुआ, इसलिए मैंने सुंदरी योलांडो से परिचय प्राप्त किया । मुझे जानकर दुख हुआ कि उसे डॉक्टर के विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं था ।

मैंने प्रयत्न भी किया कि वह सुंदरी ब्यूशेम्प को अपना कर उसे अपने से दूर
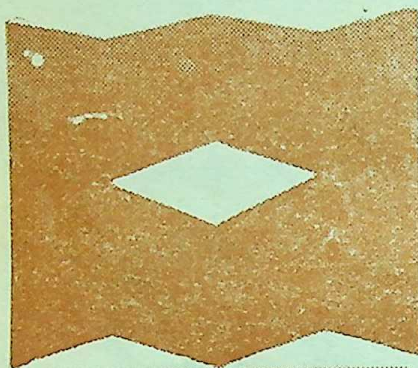
ही रखे। इस पर उसने उत्तर दिया कि उसे ब्यूशेम्प का शराब न पीना, कट्टर धार्मिक होना आकर्षक लगता है और यदि वह थोड़े दिन उस स्त्री के साथ रह लेगा तो भी उससे उसका कोई नुकसान नहीं होगा।

अपने निष्फल परिणाम के बाद मुझे और भी दुख हुआ। एक ओर डॉ. मल्लाको और दूसरी ओर इस सुंदरी का खिलवाड़। अब मुझे ब्यूशेम्प के अंत की निकटता के विषय में कोई संदेह नहीं था। और एक दिन मेरी आशंका सही निकली।

ब्यूशेम्प की नौकरानी ने एक दिन रो-रोकर सुनाया कि जब वह ब्यूशेम्प के पढ़ने के कमरे में काम करने गयी तो उसने उसे रस्सी से झूलते हुए पाया। वह मर चुका था और पास ही एक कुरसी लुढ़की पड़ी थी। नौकरानी ने सुंदरी योलांडो को ही अपने मालिक की मृत्यु का कारण बताया, किंतु इससे आगे उसने कुछ भी नहीं कहा और मेरी उत्सुकता अपूर्ण ही रह गयी।

मैं योलांडो मोलीनॉ के पास पहुंचा। मैंने उससे कहा, "ब्यूशेम्प मेरा मित्र था इसलिए उसकी मृत्यु के कारणों की जांच करना मेरा कर्तव्य है। कदाचित आप इस विषय में कुछ प्रकाश डाल सकती हैं।"

उसने उत्तर दिया कि यद्यपि वह भी ब्यूशेम्प की मृत्यु का एक कारण है, किंतु असली कारण तो डॉ. मल्लाको है।

और यह कहकर उसने अपने नाम ब्यूशेम्प का एक पत्र मेरे हाथ में दे दिया। पत्र में लिखा था:

प्रिये योलांडो,

मुझे ज्ञात नहीं कि मेरे इस पत्र से तुम्हें दुःख होगा या एक अप्रिय घटना से बचने के कारण सुख होगा, किंतु इस पत्र को लिखने के बाद मैं इस संसार से विदा ले चुकूंगा। हां, यह अवश्य कह दूं कि तुम्हारे सानिध्य से जो मुझे आनंद मिला है, वह अपूर्व तथा अपने में पूर्ण है।

यद्यपि तुमने कई बार पूछा किंतु इससे पूर्व मैंने तुम्हें डॉ. मरडोक मल्लाको के विषय में कभी नहीं बताया। बात यों हुई कि उनसे मिलने के बाद मेरे हृदय में यह इच्छा जागी कि मैं भी तड़क-भड़क की जिंदगी जिऊं। और इसलिए एक दिन डॉ. मल्लाको के पास पहुंच गया। मैं चाहता था कि मेरा नीरस जीवन बदल जाए और मैं तुम्हारे सामीप्य का आनंद उठा सकूं।

डॉ. मल्लाको ने मेरा स्वागत किया और मेरे विषय में काफी जानकारी का परिचय दिया। इससे मुझे काफी प्रसन्नता हुई। उसे मालूम था कि मैं शराब नहीं पीता और केवल सात्विक वस्तुएं ही खाता हूं। बातचीत के दौरान मैंने अपने सारे बंधन तोड़ दिये और स्पष्ट ही सब कुछ बता दिया। यहां तक कि अपने स्वप्नों, अभिलाषाओं और प्रेम के विषय में भी।

डॉ. मल्लाको ने बताया, मेरा एक मित्र है। वह भी ठीक तुम्हारी तरह प्रेम में पड़ गया था। वह भी बाइबिल बेचने का ही धंधा करता था। उसकी भी कुछ तुम्हीं से मिलती जुलती-इच्छाएं थीं। वह तुम्हारी ही भांति अल्पभाषी भी था।

अचानक उसका परिचय अश्लील साहित्य का व्यापार करनेवाले एक प्रकाशक से हो गया। वह प्रकाशक अपना प्रचार करने के लिए किसी उपयुक्त माध्यम की तलाश में था। इसके लिए वह बाइबिल-विक्रेता उसे ठीक पात्र लगा। उसने उससे सहायता की याचना की। उसने साझेदारी में व्यापार का सुझाव दिया। उसने कहा कि बाइबिल में स्थान-स्थान पर लोगों के गलत काम करने की मनाही की गयी है। उन स्थानों पर यदि यह टिप्पणी लगा दी जाए कि इस खराब काम की पूरी जानकारी अमुक प्रकाशक के यहां मिलती है तो दोनों का ही समान लाभ होगा।

थोड़ी आनाकानी करने के बाद नवयुवक बात मान गया और बाद में दोनों को काफी लाभ हुआ।

व्यूशेम्प ने आगे लिखा था, "इस प्रकार की कहानी पर मुझे काफी क्रोध आया। यह किस प्रकार का निम्न आदमी है जो धर्म-ग्रंथ बाइबिल तक को खराब पेशे का अंग बनाना चाहता है। काफी बहस के बाद मुझे मल्लाको ने निरुत्तर कर दिया। यदि तुम कोई पाप ही नहीं करोगे तो ईश्वर को अपना काम करने से सदैव के लिए वंचित कर दोगे। पाप ईश्वर के गुणों को प्रकाश में लाता है। डॉ. मल्लाको की बातों ने मुझे पतित बना दिया। मैंने अपना धंधा चलाने का पूरा गुर सीखा और ब्यौरा ज्ञात किया। उस भयंकर व्यक्ति ने मुझे इंस्पेक्टर से मिलवा दिया। वह गिरफ्तारी के समय मेरी मदद करता। मुझे बताया गया कि यह पुलिसवाला बेईमान है। बाद में मेरा एक प्रकाशक से भी परिचय कराया गया। और अभी धंधा शुरू भी नहीं हुआ था कि पुलिस मुझे पकड़ने आ गयी। मेरे हस्ताक्षर दिखाकर उन्होंने मुझे गिरफ्तार करने की बात की। हुआ यह था कि वह इंस्पेक्टर ईमानदार और चुस्त - चालाक व्यक्ति था, पर प्रकाशक नकली था। यदि मैं पकड़ा जाता तो तुम्हारी काफी बदनामी होती इसलिए मैं आत्महत्या कर रहा हूं।"

●●●

व्यूशेम्प की इस दर्दनाक मृत्यु के थोड़े ही दिनों बाद मैंने कार्टराइट की बात सुनी। वह भी मेरा पड़ोसी था। वह एक कलाकार-फोटोग्राफर था और उसकी सहायिका एक अत्यंत सुंदरी लालेज स्क्रेग्स थी। उन दोनों की मैत्री काफी गाढ़ी थी। उस व्यक्ति को काफी आय थी परंतु वह सरकारी करों से दुखी था। वह जितना ही अधिक कमाता था, उतना ही सरकार करों में उससे वसूल कर
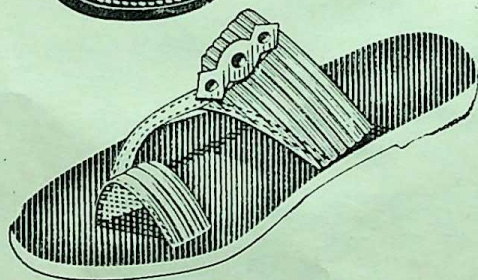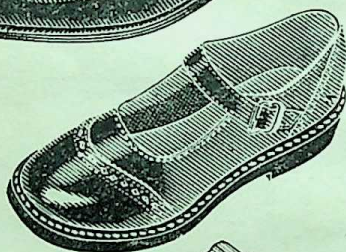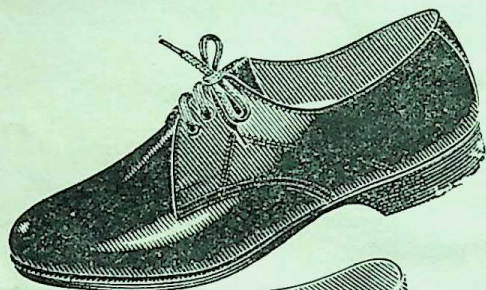
लेती थी। इसलिए डॉ. मल्लाको की तख्ती ने उसे भी आकर्षित किया। उसने डॉ. मल्लाको के सामने अपनी समस्या रखी। उसने उसे (कार्टराइट को) एक अभूतपूर्व तरकीब सुझायी। यद्यपि यह तरीका काफी चौंकानेवाला था, पर था काफी कारगर।

डॉ. मल्लाको ने अपने खास अंदाज में उसे एक कहानी सुनायी। उसने कहा, "पेरिस में मेरा एक मित्र है। वह भी ठीक तुम्हारी ही तरह एक कुशल फोटोग्राफर है और उसके पास भी तुम्हारी ही भांति एक सुंदरी सहायिका है। वह अब भी अपना पेशा करता है किंतु वह कुछ आधुनिक तरीके का व्यक्ति है। इसलिए उसकी आय भी अधिक है। वह कर भी कम देता है। काम करने का उसका अपना एक तरीका है। जैसे ही उसे पता चलता है कि किसी बड़े होटल में कोई सम्मानित राष्ट्रीय या विदेशी नागरिक ठहरा हुआ है वह बड़े तरीके से अपनी सहायिका को वहां पहुंचा देता है। अब वह सुंदरी उस फोटोग्राफर के पहुंचने पर कुछ इस प्रकार गिरती कि प्रतिष्ठित व्यक्ति उसे उठाने को मजबूर हो जाए।

वह कुशल फोटोग्राफर ऐसे समय की तसवीर अवश्य ले लेता है और बाद में उसी चित्र के सहारे उस सम्मानित व्यक्ति से काफी पैसे ऐंठ लेता है। इस प्रकार की आमदनी पर न वह अधिक कर ही देता और न उसकी प्रतिष्ठा ही कम होती है।"

कार्टराइट को यह तरकीब भा गयी। उसने अपना पहला शिकार एक बिशप चुना। वह अफ्रीका के एक देश का बड़ा पादरी था। कार्टराइट ने अपनी सहायिका के साथ उस बड़े पादरी की तसवीर खींच ली।

मुश्किल तो तब आयी जब वह पैसे मांगने बिशप के पास गया। वह बिशप ऑक्सफोर्ड का छात्र था और अपने समय का सबसे अधिक तेज और बदमाश छात्र माना जाता था। जब कार्टराइट ने बिशप से पैसे मांगे तो उसने कहा, "तसवीर के प्रकाशन से वाकई मेरी बदनामी होगी किंतु तुम जितनी रकम मांग रहे हो वह भी तो मेरे पास नहीं है। हां, मैं तुम्हारे नाम से रुक्का लिख सकता हूं और ऐसा भी कर सकता हूं कि तुम्हें मेरे क्षेत्र की सारी आमदनी का काफी बड़ा हिस्सा निरंतर मिलता रहे।"

कार्टराइट ने इसे खुशी से मंजूर कर लिया और घर लौट आया।

इधर बिशप खामोश नहीं बैठा। उसने अपने देश के सोवियत राजदूत-जैसी शकल बनायी और एक सहयोगी के साथ मिलकर एक खेल खेला। उसने नकली सोवियत राजदूत बनकर कार्टराइट को पैसे देते हुए फोटो खिंचवायी।

अब कार्टराइट के परेशान होने की बारी थी। यदि वह फोटो पुलिस को भेज दी जाती तो कार्टराइट को देशद्रोह के

जुर्माने में आजन्म कैद हो जाती ।

बिशप ने कार्टराइट से कहा, "ऐसा करो यदि तुम फैसला ही चाहते हो तो मेरा लिखा रुक्का लौटा दो, और साथ ही मुझे दो लाख रुपये भी दो । कारण यह है कि मैं अपने देश के अफ्रीकियों का धर्म-परिवर्तन करना चाहता हूं । अन्यथा . . ."

कार्टराइट काफी डर गया । वह दो लाख की रकम लेकर बिशप के पास पहुंचा परंतु बिशप तो कार्टराइट को सबक सिखाने पर तुला बैठा था । उसने कहा, "देखो, मैं बहुत दयालु व्यक्ति हूं । अब केवल दो काम और बाकी रह गये हैं । उन्हें कर दो और मुक्त घूमो । मेरे इलाके के मुखिया को तुम्हारी सहायिका की तसवीर काफी पसंद आयी है । यदि तुम उसे उससे विवाह कर लेने दो तो वह ईसाई हो जाएगा और तुम्हारे लिए वह अनेक काली स्त्रियां इकट्ठी करवा देगा । ७० वर्ष की आयु होने पर तुम्हारी सहायिका तुम्हें लौटा दी जाएगी ।" इन बातों को स्वीकार करने के अलावा कार्टराइट के पास और कोई चारा न था ।

●●●

इन सारी घटनाओं से डॉ. मल्लाको पर मैं काफी क्रोधित हुआ किंतु मैं असहाय था । इसी बीच मुझे ऐलेरकर के दुर्भाग्य का पता चला । एलोरकर अत्यंत कुशल वैमानिकी इंजीनियर थे। वे विमान के नये मॉडल तथा [illegible] एक दिन उनकी डिजाइन के आधार पर बना एक नया विमान दुर्घटना का शिकार हो गया । इस दुर्घटना के बाद उनके घर की तलाशी हुई । संदेह था कि वे किसी विदेशी शक्ति से मिले हुए हैं । तलाशी में यह सिद्ध भी हो गया । फलतः उन्होंने विष खा लिया ।

मुझे सहसा स्मरण हो आया कि एक दिन श्रीमती ऐलेरकर डॉ. मल्लाको के घर से बाहर निकल रही थीं । मुझे इस कांड में भी उस डॉक्टर का हाथ लगा । ऐलेरकर मेरे मित्र थे । मुझे विश्वास था कि उन पर व्यर्थ ही शक किया गया था । उनकी मृत्यु के बाद श्रीमती ऐलेरकर वायु-मंत्रालय गयीं । उन्होंने उड्डयन मंत्री से भेंट कर उन्हें ऐसी कथा सुनायी, जो दुख के कारण जन्मी उनकी अपनी गढ़ी कहानी प्रतीत होती थी । फिर क्या था ! उन्हें पागलखाने में बंद कर दिया गया ।

अब मेरा उनसे मिलना जरूरी हो गया । एक तो वे मेरे मित्र की पत्नी थीं फिर दूसरे मैं उनके पागलपन में डॉक्टर मल्लाको का हाथ देखना चाहता था । और जब मैंने उनसे उनके पति की प्रशंसा की तो वह फूट फूटकर रो पड़ीं । उन्होंने बताया कि किस प्रकार डॉ. मल्लाको के कहने पर वे अपने पति के विरुद्ध षड्यंत्र रचने पर राजी हो गयीं । थीं । उस डॉक्टर से मिलने से पूर्व उनका [illegible] था किंतु एक

दिन उनके पति ही उन्हें डॉक्टर मल्लाको के पास छोड़ गये। वे स्वयं विदेश जा रहे थे। उस समय मल्लाको महोदय ने एक कहानी सुनाकर उन्हें बताया कि संसार में सभी प्रकार के प्राणी रहते हैं। बुरी से बुरी स्त्रियां और जी उबा देनेवाले 'बोर' पुरुष!

तब श्रीमती ऐलेरकर को ध्यान आया कि उनके जीवन में किनटोक्स नामक एक व्यक्ति आ चुका था। वह उनके पति का प्रतिद्वंदी था। वह व्यवहारकुशल और रोचक व्यक्ति था। श्रीमती ऐलेरकर को अब अपने पति और भी अधिक बोर लगने लगे। डॉ. मल्लाको की कहानी के पात्र की भांति उन्होंने क्विनटोक्स के कारण अपने पति की नयी योजना के कागज चुरा-चुराकर अपने प्रेमी को दे दिये। वह सारे कागज शीघ्र ही लौटा दिया करता था। वास्तव में उसी प्रेमी द्वारा किये गये परिवर्तनों के कारण वह विमान टूटा था। उसी के कारण संदिग्ध कागजात भी उनके घर में मिले थे। पति की आत्म-हत्या ने श्रीमती ऐलेरकर को जड़ से हिला दिया था। परंतु अब उनकी कोई बात नहीं सुन रहा था और उन्हें पागल करार दे दिया गया था।

जैसा मुझे विश्वास था, वही हुआ। मैं बड़े आत्मविश्वास के साथ उड्डयन मंत्री से मिला। वे मेरे परिचित भी थे। इस नाते उन्होंने मेरी सारी बात तो सुन ली किंतु मुझे चेतावनी देते हुए कहा, "यह मामला काफी गंभीर है। यदि क्विन-टोक्स के विरुद्ध हमने कोई भी कार्यवाही की तो रूसी जहाज हमारे वायुयानों को मात देने में सफल हो जाएंगे। हमें तो क्विनटोक्स की बुद्धिमत्ता और कार्य-कुशलता से मतलब है, उसकी और चीजों से क्या लेना देना। और हां, मैं आदेश देता हूं कि इस विषय में तुम किसी से बातचीत

उसका भविष्य फिर से जगमगा उठा.

एक साल पहले वह घोर अंधकार में डूब रहा था. उसकी आंख के भीतर 'रेटिना' की तुरंत शल्यक्रिया करने के लिए 'लेसर बीम' की ज़रूरत थी, जो भारत में उपलब्ध ही नहीं थी. इस तरह एक उज्ज्वल भविष्य ज़रा से नाज़ुक धागे में लटका था.

हमसे सम्पर्क किया गया और हमने ५ महाद्वीपों में 'लेसर बीम' की खोज करायी. क्षण-क्षण बेचैनी में बीत रहा था और उधर एयर-इंडिया के कर्मचारी संसार भर के अस्पतालों में उसकी तलाश कर रहे थे. बेचैनी तब मिटी जब अंत में उक्त यंत्र मैनहेम में मिल गया. हम बच्चे को अपने विमान से फ्रैंकफ़र्ट ले गये और वहां से दूसरी एयरलाइन के सहयोग से वह मैनहेम पहुंचा.

आज हमें कितनी ख़ुशी होती है उस बच्चे को देखकर जब वह तितली का पीछा करता है, फूलों के गुच्छे तोड़ता है. चमकीली और सुंदर चीज़ों को प्यार करता है. सचमुच, हमें अपने काम पर नाज़ होता है. हमारा काम ही है लोगों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाना, और यहां तक कि कभी-कभी तो हम अंधकार से प्रकाश में ले जाते हैं.

किसी भी परिस्थिति में आपकी सहायता के लिए हमारे पास संचार सुविधाओं की समुचित व्यवस्था है. संसार भर में हमारे १२९ कार्यालय और ३४ मंज़िलें हैं. इसलिए संसार के कोने-कोने में आपके दोस्त हैं. ऐसे दोस्त, जो ज़रूरत पड़ने पर आपकी हर तरह से मदद करने के लिए हाज़िर हैं. एक बार सेवा का मौका दीजिए और तब आप हमेशा ही एयर-इंडिया से सफ़र करना चाहेंगे.

AI 6130 (A)
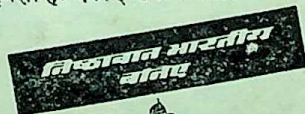
नहीं करोगे ताकि लोगों को पता न चले कि क्विनटोक्स ने अपनी धूर्तता के बल पर सारे सम्मान राज्य से ऐंठ लिये हैं।"

●●●

मैं चला आया किंतु मेरे क्रोध की सीमा नहीं रही। मैं चाहता था कि सारी बुराइयों की जड़ इस डॉक्टर को सजा अवश्य मिलनी चाहिए। परंतु सजा दिलवाने के लिए उसका कहानी सुनाना पर्याप्त कारण नहीं हो सकता था। अपराध तो अन्य लोगों ने किये थे, वह भी स्वेच्छा से। इसलिए उन्हीं को फल भी भोगना चाहिए था। मैंने यह भी विचार किया कि क्यों न मैं संसार को ही समाप्त कर दूं। न यह संसार रहेगा और न पापी मनुष्य, किंतु मुझे विचारी मछलियों पर काफी तरस आया। वे तथा अन्य-जलवासी डॉ. मल्लाको या मनुष्य जाति के साथ क्योंकर तबाह हों। योजना थी कि समुद्र के पानी को इतना खौला दूं कि सारा विश्व तबाह हो जाए। जब मुझे विश्वास हो गया कि मछलियां स्वयं भी निरीह तथा पाप मुक्त प्राणी नहीं हैं, मैंने अपनी योजनानुसार एक बम बनाया और डॉ. मल्लाको के यहां पहुंचा। अब मैंने उससे बदला ले लिया था। वह थोड़ी ही देर का मेहमान था।

जब मैंने डॉ. मल्लाको को अपनी योजना बतायी और उसे पाप करने के लिए बुरा भला कहा तो उसने उत्तर दिया, "तुम प्रारंभ से ही बड़े विचित्र आदमी रहे हो। कभी तुम मेरे बारे में जानना चाहते थे तो कभी मेरे मरीजों के। खैर, जब मैं थोड़ी देर का ही मेहमान हूं तब हमलोग क्यों न अंतिम क्षणों का उचित ढंग से वितायें।

शराब का प्याला बढ़ाकर डॉ. मल्लाको ने मुझसे उस बम का फार्मूला पूछा। मेरे उत्तर पर वह हंसा, "तुम वास्तव में मूर्ख हो। १२ बजे एक हलके से धमाके के अलावा कुछ भी होने की संभावना नहीं है। तुम्हें ठीक फार्मूला पता नहीं।" फिर उसने मुझे विज्ञान की सारी जानकारी देकर चुप कर दिया। वास्तव में मेरा बम एक फुलझड़ी था और कुछ नहीं।

फिर उसने कहा, "अभी तक हम दोनों एक दूसरे के शत्रु रहे हैं। किंतु अब ऐसा करने की आवश्यकता नहीं रहेगी क्योंकि मैं तुम्हारे उद्देश्य की पूर्ति कर सकता हूं और करूंगा भी।

"तुमने सोचा होगा कि इस विश्व के नष्ट हो जाने का मुझे अतीव कष्ट होगा। मुझे मानवमात्र से घृणा है और सांसारिक सुख मेरे लिए महत्त्वहीन हैं। तुम कल्पना भी नहीं कर सकते कि मैंने विक्नटोक्स की क्यों सहायता की? वास्तव में मैं उसके विरोधियों की भी सहायता ही कर रहा हूं। मेरा रोम-रोम प्राणी मात्र के विनाश की कामना कर रहा है।

"मैं जन्म से ही दुखी रहा हूं। मां शराबी और पिता व्यभिचारी थे।

बचपन में उन्होंने मुझे मिलकर इतनी यातना दी कि मुझे अपने जन्म से ही घृणा हो गयी। ६ वर्ष की आयु में मैं अनाथ हो गया। उसके बाद एक दयालु स्त्री ने मुझे पढ़ाया, पाला, बड़ा किया। उसने सोचा होगा कि मैं एक अच्छा बच्चा हूं। परंतु मैं अपना बचपन नहीं भूल पाया और इसलिए शीघ्र ही मैं वह काम करूंगा कि पास-पड़ोस के प्रत्येक घर से पागल निकल-निकलकर सड़कों पर मारे-मारे फिरने लगेंगे।"

मैंने चिल्लाकर कहा, "यह कभी नहीं होगा।" किंतु डॉ. मल्लाको विद्रूप के भाव लेकर मुड़ा और अंदर की ओर जाने लगा। मैंने पिस्तौल निकालकर उस पर गोली चला दी। वह तुरंत मर गया फिर पिस्तौल पोंछकर उसके पास डाल दी और एक पर्चे पर उसकी आत्म-हत्या का कारण लिख दिया। यह सब सफाई के साथ करने के बाद मैं घर लौट आया। लौटने पर मैंने अपना वह बम तोड़ दिया।

इस घटना के थोड़े दिन बाद तक मैं काफी सुखी रहा। किंतु बार-बार यह ध्यान आता रहा कि डॉ. मल्लाको स्वप्न में बता रहा है, "तुम समझते हो मेरे मार देने के बाद इस विश्व का नाश नहीं होगा . . . तुम भ्रम में हो।" बाह्य सुख और सुंदरी पत्नी के होते हुए भी मैं स्वप्नों में चौंक जाता और अंत में एक दिन रात को मैं चीख पड़ा, "मैंने डॉ. मल्लाको का खून किया है।"

अब मुझे लगता है कि श्रीमती ऐलेर-कर वाला अंत मेरा भी होने वाला है। बाहर दो सिपाही आ चुके हैं और एक मनोविशेषज्ञ भी। जो मैं चाहता था वह नहीं हो सका। अंत में डॉ. मल्लाको मुझे भी मार गया।

जिरह हो रही थी, पर अभियुक्त पहाड़ की तरह अपनी बात पर अड़ा हुआ था। वादी का वकील झुंझला रहा था। उसने प्रश्न किया, "शपथपूर्वक कह सकते हो कि ये हस्ताक्षर तुम्हारे नहीं हैं?"

"हां।"

"यह लिखावट भी तुम्हारी नहीं है?"

"नहीं।"

"तुम्हारी लिखावट से मिलती-जुलती है?"

"नहीं।"

"तुम्हें इस बात का निश्चय कैसे हुआ?"

"क्योंकि मैं लिख नहीं सकता।"

... की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान